मूल्य रु० ४.५०

योजना आयोग की ओर से निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, पुराना सचिवालय, दिल्ली-८, द्वारा प्रकाशित ।
उपप्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फ़रीदाबाद, द्वारा मुद्रित ।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना

संक्षिप्त विषय-सूची

दृष्टिकोण और संगठन

विकास के कार्यक्रम

विषय-सूची

दृष्टिकोण और संगठन

पृष्ठ संख्या

विकास के कार्यक्रम

पृष्ठ संख्या

भूमिका

इस विवरण में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए योजना आयोग के सुझाव दिए गए हैं। इस योजना की रूपरेखा पर राष्ट्रीय विकास परिषद ने विचार करके २ मई, १९५६ को निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया था :

राष्ट्रीय विकास परिषद द्वितीय पंचवर्षीय योजना के मसौदे पर विचार करके, योजना के उद्देश्यों, प्राथमिकताओं और कार्यक्रम को सामान्यतः स्वीकृति प्रदान करती है; और

जनता के उत्साह तथा समर्थन पर भरोसा करके,

भारत की केन्द्रीय सरकार और सब राज्य सरकारों के इस निर्णय को पुष्ट करती है कि वे इस योजना को न केवल पूरा करेंगी, अपितु इसके लक्ष्यों से भी आगे बढ़ने का प्रयत्न करेंगी; और

भारत के सब नागरिकों से अनुरोध करती है कि वे द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यों, लक्ष्यों और उद्देश्यों को यथासमय पूरा करने के लिए जी-जान से प्रयत्न करें ।

२. राष्ट्र के इतिहास में किसी पंचवर्षीय योजना के आरम्भ और समाप्ति की तारीखें महत्वपूर्ण तारीखें होती हैं। प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में गुजरे हुए जमाने के काम का लेखा-जोखा होता है और आगे क्या करना है इसकी रूपरेखा तैयार की जाती है। इसमें देश की कोटि-कोटि जनता की आकांक्षाओं, अभिलाषाओं और आदर्शों को मूर्त रूप देने का प्रयत्न किया जाता है, और इसके द्वारा हरेक व्यक्ति को देश की दरिद्रता दूर करने और जीवन का स्तर ऊंचा उठाने का महत्वपूर्ण कार्य करने का अवसर मिलता है।

३. प्रथम पंचवर्षीय योजना मार्च १९५६ में समाप्त हो गई। उसके कार्य और दृष्टिकोण हमारे विचारों के अंग हैं। इस योजना द्वारा समाजवादी ढंग की सामाजिक व्यवस्था की रचना के लक्ष्य की नींव पड़ चुकी है, अर्थात ऐसी सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था की जो स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र की मान्यताओं पर आधारित होगी, जिसमें न जात-पांत होगी और न कुछ लोगों के विशेष अधिकार होंगे; जिसमें अधिक रोजगार और अधिक उत्पादन होगा और जिसमें सामाजिक न्याय भी अधिकतम प्राप्त हो सकेगा।

४. द्वितीय पंचवर्षीय योजना को तैयार करने का कार्य लगभग दो वर्ष से हो रहा है। योजना आयोग ने अप्रैल १९५४ में राज्य सरकारों से कहा था कि वे जिलों और ग्रामों की योजनाएं तैयार करें, और वैसा करते हुए खेती की पैदावार, देहाती उद्योग-धंधों और सहकारिता का विशेष ध्यान रखें। इन योजनाओं को तैयार करने का काम इसलिए आरम्भ किया गया था क्योंकि यह अनुभव किया गया कि जिन क्षेत्रों का अधिकतम लोगों की सुख-सुविधाओं से निकटतम सम्बन्ध है उन क्षेत्रों में लोगों का स्वेच्छापूर्वक सहयोग प्राप्त करने के लिए स्थानिक रूप से ऐसी ही योजनाएं बनाना नितान्त आवश्यक है। यद्यपि जिलों, गांवों, राष्ट्रीय विस्तार और

सामुदायिक विकास की योजनाओं को इस प्रकार बनाना होता है कि वे राज्यों की योजनाओं में खप सकें, और राज्यों की योजनाएं समूचे देश की अर्थ-व्यवस्था को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं, तो भी आयोजन के काम का आधार जिला ही होता है। यहीं आकर योजना के विविध अंगों का जनता के जीवन के साथ निकट सम्पर्क होता है।

५. राष्ट्रीय आयोजन के विस्तृत अंगों का अध्ययन भी १९५४ में ही आरम्भ हुआ था। उस वर्ष के अन्त में राष्ट्रीय आयोजन की टेकनीकल और आंकड़े सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन करने के लिए भारतीय अंक-संकलन संस्थान की सहायता ली गई, और कुछ कागजात इस संस्थान में ही तैयार किए गए। मार्च १९५५ में इन कागजात और उक्त अध्ययन के आधार पर प्रो० पी० सी० महलानवीस ने 'द्वितीय पंचवर्षीय योजना तैयार करने के लिए सिफारिशें' नामक पुस्तिका लिखी, (जिसको 'प्लान-फ्रेम' अर्थात 'योजना का ढांचा' कहा गया है), और योजना आयोग और वित्त मंत्रालय के अर्थविभागों ने इन्हीं कागजात के आधार पर 'द्वितीय पंचवर्षीय योजना की प्रस्तावित रूपरेखा' नामक पुस्तिका तैयार की। इन दोनों पर योजना आयोग के अर्थशास्त्रियों ने विचार करके अप्रैल १९५५ में 'योजना के ढांचे के सम्बन्ध में मूलभूत विचारों का स्मरणपत्र, तैयार किया। इन अर्थशास्त्रियों ने योजना के अलग-अलग पहलुओं पर भी स्मरणपत्र तैयार किए।

६. 'योजना के ढांचे' और ऊपर निर्दिष्ट अन्य कागजात पर राष्ट्रीय विकास परिषद ने मई १९५५ में विचार किया। राष्ट्रीय विकास परिषद, 'योजना के ढांचे' और 'प्रस्तावित रूपरेखा' की आधारभूत विचार शैली से और अर्थशास्त्रियों के स्मरणपत्रों में उल्लिखित तत्सम्बन्धी विचारों और नीतियों से साधारणतया सहमत हो गई। परिषद इस विचार से भी सहमत हो गई कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना ऐसी होनी चाहिए कि उससे पांच वर्ष में राष्ट्रीय आय में लगभग २५ प्रतिशत वृद्धि हो जाए और १ करोड़ से १ करोड़ २० लाख तक व्यक्तियों को जीविकोपार्जन का अवसर मिल जाए। परिषद ने यह निदेश भी किया कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना इस प्रकार बनाई जाए कि उससे समाज को समाजवादी आधार पर संगठित करने के नीति सम्बन्धी निर्णयों को मूर्त रूप दिया जा सके।

७. १९५५ में जुलाई से दिसम्बर तक योजना आयोग ने केन्द्रीय मंत्रालयों और राज्य सरकारों के साथ विचार-विनिमय किया। प्रत्येक राज्य के साथ विचार-विनिमय करने से मुख्य मंत्रियों के साथ राज्यों की योजनाओं के पृथक-पृथक अंगों पर विस्तारपूर्वक विचार करने का अवसर मिला। राज्यों के प्रस्तावों की विस्तारपूर्वक जांच कार्यकारी दलों ने की, जिनमें केन्द्रीय मंत्रालयों, राज्य सरकारों और योजना आयोग के उच्च अधिकारियों ने भाग लिया।

८. इस प्रकार जो विचार-विनिमय हुआ था उसके सुझावों के आधार पर तैयार किए गए स्मरणपत्र के मसौदे पर जनवरी १९५६ में राष्ट्रीय विकास परिषद और संसद सदस्यों की सलाहकार समिति ने मिलकर विचार किया। इन सब बहसों और अन्य टिप्पणियों के आधार पर फरवरी १९५६ में योजना की रूपरेखा जनता की जानकारी और आलोचना तथा सुझावों के लिए प्रकाशित की गई। द्वितीय पंचवर्षीय योजना का मसौदा तैयार करते समय जनता द्वारा दिए गए सुझावों का भी ध्यान रखा गया।

९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना तैयार करने का काम जिन लोगों के सुपुर्द किया गया था उनके मन पर गत वर्ष कुछ बातों का प्रभाव विशेष रूप से पड़ा। एक बात यह थी कि पांच वर्ष

के लिए जो योजना बनाई जाए, वह इस दृष्टि से बनाई जाए कि आगे चलकर हमें कैसी सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था का निर्माण करना है। उस पर अमल ऐसी लचकीली प्रणाली से हो सके कि प्रति वर्ष की आर्थिक तथा वित्तीय प्रवृत्ति, कृषि और उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि और योजना के विभिन्न भागों की प्रगति को देखकर, वार्षिक योजनाओं के द्वारा इसमें समयानुसार परिवर्तन किए जा सकें। उद्योग, परिवहन, खनिजों और शक्ति-उत्पादन के क्षेत्रों में निकट सम्पर्क का प्रबन्ध करना भी आवश्यक है, जिससे परस्पर सम्बद्ध कार्यक्रमों के प्रत्येक समूह खण्ड पर किए हुए व्यय से अधिकतम लाभ हो सके। जैसा कि राष्ट्रीय विकास परिषद ने भी माना है, द्रुत विकास के सिलसिले में बहुधा उत्पन्न हो जाने वाली मुद्रा-स्फीति के दुष्परिणामों से बचने के लिए योजना में प्रस्तावित कृषि उत्पादन के लक्ष्यों को और भी ऊंचा उठाना अत्यावश्यक है। समय-समय पर यह देखते रहना होगा कि अन्न, वस्त्र और आम जरूरत की दूसरी चीजें पर्याप्त मात्रा में और उचित मूल्य पर मिल रही हैं या नहीं। साथ ही राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के सुचारु संचालन पर भी निगाह रखनी होगी।

१०. हमारी द्वितीय पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य है गांवों की दशा सुधारना, देश में औद्योगिक उन्नति की नींव रखना, जनता के निर्बल और अधिकारच्युत वर्गों को जीवन में यथासंभव अधिक अवसर प्रदान करना और देश के सब भागों का सन्तुलित विकास करना। हमारे देश का आर्थिक विकास बहुत समय तक रुका रहा है। इस कारण ये सब कार्य बहुत कठिन हैं। परन्तु यदि हम त्याग-पूर्वक प्रयत्न करें तो इनमें सफल होना हमारी सामर्थ्य से बाहर की बात नहीं है।

११. जो योजना इस समय सरकार को संसद के सम्मुख प्रस्तुत करने के लिए दी जा रही है, वह केन्द्रीय सरकार व राज्य सरकारों के अनेक कर्मचारियों और देश के सभी भागों के विचारवान नेताओं के परिश्रम का परिणाम है। इसे तैयार करने में सब वर्गों के स्त्री-पुरुषों ने अपने समय, श्रम और अनुभव का योग उदारतापूर्वक दिया है। द्वितीय योजना के तैयार करने में जैसा उत्साह और व्यापक सहयोग पाया गया वह उसकी सफलता के लिए बड़ा शुभ लक्षण है।

अध्याय १

अर्थ-व्यवस्था का विकास : अब तक की सफलताएं और भविष्य का स्वरूप

१

प्रथम पंचवर्षीय योजना

स्वतन्त्र होने के पश्चात भारत में सरकारी नीति और राष्ट्रीय प्रयत्नों का मूल उद्देश्य देश का आर्थिक विकास द्रुत गति से और सन्तुलित रूप से करने का रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना इसी लक्ष्य की पूर्ति की दिशा में एक पग था। यह योजना तैयार करने के लिए योजना आयोग ने उस समय की परिस्थितियों में विद्यमान देश के साधनों और आवश्यकताओं का विस्तारपूर्वक अध्ययन करने का यत्न किया था। योजना में विकास का जो कार्यक्रम बनाया गया था वह यह सोचकर बनाया गया था कि उससे देश की अर्थ-व्यवस्था का आधार दृढ़ होकर, हमारी समाज-व्यवस्था में ऐसे परिवर्तन हो जाएंगे कि वे भविष्य में अधिक शीघ्रता से उन्नति करने में सहायक होंगे। इसमें ऐसी भी कुछ तात्कालिक समस्याओं को हल करने का प्रयत्न किया गया था जो कि विश्व युद्ध और देश-विभाजन के कारण खड़ी हो गई थी। इन दोनों दिशाओं में प्रथम योजना से उल्लेखनीय प्रगति हुई है। इसके कारण जनता का सहयोग और उत्साह बढ़ा है और लोगों की विचार-प्रणाली और प्रवृत्तियां नई दिशा में मुड़ गई हैं।

२. प्रथम योजना ने जो प्रक्रिया प्रारम्भ कर दी थी, द्वितीय पंचवर्षीय योजना को उसे ही आगे बढ़ाना है। इसे उत्पादन, पूंजी-विनियोग और जीविकोपार्जन, तीनों में अधिक प्रगति करनी होगी। साथ ही, इसे समाज में उन परिवर्तनों की गति को तीव्रतर करना होगा जिनकी सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति की दृष्टि से देश की अर्थ-व्यवस्था को अधिक गतिमान और प्रगतिशील बनाने के लिए आवश्यकता है। विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो कि निरन्तर चलती रहती है। इसका प्रभाव समाज के सभी पहलुओं पर पड़ता है। इसलिए इसे अति व्यापक दृष्टि से देखना चाहिए। यही कारण है कि आर्थिक आयोजन का सम्बन्ध, शिक्षा समाज और संस्कृति आदि आर्थिकेतर क्षेत्रों के साथ भी होता है। प्रत्येक योजना कुछ समय तक उन भावी प्रयत्न का प्रारम्भ मात्र रहती है जो कि भविष्य में निरन्तर और अधिक समय तक किया जाना होता है और उसके प्रत्येक पग पर नए मार्ग खुल जाते हैं तथा हल करने के लिए नई समस्याएं उपस्थित हो जाती हैं। इस कारण जब कोई योजना किसी विशेष समय के लिए बनाई जाए अथवा कार्यक्रम तैयार किया जाए तब अधिक दीर्घकाल की सम्भावनाओं को ध्यान में रख लेना चाहिए और ज्यों-ज्यों उन सम्भावनाओं का रूप स्पष्ट होता जाए, त्यों-त्यों अपने कार्यक्रम को आवश्यकतानुसार बदलने के लिए तैयार रहना चाहिए।

३. प्रथम पंचवर्षीय योजना एक नम्र प्रयत्न के रूप में तैयार की गई थी और कुछ तात्कालिक समस्याओं को हल करने पर, अनिवार्य रूप से, सबसे पहले ध्यान देना पड़ा था। यह नम्र प्रयत्न करते हुए भी, तब ऐसा लगा था कि समाज के साधनों पर भारी बोझ पड़ जाएगा। प्रथम दो वर्षों तक, अनिवार्य रूप से, विशेष ध्यान मुद्रा-स्फीति की बुराइयों को सुधारने और नियन्त्रण में रखने और अपनी अर्थ-व्यवस्था को पुनः सन्तुलित करने पर लगाना पड़ा था। तीसरे वर्ष से योजना पर होने वाला व्यय बहुत बढ़ा दिया गया था, और योजना के अन्त तक केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारें १९५१-५२ की तुलना में २½ गुना व्यय करने लगी थीं। अब खयाल है कि पांच वर्षों में योजना के सरकारी भाग का व्यय कुल मिलाकर २,००० करोड़ रुपए से कुछ ही कम रहा होगा। यह लगभग उतना ही है जितना कि १९५२ में योजना बनाते समय सोचा गया था। पहले के वर्षों में कार्य लक्ष्य से कुछ कम हुआ था, उसे पूरा करने और जीवकोपार्जन के अवसर बढ़ाने के लिए, बाद में अतिरिक्त कार्यक्रम हाथ में लिए गए। यह भी माना गया है कि ये अतिरिक्त कार्यक्रम कम से कम आंशिक रूप में उन कार्यक्रमों के स्थान पर अपनाए गए थे जिनकी प्रगति कई कारणों से मन्द थी। योजना की संशोधित समस्त व्यय राशि २,३५० करोड़ रुपए कर दी गई थी, परन्तु उसमें लगभग ३५० करोड़ रुपए कम व्यय हुआ। इस स्थिति का मूल्यांकन इसी संदर्भ में करना उचित होगा। फिर भी सब दृष्टियों से वास्तविक महत्व वित्तीय व्यय का उतना नहीं, जितना कि क्रियान्वित किए हुए कार्यक्रमों का, पूरे किए हुए कामों का और प्राप्त की हुई सफलताओं का है।

४. यहां प्रथम योजना के परिणामों की संक्षेप से चर्चा कर देना अप्रासंगिक न होगा। राष्ट्रीय आय पांच वर्षों में कोई १८ प्रतिशत बढ़ गई है। अन्न के उत्पादन में २० प्रतिशत वृद्धि हुई है। कपास और प्रधान तिलहनों की उत्पत्ति क्रमशः ४५ और ८ प्रतिशत बढ़ी है। ६० लाख से अधिक एकड़ भूमि में तो बड़ी योजनाओं द्वारा सिंचाई होने लगी है, और अन्य १ करोड़ एकड़ को छोटी सिंचाई योजनाओं से लाभ पहुंचा है। रासायनिक खाद और बीजों की उपलब्धि बढ़ जाने और राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम का क्षेत्र विस्तृत हो जाने के कारण, आशा है कि खेती का उत्पादन निरन्तर अधिकाधिक सुधरता और बढ़ता जाएगा। औद्योगिक उत्पादन लगातार बढ़ता गया है। औद्योगिक उत्पादन के अन्तरिम देशनांक (१९४६ = १००) से पता लगता है कि १९५५ में यह १६१ तक पहुंच चुका था। १९५० में यह केवल १०५ और १९५१ में ११७ था। पीछे, १९५१ को आधार मानकर औद्योगिक उत्पादन का जो नया देशनांक निकाला गया वह भी १९५५ में १९५१ की अपेक्षा २२ प्रतिशत ऊंचा था। बिजली का उत्पादन १९५०-५१ में ६५,७५० लाख किलोवाट आवर था जो बढ़कर १९५५-५६ में १,१०,००० लाख किलोवाट आवर हो गया था। अर्थ-व्यवस्था में पूंजी-विनियोग की मात्रा का एक महत्वपूर्ण सूचक सीमेण्ट होता है। १९५०-५१ में २७ लाख टन सीमेण्ट बनाया गया था। १९५५-५६ में इसका उत्पादन बढ़कर ४३ लाख टन हो गया था। हाल में इसकी मांग एकदम बहुत बढ़ गई है। योजना के सरकारी भाग में कई औद्योगिक कार्य पूरे हो चुके हैं। निजी भाग में भी पूंजी बड़ी मात्रा में लगी है—विशेषतः उत्पादक वस्तुओं और पूंजीगत सामान के उद्योगों में। यद्यपि लोहे व इस्पात और बिजली के भारी सामान का निर्माण कार्य प्रथम योजना की अवधि में आरम्भ नहीं किया जा सका, तथापि इस्पात के तीन बड़े कारखाने और बिजली के भारी सामान का एक कारखाना खोलने के लिए प्रारम्भिक काम पूरा हो गया, और द्वितीय योजना काल में जो बड़े काम किए जाएंगे उनकी नींव पड़ गई। कुल मिलाकर प्रथम योजना के परिणाम सन्तोषजनक

रहे। अब विकास की आवश्यकता को अधिकाधिक समझा जाने लगा है, और यह कुछ कम उल्लेखनीय बात नहीं है कि देश भर में ऐसी योजना की मांग की जाने लगी है जिसके द्वारा उन्नति शीघ्र और चहुंमुखी हो सके।

५. अब हमारा अन्दाजा यह है कि १९५१ से १९५६ तक के पांच वर्षों में अर्थ-व्यवस्था में लगभग ३,१०० करोड़ रुपए की पूंजी लग गई होगी। १९५०-५१ में देश में पूंजी-विनियोग का स्तर लगभग ४५० करोड़ रुपए का था। १९५५-५६ में यह बढ़कर ७९० करोड़ रुपए हो गया था। नीचे की तालिका में दिखलाया गया है कि १९५०-५१ और १९५५-५६ में राष्ट्रीय आय पूंजी-विनियोग और खपत के अनुमानित स्तर क्या थे :—

राष्ट्रीय आय, पूंजी-विनियोग और खपत—१९५०-५१ और १९५५-५६
(१९५२-५३ के मूल्यों पर आधारित)

(करोड़ रुपए)

मद	१९५०-५१	१९५५-५६
(१)	(२)	(३)
१. राष्ट्रीय आय	९,११०	१०,८००
२. पूंजी-विनियोग	४५०	७९०
३. पूंजी-विनियोग में राष्ट्रीय आय का प्रतिशत	४·९	७·३
४. राष्ट्रीय आय का देशनांक ...	१००	११८
५. प्रति व्यक्ति आय का देशनांक ...	१००	१११
६. प्रति व्यक्ति खपत व्यय का देशनांक ...	१००	१०९

यह अन्दाजा लगाना कठिन है कि योजना के वर्षों में प्रतिवर्ष कितना पूंजी-विनियोग हुआ; विनियोग के स्तर में जो बड़े परिवर्तन हुए केवल उनका अनुमान लगाया जा सकता है। १९५१-५२ में विनियोग का स्तर असाधारण रूप से ऊंचा था, वह शायद राष्ट्रीय आय के ७ प्रतिशत से भी ऊपर पहुंच गया था। परन्तु उसका एक भाग सामान के संग्रह के रूप में था, इस कारण हमारी अर्थ-व्यवस्था पर उसका बहुत बोझ पड़ा, और वह अत्यधिक और फालतू आयात के रूप में प्रकट हुआ। बाद के दो वर्षों में विनियोग का स्तर गिरकर ५ प्रतिशत या इसके आस-पास रह गया। १९५४-५५ में यह फिर बढ़ा और राष्ट्रीय आय के ६ या ६·५ प्रतिशत तक पहुंच गया। योजना के अन्तिम वर्ष में यह ७·३ प्रतिशत था। प्रथम योजना के समस्त काल में विनियोग का औसत राष्ट्रीय आय का लगभग ६ प्रतिशत बैठता है, जो कि कुछ प्रभावशाली नहीं कहना। एक प्रकार से आर्थिक प्रवृत्ति का निश्चित अनुमान लगाने अथवा भविष्य के लिए उसके मार्ग की सूचना देने के लिए पांच वर्ष का समय बहुत थोड़ा है, विशेषतः जब कि वर्ष-प्रति-वर्ष विनियोग में उतार-चढ़ाव अधिक रहा हो। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि अब विनियोग का स्तर योजना आरम्भ होने से पूर्व के समय की अपेक्षा उल्लेखनीय रूप से ऊंचा हो चुका है।

६. यह बात भी उल्लेखनीय है कि विनियोग की दर ऊंची उठ जाने के साथ-साथ मुद्रा-स्फीति की बुराइयां प्रकट नहीं हुई। नीचे की तालिका में मुद्रा राशियों के चलन और मूल्य के विषय में मोटी-मोटी बातें दिखाई गई हैं :—

नकद मुद्रा और मूल्यों की स्थिति

वर्ग	इकाई	१९५०-५१	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	(८)
१. जनता के हाथ में नकद मुद्रा (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	१,९७२	१,८०४	१,७६५	१,७९४	१,९११	२,१८०
२. भारतीय रिजर्व बैंक के पास सरकारी हुण्डियां रुपयों में (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	५८६	५६७	५४६	४८७	५५३	७२६
३. अनुसूचित बैंकों द्वारा खरीदी हुई सरकारी हुण्डियां रुपयों में (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	३१६	२९६	३०३	३१९	३४४	३६०
४. अनुसूचित बैंकों द्वारा दिया हुआ उधार (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	५४७	५८०	५२९	५३९	५८०	७१३
५. भारतीय रिजर्व बैंक के पास विदेशी परिसंपत (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	८८४	७२३	७२४	७५३	७३०	७४६

(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	(८)
६. अदायगी सन्तुलन के चालू खाते में बचत (+) या घाटा (−)	करोड़ रु०	+५८	−१३६	+७७	+५७	+३	+१६*
७. थोक मूल्य (वित्तीय वर्ष के अन्तिम सप्ताह में)	देशनांक (अगस्त १९३९ = १००)	४५०	३७८	३८५	३९७	३४९	३६०
८. रहन-सहन का व्यय	देशनांक (१९४९ = १००)	१०१	१०४	१०४	१०६	९९	९६**
९. कृषि उपज	देशनांक (१९४९-५० = १००)	९६	९८	१०२	११४	११४	
१०. औद्योगिक उत्पादन (१९५० से १९५५ तक के पंचांगीय वर्षों की वार्षिक औसत)	(क) अन्तरिम देशनांक (१९४६ = १००)	१०५	११७	१२९	१३५	१४७	१६१
	(ख) संशोधित देशनांक (१९५१ = १००)	...	१००	१०३.६	१०५.५	११८.९	१२२.३

प्रथम योजना के अन्त में बाजार-मूल्य योजना आरम्भ होने के समय की अपेक्षा १३ प्रतिशत नीचे थे; वस्तुतः वे कोरिया का युद्ध छिड़ने से तुरन्त पूर्व के समय से भी कुछ नीचे ही थे। भारत भर में रहन-सहन के व्यय का देशनांक १९५५ में ९६ और १९४९ में १०० था। १९५१ के आरम्भ में जनता के हाथ में व्यय करने के लिए जितना नकद रुपया था उसकी तुलना में १९५५-५६ में २०८ करोड़ रुपए अधिक था, अर्थात १० प्रतिशत से कुछ अधिक, जबकि राष्ट्रीय आय में १८ प्रतिशत वृद्धि होने का अनुमान था। विदेशों के साथ देश का अदायगी सन्तुलन १९५२-५३ में सुधरा और ७७ करोड़ रुपए की बचत हुई। १९५३-५४ में ४३ करोड़ रुपए की बचत रही, १९५४-५५ में यह हिसाब लगभग बराबर रहा, और १९५५-५६ में थोड़ी बचत होने की आशा है। रिजर्व बैंक के पास विद्यमान विदेशी मुद्राएं पांच वर्षों में १३८ करोड़ रुपए घट गईं। परन्तु इसकी तुलना में, योजना में कल्पना की गई थी कि यह कमी २९० करोड़

* यह अंक वर्ष के पहले नौ महीनों का है।

** यह अंक अप्रैल १९५५ से जनवरी १९५६ तक का है।

रुपए की होगी। यद्यपि हाल के इन महीनों में नकदी चलन के परिमाण और मूल्यों में एकदम वृद्धि हो जाने के लक्षण दिखाई पड़े हैं—और इन पर ध्यान रखने की आवश्यकता है—तथापि सब मिलाकर स्थिर और निरन्तर उन्नति ही सामने आती रही है। अन्य कई देशों में मुद्रा-स्फीति का दबाव भारत की अपेक्षा कहीं अधिक है। द्वितीय योजना आरम्भ करने के समय हमारी आर्थिक स्थिति प्रथम योजना आरम्भ करने के समय की अपेक्षा बहुत अच्छी है और सब ओर अधिक प्रयत्न के लिए उत्साह और विश्वास दृष्टिगोचर होता है।

७. इन लाभों के बावजूद भी, सचाई यह है कि भारत में रहन-सहन का दर्जा संसार के निम्नतम दर्जों में से है। यहां खाद्य की औसत खपत, पोषक भोजन के माने हुए स्टैण्डर्ड से भी नीची है; १९५५-५६ में वस्त्र का प्रति व्यक्ति व्यय कोई १६ गज प्रति वर्ष था, जो कि विश्व युद्ध से पहले भी लगभग इतना ही था; मकान बहुत कम हैं; ६ से ११ वर्ष तक की आयु के बालकों में से केवल आधे और ११ से १४ वर्ष तक की आयु के बालकों में से तो केवल एक-पांचवां भाग स्कूल जाते हैं। भारत की लगभग आधी आबादी केवल १३ रुपए प्रति मास उपभोग्य पदार्थों पर व्यय कर सकती है। हमारे यहां बिजली का प्रति-व्यक्ति व्यय, अमेरिका की तुलना में १/७३ और इस्पात का १/१२२ है। जापान की तुलना में इन दोनों वस्तुओं का व्यय क्रमशः १/९ और १/१४ है। भारत की आबादी में वृद्धि कई उन्नत देशों की अपेक्षा अधिक नहीं हो रही, परन्तु फिर भी प्रति वर्ष ४५ से ५० लाख तक आबादी बढ़ जाने का मतलब, वर्तमान स्तर पर भी उपभोग्य पदार्थों की मांग का अति विशाल परिमाण में बढ़ जाना होता है। और इसके कारण द्रुत गति से आर्थिक उन्नति करने के लिए इतने आवश्यक पुर्जों और मशीनों का बढ़ाना बहुत कठिन हो जाता है। देश में श्रमिकों की संख्या बढ़ रही है, लेकिन उसके हिसाब से जीविकोपार्जन के अवसर नहीं बढ़ रहे। प्रथम योजना के काल में पूंजी-विनियोग में वृद्धि इतनी नहीं हुई कि नए श्रमिकों की खपत उसमें हो सकती। इसलिए बेरोजगार और अल्प-रोजगार वाले लोगों की बहुत बड़ी संख्या का प्रबन्ध करने का काम पड़ा हुआ है। द्वितीय योजना काल में विनियोग और जीविकोपार्जन के अवसरों को बहुत द्रुत गति से बढ़ाना होगा। प्रथम योजना के विवरण में इस विचार पर विशेष बल दिया गया था कि विकास के कार्य को एक अति दीर्घ-कालिक प्रक्रिया की दृष्टि से देखना चाहिए। कोई देश इसे छोटा करने के लिए कितना ही प्रयत्न क्यों न करे, यह प्रक्रिया छोटी नहीं हो सकती। द्वितीय योजना को तैयार करते हुए, निकट भविष्य की अनेक आवश्यकताएं सामने आने पर भी, भविष्य को दूर गामी दृष्टि से ही देखना चाहिए।

२

विकास के मूल अंग

८. विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए समाज के साधनों का अधिकाधिक सफलतापूर्वक उपयोग करना होता है। ये साधन कुछ प्रकृति के द्वारा दिए हुए होते हैं, परन्तु इन्हें नए वैज्ञानिक उपायों और ज्ञान के प्रयोग के द्वारा उन्नत किया जा सकता है और कर लिया जाता है। इस दृष्टि से वैज्ञानिक उपायों और ज्ञान का मूल्य पूंजी निर्माण की अपेक्षा भी अधिक है। किसी भी कम उन्नत अर्थ-व्यवस्था में प्रकृति द्वारा दिए हुए साधनों का पूरा ज्ञान नहीं होता और उनको उन्नत करने के लिए नई वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करना पड़ता है। इन साधनों की खोज और इनका उपयोग,

आरम्भिक अवस्था में है । आवश्यक वैज्ञानिक विधियों का ज्ञान भी अपर्याप्त है, इस कारण ज्ञात साधनों का उपयोग करने के लिए भी उन पर वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करना सरल नहीं । रहन-सहन के दर्जे को निरन्तर और अधिक ऊंचा उठाने के लिए न केवल ज्ञात साधनों के अधिक सफल उपयोग की अपितु ज्ञात टेकनीकों के भी अधिक अच्छे प्रयोग की आवश्यकता होती है । उसके लिए नए-नए साधनों की निरन्तर खोज करते रहना, और नवीन उत्पादक विधियों का विकास करते रहना आवश्यक होता है ।

९. यह कहना अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि देश का आर्थिक विकास अधिक शीघ्रता से करने के लिए जिस एक वस्तु का महत्व और सबसे अधिक है, वह उत्पादन की प्रक्रियाओं में आधुनिक टेकनोलोजी की विधियों का प्रयोग करने के लिए समाज की इच्छा और तत्परता है । इस क्षेत्र में नई प्रगति बहुत शीघ्र हो रही है और उसका प्रयोग न केवल उत्पादन, परिवहन और अन्य आर्थिक कार्यों के संगठन के लिए बल्कि आर्थिक और सामाजिक संगठन से सम्बद्ध प्रश्नों का हल करने में भी महत्वपूर्ण है । विकास में पीछे रह जाने का कारण टेकनोलोजीकल विधियों में पर्याप्त उन्नति न कर सकना होता है और इस अपर्याप्त उन्नति का कारण विविध राजनीतिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक परिस्थितियां होती हैं । यदि इन परिस्थितियों में अभीष्ट परिवर्तन हो जाए, तो टेकनीक में उन्नति करने मात्र से विकास की गति तीव्र हो सकती है । जिन देशों में औद्योगिक जीवन का आरम्भ विलम्ब से होता है वे कुछ लाभ में भी रहते हैं, क्योंकि वे उन वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग कर सकते हैं जिनकी दूसरे उन्नत देशों में परीक्षा हो चुकी है । परन्तु इसके लिए आवश्यक है कि विज्ञान और टेकनोलोजी में अन्यत्र जो प्रगति हो चुकी है, उसके साथ-साथ चलने का भी ध्यान रखा जाए । सारांश यह है कि नए-नए साधनों की खोज, नई वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग और उपलब्ध जनशक्ति का विकास कार्यों के लिए आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार उपयोग, विकास की नींव का काम देता है ।

१०. प्रथम योजना के विवरण में विकास के निर्णायक प्रधान तत्वों का निर्देश करते, इस बात पर बल दिया गया था कि आर्थिक उन्नति के लिए टेकनीकों और मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक परिस्थितियों और अपने सामाजिक संगठन में आवश्यक परिवर्तन करने के लिए समाज की तत्परता का महत्व तो होता ही है, परन्तु उनसे भी अधिक जिन तीन बातों पर आर्थिक विकास निर्भर करता है, वे हैं : (१) जनसंख्या में वृद्धि, (२) समाज ने पूंजी-विनियोग के लिए अपनी आय का कितना भाग बचाया, और (३) इस प्रकार जिस पूंजी का विनियोग किया उससे अतिरिक्त उत्पादन कितना हुआ । प्रथम योजना में इन तीनों बातों के आधार पर आगामी कुछ दशकों में विकास के संभावित क्रम की कल्पना कर ली गई थी । प्रथम योजना के काल में हमें जो अनुभव हुआ और अन्य देशों में विकास की प्रगति का निश्चय करने के लिए जो कसौटियां निर्धारित की गई हैं, उनके आधार पर हम इनकी समीक्षा कर सकते हैं ।

११. जनसंख्या की वृद्धि के विषय में कुछ ही बातों की चर्चा करने की आवश्यकता है । जनसंख्या के वृद्धि के क्रम में परिवर्तन शीघ्र नहीं किया जा सकता और किसी नियत काल के लिए योजना बनाते हुए, जो प्रगतियां पहले आरम्भ हो चुकी हैं उनके आधार पर ही आगे बढ़ा जा सकता है । परन्तु यदि जनसंख्या की वृद्धि के क्रम को उचित ढंग से परिवर्तित कर दिया जाए, तो उस काल में विकास के प्रयत्नों का परिणाम अवश्य रूप से भिन्न हो सकता है । हमारे इन प्रयत्नों में परम्परागत विश्वास और विचार बाधक हो सकते हैं । ऐसे देश अधिक नहीं हैं जिनकी सरकारों ने जनसंख्या की वृद्धि के विषय में कोई निश्चित नीति अपना रखी हो । परन्तु इस सम्बन्ध में जनता के विचारों और प्रवृत्तियों को

बदला जा सकता है, और वे, जितना हम समझते हैं, उसकी अपेक्षा शीघ्रता से बदल भी रही हैं। वस्तुस्थिति के तर्क का खण्डन कोई भी नहीं कर सकता, और यह एक असंदिग्ध सत्य है कि भारत की वर्तमान परिस्थितियों में जिस गति से जनसंख्या में वृद्धि हो रही है, उसका आर्थिक विकास और लोगों के रहन-सहन के दर्जे पर अवश्य ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। हमारे देश की जनसंख्या के हिसाब से, हमारे यहां भूमि और पूंजी दोनों की कमी है और इसलिए यदि लोगों के रहन-सहन और आय में उन्नति करनी हो तो जनसंख्या की वृद्धि को रोकना अत्यन्त आवश्यक है। इसका महत्व इस कारण से और भी अधिक है कि जन-स्वास्थ्य में उन्नति और रोगों तथा महामारियों के निरोध में सफलता का स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि लोगों की आयु बढ़ जाएगी। सम्भव है कि अगले २० या २५ वर्षों में जनसंख्या की वृद्धि के क्रम में भी कुछ परिवर्तन हो जाए। परन्तु अभी तो जनसंख्या घटाने के सब प्रयत्न करने पर भी जनसंख्या में वृद्धि का प्रभाव अधिक ही अनुभव होने की सम्भावना है। इस कारण जनसंख्या में वृद्धि रोकने के लिए प्रभावकारी कार्यक्रम अपनाने की आवश्यकता है।

१२. *प्रथम पंचवर्षीय योजना (प्रतिवेदन १९५२) के प्रथम अध्याय में एक ग्राफ* दिया गया था, जिसमें यह दिखाया गया था कि अगले २५ या ३० वर्षों में जनता की आय और व्यय में वृद्धि किस दिशा में होने की सम्भावना है। इस ग्राफ में देश की आय, पूंजी-विनियोग और खपत का परिमाण दिखाने के लिए जो रेखाएं खींची गई थीं, उनसे ही यह भी प्रकट किया गया था कि विकास के लिए जो प्रयत्न किए जाएंगे उनका फल एक पीढ़ी के पश्चात क्या निकलेगा। उससे प्रकट होता था कि यदि निरन्तर प्रयत्न जारी रखा जा सका तो १९७१-७२ में अर्थात लगभग २१ वर्षों में, हमारी राष्ट्रीय आय १९५०-५१ की तुलना में दुगुनी हो जाएगी। इसी प्रकार यह भी दिखाया गया था कि १९५०-५१ में प्रति व्यक्ति की जो आय थी वह १९७७-७८ तक, अर्थात लगभग २७ वर्षों में, दुगुनी हो जाएगी। इसका अर्थ यह था कि १९५०-५१ की तुलना में, १९७७-७८ तक हमारे जीवन-व्यय का औसत मान लगभग ७० प्रतिशत ऊंचा हो जाएगा।

१३. यह हिसाब लगाते हुए यह मान लिया गया था कि जिस काल के लिए यह ग्राफ बनाया गया था उसमें जनसंख्या में प्रति दस वर्ष पीछे १२·५ प्रतिशत की वृद्धि होगी। परन्तु अब वृद्धि के इस क्रम को कुछ ऊंचा मानकर चलना अधिक उचित जान पड़ता है। १९५१–६० के दशक के लिए तो शायद १२·५ प्रतिशत की कल्पना ठीक है, परन्तु उसके बाद के दशकों में यह कल्पना करते हुए, इस बात को भी ध्यान में रखना पड़ेगा कि जन-स्वास्थ्य में सुधार और रोगों के निरोध के कारण लोगों की आयु बढ़ जाएगी और परिवार-नियोजन के प्रचार के कारण जन्म-संख्या कुछ घट जाएगी। इन बातों के विचार में कुछ मतभेद का भी होना सम्भव है। अब जो नक्शा बनाया जा रहा है उसमें १९६१–७० के दशक के लिए जनसंख्या में वृद्धि का क्रम १३·३ प्रतिशत और १९७१–८० के दशक के लिए १४ प्रतिशत माना गया है। इस आधार पर देश की आबादी १९६०-६१ में ४० करोड़ ८० लाख, १९६५-६६ में ४३ करोड़ ४० लाख, १९७०-७१ में ४६ करोड़ ५० लाख और १९७५-७६ में ४९ करोड़ ९० लाख अथवा प्रायः ५० करोड़ हो जाएगी। ये अन्दाजे, १९५१ की जन-गणना रिपोर्ट में जन-गणना आयुक्त द्वारा लगाए हुए अधिकतम और न्यूनतम अन्दाजों के मध्य में हैं। जन-गणना आयुक्त ने अपने अन्दाजों के विषय में सन्देह प्रकट किया था कि वे शायद कुछ कम होंगे। सम्भव है कि यही बात इन अन्दाजों के विषय में भी ठीक हो।

१४. प्रथम योजना प्रतिवेदन में यह कल्पना की गई थी कि १९५०-५१ में राष्ट्रीय आय का ५ प्रतिशत विनियोग किया गया था, और वह १९६८-६९ तक बढ़कर लगभग २० प्रतिशत हो जाएगा, और उसके पश्चात इतना ही रहेगा। पूंजी-विनियोग और उत्पादन का अनुपात ३ और १ माना गया था, और यह अन्दाजा लगाया गया था कि इन दोनों के अनुपात में वृद्धि दो वर्ष पश्चात होगी। गत पांच वर्षों में राष्ट्रीय आय में १८ प्रतिशत वृद्धि हुई है। यह पहले लगाए हुए अन्दाजे से ७ प्रतिशत अधिक है। यह मानने के पश्चात भी कि इन पांच वर्षों में बहुत-सी बातें विशेष रूप से अनुकूल रही थीं, अगले वर्षों के लिए राष्ट्रीय आय में वृद्धि का अन्दाजा करते हुए विनियोग और उत्पादन के अनुपात को अधिक अच्छा मानकर आगे बढ़ा जा सकता है। जनता द्वारा की गई बचत की राशि में वृद्धि होने के कारण विनियोग में जो वृद्धि होगी, उसका भी अन्दाजा फिर लगाना होगा।

१५. प्रथम योजना की अवधि के लिए विनियोग और उत्पादन का बढ़ा हुआ अनुपात १·८ : १ निकलता है। यह अति अनुकूल परिणाम कुछ तो अच्छी वर्षा के कारण और कुछ इस कारण निकला है कि अब तक अप्रयुक्त सामर्थ्य का उपयोग कर लेने के कारण औद्योगिक उत्पादन में अच्छी वृद्धि हो गई। आशा है कि द्वितीय योजना काल में, जैसा कि आगे दिखाया गया है, ६,२०० करोड़ रुपए का विनियोग हो सकेगा, और उससे राष्ट्रीय आय में २,६८० करोड़ रुपए की वृद्धि हो जाएगी। इस आधार पर विनियोग और उत्पादन का अनुपात २·३ : १ निकलता है। यह अनुपात योजना के सरकारी और निजी भागों में उत्पादन और विनियोग में वृद्धि होने की जो कल्पना की गई है, उसके आधार पर निकाला गया है। दूसरे शब्दों में, यह अनुपात ग्राफ तैयार करने वाले अधिकारियों ने जो संख्याएं दीं उनके आधार पर निकाला गया है। परन्तु इन अन्दाजों में कुछ अंश कल्पना का भी है, क्योंकि हमारी अर्थ-व्यवस्था के कुछ अंग ऐसे भी हैं जिनमें वृद्धि की कल्पना परोक्ष साक्षियों के आधार पर करनी पड़ती है। द्वितीय योजना में औद्योगिक उन्नति पर बहुत बल दिया गया है, इसलिए आशा है कि उसमें पूंजी का विनियोग प्रथम योजना की अपेक्षा अधिक होगा। इसके बाद की योजना अवधियों में अतिरिक्त उत्पादन की प्रत्येक इकाई के पीछे पूंजी का परिमाण इसी हिसाब से बढ़ता जाएगा। इस हिसाब से हमने तीसरी, चौथी और पांचवीं योजना अवधियों के लिए विनियोग और उत्पादन के अनुपातों का अन्दाजा क्रमशः २·६, ३·४ और ३·७ लगाया है। ये उदाहरण मात्र हैं। विनियोग और उत्पादन में अनुपातों का ठीक-ठीक हिसाब तो विकास के निश्चित कार्यक्रम बन जाने और लागत तथा पैदावार का हाल ज्ञात हो जाने पर ही लगाया जा सकता है।

१६. विनियोग और उत्पादन में अनुपात की चर्चा, वस्तुतः योजना के विविध भागों में पूंजी-विनियोग से उत्पादन का परिमाण प्रकट करने का एक सरल उपाय मात्र है। यह उत्पादन केवल लगी हुई पूंजी पर ही नहीं, अन्य अनेक बातों पर भी निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, लगाई हुई पूंजी को प्राविधिक सहयोग कितना मिला, नए यन्त्रों का प्रयोग कितनी कुशलता से किया गया और प्रबन्ध और संगठन कितनी उत्तमता से किए गए, इत्यादि। यह भी देखा गया है कि सुयोजित अर्थ-व्यवस्था में लगाई गई पूंजी की प्रत्येक इकाई के उत्पादन का परिमाण, अनुयोजित अर्थ-व्यवस्था की अपेक्षा बढ़ जाता है। इसका कारण यह है कि योजना के द्वारा विविध कार्यक्रमों में सहयोग अधिक अच्छी प्रकार हो सकता है, और अनियन्त्रित बाजारों में एकदम जो तेजी और मन्दी आती रहती है, उससे बचाव हो जाता है। विनियोग का उपयोग विभिन्न अंगों में किस प्रकार किया गया है, इस बात पर भी बहुत कुछ निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, कहा जाता है कि रूस में विनियोग और उत्पादन का अनुपात अच्छा होने का कारण यह है कि वहां मकानों पर

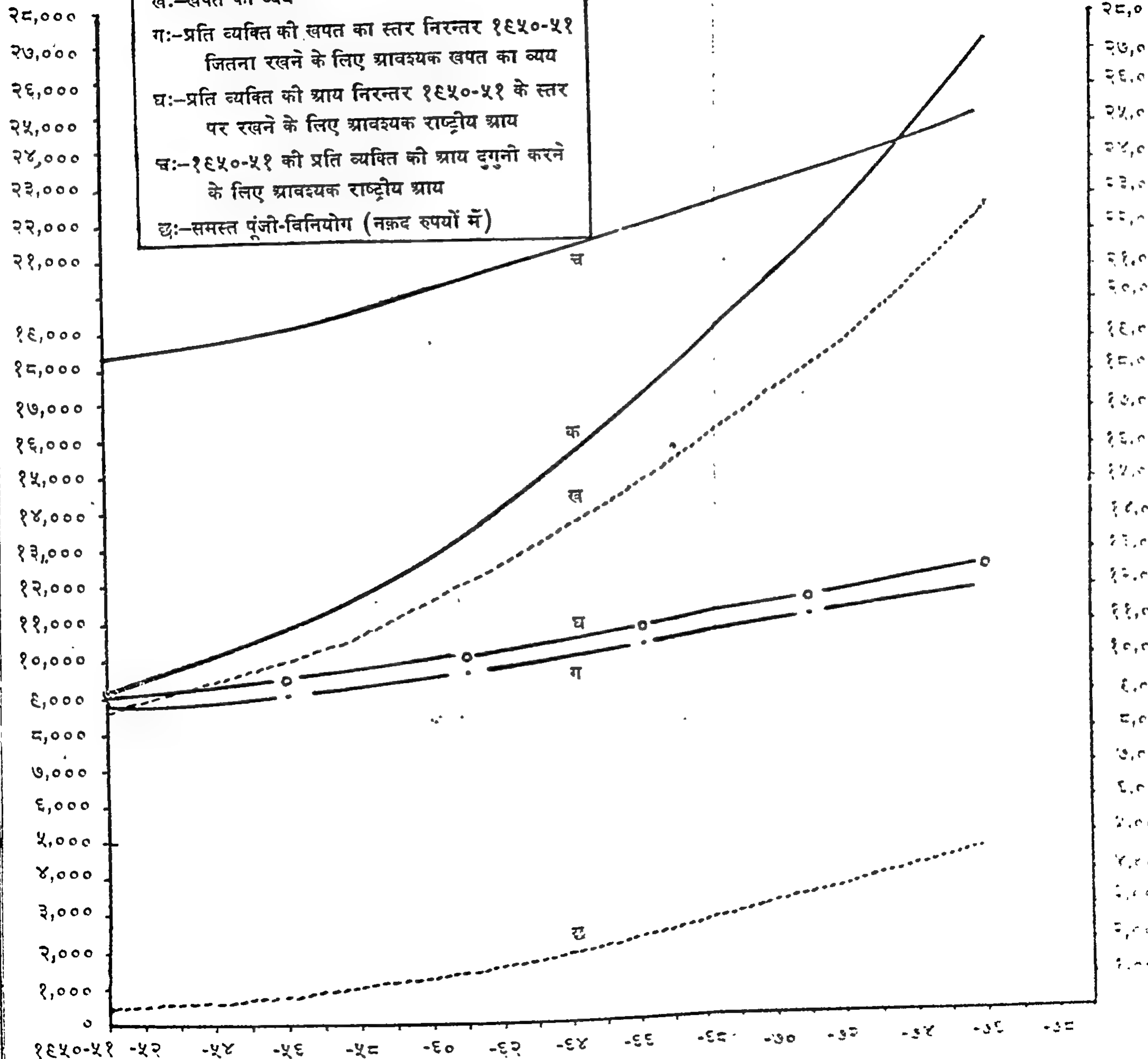
अपेक्षाकृत कम व्यय किया जाता है। विनियोग और उत्पादन का अनुपात इस बात पर भी निर्भर करता है कि ऊपरी प्रबन्ध आदि में कितना खर्च किया गया। ऊपरी प्रबन्ध आदि में व्यय की गई पूंजी का पूरा लाभ उठाने में समर्थ होने से पहले तक, हमें कुछ समय कम लाभ से ही सन्तुष्ट रहना पड़ेगा। इन विविध कारणों का ही यह फल है कि विभिन्न देशों और विभिन्न समयों में विनियोग और उत्पादन के जो अनुपात निकाले जाते हैं, उनमें परस्पर इतना अधिक अन्तर रहता है। सब मिलाकर, यदि कई देशों के विनियोग और उत्पादन के अनुपातों को मिलाकर देखा जाए तो वे बहुधा ३ : १ और ४ : १ के बीच में रहते हैं। कुछ देशों और कुछ समयों के अनुपात इससे कम-ज्यादा भी होते हैं। भारत के लिए हमने विनियोग और उत्पादन के जिन अनुपातों की कल्पना की है, उनकी अन्य देशों के अनुपातों से तुलना करते हुए, यह स्मरण रखना चाहिए कि हमने पूंजी-विनियोग की गणना में उस विनियोग को सम्मिलित नहीं किया जो कि नकद रूप में नहीं हुआ। देहातों की अर्थ-व्यवस्था में इस प्रकार के विनियोग का परिमाण बहुत बड़ा होता है। हमारे देश की कम रोजगारी आदि की परिस्थितियों में शारीरिक श्रम और स्थानीय सामान के उपयोग का महत्व बहुत अधिक है और उसे प्रोत्साहन भी दिया जाए।

१७. इतने विचार के पश्चात यह प्रश्न उपस्थित होता है कि सम्भावित विनियोग का स्तर क्या रहेगा और वह पूरा हो सकेगा या नहीं। प्रथम योजना में यह मान लिया गया था कि १९५६-५७ से बचत ५० प्रतिशत होने लगेगी, और इस आधार पर यह हिसाब लगाया गया था कि १९६८-६९ तक विनियोग की दर राष्ट्रीय आय का २० प्रतिशत होकर, उसके बाद उतनी ही रहेगी। अब लगता है कि ये कल्पनाएं बहुत ऊंची कर ली गई थीं। अब जो अन्दाजे लगाए गए हैं उनमें यह माना गया है कि विनियोग का अंक १९५५-५६ में ७ प्रतिशत से बढ़कर १९६०-६१ तक ११ प्रतिशत, १९६५-६६ तक १४ प्रतिशत और १९७०-७१ तक १६ प्रतिशत हो जाएगा। उसके पश्चात् यह कुछ स्थिर रहकर १९७५-७६ में १७ प्रतिशत तक पहुंचेगा। राष्ट्रीय आय के १६ या १७ प्रतिशत भाग का विनियोग होना ऊंचा तो अवश्य है, परन्तु असाध्य नहीं है। पश्चिम के जो देश बहुत पहले अपना औद्योगिक जीवन आरम्भ कर चुके थे उनमें पूंजी निर्माण का क्रम १० से १५ प्रतिशत तक रहा था। जापान में १९१३ और १९३९ के बीच में विनियोग का औसत राष्ट्रीय आय के १६ से २० प्रतिशत तक था। रूस में विनियोग की दरों को निरन्तर बहुत ऊंचे स्तर पर, १५ और २० प्रतिशत के बीच में, स्थिर रखा गया है। एशियाई देशों के विषय में जो जानकारी मिली है उसके अनुसार १९५० के पश्चात बर्मा में पूंजी निर्माण का क्रम राष्ट्रीय आय के १० से २० प्रतिशत तक, जापान में २४ से ३० प्रतिशत तक, श्रीलंका में १० से १३ प्रतिशत तक और फिलीपीन द्वीपों में ७ से ८½ प्रतिशत तक रहा है। इनकी तुलना में भारत के ये अंक १० से ११ प्रतिशत तक हैं। दक्षिण अमेरिका के देशों में यह क्रम १५ प्रतिशत के आसपास रहा है। बीच-बीच में यह इससे ऊपर भी उठता रहा है। चेकोस्लोवाकिया तथा पोलैंड आदि पूर्वी योरुप के कुछ देशों में पूंजी विनियोग का औसत २० से २५ प्रतिशत के मध्य रहा है। जिन देशों में विकास का कार्य नया आरम्भ हुआ है, उनमें सरकारें चाहें तो विनियोग के लिए उपयुक्त नीतियों और कार्यक्रमों को अपनाकर इन दरों को, निश्चय ही, वर्तमान दरों से ऊंचा उठा सकती हैं। भारत में भी विनियोग-दर को उससे ऊंचा उठाया जा सकता है जिसका कि अभी उल्लेख हुआ है।

१८. संलग्न ग्राफ में इन कल्पनाओं के आधार पर निकाले हुए परिणाम दिखाए गए हैं। ग्राफ के अनुसार राष्ट्र की आय १९६७-६८ तक और प्रति व्यक्ति की आय १९७३-७४

भारत की राष्ट्रीय आय, खपत और पूंजी-विनियोग का ग्राफ

१९५२-५३ के मूल्यों के आधार पर



तक दुगुनी हो जाएगी। एक बात ध्यान में रखने की यह है कि प्रथम योजना काल में राष्ट्र की आय में वृद्धि क्योंकि आशा से अधिक हो गई थी, इस कारण प्रथम और द्वितीय योजनाओं की समाप्ति पर राष्ट्र की आय में समस्त वृद्धि ४७ प्रतिशत होगी। प्रथम योजना के विवरण में इस वृद्धि का अन्दाजा केवल २५ प्रतिशत लगाया गया था। निम्नलिखित तालिका में विचाराधीन योजनाओं में क्रमशः अधिकाधिक बढ़ते हुए विकास को एकत्र दिखाया गया है :

१९५१—७६ में आय और विनियोग में वृद्धि

(१९५२-५३ के मूल्यों के आधार पर)

मद	प्रथम योजना १९५१-५६	द्वितीय योजना १९५६-६१	तृतीय योजना १९६१-६६	चतुर्थ योजना १९६६-७१	पंचम योजना १९७१-७६
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)
१. अवधि के अन्त में राष्ट्रीय आय (करोड़ रुपयों में) ...	१०,८००	१३,४८०	१७,२६०	२१,६८०	२७,२७०
२. समस्त शुद्ध विनियोग (करोड़ रुपयों में) ...	३,१००	६,२००	९,९००	१४,८००	२०,७००
३. अवधि के अन्त में राष्ट्रीय आय के कितने प्रतिशत का विनियोग हुआ ..	७·३	१०·७	१३·७	१६·०	१७·०
४. अवधि के अन्त में जन-संख्या (करोड़ों में) ..	३८·४	४०·८	४३·४	४६·५	५०·०
५. विनियुक्त पूंजी और उत्पादन का अनुपात	१·८:१	२·३:१	२·६:१	३·४:१	३·७:१
६. अवधि के अन्त में प्रति व्यक्ति आय (रुपयों में) ...	२८१	३३१	३९६	४६६	५४६

इस तालिका के अनुसार, द्वितीय और तृतीय योजनाओं की अवधियों में विनियोग में वृद्धि उनके पश्चात की आवश्यकताओं की अपेक्षा अधिक होगी। इस कारण इन दस वर्षों को विकास की भावी प्रगति का निश्चय करने की दृष्टि से निर्णायक माना जा सकता है। यह वह समय होगा जब कि लोगों के रहन-सहन का दर्जा और बचत करने की सामर्थ्य अपेक्षाकृत नीची होगी और इसलिए देश के साधनों को विदेशी सहायता द्वारा बढ़ाने की आवश्यकता रहेगी।

३

आर्थिक गठन में परिवर्तन

१६. यह बताने की आवश्यकता नहीं कि राष्ट्रीय आय, पूंजी-विनियोग और रोजगार में परिवर्तनों की पृष्ठभूमि में देश की आर्थिक परिस्थितियों में दूरव्यापी परिवर्तन हो जाते हैं। विकास के कारण न केवल माल की न्यूनता या अधिकता का, अपितु उनकी पूर्ति

और मांग का रूप भी बदल जाता है। ये परिवर्तन साधनों के प्रयोग में परिवर्तनों के कारण तो होते ही हैं, ये प्रयोग की शैली को भी बदल देते हैं। इनका वर्णन कोई राष्ट्रीय आय और पूंजी-विनियोग की भाषा में भले ही कर दे, परन्तु कोई भी व्यक्ति उस प्रत्यक्ष हेर-फेर की ओर से अपनी आंख नहीं मींच सकता जो कि इनके कारण देश की अर्थ-व्यवस्था में हो जाते हैं और जिनका होना आवश्यक भी है। स्पष्ट है कि राष्ट्रीय आय के दुगुना हो जाने का यह अर्थ नहीं है कि समाज को सब वस्तुएं और सेवाएं पहले की अपेक्षा दुगुने परिमाण में मिलने लगती हैं। सम्भव है कि अन्न आदि कुछ वस्तुओं की वृद्धि तो थोड़ी ही हो और अन्य कुछेक वस्तुएं कई गुना अधिक मिलने लगें। ज्यों-ज्यों समाज की आवश्यताएं पूरी होने लगती हैं, त्यों-त्यों नई आवश्यकताएं उत्पन्न हो जाती हैं और उन्हें नई प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन करके पूरा करना पड़ता है। इस प्रकार अर्थ-व्यवस्था का रूप नाना प्रकार का हो जाता है और जीवन की द्वितीय तथा तृतीय श्रेणियों की आवश्यकता के पदार्थ बनने लगते हैं। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ यह है कि राष्ट्रीय आय की धारा का वेग दुगुना हो जाने से उसका रूप और रचना भी बदल जाते हैं; कैसे और कितने बदल जाते हैं, यह पहले से बतला देना सुगम नहीं है। इसलिए मांग और पूर्ति के परिवर्तनों का अध्ययन निरन्तर करते रहने की आवश्यकता होती है। हमारे साधन जितने लचकीले और गतिशील होंगे उतनी ही हमारी अर्थ-व्यवस्था की उन्नति शीघ्र हो सकेगी। आर्थिक उन्नति का एक स्वाभाविक परिणाम पेशों में परिवर्तन भी होता है।

२०. यद्यपि हमारे देश में गत तीन-चार दशकों में औद्योगिक उत्पादन में बहुत वृद्धि हुई है, तथापि हमारे यहां पेशों में परिवर्तन बहुत अधिक नहीं हुआ। मोटे हिसाब से अब भी ७० प्रतिशत लोग खेती और उससे सम्बद्ध पेशों में लगे हुए हैं, २·६ प्रतिशत खानों और कारखानों में, कोई ८ प्रतिशत भवन-निर्माण समेत छोटे व्यवसायों में, लगभग ७ प्रतिशत परिवहन, संचार और व्यापार से सम्बद्ध पेशों में और १० प्रतिशत से कुछ अधिक सरकारी नौकरियों, वकालत तथा अध्यापन आदि दिमागी कामों और घरेलू नौकरियों में लगे हुए हैं। इसका मतलब यह है कि हमारे यहां अभी तक द्वितीय और तृतीय अवस्था के पेशों में इतनी वृद्धि नहीं हुई है कि उसका जीवन की आरम्भिक अवस्था के पेशों पर प्रभाव पड़ता और न आरम्भिक अवस्था के पेशों से ही ऐसी फालतू गुंजाइश पैदा होती है कि अन्य पेशों का विस्तार होने के लिए अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न हो सकतीं। राष्ट्रीय आय और रोजगार में लगातार उन्नति होने के लिए समस्त अर्थ-व्यवस्था में चहुंमुखी विकास की आवश्यकता होती है। इस समय हमारे देश में खानों और कारखानों में काम करने वाले जितना कमाते हैं, उसकी तुलना में खेती और उससे सम्बद्ध पेशों में काम करने वालों की कमाई केवल पांचवां भाग होती है और व्यापार तथा अन्य नौकरियों की तुलना में वह कमाई एक-तिहाई बठती है। विकास का परिणाम यह होता है कि श्रमिकों का कुछ भाग खेती छोड़कर जीवन की द्वितीय और तृतीय अवस्था के पेशों में लग जाता है। परन्तु इसके लिए आवश्यक होता है कि जनता की अन्न और अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए खेती की पैदावार में भी वृद्धि हो जाए। इस प्रकार जीवन की द्वितीय और तृतीय अवस्था के पेशों के विस्तार का आधार सिंचाई, अच्छे बीज, रासायनिक खाद और वैज्ञानिक टेकनीक आदि की सहायता से खेती की उन्नति ही होता है। इन पेशों म प्रति व्यक्ति पीछे अधिक पूंजी विनियोग आवश्यक होता है। इस प्रकार अन्ततोगत्वा पेशों म फैलाव का आधार यही रहता है कि देश की अर्थ-व्यवस्था पूंजी-विनियोग कितना कर सकती है।

२१. अन्य देशों का अनुभव भी यही है कि ज्यों-ज्यों आर्थिक विकास होता गया त्यों-त्यों प्रारम्भिक पेशों में काम करने वालों की संख्या घटकर उद्योगों और अन्य पेशों में काम करने

वालों की संख्या बढ़ती गई। पेशों के सम्बन्ध में जो जानकारी उपलब्ध है उसके अनुसार, अमेरिका में १८७० और १९३० के मध्य खेती में लगे हुए लोगों का अनुपात ५४ प्रतिशत से घटकर २३ प्रतिशत, फ्रांस में ४२ प्रतिशत से २५ प्रतिशत और जापान में ८० प्रतिशत से ४८ प्रतिशत रह गया। जर्मनी में १८८० में यह अनुपात ३९ प्रतिशत था, १९३० में यह २२ प्रतिशत रह गया। ब्रिटेन में यह अनुपात १८७० में १५ प्रतिशत था, १९२० में वह घटकर ७ प्रतिशत रह गया। निस्संदेह, राष्ट्रीय आय में वृद्धि का पेशों की गठन में परिवर्तन की मात्रा के साथ कोई निश्चित सम्बन्ध नहीं है; यह परिवर्तन विविध प्रकार के प्राकृतिक साधनों और सुविधाओं की उपलब्धि, विकास के क्रम, विदेशी बाजारों तक पहुंच और विविध संस्थाओं सम्बन्धी अन्य अनेक बातों द्वारा नियन्त्रित होता रहता है। अमेरिका में १८६९–७८ से १८९४–१९०३ तक के मध्य प्रति दशक पीछे, प्रति व्यक्ति का राष्ट्रीय उत्पादन दुगुना हो जाने का परिणाम यह हुआ है कि खेती में लगे हुए श्रमिकों की संख्या लगभग ५० प्रतिशत से घटकर ३७ प्रतिशत रह गई। इस समय अमेरिका में जनता का केवल १२ प्रतिशत भाग खेती के पेशों में लगा हुआ है। जापान में १८७६ में जनता का ७७ प्रतिशत भाग खेती में लगा हुआ था, १९२० में वह घटकर ५२ प्रतिशत रह गया, और इस अवधि में राष्ट्र का उत्पादन ५ गुना बढ़ गया। स्कैंडि-नेवियन देशों (नार्वे, स्वीडन और डेनमार्क आदि) और स्विटजरलैंड की राष्ट्रीय आय-वृद्धि शीघ्र हुई है, फिर भी इन देशों में ब्रिटेन और अमेरिका की तुलना में खेती करने वाले लोगों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है। लैटिन अमेरिका के देशों में द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात बहुत उन्नति हुई है। वहां का अनुभव भी यही बतलाता है कि उस उन्नति के कारण बहुत-से लोग खेती छोड़कर अन्य उद्योगों में लग गए। संसार के उस भाग में १९४५ और १९५० के मध्य खेती करने वालों की संख्या ६० प्रतिशत से घटकर ५८ प्रतिशत रह गई। इसी काल में इस भू-भाग में विनियुक्त पूंजी की मात्रा एक-तिहाई, और प्रति व्यक्ति पीछे उत्पादन की मात्रा ४ प्रतिशत प्रति वर्ष से भी अधिक बढ़ गई।

२२. भारत में जनसंख्या के पेशेवार विभाजन की जानकारी १९५१ की जनगणना से ही मिलती है। इस जनगणना और इससे पहले की जनगणना के बीच के वर्षों में जो परिवर्तन हुए, उनका केवल कुछ अन्दाजा लगाया जा सकता है। १९५१ के पश्चात के स्वल्प काल में पेशों में हुए परिवर्तनों का स्पष्ट रूप से उल्लेख करना प्रायः असम्भव है। फिर भी छोटे-बड़े शहरों के विस्तार से प्रकट हो जाता है कि हमारे यहां पेशों की गठन पर नए परिवर्तनों का प्रभाव कैसा पड़ा है, तथापि हमारी दीर्घकालिक नीति का लक्ष्य यह होना चाहिए कि खेती करने वालों की संख्या में वृद्धि न्यूनतम हो। इस दिशा में हमें अपने प्रयत्नों को इस लक्ष्य पर केन्द्रित कर देना चाहिए कि खेती करने वालों की संख्या के स्थान पर वृद्धि खेती के उत्पादन और आय में हो; इतना ही नहीं कुछ समय के पश्चात खेती करने वालों की समस्त संख्या में भी कमी होनी चाहिए। हमारे परम्परागत छोटे उद्योगों में भी श्रमिकों की संख्या बढ़ाने की बहुत गुंजाइश नहीं है, प्रत्युत उनकी संख्या अब भी अधिक ही है। इस क्षेत्र में हमारी समस्या कुशल श्रमिकों में बढ़ती हुई बेरोजगारी को रोकने की और यन्त्रों, कार्य-प्रणालियों और संगठन को सुधारकर आमदनी को बढ़ाने की है। इसलिए जीविकोपार्जन के नए अवसर, खानों, छोटे-बड़े नए उद्योगों, भवन-निर्माण के कामों और जीवन की तृतीय अवस्था के पेशों में खोजने का प्रयत्न करना चाहिए। सब प्रयत्न करने पर भी सम्भव है कि कुछ वर्ष तक खेती करने वालों की संख्या में वृद्धि अनिवार्य हो जाए। परन्तु १९७५-७६ तक सब मिलाकर खेती वालों की संख्या सारी आबादी के ६० प्रतिशत या इसके आस-पास से अधिक नहीं रहनी चाहिए। इसके लिए

खानों और कारखानों में काम करने वालों की संख्या को लगभग चौगुना कर देना पड़ेगा। और इसके लिए इस क्षेत्र में पूंजी-विनियोग को भी उसी हिसाब से बढ़ाना पड़ेगा। जीविकोपार्जन के नए अवसर पर्याप्त मात्रा में खोजने के काम को इसी दृष्टि से देखना होगा। यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि इस काल में श्रमिकों की, अर्थात रोजगार की तलाश में रहने वाली जनता की संख्या भी बढ़ जाने की सम्भावना है—उदाहरणार्थ, अब स्त्रियां भी रोजगार तलाश करने लगी हैं। इस समय व्यापार के क्षेत्र में तथा अन्य नौकरियों में, बेरोजगारी और कम रोजगारी बहुत है। इससे प्रकट होता है कि उद्योगों, निर्माण, परिवहन और संचार आदि के कामों में जीविकोपार्जन के अवसर बढ़ाने की कितनी आवश्यकता है। इस दिशा में विकास करने से जीवन की तृतीय अवस्था के पेशों में भी आदमियों की मांग बढ़ जाएगी, और जो बहुत-से काम अब घरों में कर लिए जाते हैं उन्हें भी पृथक व्यापारिक कार्य का रूप प्राप्त हो जाएगा। इस प्रकार बहुत-से स्वतन्त्र छोटे व्यापारों और रोजगारों की उत्पत्ति हो जाएगी। स्पष्ट है कि जीविकोपार्जन के अधिकाधिक अवसर तलाश करने और पेशों की संख्या बढ़ाने की समस्याएं एक-दूसरे के साथ जुड़ी हुई हैं।

४

भौतिक और वित्तीय योजना

२३. समाज की जन-शक्ति के पेशों में आरंभिक अवस्था से द्वितीय और तृतीय अवस्थाओं की ओर होने वाला परिवर्तन इस बात का सूचक है कि जब विकास में प्रगति होने लगती है तब अन्य साधनों के प्रयोग में भी परिवर्तन किस प्रकार हो जाते हैं। ये सब परिवर्तन परस्पराश्रित होते हैं। सब साधन सन्तुलित रूप में आगे बढ़ते और उन्नत होते हैं। स्वभावतः इन सब परिवर्तनों और हेर-फेर की कल्पना पहले से एक साथ नहीं की जा सकती। फिर भी विकास की योजना बनाते हुए यह निर्णय—वह कितना ही सीमित और अस्थायी क्यों न हो—करना ही पड़ता है कि समाज के साधनों के प्रयोग में परिवर्तन किस दिशा में होना चाहिए और अभीष्ट फल की प्राप्ति के लिए उन पर नियन्त्रण किस प्रकार किया जा सकता है। साधनों की समस्या को इस दृष्टि से देखने को कभी-कभी भौतिक योजना का नाम दे दिया जाता है। वस्तुतः साधनों की समस्या पर इस प्रकार विचार करते हुए यह देखा जाता है कि विकास के प्रयत्न का विविध साधनों के विभाजन पर और उत्पादन पर, आमदनी और रोजगार को अधिकतम बढ़ाने की दृष्टि से क्या प्रभाव पड़ेगा। अभिप्राय यह है कि जब कोई कार्यक्रम बनाया जाए, अर्थात उस पर होने वाले व्यय और लाभों का अन्दाजा लगाया जाए, तब वित्तीय और आर्थिक पर्दे के पीछे दृष्टि डालकर उस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए जिन वास्तविक साधनों की आवश्यकता पड़ेगी, उनका और उसके पूरा हो जाने पर अपनी अर्थ-व्यवस्था के महत्वपूर्ण भागों में तैयार माल की मांग और पूर्ति पर जो प्रभाव पड़ेगा, उसका भी अन्दाजा लगा लेना चाहिए। उदाहरणार्थ, यदि कोई योजनाधिकारी किसी कार्यक्रम पर १०० करोड़ रुपए व्यय हो जाने का अन्दाजा लगाए, तो उसका अर्थ यह होगा कि उस कार्य के लिए इतने यन्त्रों, इतनी निर्माण-सामग्री और इतने श्रमिकों आदि की आवश्यकता पड़ेगी। इसलिए प्रश्न केवल यह नहीं होगा कि पूंजी की उतनी राशि एकत्र किस प्रकार की जाएगी—यद्यपि यह प्रश्न भी महत्वपूर्ण है—बल्कि यह होगा कि अभी जिन वास्तविक साधनों की चर्चा की गई, वे प्राप्त किए जाएं या नहीं और यदि किए जाएं तो किस प्रकार। इसी प्रकार जब वह कार्यक्रम पूरा हो जाएगा तब प्रश्न होगा कि उससे होने वाले लाभों का उपयोग किस प्रकार किया

जाएगा और उसके कारण किन नई मांगों की पूर्ति होगी अथवा कौन-सी मांगें खड़ी होंगी। यदि इन सब बातों का अन्दाजा पहले से ही भली प्रकार न लगा लिया जाए तो सम्भव है कि उक्त कार्यक्रम में लगाए गए साधन व्यर्थ ही चले जाएं। इसके अतिरिक्त, वास्तविक साधनों प्रयोग को केवल उक्त कार्यक्रम की पूर्ति की दृष्टि से नहीं, अपितु विकास के सम्पूर्ण कार्यक्रम की दृष्टि से देखना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस बात का भी अध्ययन करना पड़ेगा कि किसी विशेष कार्यक्रम की पूर्ति हो जाने पर उत्पादन में जो वृद्धि होगी उसके कारण किन नई वस्तुओं की और कितनी मांग उत्पन्न हो जाएगी।

२४. दूसरे शब्दों में, योजना बनाते हुए वास्तविक साधनों के प्रयोग को निश्चित सन्तुलन में रखने की आवश्यकता होती है। योजना के कारण, पहले तो साधनों का विद्यमान सन्तुलन बिगड़ जाता है और फिर एक उच्चतर स्तर पर नया सन्तुलन स्थापित हो जाता है। योजना बनाते हुए बहुधा इस प्रकार के प्रश्न सामने आते हैं : क्या जरूरत के लायक यंत्र मिल सकेंगे ? क्या कुशल और अनुभवी कर्मचारी आवश्यक संख्या में मिल जाएंगे ? कुछ यन्त्र-सामग्री विदेशों से तो नहीं मंगानी पड़ेगी ? और यदि मंगानी पड़ेगी, तो क्या उनका मूल्य चुकाने के लिए आवश्यक मात्रा में अतिरिक्त निर्यात किया जा सकेगा ? क्या उनसे आवश्यक मात्रा में जीविकोपार्जन के नए अवसर उत्पन्न हो सकेंगे ? और क्या उनसे राष्ट्रीय आय में आशानुरूप वृद्धि हो सकेगी ? यदि किसी कार्यक्रम के वास्तविक साधनों का अन्दाजा ठीक-ठीक लगा लिया जाए, तो किसी हद तक उसके लिए आवश्यक पूंजी का भी अन्दाजा लगाया जा सकता है और यदि कहीं ऐसा न हो सके, तो कम से कम उन कठिनाइयों का ज्ञान तो हो ही जाता है, जिनका सामना आगे चलकर होने की सम्भावना होती है। बड़ी संख्या में कुशल कर्मचारियों और अन्य विशेषज्ञों को प्रशिक्षित करने की समस्या पर विचार, इसके अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार नहीं किया जा सकता।

२५. यहां इस बात पर जोर देना जरूरी है कि योजना बनाते हुए साधनों के सन्तुलन का ध्यान, वास्तविक साधनों और वित्तीय साधनों, दोनों की दृष्टि से रखा जाना चाहिए। उत्पादन की प्रक्रिया में नकद द्रव्य की आय तो हो ही जाती है और उत्पन्न पदार्थों का उपयोग नकद द्रव्य के कारण नई होने वाली मांग को पूरा करने में हो जाता है। इसलिए यह बात महत्वपूर्ण है कि नकद रुपए के रूप में जो नई आय हो, उसका उपयोग और नियन्त्रण इस प्रकार किया जाए कि लोगों की क्रय-शक्ति और उपलब्ध उपभोग्य पदार्थों में बचत और विनियोग में और विदेशों के साथ होने वाले आयात और निर्यात में सन्तुलन बना रहे। इसके अतिरिक्त प्रत्येक महत्वपूर्ण वस्तु की मांग और उपलब्धि में सन्तुलन रखना आवश्यक है। ये सब आवश्यक सन्तुलन रखने के उपाय अनेक हैं, जैसे कि मूल्यों में हेर-फेर, अग्रिम अदायगी, बजट की नीति में परिवर्तन और यदि आवश्यक हो तो पदार्थों के वितरण पर नियन्त्रण। परन्तु इस सन्तुलन को बनाए रखने की प्रक्रिया और साधनों की प्रक्रिया पहले से निश्चित करके उनको योजना में सम्मिलित कर लेना पड़ता है।

२६. वित्तीय योजना का लक्ष्य यह होना चाहिए कि पदार्थों की उपलब्धि और मांग में सन्तुलन इस प्रकार बना रहे कि भौतिक साधनों का यथाशक्ति अधिकतम उपयोग हो जाए और मूल्यों में अनियोजित परिवर्तन न होने पाए। वित्त और भौतिक साधनों की सन्तुलित उन्नति के लिए योजना बनाते हुए अनेक नए क्षेत्रों का भी अन्वेषण और अध्ययन करना पड़ता है। जिस देश की अर्थ-व्यवस्था विकास की प्रारम्भिक अवस्था में होती है, उसमें

योजना को आरम्भ करने के लिए आवश्यक सब जानकारी उपलब्ध नहीं होती और इस कारण आर्थिक योजनाओं का आरम्भ किन्हीं सरल नियमों के अनुसार नहीं किया जा सकता। इसलिए भौतिक और वित्तीय साधनों और विविध विभागों में उन्नति का समन्वय क्रमशः करके चलना पड़ता है। और क्रमशः प्राप्त अनुभव और विचारित नीति में मेल रखने के लिए निरन्तर प्रयत्न करते रहने की आवश्यकता होती है। वित्त अथवा देश के आंतरिक वित्त की समस्या विकास में प्रायः बाधक नहीं होती, क्योंकि उसे सदा ही घटाया-बढ़ाया जा सकता है। परन्तु आवश्यक साधनों का मूल्य चुकाने का प्रबन्ध हो जाने मात्र से इस बात का निश्चय नहीं हो जाता कि आवश्यक वास्तविक साधन मिल ही जाएंगे। यदि वे न मिले तो उनका मूल्य चुकाने के साधनों में वृद्धि अर्थ-व्यवस्था को उलट-पुलट देने का कारण बन सकती है। इसलिए ठीक-ठीक विश्लेषण करने पर ज्ञात होगा कि वित्तीय सन्तुलन पर बल देने का वास्तविक अर्थ, वास्तविक साधनों के प्रबन्ध और प्रयोग की ठीक-ठीक योजना बनाना ही है। विचार चाहे भौतिक योजना के विषय में करें, चाहे वित्तीय योजना के—दोनों एक-दूसरे के सहायक होते हैं—लक्ष्य सदा यही होता है कि अर्थ-व्यवस्था के निरन्तर उच्च से उच्चतर होते हुए स्तर पर सब साधनों में सन्तुलन बना रहे।

५

भावी रूप और परिवर्तन क्षमता

२७. आर्थिक विकास के लिए भौतिक साधनों के प्रयोग में बार-बार और बड़े-बड़े परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है। इसलिए कोई भी दीर्घकालीन योजना बनाते हुए इस बात का सदा ध्यान रखना पड़ता है। कुछ प्रयोजनों के लिए केवल पंचवर्षीय योजना की भाषा में सोचना पर्याप्त हो सकता है, परन्तु साथ ही उससे बहुत अधिक बड़े काल के विकास के चित्र को अपने विचार-चक्षु के सामने रखना पड़ता है। प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में विकास की मात्रा में पूर्ण सन्तुलन का होना सम्भव नहीं है, प्रत्युत किसी-किसी योजना में कुछ असन्तुलन जो किसी क्षेत्र में अति विकास और किसी क्षेत्र में कम विकास के रूप में प्रतीत होता है—शीघ्र विकास में सहायक हो सकता है। यह बात बिजली, परिवहन और आधारभूत उद्योगों जैसे विकास के विभागों में विशेष रूप से लागू होती है, क्योंकि इनमें एकदम बहुत बड़ी पूंजी का विनियोग करना पड़ता है। इस प्रकार का विनियोग करते हुए वर्तमान अथवा निकट भविष्य की आवश्यकताओं के स्थान पर यह देखना पड़ता है कि अब से १० या १५ वर्ष के पश्चात विकास की स्थिति अथवा आवश्यकताएं क्या होंगी। जिस देश में अर्थ-व्यवस्था का निरन्तर विकास होता रहता है, उसमें मांग एकदम बहुत अधिक भी बढ़ सकती है। उदाहरणार्थ, यह उल्लेखनीय है कि हमारे देश में गत कुछेक वर्षों में ही विद्युत्-शक्ति की मांग का स्वरूप इतना अधिक बदल गया कि जहां पहले यह भय हो रहा था कि उत्पन्न शक्ति का पूरा उपयोग हो सकेगा या नहीं अथवा वह बची तो नहीं रह जाएगी, वहां अब उसके कम पड़ जाने की चिन्ता होने लगी है। इस्पात, रासायनिक खाद और सीमेंट की मांग भी बहुत जल्दी-जल्दी बढ़ते जाने के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। यदि केवल एक पंचवर्षीय योजना को ध्यान में रखकर विचार करें तो बड़े यन्त्रों और अन्य पूंजीगत सामग्रियों के निर्माण की दिशा में जो कार्य किए जा रहे हैं, उनका महत्व बहुत अधिक नहीं जान पड़ेगा, परन्तु यदि उनको दीर्घकाल के विकास की दृष्टि से देखा जाए तो उनका महत्व बहुत अधिक दिखाई देने

लगेगा। निकट भविष्य का कार्यक्रम दीर्घकाल के पश्चात प्रकट होने वाले भावी रूप को सामने रखकर ही बनाना होता है। इससे स्पष्ट है कि जो योजनाएं बनाई जाएं, उनकी प्राविधिक परीक्षा दूर भविष्य को ध्यान में रखकर ही करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त योजना बनाते हुए वैज्ञानिक प्रगति और प्राकृतिक साधनों का उपयोग करने की नई यांत्रिक प्रणालियों को भी ध्यान में रखना पड़ता है। परन्तु दीर्घकाल का अर्थ अनेक स्वल्प कालों का योग मात्र है। और इसलिए यह निश्चय करके चलना आवश्यक है कि प्रत्येक पंचवर्षीय कार्यक्रम भविष्य में प्रकट होने वाले कार्यक्रमों के भावी रूप के साथ संगत होता चला जाए।

२८. अब तक जो विचार किया गया, उससे सब कार्यक्रमों को दीर्घकाल की दृष्टि से देखने की आवश्यकता प्रकट हुई। परन्तु इसके साथ ही, पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत स्वल्प समयों के कार्यक्रमों पर और भी सूक्ष्मता से ध्यान देने की आवश्यकता है। भविष्य में हम जो छलांगें लगाएंगे वे चाहे कितनी ही बड़ी और महत्वपूर्ण क्यों न हों, इस क्षण तो अधिक महत्व का हमारा अगला कदम ही है। इसलिए पंचवर्षीय योजनाओं को वार्षिक योजनाओं अथवा कार्यक्रमों में विभक्त करके चलना उचित है। और उनके परिणाम को भी इसी दृष्टि से जांचना चाहिए कि वर्ष भर में कितना कार्य किया गया। इसका यह अर्थ नहीं कि किसी कार्य-क्रम को अपनाते हुए अथवा उस पर विचार करते हुए उसमें कोई परिवर्तन न किया जाए, अपितु यह परिवर्तन सारी योजना की अपेक्षा वार्षिक योजना का ही भाग रहना उचित है। राज्य और केन्द्रों की सरकारें अपना कार्य वार्षिक बजट के आधार पर ही करती हैं। इससे उन्हें स्वभावतः यह अवसर मिल जाता है कि पंचवर्षीय योजना में कार्यक्रमों का जो वार्षिक विभाजन कर दिया गया है, उसकी परीक्षा करके वे उसमें आवश्यक हेर-फेर कर लें, परन्तु योजनाधि-कारियों को यह परिवर्तन यह सोचकर ही करना चाहिए कि अर्थ-व्यवस्था की समस्त आवश्यक-ताएं क्या हैं और जो वर्ष समाप्त हो रहा है, उसके कार्य की पूर्ति में उन्हें क्या अनुभव हुआ। परन्तु आज की परिस्थितियों में किए हुए कार्य की प्रगति का शीघ्र और ठीक अन्दाजा लगा सकना सुगम नहीं है, और इस कारण अगले वर्ष के कार्यक्रम का परिमाण भी सुगमता से निश्चित नहीं किया जा सकता। संघीय गठन में, यों भी, चालू वर्ष के कार्य का परिणाम जानने में कुछ विलम्ब लग जाता है और इसलिए उसके आधार पर आगामी वर्ष का कार्यक्रम शीघ्रता से नहीं बनाया जा सकता और न उसके लिए आवश्यक वित्तीय तथा अन्य साधनों का अन्दाजा लगाया जा सकता है। इन कठिनाइयों का हल संगठन में सुधार करके ही किया जा सकता है। योजना को कार्यान्वित करने के लिए यह आवश्यक है कि कार्य में जो सफलता या असफलता हो, उसके विषय में विभिन्न योजना विभागों और सरकारी विभागों में सूचनाओं और अनुभवों का आदान-प्रदान निरन्तर होता रहे। यह भी आवश्यक है कि केन्द्रीय तथा अन्य योजना कार्यालयों में जो जानकारी प्राप्त हो, उसका विचार और विश्लेषण शीघ्रता से कर लिया जाए। यह प्रक्रिया योजना के सरकारी क्षेत्र के ही नहीं, गैर-सरकारी क्षेत्र के सम्बन्ध में भी की जानी चाहिए। दोनों क्षेत्रों को मिलकर काम करना चाहिए। इस प्रसंग में हम इस बात पर विशेष बल देना चाहते हैं कि निजी क्षेत्र अथवा गैर-सरकारी क्षेत्र में विनियोग और विकास करने के जो कार्यक्रम बनाए जाएं, उनकी और उनकी प्रगति की सूचना, निरन्तर और नियमित रूप से मिलती रहनी चाहिए। उन्नत देशों में व्यापारिक संस्थाओं और संगठनों से यह सूचना पहले से प्राप्त कर ली जाती है कि वे कहां और कितनी पूंजी लगाने की सोच रहे हैं, उनके हाथ में कितना माल मौजूद है और कितने की मांग है, इत्यादि। इससे

मुद्रा-स्फीति अथवा मुद्रा-संकोच की प्रवृत्तियों पर दृष्टि रखने में भी सहायता मिलती रहती है। अनुन्नत देशों में इस प्रकार की जानकारी का मिलते रहना आगे की योजना बनाने और उसमें समय-समय पर हेर-फेर करते रहने के लिए और भी आवश्यक है।

२९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना की कल्पना एक ऐसे बड़े ढांचे के रूप में की गई है, जिसके भीतर रहकर ही वार्षिक योजनाओं को बनाया जाएगा। पांच वर्ष तक चलने वाली योजना को लचकीला रखना आवश्यक है। इस पुस्तक में जो द्वितीय पंचवर्षीय योजना उपस्थित की गई है, उसमें बतलाया गया है कि जो कार्य किए जाएंगे वे कितने बड़े और महत्वपूर्ण होंगे, जो विकास सुझाए गए हैं, उनसे किस प्रकार के लाभ हो सकेंगे और जो काम किए जाएंगे उनके लिए आवश्यक साधनों का संग्रह किन उपायों और प्रणालियों से किया जाएगा। योजना की सफलता के लिए जो नीति अपनाई जाएगी, उसका भी मोटा रूप प्रकट कर दिया गया है। परन्तु योजना कोई ऐसा व्यायाम नहीं है जिसे पांचों वर्षों के लिए केवल एक बार करके काम चल जाए। इसके लिए चालू अवधि और निकट भविष्य की प्रवृत्तियों पर निरन्तर ध्यान रखना पड़ता है। देश की टेकनीकल, आर्थिक और सामाजिक अवस्थाओं का नियमपूर्वक अध्ययन करना और नई आवश्यकताओं के अनुसार कार्यक्रमों में हेर-फेर करना पड़ता है। स्वभावतः पांच वर्ष के लिए जो अन्दाजे लगाए जाते हैं, उनमें कुछ अनिश्चितता रहती है। योजना में जो कार्यक्रम निर्धारित किए गए हैं, उनमें से कई एक की पूर्ति में निर्धारित से अधिक समय भी लग सकता है। जितनी बड़ी योजना की हमने कल्पना की है, उसमें अनुभव से ऐसे क्षेत्र भी प्रकट हो सकते हैं, जिनमें नियत कार्य को निर्धारित समय से पहले कर लेना और अन्य कुछ कार्यों को कुछ विलम्बित कर देना अधिक लाभदायक सिद्ध हो। भारत अपनी योजना किसी अर्थ-व्यवस्था से लग-बंधकर नहीं बना रहा है। सम्भव है कि विदेशों में होने वाले आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों के कारण हमें अपनी योजना में कुछ हेर-फेर करने पड़ जाएं। इन सब दृष्टियों से योजना को एक ऐसा ढांचा मात्र मानकर चलना चाहिए, जिसके भीतर रहकर प्रत्येक वर्ष के कार्य विस्तारपूर्वक निर्धारित और कार्यान्वित किए जाएंगे।

३०. अन्त में, हम दीर्घकालिक योजना के विषय में एक विचार प्रस्तुत करना चाहते हैं। हमारा खयाल है कि आगामी वर्षों में इस पर अधिकाधिक ध्यान देने की आवश्यकता पड़ेगी। यह विचार एशिया और अफ्रीका के विस्तृत और अविकसित भू-भाग के विकास की समस्याओं के विषय में है। यह भू-भाग अनेक राजनीतिक और सामाजिक कारणों से अभी तक प्रायः अविकसित रहा है। यहां के कुछ देशों की अर्थ-व्यवस्था या तो शेष संसार से अलग-थलग रही है या योरुप के उन देशों के साथ जुड़ गई है जिनके साथ उनका राजनीतिक सम्बन्ध हो गया था। इसका फल यह हुआ है कि इस भू-भाग में व्यापार के परस्पर आदान-प्रदान का परिमाण अधिक नहीं बढ़ पाया। और इस कारण इन देशों में परस्पर सहायता और व्यापारिक सम्पर्क का क्षेत्र प्रायः अविकसित पड़ा हुआ है। स्पष्ट है कि ज्यों-ज्यों इस भू-भाग में योजनापूर्वक विकास होता चला जाएगा, त्यों-त्यों उत्पादन की कुछ विशेष दिशाओं में विशेषता प्राप्त कर लेने, परस्पर लाभदायक व्यापार करने और जानकारी तथा अनुभव का आदान-प्रदान करने के अवसर अधिकाधिक मिलते चले जाएंगे। इन देशों में योजना की प्रगति विभिन्न स्थितियों में है और स्वभावतः इनमें से प्रत्येक देश की मुख्य दृष्टि यह रहेगी कि वह अपने साधनों का अधिकतम विकास अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करे और ऐसी दिशा में करे जो कि आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से उसके लिए अधिकतम लाभदायक हो। फिर भी यह आवश्यक है कि इनके

विकास के कार्यक्रम इस प्रकार बनाए जाएंगे कि उनमें तैयार पदार्थों और टेकनीकल जानकारी और अनुभव के परस्पर लाभदायक आदान-प्रदान की गुंजाइश रहे। जिन देशों में टेकनीकल जानकारी और कुशल तथा अनुभवी कर्मचारियों की कमी है, वे भी एक हद तक दूसरों की सहायता कर सकते हैं। कोलम्बो योजना में परस्पर सहयोग इसी आधार पर हो रहा है। इस भू-भाग के देशों के सामने जो समस्याएं आएं, उनका हल इसी दृष्टि से करने के लिए परस्पर विचारों तथा कुशल तथा अनुभवी कर्मचारियों का आदान-प्रदान करना लाभदायक सिद्ध होगा। इसलिए भारत को अपनी योजना का निर्माण इस बड़े भू-भाग की प्रादेशिक दृष्टि से करना चाहिए और यह स्मरण रखना चाहिए कि दरिद्रता, रहन-सहन का निम्न स्तर और आर्थिक अवनति की समस्याओं में इन सब देशों की रुचि समान रूप से है और इस कारण इनमें से प्रत्येक देश के प्रयत्न और अनुभव, अनिवार्य रूप से, एक-दूसरे के लिए मूल्यवान सिद्ध हो सकते हैं।

अध्याय २

योजना पर विचार

उद्देश्य और उपाय

प्रथम योजना की सफलताएं उल्लेखनीय तो अवश्य हैं, परन्तु उन्हें केवल आरम्भ मानकर चलना चाहिए। योजना का कार्य रहन-सहन के मान को दुगुना कर देने जैसे किसी निश्चित या स्थिर लक्ष्य तक पहुंच जाने का नहीं, अपितु देश की अर्थ-व्यवस्था को इस प्रकार गतिशील बना देने का है कि भौतिक सुख-सुविधाओं और बौद्धिक सांस्कृतिक सफलताओं का स्तर निरन्तर उच्च से उच्चतर होता चला जाए। इस समय भारत में रहन-सहन का स्तर बहुत नीचा है। देश में जितना उत्पादन होता है वह जनता की न्यूनतम आवश्यकताएं पूरी करने के लिए भी पर्याप्त नहीं होता। अधिकतर लोगों को स्वस्थ जीवन बिताने में समर्थ बनाने के लिए अभी बहुत प्रयत्न करना होगा। देश के अनेक बड़े भाग, अन्य भागों की तुलना में कम विकसित हैं और जनता के अनेक वर्ग ऐसे हैं जो आधुनिक प्रगतिशील विचारों और कार्य-प्रणालियों से अभी तक बिल्कुल अछूते रहे हैं। इसलिए विकास कार्य द्रुत गति से करने की आवश्यकता है। यह तभी सम्भव है जब कि वित्तीय साधनों के उपयोग और संगठन बड़े पैमाने पर किए जाएं। आगामी कई योजनाओं में हमें अपना ध्यान लाभों और फलों की अपेक्षा अपने प्रयत्नों पर ही केन्द्रित रखना होगा। लाभों और फलों का महत्व कम नहीं, परन्तु एक समुदाय को किसी उत्पादक और समाजोपयोगी कार्य के लिए श्रम और प्रयत्न करने से जो संतोष प्राप्त होता है, उसका मूल्य और भी अधिक होता है। इस दृष्टि से विकास पर किए गए व्यय अपने आप में एक प्राप्ति हैं। यदि विकास की समस्याओं और उसके साथ ही समाज के गठन में आवश्यक परिवर्तन की समस्याओं पर विचार ठीक दिशा में किया जाए, तो कोई भी समाज अपने भीतर ही ऐसी सुषुप्त शक्तियों को अवश्य जागृत कर सकता है कि उनके द्वारा विकास एक निश्चित दिशा में होने लगे। लागत और लाभ अथवा पूंजी और उत्पादन के बारीक हिसाबों की अपेक्षा, समाज की अपनी शक्ति विकास के कार्यों में कहीं अधिक सहायक होती है।

समाज का समाजवादी ढांचा

२. रहन-सहन का ऊंचा मान, या जिसको कभी-कभी भौतिक उन्नति कहा जाता है, अपने आप में कोई लक्ष्य नहीं है। वस्तुतः यह बौद्धिक और सांस्कृतिक जीवन को उन्नत करने का एक साधन है। जिस समाज को अपना अधिकतर जन-बल और समय जीवन के निर्वाह-मात्र की आवश्यकताएं पूरी करने पर ही लगाना पड़ेगा, वह जीवन के उच्च लक्ष्यों की ओर उतना ही कम ध्यान दे सकेगा। आर्थिक विकास का उद्देश्य समाज की उत्पादक शक्ति को बढ़ाकर ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करना है कि परस्पर विरोधी प्रतिभाओं और प्रेरणाओं की अभिव्यक्ति और उपयोग अच्छे ढंग से हो सके। इसलिए विकास और आर्थिक उन्नति की गति आरम्भ से ही ऐसी दिशा में होनी चाहिए कि वह समाज के बुनियादी उद्देश्यों के साथ मेल खाती रहे। किसी अविकसित देश के सामने अपने वर्तमान आर्थिक और सामाजिक ढांचे से अधिक

अच्छे परिणाम प्राप्त कर लेने का ही काम नहीं होता, अपितु उन्हें इस प्रकार ढालने और पुनर्गठित करने का भी होता है कि वे अधिक उच्च और व्यापक सामाजिक मूल्यों के विकास में सहायक हों।

३. इन गुणों या मूल उद्देश्यों को हाल में 'समाज का समाजवादी ढांचा' शब्दों में बांधा गया है। वास्तव में इसका अभिप्राय यह है कि उन्नति के कार्यों की कसौटी केवल निजी लाभ न होकर समाज का लाभ होनी चाहिए, और विकास के आदर्शों तथा सामाजिक और आर्थिक सम्बन्धों का गठन ऐसा होना चाहिए कि वे केवल राष्ट्रीय आय और नियोजन की वृद्धि में ही नहीं अपितु आय और धन की अधिकाधिक समानता लाने में भी सहायक हों। उत्पादन, वितरण, खपत और पूंजी-विनियोग सम्बन्धी मुख्य निर्णय—और वस्तुतः सभी सामाजिक और आर्थिक प्रश्नों के निर्णय—ऐसी संस्थाओं द्वारा किए जाने चाहिएं जो सामाजिक उद्देश्यों की भावना से अनुप्रेरित हों। आर्थिक विकास के लाभ समाज के उन वर्गों को अधिकाधिक पहुंचने चाहिएं जो कि अपेक्षाकृत कम सम्पन्न हैं और आय, धन और आर्थिक सत्ता का केन्द्रीकरण क्रमशः कम होता जाए। सब मिलाकर समस्या ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर देने की है कि उसमें वे लोग भी अपने जीवन का मान ऊंचा उठाने और देश की समृद्धि में अधिक भाग लेने में समर्थ हो जाएं जो कि अब तक संगठित प्रयत्नों के द्वारा की हुई उन्नति में बहुत कम भागीदार बन सके और वैसा करने की कल्पना तक नहीं कर सके। इस प्रक्रिया में इस वर्ग के लोगों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति ऊंची हो जाएगी। इस प्रकार श्रमिकों को ऊंचा उठाने का प्रश्न भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना रोजगार के अवसर अपितु उनमें लाभों का क्षेत्र विस्तृत करने का है, क्योंकि मनुष्य की आशा और उत्साह का नाश जितना इस भावना के कारण होता है कि हीन कुल में जन्म लेने अथवा जीवन का आरम्भ दरिद्रावस्था में करने वाला मनुष्य आर्थिक और सामाजिक उन्नति कर ही नहीं सकता, उतना अन्य किसी बात से नहीं होता। इस प्रकार की उपयुक्त परिस्थितियां उत्पन्न करने के लिए सरकार को सारे समाज के प्रतिनिधि का रूप धारण करना होगा और योजना के सरकारी क्षेत्र का शीघ्र विस्तार करना होगा। विकास के जिन कार्यों को योजना का निजी क्षेत्र अपने हाथ में लेना नहीं चाहता या लेने में असमर्थ है, उनका आरम्भ सरकार को करना होगा। देश की अर्थ-व्यवस्था में पूंजी-विनियोग का नेतृत्व सरकार को ही करना होगा, चाहे वह योजना के निजी क्षेत्र में हो चाहे सरकारी क्षेत्र में। योजना के निजी क्षेत्र को भी योजना के उसी व्यापक क्षेत्र के भीतर रहकर कार्य करना होगा जिसे समाज स्वीकार करेगा। अन्ततः सामाजिक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप विनियोग के साधन स्वयमेव प्रकट हो जाएंगे। निजी उद्योग, मूल्यों की स्वतन्त्रता और निजी प्रबन्ध आदि सब वस्तुतः उन लक्ष्यों की पूर्ति के साधन मात्र हैं जिन्हें कि सामाजिक कहा जाना हो; उनके औचित्यानुचित्य का निर्णय सामाजिक परिणामों के अनुसार ही किया जा सकता है।

४. आधुनिक टेकनोलोजी का प्रयोग तभी हो सकता है जब कि उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जाए, नियन्त्रण एकसूत्री रहे, और साधनों का उपयोग किन्हीं विशिष्ट बड़े कार्यों के लिए किया जाए। खनिजों की खुदाई और बुनियादी तथा पूंजीगत माल का उत्पादन करने वाले उद्योग इसी प्रकार के हैं। इनके द्वारा राष्ट्र की आर्थिक प्रगति का पता लगाया जा सकता है। इसलिए इन्हें विकसित करने की जिम्मेदारी मुख्यतया सरकार को ही उठानी चाहिए और इन उद्योगों की वर्तमान इकाइयों को भी नवीन संगठन के अनुरूप बन जाना चाहिए।

जिन क्षेत्रों में धन और आर्थिक शक्ति के पूंजीभूत हो जाने की सम्भावना हो, उनमें उद्योगों का पूरा अथवा अधूरा स्वामित्व और प्रबन्ध का नियन्त्रण सरकार के ही हाथ में रहना चाहिए। कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें आज की परिस्थितियों में निजी उद्योग सरकार के सहयोग और समर्थन के बिना अधिक प्रगति कर ही नहीं सकते। इसलिए इन क्षेत्रों में जो साधन प्रयुक्त होंगे उनके राष्ट्रीय अथवा अर्ध-राष्ट्रीय रूप को स्वीकार करके ही आगे बढ़ना होगा। अर्थ-व्यवस्था के शेष भागों में ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न कर देनी होंगी कि उनमें निजी प्रयत्नों और उद्योगों को भी निजी रूप में अथवा सहकारिता के आधार पर आगे बढ़ने का अवसर मिल सके। जब किसी अर्थ-व्यवस्था का विकास होने लगता है तब उसका विस्तार इतनी विभिन्न दिशाओं में हो जाता है कि उसमें निजी और सरकारी दोनों भागों के साथ-साथ कार्य करने की गुंजाइश हो जाती है। परन्तु इस योजना में जिस गति से और जिन व्यापक सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति के लिए कार्य करने की कल्पना की गई है, उनके कारण यह आवश्यक होगा कि योजना का सरकारी भाग स्वतन्त्र रूप से कार्य करने के साथ-साथ योजना के निजी भाग के विकास का भी ख़याल रखे।

५. समाज के समाजवादी ढांचे को स्थिर या अपरिवर्तनशील मानकर नहीं चलना चाहिए। यह किसी एक सिद्धान्त या मन्तव्य से जुड़ा हुआ नहीं है। प्रत्येक देश को अपनी सूझ-बूझ और परम्पराओं के अनुसार बढ़ना होता है। उसे अपनी आर्थिक और सामाजिक नीति का निर्धारण समय-समय पर अपनी ऐतिहासिक परिस्थितियों के अनुसार करना होता है। यह न तो आवश्यक ही है और न अभीष्ट ही कि हम अपनी अर्थ-व्यवस्था को किसी एक नमूने या संगठन की नकल पर ऐसा गढ़ लें कि उसके रूप अथवा अमल के सम्बन्ध में कोई नए परीक्षण करने की गुंजाइश तक न रहे। योजना के सरकारी क्षेत्र के विस्तार का यह अर्थ भी नहीं होना चाहिए कि निर्णय करने और सत्ता के उपयोग का अधिकार एक स्थान पर केन्द्रित हो जाए। लक्ष्य यह होना चाहिए कि कुछ विस्तृत निर्देशों अथवा कार्य-प्रणाली के नियमों के दायरे के अन्दर सरकारी उद्योगों को कार्य करने की और अपने कार्यों का विस्तार करते रहने या उन्हें हस्तांतरण करने की पूरी स्वतन्त्रता रहे। राष्ट्रीय उद्योगों के संगठन और प्रबन्ध में हमें बार-बार परीक्षण करके देखने होंगे। और सच तो यह है कि यह बात सारे ही समाजवादी आदर्श पर लागू होती है। महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारे सामने यह स्पष्ट रहे कि हमें किधर बढ़ना है। हमें मूल उद्देश्यों का निरन्तर ध्यान रहे और हम अपनी संस्थाओं और संगठनों और उनके नियमों को अपने अनुभव के आधार पर सुधारने और बदलने के लिए सदा तैयार रहें। समाजवादी आदर्श में निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति, जीवन के मान को ऊंचा उठाने, सबके लिए सुविधाओं का विस्तार करने, अब तक पिछड़े वर्गों में उत्साह और समाज के सब वर्गों में परस्पर सहयोग की भावना उत्पन्न करने पर बल दिया जाता है। ये उद्देश्य ही सब बुनियादी निर्णयों की कसौटी होंगे। हमारे संविधान में सरकार के लिए जो निदेशात्मक सिद्धान्त स्थिर किए गए हैं, उनमें दिशा का संकेत मोटे शब्दों में कर दिया गया है। समाज का समाजवादी आदर्श उस दिशा को अधिक निश्चित शब्दों में प्रकट करता है। आर्थिक नीतियों और सामाजिक संगठनों में परिवर्तन का निश्चय इस प्रकार करना चाहिए कि उससे आर्थिक प्रगति लोकतंत्र और समानता के व्यापक आधार पर होने का निश्चय हो जाए। लोकतन्त्र जीवन की एक विशेष प्रणाली है; वह समाज के संगठन की किन्हीं विशिष्ट व्यवस्थाओं का नाम नहीं है। यही बात समाजवादी ढांचे के विषय में कही जा सकती है।

उद्देश्य

६. इन व्यापक विचारों को ध्यान में रखकर द्वितीय पंचवर्षीय योजना के ये प्रधान उद्देश्य रखे गए हैं :

(क) राष्ट्रीय आय में इतनी वृद्धि करना कि उससे देश में रहन-सहन का स्तर ऊंचा हो जाए;

(ख) द्रुत गति से औद्योगीकरण करना, जिसमें मूल उद्योगों और भारी उद्योगों के विकास पर विशेष बल हो;

(ग) रोजगार के अवसरों का व्यापक विस्तार करना; और

(घ) आय और धन की असमानता कम करके आर्थिक शक्ति का अधिक सामान्य वितरण करना।

ये उद्देश्य एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। राष्ट्रीय आय में वृद्धि और जीवन के मान म पर्याप्त उन्नति तब तक नहीं हो सकती जब तक कि उत्पादन और पूंजी-विनियोग में भी पर्याप्त वृद्धि न हो जाए। इस उद्देश्य के लिए यह आवश्यक है कि आर्थिक और सामाजिक योजनाकार्यों पर व्यय करने के लिए हाथ में पर्याप्त पूंजी हो, खनिजों की खोज और विकास किया जाए, और इस्पात, यन्त्र-निर्माण तथा कोयले और भारी रासायनिक द्रव्यों जैसे मूल उद्योगों की उन्नति की जाए। इन सब दिशाओं में एक साथ उन्नति करने के लिए उपलब्ध जन-शक्ति और प्राकृतिक साधनों का अधिकतम उपयोग करना होगा। हमारे जैसे देश में जहां जन-शक्ति प्रचुर परिमाण में विद्यमान है, रोजगार के अवसरों का विस्तार स्वयं एक महत्वपूर्ण उद्देश्य बन जाता है। इसके अतिरिक्त, विकास की प्रक्रिया और दिशा ऐसी होनी चाहिए कि उनसे आधारभूत सामाजिक मूल्यों और प्रयोजनों का भी प्रकाशन हो। विकास का परिणाम यह होना चाहिए कि उससे आर्थिक और सामाजिक विषमताएं कम हो जाएं और इनके लिए जिन तरीकों को अपनाया जाए वे लोकतन्त्री हों। आर्थिक उद्देश्यों को सामाजिक उद्देश्यों से पृथक नहीं किया जा सकता और साधनों तथा उद्देश्यों को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। जनता की उचित आकांक्षाओं की पूर्ति करने वाली योजना में ही एक लोकतन्त्री समाज अपना अधिकाधिक सहयोग प्रदान कर सकता है।

७. इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संतुलित ढंग से ही आगे बढ़ना होगा, क्योंकि इनमें से किसी एक पर अधिक बल देने का परिणाम यह हो सकता है कि हमारी अर्थ-व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाए और उस उद्देश्य की पूर्ति में ही विलम्ब हो जिन पर इतना बल दिया जा रहा है। जीवन के मान का नीचा और स्थिर रहना, बेरोजगारी व कम रोजगारी और औसत आमदनियों तथा ऊंची आमदनियों में असमानता हमारी अर्थ-व्यवस्था के बुनियादी तौर से अविकसित होने के सूचक हैं जो मुख्यतः कृषि पर आश्रित अर्थ-व्यवस्था की विशिष्टता हैं। विकास की मूल आवश्यकता यह है कि द्रुत गति से औद्योगीकरण और अर्थ-व्यवस्था का विस्तार नाना दिशाओं में हो। और औद्योगिक उन्नति द्रुत गति से करने के लिए यह आवश्यक है कि देश मूल उद्योगों और ऐसे यन्त्र बनाने के उद्योगों की उन्नति करने पर अधिक ध्यान दे जो कि उत्पादन के लिए आवश्यक यन्त्रों का निर्माण करते हैं। इनके लिए लोहे व इस्पात, लोहेतर धातुओं, कोयले, सीमेंट, भारी रासायनिक द्रव्यों और बुनियादी आवश्यकता के अन्य उद्योगों का विकास पहले करना होगा। इसमें बड़ी बाधा साधनों की कमी और उनकी अनेक आवश्यक मांगों की है। यहां मांग से अभिप्राय केवल तात्कालिक मांग नहीं

है, अपितु विकास का कार्य बढ़ने के साथ-साथ मांग के निरन्तर बढ़ते रहने से है। भारत के ज्ञात प्राकृतिक साधनों का परिमाण अपेक्षाकृत बहुत बड़ा है और इनमें से कइयों के उत्पादन में—उदाहरणार्थ इस्पात के अपेक्षाकृत कम व्यय होने की सम्भावना है। इसलिए जो भारी उद्योग और प्राकृतिक साधन इस कसौटी पर खरे उतरते हों, उनका अधिकतम विकास और विस्तार पहले कर लेना चाहिए।

८. मूल उद्योगों में पूंजी लगाने से उपभोग्य वस्तुओं की मांग तो बढ़ जाती है, परन्तु न तो उनका उत्पादन शीघ्र होना आरम्भ होता है और न उनमें मजदूरों की बड़ी संख्या में खपत होती है। अतः औद्योगिक विस्तार को सन्तुलित रखने के लिए ऐसा संगठित प्रयत्न करना चाहिए कि उपभोक्ता वस्तुओं की बढ़ी हुई मांग पूरी करने के लिए श्रम का उपयोग तो हो, परन्तु पूंजी कम से कम लगे। जहां श्रम अधिक और पूंजी थोड़ी हो, वहां ऐसी तरकीब और श्रम-प्रधान प्रणाली अपनाने की आवश्यकता होती है जिससे उत्पादन के विभिन्न क्षेत्रों में श्रम का (समाज के हित में) अधिकाधिक उपयोग हो। बेरोजगारी की वर्तमान परिस्थितियों में अधिकतम श्रमिकों का काम पर लग जाना भी अपने आप में एक उद्देश्य बन जाता है। सम्भव है कि श्रम-प्रधान प्रणाली के अपनाने से ऊंची लागत पर माल तैयार हो। इस प्रणाली के कारण कुछ बलिदान करना पड़ेगा जिसे प्राविधिक और संगठनात्मक सुधार करके कुछ कम किया जा सकता है। फिर भी, जब तक कि अर्थ-व्यवस्था की नींव मजबूत न हो जाए तब तक उपभोग्य वस्तुओं की खपत में कुछ त्याग से ही काम लेना पड़ेगा। ज्यों-ज्यों उपभोग्य वस्तुएं बनाने वाले उद्योगों को अपना उत्पादन बढ़ाने के लिए अधिकाधिक बिजली, परिवहन के साधन, अच्छे औजार और मशीनें आदि मिलते जाएंगे, त्यों-त्यों त्याग की यह विवशता घटती जाएगी और जनता के लाभ की मात्रा बढ़ती जाएगी। अभी तो बेरोजगार या कम रोजगार वाले मजदूरों को रोजगार में लगा लेने पर ही ज्यादा जोर देने से बेरोजगारी की वर्तमान कठिनाई कम हो ही जाएगी। इसी प्रसंग में एक और बात का भी ध्यान रखने की आवश्यकता है कि जहां श्रम-प्रधान प्रणाली अपनाई जाती है, वहां आमदनियां अपेक्षाकृत कम होने के कारण बहुधा बचत कम होती है और पुनः विनियोग के लिए पूंजी थोड़ी मिल पाती है। ऐसे उपाय करने चाहिएं कि यह स्थिति ज्यादा न बढ़ने पाए। यह ध्यान देने योग्य है कि ऊंचे वेतनों पर रोजगार देने के अवसर भी उतने ही बढ़ाए जा सकते हैं जितना कि देश की अर्थ-व्यवस्था में बचत की सम्भावनाओं को बढ़ाया जा सकता है।

रोजगार के अवसर

९. रोजगार के अवसर बढ़ाने के प्रश्न पर योजना में पूंजी विनियोग के परिकथित कार्यक्रम से पृथक रूप में विचार नहीं किया जा सकता। रोजगार पूंजी-विनियोग में निहित है और उसके साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। पूंजी-विनियोग का ढांचा स्थिर करने में यह एक प्रधान तत्व है। यह एक तथ्य है कि योजना काल में पूंजी-विनियोग में काफी वृद्धि होगी और विकास के लिए किए गए व्यय बहुत बढ़ जाएंगे। इसका अर्थ है लोगों की आय में वृद्धि होगी और श्रमिकों की सब तरफ से मांग बढ़ेगी। परन्तु यदि योजना का निर्माण रोजगार के अवसर बढ़ाने पर विशेष दृष्टि रखकर किया जाए तो उसमें पूंजी-विनियोग को अधिकतम बढ़ाने की अपेक्षा कुछ अधिक कार्य करना पड़ता है। रोजगार के अवसर बढ़ाने और अर्ध-रोजगारी घटाने के कार्यक्रम को किन्हीं निश्चित शब्दों में तैयार नहीं किया जा सकता। इस समस्या को हल करने के लिए इसे विभागों, प्रदेशों और वर्गों में बांटना पड़ेगा। अपेक्षित परिमाण में नए रोजगार उपलब्ध करने के कार्यक्रम के लिए उद्योगों की विविधता, उनको उपयुक्त स्थान पर स्थापित

करने की नीति, छोटे पैमाने के और कुटीर उद्योगों की सहायता करने के लिए विशेष उपाय, अर्थ-व्यवस्था को निरन्तर उच्च स्तर पर स्थिर रखने, प्रशिक्षण की पर्याप्त सुविधाओं और श्रमिकों के लिए एक पेशा छोड़कर दूसरे को अपनाने और आवश्यकतानुसार स्थान-परिवर्तन कर लेने आदि अनेक प्रश्नों पर विचार करना पड़ेगा । साथ ही, यह भी आवश्यक होगा कि इस बात का अध्ययन बराबर किया जाता रहे कि किस कार्य में पूंजी लगाने से कितने और किस प्रकार के लोगों को रोजगार मिल सकता है, और किस कार्य से रोजगार के अवसरों में कितने समय में कितनी वृद्धि होती है ।

१०. योजना आयोग ने इस समस्या का जो अध्ययन किया है, उससे प्रकट हुआ है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना से न केवल नए श्रमिकों को रोजगार का अवसर मिलेगा, अपितु ग्रामों में और कृषि और छोटे उद्योगों में जो अर्ध-रोजगारी फैली हुई है, उनके कम होने में भी सहायता मिलेगी । योजना के कारण खानों और कारखानों, निर्माण, व्यापार तथा परिवहन और सेवाओं में रोजगार के अवसर, कृषि और उससे सम्बद्ध व्यवसायों की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से बढ़ेंगे । यह एक अच्छा श्रीगणेश होगा । इस अवधि में यह आवश्यक होगा और इसकी आशा भी की जाती है कि रोजगारों के वर्तमान ढांचे में पहले क्षेत्र से दूसरे और तीसरे क्षेत्र में काफी स्थानान्तरण किया जाए । योजना में सिंचाई, भूमि संरक्षण, पशु पालन में सुधार और कृषि की उन्नति आदि के अनेक बड़े-बड़े कार्यक्रम हैं । इनके और ग्रामीण तथा छोटे पैमाने के उद्योगों के अन्य कार्यक्रमों के द्वारा देहातों में अर्ध-रोजगारी घट सकेगी । परन्तु सम्भव है कि पहले से जो बेरोजगारी चली आ रही है, उस पर योजना से पर्याप्त प्रभाव न हो । स्मरण रखना चाहिए कि अल्प विकसित अर्थ-व्यवस्था में बेरोजगारी की समस्या विकास की समस्या का ही एक अन्य पहलू होती है । जिन कारणों से किसी समाज के विकास के प्रयत्नों में बाधा उपस्थित होती है, वही कारण रोजगार के अवसरों को नहीं बढ़ने देते । दूसरी योजना में सरकारी और निजी, दोनों भागों में निर्माण का कार्य बहुत अधिक बढ़ाने का कार्यक्रम है । इस कार्य को रोजगार के अवसरों की स्थिति के अनुसार घटाया-बढ़ाया जा सकेगा । निर्माण के कार्य में काम अस्थायी ढंग का होता है, इसलिए यह ध्यान रखना चाहिए कि जो कार्य चल रहे हैं, उनके समाप्त होने पर नए काम अवश्य आरम्भ कर दिए जाएं, और एक काम में लगे हुए मजदूरों को दूसरे काम में लगाने की व्यवस्था बनी रहे ।

११. रोजगार के अवसरों को बढ़ाते रहना, आर्थिक दृष्टि और व्यापक सामाजिक दृष्टि से एक ऐसा उद्देश्य है जिसे उच्च प्राथमिकता देनी चाहिए । परन्तु रोजगार के अवसरों का विस्तार तभी होता है जब कि नियत अवधि के भीतर एक ओर तो आवश्यक औजार और साज-सज्जा उपलब्ध होती रहे और दूसरी ओर काम में नए लगे हुए लोग जो वस्तुएं खरीदना चाहते हैं, वे भी अधिक मात्रा में मिलती रहें । यदि विकास का मूल अर्थ उत्पादन के साथ धन बढ़ाने के लिए नए कार्यों का करना समझा जाए, तो इन कार्यों के लिए देश में उपलब्ध जन-शक्ति का समुचित प्रयोग तभी हो सकता है जब कि भोजन, वस्त्र और निवास जैसी आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि भी जल्दी-जल्दी बढ़ती रहे । इसलिए रोजगार के अवसर बढ़ाने की दृष्टि से इन वस्तुओं के उत्पादन में भी सुधार होना अति आवश्यक है । जिन देशों में उत्पादन बड़ी मात्रा में होता है, उनमें स्थानीय अथवा वर्गीय बेकारी की समस्या तीव्र नहीं होती, क्योंकि उनमें मशीनों और नए वैज्ञानिक साधनों के प्रयोग के कारण काम की बहुतायत रहती है । परन्तु जिन देशों में उत्पादन की कमी के कारण आय कम होती है और

भोजन, वस्त्र आदि दैनिक जीवन की आवश्यकता की वस्तुओं का उत्पादन करने के कार्यों में श्रमिकों का उपयोग अधिक नहीं किया जा सकता और इसी कारण व्यापार मन्दा होता है, उनमें स्थानीय अथवा वर्गीय वेकारी अधिक होती है। यह निश्चित है कि जिस देश में काफी अधिक श्रम उपलब्ध हो, वहां सर्वत्र उत्पादन की श्रम-प्रधान प्रणाली को प्राथमिकता दी जाए। परन्तु यह भी सही है कि सारे ढांचे में रोजगार के अवसर वढ़ाने के लिए विशिष्ट क्षेत्रों में श्रम की वचत करने वाले उपाय अपनाना भी वहुधा आवश्यक हो जाता है। यह दोहराने की आवश्यकता नहीं कि इन उपायों का लक्ष्य भी आय के वढ़ते हुए स्तरों पर रोजगार के अवसर वढ़ाना है।

औद्योगिक नीति

१२. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में औद्योगिक उन्नति को, विशेषत: भारी और मूल उद्योगों के विकास को उच्च प्राथमिकता दी गई है। औद्योगिक और खनिज विकास के क्षेत्र में सरकारी उद्यम को अधिक वढ़ाने की योजना वनाई गई है। उद्देश्य यह है कि भारी उद्योगों, तेल की खोज और कोयला खोदने के कार्यक्रम का तो अधिक विस्तार किया जाए और अणुशक्ति के विकास का कार्य भी आरम्भ कर दिया जाए। इन सव कार्यों का उत्तरदायित्व मुख्यतया केन्द्रीय सरकार पर है। इन नए कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए वित्त-विनियोग के अतिरिक्त यह भी आवश्यक होगा कि इस समय संगठन और प्रशासन का कार्य सरकार जितने व्यक्तियों से चला रही है उनकी संख्या को वढ़ाया जाए। साथ ही शीघ्र निर्णय करने और उन्हें तुरन्त कार्यान्वित करने की आवश्यकता रहेगी। इस वात पर जोर देने की जरूरत नहीं कि जव तक उत्पादन के साधनों को एकत्र करने और ईंधन तथा शक्ति के साधनों को मजवूत वनाने के लिए, जो विकास के लिए अत्यावश्यक हैं, कदम नहीं उठाए जाते, तव तक आगामी वर्षों में विकास की गति और परिमाण में वाधा पड़ती रहेगी। ये नए कार्यक्रम एक वड़ी सीमा तक दूसरी योजना की जान हैं। अत: सव प्रयत्न पहले इनकी ही पूर्ति के लिए करने होंगे। द्वितीय योजना के सम्भावित परिणाम प्रभावशाली तो अवश्य दीखते हैं, परन्तु उनकी प्राप्ति के लिए उतने ही वास्तविक और वित्तीय साधनों का संग्रह और प्रयोग करना पड़ेगा।

१३. सरकारी क्षेत्र के इन विकास कार्यों पर निजी क्षेत्र के विकास कार्यों के साथ ही विचार किया जा सकता है। द्वितीय योजना की अवधि में माल के उत्पादन और सेवाओं में जिस वृद्धि की कल्पना की जा रही है, उसकी पूर्ति दोनों क्षेत्रों के विकास कार्यों में सफलता होने पर ही की जा सकती है। दोनों क्षेत्रों को कार्य सहयोग-पूर्वक करना होगा और उन्हें एक ही मशीन के दो पुर्जे मानकर चलना होगा। सारी योजना सफल तभी हो सकती है जव कि दोनों क्षेत्रों का विकास साथ-साथ और संतुलित रूप में हो। योजना में वित्त-विनियोग के निर्णय सरकारी प्राधिकारी करेंगे और इसलिए उनके फल अथवा परिणाम का अन्दाजा सुगमता से लगाया जा सकेगा। निजी क्षेत्रों के निर्णयों को भी सरकार वित्तीय उपायों, लाइसेंसों और आवश्यकता होने पर प्रत्यक्ष भौतिक नियन्त्रणों के द्वारा भी प्रभावित कर सकेगी। ऐसा करने में सरकार का यह उद्देश्य रहेगा कि निश्चित लक्ष्य तक पहुंचने में सहूलियत हो। निजी क्षेत्र में लाखों छोटे-छोटे उत्पादक देश भर में फैले पड़े हैं। इस कारण उन सवके विनियोग के कार्यक्रमों और लक्ष्यों का मोटा अन्दाजा मात्र किया जा सकता है। संगठित उद्योगों और व्यवसायों के विपय में जानकारी यद्यपि अधिक मिल सकती है, और सरकार जिनकी सहायता

अधिक सुगमता से कर सकती है, उनके साधनों और परिणामों में स्वभावत: उतना पारस्परिक सम्बन्ध नहीं हो सकता जितना कि सरकार के अपने कार्यों में हो सकता है। सिंचाई, बिजली और परिवहन जैसे अनेक सरकारी कार्यों में जो पूंजी लगाई जाएगी, उनसे निजी क्षेत्र का उत्पादन बढ़ने में भी सहायता मिलेगी और इसलिए आशा है कि सम्बद्ध उद्योग लाभ उठाएंगे। जिन वस्तुओं का मूल्य सरकार नियत कर सकती है या उसे नियन्त्रित करना पड़ता है, उनका बाजार यदि उचित स्तर पर स्थिर हो जाए तो सरकार निजी क्षेत्र में भी साधनों के अभीष्ट वितरण को प्रोत्साहन देने में सहायक हो सकती है। सच तो यह है कि योजना के सरकारी और निजी क्षेत्रों को दो पृथक क्षेत्र मानकर चलने की अपेक्षा, उन्हें एक-दूसरे का अधिकाधिक सहायक मानना कहीं अधिक उपयुक्त है।

१४. द्वितीय योजना की औद्योगिक नीति का निर्धारण करते हुए साधारणत: इन्हीं बातों को ध्यान में रखा गया है। देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात भारत सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति का आधार १९४८ के औद्योगिक नीति सम्बन्धी प्रस्ताव को रखा है। उस प्रस्ताव में स्पष्ट शब्दों में बतला दिया गया था कि राष्ट्रीय हित की दृष्टि से उद्योगों की उन्नति, सहायता, नियन्त्रण और उनका विकास करना सरकार का ही उत्तरदायित्व रहना चाहिए। उसमें सरकारी भाग के कार्य के अधिकाधिक बढ़ते जाने की कल्पना की गई थी। यद्यपि उसमें कहा गया था कि सरकार का यह मूल अधिकार है कि वह सार्वजनिक हित के लिए जब कभी आवश्यक समझे तब किसी भी औद्योगिक इकाई पर अधिकार कर ले, तो भी विद्यमान परिस्थितियों को ध्यान में रखकर उसमें सरकारी और निजी क्षेत्रों का विभाजन कर दिया गया था। यह प्रस्ताव १९४८ में पास किया गया था। उसके पश्चात अनेक दिशाओं में महत्वपूर्ण प्रगति हो चुकी है। अब यह स्पष्ट हो चुका है कि विकास किस दिशा में होना चाहिए और उसका उद्देश्य क्या रहना चाहिए। योजना का कार्य एक संगठित आधार पर होना रहा है। उसे आगामी वर्षों में और भी दृढ़ करने और बढ़ाने की आवश्यकता है। १९४८ के प्रस्ताव पर पुनर्विचार इन्हीं दृष्टियों से किया जाता रहा है। प्रधान मंत्री ने ३० अप्रैल, १९५६ को संसद में औद्योगिक नीति का नया प्रस्ताव प्रस्तुत किया था।

१५. इस प्रस्ताव के पूरे शब्द इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट के रूप में दिए गए हैं। प्रस्ताव में कहा गया है : "समाज के समाजवादी आदर्श को राष्ट्रीय लक्ष्य के रूप में अपना लिये जाने और विकास का कार्य शीघ्रता से तथा सुनियोजित रूप में करने की आवश्यकता होने के कारण, उचित है कि आधारभूत और सामरिक महत्व के और सार्वजनिक उपयोगिता सेवाओं के सब उद्योगों को सरकारी क्षेत्र में रखा जाए। जो उद्योग आधारभूत हैं और जिनमें इतनी अधिक पूंजी लगानी पड़ती है कि उसे आज की परिस्थितियों में केवल सरकार ही लगा सकती है, उन्हें भी सरकारी क्षेत्र में रखना पड़ेगा। इसलिए उद्योगों के बहुत बड़े क्षेत्र में भावी विकास का उत्तरदायित्व सरकार को सीधे अपने ऊपर लेना पड़ेगा।" इन उद्योगों में सरकार को जो कार्य करना पड़ेगा, उसकी दृष्टि से उन्हें इस प्रस्ताव में ३ वर्गों में बांट दिया गया है। पहले वर्ग के उद्योगों की गणना अनुसूची 'क' में की गई है। इन सब उद्योगों के भावी विकास का उत्तरदायित्व एकमात्र सरकार पर रहेगा। दूसरा वर्ग अनुसूची 'ख' में गिनाया गया है। इस वर्ग के उद्योगों पर क्रमश: सरकार का स्वामित्व होता चला जाएगा और इसलिए इस वर्ग के नए कारखानों को साधारणतया सरकार ही शुरू करेगी, परन्तु साथ ही निजी उद्योगपतियों से भी आशा की जाएगी कि वे सरकार के इस प्रयत्न में योग दें।

तीसरे वर्ग में शेष सब उद्योग सम्मिलित किए गए हैं और उनका विकास साधारणतया निजी क्षेत्र के लिए छोड़ दिया गया है। उद्योगों का यह वर्गीकरण बिल्कुल अपरिवर्तनीय या पत्थर की लकीर नहीं है। उदाहरणार्थ, जिन उद्योगों की गणना अनुसूची 'क' में की गई है, उनके जिन कारखानों को इस समय निजी उद्योगपति चला रहे हैं, उनके विस्तार को रोका नहीं गया है और यदि सरकार चाहे और राष्ट्रीय हित के लिए वैसा करना आवश्यक हो तो सरकार नए कारखाने भी निजी उद्योगपतियों की सहायता और सहयोग से खोल सकती है। परन्तु शर्त यह रहेगी कि सरकार इस प्रकार के कारखानों की नीति और संचालन का नियन्त्रण अपने हाथ में रखने के लिए उनकी पूंजी में बड़ा भाग अपना रख सकेगी अथवा इसके लिए अन्य किसी उपाय का अवलम्बन कर सकेगी। अनुसूची 'ख' को, चाहें तो मिला-जुला क्षेत्र कह सकते हैं। इस क्षेत्र में सरकार क्रमशः प्रवेश करके अपना कार्य-भार बढ़ाती जाएगी। परन्तु इसके साथ ही निजी उद्योगपतियों को अवसर रहेगा कि वे इस क्षेत्र में स्वतन्त्र रूप से अथवा सरकार के साथ मिलकर विकास कर सकें। उद्योग के शेष क्षेत्र में विकास का कार्य साधारणतः निजी उद्योगपतियों की सूझ-बूझ और प्रयत्न से होगा। परन्तु सरकार चाहेगी तो वह इस क्षेत्र में भी कोई कार्य शुरू कर सकेगी। सरकारी नीति निर्धारित करते हुए मुख्य विचार यह रहा है कि योजना के जो उद्देश्य निश्चित कर लिए गए हैं, उनके अनुसार औद्योगिक क्षेत्र का विकास द्रुत गति से होता रहे। सरकारी क्षेत्र को अपना विस्तार करना होगा और द्रुत गति से करना होगा तथा निजी क्षेत्र को योजना की आवश्यकताओं के अनुसार चलना होगा। ज्यों-ज्यों कार्य बढ़ता जाएगा, त्यों-त्यों दोनों क्षेत्रों में मिलकर कार्य करने की आवश्यकता बढ़ती जाएगी। यह मान लिया गया है कि जो भाग निजी क्षेत्र के सुपुर्द किया गया है उसे सफलतापूर्वक कार्य करने के अवसर और सुविधाएं दी जाएंगी। औद्योगिक नीति के इस नए प्रस्ताव के अनुसार ही आगामी वर्षों में द्रुत गति से औद्योगीकरण किया जाएगा।

१६. १९४८ के औद्योगिक नीति सम्बन्धी प्रस्ताव में यह भी बतलाया गया था कि घरेलू और छोटे पैमाने के उद्योगों के प्रति सरकार का दृष्टिकोण क्या रहेगा। नए प्रस्ताव में उसी बात को दोहरा दिया गया है। जिन समस्याओं को तुरन्त हल करने की आवश्यकता है उनमें से कइयों को इन उद्योगों के द्वारा अधिक सुगमतापूर्वक हल किया जा सकता है। इनमें एकदम बहुत-से लोगों को काम मिल सकता है। इनके द्वारा राष्ट्रीय धन का बंटवारा अधिक समानता से हो सकता है। देश की ऐसी बहुत-सी पूंजी और ऐसे बहुत-से कारीगर हैं, जिनका उपयोग शायद अन्य प्रकार न हो सकता, पर उनका उपयोग इन उद्योगों में सुगमतापूर्वक हो सकता है। इसलिए इन उद्योगों को उन्नत करने, आधुनिक बनाने और पुनर्गठित करने की अत्यन्त आवश्यकता है। समस्या इनके लिए एक प्रभावशाली नीति निर्धारित करने की ही नहीं, अपितु इनका उपयुक्त संगठन करने की भी है। यदि नवीन वैज्ञानिक प्रणालियों का उपयोग अनियन्त्रित और असंगठित रूप में किया जाएगा, तो शायद उससे कुशल कारीगरों में नई बेकारी उत्पन्न हो जाएगी या और भी बढ़ जाएगी। यहां उनके नियमन की आवश्यकता है। इसका यह अर्थ नहीं कि हम किसी आर्थिक या सामाजिक नीति के कारण वर्तमान कार्य-प्रणालियों को बन्द कर देने की बात सुझा रहे हैं। हमारा अभिप्राय केवल इतना ही है कि ऐसी अवस्थाएं उत्पन्न की जानी चाहिएं कि इन उद्योगों में भी आधुनिक प्रणालियों का क्रमशः अधिकाधिक उपयोग किया जा सके और यह परिवर्तन बिना किसी गड़बड़ के होना चाहिए। साथ ही, यह बात भी महत्वपूर्ण है कि इस क्षेत्र में हमारी नीति यह हो कि विकास कार्य आधुनिकतम प्रणालियों द्वारा हो। राष्ट्रीय आय की वृद्धि के साथ-साथ माल की मांग भी

बढ़ेगी और यह मांग विविध प्रकार की होती जाएगी, और ज्यों ज्यों बिजली, परिवहन और संचार की सुविधाएं विकसित होती जाएंगी, त्यों-त्यों नई आवश्यकताएं पूरी करने के लिए तथा बड़े उद्योगों के सहायक के रूप में अनेक छोटे उद्योगों का क्षेत्र भी विस्तृत होता चला जाएगा। रोजगार के अवसर और उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से इन उद्योगों में नई प्रणालियों का विस्तार उत्साहपूर्वक किया जाएगा।

१७. घरेलू और छोटे पैमाने के उद्योगों में काम करने वालों को कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इनमें से कई कठिनाइयों का मूल कारण पूंजी का अभाव है, जैसे कि ठीक प्रकार के कच्चे माल का ठीक मूल्य पर न मिल सकना और औजारों आदि का अच्छा न होना। इनके अतिरिक्त माल को बेचने की अपर्याप्त व्यवस्था, उत्पादन की नई विधियों और बाजार की बदलती हुई मांग का पूरा ज्ञान न होना आदि कुछ कठिनाइयां ऐसी हैं कि इनके कारण इन उद्योगों में लगे हुए लोग अपने श्रम और कुशलता का पूरा-पूरा लाभ नहीं उठा पाते। इन बाधाओं और कठिनाइयों से पार पाने के लिए निरन्तर प्रयत्न करने की आवश्यकता होगी। साधारणतया, देहातों में बिजली पहुंच जाने और उचित मूल्य पर सार्वजनिक आधार पर उस पर बिजली के उपलब्ध होने से इन उद्योगों को बहुत प्रोत्साहन मिलेगा। परन्तु अन्य कई प्रकार की सहायता देने की आवश्यकता रहेगी ही। उदाहरणार्थ, देहातों में इस प्रकार के पंचायती या साझे के कारखाने खोलने होंगे जिनमें कि विभिन्न उद्योगों में काम करने वाले मिलकर काम कर सकें और अनुकूल परिस्थितियों में अपने माल का उत्पादन बढ़ा सकें। इसी प्रकार सरकार के द्वारा परिवहन, बिजली और ऐसी ही अन्य सुविधाएं देकर औद्योगिक क्षेत्र संगठित करने और उनमें छोटे और मध्यम श्रेणी के उद्योग स्थापित करने की आवश्यकता है। जहां-कहीं घरेलू, ग्राम या छोटे उद्योगों के द्वारा लोगों को काम में लगाना सम्भव हो और जहां ये उद्योग सुधरी हुई वैज्ञानिक प्रणालियों का अधिकाधिक उपयोग कर सकें, वहां बड़े कारखानों और छोटे उद्योगों को मिलकर उत्पादन का सम्मिलित कार्यक्रम बनाने पर विचार करना चाहिए। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि उपभोग्य वस्तुओं का उत्पादन यथासम्भव वर्तमान कारीगरों और साधनों द्वारा ही बढ़ाया जाए और देहातों तथा छोटे उद्योगों में क्रमशः नई वैज्ञानिक प्रणालियों के प्रयोग को प्रोत्साहन दिया जाए। इस क्षेत्र का संगठन अधिकाधिक सहकारिता के आधार पर करना चाहिए, जिससे कि छोटे उत्पादक भी बड़े पैमाने पर कच्चा माल खरीदने, तैयार माल बेचने, बैंकों से ऋण लेने और नई मशीनों का उपयोग करने आदि के लाभ उठा सकें। उत्पादन का [illegible] आरम्भ करने के लिए कहीं तो कर लगाने में कुछ छूट देने की और कहीं इनके तैयार माल को नियत मूल्य पर खरीदकर उसे सरकारी अथवा सहकारी संगठन के द्वारा बेचने आदि के उपायों की आवश्यकता होगी।

१८. इस समस्या पर विचार केवल वर्तमान घरेलू उद्योगों अथवा दस्तकारियों में लगे हुए लोगों के हितों की रक्षा अथवा इन उद्योगों में तैयार हुए माल की मांग को स्थिर रखने की दृष्टि से नहीं करना चाहिए। इस पर विचार करते हुए यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि नई-नई किस्म का माल तैयार हो और अधिक मात्रा में हो और माल तैयार करने की ऐसी नई प्रणालियां निकल आएं जो कि उत्पादन को बढ़ाने में सहायक हों, और बढ़ी हुई मांग को भली प्रकार पूरा कर सकें। अभिप्राय यह है कि इन उद्योगों का पुनर्गठन और आधुनिकीकरण करते हुए ध्यान सुरक्षा से अधिक इनकी उन्नति करने की ओर लगाना चाहिए। अभी तक छोटे उद्योग अधिक नहीं पनप सके। इसका एक कारण यह है कि इनकी कार्य-व्यवस्था [illegible]

रही है और इस कारण इन उद्योगों में तैयार हुए माल की मांग नहीं हुई। विकास योजनाओं में नई पूंजी लगाने से वर्तमान मांग बढ़ेगी और नई मांग उत्पन्न होगी। भारत बहुत बड़ा देश है; यहां दूरियां बहुत बड़ी-बड़ी हैं, और बाजार के विस्तार की गुंजाइश भी बहुत है। इसलिए यहां मांग की पूर्ति उत्पादन की कुशल और विकेन्द्रित इकाइयों द्वारा की जा सकती है और की जानी चाहिए। इन उद्योगों को विभिन्न स्थानों पर स्थापित करने के पक्ष में और भी युक्तियां हैं। बड़े उद्योगों की उन्नति के साथ-साथ बड़े-बड़े नगरों का विस्तार स्वयमेव हो जाता है। बिजली, परिवहन, बैंकों और अन्य सुविधाओं के एक ही स्थान पर एकत्र और सुलभ होने के कारण बड़े उद्योग प्रायः बड़े नगरों में केन्द्रित हो जाते हैं। परन्तु एक सीमा से आगे चलकर इस केन्द्रीकरण से घनी और गन्दी बस्तियां भी उत्पन्न होने लगती हैं। ज्यों-ज्यों परिवहन और यातायात का विकास होता जाएगा और छोटे नगरों और देहातों में भी बिजली मिलने लगेगी, त्यों-त्यों एक ही स्थान पर अर्थ-व्यवस्था को केन्द्रित कर देने के लाभ कम होते चले जाएंगे। इस दृष्टि से और देहातों तथा छोटे नगरों के निवासियों की आय बढ़ाने के उद्देश्य से छोटे उद्योगों की उन्नति पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। हमारे विस्तृत देश में स्थान-स्थान पर जो कुशल और अनुभवी कारीगर मौजूद हैं, उनका उपयोग केवल इस मार्ग पर चलकर ही किया जा सकता है।

आर्थिक विषमता में कमी

१६. भूतकाल में जिस ढंग से आर्थिक विकास हुआ है, उससे प्रायः आय और सम्पत्ति में विषमता बढ़ती गई है। आरम्भ में विकास के लाभ व्यापारियों और उत्पादकों के एक सीमित वर्ग को ही प्राप्त होते हैं और उसके विपरीत खेती तथा परम्परागत उद्योगों में नई प्रणालियों के अपनाने का प्रारम्भ में यह प्रभाव पड़ता है कि अधिक लोगों में बेरोजगारी और अर्ध-रोजगारी बहुत बढ़ जाती है। धीरे-धीरे इस प्रवृत्ति में सुधार होने लगता है, मजदूरों की यूनियनें बनने लगती हैं और जनतन्त्री विचारों का प्रचार हो जाने पर जनता की मांग पूरी करने के लिए सरकार भी आवश्यक कार्रवाइयां करने लगती है। हमारे देश के समान अविकसित अथवा कम विकसित देश जो विकास के मार्ग का अवलम्बन विलम्ब से करते हैं, उनके सामने समस्या यह होती है कि वे अपने उत्पादक साधनों का प्रयोग और समाज के विविध वर्गों के सम्बन्ध को इस प्रकार नियन्त्रित करें कि विकास के साथ-साथ आर्थिक और सामाजिक विषमताएं भी कम होती जाएं। विकास की यह प्रक्रिया समाजवादी आदर्शों के अनुसार होनी चाहिए। इस समय आय और सम्पत्ति की जो विषमताएं हैं, उन्हें कम करने के साथ-साथ यह ध्यान भी रखना होगा कि विकास के कारण नई विषमताएं उत्पन्न न हों और वर्तमान असमानताओं में वृद्धि न हो। विषमता दूर करने का कार्य दो दिशाओं में करना होगा। एक ओर तो निम्नतम आय को बढ़ाना, और दूसरी ओर ऊंची आय को घटाना होगा। इनमें से प्रथम बात का महत्व अधिक है। परन्तु साथ ही, दूसरी बात के लिए भी सोच-समझ कर और शीघ्र कार्रवाई करने की आवश्यकता है। अब तक इन दिशाओं में जनतन्त्री आधार पर और बड़े पैमाने पर कार्य करने का प्रयत्न नहीं किया गया। इतिहास में कम विकसित देशों के सामने विद्यमान इस विशिष्ट समस्या के समानान्तर कोई समस्या या उसका समाधान नहीं मिलता। इस समस्या का सामना साहस के साथ करना होगा और जो भी प्रणाली अपनाई जाएगी, उसे काफी लचकीला और परीक्षण के रूप में रखना होगा। यह भी ध्यान रखना होगा कि विषमता दूर करते हुए कोई ऐसा कार्य न हो जाए जिससे कि हमारी

उत्पादन प्रणाली को हानि पहुंचे और विकास में ही बाधा पड़े, अथवा जो जनतन्त्री परिवर्तन करना हमारी नीति का लक्ष्य है वही संकट में पड़ जाए। इसके विपरीत जनतन्त्री और व्यवस्थित परिवर्तन का अर्थ यह न बन जाए कि वर्तमान अथवा नई विषमताएं पनपती चली जाएं।

२०. इस बात पर बल देने की आवश्यकता है कि आय और धन की विषमता में कमी तभी हो सकती है, जब कि जो भी उपाय और सामाजिक परिवर्तन किए जाएं, वे सब योजना के अंग के रूप में किए जाएं। योजना में पूंजी-विनियोग का प्रस्तावित स्वरूप, आर्थिक गतिविधियों को सरकारी कार्रवाई द्वारा नया मोड़ देने, योजना की पूर्ति के लिए आवश्यक वित्तीय साधन एकत्र करने के लिए वित्तीय उपायों का प्रभाव, सामाजिक सेवाओं का विस्तार, भूमि के स्वामित्व और प्रबन्ध की व्यवस्थाओं में परिवर्तन, ज्वाइन्ट स्टाक कम्पनियों और मैनेजिंग एजेन्सियों के नए नियम बनाने, और सरकार की संरक्षा में सहकारिता की उन्नति आदि सब कार्रवाइयों का लक्ष्य यह निश्चित करना है कि नई आय कहां और किस प्रकार होगी और उसका वितरण कैसे होगा। योजनाबद्ध प्रयत्नों का उद्देश्य ही यह होता है कि सब उपाय एक सूत्र में गुम्फित रहें और उनका उपयोग इस प्रकार केन्द्रित हो जाए कि उनके द्वारा निम्न स्तरों पर तो आय और अवसरों में वृद्धि होती रहे और उच्च स्तरों की सम्पत्ति और अधिकारों में कमी होती चली जाए।

२१. आय और सम्पत्ति की विषमता कम करने में वित्तीय साधनों का महत्वपूर्ण योग रहेगा। परन्तु यह मानना पड़ेगा कि विषमता कम करने के लिए जो उपाय किए जाएंगे, उनमें से कुछ का नये कार्यों के लिए प्रोत्साहन पर प्रतिकूल प्रभाव भी हो सकता है। भारतीय आयकर व्यवस्था में बहुत प्रगति हो रही है, परन्तु यह स्पष्ट है कि आयकर की दर बढ़ाकर सरकारी आय को बढ़ाने और विषमता को कम करने की गुंजाइश अधिक नहीं है। कर-जांच आयोग ने इस सम्बन्ध में कर से बचने की प्रवृत्ति को रोकने के उपाय करने पर विशेष बल दिया था। उसने यह भी कहा था कि "धन और सम्पत्ति पर कर लगाने के क्षेत्र का विस्तार कर देना भी विषमताएं कम करने का एक उपाय हो सकता है।" योजना के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर विकास की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए कर की पद्धति में परिवर्तन करना एक ऐसी समस्या है जिसका निरन्तर अध्ययन किया जाना चाहिए। इस प्रयोजन से कर-पद्धति में जो परिवर्तन अथवा सुधार हो सकते हैं, उनका अध्ययन करने का प्रयत्न अनुसन्धान कार्य करने वाले सभी सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों को करना होगा।

२२. समाज के अधिक सम्पन्न वर्गों को विकास के साधन एकत्र करने में अधिक योग देने के लिए कहते समय यह भी ध्यान रखना पड़ेगा कि ऐसा करते हुए उनका अधिक श्रम या बचत करने का उत्साह मन्द न हो जाए। सम्भव है कि इसके लिए कर-पद्धति में बहुत अधिक परिवर्तन करने की आवश्यकता हो। हाल में एक सुझाव यह दिया गया था कि इस प्रयोजन की सिद्धि के लिए व्यक्तिगत कर लगाने का आधार आय को न रखकर व्यय को रखना चाहिए। साथ ही सम्पत्ति तथा पूंजी पर लाभ पर कर लगा देना चाहिए। व्यय पर कर लगाने के सुझाव पर अर्थशास्त्री अनेक बार विचार कर चुके हैं। इस सुझाव के समर्थक विशेषज्ञों की संख्या बढ़ती जा रही है। परन्तु इस सुझाव को अपनाने से पहले शासन-सम्बन्धी कई समस्याओं को हल करना पड़ेगा। सम्भव है कि आरम्भ में इस सुझाव को केवल परीक्षण के रूप में एक सीमित क्षेत्र में अपनाना उचित हो। अधिक उन्नत देशों के अनुभव से यह प्रतीत होता है कि इस समय बढ़ती हुई आमदनियों पर जिस प्रकार

अधिकाधिक आयकर लगाया जाता है, वह अधिक फलदायक सिद्ध नहीं होता। कारण यह है कि एक तो सम्पत्ति विक्रय से जो लाभ होते हैं वे कर से बच जाते हैं और दूसरे कर की चोरी नाना प्रकार और बड़ी मात्रा में होने लगती है। सम्भव है कि व्यय के आधार पर कर लगाने से लोगों को बचत अधिक करने का उत्साह हो। कम से कम सिद्धान्त के रूप में तो मुद्रा-स्फीति अथवा मुद्रा-संकोच की बुराइयों को कम करने के लिए यह आयकर की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली उपाय सिद्ध हो सकता है।

२३. आय और धन की विषमता का एक सबसे बड़ा कारण सम्पत्ति का स्वामित्व है। निस्संदेह, श्रम से प्राप्त होने वाली आय भी समान नहीं होती, परन्तु उसका समर्थन किसी हद तक यह कह कर किया जा सकता है कि वैसा उत्पादन की मात्रा अथवा श्रम की सुलभता या दुर्लभता के अनुसार होता है। कई प्रकार के श्रमों का पारिश्रमिक अन्य प्रकार के श्रमों की अपेक्षा अधिक दिया जाता है, और वैसा करने का उत्पादन के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होता। पारिश्रमिक में इन विभिन्नताओं के कारण पुरानी परम्पराएं, वर्तमान मनोवृत्तियां अथवा सामाजिक रीति-रिवाज आदि हैं। साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि ऊंचे वेतन पर भली प्रकार कार्य करने की क्षमता का सम्बन्ध काम करने वाले के शिक्षण और प्रशिक्षण के साथ भी है, और इन दोनों का सम्बन्ध जन्म और परिस्थितियों के साथ है। यदि इस बात पर विचार किए बिना कि कोई उसका मूल्य चुका सकता है या नहीं, सब वर्गों के लिए सामान्य और प्राविधिक शिक्षण का द्वार समान रूप से खोल दिया जाएगा तो कुछ समय के पश्चात समाज में समानता लाने का यह एक सफल साधन सिद्ध हो सकेगा। अभिप्राय यह है कि श्रम के द्वारा होने वाली आय में तो असमानता दूर की ही जानी चाहिए, उसके साथ ही धन अथवा सम्पत्ति पर कर लगाने के प्रश्न पर अधिक ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिएं। किसी व्यक्ति के सम्पत्ति का स्वामी होने का अर्थ यह है कि वह उस सम्पत्ति से होने वाली आय के अतिरिक्त भी कुछ कर दे सकता है। कर तब लगाया जाता है जब कि सम्पत्ति से कुछ आय होती है। इतने मात्र से, सम्पत्ति पर पृथक परन्तु कुछ हलका कर लगा देने के सुझाव का खण्डन नहीं होता। निस्संदेह, इस में कर देने से बचने के लिए सम्पत्ति के मूल्यांकन की ओर सम्पत्ति के क्रय-विक्रय की सूचना न देने आदि की कार्रवाइयां होंगी। परन्तु हम अपना लक्ष्य आय और धन की विषमताओं को कम करने और विकास के लिए आवश्यक साधन उन लोगों से एकत्र करने का बना चुके हैं जिनकी आय अथवा सम्पत्ति औसत से अधिक है। उसकी पूर्ति के लिए प्रशासन की इन समस्याओं को हल करना ही पड़ेगा।

२४. अन्त में इस सचाई की भी चर्चा कर देनी चाहिए कि अभी तक सम्पत्ति-कर से आय मात्रा में नगण्य ही हुई है। स्पष्ट है कि सम्पत्ति-कर के उद्देश्य को विफल न होने देने के लिए उस कर के अतिरिक्त उपहार-कर भी लगाना पड़ेगा। यह कर अनेक प्रकार से लगाया जा सकता है। उपहार कितने मूल्य का दिया गया, देने वाले के साथ पाने वाले का सम्बन्ध क्या है और पाने वाला पहले से कितनी अधिक सम्पत्ति का स्वामी है, इत्यादि बातों के अनुसार भी इस कर की मात्रा निश्चित की जा सकती है। उपहार-कर से धन-विनियोग के उत्साह को मन्द किए बिना पर्याप्त आय हो सकती है और धन तथा व्यय के आधार पर कर लगाने का यह एक महत्वपूर्ण मार्ग हो सकता है।

२५. ऊपर जो विचार प्रकट किए गए, उनका यह अर्थ नहीं है कि इनमें से किसी एक या सब उपायों का तुरन्त ही अवलम्बन कर लेना चाहिए। उनका अर्थ इतना ही है कि जनता के उत्साह

पर इन करों के प्रभाव और प्रशासन पर इनकी प्रतिक्रियाओं का अध्ययन और अधिक किया जाना चाहिए। इनमें से कई उपाय ऐसे हैं कि उनका पूरा लाभ कुछ समय पश्चात ही प्रकट हो सकेगा। परन्तु यदि विचार तथा परीक्षण के पश्चात इष्ट उद्देश्य की पूर्ति में कुछ भी सहायता मिलने की आशा हो तो नया परिवर्तन करने में झिझकना नहीं चाहिए।

२६. विषमता कम करने का कार्य दोनों दिशाओं से करना पड़ेगा। एक ओर तो उच्च स्तर पर धन और आय के अत्यधिक केन्द्रित हो जाने को रोकने के उपाय करने पड़ेंगे, और दूसरी ओर साधारण जनता की आय, विशेषतः निम्न स्तर की आय को बढ़ाना पड़ेगा। उच्चतम आय की सीमा निर्धारित कर देने का सुझाव बार-बार रखा गया है। उस पर विचार इसी दृष्टि से करना चाहिए। उक्त सुझाव में उसके रूप का महत्व इतना नहीं जितना कि उसके भाव का है। स्पष्ट है कि कानून बना देने मात्र से उच्चतम सीमा का निश्चय नहीं हो सकता। आय अनेक प्रकार होती है, वेतन या पारिश्रमिक से, सम्पत्ति के द्वारा और उद्योग या व्यवसाय से; इन सबका नियन्त्रण एक भारी उलझन-भरी समस्या है। जब तक सम्पत्ति की सीमा निर्धारित नहीं की जाएगी, तब तक आय की सीमा निर्धारित कर देने का कोई विशेष अर्थ नहीं होगा। सम्पत्ति या व्यापार व्यवसाय से होने वाली आय को नियन्त्रित करना कठिन है। उसका नियंत्रण वैयक्तिक आय पर कर लगाने की साधारण पद्धति के द्वारा ही किया जा सकता है। उच्चतम सीमा निर्धारित करने का अर्थ यह है कि एक नियत सीमा के पश्चात आय पर शत-प्रतिशत कर लगा दिया जाए। इसे किसी नियत तिथि के पश्चात अथवा किसी कठोर रूप में लगाने से अनेक कठिनाइयां उत्पन्न हो जाने की सम्भावना रहेगी। यह तो अवश्य उचित है कि जिनकी आय बहुत ही अधिक हो, वे सरकारी कोष की पूर्ति में अधिक योग दें, यह सिद्धान्त सर्वसम्मत है। हाल के वर्षों में ऊंची आमदनियों पर कर की दर को बढ़ा भी दिया गया है। वित्तीय और अन्य साधनों के द्वारा तो विषमताएं अवश्य दूर की जानी चाहिएं। परन्तु साथ ही ऐसे ठोस उपाय अपनाने पर बल देना चाहिए जिनसे आय का अधिक समान वितरण करने में सहायता मिले।

२७. दूसरे शब्दों में, समाज के केवल कुछेक लोगों के हाथ में व्यय करने की सामर्थ्य और आय को केन्द्रित होने से रोकने के उद्देश्य की सिद्धि इसी प्रकार हो सकती है कि कर की पद्धति में ऊपर बताए गए परिवर्तन क्रमशः कर लिए जाएं और समाज के संगठन को इस प्रकार बदल दिया जाए कि उसकी बचत पर अधिकाधिक मात्रा में सरकार का अधिकार होता चला जाए। इस प्रयोजन के लिए उत्पादन में सहकारिता की पद्धति को बढ़ावा देना, बिना काम की कमाई खाने वालों की समाप्ति, सूदखोर महाजनों के स्थान पर संगठित ऋण-व्यवस्था की स्थापना, निजी एकाधिकारों का नियन्त्रण और उत्पादन तथा व्यापार के महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सरकारी कार्यो का विस्तार आदि उपाय बहुत प्रभावशाली हैं। दूसरे शब्दों में, अधिकतम आय की सीमा निर्धारित करना इस प्रक्रिया का अन्तिम छोर हो सकता है, आरम्भिक नहीं। जितना शीघ्र हम समाजवादी आदर्श की ओर प्रगति करेंगे, उतनी ही शीघ्रता से आर्थिक विषमताएं लुप्त हो जाएंगी। समाजवादी आदर्श का अर्थ है समस्त आर्थिक और सामाजिक संगठनों का पूर्ण नियन्त्रण। इस समस्या का हल उन अवस्थाओं में परिवर्तन करके ही किया जा सकता है जो कि विषमता को उत्पन्न करतीं और स्थिर रखतीं हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि इस प्रसंग में निम्नतम आय का निर्धारित करना, अर्थात सभ्य जीवन बिताने के लिए आवश्यक वस्तुओं की प्राप्ति के एक न्यूनतम राष्ट्रीय मान की गारंटी कर देना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि उच्चतम आय की सीमा निश्चित कर देना।

२८. अब हमारे सामने प्रादेशिक विषमताओं का प्रश्न उपस्थित होता है। विकास की किसी भी चौमुखी योजना में कम विकसित प्रदेशों की विशेष आवश्यकताओं पर उचित ध्यान देने का सिद्धान्त एक माना हुआ सिद्धान्त है। पूंजी-विनियोग इस प्रकार किया जाना चाहिए कि उससे प्रादेशिक विकास संतुलित रूप में हो। इस समस्या का हल आरम्भिक अवस्थाओं में विशेष रूप से कठिन है, क्योंकि तब सब उपलब्ध साधन आवश्यकताओं की तुलना में बहुत अपर्याप्त होते हैं। परन्तु ज्यों-ज्यों विकास में प्रगति होती जाए और विनियोग के लिए अधिक साधन उपलब्ध होते जाएं, त्यों-त्यों विकास के कार्यक्रमों में विनियोग का लाभ कम विकसित प्रदेशों को अधिक पहुंचाने का ध्यान रखना चाहिए। अर्थ-व्यवस्था को विस्तृत करने का एकमात्र उपाय यही है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना को बनाते हुए इन विचारों का ध्यान रखा गया है। परन्तु भविष्य में जो योजनाएं बनाई जाएंगी, उनमें इनका और भी अधिक ध्यान रखा जाएगा।

२९. हाल में इस प्रश्न पर राष्ट्रीय विकास परिषद ने भी विचार किया था और यह सिद्धान्त मान लिया गया था कि उपलब्ध साधनों की सीमा में रहकर इस बात का पूरा प्रयत्न किया जाना चाहिए कि देश के विभिन्न भागों का विकास संतुलित रूप में हो। इस समस्या का हल नाना प्रकार से किया जाएगा। राष्ट्रीय विकास परिषद ने पहली सिफारिश यह की है कि औद्योगिक उत्पादन किसी एक स्थान पर केन्द्रित न होने दिया जाए। दूसरा सुझाव यह दिया गया है कि नए सरकारी अथवा निजी उद्योगों की स्थापना करते हुए यह ध्यान रखा जाए कि देश के विविध भागों का आर्थिक विकास संतुलित रूप में हो। कुछ उद्योगों को कुछ विशिष्ट स्थानों पर स्थापित करना पड़ता है, क्योंकि वहां उनके लिए आवश्यक कच्चा माल या अन्य प्राकृतिक साधन सुलभ होते हैं। अन्य अनेक उद्योग ऐसे होते हैं जिनके लिए स्थान का चुनाव आर्थिक दृष्टि से बहुत व्यापक क्षेत्र में से किया जा सकता है। बहुधा देखा गया है कि किसी स्थान के विरुद्ध व्यय अधिक हो जाने की दलील वस्तुतः उस स्थान का आधार-भूत विकास पर्याप्त न होने की सूचना देती है। एक बार उसके आरम्भ हो जाने पर प्रारम्भिक बाधाएं क्रमशः दूर होती जाती हैं। और इस दृष्टि से विकास के केन्द्रों को देश के विभिन्न स्थानों में दूर-दूर स्थापित करना अत्यन्त आवश्यक है। परिषद ने तीसरी सिफारिश यह की थी कि देश के विभिन्न भागों में श्रमिकों का परिव्रजन सरल करने के उपाय किए जाएं और ऐसे कार्यक्रम बनाएं जाएं जिनसे लोग अधिक घनी आबादी के स्थानों से उठकर विरल आबादी के स्थानों में बस सकें। परिषद की सिफारिश है कि प्रादेशिक विषमताओं को कम करने की समस्या का अध्ययन निरन्तर करते रहना चाहिए और प्रादेशिक विकास की सूचक कसौटियों का निश्चय करते रहना चाहिए। नई औद्योगिक नीति के प्रस्तावों में भी इन उद्देश्यों पर विशेष बल दिया गया है और जब योजना के सरकारी क्षेत्र में विकास कार्यक्रम बनाए जाएं अथवा निजी क्षेत्र में नए कारखानों को लाइसेंस देने की नीति निर्धारित की जाएं, तब इनका ध्यान रखना चाहिए।

आर्थिक नीति और प्रणालियां

३०. योजना काल में आर्थिक नीति के आधार और उसके संचालन की दिशा का निश्चय उन्हीं उद्देश्यों और विचारों के अनुसार किया जाएगा जो कि ऊपर बतलाए गए हैं। योजना की आर्थिक नीति का लक्ष्य आवश्यक वित्तीय साधनों को एकत्र करना ही नहीं, अपितु देश के वास्तविक साधनों का इस प्रकार उपयोग करना भी है कि उससे योजना की आवश्यकताएं

पूरी हो सकें। महत्वपूर्ण क्षेत्रों में साधनों का आवंटन सरकार द्वारा आरम्भ किए गए कार्यों को देखकर किया जाता है और इसलिए सरकार द्वारा किया गया पूंजी-विनियोग नीति निर्धारित करने का एक प्रधान सूत्र होता है। सरकारी पूंजी-विनियोग का लक्ष्य निजी पूंजी-विनियोग की अपेक्षा अधिक व्यापक होता है। सरकार देश की अर्थ-व्यवस्था की आवश्यकताओं को अधिक व्यापक और दूर-दृष्टि से देख सकती है और उसे देखना भी चाहिए। योजना के निजी क्षेत्र में पूंजी लगाते हुए प्रधान दृष्टि यह रहती है कि कितनी पूंजी लगाकर कितना लाभ हो सकेगा। इसके विपरीत सरकार को पूंजी लगाते हुए यह देखना पड़ता है कि सब मिलाकर उससे राष्ट्रीय उत्पादन में कितनी वृद्धि हो सकेगी। इसके अतिरिक्त, व्यापक दृष्टि से मिली-जुली अर्थ-व्यवस्था में सरकार की आर्थिक नीति का लक्ष्य यह भी रहता है कि मूल्यों और लाभों में उचित हेर-फेर करके निजी पूंजी विनियोग की दिशा को भी प्रभावित कर दिया जाए। इसलिए योजना की पूर्ति के लिए जिन उपायों के द्वारा यह कार्य किया जा सके उनका बहुत महत्व हो जाता है।

३१. योजना तैयार करने का अभिप्राय केवल इतना नहीं होता कि जो काम करने हैं उनकी एक सूची बनाकर रख दी जाए, पर उसे बनाते हुए यह निश्चय भी करना पड़ता है कि उन्हें किया किस प्रकार जाएगा। जनतन्त्री व्यवस्था में योजना की पूर्ति साधनों पर सीधा अधिकार करके नहीं की जा सकती; उसे मूल्यों के नियन्त्रण आदि द्वारा पूरा करना पड़ता है। जिन उपायों से योजना के उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है उनके मोटे रूप दो हैं। पहला उपाय तो वित्तीय और आर्थिक नीतियों के द्वारा देश की अर्थ-व्यवस्था को नियंत्रित करने का है, और दूसरा उपाय आयात और निर्यात का नियमन, उद्योग और व्यवसाय के लिए लाइसेंस व्यवस्था, मूल्यों का नियन्त्रण और अर्थ-व्यवस्था के किन्हीं विशिष्ट क्षेत्रों में आवंटनों द्वारा उनकी गति को नियमित और प्रभावित करने का है। हाल में इस प्रश्न पर बहुत विवाद हुआ है कि योजना का कार्य करते हुए केवल प्रथम उपाय का अवलम्बन करना चाहिए या दूसरे का भी—स्पष्ट है कि वित्तीय और आर्थिक नियन्त्रण के द्वारा अर्थ-व्यवस्था के उतार-चढ़ाव को अधिक व्यापक रूप में नियंत्रित किया जा सकता है, कर नीति में आवश्यक परिवर्तन करके दुर्लभ साधनों को किन्हीं निश्चित दिशाओं में मोड़ा जा सकता है। परन्तु इसमें भी संदेह नहीं कि जिस योजना का एक उद्देश्य पूंजी-विनियोग को पर्याप्त मात्रा में बढ़ाना हो और जिसमें कुछ कार्यों के लिए प्राथमिकता का क्रम-निश्चित कर लिया गया हो, उसकी पूर्ति केवल आर्थिक और वित्तीय नियंत्रण के द्वारा नहीं की जा सकती। इसलिए, दूसरे उपाय का भी अवलम्बन करना अनिवार्य हो जाता है।

३२. विकसित होती हुई किसी भी अर्थ-व्यवस्था में सरकार की वित्तीय और आर्थिक नीतियों का झुकाव, अनिवार्य रूप से अपना क्षेत्र अधिकाधिक विकसित करते जाने का होता है। यदि अकस्मात ही ऐसा दिखाई पड़े कि योजना की गति मन्द हो रही है तो व्यय बढ़ाकर और अधिक आर्थिक सहायता देकर गति को तीव्र किया जा सकता है, परन्तु सम्भावना यह है कि हमारी मुख्य समस्या मुद्रा-स्फीति की बुराइयों को रोकने की रहेगी। विकास के कार्यों का एक अंग यह भी है कि माल तैयार होने से पहले ही उसकी मांग उत्पन्न कर दी जाए। इसलिए सरकारी व्यय में कमी करने और आर्थिक प्रवृत्तियों को दबाने के उपाय तभी करने चाहिएं जब कि उनकी अत्यन्त आवश्यकता हो। एक युक्ति यह दी जा सकती है कि जिस देश को विदेशी मुद्रा असीम परिमाण में उपलब्ध हो, वह माल का अधिक आयात करके और

इस प्रकार अपने बाजार में माल की पूर्ति बढ़ाकर, मुद्रा-स्फीति की बुराइयों को रोक सकता है। परन्तु यह बात यथार्थ नहीं है। विदेशी मुद्रा एक ऐसा साधन है जिसका उपयोग यथाशक्ति कम किया जाना चाहिए। हमारा विचार योजना की पूर्ति के लिए अपनी चालू आय के अतिरिक्त पहले से एकत्र और सुरक्षित आय के कुछ भाग का और विशेष कार्यों के लिए मिली हुई विदेशी सहायता का उपयोग करने का है। इसलिए विदेशी विनिमय और व्यापार की नीति को ऐसा रखना पड़ेगा कि उसका हमारे विकास कार्यक्रमों के साथ मेल बैठ जाए। किसी भी कम विकसित अर्थ-व्यवस्था में साधनों की मांग नानाविध हुआ करती है। सम्भव है कि कृषि का उत्पादन ऐसे कई कारणों से, जिनका नियन्त्रण मनुष्य की शक्ति से बाहर है, आवश्यकता से कम हो। अन्य बाधाएं भी उत्पन्न हो सकती हैं। नई आमदनियों में और जिन वस्तुओं पर उन्हें व्यय किया जाना है उनकी प्राप्ति में सदा कुछ न कुछ अन्तर रह ही जाता है। परन्तु इस प्रकार की कठिनाइयों अथवा कमियों का सामना होने पर विकास के किसी भी कार्यक्रम का परित्याग नहीं किया जा सकता है। कुछ तो जोखिम उठानी ही पड़ेगी। इसका अर्थ यह है कि आवश्यकता होने पर हमें वस्तुओं के नियन्त्रण और वितरण की पद्धति पर अमल करने के लिए तैयार रहना चाहिए, और अब तक का अनुभव यह है कि नियन्त्रण और वितरण में सफलता तब तक नहीं होती जब तक कि उनका प्रयोग उन्हें मिलाकर नहीं किया जाता। उनकी सफलता के लिए जनता की मानसिक तैयारी भी आवश्यक होती है, और उसके लिए जनता को समझा-बुझाकर जनमत तैयार करना पड़ता है। यह ठीक है कि नियन्त्रण करते हुए प्रशासन सम्बन्धी कठिनाइयां होती हैं और उनके कारण नया कार्य करने का उत्साह भी मन्द पड़ जाता है, परन्तु साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि उनके बिना विषमताएं और कठिनाइयां बढ़ सकती हैं और उन वर्गों में असंतोष बढ़ सकता है जिनकी सुरक्षा की सबसे अधिक आवश्यकता है।

३३. इसमें संदेह नहीं कि मनोवैज्ञानिक और प्रशासन सम्बन्धी कारणों से जहां तक सम्भव हो वहां तक अन्न जैसी अत्यन्त आवश्यक वस्तुओं का नियन्त्रण और वितरण नहीं करना चाहिए। परन्तु इसके विपरीत यह भी ठीक है कि यदि आवश्यक वस्तुओं के मूल्य बढ़ने लगें या बहुत ऊंचे हो जाएं तो भारी कठिनाई हो जाती है। दुर्लभता या कमी का मूल उपाय तो यही है कि उपलब्ध माल की मात्रा बढ़ा दी जाए और इसके लिए जब देश में उत्पन्न माल अपर्याप्त हो तब उसे विदेशों से मंगाकर कमी को दूर कर देना चाहिए। परन्तु आयात का सहारा भी अत्यधिक नहीं लिया जा सकता। कभी-कभी जितने आयात की आवश्यकता होती है उतना उपलब्ध नहीं होता और कभी-कभी उसे करने के लिए अन्य महत्वपूर्ण कार्यों पर व्यय को रोक देना पड़ता है। यही बात देश के साधनों को पूंजी-विनियोग में न लगाकर उनका व्यय दैनिक आवश्यकताएं पूरी करने पर लागू होती है। इसलिए समस्त योजना को विफल न होने देने के प्रयोजन से भौतिक नियन्त्रणों को लागू करना अनिवार्य रूप से आवश्यक हो जाता है और विशेष परिस्थितियों में आवश्यक तथा उपयोगी वस्तुओं के भी नियन्त्रण का विचार सर्वथा नहीं छोड़ा जा सकता। सारांश यह है कि केवल नियंत्रणों को पर्याप्त नहीं समझना चाहिए और जब उनका सहारा लेना पड़े तब माल की उपलब्धि बढ़ाने का भी ध्यान रखना चाहिए।

३४. इस प्रसंग में यह बतला देना बहुत आवश्यक है कि सरकार को अन्न और अन्य आवश्यक वस्तुओं का अतिरिक्त संग्रह करके रखना चाहिए, और मूल्यों की घटा-बढ़ी को नियन्त्रण

में रखने के लिए उनका क्रय-विक्रय करते रहना चाहिए। कम विकसित अर्थ-व्यवस्थाओं में माल की मांग और उपलब्धि में थोड़े-से भी परिवर्तन का मूल्यों पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। माल की थोड़ी भी कमी होने पर मूल्य बहुत अधिक बढ़ जाते हैं और थोड़ी भी अधिकता होने पर वे बहुत अधिक घट जाते हैं। देश में उत्पन्न हुए माल का संग्रह करके, मूल्यों को स्थिर रखने के लिए बुद्धिमत्ता से उसका उपयोग करना विदेशी मुद्रा का व्यय करके विदेशी माल का आयात करने से किसी भी तरह कम महत्वपूर्ण नहीं है। इसलिए सरकार के लिए खाद्यान्नों का सदा पर्याप्त संग्रह रखना और प्रतिकूल परिस्थिति उत्पन्न होने पर मुद्रा-स्फीति की बुराइयों को रोकने के लिए उसका तुरन्त और सफल उपयोग कर लेना विकास के बड़े-बड़े कार्यक्रमों का एक अनिवार्य अंग होता है। सिद्धान्ततः यह बात केवल खाद्यान्नों पर नहीं, जरूरी कच्चे माल और अन्य जीवनोपयोगी वस्तुओं पर भी लागू होती है। इस उपाय की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि प्रशासनिक व्यवस्था दृढ़ हो और माल को एकत्र करने एक स्थान से दूसरे स्थान पर ढोकर ले जाने और उसका वितरण करने की सुविधाएं पर्याप्त हों। माल को संग्रह करके रखने और उसके द्वारा मूल्यों के उतार-चढ़ाव को ठीक करने का विचार खाद्यान्नों के सम्बन्ध में विशेष रूप से अपनाने योग्य है, और उसे प्राथमिकता देनी चाहिए। योजना में यह व्यवस्था की गई है कि केन्द्र और राज्य सरकारों क वेयर हाउसिंग कार्पोरेशन (गोदाम निगम) २० लाख टन अतिरिक्त खाद्यान्न संग्रह करने का प्रबन्ध रखें। इस कार्यक्रम को शीघ्र पूरा कर लेना अत्यन्त आवश्यक है।

३५. खाद्यान्नों का अतिरिक्त संग्रह रखकर सरकार मूल्यों के एकदम उतार-चढ़ाव को रोक सकेगी। इसके साथ ही, दूसरी व्यापारिक फसलों के मूल्यों को भी समय-समय पर ठीक करते रहना चाहिए, क्योंकि यह उचित ही है कि किसान जो फसलें बोए उनका मूल्य उसे ठीक मिले और उसे यह उत्साह हो कि वह योजना की आवश्यकता के अनुसार अपनी फसलों में अदला-बदली करता रहे। इस प्रयोजन की कुछ पूर्ति आयात और निर्यात के नियन्त्रण तथा आयात-निर्यात शुल्कों के द्वारा भी की जा सकती है। किसान का उत्साह बढ़ाने के लिए यह भी आवश्यक है कि जहां तक हो सके वहां तक आयात और निर्यात के परिमाण की घोषणा ऐसे समय कर दी जाए कि उसका लाभ बिचौलियों की अपेक्षा किसानों को अधिक पहुंचे। कपास के मूल्यों के उतार-चढ़ाव का नियन्त्रण अधिकतम और न्यूनतम मूल्य निर्धारित करके किया जाता है और गन्ने का मूल्य ठीक रखने के लिए सरकार बोने के मौसम से बहुत पहले यह घोषणा कर देती है कि कारखानों को गन्ने का क्या मूल्य देना पड़ेगा। फिर भी सरकार की मूल्य-नीति को सफल करने के लिए समय-समय पर आयात और निर्यात में परिवर्तन करना आवश्यक होता है। खेती की पैदावार की कई वस्तुओं के मूल्य पर, उदाहरणार्थ तिलहनों पर, सट्टेबाजी का असर बहुत अधिक होता है; आशा है कि वायदा-बाजारों का नियन्त्रण जब वायदा-बाजार आयोग के द्वारा होने लगेगा तब अनुचित सट्टेबाजी उचित नियन्त्रण में रह सकेगी। प्रसंगवश यह भी बता देना आवश्यक है कि अत्यधिक सट्टेबाजी का मेल सुयोजित अर्थ-व्यवस्था के साथ नहीं बैठता। इसलिए सट्टेबाजी को न केवल सट्टा बाजारों के लिए उपयुक्त नियम बनाकर अपितु बैंकों आदि द्वारा ऋण देने का नियन्त्रण करने के लिए जो कुछ किया जा सकता है वह करके भी नियंत्रित और नियमित करना चाहिए।

३६. अब संक्षेप में यह चर्चा भी कर लेनी चाहिए कि साधारणतया और कुछ विशेष दिशाओं में विकास की प्रगति पर वित्त और ऋण की व्यवस्थाओं का क्या प्रभाव पड़ता है। इस व्यवस्था को विकास की आवश्यकताओं के अनुसार नई दिशा में मोड़ने के लिए कुछ

महत्वपूर्ण उपाय प्रथम योजना काल में ही किए जा चुके हैं। इम्पीरियल बैंक आफ इंडिया देश का सबसे बड़ा व्यापारी बैंक था। उसे स्टेट बैंक के नाम से एक सरकारी स्वामित्व और प्रबन्ध के बैंक में परिवर्तित किया जा चुका है ताकि देहातों में भी बैंकों द्वारा ऋण देने की पद्धति का विस्तार हो सके। रिजर्व बैंक आफ इंडिया न केवल मुद्रा, ऋण और विदेशी विनिमय के क्षेत्र में नियन्त्रण और नियमन के कर्तव्यों का पालन करता है, अपितु ऋण देने-लेने वाली सहकारी संस्थाओं के विकास में भी सहायता और सहयोग देता है। ग्राम ऋण सर्वेक्षण समिति ने देहातों में ऋण-व्यवस्था का पुनर्गठन करने के लिए जो सिफारिशें की थीं उन्हें रिजर्व बैंक और सरकार के नेतृत्व में कार्यान्वित किया जा रहा है। देहातों में सर्वत्र उचित दर पर ऋण मिल सकने की व्यवस्था करने का काम बहुत बड़ा है। परन्तु पुनर्गठन के नए सुझावों में यह कार्य सहकारी संस्थाओं और रिजर्व बैंक तथा सरकार के सम्मिलित प्रयत्नों द्वारा करने का एक कार्यक्रम बनाया गया है। उससे शीघ्र उन्नति करना सम्भव हो सकेगा।

३७. औद्योगिक क्षेत्र में, औद्योगिक वित्त निगम (इंडस्ट्रियल फाइनेंस कार्पोरेशन) और औद्योगिक ऋण और विनियोग निगम (इंडस्ट्रियल क्रेडिट एण्ड इनवेस्टमेंट कार्पोरेशन) का संगठन योजना के निजी क्षेत्र की विशेष आवश्यकताएं पूरी करने के लिए किया गया है। इसके अतिरिक्त सरकार ने राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम का संगठन इसलिए किया है कि वह औद्योगिक विकास और उन्नति का कार्य स्वयं नई दिशाओं में कर सके। छोटे उद्योगों की सहायता करने और उन्हें बढ़ावा देने के लिए विशेष संस्थाओं की आवश्यकता है, और यह कार्य राज्य वित्त निगम (स्टेट फाइनेंस कार्पोरेशन) और केन्द्रीय लघु उद्योग निगम (सेंट्रल स्माल इंडस्ट्रीज़ कार्पोरेशन) का संगठन करके आरम्भ किया जा चुका है। सम्भव है कि आगे चलकर ऋण-व्यवस्था का और अधिक विकास करने के लिए ऐसी संस्थाएं संगठित करने की भी आवश्यकता हो जो कि एक नए व सुगठित पूंजी-बाजार के केन्द्र का काम दे सकें, क्योंकि इस समय कम्पनियों में प्रचलित मैनेजिंग एजेंसी की प्रथा धीरे-धीरे कम होती जाएगी। हाल में, जीवन बीमे का राष्ट्रीयकरण भी इसीलिए किया गया है कि जनता में बचत करने की प्रवृत्ति बढ़ाने और उससे प्राप्त धन का प्रवाह योजना की आवश्यकताओं के अनुसार नई दिशाओं में मोड़ने के लिए सरकार को एक नवीन और प्रबल साधन मिल जाए।

३८. संक्षेप में विकास के कार्यों के लिए योजना के उद्देश्यों और प्राथमिकताओं के अनुसार आवश्यक यह है कि आर्थिक और सामाजिक नीतियों को एक सूत्र में बांधकर रखा जाए। इसके लिए, जो उपाय प्रयोग में लाए जाएंगे, उन्हें समय-समय पर आवश्यकतानुसार बदलना होगा। कहीं तो वित्तीय अथवा मूल्य-नियन्त्रण के साधनों का प्रयोग किया जाएगा, कहीं सफलता लाइसेंस देने की पद्धति से मिलेगी और कहीं लाभ की सीमा निश्चित कर देने, दुर्लभ कच्चे माल का राशन कर देने अथवा इसी प्रकार के अन्य नियन्त्रण लागू कर देने की आवश्यकता होगी। नई कम्पनियां खोलने (निजी पूंजी लगाने) की अनुमति देना, विदेशी मुद्रा के प्रयोग को नियंत्रित करना, नए कार्यों की आवश्यकतानुसार करों में हेर-फेर करना, जिन्हें पात्र समझा जाए उन्हें वित्तीय सहायता देना, और व्यापारिक, वित्तीय तथा औद्योगिक संस्थाओं का नियन्त्रण तथा मार्गदर्शन करना—ये सब योजना बनाने के माने हुए अंग हैं। 'योजना' नाम ही उस प्रयत्न का है जो लोगों के स्वेच्छा से किए हुए अनियमित और असंगठित प्रयत्नों के फलों को समृद्ध करने के लिए किया जाता है। इसके लिए नियन्त्रण और उत्साहवर्धक कार्यों का करना अनिवार्य हो जाता है। योजना में निश्चित पूंजी-विनियोग

के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए ऐसे उपाय करने पड़ते हैं कि आवश्यक साधन अवश्य उपलब्ध हो जाएं और जनता उन्हें अपनी दैनिक आवश्यकताओं पर व्यय न कर डाले। यह भी आवश्यक होता है कि साधनों के संग्रह के लिए जो स्पष्ट कष्ट उठाया जाए उसका बोझ यथाशक्ति सब पर समान रूप से पड़े। योजना के लिए साधनों के प्रयोग का निश्चय करते हुए और आर्थिक तथा सामाजिक लक्ष्यों की सुगमतापूर्वक संतुलित पूर्ति करने के लिए यह आवश्यक है कि योजना को कार्यान्वित करने वालों के हाथ में ऐसे अधिकार या उपाय रहें कि वे उनका उपयोग विद्यमान संगठन में रहकर कर सकें। परन्तु साथ ही, इस संगठन को भी बदलते रहना चाहिए जिससे कि अभीष्ट सुधारों और नियन्त्रणों को इस संगठन पर विशेष रूप से न लादना पड़े, और वे स्वयंमेव इसके अंग बन जाएं।

परिशिष्ट

भारत सरकार

औद्योगिक नीति का प्रस्ताव

नई दिल्ली, ३० अप्रैल, १९५६

सं० ९१/सी एफ/४८—औद्योगिक क्षेत्र में भारत सरकार जिस नीति पर चलना चाहती है उसका उल्लेख उसने अपने ६ अप्रैल, १९४८ के प्रस्ताव में कर दिया था। उसमें, देश की अर्थ-व्यवस्था के लिए उत्पादन में निरन्तर वृद्धि करते रहने का और धन के समान वितरण का महत्व बतलाकर कहा गया था कि उद्योगों की उन्नति में सरकार को अधिकाधिक और सक्रिय भाग लेते रहना चाहिए। उसमें यह भी कहा गया था कि शस्त्रास्त्र, गोला-बारूद, अणु-शक्ति, और रेल परिवहन के उद्योगों पर तो सरकार का एकाधिकार रहेगा ही, इनके अतिरिक्त भी छ: मूल उद्योगों में नए कारखाने खोलने का उत्तरदायित्व केवल सरकार का रहेगा, परन्तु यदि राष्ट्रीय हित की दृष्टि से सरकार उचित समझेगी तो जहां आवश्यक होगा वहां वह निजी उद्योगपतियों की भी सहायता ले सकेगी। शेष सारा औद्योगिक क्षेत्र निजी उद्योगपतियों के लिए खुला छोड़कर यह स्पष्ट कर दिया गया है कि इस क्षेत्र में भी सरकार क्रमशः अधिकाधिक भाग लेती जाएगी।

२. औद्योगिक नीति के सम्बन्ध में यह घोषणा किए हुए आठ वर्ष बीत चुके हैं। तब से अब तक भारत में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन और विकास कार्य हो चुके हैं। भारत का संविधान बनाकर उसमें अनेक मौलिक अधिकारों की गारण्टी दी जा चुकी है और राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्त निश्चित किए जा चुके हैं। आयोजन का कार्य संगठित आधार पर आरम्भ करके प्रथम पंचवर्षीय योजना हाल में ही पूरी की जा चुकी है। संसद, समाज के समाजवादी आदर्श को अपनी सामाजिक और आर्थिक नीति के लक्ष्य के रूप में अपना चुकी है। विकास की दिशा में इन महत्वपूर्ण प्रगतियों के कारण आवश्यक हो गया है कि औद्योगिक नीति की पुनः घोषणा कर दी जाए। शीघ्र ही द्वितीय पंचवर्षीय योजना देश के सामने प्रस्तुत की जाने वाली है। इसलिए उक्त घोषणा की आवश्यकता और भी बढ़ गई है। इस नीति का निर्धारण करते हुए संविधान में निश्चित किए गए सिद्धान्तों, समाजवाद के उद्देश्य और गत वर्षों में प्राप्त अनुभवों को ध्यान में रखना चाहिए।

३. भारत के संविधान की प्रस्तावना में घोषणा की गई है कि इसका उद्देश्य अपने सब नागरिकों के लिए—

"सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय;
विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म
और उपासना की स्वतन्त्रता;
प्रतिष्ठा और अवसर की समता;
प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की
एकता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता"

प्राप्त करना है।

संविधान में राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्तों में बतलाया गया है कि—

"राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित करे, भरसक कार्य-साधक रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोक-कल्याण की उन्नति का प्रयास करेगा।"

इसके साथ ही—

"राज्य अपनी नीति का विशेषतया ऐसा संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से—

(क) समान रूप से नर और नारी सभी नागरिकों को जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो;

(ख) समुदाय की भौतिक सम्पत्ति का स्वामित्व और नियन्त्रण इस प्रकार बंटा हो कि जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो;

(ग) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले कि जिससे धन और उत्पादन साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी केन्द्र न हो;

(घ) पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो;

(ङ) श्रमिक पुरुषों और स्त्रियों के स्वास्थ्य और शक्ति तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो तथा आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हों;

(च) शशव और किशोर अवस्था का शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से संरक्षण हो।"

४. संसद ने दिसम्बर १९५४ में जब अपनी सामाजिक और आर्थिक नीति का लक्ष्य समाज का समाजवादी आदर्श स्वीकृत किया, तब इन आधारभूत और सामान्य सिद्धान्तों को और भी अधिक स्पष्ट कर दिया था। इसलिए, अन्य नीतियों के समान औद्योगिक नीति भी इन्हीं सिद्धान्तों और निदेशों के अनुसार निर्धारित की जानी चाहिए।

५. इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए यह आवश्यक है कि आर्थिक विकास की गति तीव्र करके औद्योगिक उन्नति शीघ्र से शीघ्र की जाए, विशेषतः भारी और मशीनें बनाने वाले उद्योगों का विकास किया जाए, सरकारी क्षेत्रों को शीघ्र बढ़ाया जाए और सहकारिता के क्षेत्र का अधिकाधिक विस्तार किया जाए। इनसे ही जीविकोपार्जन के लाभदायक अवसर बढ़ने और साधारण जनता के जीवन का मान ऊंचा होने तथा रोजगार की परिस्थितियां सुधरने की नींव पड़ती है। साथ ही, यह भी आवश्यक है कि लोगों की आय और सम्पत्ति में आज जो विषमता है वह तत्काल कम की जाए, जिससे कि किसी का निजी एकाधिकार न होने पाए और विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों की प्रभुता कुछ थोड़े-से व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रित न हो जाए। इसलिए, नए औद्योगिक कारखाने खोलने और परिवहन की सुविधाएं बढ़ाने का उत्तरदायित्व सरकार निरन्तर अधिकाधिक मात्रा में सीधे अपने ऊपर लेती चली जाएगी। व्यापार को भी सरकार

अधिकाधिक परिमाण में अपने हाथ में करती जाएगी। परन्तु देश की अर्थ-व्यवस्था का विस्तार होते जाने के साथ-साथ सुनियोजित राष्ट्रीय विकास के अभिकरण के रूप में निजी क्षेत्र को भी बढ़ने और फलने-फूलने का अवसर दिया जाएगा। जहां भी सम्भव हो वहां सहकारिता के सिद्धान्त पर अमल करना चाहिए और निजी उद्योगों का विकास अधिकाधिक मात्रा में इसी आधार पर करना चाहिए।

६. समाज के समाजवादी आदर्श को राष्ट्रीय लक्ष्य के रूप में अपना लिये जाने और विकास का कार्य शीघ्रता से तथा सुनियोजित रूप में करना आवश्यक होने के कारण यह उचित है कि आधारभूत और सामरिक महत्व के और सार्वजनिक उपयोगिता सेवाओं के सब उद्योगों को सरकारी क्षेत्र में रखा जाए। जो उद्योग आधारभूत हैं और जिनमें इतनी अधिक पूंजी लगानी पड़ती है कि उसे आज की परिस्थितियों में केवल सरकार ही लगा सकती है, उन्हें भी सरकारी क्षेत्र में रखना पड़ेगा। इसलिए, उद्योगों के बहुत बड़े क्षेत्र में भावी विकास का उत्तरदायित्व सरकार को सीधे अपने ऊपर लेना पड़ेगा। फिर भी कुछ कारण ऐसे हैं, जिनसे सरकार को अपना क्षेत्र अभी सीमित करना और यह निश्चय करना पड़ता है कि वह किन उद्योगों के विकास का उत्तरदायित्व तो एकमात्र अपने ऊपर लेगी और किन के विकास में अपना प्रमुख भाग रखेगी। इस समस्या के सब पहलुओं पर योजना आयोग के साथ विचार करने के पश्चात भारत सरकार ने उद्योगों को, उनमें से प्रत्येक में सरकार का क्या भाग रहेगा इस दृष्टि से तीन वर्गों में बांटने का निश्चय किया है। ये तीनों वर्ग अनिवार्य रूप से किसी हद तक एक-दूसरे के साथ सटे होंगे। इनकी सीमा कठोरतापूर्वक निश्चित कर देने से तो अभीष्ट उद्देश्य की ही हानि हो जाएगी। परन्तु फिर भी आधारभूत सिद्धान्तों और लक्ष्यों को सदा ध्यान में रखना और आगे बतलाए गए साधारण निदेशों का पालन करना ही पड़ेगा। इस प्रसंग में यह भी स्मरण रखना चाहिए कि सरकार किसी भी औद्योगिक वस्तु का उत्पादन अपने हाथ में ले लेने के लिए सदा स्वतन्त्र रहेगी।

७. प्रथम वर्ग में वे उद्योग रहेंगे जिनके भावी विकास का उत्तरदायित्व एकमात्र सरकार का रहेगा। द्वितीय वर्ग में वे उद्योग रहेंगे जिन पर क्रमशः और अधिकाधिक मात्रा में सरकार का स्वामित्व होता जाएगा और इसलिए उनके नए कारखाने खोलने में पहल सरकार करेगी, परन्तु उनकी पूर्ति में सरकार निजी उद्योगपतियों से भी सहायता मिलने की आशा रखेगी। तृतीय वर्ग में शेष सब उद्योग रहेंगे और उनका भी विकास साधारणतया निजी उद्योगपतियों के प्रयत्न और पहल के लिए छोड़ दिया जाएगा।

८. प्रथम वर्ग के उद्योगों की गणना इस प्रस्ताव की अनुसूची 'क' में कर दी गई है। इन उद्योगों में निजी उद्योगपतियों के जिन कारखानों की मंजूरी सरकार पहले से दे चुकी है, उनके अतिरिक्त सब नए कारखाने सरकार ही खोलेगी। इसका अर्थ यह नहीं है कि जो निजी कारखाने पहले से मौजूद हैं उनका विस्तार नहीं होने दिया जाएगा, अथवा नए कारखाने खोलने में राष्ट्रीय लाभ के लिए वैसा करना आवश्यक होने पर भी सरकार निजी उद्योगपतियों की सहायता नहीं लेगी। परन्तु रेल और हवाई परिवहन, शस्त्रास्त्र तथा गोला-बारूद और अणु-शक्ति का विकास सरकारी एकाधिकार में ही किया जाएगा। जब कभी निजी सहयोग की आवश्यकता होगी तब सरकार पूंजी में अपना बड़ा भाग रखकर अथवा अन्य प्रकार ऐसा प्रबन्ध कर लेगी कि नीति निर्धारित करने और कारखाने के प्रबन्ध को नियंत्रित करने का आवश्यक अधिकार उसके अपने हाथ में रहे।

९. द्वितीय वर्ग के उद्योगों की परिगणना अनुसूची 'ख' में कर दी गई है। इनके भावी विकास की गति को तीव्र करने के लिए सरकार इनके नए कारखाने अधिकाधिक संख्या में खोलेगी। साथ ही, इस क्षेत्र में निजी उद्योगपतियों को भी स्वतन्त्र रूप से अथवा सरकार के सहयोग से आगे बढ़ने का अवसर दिया जाएगा।

१०. शेष सब उद्योग तृतीय वर्ग में रहेंगे, और आशा है कि उनका विकास साधारणतया निजी प्रयत्न और पहल द्वारा ही हो सकेगा, परन्तु इस वर्ग में भी सरकार को कोई नया कारखाना शुरू कर सकने की स्वतन्त्रता रहेगी। सरकार की नीति यह रहेगी कि वह इन उद्योगों के विकास में भावी पंचवर्षीय योजनाओं में निश्चित कार्यक्रमों के अनुसार परिवहन, बिजली तथा अन्य इसी प्रकार की सुविधाएं देकर और उचित वित्तीय नीतियों तथा अन्य उपायों के द्वारा निजी उद्योगपतियों को सहायता और बढ़ावा देती रहे। सरकार इन उद्योगों को वित्तीय सहायता देने वाली संस्थाएं भी संगठित करती रहेगी और जो संस्थाएं औद्योगिक या खेती के काम करने के लिए सहकारिता के आधार पर संगठित की जाएंगी, उन्हें विशेष सहायता दी जाएगी। जहां ठीक समझा जाएगा वहां सरकार निजी उद्योगों को वित्तीय सहायता भी देगी। सरकार पसन्द यह करेगी कि यह सहायता पूंजी में भाग लेकर दी जाए, विशेषतः जब देय राशि की मात्रा बड़ी हो। परन्तु यह सहायता अंशतः डिबेन्चर पूंजी के रूप में भी दी जा सकती है।

११. निजी उद्योगपतियों के कारखानों को सरकार की सामाजिक और आर्थिक नीतियों के दायरे में रह कर चलना और औद्योगिक (विकास तथा नियमन) अधिनियम तथा इसी प्रकार के अन्य कानूनों के नियमोपनियमों का पालन करना पड़ेगा। परन्तु भारत सरकार मानती है कि इन कारखानों को यथासम्भव अधिकतम स्वतन्त्रता से फलने-फूलने देना चाहिए। हां, इतनी शर्त अवश्य रहनी चाहिए कि वे वैसा करते हुए राष्ट्रीय योजना के लक्ष्यों और उद्देश्यों का उल्लंघन न करें। यदि किसी उद्योग में निजी और सरकारी दोनों प्रकार के कारखाने होंगे, तो सरकार की नीति दोनों में बिना कोई भेदभाव किए न्यायपूर्ण व्यवहार करने की रहेगी।

१२. उद्योगों को तीन वर्गों में बांट देने का अर्थ यह नहीं है कि उन्हें एक-दूसरे से बिल्कुल पृथक व स्वतन्त्र भागों में बांट दिया गया हो। तीनों भागों में, अनिवार्य रूप से एक-दूसरे के कार्यक्षेत्र की कुछ पुनरावृत्ति तो होगी ही, निजी और सरकारी क्षेत्रों में यथाशक्ति सहयोग और संगति रखने का भी यत्न किया जाएगा। जब कभी योजना के किसी प्रयोजन से या अन्य किसी महत्वपूर्ण कारण से आवश्यक होगा तब सरकार को अनुसूची 'क' और 'ख' में नहीं गिनाए गए किसी उद्योग में भी कारखाना खोलने की स्वतन्त्रता रहेगी। उचित होने पर निजी कारखानों को भी अपनी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए या सम्बद्ध उत्पादन के रूप में ऐसी वस्तु तैयार करने की इजाजत दी जा सकेगी जो कि अनुसूची 'क' में परिगणित की जा चुकी है। साधारणतया छोटी निजी इकाइयों को छोटे जहाज या हलकी नौकाएं बनाने, स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बिजली तैयार करने और छोटे पैमाने पर खानों की खुदाई करने आदि से रोका नहीं जाएगा। इसके अतिरिक्त सम्भव है कि बड़े सरकारी कारखाने हलके पुर्जों आदि की अपनी कुछ आवश्यकताएं निजी कारखानों से पूरी करा लें, और निजी कारखाने अपनी बहुत-सी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सरकारी कारखानों के भरोसे रहें। यही सिद्धान्त इससे भी अधिक बल के साथ बड़े और छोटे उद्योगों के परस्पर सम्बन्धों पर लागू होगा।

१३. इस प्रसंग में भारत सरकार, राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के विकास में ग्रामोद्योगों, घरेलू और छोटे उद्योगों के भाग पर विशेष बल देना चाहती है। कुछेक ऐसी समस्याओं का हल इन उद्योगों के द्वारा विशेष सुगमतापूर्वक किया जा सकता है जिन्हें हल करने की तुरन्त ही आवश्यकता होती है। इनमें बहुत-से लोगों को तुरन्त काम मिल सकता है। इनमें राष्ट्रीय आय का समान वितरण करने की विधि सुगमता से निकाली जा सकती है और जो पूंजी तथा कौशल अन्य प्रकार बेकार पड़े रह जाते हैं, उनका उपयोग इनमें सुगमता और सफलतापूर्वक किया जा सकता है। नगरों का विस्तार बिना योजना के होने से जो समस्याएं खड़ी हो जाती हैं, औद्योगिक उत्पादन के छोटे केन्द्र खोलकर उनसे बचा जा सकता है।

१४. सरकार की नीति ग्रामोद्योगों, घरेलू और छोटे उद्योगों को सहारा देने की है। इसकी सफलता के लिए वह बड़े कारखानों में उत्पादन की मात्रा सीमित करती है, भिन्नक कर लगाती है और प्रत्यक्ष सहायता भी देती है। जब आवश्यकता हो, तब ये उपाय करने के साथ-साथ सरकार की नीति का लक्ष्य यह रहेगा कि उद्योगों का विकेन्द्रीकृत भाग इतना समर्थ हो जाए कि वह अपने पांवों पर खड़ा हो जाए और उसका विकास बड़े उद्योगों के साथ मिलकर हो। इसलिए सरकार ऐसे उपाय करेगी जिनसे छोटे उत्पादकों का प्रतिस्पर्धा में खड़े होने का बल बढ़ सके। इसके लिए उत्पादन की विधियों को सुधारना और आधुनिक बनाना नितान्त आवश्यक है। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि जो परिवर्तन किए जाएं उनके कारण कारीगरों में बेकारी न फैले। छोटे पैमाने के उद्योगों के उत्पादकों की बड़ी कठिनाइयों में पूंजी और यन्त्रों की कमी, ठीक स्थान का न मिल सकना और मरम्मत की सुविधाओं का न होना मुख्य हैं। इन कमियों को दूर करने के लिए औद्योगिक केन्द्रों की और देहातों में पंचायती कारखानों की स्थापना की जाने लगी है। देहातों में बिजली पहुंचाने और देहाती कारीगर उसका जो मूल्य दे सकें, उस पर उसे देने से भी उन्हें बड़ी सहायता मिलेगी। औद्योगिक सहकारी संस्थाएं संगठित करने से भी छोटे उद्योगों को काफी मदद पहुंचेगी। सरकार को इन सहकारी संस्थाओं की सब प्रकार से सहायता करनी चाहिए और ग्रामोद्योगों, घरेलू तथा छोटे उद्योगों के विकास का निरन्तर ध्यान रखना चाहिए।

१५. औद्योगिक उन्नति का लाभ सारे देश को पहुंचे, इसके लिए आवश्यक है कि विभिन्न प्रदेशों में विकास के स्तर का अन्तर क्रमशः कम किया जाता रहे। देश के विभिन्न भागों में उद्योगों के अभाव के कारण प्रायः कच्चे माल का या अन्य प्राकृतिक साधनों का अभाव आदि रहता है। कुछेक प्रदेशों में उद्योगों के अधिक केन्द्रित हो जाने का कारण भी वहां बिजली और पानी की सुलभता और परिवहन की सुविधाओं का विकास है। राष्ट्रीय आयोजन का एक उद्देश्य यह भी है कि जो स्थान अब तक औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं अथवा जहां रोजगार की अधिक सुविधाएं देने की आवश्यकता है, वे यदि अन्य दृष्टियों से उपयुक्त हों तो वहां ये सब सुविधाएं दी जाएं। सारे देश के रहन-सहन का दर्जा ऊंचा तभी उठाया जा सकता है जब कि उद्योगों और कृषि की अर्थ-व्यवस्थाओं का विकास सब प्रदेशों में संगत और संतुलित रूप में किया जाए।

१६. औद्योगिक विकास के इस कार्यक्रम की पूर्ति के लिए टेकनीकल और प्रबन्ध के कार्य में निपुण व्यक्तियों की देश में बड़ी संख्या में तलाश करनी पड़ेगी। सरकारी उद्योगों के विस्तार और ग्राम तथा छोटे उद्योगों के विकास की शीघ्रता से बढ़ती हुई ये आवश्यकताएं पूरी करने के लिए सरकारी नौकरियों के प्राविधिक तथा प्रबंध संवर्ग बनाए जा रहे हैं। ऐसे उपाय भी

किए जा रहे हैं जिनसे प्रवन्ध के उच्च स्तरों पर नियुक्त व्यक्तियों की कमी दूर हो जाए ताकि सरकारी और निजी उद्योगों में लोगों को वड़ी संख्या में अप्रेंटिस रखकर काम सिखलाया जा सके, और विश्वविद्यालयों तथा संस्थाओं में भी व्यापारिक प्रवन्ध का शिक्षण दिया जा सके।

१७. जो लोग उद्योगों में लगे हुए हैं उनको उचित सुख-सुविधाएं और प्रोत्साहन देने की भी आवश्यकता है। कार्यकर्ताओं के रहन-सहन और काम करने की अवस्थाओं में सुधार किया जाना और उनकी कार्य-कुशलता का स्तर ऊंचा उठाया जाना चाहिए। मालिकों और मजदूरों में झगड़ों का न होना औद्योगिक उन्नति की एक परम आवश्यकता है। समाजवादी जनतन्त्र में श्रमिक भी विकास कार्यक्रम में साझीदार होते हैं; और उन्हें इसमें उत्साहपूर्वक भाग लेना चाहिए। कारखानों के मालिकों और मजदूरों के पारस्परिक प्रवन्ध तय करने के लिए कुछ कानून बनाए जा चुके हैं और दोनों अपने-अपने कर्तव्यों को अधिकाधिक समझकर सब मामलों पर उदार दृष्टि से विचार करने के अभ्यासी होते जा रहे हैं। दोनों को मिलकर विचार करना, और जहां कहीं सम्भव हो वहां प्रवन्ध में श्रमिकों और कुशल कारीगरों को भी हिस्सा देना चाहिए। इस दिशा में सरकारी कारखानों को आदर्श उपस्थित करना होगा।

१८. अब चूंकि उद्योग और व्यापार में सरकार का भाग वढ़ता चला जाएगा, इसलिए इनका प्रवन्ध कैसे करना चाहिए, इस प्रश्न का महत्व भी बेहुत वढ़ जाएगा। इन कार्यों की सफलता के लिए यह आवश्यक होगा कि निर्णय शीघ्र किए जाएं और लोग उत्तरदायित्व लेने को तैयार हों। इस कारण जहां कहीं सम्भव हो, वहां अधिकार को बांट देना और प्रवन्ध को व्यापारिक ढंग से करना चाहिए। आशा है कि सरकारी कारोवारों से सरकार की आमदनी वढ़ जाएगी और नए-नए क्षेत्रों में विकास के लिए साधन उपलब्ध हो सकेंगे। परन्तु कभी-कभी इन कारोवारों में नुकसान का भी सामना करना पड़ेगा। सरकारी कारोवारों की सफलता उनके समस्त परिणामों से जांचनी चाहिए; और उन्हें चलाने वालों को अधिकतम स्वतन्त्रता रहनी चाहिए।

१९. १९४८ के औद्योगिक नीति के प्रस्ताव में कई अन्य विषयों पर भी विचार किया गया था। उनमें से कइयों के लिए तो आवश्यक कानून वन चुके हैं और कइयों पर सरकारी नीति विषयक घोषणाएं की जा चुकी हैं। उद्योगों के विषय में केन्द्र और राज्य सरकारों की जिम्मेदारियों का विभाजन औद्योगिक (विकास तथा नियमन) अधिनियम द्वारा किया जा चुका है। विदेशी पूंजी के विषय में सरकारी नीति का प्रतिपादन स्वयं प्रधान मंत्री ६ अप्रैल, १९४९ को संसद में अपने वक्तव्य द्वारा कर चुके हैं। इस कारण इस प्रस्ताव में इन विषयों की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं रही।

२०. भारत सरकार को आशा है कि उसकी औद्योगिक नीति की इस पुनर्घोषणा का जनता के सब वर्ग समर्थन करेंगे और इससे देश की औद्योगिक उन्नति द्रुत गति से करने में सहायता मिलेगी।

अनुसूची 'क'

१. शस्त्रास्त्र और गोला-बारूद और प्रतिरक्षा के लिए आवश्यक अन्य सामग्री।
२. अणुशक्ति।
३. लोहा और इस्पात।

४. लोहे और इस्पात की ढली हुई और कूट-पीटकर बनाई हुई भारी वस्तुएं।

५. लोहा और इस्पात तैयार करने, खानों का काम करने, मशीनों के पुर्जे बनाने के और केन्द्रीय सरकार द्वारा विशेष रूप से निर्दिष्ट अन्य भारी उद्योगों के लिए आवश्यक यन्त्र और मशीनें।

६. बिजली के बड़े कारखाने, जिनमें पानी और भाप की ताक़त से घूमने वाले बड़े टरबाइन भी शामिल हैं।

७. पत्थर का कोयला और लिगनाइट।

८. खनिज तेल।

९. खनिज लोहा, खनिज मेंगनीज, खनिज क्रोम, जिप्सम, गंधक, सोने और हीरे की खुदाई।

१०. तांबे, सीसे, जस्ते, टिन, मौलिब्डेनम और वौलफ्रेम की खुदाई और विधायन।

११. अणुशक्ति के उत्पादन और नियन्त्रण के लिए जारी की गई १९५३ की सरकारी आज्ञा की अनुसूची में लिखे हुए खनिज पदार्थ।

१२. वायुयान।

१३. वायु परिवहन।

१४. रेल परिवहन।

१५. जहाज निर्माण।

१६. टेलीफोन और टेलीफोन के तार और बेतार के यन्त्र (रेडियो सेटों को छोड़कर)

१७. बिजली का उत्पादन और वितरण।

अनुसूची 'ख'

१. १९४९ के "खनिज रियायत नियम" के अनुच्छेद ३ की परिभाषा में सम्मिलित "छोटे खनिजों" के अतिरिक्त अन्य खनिज वस्तुएं।

२. एल्यूमीनियम और ऐसी अन्य अलोह धातुएं, जो कि अनुसूची में सम्मिलित नहीं की गई।

३. मशीनों के पुर्जे।

४. लोहे के मेल की धातुएं, और पुर्जे बनाने का इस्पात।

५. औषधियां, रंग और प्लास्टिक निर्माण आदि जैसे रासायनिक उद्योगों के लिए आवश्यक बुनियादी और मध्यवर्ती रासायनिक द्रव्य।

६. एंटीबायोटिक्स (रोगाणुनाशक) और अन्य मूल औषधियां।

७. रासायनिक खाद।

८. कृत्रिम रबड़।

९. कोयले का कार्बनीकरण।

१०. रासायनिक लुगदी।

११. सड़क परिवहन।

१२. समुद्र परिवहन।

अध्याय ३

योजना की रूपरेखा

गत अध्याय में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के विस्तृत उद्देश्यों और उसकी विचारधारा पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय योजना का लक्ष्य है प्रथम योजना के समय आरम्भ की गई विकास की प्रक्रिया को आगे बढ़ाना और तीव्र करना। इस योजना के मुख्य कार्य तीन रहेंगे : राष्ट्रीय आय में पांच वर्षों में लगभग २५ प्रतिशत की वृद्धि कर देना; जीविकोपार्जन के अवसरों को इतना बढ़ा देना कि जनसंख्या में वृद्धि के कारण जो नए श्रमिक उत्पन्न हों वे सब काम में लग सकें; और इतनी औद्योगिक प्रगति कर लेना कि आगामी योजनाओं के समय द्रुत गति से उन्नति करने के लिए जमीन तैयार हो जाए। एक प्रकार द्वितीय पंचवर्षीय योजना प्रथम योजना के समय में आरम्भ किए गए विकास कार्य को ही आगे बढ़ाने का एक प्रयत्न है, परन्तु इसमें कार्यों की प्राथमिकता में कुछ परिवर्तन अवश्य कर दिया गया है। दूसरी योजना में औद्योगिक उन्नति पर, विशेषतः भारी उद्योगों के विकास पर और माल की ढुलाई तथा यातायात जैसे उससे सम्बद्ध कार्यों पर विशेष बल दिया गया है। हम अपने सामाजिक संगठन के लिए समाजवादी ढंग की समाज रचना के आदर्श को स्वीकार कर चुके हैं; इसलिए योजना के सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों के लिए पूंजी-विनियोग का जो क्रम प्रस्तावित किया गया है उसमें तो यह आदर्श कार्यान्वित होता हुआ दिखाई देगा ही, देहाती और शहरी जीवन में जो परिवर्तन करने के प्रयत्न किए जाएंगे उनमें भी इसका आभास मिलेगा। योजना के कार्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक होगा कि सरकारी और निजी दोनों क्षेत्र मिलकर प्रयत्न करें, परन्तु जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, सरकारी क्षेत्र को अत्यन्त महत्व-पूर्ण कार्य करना है।

योजना का व्यय और उसका विभाजन

२. केन्द्र और राज्य सरकारों के समस्त विकास कार्यों पर योजना के पांच वर्षों में ४,८०० करोड़ रुपए व्यय होने का अन्दाजा लगाया गया है। विकास के मुख्य-मुख्य कार्यों में इस व्यय का विभाजन इस प्रकार होगा :—

विकास के मुख्य-मुख्य कार्यों में योजना के व्यय का विभाजन

	प्रथम योजना		द्वितीय योजना	
	समस्त व्यय (करोड़ रुपयों में)	प्रतिशत	समस्त व्यय (करोड़ रुपयों में)	प्रतिशत
१	२	३	४	५
१. कृषि और सामुदायिक विकास ..	३५७	१५.१	५६८	११.८
(क) कृषि	२४१	१०.२	३४१	७.१
कृषि के कार्यक्रम	१६७	८.३	१७०	३.५

१	२	३	४	५
पशुपालन	२२	१·०	५६	१·१
जंगल	१०	०·४	४७	१·०
मछली पालन	४	०·२	१२	०·३
सहकारिता	७	०·३	४७	१·०
विविध	१	...	६	०·२
(ख) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजनाएं	९०	३·८	२००	४·१
(ग) अन्य कार्य	२६	१·१	२७	०·६
ग्राम पंचायतें	११	०·५	१२	०·३
स्थानीय विकास कार्य	१५	०·६	१५	०·३
२. सिंचाई और बिजली	६६१	२८·१	९१३	१९·०
सिंचाई	३८४	१६·३	३८१	७·९
बिजली	२६०	११·१	४२७	८·९
बाढ़-नियन्त्रण और तत्सम्बन्धी अन्वेषण आदि	१७	०·७	१०५	२·२
३. उद्योग और खानें	१७९	७·६	८९०	१८·५
बड़े और मध्यम उद्योग	१४८	६·३	६१७	१२·९
खानों का विकास	१	...	७३	१·५
ग्रामोद्योग और लघु उद्योग	३०	१·३	२००	४·१
४. परिवहन और संचार	५५७	२३·६	१,३८५	२८·९
रेलें	२६८	११·४	९००	१८·८
सड़कें	१३०	५·५	२४६	५·१
सड़क परिवहन	१२	०·५	१७	०·४
बन्दर और बन्दरगाह	३४	१·४	४५	०·९
जहाजंरानी	२६	१·१	४८	१·०
नदियों और नहरों द्वारा परिवहन ...	...	...	३	०·१
नागरिक वायु परिवहन	२४	१·०	४३	०·९
अन्य परिवहन	३	०·१	७	०·१
डाक और तार	५०	२·२	६३	१·३
अन्य संचार	५	०·२	४	०·१
प्रसारण	५	०·२	९	०·२
५. सामाजिक सेवाएं	५३३	२२·६	९४५	१९·७
शिक्षा	१६४	७·०	३०७	६·४
स्वास्थ्य	१४०	५·९	२७४	५·७
आवास	४९	२·१	१२०	२·५

१	२	३	४	५
पिछड़े वर्गों के लिए कल्याण कार्य ...	३२	१·३	९१	१·९
समाज कल्याण	५	०·२	२९	०·६
श्रम और श्रम कल्याण	७	०·३	२९	०·६
पुनर्वास	१३६	५·८	९०	१·९
शिक्षित बेरोजगारों के लिए विशेष योजनाएं	...	...	५	०·१
६. विविध	६९	३·०	९९	२·१
योग ...	२,३५६	१००·०	४८००	१००·०

ऊपर दिखाए गए समस्त व्यय में स्थानीय संस्थाओं द्वारा विकास कार्यों पर किए जाने वाले सब व्यय सम्मिलित नहीं हैं। उन संस्थाओं के कार्यक्रमों का केवल वह व्यय इस विवरण में सम्मिलित है जो राज्य सरकारों द्वारा किया जाएगा। इस विवरण में उन कार्यों को भी सम्मिलित नहीं किया गया है जो स्थानीय जनता अपने-अपने स्थान पर नकद धन देकर या अपने शारीरिक श्रम के द्वारा पूरे करेगी। इन कार्यों के कारण योजना के समस्त व्यय में बहुत अन्तर भले ही न हो, परन्तु इनका महत्व सम्बद्ध स्थानों पर पूंजी-विनियोग की दृष्टि से बहुत अधिक है।

३. ऊपर की तालिका में विकास के मुख्य शीर्षकों पर होने वाले व्यय का जो विवरण दिया गया है, उससे यह प्रकट हो जाता है कि प्रथम और द्वितीय योजनाओं में, कार्यों की प्राथमिकताओं में कितना अन्तर हो गया है। द्वितीय योजना के सरकारी क्षेत्र में उद्योगों और खानों पर लगभग १९ प्रतिशत व्यय किया जाएगा। इसकी तुलना में प्रथम योजना में यह व्यय केवल ८ प्रतिशत किया गया था। यदि तुलना को छोड़कर, स्वतन्त्र रूप से देखें तो ज्ञात होगा कि उद्योगों और खानों का व्यय बहुत—लगभग ४०० प्रतिशत—बढ़ा दिया गया है। प्रथम योजना में इन दोनों कार्यों के लिए जितना धन रखा गया था, वस्तुतः व्यय उसके ५० प्रतिशत से भी कम किया गया था। इस प्रकार द्वितीय योजना में इन दोनों कार्यों पर किये जाने वाले व्यय में वृद्धि उससे भी अधिक होगी जो कि नियोजित व्यय की तुलना से प्रकट होती है। ८९० करोड़ रुपये के समस्त नियोजित व्यय में से ६९० करोड़ रुपए बड़े उद्योगों और खानों पर, और २०० करोड़ रुपए देहाती और छोटे उद्योगों पर व्यय किए जाएंगे। खानों के विकास के लिए जो ७३ करोड़ रुपए का व्यय तालिका में दिखाया गया है, वह मुख्यतः कोयले, कोयला धोने के कारखानों, खनिज तेल की खोज और भूगर्भ सर्वेक्षण और खान कार्यालय पर किया जाएगा। खान से लोहा खोदने का व्यय, लोहे तथा इस्पात कार्यक्रमों के लिए निर्धारित धनराशि में सम्मिलित कर लिया गया है।

४. परिवहन और संचार पर होने वाला व्यय द्वितीय योजना के समस्त व्यय का २९ प्रतिशत है। रेलों पर प्रथम योजना काल में लगभग ११ प्रतिशत व्यय किया गया था। उसकी तुलना में द्वितीय योजना के काल में यह व्यय १९ प्रतिशत किया जाएगा। परिवहन और संचार के अन्य कार्यों पर कुल व्यय का जो अनुपात दूसरी योजना में खर्च होगा, वह प्रथम योजना के अनुपात की तुलना में कुछ कम है, परन्तु स्वतन्त्र रूप से यह व्यय भी पहले की अपेक्षा बढ़ा दिया गया है।

५. केन्द्र और राज्य सरकारों के समस्त व्यय का कोई १९ प्रतिशत सिंचाई और बिजली पर व्यय किया जाएगा। इसके अतिरिक्त १२ प्रतिशत कृषि और सामुदायिक विकास कार्यों पर व्यय होगा। इन दोनों मदों के समस्त व्यय का योग १,४८१ करोड़ रुपए होता है। यद्यपि द्वितीय योजना में खेती की अपेक्षा उद्योग को अधिक प्रधानता दी गई है, तथापि खाद्यान्न और अन्य कच्चे माल का उत्पादन बढ़ाने पर न केवल द्वितीय योजना काल में, अपितु उसके पश्चात भी कई वर्षों तक विशेष ध्यान देना पड़ेगा। उद्योगों में उन्नति और आय में वृद्धि होने के साथ-साथ अन्न और कच्चे माल की मांग का बढ़ना निश्चित है। इसलिए खेती की पैदावार बढ़ाने के प्रयत्न में ढील बिल्कुल नहीं दी जा सकती। सिंचाई और बाढ़-नियन्त्रण के लिए ४८६ करोड़ रुपए की जो राशि रखी गई है, उसमें से २०९ करोड़ रुपए तो प्रथम योजना काल में आरम्भ किए हुए कार्यों पर ही व्यय किए जाएंगे और शेष २७७ करोड़ रुपए नये कामों पर व्यय होंगे। बिजली के उत्पादन में वृद्धि कृषि और उद्योग दोनों के लिए विशेष आवश्यक है। इस कार्य के लिए जो ४२७ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है, उसमें से मोटे हिसाब से १६० करोड़ रुपए प्रथम योजना के समय आरम्भ किए गए कार्यों पर, और शेष २६७ करोड़ रुपए नए कार्यों पर व्यय किये जाएंगे। सिंचाई और बिजली का जो कार्यक्रम बनाया गया है, उसे आगामी पन्द्रह वर्ष के एक बड़े कार्यक्रम के भाग के रूप में तैयार किया गया है। उक्त अवधि में सरकारी प्रबन्ध के द्वारा सींची जाने वाली भूमि को दुगुना और बिजली के परिमाण को छः गुना कर देने का विचार है।

६. द्वितीय योजना में सामाजिक सेवाओं पर समस्त व्यय का लगभग २० प्रतिशत व्यय किया जाएगा। इसकी तुलना में, इन सेवाओं पर प्रथम योजना में २३ प्रतिशत व्यय हुआ था। सामाजिक सेवाओं पर होने वाले समस्त व्यय के प्रतिशत की दृष्टि से शिक्षण, स्वास्थ्य और आवास पर का व्यय प्रायः उतना ही है; जितना कि प्रथम योजना में था, परन्तु स्वतन्त्र रूप से ये व्यय बहुत काफी बढ़ गए हैं। शिक्षा पर व्यय करने के लिए द्वितीय योजना में ३०७ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है जो प्रथम योजना की राशि के दुगुने से कुछ ही कम है। यही बात स्वास्थ्य के व्यय पर लागू होती है। यह स्मरण रखना चाहिए कि द्वितीय योजना में सामाजिक सेवाओं पर उतना ही व्यय किया जाएगा, जितना कि प्रथम योजना के अन्त तक पहुंचे हुए विकास के स्तर को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक समझा गया है। यदि इसमें उस व्यय को भी सम्मिलित कर लिया जाए, जो द्वितीय योजना में तो नहीं रखा गया, परन्तु इन सेवाओं पर व्यय करने का विचार है, तो सामाजिक सेवाओं के व्यय का परिमाण काफी बढ़ जाएगा।

७. द्वितीय योजना के ४,८०० करोड़ रुपए के समस्त विकास व्यय में से २,५५९ करोड़ रुपए तो केन्द्र करेगा और शेष २,२४१ करोड़ रुपए सब राज्य सरकारें करेंगी। राज्य सरकारें पृथक-पृथक कितना व्यय करेंगी, इसका विवरण इस अध्याय के परिशिष्ट के रूप में दिया गया है; और वहीं उसकी प्रथम योजना के व्यय के साथ तुलना भी दी गई है। विभिन्न राज्य विभिन्न विकास कार्यों पर कितना-कितना व्यय करेंगे, इसका विवरण इस पुस्तक के अन्त में दिया गया है। द्वितीय योजना में केन्द्र और राज्यों में व्यय का विभाजन, प्रथम योजना के विभाजन से कुछ भिन्न है। प्रथम योजना में जिन कार्यों को केन्द्रीय मन्त्रालयों ने पूरा किया था, उनके अतिरिक्त जो कार्य विविध मन्त्रालयों ने केन्द्रीय सरकार की सहायता से पूरे किए थे, वे भी केन्द्र द्वारा ही किए दिखाए गए थे। परन्तु इन कार्यों पर राज्यों ने जो व्यय किया

था, उसे राज्यों की योजनाओं का भाग मानने का विचार था। इस कारण योजना को पेश करने में कुछ कठिनाई का सामना करना पड़ा। द्वितीय योजना के विवरण में साधारण सिद्धान्त यह रखा गया है कि जिन कार्यक्रमों को राज्य सरकारें अथवा उनके द्वारा नियन्त्रित सरकारी विभाग या स्थानीय बोर्ड या विशेष बोर्ड पूरा करेंगे, उन सबको जहां तक हो सके राज्यों की योजना में ही सम्मिलित किया जाए। यदि कोई कार्यक्रम राज्यों में पूरा किया जाए और उसका पूरा या अधूरा व्यय केन्द्रीय सरकार या उसकी कोई शाखा दे, तो इतने मात्र से सिद्धान्ततः इस बात का उल्लंघन नहीं होता कि उस कार्यक्रम को राज्य की योजना का भाग मानना चाहिए। यद्यपि साधारणतया इसी सिद्धान्त का पालन किया गया है, तथापि इस समय कई काम ऐसे हैं, जो हैं तो राज्यों की योजनाओं के अंग, परन्तु उनके व्यय का कुछ भाग अब भी केन्द्र के हिसाब में दिखाया जा रहा है। उदाहरणार्थ, आवास, पिछड़े वर्गों की सहायता और ग्रामोद्योगों तथा लघु उद्योगों के कामों पर व्यय का कुछ भाग इस समय केन्द्र के हिसाब में दिखाया जा रहा है, परन्तु उन कार्यों के सम्बन्ध में विस्तार की जिन बातों पर विचार किया जा रहा है, उनके पूरा हो जाने पर सम्भावना यह है कि वह व्यय विभिन्न राज्यों द्वारा किया जाएगा।

८. मुख्य विकास शीर्षकों के अन्तर्गत केन्द्र और राज्यों द्वारा अलग-अलग किए जाने वाले व्यय का विवरण नीचे की तालिका में दिखाया गया है :

(करोड़ रुपयों में)

	केन्द्र	'क' भाग के राज्य	'ख' भाग के राज्य	'ग' भाग† के राज्य	योग
१	२	३	४	५	६
१. कृषि और सामुदायिक विकास	६५	३५९	११२	३१	५६८*
२. सिंचाई और बिजली	१०५	५६७**	२१७	२४	९१३
३. उद्योग और खानें	७४७	९९	३७	७	८९०
४. परिवहन और संचार	१,२०३	१२०	४१	२१	१,३८५
५. सामाजिक सेवाएं	३९६	३९३	११७	३९	९४५
६. विविध	४३	४२	११	३	९९
योग ..	२,५५९	१,५८०	५३५	१२५	४,८००*

९. केन्द्रीय मन्त्रालयों और राज्य सरकारों दोनों ने अपनी-अपनी योजनाओं में प्रतिवर्ष का कार्यक्रम निश्चित कर लिया है। उनका अध्ययन करने से पता लगता है कि योजना के प्रथम दो या तीन वर्षों में व्यय बहुत रखा गया है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि जो कार्य प्रथम योजना के समय आरम्भ कर दिए गए थे और बहुत आगे बढ़ चुके थे, उन्हें शीघ्र पूरा कर देने के लिए और उनसे यथाशक्ति जल्दी लाभ उठाने के लिए उन पर अधिक

*इन संख्याओं में राष्ट्रीय विस्तार और राज्यों की सामुदायिक योजनाओं के लिए १ करोड़ रुपए की राशि का अनिर्दिष्ट भाग भी शामिल है।

†इन राज्यों में अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह, उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेंसी और पांडिचेरी भी शामिल है।

**इसमें केन्द्र द्वारा दामोदर घाटी निगम पर किया गया व्यय भी शामिल है।

व्यय करने का विचार किया गया है। इसका अर्थ यह है कि नये कार्यों पर व्यय को इस प्रकार फैला दिया गया है कि केन्द्र और राज्यों का सारा व्यय, योजना के पूरे समय में क्रमशः बढ़ता चला जाए। ऐसा करना एक तो इसलिए आवश्यक है कि साधनों और व्यय में संतुलन रहे, दूसरे इसलिए भी आवश्यक है कि योजना की प्रगति के साथ-साथ जीविकोपार्जन के अवसरों में वृद्धि भी होती रहे। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, द्वितीय योजना को एक ऐसा ढांचा मानकर चलना चाहिए, जिसमें कि वार्षिक योजनाओं के विस्तार का निश्चय उपलब्ध वित्तीय और वास्तविक साधनों के अनुसार किया जा सके। प्रति वर्ष का यह विस्तार लचकीला रहना चाहिए, परन्तु साथ ही प्रति वर्ष के कार्यक्रमों का पहले से तैयार रहना भी आवश्यक है, क्योंकि बहुत-से कामों के लिए यन्त्र और सामग्री का आर्डर पहले से देने की आवश्यकता होगी और प्रारम्भिक कार्य करने के लिए आवश्यक कर्मचारियों की भर्ती भी पहले से करनी पड़ेगी।

द्वितीय योजना का पूंजी विनियोग

१०. ४,८०० करोड़ रुपए के समस्त व्यय में से ३,८०० करोड़ रुपए तो मोटे हिसाब से पूंजी-विनियोग के रूप में, अर्थात उत्पादक साधन स्थापित करने पर व्यय होंगे, और शेष १,००० करोड़ रुपए को विकास कार्य का चालू व्यय माना जा सकता है। इन दोनों प्रकार के व्ययों का विवरण मुख्य शीर्षकों के अन्तर्गत नीचे की तालिका में दिया गया है :

(करोड़ रुपयों में)

	पूंजी विनियोग का व्यय	चालू व्यय	समस्त व्यय
१	२	३	४
१. कृषि और सामुदायिक विकास	३३८	२३०	५६८
(क) कृषि	१८१	१६०	३४१
(ख) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास†	१५७	७०	२२७
२. सिंचाई और बिजली	८६३	५०	९१३
(क) सिंचाई और बाढ़ नियन्त्रण	४५६	३०	४८६
(ख) बिजली	४०७	२०	४२७
३. उद्योग और खानें	७९०	१००	८९०
(क) बड़े और मध्यम उद्योग और खानें	६७०	२०	६९०
(ख) ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	१२०	८०	२००
४. परिवहन और संचार	१,३३५	५०	१,३८५
५. सामाजिक सेवाएं	४५५	४९०	९४५
६. विविध	१९	८०	९९
योग ...	३,८००	१,०००	४,८००

†इसमें ग्राम पंचायतों और स्थानीय विकास के कार्यक्रम भी सम्मिलित हैं।

इस विवरण में कार्यक्रमों की केवल मोटी रूपरेखा दिखलाई गई है। इस समय केन्द्र और राज्यों में जो बजट पेश किए जाते हैं, उनमें चालू व्यय और पूंजी विनियोग के व्यय का अन्तर स्पष्ट करके नहीं दिखलाया जाता। आय के हिसाब में कुछ राशियां ऐसी भी होती हैं जिनका रूप पूंजी विनियोग का होता है। पूंजी खाते में यह दिखलाना चाहिए कि कौन-से व्यय प्रत्यक्ष पूंजी निर्माण करने के लिए किए जा रहे हैं और कौन-से ऐसे ऋणों के रूप में किये जा रहे हैं जिनका फल पीछे जाकर उत्पादक साधनों की उत्पत्ति के रूप में प्रकट होगा। इसके अतिरिक्त समय-समय पर कुछ राशियों को राजस्व खाते से पूंजी खाते में और पूंजी खाते से राजस्व खाते में भी ले जाया जाता है। इस प्रकार के व्ययों का स्पष्ट अर्थ, राष्ट्रीय हिसाब-किताब की दृष्टि से तुरन्त प्रकट नहीं होता। सम्बद्ध अधिकारियों ने भी योजना में सम्मिलित कार्यक्रमों का विभाजन विशुद्ध पूंजी-विनियोग और चालू व्ययों की दृष्टि से नहीं किया है। इस प्रसंग में यह लिख देना अनुचित न होगा कि केन्द्र और राज्यों में, दोनों स्थानों पर, सरकारी हिसाब में खातों में इस प्रकार संशोधन कर देने की आवश्यकता है कि उनसे यह स्पष्ट हो जाए कि सारे हिसाब-किताब में राष्ट्रीय आय कितनी और व्यय कितना हुआ; कितना खपत के रूप में खर्च हुआ, और कितना पूंजी विनियोग में। यह कार्य आरम्भ हो चुका है।

११. योजना के सरकारी क्षेत्र में, ३,८०० करोड़ रुपए का विनियोग करने का जो कार्यक्रम बनाया गया है, उस पर योजना के निजी भाग के कार्यक्रम को सामने रखकर विचार करना चाहिए। उत्पादन और विकास के जो लक्ष्य रखे गए हैं, वे दोनों भागों के सम्मिलित विनियोग कार्यक्रम से ही पूरे हो सकेंगे। इसलिए यह स्पष्ट है कि दोनों क्षेत्रों का विकास कार्यक्रम ऐसी गति से और इस प्रकार चलना चाहिए कि उत्पादन में वृद्धि सन्तुलित रूप से हो। निजी भाग में विनियोग का पूरा-पूरा और विश्वसनीय अनुमान उपलब्ध नहीं है और इस समय आगामी पांच वर्षों में विनियोग का जो रूप रहेगा उसकी मोटी कल्पना कर लेने से अधिक कुछ नहीं किया जा सकता। पिछले पांच वर्षों में विनियोग की जो प्रवृत्ति रही है उसके मोटे हिसाब, और कुछ क्षेत्रों में विनियोग के कार्यक्रम का हमें जो ज्ञान है उसके आधार पर, अगले पांच वर्षों में योजना के निजी भाग में २,४०० करोड रुपए का विनियोग हो सकने की सम्भावना है। उसका कुछ विवरण इस प्रकार है :

(करोड़ रुपयों में)

१. संगठित उद्योग और खानें	५७५
२. बागान, बिजली के काम और रेलों के अतिरिक्त अन्य परिवहन ..	१२५
३. निर्माण	१,०००
४. कृषि और ग्रामोद्योग तथा छोटे उद्योग	३००
५. भंडार	४००
योग ..	२,४००

१२. प्रथम योजना की अवधि में समस्त पूंजी विनियोग बहुत मोटे हिसाब से, लगभग ३,१०० करोड़ रुपए का हुआ था। इसमें से निजी क्षेत्र का पूंजी विनियोग आधे से कुछ अधिक था। द्वितीय योजना का लक्ष्य लगभग ६,२०० करोड़ रुपए है और पहले बताए हुए कारणों से, योजना के सरकारी क्षेत्र का पूंजी विनियोग बहुत अधिक बढ़ा दिया गया है।

द्वितीय योजना के सरकारी और निजी क्षेत्रों में पूंजी विनियोग का अनुपात ६१ : ३९ है। इसकी तुलना में प्रथम योजना में यह अनुपात ५० : ५० था। इस हिसाब से द्वितीय योजना में सरकारी क्षेत्र का पूंजी विनियोग ढाई गुना हो जाएगा और निजी क्षेत्र में लगभग ५० प्रतिशत वृद्धि होगी।

उत्पादन और विकास के लक्ष्य

१३. अब तक योजना के समस्त व्यय का और विविध कार्यों में उसके विभाजन का जो विवरण दिया गया है, उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि द्वितीय योजना में पूर्ण प्रयत्न किया जाएगा और प्राथमिकताओं का क्रम क्या रहेगा। अब, इस सीमा में रहते हुए हम यह विचार करते हैं कि विकास कार्यक्रमों का, और उनसे जिन फलों की प्राप्ति होगी उनका, लक्ष्य क्या रहेगा। विभिन्न क्षेत्रों के विकास कार्यक्रमों पर विस्तारपूर्वक चर्चा तो इस पुस्तक के अगले अध्यायों में की गई है। यहां उन कार्यक्रमों का संक्षेप से जिक्र किया जाता है। द्वितीय योजना के सरकारी और निजी क्षेत्र में जितने पूंजी विनियोग की बात सोची गई है, उसके अनुसार उत्पादन और विकास के प्रधान लक्ष्य इस प्रकार रहेंगे :—

उत्पादन और विकास के प्रधान लक्ष्य

विभाग और मद	इकाई	५०-५१	५५-५६	६०-६१	५५-५६ की अपेक्षा ६०-६१ में प्रतिशत वृद्धि
१	२	३	४	५	६
१. कृषि और सामुदायिक विकास					
१. खाद्यान्न	(लाख टन)	५४०†	६५०	७५०	१५
२. कपास	(लाख गांठ)	२९	४२	५५	३१
३. गन्ना और गुड़	(लाख टन)	५६	५८	७१	२२
४. तिलहन	(लाख टन)	५१	५५	७०	२७
५. पटसन	(लाख गांठ)	३३	४०	५०	२५
६. चाय	(लाख पौंड)	६,१३०	६,४४०	७,०००	९
७. राष्ट्रीय विस्तार खण्ड	(संख्या)	—	५००	३,८००	६६०
८. सामुदायिक विकास खण्ड	(संख्या)	—	६२२	१,१२०	८०
९. राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास-कार्यक्रमों द्वारा लाभ उठाने वाली जनता	(करोड़ व्यक्ति)	—	८·०	३२·५	३०६
१०. ग्राम पंचायतें	(संख्या हजार में)	८३	११८	२००	७०

†यह अंक १९४९-५० का है।

१	२	३	४	५	६
२. सिंचाई और बिजली					
१. सिंचित भूमि	(लाख एकड़)	५१०	६७०	८८०	३१
२. बिजली (कारखानों की सामर्थ्य)	(लाख किलोवाट)	–	३४	९६	१०३
३. खनिज पदार्थ					
१. खनिज लोहा	(लाख टन)	३०	४३**	१२५	१९१
२. कोयला	(लाख टन)	३२३†	३८०†	६००†	५८
४. बड़े उद्योग					
१. तैयार इस्पात	(लाख टन)	११	१३	४३	२३१
२. कच्चा लोहा (ढलाई के कारखानों को बेचने के लिए)	(लाख टन)	–	३·८	७·५	९७
३. एल्यूमिनियम	(हजार टन)	३·७	७·५	२५·०	२३३
४. इस्पात के भारी सांचे, बेचने के लिए	(हजार टन)	–	–	१२	–
५. भारी इस्पात का सांचों में ढला हुआ माल, बेचने के लिए	(हजार टन)	–	–	१५	–
६. मकानों में लगाने के लिए इस्पात का सामान	(हजार टन)	अप्राप्य	१८०	५००	१७८
७. मशीनों के पुर्जे ग्रेडेड	(मूल्य लाख रुपयों में)	३१·८	७५	३००	३००
८. सीमेंट बनाने की मशीनें	(मूल्य लाख रुपयों में)	अप्राप्य	५६**	२००	२५७
९. चीनी बनाने की मशीनें	(मूल्य लाख रुपयों में)	अप्राप्य	२८**	२५०	७७६
१०. वस्त्रोद्योग की मशीनें (कपास और जूट)	(मूल्य लाख रुपयों में)	अप्राप्य	४१२	१९५०	३७३
११. कागज बनाने की मशीनें	(मूल्य लाख रुपयों में)	नाममात्र	नाममात्र	४००	–
१२. बिजली से चलने वाले सेंट्रीफ्यूगल पम्प	(संख्या हजार में)	३४	४०	८६	११५

**ये अंक पंचांगीय वर्ष १९५४ के हैं।

†ये अंक सम्बद्ध पंचांगीय वर्ष के हैं।

१	२	३	४	५	६
१३. डीज़ल इंजन	(हजार अश्व शक्ति)	अप्राप्य	१००	२०५	१०५
१४. मोटर गाड़ियां	(संख्या)	१६,५००	२५,०००	५७,०००	१२८
१५. रेलों के इंजन	(संख्या)	३	१७५	४००	१२९
१६. ट्रैक्टर (२० से ३० अश्व शक्ति)	(संख्या)	—	—	३,०००	—
१७. सीमेंट	(लाख टन)	२७	४३	१३०	२०२
१८. रासायनिक खाद					
(क) अमोनियम सल्फेट	(हजार टन)	४६	३८०	१,४५०	२८२
(ख) सुपर फासफेट	(हजार टन)	५५	१२०	७२०	५००
१९. गंधक का तेजाब	(हजार टन)	९९	१७०	४७०	१७६
२०. सोडा ऐश	(हजार टन)	४५	८०	२३०	१८८
२१. कास्टिक सोडा	(हजार टन)	११	३६	१३५	२७५
२२. तेल साफ़ करने के कारखाने (कच्चा तेल साफ किया गया)	(लाख टन)	—	३६	४३	१९
२३. विजली के ट्रांसफौर्मर (३३ कि० वा० और उनसे नीचे के)	(हजार कि० वी० ए०)	१७९	५४०	१,३६०	१५१
२४. विजली के तार (ए० सी० एस० आर० कंडक्टर)	(टन)	१,४२०	९,०००	१८,०००	१००
२५. विजली के मोटर	(हजार अश्व शक्ति)	९९	२४०	६००	१५०
२६. सूती कपड़ा	(लाख गज)	४६,१८०	६८,५००	८५,०००	२४
२७. चीनी	(लाख टन)	११	१७	२३	३५
२८. कागज और गत्ता	(हजार टन)	११४	२००	३५०	७५
२९. वाइसिकिलें (केवल वड़े कारखानों में वनी)	(हजार)	१०१	५५०	१,०००	८२
३०. सिलाई की मशीनें (केवल वड़े कारखानों में वनी)	(हजार)	३३	११०	२२०	१००
३१. विजली के पंखे	(हजार)	१९४	२७५	६००	११८

१	२	३	४	५	६
५. परिवहन और संचार					
(क) रेलें					
१. सवारी गाड़ियों के मीलों की संख्या	(लाख मील)	९५०	१,०८०	१,२४०	१५
२. माल की ढुलाई	(लाख टन)	९१०	१२००	१८१०	५१
(ख) सड़कें					
१. राष्ट्र की वड़ी-वड़ी सड़कें	(हजार मील)	१२·३	१२·९	१३·८	७
२. सतही सड़कें	(हजार मील)	९७·०	१०७·०	१२५·०	१७
(ग) जहाजरानी					
१. तटवर्ती और पास-पड़ोस जाने वाले जहाज†	(लाख जी० आर० टी०)	२·२	३·२	४·३	३४
२. समुद्र पार जाने वाले जहाज††	(लाख जी० आर० टी०)	१·७	२·८	४·७	६८
(घ) वन्दरगाह जहाजों से माल उतारने लादने की सामर्थ्य	(लाख टन)	२००	२५०	३२५	३०
(च) डाक और तार					
१. डाक घर	(हजार)	३६	५५	७५	३६
२. तार घर	(हजार)	३·६	४·९	६·३	२८
३. टेलीफोनों की संख्या	(हजार)	१६८	२७०	४५०	६७
६. शिक्षा					
१. विभिन्न आयु के स्कूल जाने वाले वालकों का प्रतिशत					
(क) प्राइमरी कक्षाएं	(६ से ११ वर्ष तक के वच्चे)	४२·०	५१·०	६३·०	—
(ख) मिडिल स्कूल	(११ से १४ वर्ष तक के वच्चे)	१४·०	१९·०	२२·५	—
(ग) हायर सेकेंड्री स्कूल	(१४ से १७ वर्ष तक के वच्चे)	६·४	९·४	१२·०	—

†इनमें तेल वाही टैंकर भी शामिल हैं।

††इसमें ट्रेप जहाजों की भारवहन क्षमता भी शामिल है।

१	२	३	४	५	६
२. प्रारम्भिक अथवा बेसिक स्कूल	(लाख)	२·२३	२·९३	३·५०	१९
३. स्कूल के अध्यापकों की संख्या	(लाख)	७.४	१०·३	१३·४	३०
४. अध्यापकों के ट्रेनिंग स्कूल	(संख्या)	८३५	१,१३६	१,४१२	२४
५. अध्यापकों के ट्रैनिंग स्कूलों में भर्ती	(हजार)	७५.६	१०३·५	१३४·२	३०
७. स्वास्थ्य					
१. चिकित्सा संस्थाएं	(हजार)	८·६	१०	१२·६	२६
२. चिकित्सालयों में रोगियों के लिए शैयाएं	(हजार)	११३	१२५	१५५	२४
३. डाक्टर	(हजार)	५९	७०	८२·५	१८
४. परिचारिकाएं	(हजार)	१७	२२	३१	४१
५. मिडवाइफें (शिक्षित दाइयां)	(हजार)	१८	२६	३२	२३
६. नर्स-दाइयां और दाइयां	(हजार)	४	६	४१	५८३
७. हेल्थ असिस्टेंट और सेनेटरी इन्सपेक्टर	(हजार)	३·५	४	७	७५

कृषि और सामुदायिक विकास

१४. कृषि का उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्न प्रथम योजना के समय ही आरम्भ किए जा चुके थे। गत पांच वर्षों में अन्न का उत्पादन १ करोड़ १० लाख टन अर्थात २० प्रतिशत और कृषि का समस्त उत्पादन लगभग १५ प्रतिशत बढ़ गया था। द्वितीय योजना के समय में कृषि के उत्पादन में १८ प्रतिशत वृद्धि हो जाने की सम्भावना है। भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए जो प्रयत्न किए जाने हैं वे सुविदित हैं। अभी कई वर्षों तक सिंचाई की सुविधाओं को बढ़ाने, अच्छे बीजों का प्रयोग करने, रासायनिक खाद डालने और खेती के उन्नत उपायों के प्रचार करने की ही दिशा में विकास कार्य करना होगा। द्वितीय योजना में इन कार्यक्रमों के अतिरिक्त, कृषि के उत्पादन में विविधता लाने का भी प्रयत्न किया जाएगा। देश में जीवन का स्तर उन्नत होने और औद्योगिक उन्नति बढ़ने के साथ-साथ, व्यापारिक फसलों को बढ़ाने और सब्जियां-फल, दूध-घी, मछली-मांस और अण्डे आदि खाद्यान्न के अतिरिक्त अन्य भोजन सामग्रियों का उत्पादन अधिकाधिक करने पर ध्यान देने की आवश्यकता होगी। कृषि के विकास का एक और पहलू जिस पर कि द्वितीय योजना में अधिक ध्यान दिया जाएगा यह है कि भूमि का उपयोग और प्रबन्ध अधिक कुशल ढंग से करने के लिए ऐसी संगठित संस्थाओं का प्रबन्ध किया जाएगा जिससे जिन लोगों का जीवन भूमि पर आश्रित है उनमें अधिक आर्थिक समानता हो सके।

१५. द्वितीय योजना में अनाज के अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य एक करोड़ टन अर्थात् लगभग १५ प्रतिशत वृद्धि का रखा गया है। १९५५-५६ में अनाज का उत्पादन ६५० लाख टन हुआ था जिसे १९६०-६१ में बढ़ाकर ७५० लाख टन तक ले जाने का विचार है। यदि इसमें सफलता हो गई तो अन्न के व्यय का जो परिमाण इस समय १७·२ औंस प्रति व्यक्ति प्रति दिन है, वह बढ़कर लगभग १८·३ औंस प्रति व्यक्ति प्रति दिन हो जाएगा। कपास, गन्ने, तिलहन और पटसन के उत्पादन में वृद्धि की मात्रा और भी बढ़ाने का विचार है। द्वितीय योजना के समय इनके उत्पादन में क्रमशः ३१ प्रतिशत, २२ प्रतिशत, २७ प्रतिशत और २५ प्रतिशत की वृद्धि की जाएगी। सिंचाई की सुविधाएं बढ़ जाने के कारण गन्ना लगभग दस लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में बोया जाने लगेगा। यदि गन्ने की पैदावार बढ़ाने का लक्ष्य पूरा हो गया तो चीनी का व्यय १·४ औंस प्रति व्यक्ति प्रति दिन से बढ़ाकर १·७ औंस प्रति व्यक्ति प्रति दिन किया जा सकेगा। पटसन और कपास के उत्पादन में वृद्धि करने के अतिरिक्त पटसन की किस्म सुधारने और लम्बे रेशे की कपास की बुआई बढ़ाने के लिए विशेष प्रयत्न करने होंगे।

१६. ऊपर कृषि का उत्पादन बढ़ाने के जिन लक्ष्यों का उल्लेख किया गया है वे केन्द्रीय कृषि मन्त्रालय और राज्य सरकारों में विचार विनिमय के पश्चात निश्चित किये गये हैं। परन्तु हमारा खयाल है कि उत्पादन बढ़ाने के लिए जितनी गुंजाइश है और योजना में इतना बड़ा पूंजी-विनियोग करने के कारण माल की जितनी मांग बढ़ जाएगी, उसका विचार करते हुए, इन लक्ष्यों को और भी ऊंचा किया जा सकता है। प्रथम योजना में कृषि और सामुदायिक विकास के कामों पर व्यय के लिए ३५७ करोड़ रुपए की राशि रखी गई थी। उसे बढ़ाकर द्वितीय योजना में ५६८ करोड़ रुपए किया जा रहा है। इस राशि में उन सुविधाओं की गिनती नहीं की गई है, जो रिजर्व बैंक, स्टेट बैंक और सहकारिता संस्थाएं, छोटी मियाद के ऋणों के रूप में देंगी। १९५५ के आरम्भ में योजना आयोग ने राज्य सरकारों को सुझाया था कि कृषि का उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रम बनाते हुए, वे यदि गांवों के सामने कोई निश्चित लक्ष्य रख दें तो वह राष्ट्रीय दृष्टि से अच्छा रहेगा। यह लक्ष्य इस प्रकार का हो सकता है कि कुछ समय में—मान लीजिए लगभग १० वर्ष में—अनाज, तिलहन, रेशे, बागानों की फसलों अथवा पशुओं और उनसे पैदा होने वाली वस्तुओं आदि का उत्पादन दुगुना हो जाना चाहिए। इस सुझाव में इस बात पर भी जोर दिया गया था कि ऐसा कोई लक्ष्य सामने रखते हुए राज्य सरकारों को भी आवश्यक साधनों, सेवाओं और पूंजी आदि की सहायता का उत्तरदायित्व अपने सिर लेना पड़ेगा। इस समय योजना में जो लक्ष्य रखे गये है उनका आधार यह माना गया है कि विविध विकास कार्यक्रमों के द्वारा उत्पादन सामर्थ्य में इतनी वृद्धि हो सकेगी। आशा है कि कृषि और राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रमों में अधिक सहयोग करके कृषि उत्पादन के इन लक्ष्यों को और भी ऊंचा उठाया जा सकेगा। योजना आयोग और सम्बद्ध सरकारी अधिकारी मिलकर इस समस्या पर विचार कर रहे हैं। अनाज का उत्पादन देश में ही बढ़ाना इस दृष्टि से और भी आवश्यक है कि विदेशों से अन्न मंगाने पर विदेशी मुद्रा का व्यय करना पड़ता है। यह एक सचाई है कि भारत में सभी फसलों की पैदावार बहुत कम होती है। औद्योगिक विकास के कार्यक्रमों की पूर्ति वांछित शीघ्रता से करने के लिए फसलों की पैदावार बहुत जल्दी बढ़ाने की आवश्यकता है। इसलिए राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रमों के अधिकारियों को चाहिए कि वे प्रत्येक ग्राम और प्रत्येक परिवार को, अधिक अच्छे साधनों के प्रयोग और अधिक श्रम आदि के द्वारा, कृषि का उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रेरित करें। हमारा सुझाव है

कि राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के विभिन्न क्षेत्रों में, कृषि का उत्पादन जांचने के लिए, समय-समय पर नियमपूर्वक निरीक्षण करते रहना चाहिए जिससे आवश्यकता होने पर कार्यक्रम में उचित हेर-फेर किया जा सके।

१७. कृषि का उत्पादन बढ़ाने के लिए जो कार्यक्रम अपनाए जाएंगे, उनमें सब से अधिक प्राथमिकता यथापूर्व, सिंचाई की सुविधाएं बढ़ाने को दी जाती रहेगी। द्वितीय योजना में, २१० लाख एकड़ नई भूमि की सिंचाई आरम्भ करने का लक्ष्य रखा गया है। अमोनियम सल्फेट की खाद की खपत १९५५ में ६ लाख १० हजार टन हुई थी, १९६० तक उसे बढ़ाकर १८ लाख टन कर देने का विचार है। अच्छा बीज तैयार करने के लिए लगभग ९३ हजार एकड़ जमीन में ३ हजार फार्म खोले जाएंगे। नई जमीन को खेती के योग्य बनाने और सुधार कार्य करने का काम ३५ लाख एकड़ से अधिक जमीन में किया जाएगा।

१८. फल और सब्जी जैसे सहायक खाद्यों की पैदावार बढ़ाने का भी द्वितीय योजना में प्रयत्न किया जाएगा। इसके लिए ८ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। आशा है कि मछली पालन, दूध उद्योग और जंगलों से उपलब्ध होने वाले खाद्यों की पैदावार में भी पर्याप्त वृद्धि होगी। पशु पालन और मछली पालन के लिए द्वितीय योजना में ६८ करोड़ रुपए रखे गए हैं। प्रथम योजना में यह राशि केवल २६ करोड़ रुपए थी। प्रथम योजना में ६०० केन्द्र ग्राम और १५० केन्द्र कृत्रिम गर्भाधान के स्थापित किए गए थे। इन्हें बढ़ाकर द्वितीय योजना में क्रमशः १,२५८ और २४५ कर दिया जाएगा। पशुचिकित्सालयों की संख्या प्रथम योजना में २,००० से बढ़ाकर २,६५० कर दी गई थी। द्वितीय योजना में उसमें १,९००की और भी वृद्धि हो जाने की आशा है। यह भी विचार है कि द्वितीय योजना के समय नगरों में दूध वितरण करने वाली ३६ यूनियनें, दूध से क्रीम निकालने वाले १२ सहकारिता केन्द्र और दूध सुखाने के ७ कारखाने खोले जाएंगे। गहरे और दूर-दूर के समुद्र में मछलियां पकड़ने के काम का विस्तार किया जाएगा और इसके लिए पश्चिमी तथा पूर्वी तटों पर और अण्डमान द्वीपसमूह में मछली अन्वेषण केन्द्र खोले जाएंगे।

१९. सहकारिता, माल की बिक्री के संगठन और गोदामों के लिए द्वितीय योजना में ४७ करोड़ रुपए की राशि रखी गयी है। ग्राम ऋण सर्वेक्षण समिति ने सिफारिश की थी कि ऋण देने, कच्चे माल का उत्पादन करने और उसे बाजार में बेचने के कार्यक्रम पर स्टेट बैंक, रिजर्व बैंक और सरकार को मिलकर अमल करना चाहिए। इस सिफारिश पर अमल करने के लिए कार्रवाई आरम्भ की जा चुकी है। विशेषतः देश भर में गोदामों का एक जाल-सा बिछा देने का कार्यक्रम शीघ्रता से आरंभ किया जाएगा। अन्दाजा है कि द्वितीय योजना के अन्त तक बाजार में बेचने योग्य फालतू माल के १० प्रतिशत का क्रय-विक्रय सहकारिता संस्थाएं करने लगेंगी। इस समय भी देश में नियमित मण्डियों को बढ़ाने का विशेष प्रयत्न किया जा रहा है। आशा है कि द्वितीय योजना के अन्त तक ऐसी मण्डियों की संख्या दुगुनी हो जाएगी। कृषि से सम्बद्ध संगठनों को सुधारने का उद्देश्य यह है कि कुछ ही वर्षों में अधिकाधिक व्यवहार सहकारिता के सिद्धान्त के अनुसार होने लगे। अनुभव से ज्ञात हुआ है कि छोटे किसानों या जरूरतमन्द लोगों को, इस प्रयोजन से सहकारिता के आधार पर संगठित करने का कार्य शीघ्रता से नहीं किया जा सकता कि वे मिलकर अपना उत्पादन बढ़ा लें और लाभ का वितरण उनमें अधिक

समानता से होने लगे। इसलिए सहकारिता के कार्य को बढ़ाने और पुनर्गठित करने का कार्य सरकार को अपने ही ऊपर लेना पड़ेगा। इसके लिए एक बड़ा कार्यक्रम बनाया जा रहा है।

२०. शायद प्रथम योजना का सब से महत्वपूर्ण कार्य यह था कि उसमें सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रमों पर विशेष बल दिया गया था। इस कार्यक्रम का मूल उद्देश्य यह था कि लोगों को खेती के अधिक अच्छे उपायों की जानकारी हो और उनमें अधिक अच्छी तरह रहने-सहने और परस्पर सहायता तथा सहकारिता करने की इच्छा उत्पन्न होकर उनकी आर्थिक अवस्था में सुधार हो जाए। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के कार्यक्रम योजना को लोकप्रिय बनाने के प्रधान साधन हैं। अब तक ये कार्यक्रम देश के लगभग एक-चौथाई भाग में आरम्भ किये जा चुके हैं। लोगों ने भी इनमें उत्साह और रुचि प्रकट की है। इसका प्रमाण यह है कि सामुदायिक योजनाओं पर सरकार ने जितना खर्च किया, उसका लगभग ६० प्रतिशत जनता ने स्वयं दिया। इन दोनों कार्यक्रमों को इस प्रकार बढ़ाने का विचार है कि द्वितीय योजना के अन्त तक ये सारे देश में प्रचलित हो जाएं। इसके लिए योजना में २०० करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। जैसा कि पहले लिखा गया है, हमारा खयाल है कि यदि समय-समय पर इन कार्यक्रमों में उचित हेरफेर किया जाता रहे तो इनके द्वारा कृषि का उत्पादन उन लक्ष्यों से भी आगे बढ़ाया जा सकता है जो कि योजना में निर्धारित किए गए हैं।

२१. देहाती क्षेत्रों में सामुदायिक जीवन बिताने की रुचि उत्पन्न करने और वहां की जनता में गांवों के विकास कार्यक्रम में उत्साहपूर्वक भाग लेने का शौक पैदा करने का सब से महत्वपूर्ण साधन ग्राम पंचायतें हैं। प्रथम योजना में ग्राम पंचायतों की संख्या ८३ हजार से बढ़ कर १ लाख १७ हजार हो गई थी। द्वितीय योजना में उसे और भी बढ़ाकर २ लाख ४५ हजार तक ले जाने का विचार है। इस कार्य के लिए योजना में १२ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। इसके अतिरिक्त १५ करोड़ रुपए स्थानीय विकास कार्य के लिए भी रखे गए हैं। इस कार्य का उद्देश्य यह है कि देहाती जनता स्थानीय लाभ के कार्य स्वयं अपने परिश्रम से करने लगे। द्वितीय योजना के समय इस कार्य को उन क्षेत्रों में किया जाएगा, जो कि अब तक राष्ट्रीय विस्तार की सेवाओं के लाभों से वंचित रह गये हैं।

सिंचाई और बिजली

२२. प्रथम योजना आरम्भ होने से पहले देश में सिंचाई ५१० लाख एकड़ भूमि में होती थी। प्रथम योजना के समय इस भूमि का क्षेत्रफल बढ़कर ६७० लाख एकड़ हो गया। आशा है कि द्वितीय योजना के अन्त में और भी २१० लाख एकड़ भूमि में सिंचाई होने लगेगी और इस प्रकार १० वर्ष में सिंचाई की भूमि में प्रायः ७५ प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी। द्वितीय योजना में जिस नई २१० लाख एकड़ भूमि में सिंचाई होने लगेगी, उसमें से १२० लाख एकड़ में तो सिंचाई बड़े और मध्यम कार्यक्रमों के द्वारा होगी और ९० लाख एकड़ में सिंचाई के छोटे कामों द्वारा।

२३. बड़े और मध्यम कार्यक्रम के अनुसार जिस अतिरिक्त भूमि में सिंचाई की जाएगी, उसका अधिकतर भाग (करीब ९० लाख एकड़) प्रथम योजना के समय आरम्भ किये गये कार्यों के द्वारा लाभान्वित होगा। द्वितीय योजना में आरम्भ किये गये नये कार्यों से लाभ केवल, लगभग ३० लाख एकड़ भूमि को पहुंचेगा। द्वितीय योजना में जो बड़े और मध्यम कार्य आरम्भ किये जाएंगे उनके पूरा हो जाने पर लगभग १५० लाख एकड़ भूमि को लाभ पहुंचेगा।

द्वितीय योजना के समय, सिंचाई के बड़े और मध्यम कार्यों से, प्रति वर्ष प्रायः समान ही लाभ पहुंचने की आशा है। प्रथम ३ वर्षों में इस लाभ की मात्रा लगभग २० लाख एकड़ प्रति वर्ष और अन्तिम २ वर्षों में प्रायः ३० लाख एकड़ प्रति वर्ष रहेगी।

२४. कृषि का उत्पादन निरन्तर बढ़ाते रहने की आवश्यकता है। इसलिए सिंचाई की मध्यम योजनाओं पर अधिक ध्यान देने का विचार है। प्रथम योजना में सिंचाई के ७ कार्य ऐसे आरम्भ किए गये थे जिनमें से प्रत्येक पर ३० करोड़ रुपए से अधिक रुपए व्यय होने वाला था, ६ ऐसे थे जिन पर १० और ३० करोड़ रुपए के बीच व्यय हुआ था, ५४ ऐसे थे जिन पर १ और १० करोड़ क बीच व्यय हुआ था। और लगभग २०० ऐसे थे जिनमें से प्रत्येक पर १ करोड़ रुपए से कम व्यय हुआ था। द्वितीय योजना में सिंचाई के १८८ नये कार्य आरम्भ किये जाएंगे। इनमें से किसी पर भी ३० करोड़ रुपए से अधिक व्यय करने की आवश्यकता नहीं है। कोई १० कार्यों पर १० और ३० करोड़ रुपए के बीच, ४२ पर १ और १० करोड़ रुपए के बीच और शेष १३६ में से प्रत्येक पर १ करोड़ रुपए से भी कम व्यय होगा। मध्यम कार्यों के दो लाभ हैं। एक तो, उनका फल जल्दी निकलता है, और दूसरे, उनसे सिंचाई के लाभों को विभिन्न क्षेत्रों में अधिक समानता से वितरित किया जा सकता है।

२५. सिंचाई के छोटे कार्यों में ३,५८१ नलकूप बनाने का जिक्र विशेष रूप से किया जा सकता है। इन पर २० करोड़ रुपया व्यय किया जाएगा और इनसे ९ लाख १६ हजार एकड़ में सिंचाई हो सकेगी। इसके अतिरिक्त, प्रथम योजना के समय जमीन-तले के अधिक गहरे पानी से सिंचाई कर सकने की सम्भावनाओं की खोज करने के लिए गहरे नलकूप बनाकर देखने का जो परीक्षण आरम्भ किया गया था, उसे द्वितीय योजना के समय भी जारी रखा जाएगा।

२६. प्रथम योजना आरम्भ होने के समय देश में बिजली तैयार करने के जो कारखाने लगे हुए थे, उनकी समस्त सामर्थ्य २३ लाख किलोवाट की थी। प्रथम योजना में यह सोचा गया था कि १५ वर्ष में बिजली के उत्पादन में ७० लाख किलोवाट की वृद्धि कर दी जाए। प्रथम योजना के समय ११ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न करने के कारखाने बनाये भी जा चुके हैं और द्वितीय योजना के समय में, आशा है कि ३५ लाख किलोवाट के कारखाने और बन जाएंगे। द्वितीय योजना में औद्योगिक उन्नति पर सब से अधिक बल दिया गया है, इसलिए आगामी ५ वर्षों में बिजली के उत्पादन में १०० प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हो जानी चाहिए। औद्योगिक उन्नति पर बल अगली योजनाओं में भी दिया जाता रहेगा। आरम्भ में ७० लाख किलोवाट का जो लक्ष्य रखा गया था, उसे बढ़ाकर १९६५-६६ तक लगभग १३० लाख किलोवाट का कर देना पड़ेगा।

२७. १९५०-५१ में देश में बिजली का व्यय १४ यूनिट प्रति व्यक्ति था, जिसके बढ़कर १९५५-५६ में २५ यूनिट और १९६०-६१ में ५० यूनिट हो जाने की आशा है। प्रथम योजना के अन्त तक २० हजार अथवा इससे अधिक आबादी के ९५ प्रतिशत नगरों और १० हजार और २० हजार के बीच की आबादी के ४० प्रतिशत नगरों में बिजली पहुंच जाने की आशा थी। द्वितीय योजना में लक्ष्य यह रखा गया है कि १० हजार अथवा इससे अधिक आबादी के तो सब नगरों, और ५ हजार और १० हजार के बीच की आबादी के ८५ प्रतिशत नगरों में बिजली पहुंचा दी जाए। ५ हजार की आबादी से कम के ग्रामों और छोटे नगरों में बिजली पहुंचाने पर बहुत अधिक व्यय होगा। इस कारण देहातों में बिजली पहुंचाने का कार्य अधिक

दीर्घ काल में फैलाकर करना पड़ेगा। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस कार्य के लिए ७५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है, और आशा है कि उससे विजली का लाभ उठाने वाले छोटे नगरों और ग्रामों की संख्या १९५६ की ५,३०० से बढ़कर १९६१ में १३,९०० तक पहुंच जाएगी। देहातों में विजली पहुंचाने पर विचार करते हुए केवल यही ध्यान नहीं रखना पड़ता कि वहां विजली पहुंच जाए, वल्कि साथ ही यह भी देखना पड़ता है कि किस क्षेत्र में औद्योगिक और अन्य प्रयोजनों के लिए कितनी विजली की आवश्यकता होगी, और उन्नति निर्विघ्न होने की दृष्टि से उसे किस दर पर देना उचित होगा।

२८. विजली के अतिरिक्त उत्पादन का अधिकतर भाग योजना के सरकारी क्षेत्र में रहेगा। इस कारण इस क्षेत्र में सरकार की स्थिति वहुत शीघ्र सर्वोपरि हो जाएगी। १९५०-५१ में सरकार केवल ६ लाख किलोवाट विजली का उत्पादन करती थी। यह परिमाण बढ़कर १९६०-६१ में ४३ लाख किलोवाट तक पहुंच जाने की आशा है। विजली के उत्पादन में सरकार का भाग, आगामी १० वर्षों में २६ प्रतिशत से वढ़कर ६७ प्रतिशत हो जाएगा। इसी प्रसंग में यह जान लेना भी महत्वपूर्ण होगा कि योजना के सरकारी भाग में विद्युत उत्पादन के लिए किया गया विनियोग १९५०-५१ में ४० करोड़ रुपए था। वह वढ़कर १९५५-५६ में लगभग २७० करोड़ रुपए हो गया और १९६०-६१ तक उसके ६८० करोड़ रुपए हो जाने की आशा है।

उद्योगों और खानों का विकास

२९. द्वितीय और प्रथम योजनाओं में सव से वड़ा अन्तर यह है कि द्वितीय योजना के सरकारी क्षेत्र में उद्योगों और खानों के विकास को सवसे अधिक प्राथमिकता दी गई है। भारत में आर्थिक आयोजन की एक मानी हुई विशेपता यह है कि कृपि, विजली, माल की ढुलाई, यात्रियों के यातायात और सामाजिक सेवाओं के विकास कार्य में पहल सरकार कर रही है। परन्तु अभी तक उद्योगों और खानों के विकास के कार्य योजना के सरकारी क्षेत्र के विनियोग कार्यक्रम में प्रमुखता से दृष्टिगोचर नहीं हुए थे। उदाहरणार्थ, प्रथम योजना के सरकारी क्षेत्र में तो, वड़े उद्योगों की स्थापना के लिए, केवल ९४ करोड़ रुपए रखा गया था; और इसकी तुलना में योजना के निजी क्षेत्र में इसी कार्य के लिए, लगभग २३३ करोड़ रुपया व्यय हुआ था। द्वितीय योजना के सरकारी भाग में वड़े उद्योगों और खानों (वैज्ञानिक अन्वेपण को सम्मिलित करके) के लिए ६९० करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। इसकी तुलना में योजना के निजी भाग में इन कार्यों पर नया विनियोग लगभग ५७५ करोड़ रुपए का होगा। औद्योगिक उन्नति में निजी भाग भी निस्संदेह महत्वपूर्ण योग देगा, परन्तु सरकारी भाग में इन कार्यों की उन्नति पर विशेप वल दिया जाएगा।

३०. सरकारी भाग में वड़े उद्योगों और खानों का विकास करने के लिए, ६९० करोड़ रुपए की जो राशि रखी गई है, वह प्रायः सव की सव लोहे और इस्पात, कोयले, रासायनिक खादों, विजली के वड़े यन्त्रों और इंजीनियरिंग के अन्य भारी कामों आदि आधारभूत उद्योगों पर व्यय की जाएगी। द्वितीय योजना के समय इस्पात तैयार करने के ३ कारखाने राउरकेला, भिलाई और दुर्गापुर में खोले जाएंगे। इनमें से प्रत्येक की सामर्थ्य १० लाख टन इस्पात की सिल्लियां वना सकने की होगी। इनमें से एक कारखाने में ३ लाख ५० हजार टन ढला हुआ लोहा भी वेचने के लिए तैयार किया जाएगा। मैसूर के लोहे और इस्पात के कारखाने में इस्पात

उत्पादन की सामर्थ्य बढ़ाकर १ लाख टन कर दी जाएगी। आशा है कि सरकारी क्षेत्र के सब कारखानों का इस्पात उत्पादन मिलाकर, द्वितीय योजना के अन्त में, २० लाख टन तक पहुंच जाएगा।

३१. बड़े इंजीनियरिंग उद्योगों की स्थापना के कार्यक्रम में, रेलवे की भारी ढलाई की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए इस्पात की ढलाई का एक बड़ा कारखाना तो चित्तरंजन में रेलवे के इंजन बनाने के कारखाने में खोला जाएगा, और तीन नए कारखाने लोहे की ढलाई तथा कुटाई-पिटाई के बड़े काम करने और इमारती सामान तैयार करने के लिए, "राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम" की अधीनता में खोले जाएंगे। सरकारी क्षेत्र में, बिजली के बड़े यन्त्र बनाने की व्यवस्था भी की जा रही है। चित्तरंजन का इंजनों का कारखाना अब प्रति वर्ष १२५ इंजन बना रहा है, उसकी सामर्थ्य बढ़ाकर ३०० इंजन प्रति वर्ष बनाने की कर दी जाएगी। पैराम्बूर के रेल के जोड़हीन डिब्बे बनाने के कारखाने में उत्पादन का कार्य १९५५ में आरम्भ हो गया। वहां १९५९ तक ३५० डिब्बे प्रति वर्ष बनने लगेंगे। छोटी लाइन के लिए भी डिब्बे बनाने का एक कारखाना खोला जाएगा।

३२. आशा है कि खनिज पदार्थों का उत्पादन द्वितीय योजना के काल में ५८ प्रतिशत बढ़ जाएगा। इस प्रसंग में कोयले की चर्चा विशेष रूप से कर देनी चाहिए, क्योंकि उद्योगों और परिवहन के विकास कार्यों के लिए उसके उत्पादन में वृद्धि की बहुत आवश्यकता पड़ेगी। इस समय देश में ३८० लाख टन कोयला निकाला जाता है। इसका बड़ा भाग योजना के निजी क्षेत्र में निकलता है। सरकारी क्षेत्र में केवल ४५ लाख टन कोयला निकलता है। आगामी ५ वर्षों में कोयले का उत्पादन लगभग २२० लाख टन बढ़ा देने का विचार है। इसमें से १२० लाख टन तो सरकारी क्षेत्र में बढ़ाया जाएगा और शेष १०० लाख टन किसी निजी क्षेत्र में।

३३. दक्षिण भारत में कोयले की खानें कम हैं, इसलिए दक्षिणी अर्काट जिले के नेवेली स्थान पर लिगनाइट कोयला खोदने के बहूद्देशीय कार्य को सब से पहले हाथ में लिया जा रहा है। यहां ३५ लाख टन लिगनाइट खोदकर, उसका उपयोग—(१) बिजली के एक कारखाने में २११ हज़ार किलोवाट बिजली उत्पन्न करने के लिए, (२) ७ लाख टन वार्षिक सामर्थ्य के एक कारखाने में ऊंचे किस्म की कारबन की ईंटें तैयार करने के लिए, और (३) यूरिया और सल्फेट तथा नाइट्रेट के रूप में ७० हजार टन जमा हुआ नाइट्रोजन तैयार करने के लिए किया जाएगा। इसके अतिरिक्त रासायनिक खाद बनाने के दो नये कारखाने खोले जाएंगे। इनमें से एक नंगल में खोला जाएगा। उसमें ७० हजार टन स्थिर नाइट्रोजन की समता का नाइट्रोजन वाला चूने का पत्थर प्रति वर्ष तैयार किया जाएगा। रासायनिक खाद का दूसरा कारखाना राउरकेला में खोला जाएगा। उसमें प्रति वर्ष ८० हजार टन स्थिर नाइट्रोजन के बराबर, नाइट्रोजन-वाला चूने का पत्थर तैयार किया जाएगा। सिन्दरी के रासायनिक खाद कारखाने का काम भी और बढ़ाया जाएगा। उसका उत्पादन प्रति वर्ष ६६ हजार टन नाइट्रोजन से बढ़ाकर, ११७ हजार टन कर दिया जाएगा।

३४. डी० डी० टी० तैयार करने और हिन्दुस्तान केबल्स, हिन्दुस्तान एण्टीबायोटिक्स और इंडियन टेलीफोन उद्योग के जो कारखाने प्रथम योजना के समय खोले गये थे उन्हें और बढ़ा दिया जाएगा। डी० डी० टी० का एक और कारखाना तिरुवांकुर-कोचीन में खोला जाएगा। राज्यों में जो कारखाने खोले जाएंगे उनमें से पश्चिम बंगाल में, कोक तैयार करने के

दुर्गापुर के कारखाने का, और मैसूर के 'पोर्सीलेन इंसुलेटर' और 'ट्रांसफार्मर' (बिजली की धारा को बदलने वाला यन्त्र) बनाने वाले कारखाने का जिक्र विशेष रूप से किया जा सकता है।

३५. योजना के निजी क्षेत्र में जो पूंजी-विनियोग होगा, उसका भी अधिक भाग आधारभूत उद्योगों की उन्नति पर ही व्यय किया जाएगा। निजी क्षेत्र में लोहे और इस्पात के उद्योग की सामर्थ्य बढ़ाने के लिए बहुत बड़ा कार्यक्रम तैयार किया गया है। इस समय इस क्षेत्र में १२।। लाख टन इस्पात तैयार होता है। आशा है १९५८ तक वह बढ़कर २३ लाख टन हो जाएगा। इस समय सीमेंट ४३ लाख टन तैयार होता है। आशा है कि वह बढ़कर योजना के अन्त तक १३० लाख टन होने लगेगा। सीमेंट के कारखानों की सामर्थ्य १६० लाख टन तक कर देने का विचार है। इसी प्रकार एल्यूमिनियम, इस्पात-निर्माण में काम आने वाले मैंगनीज, और बहुत ऊंचे ताप की भट्टियों में काम आने वाली ईंटों का उत्पादन भी बहुत बढ़ाया जाएगा।

३६. योजना के निजी क्षेत्र के विकास कार्यक्रमों में, सूती वस्त्र और पटसन बुनने, चीनी, कागज और सीमेंट बनाने और खेती में तथा सड़कों पर काम आने वाले यन्त्रों का निर्माण भी सम्मिलित है। रासायनिक उद्योग की प्रथम योजना के समय में भी बहुत उन्नति हुई थी। द्वितीय योजना में इस उद्योग का विस्तार विभिन्न दिशाओं में किया जाएगा। उदाहरणार्थ, सोडा एश का उत्पादन तिगुना और कास्टिक सोडे का चौगुना कर दिया जाएगा। तेल शोध का तीसरा कारखाना विशाखापत्तनम् में १९५७ तक बनकर तैयार हो जाएगा। तब, देश की औद्योगिक और पावर अल्कोहल तैयार करने की सामर्थ्य २७० लाख गैलन से बढ़कर ३६० लाख गैलन हो जाएगी।

३७. उपभोग्य पदार्थों के उद्योगों में से, सूती वस्त्र का उत्पादन २४ प्रतिशत बढ़ाकर वर्तमान ६८५ करोड़ गज से ८५० करोड़ गज कर दिया जाएगा। अभी तक यह निश्चय नहीं किया गया है कि इस उत्पादन का कितना भाग बड़ी मिलों में, और कितना हाथकरघा और शक्ति से चलने वाले करघों में बनेगा। इसी प्रकार यह भी निश्चय करना अभी शेष है कि कितना सूत मिलों से और कितना चरखों से काता जाएगा। ये दोनों निश्चय हाथकरघों और अम्बर चर्खे की भावी सम्भावित सामर्थ्य को देखकर किये जाएंगे। वस्त्र के उत्पादन का जो लक्ष्य यहां बताया गया है वह लगभग १८ गज प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष के व्यय और १०० करोड़ गज के वार्षिक निर्यात के आधार पर रखा गया है। वस्तुतः हाल के वर्षों में कपड़े की मांग जिस प्रकार बढ़ती रही है उसे देखते हुए कपड़े का उत्पादन इससे भी अधिक करने की आवश्यकता पड़ सकती है। अन्य उपभोग्य पदार्थों के सम्बन्ध में द्वितीय योजना का लक्ष्य, चीनी का उत्पादन लगभग ३५ प्रतिशत और कागज और गत्ते का शत-प्रतिशत बढ़ा देने और वनस्पति तेलों का १६ लाख टन से २१ लाख टन कर देने का है। रेयन (नकली रेशम) और औषधियों आदि के निर्माण का विकास भी द्वितीय योजना के कार्यक्रम में सम्मिलित किया गया है।

३८. सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों के कारखानों का उत्पादन द्वितीय योजना के समय में ६४ प्रतिशत बढ़ जाने की आशा है। यन्त्र तैयार करने के उद्योगों पर कितना अधिक ध्यान दिया जाएगा, इसका कुछ अन्दाजा इस बात से हो सकता है कि उनके उत्पादन में डेढ़

सौ प्रतिशत तक वृद्धि हो जाने की आशा है। भारत में आधारभूत उद्योगों का विकास अभी आरम्भिक अवस्था में ही है। इस समय हमारे देश की बढ़ती हुई बहुत-सी आवश्यकताएं विदेशों से आयात करके पूरी की जाती हैं। इससे स्पष्ट है कि अपने औद्योगिक विकास में हमें किस दिशा में आगे बढ़ना चाहिए। ज्यों-ज्यों ये आवश्यकताएं देश में ही पूरी होती जाएंगी और आधारभूत उद्योगों का संगठन दृढ़तर होता जाएगा, त्यों-त्यों हमारे लिए यह विचार करना आवश्यक हो जाएगा कि यन्त्र-निर्माण के उद्योगों, उपभोग्य वस्तुएं तैयार करने के उद्योगों और छोटे उद्योगों का सन्तुलित विकास किस प्रकार किया जाए।

३९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ग्रामोद्योगों और छोटे उद्योगों के विकास के लिए २०० करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। इसमें से ५९॥ करोड़ रुपए हाथकरघा उद्योग के लिए, ५५ करोड़ रुपए छोटे उद्योगों के लिए, ५५॥ करोड़ रुपए खादी तथा अन्य ग्रामोद्योगों के लिए, और शेष अन्य उद्योगों के लिए रखे गए हैं। इनमें से प्रत्येक उद्योग के उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित करने से पहले, प्रत्येक उद्योग की सामर्थ्य और सम्भावनाओं के विषय में विशेष जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता होगी।

परिवहन और संचार

४०. योजना के सरकारी क्षेत्र में परिवहन और संचार के विकास के लिए १,३८५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। इसमें से ९०० करोड़ रुपए रेलों के लिए हैं। इसके अतिरिक्त रेलें कोई २२५ करोड़ रुपए अपना पुराना सामान बदलने पर व्यय करेंगी। गत विश्व युद्ध के समय और उसके बाद के कुछ वर्षों में पुराना सामान बदला नहीं गया था, इस कारण यह आवश्यकता बहुत बढ़ गई है। वह अभी तक पूरी नहीं की गई। द्वितीय योजना में उद्योगों और खानों का विकास अधिक होने के कारण, रेलों का यातायात बहुत अधिक बढ़ जाने की सम्भावना है। १९५५-५६ में रेलों द्वारा १२ करोड़ टन माल की ढुलाई की गई थी, यह बढ़ कर १९६०-६१ में १८·१ करोड़ टन हो जाने, अर्थात ५० प्रतिशत बढ़ जाने की सम्भावना है। सम्भव है कि रेलों की उन्नति के लिए ९०० करोड़ रुपए की जो बड़ी राशि रखी गई है, वह भी माल के इस अतिरिक्त परिवहन का सामना करने के लिए पर्याप्त सिद्ध न हो। इस कारण द्वितीय योजना में यात्रियों का यातायात केवल ३ प्रतिशत बढ़ाने का विचार है। यात्रियों के यातायात में केवल इतनी वृद्धि करने से रेलों की वर्तमान भीड़-भांड़ में सुधार नहीं होगा। ९०० करोड़ रुपए की राशि में देश के उन भागों में नई रेलवे लाइनें बनाने का कार्य-क्रम भी सम्मिलित नहीं है जहां कि अब तक रेलें नहीं पहुंचीं। नई लाइनें केवल वहां बनाई जाएंगी जहां कि औद्योगिक प्रयोजनों या अन्य किसी कार्यक्रम की पूर्ति के लिए आवश्यकता होगी। रेलों की वर्तमान अवस्था और सामर्थ्य में सुधार करने पर द्वितीय योजना के समय विशेष ध्यान दिया जाएगा। रेलों और परिवहन के अन्य साधनों के विकास कार्यक्रमों पर प्रति वर्ष विचार किया जाता रहेगा, जिससे कि परिवहन की अपर्याप्तता के कारण योजना की प्रगति में कोई बाधा न पड़े।

४१. रेलों की उन्नति के कार्यक्रम में १,६०७ मील रेलवे लाइन का दुहरा करना, २६५ मील छोटी लाइन को बड़ी लाइन में बदलना, ८२६ मील में बिजली की रेलें चलाना, और १,२९३ मील में इंजनों में कोयले और भाप की जगह डीज़ल तेल के इंजनों का प्रयोग करना भी सम्मिलित है। ८४२ मील लम्बी नई रेल बनाई जाएगी और ८,००० मील लम्बी पुरानी लाइन को बदलकर नया किया जाएगा।

४२. इस समय रेलों में ९७४ करोड़ रुपए की पूंजी लगी हुई है, और इस प्रकार रेलें देश का सब से बड़ा उद्योग है। परिवहन की बहुत बड़ी आवश्यकता पूरी करने के अतिरिक्त रेलें अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बहुत-से कारखाने भी चलाती हैं। इन कारखानों को द्वितीय योजना में बहुत बढ़ाया जाएगा। रेलों के औद्योगिक विकास का कार्यक्रम कितना बड़ा है, इसका कुछ अन्दाजा यह देखकर लगाया जा सकता है कि द्वितीय योजना के समय हमारी रेलों को सब मिलाकर २,२५८ इंजन, १,०७,२४७ मालगाड़ी के डिब्बे और ११,३६४ सवारी गाड़ी के डिब्बे खरीदने पड़ेंगे, और इनकी तुलना में इन वस्तुओं का निर्माण बढ़कर द्वितीय योजना के अन्त में क्रमशः ४,००, २५,००० और १,८०० वार्षिक हो जाने की आशा है। द्वितीय योजना के समय रेलों को ४२५ करोड़ रुपए का सामान विदेशों से मंगाना पड़ेगा। इसमें से १३७ करोड़ रुपए इस्पात पर, ८१ करोड़ रुपए इंजनों पर और शेष यात्रियों तथा माल के डिब्बों आदि अन्य सामानों पर व्यय होंगे। द्वितीय योजना में औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने के जो लक्ष्य रखे गये हैं, उनकी यदि पूर्ति हो गई तो आगामी योजनाओं के समय रेलों को विदेशी आयात का सहारा कम से कम लेना पड़ेगा।

४३. द्वितीय योजना में सड़कों और सड़कों पर परिवहन के लिए २६३ करोड़ रुपए; जहाजरानी, बन्दरगाहों, जहाज घाटों और नदी तथा नहरों के मार्ग से ढुलाई के लिए ९६ करोड़ रुपए; नागरिक हवाई परिवहन के लिए ४३ करोड़ रुपए; और प्रसारण, डाक व तार और अन्य संचार के कार्यों के लिए ७६ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। नागपुर योजना (१९४३) में सड़कों का विकास करने के लिए २० वर्ष का एक लम्बा-चौड़ा कार्यक्रम बनाया गया था। अब द्वितीय योजना में सड़कों के विकास पर जो विनियोग किया जाएगा उससे नागपुर योजना में प्रस्तावित सड़कों का विस्तार १९६०-६१ तक पूरा हो लेगा। सड़कों के परिवहन का राष्ट्रीयकरण करने का कार्यक्रम उचित रूप से कुछ वर्षों में फैलाकर पूरा किया जाएगा, और आशा है कि राज्यों की सरकारें अपने वर्तमान साधनों में लगभग ५ हजार गाड़ियों की वृद्धि कर लेंगी। बड़े बन्दरगाहों की सामर्थ्य में ३० प्रतिशत वृद्धि की जाएगी, और समुद्र-तट के राज्यों में छोटे बन्दरगाहों का अधिक विकास किया जाएगा। इस योजना में प्रकाश-स्तम्भों का विकास करने का कार्यक्रम भी काफी बड़ा रखा गया है। प्रथम योजना समाप्त होने पर जहाजों की कुल भारवहन क्षमता ६ लाख जी० आर० टी० थी जो द्वितीय योजना के अन्त में ९० हजार टन के जहाज पुराने व बेकार हो जाने पर भी ९ लाख जी० आर० टी० हो जाने की सम्भावना है। यह ठीक है कि जहाजरानी के लिए जो राशि रखी गई है, वह शायद अपर्याप्त रहेगी। इस कारण उसे और बढ़ाने की आवश्यकता होगी—विशेषतः इस कारण कि जहाजों के मूल्य बढ़ रहे हैं। विशाखापत्तनम् के हिन्दुस्तान शिपयार्ड नामक जहाजी कारखाने का विस्तार करके, वहां जहाजों की मरम्मत के लिए एक सूखा जहाज-घाट बनाया जाएगा। सम्भव है कि बाद को एक और भी जहाजी कारखाना बनाने पर विचार किया जाए। इंडियन एयर लाइन्स कार्पोरेशन और एयर इंडिया इंटरनेशनल (भारत सरकार की राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय हवाई सर्विसों के नाम) दोनों ने बहुत-से वायुयान खरीदने और अपने वर्तमान हवाई यातायात में नई सुविधाएं बढ़ाने का कार्यक्रम बनाया हुआ है। डाक-घरों की संख्या प्रथम योजनाकाल में बढ़ाकर ३६ हजार से ५५ हजार कर दी गई थी। उसे और भी बढ़ाकर द्वितीय योजनाकाल में ७५ हजार कर दिया जाएगा। टेलीफोनों की मांग शीघ्रता से बढ़ रही है। द्वितीय योजनाकाल में टेलीफोनों की संख्या में ६७ प्रतिशत वृद्धि—उनकी संख्या २ लाख ७० हजार से ४ लाख ५० हजार—कर देने का कार्यक्रम है। यह ध्यान

रखना आवश्यक है कि टेलीफोन की सुविधाओं के विस्तार और टेलीफोनों के निर्माण की वर्तमान गति में संगति रहे। इसलिए इन दोनों कार्यों में मेल का ध्यान रखकर ही आगे बढ़ना होगा। सम्भव है कि इस बात को ध्यान में रखकर इस कार्यक्रम पर योजनाकाल में ही पुनर्विचार करना पड़े। प्रसार का विस्तार करने के लिए दिल्ली में एक नया ट्रांसमीटर (प्रसारक यन्त्र) १०० किलोवाट शार्ट वेव का और एक नया प्रसारक १०० किलोवाट मीडियम वेव का; और कलकत्ता, बम्बई तथा मद्रास में एक एक नया ट्रांसमीटर ५०-५० किलोवाट शार्ट वेव का लगाया जाएगा। देहातों में लगभग ७२ हजार नये रेडियो रिसीवर लगाये जाएंगे।

सामाजिक सेवाएं

४४. सामाजिक सेवाओं के लिए द्वितीय योजना में ९४५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। यह प्रथम योजना की राशि से लगभग दुगुनी है। शिक्षण और चिकित्सा की सुविधाओं में वृद्धि, और औद्योगिक श्रमिकों, विस्थापित लोगों और अन्य अधिकारहीन वर्गों की दशा में सुधार, सामाजिक सेवाओं के विशिष्ट अंग हैं। इन सेवाओं के द्वारा देश में सबके लिए अवसरों की अधिक समानता उत्पन्न करके, समाज को समाजवादी आदर्श पर संगठित करने के लक्ष्य को पूरा करने का प्रयत्न किया जाएगा।

४५. संविधान का एक निदेशक सिद्धान्त यह है कि १९५०-५१ के पश्चात १० वर्ष के भीतर, १४ वर्ष तक की आयु के सब बालकों के लिए निःशुल्क अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था कर दी जाए। परन्तु द्वितीय योजना में जो लक्ष्य रखे गये हैं, उनके द्वारा १९६०-६१ तक ६ से ११ वर्ष तक की आयु के बालकों में से केवल ६३ प्रतिशत, और ११ से १४ वर्ष की आयु के बालकों में से केवल २२·५ प्रतिशत के लिए उक्त व्यवस्था की जा सकेगी। इसी अवधि में प्रारम्भिक शिक्षण पाने वाले बालकों की संख्या ७७ लाख और माध्यमिक शिक्षण पाने वाले बालकों की संख्या १३ लाख बढ़ जाएगी। योजना के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए ५३ हजार प्राइमरी स्कूल और ३,५०० मिडिल स्कूल नये खोलने पड़ेंगे। हाई और हायर सैकेंडरी स्कूलों में शिक्षण के क्रम को अधिकाधिक विभिन्न प्रकार का करते जाने का विचार है। प्रथम योजना के अन्त में बहूद्देश्यीय स्कूलों की संख्या २५० थी। द्वितीय योजना के अन्त में उसे बढ़ाकर १,२०० तक पहुंचा दिया जाएगा। विकास के प्रत्येक क्षेत्र में प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता शीघ्रातिशीघ्र और अधिकाधिक संख्या में पड़ेगी। इसलिए देश के उत्तरी, पश्चिमी और दक्षिणी भागों में ३ नये हायर टेकनोलौजीकल इंस्टीट्यूट खोलने का, और दिल्ली के पोलीटेकनीक और खड़गपुर के इंस्टीट्यूट आफ टेकनोलौजी का अधिक विस्तार करने का विचार है। धनबाद के इंडियन स्कूल आफ मान्इस एण्ड एप्लाइड जिओलौजी का भी विस्तार किया जाएगा। इंजीनियरिंग सिखाने वाली संस्थाओं में से स्नातक और स्नातकोत्तर शिक्षण देने वाली संस्थाओं की संख्या ४५ से ५४, और डिप्लोमा देने वाली संस्थाओं की संख्या ८३ से १०४ कर दी जाएगी। १९५५ में इंजीनियरी के ग्रेजुएट ३,००० और डिप्लोमा होल्डर ३,५६० निकले थे। १९६० में इनकी संख्या बढ़ाकर क्रमशः ५,४८० और ८,००० कर दी जाएगी।

४६. देश में स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार करते हुए बड़ी कठिनाई यह होती है कि प्रशिक्षित व्यक्ति पर्याप्त संख्या में नहीं मिलते। इसलिए डाक्टरों, नर्सों और हैल्थ असिस्टेंटों की संख्या द्वितीय योजना काल में क्रमशः १८, ४१ और ७५ प्रतिशत बढ़ा दी जाएगी।

चिकित्सालयों में रोगियों को रखने की व्यवस्था में भी २४ प्रतिशत वृद्धि कर देने का विचार है। पारिवारिक नियोजन के लिए ४ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है, और आशा है कि द्वितीय योजना काल में इस प्रयोजन के लिए नगरों में ३०० और ग्रामों में २,००० क्लिनिक खोले जाएंगे।

४७. निर्माण, आवास और सम्भरण मंत्रालय, आवास के जो नये कार्य करेगा उनके लिए १२० करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। इसके अतिरिक्त, केन्द्रीय सरकार के रेलवे, लोहा तथा इस्पात, उत्पादन, पुनर्वास और प्रतिरक्षा आदि मन्त्रालयों और राज्य सरकारों के भी नये भवन बनाने के बहुत-से कार्यक्रम हैं। द्वितीय योजना काल में सरकारी संस्थाएं जो निवास-गृह बनाएंगी उनकी संख्या १३ लाख तक पहुंच जाएगी। द्वितीय योजना में श्रम-कल्याण के कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए २९ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। कल्याण केन्द्रों और प्रशिक्षण की सुविधाओं का विस्तार करने के अतिरिक्त, एक विचार यह भी है कि काम-दिलाऊ दफ्तरों की संख्या बढ़ाकर १३६ से २५६ कर दी जाए, और इनके कार्य का विस्तार कर दिया जाए। पिछड़े हुए वर्गों के कल्याण के लिए जो कार्य प्रथम योजना काल में आरम्भ किये गये थे, वे द्वितीय योजना काल में भी अधिक बड़े पैमाने पर जारी रहेंगे। जो संस्थाएं समाज कल्याण का कार्य स्वेच्छा से करती हैं, उनको भी और अधिक सहायता दी जाएगी। विस्थापित लोगों के पुनर्वास का कार्य द्वितीय योजना काल में भी जारी रखना पड़ेगा। इस कार्य के लिए ९० करोड़ रुपए की राशि रखी गई है।

राष्ट्रीय आय, खपत और रोजगार

४८. इस कार्य के लिए जो लक्ष्य रखे गये हैं, और विकास के जो कार्य आरम्भ किये जाएंगे, उनकी रूपरेखा पिछले अध्यायों में दी जा चुकी है। विविध क्षेत्रों में विकास का जो कार्य किया जाएगा, वह राष्ट्रीय आय की वृद्धि से प्रकट होगा। प्रथम और द्वितीय योजना की अवधियों में राष्ट्रीय आय में जो वृद्धि होने की आशा है, वह नीचे की तालिका में प्रकट की गई है:

उद्योगों के द्वारा होने वाला राष्ट्रीय उत्पादन

(१९५२-५३ के मूल्यों के आधार पर करोड़ रु०)

	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१	प्रतिशत वृद्धि १९५१–५६	प्रतिशत वृद्धि १९५६–६१
१	२	३	४	५	६
१. कृषि और सम्बद्ध कार्य	४,४५०	५,२३०	६,१७०	१८	१८
२. खानें	८०	९५	१५०	१९	५८
३. कारखाने	५९०	८४०	१,३८०	४३	६४
४. छोटे उद्योग	७४०	८४०	१,०८५	१४	३०
५. निर्माण	१८०	२२०	२९५	२२	३४
६. वाणिज्य, परिवहन और संचार	१,६५०	१,८७५	२,३००	१४	२३

१	२	३	४	५	६
७. पेशे और नौकरियां (सरकारी नौकरियां सम्मिलित करके)	१,४२०	१,७००	२,१००	२०	२३
८. समस्त राष्ट्रीय उत्पादन	९,११०	१०,८००	१३,४८०	१८	२५
९. प्रति व्यक्ति आय (रु०)	२५३	२८१	३३१	११	१८

४९. ऊपर की तालिका में कृषि, खानों और कारखानों के बड़े-बड़े विभागों के समस्त उत्पादन का अन्दाजा, पहले प्रकरणों में बताए हुए उत्पादन के विस्तृत लक्ष्यों के आधार पर, किया गया है। परन्तु व्यापार, पेशों और नौकरियों आदि के जो विभाग योजना के क्षेत्र से बाहर के हैं, उनकी आय का तो केवल अप्रत्यक्ष अन्दाजा ही लगाया जा सकता है। तो भी इन अन्दाजों से यह स्पष्ट हो जाता है कि १९५५-५६ में जो राष्ट्रीय आय १०,८०० करोड़ रुपए की थी वह (मूल्यों को अपरिवर्तित मानते हुए) १९६०-६१ में बढ़कर १३,४८० करोड़ रुपए हो जाएगी, अर्थात उसमें लगभग २५ प्रतिशत की वृद्धि होगी। इसका अर्थ यह है कि प्रति व्यक्ति की आय में लगभग १८ प्रतिशत की वृद्धि होगी, और वह १९५५-५६ की २८१ रुपए की आय से बढ़कर १९६०-६१ में ३३१ रुपए की हो जाएगी। यह वृद्धि प्रथम योजना काल में केवल ११ प्रतिशत हुई थी। (उन्हीं पांच वर्षों में आय २५३ रुपए से बढ़कर २८१ रुपए तक पहुंची थी।) यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि द्वितीय योजना में खानों और कारखानों के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि का कार्यक्रम होने पर भी देश की सारी अर्थ-व्यवस्था में योजना काल में परिवर्तन थोड़ा ही होगा। उदाहरणार्थ, राष्ट्रीय आय में कृषि और उससे सम्बद्ध कार्यों का भाग १९५५-५६ में ४८ प्रतिशत था, वह घटकर १९६०-६१ में ४६ प्रतिशत रह जाएगा। और इसके विपरीत खानों और कारखानों का भाग बढ़कर ९ से ११ प्रतिशत हो जाएगा। इस बात से इस विचार का समर्थन होता है कि आगामी योजना कालों में औद्योगिक उन्नति पर अधिकाधिक बल देने की आवश्यकता कितनी अधिक रहेगी।

५०. हमारी अर्थ-व्यवस्था में खपत के औसत स्तर में वृद्धि उतनी द्रुत गति से नहीं होगी जितनी कि राष्ट्रीय आय में। इसका कारण यह है कि देश में उत्पादन का अधिकतर भाग बचाकर योजना की पूर्ति में लगा दिया जाएगा। द्वितीय योजना काल में विनियोग का कार्यक्रम ६,२०० करोड़ रुपए का रखा गया है। इसे पूरा करने के लिए १९६०-६१ तक राष्ट्रीय आय का लगभग १० प्रतिशत योजना में लगा देना पड़ेगा। इस समय इस विनियोग का परिमाण राष्ट्रीय आय का केवल ७ प्रतिशत है। यह अवस्था तब है जब कि योजना में यह कल्पना कर ली गई है कि देश की बचत को १,१०० करोड़ रुपए के विदेशी साधनों का योग भी मिल सकेगा। इस कल्पना के आधार पर देश में समस्त खपत में वृद्धि केवल २१ प्रतिशत हो सकेगी। और उसके विपरीत राष्ट्रीय आय में वृद्धि २५ प्रतिशत की होगी। प्रथम योजना काल की तुलना में खपत की यह वृद्धि १६ प्रतिशत है। नीचे की तालिका में मोटे हिसाब से

यह दिखाया गया है कि द्वितीय योजना काल के अन्त में १९५०-५१ और १९५५-५६ की स्थिति की तुलना में राष्ट्रीय आय, पूंजी-विनियोग, देश की वचत, और खपत में कितनी-कितनी वृद्धि होगी :

राष्ट्रीय आय, विनियोग, वचत और खपत

—	(१९५२-५३ के मूल्यों के आधार पर करोड़ रु०)		
	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१
१. राष्ट्रीय आय	९,११०	१०,८००	१३,४८०
२. विशुद्ध विनियोग	४४८	७९०	१,४४०
३. विदेशी साधनों की प्राप्ति	(–)७	३४	१३०
४. देश की विशुद्ध वचत (२–३)	४५५	७५६	१,३१०
५. खपत पर व्यय (१–४)	८,६५५	१०,०४४	१२,१७०
६. राष्ट्रीय आय में विनियोग			
६. राष्ट्रीय आय में विनियोग का प्रतिशत (उक्त क्रम २, क्रम १ का प्रतिशत है)	४·९४	७·३१	१०·६८
७. राष्ट्रीय आय में देश की वचत का प्रतिशत (उक्त क्रम ४, क्रम १ का प्रतिशत है)	४·९८	७·००	९·७

५१. यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि विदेशी साधन आवश्यक मात्रा में न मिल सकें, तो खपत में वृद्धि को उसी हिसाब से अधिक सीमित कर देना पड़ेगा। सच तो यह है कि खपत में वृद्धि की कल्पना इसी आधार पर की गई है कि ६,२०० करोड़ रुपए का विनियोग हो जाने पर राष्ट्रीय आय में २५ प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी, और इतनी मात्रा में विनियोग करने के लिए आवश्यक वचत भी की जा सकेगी। आवश्यक मात्रा में साधन एकत्र करने की समस्या पर विचार अगले अध्याय में किया गया है। महत्वपूर्ण वात यह है कि राष्ट्रीय आय और खपत के स्तर में आशानुरूप वृद्धि तभी हो सकती है जब कि आवश्यक परिमाण में विनियोग को सफल बनाने के लिए खपत में वृद्धि को नियन्त्रित रखा जाए। यह भी स्पष्ट है कि ६,२०० करोड़ रुपए विनियोग करने का परिणाम राष्ट्रीय आय में २५ प्रतिशत वृद्धि के रूप में तभी प्रकट होगा जब कि कुछेक कल्पनाएं यथार्थ सिद्ध हो जाएंगी। ये कल्पनाएं हैं—योजना के विविध कार्यक्रमों की परस्पर संगति, अपव्यय का न होना, उत्पादन के लिए उन्नत उपायों का अवलम्बन करने और विकास के अनुकूल वातावरण तैयार करने में जनता का सहयोग और समर्थन प्राप्त करने के लिए उपयुक्त नेताओं का मिल जाना और अभीष्ट प्रयत्न का होना। किसी भी योजना की सफलता का अन्दाजा केवल उसके कार्यक्रमों की सूची को पढ़कर नहीं लगाया जा सकता। सफलता तभी प्राप्त हो सकती है जब कि योजना के कार्यक्रमों और नीतियों को पूरा करने के लिए उचित उत्साह और संगठन बनाकर कार्य किया जाए।

५२. द्वितीय योजना से रोजगार में कितनी वृद्धि हो सकेगी और आर्थिक नीति में क्या-क्या परिवर्तन होंगे, इन प्रश्नों पर विचार पांचवें अध्याय में किया गया है। अन्दाजा यह है कि द्वितीय योजना काल में कृषि के अतिरिक्त, अन्य क्षेत्रों में ८० लाख व्यक्तियों को नया रोजगार मिल सकेगा। यह हिसाब केवल पूरे समय के रोजगारों का है। योजना में सिंचाई और नई भूमि तोड़ने आदि जैसे विकास कार्यक्रम भी हैं, जिनसे अर्ध-रोजगार में कमी करने में सहायता मिलेगी। सम्भव है कि इन कामों से कुछ नए लोगों को भी रोजगार मिल जाए। हमारे देहातों का आज जो सामाजिक और आर्थिक संगठन है, उससे काम और आमदनी का ऐसा हिसाब नहीं किया जा सकता कि उससे यह स्पष्ट हो जाए कि कितने लोगों को तो पूरे समय का रोजगार मिला और कितनों की अर्ध-रोजगारी कम हुई। योजना में कृषि का जितना उत्पादन बढ़ने और कृषि के पेशे से बाहर के पेशों में जितने नए रोजगार मिलने की कल्पना की गई है उसके पूरा हो जाने पर आमदनियों में काफी वृद्धि हो जाएगी, और जीवन की प्रथम अवस्था में अर्ध-रोजगारी कम होने में सहायता मिलेगी। योजना में देहाती और छोटे उद्योगों की उन्नति और पुनर्गठन करने के जो मार्ग सुझाए गए हैं, उन पर चलने से इन उद्योगों में लगे हुए बहुत-से लोगों को अब से अधिक रोजगार मिल सकेगा। सारांश यह है कि आगामी पांच वर्षों में श्रमिकों की संख्या में लगभग एक करोड़ की जो वृद्धि हो जाएगी, उसे सन्तुलित करने के लिए सब मिलाकर योजना के द्वारा श्रमिकों की मांग पर्याप्त मात्रा में बढ़ाई जा सकेगी।

परिशिष्ट

योजना पर राज्यों का व्यय

	(करोड़ रुपयों में) प्रथम योजना	द्वितीय योजना
	१	२
आन्ध्र	७५·६	११६·०
असम	२८·१	५७·६
बिहार	१०४·४	१६४·२
बम्बई	१८१·३	२६६·२
मध्य प्रदेश	५७·५	१२३·७
मद्रास	६७·०	१७३·१
उड़ीसा	८५·२	१००·०
पंजाब	१२४·०	१२६·३
उत्तर प्रदेश	१६५.६	२५३·१
पश्चिम बंगाल	१५१·६	१५३·७
(क) भाग के राज्यों का योग	१०७१·२	१५६७·२
हैदराबाद	५७·०	१००·२
मध्यभारत	३६·१	६७·३
मैसूर	५३·२	८०·६
पैप्सू	३६·२	३६·३
राजस्थान	६२·८	६७·४
सौराष्ट्र	२६·८	४७·७
तिरुवांकुर-कोचीन	३५·४	७२·०
जम्मू व कश्मीर	१३·२	३३·६
(ख) भाग के राज्यों का योग ...	३२६·७	५३५·४
अजमेर	३·६	७·६
भोपाल	६·३	१४·३
कुर्ग	२·०	३·८
दिल्ली	१०·५	१७·०
हिमाचल प्रदेश	७·५	१४·७
कच्छ	४·८	७·६
मणिपुर	२·२	६·२
त्रिपुरा	३·०	८·५
विन्ध्य प्रदेश	६·३	२४·६
(ग) भाग के राज्यों का योग ...	५२·२	१०५·२

	१	२
अण्डमान-निकोबार द्वीपसमूह ...	१·५	५·६
उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी ...	४·४	६·५
पांडिचेरी	०·८	४·८
योग ...	६·७	२०·२
दामोदर घाटी निगम के व्यय में केन्द्र का भाग	—	१२·२
राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक योजना कार्य	—	०·७+
समस्त योग	१४५६·८	२२४०·६

+यह राशि उस १८७ करोड़ रुपए के अतिरिक्त है, जो कि योजना में पृथक-पृथक राज्यों के लिए रखी गई है। द्वितीय योजना में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों के लिए २०० करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। इसमें से लगभग १२ करोड़ रुपए केन्द्र का भाग है। जब राज्यों की योजनाएं तैयार की गई थीं तब पृथक-पृथक राज्य के लिए इस खाते में अस्थायी राशियां रख दी गई थीं। इन पर इस कार्यक्रम का अधिक हाल मालूम होने के बाद पुनर्विचार किया जाएगा।

अध्याय ४

वित्त और विदेशी मुद्रा

इस अध्याय में यह वतलाया जाएगा कि योजना के लिए आवश्यक वित्तीय साधनों का संग्रह किस प्रकार किया जाएगा, और इस सम्बन्ध में जो नीति सम्बन्धी प्रश्न उठेंगे उनमें से भी कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार किया जाएगा। साधन एकत्र करने की समस्या पर विचार करते हुए सरकारी और निजी दोनों क्षेत्रों को ध्यान में रखना होगा, क्योंकि दोनों अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति वचत के एक ही कोष में से करते हैं। यह भी सावधानी रखनी होगी कि देश के वित्तीय साधनों के अतिरिक्त विदेशी मुद्रा भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होती रहे।

२. मूल प्रश्न यह है कि देश में जितनी वित्तीय वचत करने की आवश्यकता है उतनी हो सकती है या नहीं, और हो सकती है तो कैसे? इस प्रश्न का उत्तर केवल इस निर्णय पर निर्भर नहीं करता है कि एक सीमा से आगे व्यय को सीमित कर देना वांछनीय होगा या नहीं, वल्कि वर्तमान आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थितियों में इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए जो उपाय काम में लाये जा सकते हैं उनकी उपयुक्तता के वारे में भी देखना होगा। एक लोकतन्त्री राज्य में कर-प्रणाली और अन्य आर्थिक नीतियों के निर्धारण में पिछली वात महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से इस संदर्भ में जहां निजी और सरकारी क्षेत्रों को साथ-साथ काम करना हो। यह वात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि एक वार विनियोग की जाने वाली राशि का निश्चय कर लेने के पश्चात, उसे एकत्र करने के लिए आवश्यक वचत करनी ही होगी, और उसका अधिक भाग अपनी ही अर्थ-व्यवस्था में से निकालना होगा। यह भी स्मरण रखना चाहिए कि विदेशी विनिमय की समस्या की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता पड़ेगी। औद्योगीकरण के मार्ग पर कदम वढ़ाने वाले देश को शुरू-शुरू में आवश्यक मशीनों और साज-सामान का विदेशों से आयात करना ही पड़ता है, और इस कारण विदेशी मुद्रा का अधिकतम मात्रा में एकत्र करना उसके लिए नितान्त आवश्यक हो जाता है। आयात में अधिकतम संयम करने के पश्चात भी, पूर्ति के लिए वड़ी मात्रा में विदेशी साधनों की आवश्यकता रहेगी। इस तथ्य से स्पष्ट है कि निर्यात वढ़ाने की नीति पर सक्रियता से चलना कितना अधिक आवश्यक है।

सार्वजनिक क्षेत्र के लिए वित्त

३. केन्द्र और राज्यों की सरकारों के विकास कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए ४,८०० करोड़ रुपए की आवश्यकता कूती गई है। उसे इस प्रकार एकत्र करने का विचार है :

	(करोड़ रु०)
१. चालू राजस्व खाते से वचत	८००
क. कर की वर्तमान (१९५५-५६) दर से	३५०
ख. नये करों से	४५०

	(करोड़ रु०)
२. जनता से ऋण	१,२००
क. बाजार के ऋण	७००
ख. छोटी-छोटी बचतें	५००
३. बजट के अन्य साधन	४००
क. विकास कार्यक्रमों में रेलवे का भाग	१५०
ख. प्रोविडेण्ट फण्ड और अन्य जमा के खाते	२५०
४. विदेशों से	८००
५. घाटे की वित्त-व्यवस्था द्वारा	१,२००
६. कमी—यह देश के साधनों को उन्नत करके पूरी की जाएगी	४००
योग	४,८००

केन्द्र और राज्यों की सरकारें टैक्स लगाकर, ऋण लेकर, और अन्य साधनों द्वारा अपने बजटों में जो राशि बचा सकती हैं, वह २,४०० करोड़ रुपए कूती गयी है। १,२०० करोड़ की राशि घाटे की वित्त-व्यवस्था द्वारा इकट्ठी की जा सकती है। विदेशों में एकत्र की जाने वाली ८०० करोड़ रुपए की राशि मिलाकर, सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रम पूरे करने के लिए उपलब्ध साधनों का योग ४,४०० करोड़ रुपए हो जाता है। इसके बाद भी ४०० करोड़ रुपए की कमी रह जाती है। इसे पूरा करने के उपाय ढूंढने होंगे। यह मान लिया गया है कि अन्त में यह कमी देश के साधनों में वृद्धि करके ही पूरी करनी होगी। यह देखते हुए कि घाटे की जिस वित्त-व्यवस्था की आगे चर्चा की जाएगी उसकी कुछ अपनी सीमाएं हैं, और यहां पूंजी एकत्र करने की जो रूपरेखा आंकी गयी है उसका बहुत कुछ दारोमदार कर्ज लेने पर है; इस कमी को पूरा करने का एकमात्र सम्भव उपाय कर लगाना और सरकारी उद्योग-व्यवसायों से यथासंभव लाभ है।

४. करों की वर्तमान दरों के आधार पर, चालू राजस्व खाते से योजना के व्यय पूरे करने के लिए ३५० करोड़ रुपए बच जाने का जो अन्दाजा लगाया गया है वह केन्द्र और राज्य सरकारों की समस्त आय पर विस्तारपूर्वक विचार कर लेने के पश्चात ही किया गया है। यह अन्दाजा लगाते हुए प्रतिरक्षा और प्रशासन सरीखे व्यय के विकासेतर मदों में न्यूनतम वृद्धि की ही कल्पना की गयी है। समाज सेवाओं तथा इसी प्रकार के अन्य विकास कार्यों को चालू रखने के लिए १९५५-५६ के अन्त तक जिस स्तर तक व्यय पहुंच गया था उसकी व्यवस्था कर ली गई है, क्योंकि इस प्रकार के व्यय योजना में सम्मिलित नहीं किये गये हैं। १९५५-५६ में टैक्सों की जो दर होंगी उनके आधार पर, योजना के पांच वर्षों में, केन्द्र और राज्यों की सरकारों की समस्त आय ५,००० करोड़ रुपए होने का अनुमान किया गया है। इसमें से ४,६५० करोड़ रुपए प्रतिरक्षा आदि उन विकासेतर कार्यों और समाज सेवा आदि उन विकास कार्यों को जारी रखने पर व्यय हो जाएंगे जिनका अभी जिक्र किया गया है। इस प्रकार की योजना पर व्यय करने के लिए ३५० करोड़ रुपए बच जाएंगे। यहां इस बात पर जोर देना जरूरी है कि वर्तमान दरों के आधार पर राजस्व में से यह ३५० करोड़ रुपए बचाने के लिए, विकासेतर खातों के व्यय

पर कड़ी दृष्टि रखनी पड़ेगी। यदि कहीं ये व्यय बढ़ गए, या यदि शराबबन्दी जैसे समाज सुधार के कार्यों पर अमल करने के कारण कहीं राजस्व में विशेष कमी हो गई, तो योजना के चालू राजस्व खाते में से मिलने वाले भाग को यथापूर्व बनाये रखने के लिए साथ ही साथ साधन वृद्धि का विशेष प्रयत्न करना पड़ेगा।

५. ऊपर नये करों द्वारा ४५० करोड़ रुपए एकत्र करने के जिस लक्ष्य की चर्चा की गई है वह नये प्रयत्नों की न्यूनतम सीमा है। इस राशि का अन्दाजा लगाते हुए कर जांच आयोग की सिफारिशों पर भी विचार कर लिया गया है और यह मान लिया गया है कि योजना आरम्भ होने के पश्चात उन पर अमल करने की कार्रवाई यथाशीघ्र की जाएगी। आशा है कि राज्यों की सब सरकारें मिलकर राजस्व में कुल मिलाकर २२५ करोड़ रुपए की वृद्धि कर सकेंगी, और केन्द्रीय सरकार भी इतनी ही वृद्धि कर लेगी। इस हिसाब से सरकार के चालू राजस्व-खाते से योजना के लिए मिलने वाली राशि ८०० करोड़ रुपए तक पहुंच जाती है जो समस्त अपेक्षित साधनों का केवल छठा भाग है। जैसा कि आगे बतलाया गया है, सारी आवश्यकताओं का खयाल रखते हुए सरकारी आय का इतना योग पर्याप्त नहीं है, इसलिए यदि पूरी योजना को पूर्णतः अमल में लाना है और साथ ही मुद्रा-स्फीति के दुष्प्रभावों को दबाए रखना है तो कर बढ़ाने के प्रयत्न करने पड़ेंगे।

६. पिछले कुछ वर्षों में सरकार द्वारा ऋण लेने के कार्यक्रमों का अच्छा स्वागत हुआ। प्रथम योजना में ११५ करोड़ रुपए ऋण लेने का जो लक्ष्य रखा गया था, उससे लगभग ६५ करोड़ रुपया अधिक मिला। सरकारी ऋणों की मांग में सुधार मुख्यतया अन्तिम दो वर्षों में हुआ। इनमें सरकार को औसतन ९५ करोड़ रुपए प्रति वर्ष नया ऋण मिल गया। इस अवधि में रिजर्व बैंक के पास (ट्रेजरी बिलों अर्थात छोटी मियाद की सरकारी हुण्डियों को छोड़ कर) जो सरकारी कागज (सिक्युरिटियां—ऋण-पत्र) जमा थे उनके मूल्य में लगभग ७० करोड़ रुपए की कमी हो गई। इसका मतलब यह है कि कोई २५० करोड़ रुपए के सरकारी कागज बाजार में (व्यापारी बैंकों को शामिल करके) खप गए। यदि केन्द्र और राज्यों की सरकारों के पास सुरक्षित रखी हुई सरकारी हुण्डियों की बिक्री भी हिसाब में शामिल कर ली जाए, तो बाजार में सरकारी कागज की खपत का परिमाण और भी ऊंचा हो जाएगा।

७. इसलिए द्वितीय योजना की अवधि में जनता से ७०० करोड़ रु० का—औसतन १४० करोड़ रुपए प्रति वर्ष—ऋण मिल जाने का जो अन्दाजा लगाया गया है वह यह मानकर लगाया गया है कि इस सूत्र से होने वाली प्राप्ति का वार्षिक औसत, हाल के वर्षों में हुई प्राप्ति से लगभग ४० प्रतिशत ऊंचा रहेगा। यह लक्ष्य बहुत ऊंचा तो अवश्य नहीं है, परन्तु इसे निर्धारित करते समय यह ध्यान रखा गया है कि द्वितीय योजना की अवधि में जो सरकारी ऋण चुकाने योग्य हो जायेंगे उनकी राशि ४३० करोड़ रुपए होगी। इस कारण इस अवधि में सब मिलाकर १,१३० करोड़ रुपए का ऋण लेना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त, इस समय निजी कारबार में भी पूंजी की मांग बहुत अधिक है। इन दोनों बातों को ध्यान में रखते हुए सरकारी कामों में लगाने के लिए जनता द्वारा ७०० करोड़ रुपए की बचत इकट्ठी कर लेने का काम सरल नहीं जान पड़ता। इस प्रसंग में सामाजिक सुरक्षा के कार्यों का विस्तार करने की सम्भावनाओं पर भी भली भांति विचार कर लेना चाहिए। इन कार्यों द्वारा कर्मचारियों के साथ तो न्याय होता ही है, अतिरिक्त बचत का भी एक मूल्यवान साधन हाथ लग जाता है। प्राविडेण्ट फण्डों और इसी प्रकार के बचत के अन्य कामों द्वारा जो धनराशि एकत्र होती है वह अब भी जनता

से ऋण मिलने का एक महत्वपूर्ण साधन है। आशा है कि आगामी वर्षों में इनका महत्व और भी बढ़ जाएगा। जीवन बीमे का राष्ट्रीयकरण किया तो गया है लोगों में बीमा कराने की आदत डालने के लिए, परन्तु वह जनता से ऋण मिलने का भी ऐसा साधन है जो निरन्तर बढ़ता ही जाएगा।

८. छोटी-छोटी बचतों से द्वितीय योजना की अवधि में ५०० करोड़ रुपए एकत्र हो जाने का अन्दाजा लगाया गया है। गत वर्षों में इस सूत्र से प्राप्त राशि में निरन्तर वृद्धि होती रही है। १९५०-५१ में ३३ करोड़ रुपए एकत्र हुए थे और १९५५-५६ में ६५ करोड़ हुए। द्वितीय योजना की अवधि में प्रति वर्ष औसतन १०० करोड़ रुपए मिलने का जो लक्ष्य रखा गया है उसकी पूर्ति के लिए इन बचतों को काफी बढ़ाना होगा। इसके लिए थोड़ी-थोड़ी बचत करने के आन्दोलन को प्रबलतर और देश-व्यापी बनाकर, उसे घर-घर और निम्नतम आय वर्ग के लोगों तक पहुंचाने की आवश्यकता है। हमारा सुझाव है कि इस बात का गहन अध्ययन किया जाए कि शहरी और देहाती क्षेत्रों में छोटी-छोटी बचत करने का आन्दोलन अभी किस अवस्था तक पहुंचा है, और उसके आधार पर राज्य सरकारें और गैर-सरकारी संगठन मिलकर ऐसा प्रयत्न करें कि योजना का सन्देश देश भर में फैल जाए और अल्प बचत का आन्दोलन जिन इलाकों और लोगों तक अभी नहीं पहुंचा है उन तक भी पहुंच जाए। इसका उद्देश्य यह होना चाहिए कि प्रत्येक नागरिक को देश की अर्थ-व्यवस्था सुधारने में योग देने के लिए—वह कितना ही थोड़ा क्यों न हो—प्रेरित किया जा सके।

९. रेलों को उन्नत करने की योजना ९०० करोड़ रुपए की बनाई गई है। उसके लिए पूंजी एकत्र करने में रेलों को १५० करोड़ रुपए का योग देना होगा। प्रथम योजना में रेलों की उन्नति पर २६७ करोड़ रुपए व्यय करने का लक्ष्य रखा गया था, और उसमें रेलों ने ११५ करोड़ रुपए का योग दिया था। द्वितीय योजना में, रेलों के अपने योग का अनुपात बहुत कम रखा गया है। बात यह है कि देश की अर्थ-व्यवस्था में जो नए सुधार किए जाएंगे उनकी सफलता के लिए रेलों को बहुत कम समय में काफी अधिक नई जिम्मेदारियां उठानी पड़ेंगी। इसके लिए रेलों को अनिवार्य रूप से सामान्य कोष में से बड़ी मात्रा में सहायता लेनी पड़ेगी। इस कारण रेलें अपनी उन्नति में क्यों अधिक योग नहीं दे सकेंगी, यह बात समझ में आ जाती है। मूल्यह्रास के चालू खाते में भी रेलों को योजना की अवधि में २२५ करोड़ रुपए देने पड़ेंगे। यह राशि योजना के व्यय में सम्मिलित नहीं की गई, फिर भी यह उचित समझा गया है कि रेलों को अपनी उन्नति में न्यूनतम १५० करोड़ रुपए का योग देना ही चाहिए। हम यह बात दोहरा देना चाहते हैं कि अन्य सब निजी या सरकारी विकास कार्यों के समान रेलों को भी अपने विस्तार की आवश्यकताओं का बड़ा भाग अपने ही साधनों से पूरा करना चाहिए। द्वितीय योजना काल में रेलवे यातायात में भी बहुत वृद्धि होने की सम्भावना है। यद्यपि इसका कुछ भाग ऐसा भी होगा जिससे आय में उसी अनुपात से वृद्धि होगी तथापि कुल मिलाकर रेलों की आमदनी बढ़ जाएगी। यह मान लेने के बाद भी कि रेलों के प्रबन्ध-व्यय में अनिवार्य रूप से कुछ वृद्धि हो जाएगी, हमें लगता है कि रेलों से अपनी उन्नति में जितना योग देने के लिए कहा जा रहा है उसका कुछ भाग उन्हें वर्तमान दरों पर ही यातायात बढ़ जाने से प्राप्त हो जाएगा और कुछ भाग की पूर्ति उन्हें यात्रियों के किरायों और माल के भाड़े में आवश्यक हेर-फेर करके करनी पड़ेगी। हमारी सिफारिश तो यह है कि द्वितीय योजना के कारण सरकार के वित्तीय साधनों पर जो भारी बोझ पड़ेगा उसका विचार करते हुए रेलों को

चाहिए कि उनके जिम्मे जो १५० करोड़ रुपए डाला गया है वे उससे अधिक जुटाने का प्रयत्न करें।

१०. प्रोविडेण्ट फण्डों और इसी प्रकार के अन्य जमा-खातों से २५० करोड़ रुपए मिल जाने का अन्दाजा लगाया गया है। यह अन्दाजा इस समय इन खातों से मिलने वाली राशियों की वर्तमान प्रवृत्तियों को देखते हुए लगाया गया है। १९५५-५६ में केन्द्रीय सरकार के पास प्रोविडेण्ट फण्डों की राशि १७ करोड़ रुपए तक एकत्र हो जाने का अन्दाजा है और राज्य सरकारों के पास इस अवधि में इस खाते की राशि का परिमाण ६ करोड़ ६० लाख तक पहुंच जाएगा। इन दोनों का योग २३ करोड़ ६० लाख होता है। इसे देखते हुए यह अन्दाजा लगाना संगत ही जान पड़ता है कि द्वितीय योजना काल में इस खाते में एकत्र राशि १५० करोड़ रुपए तक पहुंच जाएगी। शेष १०० करोड़ रुपए की राशि, केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा दिये हुए ऋणों की वसूली तथा पूंजी-खाते में प्राप्त हुई अन्य रकमों से पूरी हो जाएगी।

११. अब तक गिनाए गए साधनों का योग २,४०० करोड़ रुपए होता है। समस्या शेष २,४०० करोड़ रुपए एकत्र करने की रह जाती है। इसका ५० प्रतिशत, अर्थात मोटे हिसाब से १,२०० करोड़ रुपए, घाटे की वित्त-व्यवस्था द्वारा निकाला जा सकता है। योजना में ८०० करोड़ रुपए विदेशों से मिल जाने की आशा की गई है। प्रथम योजना में विदेशी ऋणों और सहायताओं का परिमाण ४० करोड़ रुपए वार्षिक रहा था। इस प्रकार ऊपर बताई गई योजना में विदेशों से प्रति वर्ष १६० करोड़ रुपए मिल जाने की जो बात कही गई है वह पहले से बहुत अधिक है।

१२. स्पष्ट है कि देश के वित्तीय साधनों पर द्वितीय पंचवर्षीय योजना का भारी बोझ पड़ेगा, परन्तु विकास की किसी भी योजना में बोझ तो पड़ा ही करता है, अर्थात योजना की परिभाषा ही यह है कि विनियोग के स्तर को औसत से ऊंचा उठाना अर्थात इसका अर्थ यह निकलता है कि आवश्यक साधनों का संग्रह करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक प्रयत्न करने की आवश्यकता है। फलतः साधन एकत्र करने का कार्य, इस दृष्टि से और अगले कई वर्षों तक देश की आर्थिक आवश्यकताओं के निरन्तर बढ़ते रहने की दृष्टि से, करना होगा। विनियोग और राष्ट्रीय आय का स्तर शीघ्रातिशीघ्र ऊंचा उठाने के लक्ष्य की पूर्ति के लिए देश में निरन्तर और अधिकाधिक बचत करनी होगी।

बचत और सरकारी विनियोग

१३. सरकारी क्षेत्र के विकास कार्यक्रमों के लिए पूंजी जुटाने की समस्या को एक अन्य दृष्टि से भी देखा जा सकता है। पांच वर्षों में ४,८०० करोड़ रुपए व्यय करने की जो योजना बनाई गई है उसमें से लगभग १,००० करोड़ रुपए, शिक्षण, स्वास्थ्य, वैज्ञानिक अनुसन्धान और राष्ट्रीय विस्तार जैसे विकास कार्यों के प्रसार के लिए, चालू व्यय के रूप में, खर्च किए जाएंगे। इस प्रकार के व्ययों का परिणाम उत्पादक साधनों के रूप में प्रकट नहीं होता, और इस कारण ही इन व्ययों को विनियोगेतर व्यय मानने की परम्परा पड़ चुकी है। इस प्रकार के व्यय को चालू साधनों में से ही करना पड़ता है। इसलिए ४,८०० करोड़ रुपए की योजना में विनियोग-व्यय का भाग ३,८०० करोड़ रुपए ही रह जाता है और उसकी पूर्ति ऋण लेकर की जा सकती है। जो अर्थ-व्यवस्था विकसित हो रही हो और जिसमें पूंजी निर्माण पर व्यय जल्दी-जल्दी बढ़ते जा रहे हों, उसमें वस्तुतः उचित यही होता है कि कुछ व्ययों की पूर्ति नए

टैक्स लगाकर की जाए। इस सिद्धान्त पर प्रथम योजना की रिपोर्ट में भी बल दिया गया था, और अब फिर बल देने की आवश्यकता है।

१४. योजना के लिए आवश्यक पूंजी एकत्र करने के लिए जो उपाय सोचे गए हैं, उनके अनुसार आय के चालू खातों की बचत केवल ८०० करोड़ रुपए बैठती है, और इसकी तुलना में योजना के चालू खातों का व्यय १,००० करोड़ रुपए बैठ जाता है। रेलें १५० करोड़ रुपए का जो योग देंगी उसे भी चालू राजस्व-खातों का ही भाग समझना चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि योजना के चालू खातों में व्यय तो १,००० करोड़ रुपए का हो जाएगा और चालू खातों से आय केवल ९५० करोड़ रुपए की होगी। इस प्रकार योजना पर ३,८०० करोड़ रुपए का जो व्यय होगा उसकी पूर्ति के लिए सरकारी बचत तो कुछ होती नहीं, व्यय ५० करोड़ रुपए का हो जाता है। दूसरे शब्दों में, ३,८०० करोड़ रुपए की सारी पूंजी का निर्माण—बल्कि इससे कुछ अधिक पूंजी—निजी बचतों द्वारा ही पूरी करनी होगी। जो ८०० करोड़ रुपए विदेशों से मिलने का अन्दाजा किया गया है उसे यदि सर्वथा पृथक राशि माना जाए—क्योंकि वह विदेशी साधनों की बचत होगी—और ब्रिटेन में एकत्र पाउण्ड-पावने में से ली जाने वाली २०० करोड़ रुपए की राशि को भी इसमें जोड़ लिया जाए, तो जनता की निजी बचत में से एकत्र करके जो धनराशि सरकारी विनियोग-खाते में डालनी पड़ेगी वह २,८५० करोड़ रुपए बैठेगी। यदि यह भी मान लें कि ४०० करोड़ रुपए की जिस राशि की पूर्ति का अभी कोई उपाय नहीं सोचा गया वह आगे चलकर सरकारी बचत से ही पूरी हो जाएगी तो भी, सरकारी उपयोग में लाई जाने वाली निजी बचत का परिमाण २,४५० करोड़ रुपए होना चाहिए।

१५. तो क्या यह मानकर चलना तर्क-संगत होगा कि निजी बचत से २,४५० करोड़ रुपए सरकारी कोष में उपयोग करने के लिए मिल जाएंगे? इस प्रसंग में यह स्पष्ट हो जाता है कि बाजार के ऋण, छोटी-छोटी बचतों और घाटे की वित्त-व्यवस्था में अन्तर का कोई विशेष महत्व नहीं है। ये सब स्वेच्छा से या मूल्य ऊंचे करके विवशता से, निजी बचत को सरकारी कोष की दिशा में मोड़ देने के उपाय मात्र हैं। निजी बचत सरकारी कोष में किस प्रकार और कितनी पहुंचती है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि जनता अपने धन को, नकद, सरकारी हुण्डियों, सेविंग्स सर्टिफिकेटों अथवा बैंकों में जमा आदि किस रूप में रखना पसन्द करती है। यदि सरकार को मिलने वाली राशि पर्याप्त हो तो इस बात का महत्व अधिक नहीं कि उसका रूप—सरकारी ऋण, सेविंग्स सर्टिफिकेट या नकदी नोटों आदि में से—क्या है। इसलिए प्रथम विचारणीय बात यह है कि क्या जनता की निजी बचत, उसके निजी विनियोग की आवश्यकता से इतनी अधिक हो सकेगी जितनी कि सरकार को आवश्यकता है। इन अर्थों में निजी बचत को पर्याप्त तभी माना जा सकेगा जब कि लोगों के व्यय पर लगाए हुए आवश्यक प्रतिबन्धों पर भली प्रकार अमल होने लगेगा। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ यह है कि करों अथवा सरकारी उद्योगों के लाभ के रूप में सरकार को प्राप्त होने वाली जनता की बचत का परिमाण जितना कम होगा, उतना ही उसके (जनता के) व्यय को अभीष्ट सीमा में रखने के लिए अन्य उपायों का अवलम्बन करने की आवश्यकता अधिक होगी।

१६. यदि जनता की बचत को अभीष्ट सीमा तक बढ़ाने के उपाय न किए जाएंगे, तो वित्तीय साधनों को, यहां निर्दिष्ट परिमाण में, अपने लिए संगृहीत करने के जो भी प्रयत्न सरकार करेगी उन सबका परिणाम अनिवार्य रूप से मुद्रा-स्फीति के रूप में प्रकट होगा—मुद्रा-स्फीति के प्रकट लक्षण यही तो होते हैं कि लोगों की बचत सरकारी कोष में तो कम

पहुंचती है और उनके हाथ में जो अपेक्षाकृत अधिक नकद धन रह जाता है उसे व्यय करने का प्रलोभन नाना दिशाओं में होने लगता है और वही उपभोग्य वस्तुओं का बाजार ऊंचा उठा देने का कारण बन जाता है। इस प्रसंग में यह बतला देना भी उचित है कि बचत बढ़ाने की नीति को सफल बनाने के लिए आवश्यक दो प्रारम्भिक उपाय मुद्रा-स्फीति के कारणों को नियन्त्रण में रखना और मुद्रा की स्थिरता में जनता का विश्वास बनाए रखना है। जनता से ऋण लेने के सम्बन्ध में सरकार को प्रथम योजना के पहले और पिछले वर्षों में जो अनुभव हुए, उनकी एक-दूसरे से भिन्नता यह भली भांति प्रकट कर चुकी है कि ऋण लेने और बचत बढ़ाने की नीति अत्यधिक सफल तभी होती है जब कि लोगों का सरकार की वित्तीय स्थिरता में विश्वास होता है। तब, एक तो सट्टेबाजी के अवसर कम रह जाते हैं और दूसरे जनता का सरकारी मुद्रा के प्रति दृष्टिकोण अनुकूल रहता है।

घाटे की वित्त-व्यवस्था

१७. अब हमारे सामने यह प्रश्न आता है कि घाटे की वित्त-व्यवस्था कितनी और किस सीमा तक की जा सकती है। प्रथम योजना के विवरण में घाटे की वित्त-व्यवस्था का अर्थ यह बतलाया गया था कि सरकार को करों, सरकारी उद्योग-व्यवसायों की आमदनी, सार्वजनिक ऋणों, जमा-खातों और अन्य विविध सूत्रों से जो नकद आय हो, उससे व्यय का अधिक हो जाना। 'घाटे की वित्त-व्यवस्था' की यह परिभाषा दो सिद्धान्तों पर आधारित है। प्रथम सिद्धान्त तो यह था कि घाटे का निर्णय केवल आय के हिसाब को देखकर नहीं, अपितु केन्द्र और राज्य दोनों की सरकारों के राजस्व-खाते और पूंजी-खाते के सब भुगतानों को देखकर करना चाहिए। और दूसरा यह था कि कोई वित्त-व्यवस्था घाटे की वित्त-व्यवस्था है या नहीं, इसका निर्णय करते हुए यह देख लेना चाहिए कि उसके कारण नकद धन का चलन तो नहीं बढ़ जाएगा। इनमें से पहले सिद्धान्त का तो अपवाद कहीं भी नहीं होता। दूसरे के विषय में प्रश्न उठता है कि बजट की किसी कार्रवाई का नकदी (नोटों और रुपए) के चलन पर सीधा और स्पष्ट प्रभाव क्या पड़ेगा, इसका निश्चय केवल उसी कार्रवाई के विषय में कर सकना सम्भव भी है या नहीं। नकद रोकड़ बाकी में से रुपया निकाल लेने और अधिक ऋण ले लेने का फल प्रायः नकदी का परिमाण बढ़ जाने के रूप में प्रकट होता है, और इसलिए इन दोनों कार्रवाइयों को घाटे की वित्त-व्यवस्था का अंग माना जाता है। परन्तु दूसरी कार्रवाई के विषय में प्रश्न हो सकता है कि क्या थोड़ी मियाद के सभी ऋणों से नकदी का परिमाण अवश्य बढ़ जाता है, अथवा केन्द्रीय बैंक, बाजार के व्यापारी बैंकों और जनता से ऋण लेने में कुछ भी अन्तर नहीं करना चाहिए? सिद्धान्ततः सरकार द्वारा छोटी और बड़ी दोनों मियादों का ऋण लेने में अन्तर करना चाहिए। जब सरकारी व्यय केन्द्रीय (अर्थात रिजर्व) बैंक से ऋण लेकर किया जाता है, तब प्रत्यक्ष है कि बाजार में नकदी का चलन बढ़ जाता है। सरकारी हुण्डियां को व्यापारी बैंकों द्वारा और सीधे जनता द्वारा खरीद को भी, एक समान नहीं माना जा सकता। नकदी के चलन पर सरकार के ऋण लेने का प्रभाव इस बात पर निर्भर करेगा कि ऋण किससे लिया गया है, और इसलिए सरकार की ऋण लेने की कार्रवाइयों को केवल नकदी के चलन पर प्रभाव की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। इसके अतिरिक्त, सरकारी हुण्डियां सदा उन्हीं व्यक्तियों या संस्थाओं के साथ में नहीं रहतीं जो कि उन्हें पहले-पहल खरीदते हैं। यहां आकर सरकार की अर्थनीति और केन्द्रीय (रिजर्व) बैंक की मुद्रानीति परस्पर रिल-मिल जाती हैं, इस कारण इन दोनों के प्रभावों को एक-दूसरे से पृथक् करके देख सकना कठिन है। अतः

एकमात्र व्यावहारिक मार्ग यह रह जाता है कि कोई ऐसी सरल परिपाटी अपना ली जाए जो विद्यमान परिस्थितियों में इष्ट प्रयोजनों के अधिकतम समीप पहुंचा दे। भारत में साधारणतया सरकार लम्बी मियाद के ऋण केन्द्रीय बैंक से न लेकर, केवल छोटी मियाद के ऋणों के लिए उसका सहारा लेती है, इसलिए रोकड़ बाकी में से कितनी रकम ली गई और चालू ऋणों में कितनी वृद्धि हुई, इन दो बातों को देख लेने से इस बात का खासा अच्छा पता लग जाता है कि बजट का नकदी के चलन पर क्या प्रभाव पड़ा। तो भी इस बात पर हम विशेष बल देना चाहते हैं कि बजट, नकदी और विदेशी मुद्रा से सम्बद्ध सब व्यवहारों का विशिष्ट संदर्भ में सूक्ष्म विश्लेषण करने के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं है।

१८. उदाहरणार्थ, यह स्पष्ट है कि रोकड़ बाकी में जितनी कमी या अल्पकालीन ऋण में जितनी बढ़ती हो उतनी ही मात्रा यदि सुरक्षित विदेशी मुद्रा-कोष से निकाल ली जाए तो सब मिलाकर देश में नकदी के चलन में कोई वृद्धि नहीं होगी। फिर भी, सुगमता इसी में रहती है कि रोकड़ बाकी में कमी और थोड़ी मियाद के ऋण में बढ़ती को, घाटे की वित्त-व्यवस्था माना जाए; और सुरक्षित विदेशी मुद्रा-कोष में न्यूनता का, रोकड़ बाकी में से नकदी निकाल लेने पर जो प्रभाव हो, उसे पृथक दृष्टि से देखा जाए। इस प्रसंग में, इसी प्रकार की एक अन्य समस्या का जिक्र कर देना चाहिए, जो कि केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा अपने रोकड़ बाकी-विनियोग के खातों में बेची हुई हुण्डियों के कारण खड़ी होती है। प्रथम योजना में इस व्यवहार को घाटे की वित्त-व्यवस्था माना गया था। उस समय यह मान लिया गया था कि तब विद्यमान परिस्थितियों में इस बिक्री का बोझ रिजर्व बैंक पर ही पड़ेगा। परन्तु वस्तुतः वैसा हुआ नहीं। जैसा कि पहले बतला चुके हैं, रिजर्व बैंक के पास लम्बी मियाद की जो हुण्डियां थीं वे घट गईं। इसका प्रभाव यह हुआ कि पुरानी हुण्डियों को बेचने से नकदी के चलन का परिमाण बढ़ा नहीं। इस प्रकार एक कल्पना के अनुसार तो सुरक्षित रखी हुई पुरानी हुण्डियां बेचने का अभिप्राय घाटे की वित्त-व्यवस्था हो जाता है, और एक अन्य परिस्थिति में उसका प्रभाव जनता से ऋण लेने के समान होता है। सुरक्षित कोष में से बेची हुई सरकारी हुण्डियों को कोई घाटे की वित्त-व्यवस्था में शामिल करे या नहीं, यह स्पष्ट है कि नकदी के चलन पर घाटे की वित्त-व्यवस्था के प्रभाव का विचार करते हुए, केन्द्रीय बैंक द्वारा सरकारी हुण्डियों की बिक्री जैसी अन्य सम्बद्ध बातों का भी विचार करना ही पड़ेगा। इसके अतिरिक्त, नकदी के चलन में वृद्धि का अन्दाजा लगाते हुए, अन्य कई परिस्थितियों का ध्यान भी रखना पड़ेगा।

१९. अब प्रस्तावित घाटे की वित्त-व्यवस्था का प्रभाव क्या होने की सम्भावना है, इस प्रश्न पर विचार करते हुए १,२०० करोड़ रुपए की घाटे की वित्त-व्यवस्था के मुकाबले में हमें उस २०० करोड़ रुपए को रख लेना चाहिए जो कि पौण्ड-पावने की रोकड़ बाकी में से निकाला जाएगा। शेष १,००० करोड़ रुपए वह राशि है जो कि सरकार अपनी बजट की कार्रवाइयों द्वारा नकदी के चलन में बढ़ा देना चाहती है। इसका एक परिणाम यह होने की सम्भावना है कि बैंक भी अब से अधिक उधार देने लगेंगे और उससे नकदी का चलन और बढ़ जाएगा। परन्तु नकदी के चलन को बढ़ाने की बैंकों की यह सामर्थ्य, एक बात से सीमित हो जाने की सम्भावना है। वह यह है कि भारतीय जनता अपना धन बैंकों में जमा कराने की अपेक्षा, अपने हाथ में नकदी के रूप में रखना पसन्द करती है। इस कारण बैंकों के हाथ में जो नकदी अधिक जाएगी, उसे वे अपेक्षाकृत कम मात्रा में उधार दे सकेंगे। यदि हम यह मान लें कि जो मुद्रा चलन में होगी और जो नकदी बैंकों में जमा की जाएगी, उसके अनुपात में कोई परिवर्तन

नहीं होगा, तो योजना की सारी अवधि में नकदी के चलन में वृद्धि लगभग ६६ प्रतिशत होगी। आशा है कि इसी अवधि में राष्ट्रीय आय में वृद्धि २५ प्रतिशत होगी। इसलिए हम यह मान सकते हैं कि नकदी के चलन में भी इस सीमा तक वृद्धि से कोई हानि नहीं होगी। अर्थ-व्यवस्था में नकदी का व्यवहार बढ़ जाने की भी कुछ गुंजाइश रखनी चाहिए। ज्यों-ज्यों लोगों के रहन-सहन का स्तर ऊंचा होगा और लोग इस स्थिति में आते जाएंगे कि हाथ में अधिकाधिक नकदी रख सकें, त्यों-त्यों नकदी की मांग भी बढ़ती जाएगी। इस सबके पश्चात भी ऊपर नकदी के चलन में जितनी वृद्धि होने का जिक्र किया गया है उसे सीमा से अधिक ही समझना चाहिए।

२०. घाटे की वित्त-व्यवस्था से बैंकों की निजी उद्योग-व्यवसायों को उधार देने की सामर्थ्य बढ़ जाएगी। इसकी आवश्यकता भी है, और एक सीमा तक इसके परिणाम लाभदायक होंगे। परन्तु यह ध्यान रखना पड़ेगा कि उधार अत्यधिक न दिया जाने लगे, क्योंकि उसका मूल्यों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। यह भी ध्यान रखना पड़ेगा कि बैंकों के उधार का दुरुपयोग, सट्टेबाजी को बढ़ाने में न होने लगे जो उत्पादन के लिए अभीष्ट होगा। रिजर्व बैंक को व्यापारी बैंकों के निरीक्षण और नियंत्रण के व्यापक अधिकार प्राप्त हैं। वह चाहे तो बैंकों के उधार देने पर नियंत्रण लगा सकता है और कुछ परिस्थितियों में उनको हिदायतें भी जारी कर सकता है। हमने घाटे की वित्त-व्यवस्था की जो सिफारिश की है, उसके साथ, हमारी राय में, यह ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है कि बैंकों के उधार देने के परिमाण और प्रकार पर नियंत्रण रखा जाए, और उनके द्वारा दिए हुए उधार, और उनके हाथ में विद्यमान नकद रुपए में, आवश्यकतानुसार उचित अनुपात स्थिर रखा जाए। यदि केन्द्रीय बैंक अपनी नीति इस प्रकार की रखेगा तो उससे देश की वित्त-व्यवस्था को एक-सी और स्थिर गति से चलाने में बहुत सहायता मिलेगी।

२१. हमने गत एक अध्याय में बताया है कि घाटे की वित्त-व्यवस्था के अनिष्ट परिणामों को रोकने के लिए क्या-क्या सावधानियां की जानी चाहिएं। यहां उनकी संक्षेप में चर्चा कर देना ही पर्याप्त होगा। एक बड़ी सावधानी यह की जानी चाहिए कि खाद्यान्न को पर्याप्त मात्रा में संग्रह करके रखा जाए जिससे कि मूल्य वृद्धि की संभावना को रोका जा सके। द्वितीय अध्याय में इसे अपनी अर्थ नीति का महत्वपूर्ण अंग माना गया है। द्रुत गति से विकसित होती हुई किसी भी अर्थ-व्यवस्था में मुद्रा-स्फीति की प्रवृत्तियों का पूर्णतः अंत केवल वित्तीय व्यवस्था द्वारा नहीं किया जा सकता। मुद्रा-स्फीति से बचने का सर्वोत्कृष्ट उपाय तो यह है कि उसे होने ही न दिया जाए, परन्तु बहुत बच-बचकर चलने की नीति भी विकास में सदा सहायक नहीं होती। किसी हद तक जोखिम उठानी ही पड़ती है, और उस जोखिम से बचने का निश्चित उपाय यह है कि खाद्यान्न का और कुछ अन्य आवश्यक वस्तुओं का सुरक्षित भंडार अपने हाथ में रखा जाए, जिससे कि जब और जितनी आवश्यकता हो, तब और उतनी मात्रा में बाजार में बिक्री के लिए विद्यमान माल में वृद्धि की जा सके। भारतीय अर्थ-व्यवस्था में खाद्यान्न और वस्त्र के मूल्य का महत्व बहुत अधिक है; और उसमें एकदम वृद्धि को सभी उपलब्ध उपायों द्वारा रोकना अत्यधिक आवश्यक है। जब तक मूल्य उचित स्तर पर रहेंगे तब तक साधारण जनता के रहन-सहन का व्यय नियंत्रण में रहेगा। अन्य वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि का महत्व उतना नहीं है, फिर भी किसी भी वस्तु के मूल्य में अत्यधिक वृद्धि से यह भय हो ही जाता है कि साधनों का उपयोग कहीं अल्प महत्व के कामों में न होने लगे। परन्तु इस परिस्थिति का निवारण आवश्यक कार्रवाई के द्वारा किया जा सकता है। मुद्रा-स्फीति को रोकने का एक दूसरा उपाय

यह है कि खपत में अत्यधिक वृद्धि को रोकने और घाटे की वित्त-व्यवस्था के कारण होने वाले भारी मुनाफों या अकस्मात ही हो जाने वाली आमदनी को समेट लेने के लिए तुरन्त ही कर लगा दिए जाए। खपत को सीमा से आगे न बढ़ने देने और दुर्लभ वस्तुओं तथा उत्पादन के दुर्लभ साधनों का उपयोग कम करने के लिए, नियंत्रण का उपयोग अन्तिम उपाय के रूप में ही किया जा सकता है—इसमें वस्तुओं का 'राशन' कर देना और 'कोटा' बांध देना भी शामिल हैं। परन्तु अब तक का अनुभव यह है कि इस प्रकार के नियंत्रणों का, विशेषत: नित्यप्रति काम आने वाली वस्तुओं का नियंत्रण करने का उपाय ऐसा नहीं है कि उसका उपयोग बहुत अधिक समय तक प्रभावशाली रूप से किया जा सके। इसलिए यह और भी आवश्यक हो जाता है कि पहले अन्य सावधानियों और उपायों का प्रयोग पूर्णतया करके देख लिया जाए। योजना को सीमित कर देने की बात पर विचार, अत्यन्त विषम परिस्थितियों में ही किया जा सकता है।

राज्य सरकारों के साधन

२२. अब तक हमने केन्द्र और राज्य सरकारों के साधनों पर विचार योजना के समस्त व्यय—४,८०० करोड़ रुपए—की दृष्टि से किया। अब हम राज्य सरकारों के साधनों का पृथक विश्लेषण करते हैं। इस अध्याय के अन्त में, परिशिष्ट १ में, एतद्विषयक ज्ञातव्य दिया गया है, और निम्नलिखित तालिका में संक्षेप में यह दिखलाया गया है कि 'क' और 'ख' भागों के राज्य अपनी-अपनी योजनाओं में कितना-कितना वित्तीय योग दे सकेंगे :

'क' और 'ख' भाग के राज्यों के वित्तीय साधन

(करोड़ रुपए)
१९५६-६१

——	'क' भाग के राज्य	'ख' भाग के राज्य	योग
१. योजना का परिमाण	१५६७·२	५३५·४	२१०२·६
२. राजस्व-खाते के साधन	३१२·३	२४·४	३३६·७
(क) करों की वर्तमान दर से राजस्व में बचत	११५·३	—१७·५	९७·८
(ख) नए कर	१७२·०	४४·०	२१६·०
(ग) केन्द्र से मिलने वाला नए करों का भाग	४९·१	८·१	५७·२
—घटाइए नये सार्वजनिक ऋणों का व्याज	२४·१	१०·२	३४·३
३. पूंजी-खातों के साधन	३७७·३	१०८·८	४८६·१
(क) जनता से लिये हुए नए ऋण (समस्त)	२१०·०	९०·०	३००·०
(ख) छोटी बचतें	१५८·५	२१·५	१८०·०

(ग) अन्य प्राप्तिया (शुद्ध*) ...	८·८	(—) २·७	६·१
राजस्व और पूंजी-खातों का योग	६८६·६	१३३·२	८२२·८
साधनों में कमी	८७७·६	४०२·२	१२७६·८

इससे प्रकट है कि ये राज्य, करों की वर्तमान दरों के आधार पर अपने साधनों में से बचा कर जो राशि दे सकते हैं वह १०० करोड़ रुपए से कम है। सब राज्यों के जिम्मे, अतिरिक्त करों के द्वारा २२५ करोड़ रुपए की वसूली लगाई गई है। उसमें से इन राज्यों का योग २१६ करोड़ रुपए बैठता है। केन्द्रीय सरकार अतिरिक्त करों के द्वारा जो पूंजी एकत्र करेगी उसमें से इन राज्यों को ५७ करोड़ रुपए मिलने की सम्भावना है। जनता से लिए हुए ऋण पर इन राज्यों को जो व्याज देना पड़ेगा उसे घटाने के पश्चात भाग 'क' और 'ख' राज्यों के समस्त साधनों का जोड़ लगभग ३३७ करोड़ रुपए होता है। द्वितीय योजना की अवधि में राज्य सरकारों द्वारा जनता से लिये जाने वाले ऋणों की सीमा ३०० करोड़ रुपए रखी गई है। यह इस राशि का मोटा हिसाब है। इससे जो ऋण चुकाने पड़ेंगे उनका जोड़ लगभग ३५ करोड़ रुपए है। इस प्रकार राज्यों को ऋणों से जो राशि मिलेगी वह २६५ करोड़ रुपए रह जाती है। इसकी तुलना में, केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा लिये जाने वाले समस्त ऋणों की राशि ७०० करोड़ रुपए रखी गई है। आशा है कि राज्य सरकारों को छोटी-छोटी बचतों से १८० करोड़ रुपए मिलेंगे। पूंजी-खातों में राज्य सरकारों को जो अन्य प्राप्तियां होंगी, उन्हें मिलाकर इस हिसाब में राज्यों के साधनों का योग ४८६ करोड़ रुपए हो जाने की संभावना है। इस प्रकार 'क' और 'ख' भाग के राज्यों के साधनों का योग लगभग ८२३ करोड़ रुपए हो जाने की आशा है। इसके विपरीत, योजना पर उनके भाग का व्यय २,१०० करोड़ रुपए से ऊपर रखा गया है।

२३. योजना में 'ग' भाग के राज्यों, अण्डमान तथा निकोबार द्वीपसमूहों, उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सियों और पाण्डिचेरी का अनुमानित व्यय लगभग १२५ करोड़ रुपए है। इस व्यय की पूर्ति के लिए 'ग' भाग के राज्य प्रायः कुछ नही दे सकेंगे। प्रत्युत, उनमें से कइयों के राजस्व-खातों की कमी तक को केन्द्रीय सरकार को ही पूरा करना पड़ता है। ऐसा सुझाया गया है कि 'ग' भाग के राज्यों में, योजना के ५ वर्षों में, ६ करोड़ रुपए के नए कर लगाए जाए। उनमें छोटी बचतों से जो राशि एकत्र होगी, उस पर उन्हें केन्द्रीय सरकार की ओर से जो ऋण दिया जाएगा, वह अन्दाजन २० करोड़ रुपए होगा। सब मिलाकर स्थिति यह है कि इन राज्यों और ऊपर निर्दिष्ट अन्य प्रदेशों की योजना का सारा व्यय केन्द्र को ही उठाना पड़ेगा।

२४. इससे स्पष्ट हो जाता है कि राज्यों के सब साधन मिलाकर भी वे आवश्यकता से बहुत कम रहते हैं—सारी आवश्यकता का लगभग ६० प्रतिशत कम बैठते हैं। इस कारण केन्द्र को राज्यों के लिए बहुत बड़ी मात्रा में साधन जुटाने पड़ेंगे। यह ध्यान रखना चाहिए,

*इन प्राप्तियों में प्रॉविडेन्ट फण्डों में एकत्र राशियों, ऋणों और पेशगी दी हुई रकमों की वसूली, ऋण को कम करने या उससे बचने के लिए चालू आय में से ली हुई राशियों और पूंजी-खाते की अन्य विविध प्राप्तियों की गणना करके; उनमें से पूंजी-खाते में लिये जाने वाले व्यय, ऋणों की अदायगी और जमींदारों तथा जागीरदारों को दिया गया मुआवजा आदि घटा दिए गए हैं।

कि स्वयं केन्द्र के साधन भी सीमित हैं, और इसलिए योजना की जितनी बड़ी कल्पना की गई है उतनी को पूरा करने के लिए आवश्यक होगा कि राज्य सरकारें यथाशक्ति अधिक से अधिक साधन प्रदान करें ।

२५. राज्य सरकारों द्वारा २२५ करोड़ रुपए के नए कर लगाए जाने का जो लक्ष्य रखा गया है वह उनके साथ काफी विचार करके और कर जांच आयोग की सिफारिशों पर अमल करने से जो प्राप्ति हो सकती है उसे ध्यान में रखकर ही किया गया है। जो नए कर लगाए जाएंगे उनमें जमीन-लगान पर 'सरचार्ज', कृषि की आय कर की दर में वृद्धि और उसके क्षेत्र का विस्तार, सम्पत्ति कर के क्षेत्र का विस्तार, स्थानीय संस्थाओं द्वारा सम्पत्ति के बेचने पर कर, और बिक्री-कर में वृद्धि तथा उसका विस्तार इत्यादि भी सम्मिलित हैं। जहां तक केन्द्र का सम्बन्ध है, उसने कर-जांच आयोग की कुछ सिफारिशों पर अमल १९५५-५६ में ही आरम्भ कर दिया था। करों की वर्तमान दरों के आधार पर योजना के लिए उपलब्ध साधनों का अन्दाजा लगाते हुए इन सिफारिशों के अमल से होने वाली आय को भी शामिल कर लिया गया था। १९५६-५७ के केन्द्रीय बजट में जो कर लगाये गये हैं उनसे लगभग ३५ करोड़ रुपए का अतिरिक्त वार्षिक राजस्व होने की संभावना है। इस प्रकार ५ वर्षों में केन्द्र द्वारा २२५ करोड़ रुपए के नए कर लगाए जाने का जो लक्ष्य रखा गया है उसकी पूर्ति के लिए एक बड़ा कदम उठाया जा चुका है। जैसा कि आगे बतलाया गया है कि इस लक्ष्य को और ऊंचा उठाने की आवश्यकता है। परन्तु इस प्रसंग में, हम इस बात पर विशेष बल देना चाहते हैं कि राज्य सरकारों से नए करों के द्वारा जो २२५ करोड़ रुपए एकत्र करने की आशा रखी गई है उसकी पूर्ति के लिए उन्हें कार्रवाई यथाशीघ्र करनी चाहिए। इस २२५ करोड़ रुपए में से कोई १६६ करोड़ रुपए इकट्ठा करने के उपाय, राज्य सरकारों के साथ विस्तारपूर्वक चर्चा करके, निश्चित किए जा चुके हैं। कुछ राज्यों के साथ अतिरिक्त उपायों के विषय में चर्चा अभी चल रही है। राज्य सरकारें जिन नए करों के द्वारा २२५ करोड़ रुपए एकत्र करेंगी, उनका कुछ विवरण इस प्रकार है :

	(करोड़ रु०)
जमीन लगान	३७·०
कृषि पर आय कर	१२·०
सुधार उपकर (लेवी)	१६·०
सिंचाई दर	११·०
बिक्री-कर	११२·०
बिजली-कर	६·०
मोटर-गाड़ियों पर कर स्टाम्प और अदालती फीस आदि	१४·०
अन्य (मुख्यतया स्थानीय सम्पत्ति कर)	१७·०
योग ...	२२५·०

इस विवरण से ज्ञात होगा कि जो नए कर लगाने का विचार किया गया है उन्हें लगाते हुए दूरगामी किसी नई दिशा को अपनाने के स्थान पर वर्तमान दिशाओं में ही आगे बढ़ने की बात सोची गई है ।

२६. पहले चर्चा हो चुकी है कि सरकारी आय को विशेष रूप से बढ़ाने का प्रयत्न किए जाने की आवश्यकता है, जिससे कि उसका उपयोग पूंजी निर्माण में हो सके। इससे स्पष्ट है कि प्रत्येक सरकारी प्राधिकारी को कम से कम अपना आय-व्यय संतुलित तो कर ही लेना चाहिए। कुछेक व्यय अब तक राजस्व-खाते में से किये जाते हैं, उन्हें पूंजी-खाते में डाला जा सकता है। खातों का यह वर्गीकरण अब तक सब राज्यों में एक-सा नहीं है। प्रश्न के इस पहलू पर विचार किया जा रहा है। अब राजस्व और पूंजी-खातों के वर्गीकरण के सम्बन्ध में कोई सम्मत निश्चय हो जाएगा तब कर लगाने वाला प्रत्येक सरकारी प्राधिकारी अपनी आवर्तक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, आय की प्राप्ति के उपाय खोज सकेगा। संविधान के आदेशानुसार, प्रति ५ वर्ष पीछे नियुक्त किया जाने वाला वित्त आयोग जो राशियां केन्द्र द्वारा राज्यों को दिए जाने की सिफारिश करता है वह सब परिस्थितियों पर विचार करके ही करता है। इस सहायता के अतिरिक्त, राज्य सरकारों के बजटों में किसी भी प्रकार के बड़े या निरन्तर घाटे का समर्थन, किसी सिद्धान्त या व्यावहारिक दृष्टि के आधार पर, नहीं किया जा सकता।

एक विकासशील अर्थ-व्यवस्था में सार्वजनिक बचत का भाग

२७. अब तक योजना की आवश्यकताओं के लिए केन्द्र और राज्यों के वित्तीय साधनों पर जो विचार किया गया है उससे एक महत्वपूर्ण परिणाम यह निकलता है कि सरकार की जो नई-नई जिम्मेदारियां बढ़ती जा रही हैं, उन्हें वह सफलतापूर्वक तभी उठा सकती है जब कि सब सरकारी प्राधिकारी सार्वजनिक बचत को बढ़ाने का यत्न करें। योजना के अनुसार, सरकार को बहुत व्यापक क्षेत्र में नए कार्यों के आरम्भ और प्रबन्ध करने का उत्तरदायित्व उठाना पड़ेगा, इसलिए इसके साथ ही उसमें आवश्यक वित्त जुटाने की भी क्षमता होनी चाहिए। वर्तमान परिस्थिति में एक बड़ी कमजोरी यह है कि सरकार के पास अपने ऐसे साधन बहुत कम बचते हैं जिनका उपयोग वह नए कार्यों में विनियोग के लिए कर सके, इसलिए उसे ऋण लेकर अथवा घाटे की वित्त-व्यवस्था करके, जनता की निजी बचत को ही, इस कार्य में लगाने का सहारा लेना पड़ेगा। प्रथम योजना की अवधि में केन्द्र और राज्य सरकारों ने, (विकास कार्यों के अतिरिक्त) अपने कार्यों में विनियोग के लिए जनता की जो निजी बचत एकत्र की थी वह लगभग २५० करोड़ रुपए थी। इसका बड़ा भाग, योजना के प्रथम दो वर्षों में ही उपलब्ध हो गया था, क्योंकि उस समय निर्यात-करों से बड़ी राशि एकत्र हुई थी। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, द्वितीय योजना की अवधि में योजना की आवश्यकता पूर्ति के लिए चालू राजस्व से जो राशि दी जा सकेगी वह वस्तुतः १००० करोड़ रुपए की उस राशि से भी कुछ कम है जो कि चालू व्ययों की पूर्ति के लिए खर्च करनी पड़ेगी। इससे पता लगता है कि विनियोग के बड़े कार्यक्रम को पूरा करने की सरकार की सामर्थ्य वस्तुतः कितनी सीमित है।

२८. इस कारण एक अवधि तक केन्द्र और राज्यों के कर लगाने के साधनों में पर्याप्त वृद्धि ही आवश्यक और संभव है। यह भली-भांति विदित है कि भारत में राष्ट्रीय आय का जो भाग सरकार को करों के द्वारा प्राप्त होता है वह केवल ७·५ प्रतिशत के लगभग है। यह इंगलैंड और अमेरिका जैसे देशों की तुलना में तो बहुत कम है ही, अनेक अविकसित देशों की अपेक्षा भी कम है। कर जांच आयोग ने इस ओर ध्यान आकर्षित किया है कि यह भाग कई वर्षों से अपरिवर्तित चला आ रहा है और यदि कल्याणकारी राज्य की विविध आवश्यकताओं को भली-भांति पूरा करना अभीष्ट हो तो कर प्रणाली को फैलाना और विशद करना पड़ेगा।

द्वितीय योजना की वित्तीय आवश्यकताएं कर-जांच आयोग की कल्पनाओं से कहीं अधिक हैं। उन्हें घाटे की वित्त-व्यवस्था द्वारा पूरा करना जोखिम से खाली नहीं है, और योजना के व्यय को कम करना इष्ट नहीं है, इसलिए हमारी सिफारिश है कि योजना की अवधि में अतिरिक्त कर लगाने के जो लक्ष्य रखे गये हैं, उन्हें और ऊंचा करने की संभावनाओं पर विचार किया जाए योजना में ४०० करोड़ रुपए की जो कमी दिखाई गई है उसे सरकारी व्यापार, वित्तीय एकाधिकार और सरकारी उद्योग व्यवसायों के लाभ आदि के द्वारा पूरा किया जाए। एक ओर तो योजना की आवश्यकताओं और दूसरी ओर ऋण लेने तथा घाटे की वित्त-व्यवस्था पर जितना भरोसा किया जा रहा है उनकी तुलना करने के पश्चात अनिवार्य परिणाम यह निकलता है कि अतिरिक्त करों के लक्ष्य को ४५० करोड़ रुपए से उठाकर लगभग ८५० करोड़ रुपए तक पहुंचा देना चाहिए। इससे न केवल भारी मुद्रा-स्फीति के दुष्परिणाम कम हो जाएंगे, साथ ही भविष्य की दृष्टि से, योजना के सरकारी क्षेत्र में विनियोग की सामर्थ्य बढ़ाने की ओर वह एक सही कदम भी होगा।

२९. कर बढ़ाने का प्रयत्न किन दिशाओं में किया जाए, इस पर सावधानी से विचार करना पड़ेगा। पिछले एक अध्याय में इनमें से जिन कुछेक की चर्चा हो चुकी है वे सम्पत्ति पर कर, उपहारों पर कर, और आय कर का क्षेत्र विस्तृत करके उसमें सम्पत्ति के क्रय-विक्रय से होने वाले लाभों को शामिल कर लेना आदि हैं। एक सुझाव यह भी दिया गया है कि कम से कम अधिक आय वाले वर्गों के लिए तो वैयक्तिक कर लगाने का आधार, आय को न रखकर, व्यय को कर दिया जाए। कर प्रणाली को इन दिशाओं में सुधार देने और दृढ़ कर देने से सम्भव है कि न केवल सरकारी आय में वृद्धि हो जाए अपितु अब तक कर से बच जाने के जो तरीके हैं वे भी समाप्त हो जाएं। करों की इस चोरी को केवल शासन को दृढ़ करके समाप्त नहीं किया जा सकता। इसके लिए कर लगाने के आधार और शैली में ही सुधार करने की आवश्यकता है। निस्संदेह यह मानना पड़ेगा कि कर लगाने की भी सीमाएं हैं। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट है कि समाज व्यवस्था में ऐसा परिवर्तन करना पड़ेगा, जिससे कि माल बेचने और जनता की अन्य सेवाएं करने से जो लाभ होते हैं वे सीधे सरकारी कोष में पहुंच जाएं। अपने विकास कार्यों के लिए भारत की अपेक्षा अन्य विकसित कई देश इसी प्रकार के उपायों का अवलम्बन करके आवश्यक साधन एकत्र कर रहे हैं। इन साधनों में से कुछ ये हैं—सरकारी उद्योग-व्यवसायों में तैयार हुई वस्तुओं का यथोचित मूल्य नियत करना, सरकार द्वारा व्यापार करना, और कुछ क्षेत्रों पर वित्तीय एकाधिकार कर लेना इत्यादि। समाजवादी आधार पर समाज के संगठन का एक स्वाभाविक परिणाम—यदि वह पूर्वापेक्षित नहीं है तो यह होता है कि जिसे हम सार्वजनिक बचत कहते हैं, उसमें वृद्धि हो जाती है।

३०. अन्त में यह भी बता देना चाहिए कि योजना के सरकारी क्षेत्र में इतने अधिक विनियोग कार्यक्रमों को पूरा करने में यह सन्निहित है कि योजना के और योजना से इतर व्ययों में अधिकतम मितव्ययिता से काम लिया जाएगा। योजना से इतर कई मदों में वृद्धि अनिवार्य हो सकती है, परन्तु योजना के अलावा विकास योजनाओं को शुरू करने के प्रलोभन से दृढ़तापूर्वक बचकर चलना होगा। इस पर भी कुछ आवश्यकताएं बाद में पैदा होंगी परन्तु उन्हें पंचवर्षीय योजना के ढांचे में ही, वार्षिक आगा-पीछा करके, पूरा कर लेना होगा। इस सन्दर्भ में मितव्ययिता का सीमित अभिप्राय केवल खर्च कम करना नहीं है। अनुभव से प्रकट हो चुका है कि केवल व्यय कम करने मात्र से कोई विशेष परिणाम नहीं निकलता। महत्वपूर्ण

बात यह है कि सीमेंट और लोहे जैसे दुर्लभ साधनों को व्यय करने में अत्यन्त सावधानी रखी जाए और जनशक्ति तथा अन्य उपलब्ध साधनों का अधिकतम उपयोग इस प्रकार किया जाए कि फल की प्राप्ति शीघ्र हो जाए। इन सब बातों को ध्यान में रखकर ही राष्ट्रीय विकास परिषद ने हाल में एक उच्च-अधिकार सम्पन्न समिति नियुक्त की है, जो विकास कार्यों की प्रगति को देखती रहेगी, जिससे कि कार्य यथासम्भव अधिक मितव्ययिता और कुशलता से सम्पन्न हो सके।

निजी क्षेत्र में विनियोग

३१. योजना के सरकारी क्षेत्र में ३,८०० करोड़ रुपए के विनियोग कार्यक्रम के अतिरिक्त, उसके निजी भाग में विनियोग के लिए २,४०० करोड़ रुपए की आवश्यकता का अन्दाजा लगाया गया है। इन आवश्यकताओं का मोटा विवरण तीसरे अध्याय में दिया जा चुका है। विचारणीय प्रश्न यह है कि सरकार जिन साधनों का उपयोग कर लेगी, उनके पश्चात निजी भाग में विनियोग करने के लिए आवश्यक वित्तीय साधन उपलब्ध हो सकेंगे या नहीं। एक प्रकार से तो इस प्रश्न का उत्तर इस विचार मात्र से मिल चुका है कि समस्त विनियोग के लिए आवश्यक वित्तीय साधन वचत के द्वारा एकत्र किए जा सकेंगे। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, समस्या यह है कि द्वितीय योजना आरम्भ करने के समय निजी वचत का जो परिमाण राष्ट्रीय आय का लगभग ७ प्रतिशत था उसे बढ़ाकर योजना की समाप्ति के समय तक १० प्रतिशत किस प्रकार किया जाएगा। यदि आगामी ५ वर्षों में निजी वचत इतनी कर ली गई तो विदेशी सूत्रों से १,१०० करोड़ रुपए मिल जाने से काम चल जाएगा। योजना में निजी वचत बढ़ाने की जो कल्पना की गई है वह किसी भी प्रकार बहुत अधिक नहीं है। इसमें जिस कम से कम वृद्धि की गुंजाइश है वह २० प्रतिशत से कुछ ही अधिक बैठती है। इसलिए इस पैरे में जो प्रश्न उठाया गया है एक प्रकार से उसका उत्तर 'हां' में ही है।

३२. परन्तु यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि विनियोग के लिए अपेक्षित राशि और संभावित वचत को सर्वथा समान मान लेने मात्र से इस प्रश्न का पूरा-पूरा उत्तर नहीं मिलता। व्यावहारिक दृष्टि से समस्या यह है कि जितना विनियोग किया जाए वह सब, मूल्यों में वृद्धि और इसी प्रकार की अन्य विषम परिस्थितियां उत्पन्न किए बिना, पूरा हो जाए। इसलिए देखना यह होगा कि अभीष्ट परिणाम की प्राप्ति के लिए जिन उपायों और नीतियों का अवलम्बन किया जा रहा है वे उपयुक्त हैं या नहीं। पहले से ही यह जान लेना बिल्कुल असम्भव है कि आवश्यक वचत हो सकेगी या नहीं। साथ ही पहले से यह बतला देना भी सुगम नहीं है कि वचत में कहां कमी पड़ेगी। एक तर्क यह भी दिया जा सकता है कि सरकारी क्षेत्र में विनियोग के कार्यक्रम के आधार पर क्योंकि निजी क्षेत्र से लिये हुए ऋण होंगे, इसलिए वचत में कमी का प्रभाव निजी क्षेत्र की अपेक्षा सरकारी क्षेत्र पर ही पड़ने की सम्भावना अधिक रहेगी। दूसरी ओर, सार्वजनिक क्षेत्र को दुर्लभ साधनों की उपलब्धि आदि कुछ फायदे आगे भी रहेंगे। यह भी सत्य नहीं है कि निजी क्षेत्र में वचत उन्हीं अवसरों पर होती है जब कि कोई निजी विनियोग करना होता है। इसलिए, दोनों भागों की सापेक्षिक सफलता बहुत कुछ इस पर निर्भर करेगी कि जहां वचत हो वहीं उसको उपयोग कर लिया जाए। इससे स्पष्ट हो जाता है कि पर्याप्त मात्रा में वचत के लिए उपयुक्त आर्थिक और अन्य नीतियों का अवलम्बन करना कितना जरूरी है। इसके साथ ही, यदि आवश्यकता हो तो निजी क्षेत्र के विनियोग के कार्यक्रम में विशेष सरकारी सहायता द्वारा प्राथमिकता का भी निर्णय कर देना चाहिए।

३३. योजना के निजी क्षेत्र के लिए बचत किन सूत्रों से होगी यह बतलाना कठिन है, क्योंकि उस क्षेत्र में जितनी बचत का उपयोग होता है उसका बहुत थोड़ा अंश ही संगठित संस्थाओं द्वारा नियन्त्रित होता है। खेती, व्यापार, भवन-निर्माण और छोटे पैमाने के उद्योगों में जो पूंजी लगती है उसका बहुत बड़ा भाग उन्हीं लोगों अथवा उनके मित्रों और सम्बन्धियों की बचत का होता है जो कि उनके मालिक या संचालक होते हैं। निजी क्षेत्र के इस भाग में साधनों का थोड़ा-सा भी अभाव, विनियोग के लिए धन की अनुपलब्धि के रूप में झट प्रकट हो जाता है। निजी उद्योगों का जो भाग संगठित है, उसके लिए पूंजी के सूत्रों का अन्दाजा अवश्य लगाया जा सकता है, परन्तु उसका आधार भी कुछ मोटी कल्पनाएं ही होंगी। इन व्यवसायों के लिए पूंजी एकत्र करने की परिकल्पना का विवरण उन्नीसवें अध्याय में दिया गया है। इस क्षेत्र के कार्यक्रमों को पूरा करने में सरकार आगे बताये उपायों द्वारा सहायता कर सकती है। कुछ तो पूंजी के अवांछित विनियोग को रोककर—इसके लिए नये पूंजी-विनियोग का तथा आयात-निर्यात का नियन्त्रण करना होगा और नये कारखाने खोलने के लिए 'लाइसेंस' लेने का नियम बनाना पड़ेगा—कुछ करों में परिवर्तन-परिवर्द्धन करके तथा रियायतें देकर, और कुछ इसी प्रयोजन के लिए बनाए गए विविध निगमों द्वारा खास-खास व्यवसायों को वित्तीय सहायता देकर। योजना के सरकारी क्षेत्र के समान, निजी क्षेत्र में भी, पूंजी-विनियोग की प्रगति पर निरन्तर दृष्टि रखनी पड़ेगी और समय-समय पर नीति में आवश्यक परिवर्तन करने पड़ेंगे। संगठित व्यवसायों में विनियोग का स्तर पहले ही पर्याप्त ऊंचा है और पूंजी का बाजार मजबूत होता जा रहा है। इन हालात को देखते हुए ऐसा नहीं लगता कि निजी व्यवसायों को अपने निश्चित विनियोग के लिए पूंजी एकत्र करने में कठिनाई होगी। चालू व्यय के लिए पूंजी जुटाने में तो और भी कम कठिनाई होगी, क्योंकि योजना में घाटे की अर्थ-व्यवस्था से काम चलाने की बात सोची जा रही है। जैसा कि पहले विचार किया जा चुका है, वास्तव में समस्या शायद यह हो कि बैंकों की बहुत अधिक उधार देने की प्रवृत्ति को और पूंजी को सट्टेबाजी में लगने से कैसे रोका जाए।

योजना के लिए विदेशी मुद्रा के साधन

३४. अब हम योजना के लिए विदेशी मुद्रा के साधनों की समस्या पर आते हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना में पूंजी के विनियोग की मात्रा बहुत बढ़ा दी गई है और औद्योगिक-उन्नति पर सबसे अधिक बल दिया गया है। इस कारण विदेशी मुद्रा के साधनों पर अधिक दबाव पड़ने की सम्भावना है। पांच वर्षों की अवधि में हमें कितनी विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पड़ेगी और हम कितनी विदेशी मुद्रा अर्जित करेंगे, इसका ठीक-ठीक अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। कारण यह है कि परिस्थितियां अनेक दृष्टियों से अनिश्चित हैं। चाय, जूट के सामान और कच्चे मैंगनीज आदि भारत से निर्यात होने वाली महत्वपूर्ण वस्तुओं की मांग में बहुत उतार-चढ़ाव होता रहता है, और यदि बरसात में थोड़ा भी अन्तर पड़ जाए तो खाद्यान्न और कच्चे माल का भारी मात्रा में आयात करने की आवश्यकता पड़ सकती है। इसके अतिरिक्त, समय-समय पर व्यापार की शर्तें बदलती रहती हैं। यदि इनमें १० प्रतिशत का भी प्रतिकूल परिवर्तन हो जाए तो एक वर्ष में ८० करोड़ रुपए अधिक के भुगतान की आवश्यकता हो सकती है। वर्ष भर के आयात का रूप निश्चित करना विशेष रूप से कठिन होता है, क्योंकि यह न केवल विकास कार्यक्रम की आवश्यकताओं पर, अपितु इस्पात आदि उन दुर्लभ वस्तुओं की उपलब्धि पर भी निर्भर करता है जो कि विदेशों से मंगानी पड़ती हैं। इन अनिश्चितताओं के होते हुए भी,

यह अन्दाजा कर लेना अत्यन्त आवश्यक है कि विदेशों के साथ हमारा भुगतान संतुलन कैसा रहेगा और उनसे आवश्यक माल खरीदने के लिए हमारे पास पर्याप्त विदेशी मुद्रा होगी या नहीं।

३५. विदेशी मुद्रा की आवश्यकताओं और पांच वर्षों में हम उसे कितना कमा सकते हैं, इसके आकलन में कितनी कठिनाई होती है इस बात का अनुभव हमें प्रथम योजना काल में भली प्रकार हो चुका है। जब (दिसम्बर १९५२ में) प्रथम योजना बनायी गई थी, तब यह अन्दाजा था कि योजना के शेष काल में हमारे देश का भुगतान संतुलन लगभग १८०–२०० करोड़ रुपए प्रति वर्ष रहेगा। परन्तु वस्तुतः इन पांचों वर्षों में (विदेशों से प्राप्त सहायता को छोड़कर) सारा घाटा केवल ५० करोड़ रुपए का रहा—१९५१-५२ में तो १४२ करोड़ रुपए का घाटा हुआ था, परन्तु १९५४-५५ में यह केवल ९ करोड़ रुपए रह गया था, उसकी आंशिक पूर्ति अन्य वर्षों की बचत से हो गई थी। यह अनुकूल परिणाम निकलने का एक बड़ा कारण यह था कि इन वर्षों में देश में खाद्यान्न के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई और विदेशों से खाद्यान्न कम मंगाना पड़ा। प्रथम योजना की अवधि में मशीनें भी विदेशों से अन्दाजे की अपेक्षा कम मंगानी पड़ीं।

३६. नीचे की तालिका में द्वितीय योजना काल में विदेशों के साथ भुगतान-संतुलन का अन्दाजा दिया गया है :

चालू खाते में भारत का भुगतान-संतुलन

(१९५६-५७ से १९६०-६१ तक)

(करोड़ रुपए)

——	१९५६-५७	१९५७-५८	१९५८-५९	१९५९-६०	१९६०-६१	१९६०-६१ तक के पांच वर्षों का औसत	१९६०-६१ तक के पांच वर्षों का योग
१. निर्यात (जहाज पर लादने तक के खर्च मिलाकर)	५७३	५८३	५९२	६०२	६१५	५९३	२,९६५
२. आयात (भारत के तट तक पहुंचने का खर्च मिलाकर)	७८३	८८६	९९०	८९५	७८६	८६८	४,३४०
३. व्यापार संतुलन (१–२)	−२१०	−३०३	−३९८	−२९३	−१७१	−२७५	−१,३७५
४. अदृश्य प्राप्तियां (सरकारी सहायता छोड़कर)	+६२	+५५	+५१	+४६	+४१	+५१	+२५५
५. चालू खाते के संतुलन का योग (३+४)	−१४८	−२४८	−३४७	−२४७	−१३०	−२२४	−१,१२०

इस प्रकार पांच वर्षों में चालू खाते में कुल मिलाकर लगभग १,१०० करोड़ रुपए का घाटा बैठता है। ऊपर की तालिका में आयात-निर्यात का जो अन्दाजा दिया गया है, वह स्वभावतः बहुत मोटा है। परन्तु उससे इतना तो प्रकट हो ही जाता है कि घाटे का अधिक भाग योजना के दूसरे और तीसरे वर्षों में होने की संभावना है। योजना के मध्य में घाटा चरम सीमा पर पहुंच जाने का कारण यह है कि आरम्भ के वर्षों में इस्पात, मशीनों और अन्य सामग्री का आयात होने की जो संभावना है वह योजना के लगभग आधी पूरी होने के समय तक अपनी ऋण सीमा पर पहुंच जाएगी। इस्पात के जो नए कारखाने बन रहे हैं और रेलों के सुधार और विस्तार के जो कार्य हो रहे हैं उन्हें योजना के अन्तिम वर्ष से पूर्व ही पूर्ण कर लेना होगा। जब ये और अन्य कार्यक्रम पूरे हो जाएंगे तब विदेशी भुगतान संतुलन पर से बोझ घट जाएगा।

३७. इससे हमारे सामने जो चित्र उभरता है वह यह है कि जहां निर्यात १९५६-५७ के अनुमानित स्तर ५७३ करोड़ रुपए से धीरे-धीरे बढ़ते हुए १९६०-६१ में ६१५ करोड़ रुपए तक पहुंचेगा, वहां प्रथम ४ वर्षों में आयात बहुत बढ़ जाएगा और योजना के पांचों वर्षों में प्रतिकूल व्यापार संतुलन की मात्रा १,३७५ करोड़ रुपए तक, अर्थात औसतन २७५ करोड़ रुपए प्रति वर्ष तक पहुंच जाएगी। अदृश्य रूप में जो सहायता मिलेगी उसको जोड़ देने पर भी चालू खाते में घाटे की समस्त मात्रा १,१२० करोड़ रुपए, अर्थात २२४ करोड़ रुपए वार्षिक निकलती है।

३८. निर्यात, आयात और अदृश्य विदेशी सहायता का जो अन्दाजा लगाया गया है, उसकी तफसील में जाने से पहले उन दो कल्पनाओं की चर्चा कर देना आवश्यक है जिनके आधार पर ये अन्दाजे लगाए गए हैं: (क) प्रथम यह कि आगामी पांच वर्षों में व्यापार की शर्तें औसतन वही रहेंगी जो १९५५-५६ (पहले ९ महीनों) में रही थीं; और (ख) द्वितीय यह कि मुद्रा-स्फीति को दृढ़तापूर्वक नियंत्रण में रखा जा सकेगा। व्यापार की अवस्थाओं का देशनांक (१९५२-५३ के अंक को १०० मानकर) १९५५-५६ के पहले ९ महीनों में लगभग १०० रहा था। इसकी तुलना में कोरिया के युद्ध के कारण महंगाई अत्यधिक बढ़ जाने से यह अंक १९५१-५२ में १३३, १९५३-५४ में १०१, और १९५४-५५ में ११० हो गया था। इन अंकों से मोटे रूप में यह स्पष्ट हो जाता है कि हमने व्यापार की अवस्थाओं को प्रकट करने के लिए अपनी गणना का आधार इन वर्षों को क्यों बनाया है। द्वितीय योजना की अवधि में हमने बचत, विनियोग और वित्तीय साधनों के जो अंदाजे लगाये हैं उन सबका आधार यही कल्पना रही है। इस संदर्भ में इस बात को स्पष्ट कर देना बहुत आवश्यक है। भुगतान संतुलन पर मुद्रा-स्फीति का प्रभाव तुरन्त और विशेष रूप से पड़ता है। यदि देश में मूल्य बढ़ने लगें तो विदेशों से अधिक आयात करने की आवश्यकता पड़ जाती है और निर्यात के बढ़ाने में बाधाएं उपस्थित हो जाती हैं। यद्यपि व्यापारिक नीति में थोड़ा-बहुत परिवर्तन करके कुछ समय के लिए इन प्रतिकूल परिणामों को कम किया जा सकता है, तथापि इसमें संदेह नहीं कि मुद्रा-स्फीति के एकदम बढ़ जाने अथवा अधिक समय तक चलने के प्रतिकूल प्रभाव को देश के भुगतान संतुलन पर पड़ने से बहुत देर तक नहीं रोका जा सकता। इसलिए देश की अर्थ-व्यवस्था की स्थिरता और भुगतान संतुलन को अनुकूल बनाए रखने की दृष्टि से मुद्रा-स्फीति को सफलतापूर्वक नियन्त्रण में रखना अत्यन्त आवश्यक है।

निर्यात

३९. नीचे की तालिका में यह दिखाया गया है कि १९५४ और १९५५ की तुलना में द्वितीय योजना काल में निर्यात की प्रधान वस्तुओं से हम कितनी प्राप्ति होने की आशा कर सकते हैं:

व्यापारिक निर्यात

(करोड़ रुपए)

	१९५४	१९५५	योजना का अंतिम वर्ष, १९६०-६१	द्वितीय योजना का वार्षिक औसत	१९५६-६१ तक पांच वर्षों का योग
१. चाय	१३१	११२	१३३	१२७	६३५
२. जूट का माल (सूत और अन्य सामान)	१२२	१२६	११८	१२२	६१०
३. सूती माल (सूत और वस्त्र)	७२	६३	८४	७५	३७५
४. तेल (खनिज तेलों को छोड़कर)	११	३९	२४	२२	११०
५. तम्बाकू	१२	११	१७	१५	७५
६. खालें और चमड़ा (कच्चा, कमाया हुआ और तैयार)	२९	२७	२८	२८	१४०
७. कपास और गूदड़	१९	३५	२२	२२	११०
८. कच्ची धातुएं (लोहे की कतरनें और इस्पात)	२३	२०	२७	२३	११५
९. कोयला और कोक	६	४	३	५	२५
१०. रासायनिक द्रव्य और औषधियां आदि	५	४	५	५	२५
११. छुरी-कांटे आदि धातुओं का सामान, गाड़ियां, बिजली का सामान और अन्य यंत्र-सामग्री	३	४	४	४	२०
१२. अन्य वस्तुएं	१३०	१५१	१५०	१४५	७२५
योग	५९३	५९६	६१५	५९३	२,९६५

द्वितीय योजना की अवधि के ये अन्दाजे १९५५-५६ (पहले ९ महीनों) में प्रचलित मूल्यों के आधार पर लगाए गए हैं, परन्तु १९५४ और १९५५ के अन्दाजे उन वर्षों में प्रचलित मूल्यों के आधार पर हैं। इनसे ज्ञात होगा कि द्वितीय योजना की अवधि में निर्यात से १९५४ की अपेक्षा अधिक प्राप्ति होने की आशा है, और १९६०-६१ में आयात की कमाई, १९५४ की तुलना में ९ प्रतिशत बढ़ जाएगी। द्वितीय योजना के समय हमने निर्यात का अन्दाजा जिन मूल्यों के आधार पर किया है, उनकी अपेक्षा १९५४ में निर्यात किए हुए पदार्थों का मूल्य लगभग

५ प्रतिशत अधिक था। यदि इस तथ्य को ध्यान में रखें तो भी योजना काल में १९५४ की अपेक्षा निर्यात की कमाई में महत्वपूर्ण वृद्धि की आशा की जा सकती है। योजना काल में निर्यात का स्तर १९५५ के निर्यात से विशेष अधिक नहीं बढ़ेगा। इसका बड़ा कारण यह है कि १९५५ में तेल और सूती सामान का निर्यात विशेष रूप से अधिक हुआ था और योजना काल में उसके उतना रहने की संभावना नहीं है। इन दोनों के अतिरिक्त, अन्य वस्तुओं के निर्यात में, १९५५ की अपेक्षा भी विशेष वृद्धि होने की संभावना है।

४०. १९५५ में चाय का निर्यात बहुत घट गया था। उस वर्ष केवल ३६ करोड़ २० लाख पौंड चाय निर्यात हुई थी। उसकी तुलना में १९५४ के निर्यात का परिमाण ४५ करोड़ पौंड था। आशा है कि द्वितीय योजना काल में चाय का निर्यात सुधर जाएगा और १९६०-६१ तक ४७ करोड़ पौंड के लगभग हो जाएगा। योजना के पांच वर्षों में चाय के निर्यात का वार्षिक औसत ४५ करोड़ पौंड का अनुमान है। हाल के वर्षों में चाय के निर्यात-मूल्यों में बहुत घटा-बढ़ी हुई है। १९५४-५५ में इसके मूल्य का देशनांक (आधार १९५२-५३ = १००) १९९ था; इसकी तुलना में १९५३-५४ का देशनांक केवल ११५ था। १९५५-५६ के पहले ९ महीनों में चाय के मूल्य निरन्तर घटते गए। इन महीनों का औसत देशनांक १४९ था। इससे ज्ञात होगा कि हमने चाय के निर्यात से कमाई का अंदाजा १९५५-५६ के मूल्यों के आधार पर करते हुए निर्यात का मूल्य १९५४-५५ की तुलना में बहुत नीचा लगाया है, परन्तु वह उससे पहले के २ वर्षों की अपेक्षा खासा ऊंचा है।

४१. जूट के तैयार सामान का निर्यात १९५४ में ८ लाख ४१ हजार टन हुआ था। १९५५ में वह बढ़कर ८ लाख ९३ हजार टन हो गया था। आगामी वर्षों में अन्य जूट निर्माता देशों के साथ अधिकाधिक मुकाबला होने की संभावना है। इसलिए द्वितीय योजना के वर्षों में जूट के निर्यात का औसत ८ लाख ७५ हजार मन वार्षिक से अधिक आंकना उचित नहीं जान पड़ता।

४२. सूती वस्त्र (मिल और हाथकरघे दोनों) का निर्यात १९५४ में ८६ करोड़ ७० लाख गज हुआ था। १९५५ में घटकर वह ७४ करोड़ ७० लाख गज रह गया। योजना की अवधि में इस निर्यात में क्रमशः उन्नति होने की आशा है और शायद १९६०-६१ तक वह १ अरब गज तक पहुंच जाए। सूती वस्त्र व्यवसाय हमारे देश के प्राचीनतम व्यवसायों में से है, और इसलिए इसके द्वारा अधिकाधिक विदेशी मुद्रा कमा सकने की आशा करना स्वाभाविक है। दूसरी ओर, देश में भी वस्त्र की मांग बढ़ती जा रही है। इसलिए यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इस व्यवसाय की प्रतिस्पर्द्धात्मक स्थिति को स्थिर रखने और सुधारने का यत्न निरंतर किया जाए। हाथकरघे के उत्पादन का निर्यात बढ़ाने का भी यत्न करना चाहिए। विदेशों में उसकी मांग बढ़ती जा रही है।

४३. खनिज तेलों के अतिरिक्त अन्य तेलों के निर्यात से आय मुख्यतया निर्गन्ध वनस्पति तेलों के निर्यात से ही होती है। १९५४ में इन तेलों का निर्यात केवल १ करोड़ ९८ लाख गैलन हुआ था, परन्तु १९५५ में वह बढ़कर एकदम ७ करोड़ ५७ लाख गैलन हो गया था। द्वितीय योजना काल में तिलहन का उत्पादन बहुत बढ़ जाने की आशा है, इसलिए यह आशा करना तर्कसंगत होगा कि भविष्य में चाहे १९५५ के निर्यात का स्तर स्थिर न रहे, परन्तु निर्गन्ध वनस्पति तेलों के निर्यात का औसत १९५४ से काफी ऊंचा रहेगा। इन तेलों का निर्यात बहुत बढ़ाया जा सकता है, विशेषतः नए विदेशी बाजारों में। जैसा कि पहले सुझाया गया

है, खेती की पैदावार के लक्ष्य को योजना में दिखाए गए स्तर से ऊंचा उठाया जा सकता है और इसलिए तेलों के निर्यात का परिमाण न केवल १९५५ के स्तर पर रखा जा सकता है, अपितु उसे सुधारा भी जा सकता है।

४४. कपास का निर्यात १९५५ में एकदम बढ़कर ९३ हजार टन तक पहुंच गया था। १९५४ में वह केवल २६ हजार टन था। हाल के वर्षों में कपास का औसत निर्यात लगभग ५० हजार टन वार्षिक रहा है। द्वितीय योजना काल में हमने निर्यात के इस स्तर को बनाए रखने की गुंजाइश रखी है।

४५. कच्ची धातुओं और कतरनों के निर्यात में वृद्धि होने की संभावना है। प्रधानतया कच्चे लोहे का निर्यात बढ़ने के कारण १९५४-५५ में ४३ लाख टन कच्चा लोहा निकाला गया था। १९६०-६१ में इसका परिमाण बढ़कर १ करोड़ २५ लाख टन हो जाने की आशा है। इसके साथ ही यह भी संभावना है कि देश में कच्चे लोहे की खपत ३० लाख टन से बढ़कर १ करोड़ ५ लाख टन हो जाएगी। विदेशों में हमारे कच्चे लोहे की मांग बहुत है, इस कारण कच्चे लोहे का निर्यात बढ़ जाने की आशा है। सम्भव है कि वह योजना के अंतिम वर्ष तक लगभग २० लाख टन हो जाए। हाल के वर्षों में इसका औसत केवल १० लाख टन वार्षिक रहा है।

४६. निर्यात की अन्य वस्तुओं के विषय में विशेष कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती। ये वस्तुएं विविध हैं और हमने जान लिया है कि इनके निर्यात से विदेशी मुद्रा की कमाई उतनी ही होगी जितनी कि अब होती है। परन्तु हाल के वर्षों में कुछ नए उद्योगों का विकास हुआ है। यहां उनके माल का निर्यात होने की संभावना का उल्लेख कर दिया जाए। प्रथम योजना में आशा प्रकट की गई थी कि ज्यों-ज्यों हमारी अर्थ-व्यवस्था का विभिन्न दिशाओं में विस्तार होता जाएगा त्यों-त्यों सीने की मशीनों, बिजली के पंखों और साइकिलों आदि हल्के इंजीनियरी उद्योग के सामान का निर्यात बढ़ता जाएगा। परन्तु इन निर्यातों से होने वाली कमाई अभी मात्रा की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण नहीं है। इन उद्योगों को मजबूती से अपने पांव जमाने में और विदेशी बाजारों तक काफी माल पहुंचाने में अभी कुछ समय लगेगा।

४७. सब मिलाकर स्थिति यह है कि योजना काल में हमने जितना निर्यात बढ़ाने की कल्पना की है वह अधिक आकर्षक नहीं है। भारत को कुछ ही वस्तुओं के निर्यात से कमाई होती है। इनमें से आधी कमाई तो तीन वस्तुओं—चाय, जूट और सूती वस्त्र से हो जाती है। इन वस्तुओं के निर्यात में अब अन्य देशों के साथ अधिकाधिक मुकाबला करना पड़ रहा है। इस कारण निकट भविष्य में निर्यात में अधिक वृद्धि होने की गुंजाइश कम ही है। नई वस्तुओं का निर्यात बढ़ाने का और निर्यात की मुख्य वस्तुओं के लिए नए बाजार खोजने का हर सम्भव प्रयत्न तो किया ही जाना चाहिए, परन्तु साथ ही साथ यह मानना पड़ेगा कि हमारे देश में निर्यात के द्वारा अधिक कमाई के रूप में उत्पादन वृद्धि का परिणाम तभी प्रकट होगा जब कि हम औद्योगिक उन्नति के मार्ग पर पर्याप्त आगे बढ़ चुकेंगे।

आयात

४८. नीचे की तालिका में उन आयातों का विवरण दिया गया है जो द्वितीय योजना की अवधि में करने पड़ेंगे :

व्यापारिक आयात

(करोड़ रुपए)

	१९५४	१९५५	योजना का अंतिम वर्ष, १९६०-६१	द्वितीय योजना का वार्षिक औसत	पांचों वर्षों का योग, १९५६-६१
१. मशीनें और गाड़ियां	१२१	१५९	२५०	३००	१,५००
२. लोहा और इस्पात	२७	५०	९०	८६	४३०
३. अन्य धातुएं	२४	२५	४०	४४	२२०
४. अन्न, दालें और मैदा	४९	३५	४०	४८	२४०
५. चीनी	३१	२०	७	७	३५
६. तेल	६४	६३	९०	८२	४१०
७. रासायनिक द्रव्य और औषधियां आदि	३१	३४	३३	३२	१६०
८. रंग आदि	१९	१८	१५	१७	८५
९. कागज, गत्ता और लेखन सामग्री	१३	१४	१०	११	५५
१०. छुरी-कांटे आदि धातु का सामान और बिजली का सामान और यंत्र-सज्जा आदि	२८	३६	२९	२९	१४५
११. कपास	५८	५४	५४	५४	२७०
१२. कच्चा जूट	१२	१७	१८	१८	९०
१३. अन्य	११३	१३०	१४०	१४०	७००
योग	६२०	६५५	७८६	८६८	४,३४०

इस तालिका से ज्ञात होगा कि आयात में अधिकतर वृद्धि मशीनों, गाड़ियों, लोहे और इस्पात और अन्य धातुओं के कारण होगी। योजना काल में मशीनों और गाड़ियों के समस्त आयात का अन्दाजा १,५०० करोड़ रुपए लगाया गया है। इसमें से लगभग १,०५० करोड़ रुपए का सामान योजना के सरकारी क्षेत्र में लग जाएगा. ४२५ करोड़ रुपए का परिवहन और संचार साधनों में (२९० करोड़ रुपए का केवल रेलों में), २९० करोड़ रुपए का उद्योगों और खानों में (१८० करोड़ रुपए इस्पात कारखानों में), १७० करोड़ रुपए का सिंचाई और बिजली के कामों में, और लगभग १६५ करोड़ रुपए का सरकार की अन्य आवश्यकताओं में। योजना के निजी क्षेत्र के विस्तार, नवीकरण और सुधार के लिए ४५० करोड़ रुपए की मशीनों और गाड़ियों की आवश्यकता होने की संभावना है। मशीनों और गाड़ियों के बड़े परिमाण में आयात करने की आवश्यकता से प्रकट होता है कि योजना में मूलभूत उद्योगों के विकास का कितना अधिक ध्यान रखा गया है। यद्यपि इसके कारण आरम्भ में भुगतान संतुलन पर बहुत बोझ पड़ेगा, परन्तु अंत में जाकर इससे देश के विदेशी खाते मजबूत होने के साथ-साथ उसकी विनियोग-सामर्थ्य भी बढ़ जाएगी।

४९. द्वितीय योजना की अवधि में धातुओं और विशेषत: लोहे और इस्पात का आयात बहुत बढ़ जाने की संभावना है। १९५४ में ३।। लाख टन लोहे और इस्पात का आयात किया गया था। १९५५ में वह बढ़कर लगभग ७ लाख टन हो गया। द्वितीय योजना काल में उसके ७० लाख टन हो जाने की संभावना है। यह सबका सब प्राय: ४ वर्षों में हो जाएगा। एल्यूमीनियम और तांबा आदि लोहेतर धातुओं की आवश्यकता भी बहुत बढ़ जाएगी। सब मिलाकर योजना काल में लोहे और इस्पात और अन्य धातुओं का आयात ६५० करोड़ रुपए तक का होने की संभावना है। इसका औसत १३० करोड़ रुपए वार्षिक बैठता है। इसकी तुलना में १९५५ में केवल ७५ करोड़ रुपए का आयात हुआ था।

५०. जहां तक खाद्यान्न के आयात का सम्बन्ध है, योजना की समस्त अवधि में यह कुल ६० लाख टन होने का अनुमान है। गत दो वर्षों में खाद्यान्न का आयात घटा है। १९५४ में यह आयात ८ लाख ४० हजार टन और १९५५ में ७ लाख ५५ हजार टन हुआ था। आगामी वर्षों में खाद्यान्न की खपत आबादी और लोगों की आमदनी बढ़ जाने के कारण अधिक होना निश्चित है। इस समय सरकार के पास खाद्यान्न का संग्रह बहुत थोड़ा है। उस संग्रह को शीघ्र ही बढ़ाने की आवश्यकता है। इन सब परिस्थितियों पर विचार करते हुए योजना काल में ६० लाख टन का आयात करना अनिवार्य रूप से आवश्यक जान पड़ता है। इतना ही नहीं, इसका बहुत बड़ा भाग योजना काल के पूर्वार्ध में मंगाना पड़ेगा। चीनी का उत्पादन देश में ही बहुत बढ़ जाने की आशा है, इसलिए इसका आयात योजना काल में ५ लाख टन से अधिक नहीं करना पड़ेगा।

५१. तेलों में हमें अधिकतर खनिज तेलों का आयात करना पड़ता है। आशा है कि जब तेल साफ करने के तीसरे कारखाने (रिफाइनरी) में उत्पादन होने लगेगा तब मोटर के तेल की हमारी सारी आवश्यकता देश में उपलब्ध तेल से ही पूरी हो जाएगी, और तब मोटर की स्पिरिट की जगह, कच्चे तेल (क्रूड पैट्रोल) का आयात होने लगेगा। परन्तु तब भी हवाई जहाजों के तेल (स्पिरिट), मिट्टी के तेल और अन्य कुछ खनिज तेलों का आयात तो बड़ी मात्रा में करना ही पड़ेगा। इन सब बातों का विचार करते हुए अनुमान यह है कि योजना काल में तेलों का औसत आयात लगभग ८२ करोड़ रुपए प्रति वर्ष का रहेगा। यह १९५४ के आयात से कम परन्तु १९५५ के आयात से अधिक है।

५२. यद्यपि देश में रासायनिक द्रव्यों और औषधियों की आवश्यकता बढ़ जाएगी, फिर भी विदेशों से इनका आयात, द्वितीय योजना काल में प्राय: उतना ही रहने की संभावना है, जितना कि १९५४ और १९५५ में हुआ था। इस काल में रासायनिक द्रव्यों का, विशेषत: कास्टिक सोडे और सोडा ऐश का उत्पादन देश में ही बहुत अधिक बढ़ जाने की आशा है। इस कारण कास्टिक सोडा और सोडा ऐश का आयात तो घट जाएगा, परन्तु अन्य रासायनिक द्रव्यों का बढ़ जाएगा। देश में रंगों के उत्पादन के भी बढ़ने की संभावना है। इसलिए उनका औसत आयात भी कम होगा। इसी प्रकार अखबारी और अन्य कागज का उत्पादन देश में बढ़ जाने के कारण उसके आयात में भी कमी होने की आशा है।

५३. कांटे-छुरी आदि, बिजली के सामान, धातुओं की बनी वस्तुओं और अन्य उपकरणों का आयात, देश में रहन-सहन का दर्जा ऊंचा हो जाने के कारण, बढ़ जाने की संभावना है। बढ़ी हुई मांग का कुछ भाग देश के अतिरिक्त उत्पादन से भी पूरा किया जा सकेगा। इस स्तर से अधिक जो मांग होगी, उसके बारे में यह मान लिया गया है कि विदेशी मुद्रा विनिमय की

भारी कमी को देखते हुए ऐसी नीति अपनाई जाएगी जिससे इन वस्तुओं के आयात में विशेष वृद्धि न हो ।

५४. कपास का आयात, १९५४ के १ लाख २३ हजार टन से घटकर, १९५५ में १ लाख ६ हजार टन रह गया था, परन्तु कच्चे जूट का आयात, १९५४ के २ लाख १७ हजार टन से बढ़कर, १९५५ में २ लाख ४८ हजार टन हो गया था । हमने यह मान लिया है कि योजना काल में इन दोनों वस्तुओं के आयात का औसत वही रहेगा जो १९५४-५५ में था ।

५५. "अन्य वस्तुओं" के आयात में हमने कुछ वृद्धि की गुंजाइश रखी है, क्योंकि हाल में सीमेंट का आयात बढ़ाना पड़ा है । इसके लिए योजना के पांच वर्षों में २५ करोड़ रुपए की अतिरिक्त राशि रखी गई है । इस वर्ग में सम्मिलित अन्य वस्तुएं, तम्बाकू, वस्त्र, कच्ची ऊन, नकली रेशम और इमारती लकड़ी आदि हैं । इन वस्तुओं का आयात लगभग वही रहेगा जो इस समय हो रहा है ।

अनभिलिखित खाते

५६. अनभिलिखित खाते में (विदेशी सरकारों की सहायता को छोड़) १९५४ में ७३ करोड़ रुपए और १९५५ में ७२ करोड़ रुपए की बचत दिखाई गई थी । द्वितीय योजना की अवधि में यह बचत औसतन ५१ करोड़ रुपए प्रति वर्ष होने की आशा है । विनियोग के लिए उपलब्ध राशियों में बहुत अधिक कमी हो जाने की संभावना है, क्योंकि सरकारी खातों की विदेशी पूंजी (पौंड-पावने) में बहुत कमी हो जाने की आशा है । इसके साथ ही ब्याज और लाभांश की विदेशों में अदायगी बढ़ जाएगी, क्योंकि निजी कारोबार में विदेशों के विनियोग में और विदेशी सरकारों के ऋणों में बहुत वृद्धि हो जाने की संभावना है । द्वितीय योजना की अवधि में १९५४-५५ की तुलना में विनियोग की राशियों पर वास्तविक अदायगियों का परिमाण, औसतन लगभग २० करोड़ रुपए प्रति वर्ष अधिक होने की संभावना है । विदेशी यात्रा, माल की ढुलाई और निजी आदि मदों में विशेष परिवर्तन होने की संभावना नहीं है ।

घाटा

५७. सब मिलाकर पांच वर्षों में चालू खाते में घाटा १,१०० करोड़ रुपए तक होने की संभावना है । पूंजी खाते में विलम्ब से चुकाने की शर्त पर अमेरिका से लिये हुए गेहूं के ऋण और अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक से लिये हुए नकद ऋण, उस वसूली के द्वारा लगभग समाप्त हो जाने चाहिएं जो कि ब्रिटेन की सरकार से हमें पौंड-पेंशनों के हिसाब में होगी । द्वितीय योजना की अवधि में जो नए ऋण लिये जाएंगे, उनमें से कुछ को चुकाना भी पड़ेगा, परन्तु उस हिसाब में सब ऋणों की गणना न करके, अदायगी करने के पश्चात् बचे हुए शुद्ध ऋणों की गणना की जा सकती है । सारांश यह है कि पूंजी खाते में सरकार पर नई देनदारियों का जो बोझ पड़ेगा, उसका प्रभाव अदायगियों पर विशेष अधिक होने की संभावना नहीं है । निजी पूंजी के हिसाब में, देश में लगी हुई निजी पूंजी को चुकाने का ध्यान रखना पड़ेगा । जहां पहले से लगी हुई कुछ पूंजी वापस करनी पड़ेगी, वहां कुछ नई निजी पूंजी भी देश में आ जाएगी और इसलिए अदायगी का संतुलन प्रायः यथापूर्व रहेगा, ऐसा माना जा सकता है । मतलब यह है कि ऊपर इस हिसाब में १,१०० करोड़ रुपए का घाटा रहने की जो

चर्चा की गई है, उसके मुकाबले में निजी या सरकारी हिसाब में मिलने वाली नई विदेशी पंजी को रखकर स्थिति को समान माना जा सकता है।

५८. १,१०० करोड़ रुपए के घाटे के कुछ भाग की पूर्ति देश के विदेशी मुद्रा के सुरक्षित कोष से भी की जा सकती है। इस मुद्रा पर भरोसा कहां तक किया जा सकता है, यह बात इस पर निर्भर करती है कि हमारे भुगतान-सन्तुलन में साधारणतया कितना उतार-चढ़ाव होगा। देश के खाते में विदेशी मुद्रा को सुरक्षित रखने की आवश्यकता इस कारण होती है कि कभी-कभी विदेशी अदायगियों में अस्थायी रूप से जो कठिनाई हो जाती है, उसे हल किया जा सके। यदि मुद्रा के सुरक्षित कोष का उचित परिमाण, कोई ६ या ७ महीनों में होने वाले आयात का मूल्य मान लिया जाए तो भारत के पौंड-पावने में से लगभग २०० करोड़ रुपए का उपयोग, योजना की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए बिना किसी जोखिम के किया जा सकता है। प्रथम योजना के वितरण में, इस प्रयोजन के लिए, पौंड-पावने में से २९० करोड़ रुपए निकालने की बात कही गई थी। तब अनुभव किया गया था कि पौंड-पावने में से इतनी राशि निकाल देने पर, देश के खाते में सुरक्षित विदेशी मुद्रा का परिमाण संतुलित हो जाएगा। परन्तु प्रथम योजना काल में हमारा पौंड-पावना लगभग १४० करोड़ रुपए घट गया। द्वितीय योजना की अवधि में, पौंड-पावने में से २०० करोड़ रुपए और निकाल लेने की सिफारिश करते हुए हम यह सुझाव दे रहे हैं कि देश के खाते में सुरक्षित विदेशी मुद्रा के परिमाण को प्रथम योजना में अनुमानित स्तर तक गिराया जा सकता है। भारत ने गत दो वर्षों में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से अपनी मुद्रा का पुनः भुगतान कर दिया है, और इस कारण वह इस स्थिति में है कि उस कोष का उपयोग कर सके। वह कोष आवश्यकता के समय उपयोग के लिए अतिरिक्त राशि का काम दे सकता है।

५९. देश के खातों में विदेशी मुद्रा में सुरक्षित राशि में से २०० करोड़ रुपए निकाल लेने के पश्चात्, ६०० करोड़ रुपए की कमी रह जाएगी। उसे पूरा करने के लिए ये उपाय किए जा सकते हैं: (क) विदेशी मुद्रा के बाजार में ऋण लेना, (ख) विदेशों में बैंकों और फर्मों में आयात के लिए उधार पर माल खरीदने की व्यवस्था करना, (ग) अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक और नव-संगठित अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम से ऋण लेना, (घ) संयुक्त राष्ट्रीय टैकनीकल सहायता—प्रशासन अथवा आर्थिक विकास के लिए प्रस्तावित विशेष संयुक्त राष्ट्रीय कोष जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से ऋण और सहायता लेना, (ङ) निजी विदेशी पूंजी का अपने देश में विनियोग करवाना, और (च) मित्र विदेशी सरकारों से ऋण और सहायता लेना। योजना की विदेशी मुद्रा की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए हमें इन सभी उपायों का प्रयोग करना पड़ेगा।

६०. प्रथम योजना की अवधि में सरकारी क्षेत्र के विकास के कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए, हमें सब मिला कर २९८ करोड़ रुपए की विदेशी पूंजी मिल गई थी। इसमें से लगभग २०४ करोड़ रुपए का उपयोग प्रथम योजना काल में ही कर लिया गया है। नीचे की तालिका में यह विवरण दिया गया है कि प्रथम योजना के समय कितनी राशि उपयोग में लाने का अधिकार दिया गया था, कितनी उपयोग में लाई गई थी, और कितनी द्वितीय योजना के समय उपयोग के लिए बची हुई है:

(करोड़ रुपए)

	अधिकृत	ऋण या अनुदान	मार्च १९५६ तक काम में लाई गई अनुमानित राशि	द्वितीय योजना काल के लिए शेष
अमेरिका				
गेहूं का ऋण	९०·३	ऋण	९०·३	...
भारत-अमेरिका सहायता कार्यक्रम ...	१०२·५	अनुदान	७०·५	३२·०
	३९·३	ऋण	७·०	३२·३
अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक ...	१२·०	ऋण	८·५	३·५
कोलम्बो योजना				
आस्ट्रेलिया	१०·५	अनुदान	५·३	५·२
कैनेडा	३५·६	अनुदान	१९·५	१६·२
न्यूज़ीलैंड	१·२	अनुदान	०·३	०·९
ब्रिटेन	०·५	अनुदान	०·३	०·२
फोर्ड फाउन्डेशन	५·४	अनुदान	२·०	३·४
नार्वे	०·३	अनुदान	०·२	०·१
योग ...	२९७·६		२०३·९	९३·८

भारत को विस्तृत टेकनीकल सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत संयुक्त-राष्ट्र संघ की विशेष एजेन्सियों से, चार सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत अमेरिका से, और कोलम्बो योजना के अन्तर्गत राष्ट्रमण्डल के देशों से भी टेकनीकल सहायता मिलती रही है। यह सहायता, विशेषज्ञों की सेवाओं, भारतीय नागरिकों को प्रशिक्षण की सुविधाओं और प्रदर्शन यन्त्रों की प्राप्ति के रूप में मिली है। १९५० से अब तक, भारत-अमेरिका टेकनीकल सहायता कार्मक्रम के अन्तर्गत २५१ विशेषज्ञों की, कोलम्बो योजना के अन्तर्गत राष्ट्रमण्डल के देशों से ८१ विशेषज्ञों की, और संयुक्त-राष्ट्रीय टेकनीकल सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत और संयुक्त-राष्ट्र संघ की एजेन्सियों से ५६१ विशेषज्ञों की सेवाएं हमें उपलब्ध हो चुकी हैं। इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत बहुत-से भारतीय नागरिक भी प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं। संयुक्त राष्ट्र-संघ के शिक्षा-विज्ञान तथा संस्कृति संगठन कार्यक्रम के अनुसार, वैस्टर्न हायर टेकनीकल इंस्टीट्यूट और इंडियन टेकनीकल इंस्टीट्यूट के लिए विशेषज्ञों और यन्त्र-सामग्री की सहायता की भी अनुमति दी जा चुकी है। सोवियत रूस ने, संयुक्त राष्ट्रीय टेकनीकल सहायता कार्यक्रम में जो योग दिया था, उसी में से यह सहायता हमें दी गई है।

६१. सब मिलाकर, द्वितीय योजना के लिए हमें विदेशी सहायता की आवश्यकता उससे बहुत अधिक पड़ेगी जो कि हमें हाल के वर्षों में मिलती रही है। योजना के सरकारी क्षेत्र के लिए वित्तीय साधनों का अन्दाजा लगाते हुए यह मान लिया गया है कि ८०० करोड़ रुपए विदेशों में एकत्र किए जाएंगे। प्रथम योजना में इस प्रकार २०४ करोड़ रुपए का उपयोग हुआ था। योजना के निजी क्षेत्र में १०० करोड़ रुपए की विदेशी पूंजी की कल्पना की गई है।

६२. जैसा कि पहले कहा जा चुका है, योजना के सरकारी क्षेत्र की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए पहले अविकृत राशियों में से ६४ करोड़ रुपए बचे हुए हैं। उसके अतिरिक्त भिलाई में इस्पात कारखाने लगाने के लिए रूस की सरकार से ६३ करोड़ रुपए ऋण लेने का समझौता किया जा चुका है। इस ऋण में से द्वितीय योजना काल में जो भाग चुका देना पड़ेगा, उसे घटाने के पश्चात्, शेष राशि ४३ करोड़ रुपए की रह जाएगी। दुर्गापुर के इस्पात कारखाने के लिए ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश बैंकों ने ३३ करोड़ रुपए देने का वचन दिया है। इस प्रकार द्वितीय योजना के सरकारी क्षेत्र के लिए १७० करोड़ रुपए की व्यवस्था का निश्चय हो चुका है। शेष ६३० करोड़ रुपए की व्यवस्था अभी और करनी होगी।

६३. योजना के निजी क्षेत्र के लिए १०० करोड़ रुपए की विदेशी पूंजी की जो कल्पना की गई है, अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक ने, इंडियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, दि टाटा हाइड्रो-इलेक्ट्रिक कम्पनियों और इंडस्ट्रियल-क्रेडिट एण्ड इनवैस्टमेण्ट कार्पोरेशन आफ इंडिया को जो ऋण दिया था, उसमें से लगभग २२ करोड़ रुपए अभी शेष बचा हुआ है। आशा है कि अन्तर्राष्ट्रीय बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम से नये ऋण मिल सकेंगे, और कुछ निजी विदेशी पूंजी भारत में भी नई लगेगी। यद्यपि पहले लगी हुई निजी विदेशी पूंजी का कुछ भाग चुका देना पड़ेगा, तो भी आशा है कि नए ऋणों और विनियोगों को मिलाकर योजना के निजी क्षेत्र के लिए जितनी विदेशी पूंजी का अन्दाजा लगाया गया है, उतनी मिल जाएगी।

६४. सारांश यह है कि द्वितीय योजना के लिए बहुत अधिक विदेशी पूंजी की आवश्यकता है। अब तक जो राशि मिल चुकी है, उसके पश्चात् भी हमारे भुगतान-संतुलन में भारी कमी रहेगी। उसे पूरा करने के लिए सब संभव उपाय करने पड़ेंगे। इस प्रसंग में यह ध्यान विशेष रूप से रखना चाहिए कि यह निश्चय पहले से नहीं किया जा सकता कि हम अपने विकास कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए विदेशों से कितनी सहायता मिलने का भरोसा कर सकते हैं। इस लिए साधनों की समस्या पर विचार करते समय देश और विदेश के साधनों को मिलाकर ही विचार करना चाहिए। विदेशी साधनों में जो कमी रह जाएगी, उसे देश में ही अधिक साधन एकत्र करने का प्रयत्न करके पूरा करना होगा। इसके बिना योजना का विनियोग कार्य निर्विघ्न आगे नहीं बढ़ सकेगा। इस कारण हमारी नीति में सर्वाधिक बल निर्यात द्वारा आय को अधिकाधिक बढ़ाने और आयात को अधिकतम घटाने पर रहना चाहिए।

1537

परिशिष्ट १

राज्यों की योजनाओं का विवरण—(क) और (ख) भाग के राज्य

१९५६-६१
(करोड़ रुपयों में)

	राजस्व खाता						पूंजी खाता					
	राज्य की योजना का परिमाण	करों की वर्तमान दरों से राजस्व में बचत	अतिरिक्त करों से राजस्व	केन्द्र से प्राप्त अतिरिक्त करों का भाग	जनता के ऋणों पर देय ब्याज (घटाइए)	कुल योग (सं ३, ४ और ५ को जोड़कर और ६ को घटाकर)	जनता से ऋण (कुल आय मिला कर)	छोटी बचतों का भाग	अन्य प्राप्तियां (वास्तविक)*	योग (सं० ८, ९ और १० का)	राजस्व और पूंजी खातों के साधनों का योग (सं० ७ और ११ का)	साधनों में कमी** (सं० २ और १२ का अन्तर)
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
आन्ध्र	११९·०	६·५	८·०	३·२	२·३	१५·४	२०·२	३·५	०·१	२३·६	३९·०	८०·०
आसाम	५७·९	९·०	५·०	१·५	—	१५·५	—	४·०	(—)२·२	१·८	१७·३	४०·६
बिहार	१९४·२	१६·२	२८·०	६·५	१·७	४९·०	१५·०	१३·५	(—)०·३	२८·२	७७·२	११७·०
बम्बई	२६६·२	३२·५	१४·०	८·०	५·२	४९·३	४५·०	४१·०	४२·०	१२८·०	१७७·३	८८·९
मध्य प्रदेश	१२३·७	१४·०	१५·०	३·५	१·२	३१·३	१०·०	१०·०	—	२०·०	५१·३	७२·४
मद्रास	१७३·१	३४·०	१५·०	६·३	४·५	५०·८	४०·०	१०·०	(—)१०·६	३९·४	९०·२	८२·९
उड़ीसा	१००·०	९·७	८·०	२·४	०·६	१९·५	५·०	२·५	०·२	७·७	२७·२	७२·८
पंजाब	१२६·३	३·२	१९·०	२·१	०·६	२३·७	५·०	११·०	(—)४·२	११·८	३५·५	९०·८
उत्तर प्रदेश	२५३·१	(—)२·६	४६·०	१०·३	४·०	४९·७	३५·०	३५·५	(—)१०·०	६०·५	११०·२	१४२·९
पश्चिम बंगाल	१५३·७	(—)७·२	१४·०	५·३	४·०	८·१	३५·०	२७·५	(—)६·२	५६·३	६४·४	८९·३
योग	१,५६७·२	११५·३	१७२·०	४९·१	२४·१	३१२·३	२१०·०	१५८·५	८·८	३७७·३	६८९·६	८७७·६

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
हैदराबाद	१००·२	(—)६·८	६·०	३·०	१·७	०·५	१५·०	३·५	१·७	२०·०	२०·७	७९·५
मध्य भारत	६७·३	(—)५·८	९·०	१·२	१·१	३·३	१०·०	२·५	(—)४·४	८·१	११·४	५५·९
मैसूर	८०·६	(—)११·२	५·०	०·४	२·३	(—)८·१	२०·०	२·५	(—)१·१	२१·४	१३·३	६७·३
पेप्सू	३६·३	१·१	४·०	०·५	—	५·६	—	१·५	३·५	५·०	१०·६	२५·७
राजस्थान	९७·४	(—)५·२	८·०	२·४	१·७	३·५	१५·०	५·०	६·३	२६·३	२९·८	६७·६
सौराष्ट्र	४७·७	१·२	५·०	०·२	१·७	४·७	१५·०	४·०	१·१	२०·१	२४·८	२२·९
तिरुवांकुर-कोचीन	७२·०	८·७	७·०	०·४	१·७	१४·४	१५·०	२·५	३·३	२०·८	३५·२	३६·८
जम्मू व कश्मीर	३३·९	०·५	—	—	—	०·५	—	—	(—)१३·१	(—)१३·१	(—)१२·६	४६·५
योग	५३५·४	(—)१७·५	४४·०	८·१	१०·२	२४·४	९०·०	२१·५	(—)२·७	१०८·८	१३३·२	४०२·२
कुल योग	२,१०२·६	९७·८	२१६·०	५७·२	३४·३	३३६·७	३००·०	१८०·०	९·१	४८६·१	८२२·८	१२७९·८

*प्राप्तियों में प्राविडेण्ट फण्डों में जमा राशियों, ऋणों और पेशगी दी हुई रकमों की वसूली, ऋण को कम करने या उससे बचने के लिए चालू आय में से ली हुई राशियों और पूंजी खाते में अन्य विविध प्राप्तियों का योग करके, उसमें से पूंजी-खाते में किए हुए व्यय, ऋणों की अदायगी और जमींदारों तथा जागीरदारों आदि को दिया हुआ मुआवजा घटा दिए गए हैं।

**इसकी पूर्ति केन्द्र की सहायता से और सुरक्षित कोष में रखी हुई सरकारी हुण्डियों की बिक्री तथा राज्यों द्वारा अतिरिक्त साधन एकत्र करके की जायगी।

टिप्पणी :—१. राज्य सरकारों के साथ विचार-विनिमय के पश्चात् राज्यों में जो अतिरिक्त कर लगाने का निश्चय किया गया था उसमें से 'क' और 'ख' भाग के राज्यों का भाग १६६ करोड़ रुपए था। बाद में क्योंकि राज्यों के अतिरिक्त करों का लक्ष्य बढ़ाकर २२५ करोड़ कर दिया गया था, इसलिए इस विवरण में प्रत्येक राज्य के अतिरिक्त कर का परिमाण उसी हिसाब से बढ़ा दिया गया है। 'क' और 'ख' भाग के राज्यों का बढ़ा हुआ अंश २१६ करोड़ रुपए है।

टिप्पणी :——२. अतिरिक्त करों के यहां दिए हुए विवरण में ३१·१ करोड़ रुपए का सुधार उपकर सम्मिलित नहीं है, क्योंकि वह केन्द्र का ऋण चुकाने में व्यय कर दिया जाएगा, और राज्यों की योजनाओं में उसका उपयोग नहीं होगा। इस ३१·१ करोड़ रुपए का राज्य वार विवरण इस प्रकार है :

	(करोड़ रु०)
उड़ीसा	१·६
पंजाब	१०·०
पश्चिमी बंगाल ...	७·०
पेप्सू	६·७
राजस्थान	५·८
योग	३१.१

टिप्पणी :——३. यह मान लिया गया है कि १९५६ से १९६१ तक के पांच वर्षों में केन्द्रीय सरकार जो २२५ करोड़ रुपए के नए कर लगाएगी, उनमें से कोई ६० करोड़ रुपए राज्यों को दिए जाएंगे। 'ख' भाग के तीन राज्यों——मैसूर, सौराष्ट्र और तिरुवांकुर-कोचीन को पहले चार वर्षों तक इस राशि में से कुछ नहीं मिलेगा, क्योंकि १९५९-६० तक इन राज्यों का राजस्व खाते का घाटा भी केन्द्र से पूरा किया जाता रहेगा।

टिप्पणी :——४. १९५५ के जुलाई और सितम्बर के मध्य में राज्य सरकारों के साथ विचार-विनिमय में निश्चय हो गया था कि वे २१८ करोड़ रुपए का ऋण जनता से लेंगी। परन्तु अब उसे बढ़ाकर ३०० करोड़ रुपए कर दिया गया है। इसमें से प्रत्येक राज्य के भाग का निर्णय हाल के वर्षों में उस राज्य द्वारा लिये हुए ऋण की सफलता को देखकर किया जाएगा।

टिप्पणी :——५. छोटी-छोटी बचतों से योजना के पांच वर्षों में ५०० करोड़ रुपए एकत्र होने का अन्दाजा किया गया है। इसमें से राज्यों का भाग २०० करोड़ रुपए रखा गया है। इसका आधार यह है कि १९५१ से १९५६ तक प्राप्त बचतों के वार्षिक औसत का तो राज्यों को २५ प्रतिशत दिया जाए, और उससे अधिक संग्रह का ५० प्रतिशत। २०० करोड़ रुपए में से, 'क' और 'ख' भाग के राज्यों का अंश १८० करोड़ रुपए है।

अध्याय ५

योजना का रोजगार पक्ष

आर्थिक विकास की कोई भी योजना हो, यह मानी हुई बात है कि उसमें प्राप्य साधनों का इस तरह उपयोग करना होगा कि उत्पादन की वृद्धि की गति अधिक से अधिक बढ़ सके। यह ऐसा काम है जिसमें वक्त लगता है। समाज में हर एक को पूरी तरह रोजगार मिल सके—ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करने की योजनाएं भी इसी तरह वक्त लेंगी। अगर काफी लम्बा समय दृष्टि में रखा जाए तो विकास की गति बढ़ने के साथ-साथ पूरा रोजगार देने की योजना भी निर्विरोध चल सकती है; दोनों में कोई असामंजस्य नहीं होता। बल्कि अब सभी मानने लगे हैं कि बेरोजगारी की समस्या, खासकर हमारे जैसे कम उन्नत देश में, तभी हल हो सकती है जब खूब जोरों से विकास का काम किया जाए। हो सकता है कि पांच बरस की छोटी-सी अवधि में थोड़ा संघर्ष इस बात को लेकर होता रहे कि द्रुत गति से पूंजी-निर्माण करने और अधिकाधिक रोजगार की व्यवस्था करने—इन दोनों में से कौन अधिक आवश्यक है। पर अगले ५ वर्षों का योजना कार्यक्रम निर्धारित करते समय सबसे पहले इसी बात का ध्यान रखना है कि बढ़ती हुई बेरोजगारी को रोक दिया जाए।

समस्या का रूप और आकार

२. आने वाले वर्षों में रोजगार के अवसर बढ़ाने के काम में तीन प्रकार की समस्याएं आएंगी। पहले तो गांवों और शहरों में जो लोग पहले से ही बेरोजगार हैं, उन्हें काम में लगाना होगा; दूसरे श्रमिकों की स्वाभाविक रूप से बढ़ती हुई संख्या के लिए भी—जो अगले ५ वर्षों तक अनुमानतः कोई २० लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष के हिसाब से बढ़ती रहेगी—काम जुटाना है; तीसरे उन लोगों को और काम देना है जो शहरों या गांवों में खेत या घर पर काम करते हैं, पर पूरी तरह रोजगार से लगे नहीं कहे जा सकते। संयुक्त परिवार व्यवस्था में रोजगार के अवसरों की कमी का रूप यह होता था कि या तो लोग पूरी तरह काम से लगे हुए न होते थे, या फिर बेरोजगार होते थे, लेकिन उनकी वह बेरोजगारी सामने नहीं आती थी। वह व्यवस्था किसी हद तक बेरोजगार लोगों को थोड़ी-बहुत सामाजिक सुरक्षा प्रदान करती थी। शिक्षा के प्रचार, भूमि कानूनों में सुधार और युवक वर्ग की अपनी रोजी आप कमाने की स्वाभाविक इच्छा से अब मजूरी पर काम करने की प्रवृत्ति दिखाई दे रही है, जिससे बेरोजगारी का आकार दिनों दिन अधिक स्पष्ट होकर सामने आता जा रहा है।

३. पहली योजना के अनुभव से मालूम हुआ है कि बेरोजगारी की समस्या को कुल मिलाकर तो देखना ही चाहिए, पर उसके ग्राम्य और शहरी—दोनों प्रकारों को अलग-अलग भी परखना चाहिए। इसलिए यह समझने के लिए कि अगले कुछ वर्षों में उसका क्या रूप हो जाएगा, यह देखना जरूरी है कि देश के विभिन्न भागों में ग्राम और नगर क्षेत्रों में उसका आकार क्या है? इसीलिए शिक्षित बेरोजगारों को बाकी बेरोजगारों से अलग करके देखना पड़ेगा।

४. वेरोजगारी दूर करने के उपाय स्थिर करने में जो वाधाएं हैं, उनमें एक है वेरोजगारी के आकार और प्रकार से अनभिज्ञता और इस वात की यथेष्ट जानकारी का अभाव कि विभिन्न प्रकार से पूंजी लगाने में रोजगार कितना-कितना मिल सकता है। समय-समय पर वेरोजगारी सम्बन्धी सूचना वहीं मिल पाती है, जहां काम दिलाने के दफ्तर काम कर रहे हैं—और ये जगह ज्यादातर शहरों में हैं। इसलिए विलकुल ठीक-ठीक कह सकना वहुत कठिन है कि वेरोजगारी की समस्या विभिन्न क्षेत्रों में कितनी है। काम दिलाने के दफ्तरों से प्राप्त जानकारी में भी कुछ अपनी सीमाएं होती हैं, फिर भी नियतकालिक सूचनाएं केवल इन्हीं दफ्तरों से प्रकाशित होती हैं। इसलिए उनके रजिस्टरों में वेरोजगारों की संख्या कम-ज्यादा होने से शहरों की वेकारी की समस्या के परिमाण का कुछ पता चल सकता है। पहली योजना सम्वन्धी जानकारी से मालूम होता है कि जव वह योजना आधी पूरी हो चुकी तो वेरोजगारी वढ़ने लगी। पहली योजना के समय में वेकारों के रजिस्टर में संख्याएं, मार्च १९५१ में ३·३७ लाख, दिसम्वर १९५३ में ५·२२ लाख और मार्च १९५६ में ७·०५ लाख थीं। इन आंकड़ों का अर्थ और भी स्पष्ट हो जाता है—यदि इन्हें योजना आयोग के कहने पर राष्ट्रीय सर्वेक्षण द्वारा किए गए शहरों में वेकारी के प्रारम्भिक सर्वेक्षण के साथ देखा जाए। इससे मालूम हुआ है कि १९५४ में देश में २२·४ लाख वेकार थे। इससे यह भी पता चला कि मोटे तौर पर वेकारों में से कोई २५ प्रतिशत अपना नाम रोजगार दिलाने के दफ्तरों में लिखाते हैं। इस हिसाव से इस समय सम्भव है शहरों में करीव २८ लाख आदमी वेकार हों। यह अनुमान कुछ और शहरी क्षेत्रों में हाल ही में किए गए दूसरे सर्वेक्षण के देखने से मोटे तौर पर पुष्ट हो जाता है। विकासशील अर्थ-व्यवस्था में कुछ वेरोजगारी अनिवार्य रूप से वढ़ेगी ही। इसकी गुंजाइश रखकर कहा जा सकता है कि इस समय शहरों में वेरोजगारों की संख्या २५ लाख के आस-पास होगी।

५. इस संख्या में, शहरी श्रमिक समाज में नए आने वाले भी शामिल किए जाएंगे। अनुमान है कि इस प्रकार अगले पांच वर्षों में कोई ३८ लाख वेकार और वढ़ जाएंगे। ऐसा यह मान कर कहा गया है कि १९५१–६१ के दशक में शहरों की आवादी में ३३ प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी—यह वृद्धि १९३१–४१ की (३१ प्रतिशत) से अधिक और १९४१–५१ की (४० प्रतिशत) से कम है। १९४१–५१ के दशक में शहरों की आवादी, युद्ध और विभाजन के कारण असाधारण रूप से वढ़ी थी, इसलिए यह मान लेना उचित है कि १९५१–६१ में शायद इतनी न वढ़े। इसके अलावा योजना के कार्यान्वित होने और शहर में काम मिलने की दिक्कतों के अनभव से किसी हद तक गांवों से लोगों का शहरों में आना शायद कम हो जाए।

६. गांवों में वेरोजगारी और कम रोजगारी में भेद कर सकना कठिन है। इन क्षेत्रों में रोजगार वढ़ाते वक्त यह देखने के साथ-साथ कि काम का परिमाण वढ़ा है, और कम रोजगारों में अधिकांश की आय वढ़ी है, यह भी देखना होगा कि कुछ पूर्ण रोजगार के अवसर भी निकले हैं या नहीं। इस संदर्भ में खेतिहर मजदूरों का, विशेषत: जिनके पास जमीन नहीं है विशेष विचार करना चाहिए। हाल ही में कुछ राज्यों में गांवों की वेरोजगारी का सर्वेक्षण किया गया है। अभी ये सर्वेक्षण आरम्भिक ही हैं और अलग-अलग दृष्टि से किए गए हैं, इसलिए विभिन्न क्षेत्रों का तुलनात्मक व्यौरा नहीं तैयार किया जा सकता—और समूचे देश के लिए अनुमान लगाना खतरनाक हो सकता है। हाल में किए गए सर्वेक्षणों में सिर्फ खेतिहर जांच समिति ने वाकायदा सर्वेक्षण किया है, जिसके अनुसार १९५०–५१ में ग्राम्य वेरोजगारी २८ लाख थी। हाल में राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे ने समय-समय पर गांवों और शहरों में वेरोजगारी का व्योरा तैयार

करना शुरू किया है। शहरी बेरोजगारी के ब्योरे प्राप्त हो गए हैं, पर गांवों के ब्योरे अध्ययन और समीक्षा के लिए अभी प्राप्त नहीं हुए हैं। पांच वर्षों में गांवों में रोजगार की व्यवस्था में क्या परिवर्तन हुआ होगा, यह अभी नहीं कहा जा सकता। यह अलबत्ता कहा जा सकता है कि पहली योजना में जोर गांवों के विकास कार्यों पर ही दिया गया था और वे अधिकांश सफल भी हुए थे, इसलिए गांवों में बेरोजगारी शायद नहीं बढ़ी होगी। विशिष्ट प्रवृत्तियों के अभाव में बस यही कहा जा सकता है कि पहली योजना के कार्यकाल में गांवों में बेरोजगारी की स्थिति में खास फर्क नहीं पड़ा।

७. जैसा कि पहले कहा जा चुका है, अगले ५ वर्षों में श्रमिक समाज में नए आने वालों की संख्या १ करोड़ आंकी गई है। इनमें से शहरी मजदूरों की सामान्य संख्या ३८ लाख निकाल देने से १९५६–६१ में गांवों में बढ़ने वाले मजदूरों की संख्या ६२ लाख रह जाती है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में बेरोजगारी मिटा देने के लिए निम्नांकित सूची के अनुसार रोजगार की सुविधाएं उपलब्ध करनी होंगी :

तालिका १

(संख्या लाख में)

		शहरों में	गांवों में	कुल
नए मजदूरों के लिए	...	३८	६२	१००
पहले के बेरोजगारों के लिए	...	२५	२८	५३
कुल	...	६३	९०	१५३

८. रोजगार के इतने साधन जुटा भी दिए जा सकें तो भी कम रोजगारी की समस्या जो उतनी ही कठिन है मिट नहीं जाती। यहां भी यथेष्ट जानकारी के अभाव में समस्या को समझना ही मुश्किल हो रहा है। उन संस्थाओं की सहायता के लिए जो बेरोजगारी सर्वेक्षण करती हैं केन्द्रीय आंकड़ा संगठन ने एक पुस्तिका प्रकाशित की है : इसके सुझावों को चालू सर्वेक्षणों में काम में भी लाया गया है। विभिन्न क्षेत्रों में पूंजी लगाने का बेरोजगारी पर क्या प्रभाव होता है इसके सम्बन्ध में योजना आयोग के पास जो ब्योरा अध्ययन के लिए था उसके अलावा अब वह उस सामग्री का भी उपयोग कर रहा है जो राज्य सरकारों ने दूसरी योजना के रचना काल में एकत्र की थी। इस सब अध्ययन का परिणाम मालूम होने पर बेरोजगारी की समस्या के प्रादेशिक पहलुओं पर पूरा ध्यान दिया जा सकेगा।

पद्धतियों का चुनाव

९. आज की बेकारी और श्रमिक संख्या में होने वाली वृद्धि (तालिका १) को देखकर यह आशा करते रहना बेकार होगा कि दूसरी योजना के समाप्त होते-होते पूरा रोजगार सबको दिला दिया जाएगा। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, यह लक्ष्य तो योजनाबद्ध रूप से कोशिश करते-करते दूसरी योजना के काफी बाद ही सिद्ध किया जा सकता है। इसे और जल्दी सिद्ध करने के लिए यह अवश्य करना होगा कि योजना में निहित कार्यों की अधिकाधिक काम देने की शक्ति बढ़ाई जाए, पर दीर्घकालिक आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाए।

१०. अपने देश की अर्थ-व्यवस्था को देखते हुए, जिसमें मजदूरों की बहुतायत है, यह उचित और स्वाभाविक है कि ज्यादातर ऐसी पद्धतियां अपनाएं जिनमें मजदूरों की अधिक

खपत हो। तो भी जहां यह सवाल उठेगा कि पूंजी लगाने के लिए विभिन्न पद्धतियों में से किसका चुनाव किया जाए वहां निर्णय उन बातों के आधार पर ही किया जा सकेगा जिनका उल्लेख अन्यत्र हुआ है। विभिन्न पद्धतियों के प्रयोग में स्पर्द्धा या विरोध का क्षेत्र उतना बड़ा नहीं जितना अक्सर समझा जाता है। ज्यादातर तो स्पष्ट ही होता है कि अमुक पद्धति क्यों चुनी जाए—और उसका शुद्ध कारण उत्पादन के शिल्प सम्बन्धी तथ्य होते हैं। उदाहरण के लिए, मूल उद्योगों के सम्बन्ध में, कोई दूसरा उपाय नहीं है। वहां बेरोजगार की खातिर आकार की और टेकनोलौजिकल आवश्यकताओं को भुलाया नहीं जा सकता। उधर इस प्रकार के उद्योग स्थापित करने की आवश्यकता से इन्कार भी नहीं किया जा सकता, क्योंकि अंततः देश की रोजगार शक्ति बढ़ाने के लिए उनका महत्व निस्सन्देह है। कृषि में, केवल कुछ परिस्थितियों को छोड़कर, विकास की वर्तमान दशा में, मशीनीकरण के सम्भव आर्थिक लाभ भी मशीनीकरण से उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी की सामाजिक हानि को देखते हुए कम हो जाते हैं।

११. सड़क, मकान, रेल आदि के निर्माण की जो पद्धति चालू है, वह वर्षों के उद्योग से कठिन मानव श्रम को कम करते हुए निकाली गई है—आज की सामाजिक मान्यताएं उस तरह के मानव श्रम को स्वीकार भी नहीं करेंगी। इसलिए यह पद्धति अगले ५ वर्षों तक माननी ही पड़ेगी, हालांकि मशीन के प्रयोग के फलस्वरूप बेकार हुए लोगों को रोजगार देने के प्रश्न को भुलाया नहीं जा सकता। सिंचाई और बिजली कार्यों में मशीन का इस्तेमाल कुछ तो टेकनीकल कारणों और कुछ उस क्षेत्र में उपलब्ध श्रम पर निर्भर करता है, पर जहां ऐसी परिस्थितिया न हों, वहां निर्माण मशीनों का उपयोग देश में उपलब्ध श्रम शक्ति और मूल्यवान विदेशी मुद्रा की बचत के संदर्भ में स्थिर करना होगा। यही दशा रेलवे को छोड़ अन्य परिवहन और संचार व्यवस्था के मामले में भी पाई जाती है।

१२. विकसित अर्थ-व्यवस्था में निर्माण कार्य में वृद्धि करना अल्प काल के लिए बेरोजगारी को हल करने का उपाय माना जाता है, पर भारत में इस प्रकार के कार्यों में पूंजी लगाने को एक सीमा से आगे नहीं चलने दिया जा सकता। निर्माण कार्यों में पूंजी लगाने से एक बार में ढेर की ढेर पूंजी लगती है और फिर काम पूरा होने के साथ-साथ मजदूर बेकार होने लगते हैं। हां, निर्माण से उत्पन्न सुविधाओं से अनेक लाभ भी होते हैं और इनके कारण निर्माण में लगाए गए श्रम का काफी अंश फिर काम में लग सकता है। पर जो लोग काम में नहीं लग पाते उनको अन्यत्र भेजने या नए सिरे से सिखाने जैसी समस्याएं भी उठ खड़ी होती हैं।

१३. केवल उपभोग्य सामग्री के उत्पादन के सिलसिले में उत्पादन पद्धतियों के चुनाव का प्रश्न कठिन हो सकता है। यदि और बातों का विचार न भी करें तो भी पूंजी-प्रधान उत्पादन पद्धति में दोहरी हानि होती है: (क) श्रमिकों का हटाया जाना; और (ख) पूंजी लगाने के दुर्लभ साधनों पर और जोर पड़ना—खासकर विदेशी मुद्रा विनिमय साधनों पर। इस क्षेत्र की समस्याओं का आर्थिक और सामाजिक विकास की समस्या से मौलिक सम्बन्ध है। इनमें से कुछ पर उपयुक्त अध्यायों में प्रकाश डाला गया है। यह मानना पड़ेगा कि दीर्घकालीन उद्देश्य, पूंजी लगाने की गति में वृद्धि करना है—और वह चालू उत्पादन में से यथेष्ट बचत किए बगैर नहीं हो सकता। इन सब भिन्न भिन्न उद्देश्यों में संघर्ष उसी समय चिन्ता का कारण बन सकता है जब विकेन्द्रीकृत उत्पादन की संचय क्षमता पर आक्षेप होने लगता है। श्रम-प्रधान पद्धति अपनाने से प्रति व्यक्ति अतिरिक्त पूंजी संचय की क्षमता कम हो सकती है, अधिक विकसित पद्धति से उत्पादन करने से वह अधिक हो सकती है। पर यह देखते हुए कि श्रम-प्रधान

पद्धति से काम न लेने पर जो बेरोजगार रहेंगे, उनके पोषण का सामाजिक और आर्थिक व्यय क्या होगा, उस पद्धति में उत्पादन की हर इकाई में पूंजी निर्माण के लिए शायद अतिरिक्त क्षमता अधिक हो सकती है। अविकसित अर्थ-व्यवस्था में, जहां बेरोजगारों को निर्वाह के लिए धन देना व्यावहारिक नहीं है, लाभ-हानि की तुलना करने पर श्रम पर जोर देने की पद्धति निश्चय ही लाभकर मानी जाएगी, परन्तु विकास की दृष्टि से ऐसी पद्धतियां चुनने में दिक्कत इस प्रश्न को लेकर उठती है कि कई छोटी-छोटी उत्पादन इकाइयों में उपलब्ध अतिरिक्त पूंजी को संगठित कैसे किया जाए—पर यह संगठन की समस्या है और इसे हल करना चाहिए। साथ ही, परम्परागत पद्धतियों को और उपादेय बनाने का प्रयत्न जारी रखना चाहिए। यह सच है कि इन इकाइयों में टेकनीकल विकास का कोई चमत्कार प्रकट नहीं हो सकता, पर उनमें नए प्रकार के औजारों और साज-सामान की जरूरत पैदा हो सकती है और अन्य उद्योगों की उत्पत्ति में सहायता मिल सकती है। हाल के अन्वेषणों से पता चलता है कि छोटे उद्योगों में बिना और पूंजी लगाए या श्रम पर बोझ डाले उत्पादनशीलता बढ़ाने की काफी गुंजाइश है। इस गुंजाइश का पूरा इस्तेमाल होना चाहिए। जब ऊंची आय वाले स्तर पर रोजगार की गुंजाइश बढ़ेगी तभी अर्थ-व्यवस्था को श्रमिक वर्ग के उत्साह में वृद्धि के रूप में शक्ति मिलेगी। हम मानते हैं कि अर्थ-व्यवस्था में विकास इसी ढंग से होगा। अन्ततः जनता को ही विकास का भार वहन करना पड़ता है, यद्यपि लाभ भी वही उठाती है।

१४. ये कुछ बातें हैं जिनके आधार पर हमने दूसरी योजना में सम्मिलित करने के लिए योजनाएं चुनी हैं। अब यह देखना बाकी रह जाता है कि इन योजनाओं से रोजगार पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष क्या प्रभाव पड़ेंगे।

दूसरी योजना में रोजगार का अनुमान

१५. सरकारी क्षेत्र में कुल खर्च ४,८०० करोड़ रुपया कूता गया है, जिसमें से ३,८०० करोड़ विनियोजित पूंजी की शक्ल में होगा। इसके अलावा, निजी क्षेत्र में २,४०० करोड़ रुपए की पूंजी लगाए जाने की आशा है। दूसरी योजना कितना अतिरिक्त रोजगार दे सकती है, इसका अनुमान राज्यों और केन्द्रीय मंत्रालयों के रोजगार आंकड़ों और निजी क्षेत्र के लिए प्रस्तावित लक्ष्यों के आधार पर उनकी उत्पादनशीलता में वृद्धि की कुछ सम्भावनाएं मानकर किया गया है।

इस अनुमान का संक्षिप्त रूप यहां दिया जाता है।

तालिका २

अनुमानित अतिरिक्त रोजगार

(संख्या लाखों में)

(१) निर्माण	२१·००*
(२) सिंचाई और बिजली	०·५१
(३) रेलवे	२·५३

*विभिन्न विकास क्षेत्रों में निर्माणजन्य रोजगार का विस्तारपूर्वक विवरण अगले पृष्ठ पर फुटनोट (+) में देखिए।

(४)	अन्य परिवहन और संचार	१·८०
(५)	उद्योग और खनिजादि	७·५०
(६)	कुटीर उद्योग और छोटे पैमाने के उद्योग ...	४·५०
(७)	वनोद्योग, मछली उद्योग, राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सम्बद्ध योजनाएं	४·१३
(८)	शिक्षा	३·१०
(९)	स्वास्थ्य	१·१६
(१०)	अन्य सामाजिक सेवाएं	१·४२
(११)	सरकारी नौकरियां	४·३४
	योग (१ से ११ तक) ...	५१·९९
(१२)	तथा "अन्य" जिनमें योग के ५२ प्रतिशत के हिसाब से व्यापार-वाणिज्य भी शामिल हैं	२७·०४
	कुल योग ...	७९·०३ या ८०

१६. ये अनुमान कैसे किए गए हैं, इसका संक्षित विवरण आगे के पैराग्राफों में दिया गया है ।

(१) **निर्माण**—जैसा कि पहले वताया जा चुका है कि विकास चेप्टा के सभी क्षेत्रों में निर्माण का स्थान है; ऊपर की सूची में इस मद में जो अनुमान दिया गया है, उसमें सिचाई, विजली, सड़क, रेलवे, भवन, फैक्टरी-भवन, मकान इत्यादि सब स्थापत्यों के निर्माण काल में प्राप्य

+निर्माणजन्य रोजगार का विवरण

	क्षेत्र का नाम	निर्माण में अनुमानित अतिरिक्त रोजगार
(१)	कृषि और सामुदायिक विकास	२·६६
(२)	सिंचाई और विजली	३·७२
(३)	उद्योग और खनिजादि (कुटीर उद्योग और छोटे पैमाने के उद्योग सहित)	४·०३
(४)	परिवहन और संचार (रेलवे सहित) ...	१·२७
(५)	समाज सेवा	६·९८
(६)	फुटकर (सरकारी नौकरी सहित) ...	२·३४
	योग ...	२१·००

रोजगार शामिल है। निर्माण से प्राप्य रोजगार का अन्दाजा लगाने में १९५५-५६ में होने वाले व्यय की १९६०-६१ के होने वाले व्यय से तुलना की गई है (जो दूसरी योजना के निर्माण व्यय का २० प्रतिशत मान लिया गया है)। बिजली और सिंचाई के लिए कुल व्यय का श्रम पर खर्च होने वाला अंश, नदी घाटी योजनाकार्य टेकनीकल कर्मचारी समिति के अन्वेषण के आधार पर स्थिर किया गया है। सड़कों के लिए श्रम पर कितना अंश खर्च होगा, यह परिवहन मंत्रालय के सड़क संगठन से ज्ञात हुआ है—ये अनुमान विभिन्न राज्यों के सड़क इंजीनियरों से परामर्श करके स्वीकार किए गए। रेल मंत्रालय ने विभिन्न क्षेत्रों में अपने कार्य के अनुभव से बताया कि कितने मील रेल निर्माण पर कितने आदमी लगते हैं। मकान निर्माण के बारे में एक करोड़ रुपया खर्च करते हुए कितने आदमी काम पर लगाए जाते हैं, इसकी जानकारी, निर्माण, आवास और संभरण मंत्रालय ने दी और राज्य इंजीनियरों से परामर्श करके कुछ संशोधन सहित इसे स्वीकार किया गया। निजी क्षेत्र में भी मकान के सम्बन्ध में इसी जानकारी के आधार पर अनुमान किया गया है। निर्माण के लिए जो अनुमान किए गए हैं उनसे अधिक आदमियों की ही आवश्यकता पड़ सकती है, कम की नहीं।

(२) **सिंचाई और बिजली**—इस क्षेत्र में रोजगार का अनुमान चालू कार्यों के अधीन किया गया है। इसमें इन कार्यों में रख-रखाव करने वाले कर्मचारियों और इन कार्यों से उत्पन्न लाभ का वितरण करने वाले कर्मचारियों को भी शामिल किया गया है। इसमें आम तौर से कितना रोजगार है—यह नदी घाटी योजनाकार्य टेकनीकल कर्मचारी समिति ने सम्पूर्ण कार्यों में प्रयुक्त कर्मचारियों की संख्या को देखकर स्थिर किया है।

(३) **रेलवे**—रेलवे में नई लाइनों के रख-रखाव और संचालन में कितना रोजगार मिलता रहेगा, यह रेलवे मंत्रालय ने सूचित किया है।

(४) **अन्य परिवहन और संचार**—इसमें सड़क, सड़क परिवहन, संचार, प्रसारण इत्यादि शामिल हैं। इसमें नया रोजगार अंशतः रख-रखाव और संचालन में है। सड़कों के रख-रखाव में कितना रोजगार निकलेगा, इसका सामान्य अनुमान सड़क संगठन से परामर्श करके किया गया; सड़क परिवहन में कर्मचारियों की आवश्यकता का भी अनुमान इसी प्रकार स्थिर किया गया। राज्य सरकारों ने अपनी योजनाओं में इस क्षेत्र में चालू रोजगार की जो जानकारी दी थी, उससे केन्द्रीय मंत्रालय द्वारा प्राप्त अनुमानों का मिलान किया गया। संचार मंत्रालय की योजनाओं में चालू कार्यों पर होने वाले व्यय के आधार पर यह स्थिर किया गया कि उस मंत्रालय की योजनाओं में कितना रोजगार प्राप्त होता रह सकेगा।

(५) **उद्योग और खनिज**—बड़े पैमाने के उद्योगों में कितना रोजगार मिलेगा, इसका अनुमान लाइसेंस समिति को दिए गए ज्ञातव्य के आधार पर किया गया। जहां इस प्रकार के ज्ञातव्य प्राप्य नहीं थे, और दूसरी योजना के लिए लक्ष्य निश्चित हो चुके थे, वहां सेंसस आफ मैनुफैक्चर्स के आधुनिकतम संकलन के आधार पर रोजगार का अनुमान लगाया गया। उत्पादनशीलता में वृद्धि के लिए २० प्रतिशत की गुंजाइश रखी गई। इस्पात, खाद, बनावटी पेट्रोल, इस्पात संयंत्रों के निर्माण की मूल मशीनों और बिजली की मूल मशीनों के मामले में सम्बद्ध मंत्रालयों से प्राप्त अनुमानों को स्वीकार किया गया।

खनिज विकास के बारे में आज का प्रति व्यक्ति उत्पादन मालूम करके, उत्पादनशीलता के लिए २० प्रतिशत गुंजाइश देकर और १९६१ तक के उत्पादन लक्ष्य दृष्टि में रखकर, १९६१ में रोजगार की स्थिति का मोटा अनुमान लगाया गया।

(६) कुटीर उद्योग और छोटे पैमाने के उद्योग—इनके मामले में कर्वे समिति का कोई ४·५ लाख पूर्णकालिक नौकरियों का अनुमान स्वीकार किया गया है। उक्त समिति की रिपोर्ट में उल्लिखित पूर्णतर नौकरियों को नहीं गिना गया है, क्योंकि उनसे मूलरूप में अर्ध-रोजगार वालों को और काम मिलेगा।

(७) वनोद्योग और मछली उद्योग—इनके बारे में राज्यों से प्राप्त जानकारी को आधार माना गया है। राष्ट्रीय विस्तार सेवा के लिए रोजगार का वह अनुमान प्रयुक्त किया गया है जो सामुदायिक विकास कार्य प्रशासन ने तैयार किया था।

(८ से १०) सामाजिक सेवाएं—शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य समाज सेवाओं के लिए राज्यों से प्राप्त जानकारी को योजना आयोग के तत्सम्बन्धी विभागों की सहायता से जांचकर सुविधानुसार स्वीकार किया गया।

(११) सरकारी नौकरियां—सरकारी नौकरियों में जगह मिलने के बारे में पहले तो यह मालूम किया गया कि असैनिक क्षेत्र में १९५५-५६ की तुलना में १९६०-६१ में विकास को छोड़ अन्य व्यय में अनुमान से कितनी वृद्धि हो जाएगी। एक सरकारी नौकर को औसतन कितना वेतन हर साल दिया जाता है इसके हिसाब से मोटे तौर पर रोजगार का अनुमान लगाया गया।

(१२) अन्य—व्यापार, वाणिज्य और अन्य सेवाओं के रोजगार का अनुमान अपेक्षाकृत कम पक्का है। यह १९५१ की जनगणना से प्रकट विविध व्यवसायों के प्रचलन के आधार पर स्थिर किया गया है। "अन्य" में वाणिज्य, परिवहन (रेलवे छोड़कर), भण्डार गोदाम, ऐसी फुटकर सेवाएं जिनका अन्यत्र उल्लेख नहीं है, और सामान्य मजदूर—ये सब शामिल हैं*। १९५१ की जनगणना के अनुसार इन सबसे श्रमिक समाज के १२८·७६ लाख जनों को काम मिलता है। इन सब समूहों के योग की उस जनसंख्या से तुलना की जाए जो खेती के सिवाय, प्राथमिक व्यवसाय, खनिकर्म आदि उद्योग, रेलवे परिवहन, निर्माण और जनोपयोगी कार्य, स्वास्थ्य, शिक्षा, सार्वजनिक प्रशासन और संचार में लगी है और जिसका योग २२४·४७ लाख है, तो ०·५२ का अनुपात निकलता है। यह मान लिया जाता है कि यही अनुपात १९६१ में भी रहेगा। रोजगार का अनुपात निकालने में शुद्ध खेती का कार्य करने वालों को यह मानकर छोड़ दिया गया है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में अतिरिक्त रोजगार अधिकतर गैर-खेती क्षेत्र में बढ़ाना ही अभीष्ट है। कृषि क्षेत्र में उत्पादन बढ़ने के साथ-साथ, उन व्यक्तियों को जो व्यापार, वाणिज्य आदि अन्य वर्ग में पहले ही से हैं अपने वर्तमान ग्राहकों से ही और काम मिलेगा जिससे उनका रोजगार पूर्णतर हो जाएगा। कहा जा सकता है कि ०·५२ का अनुपात बहुत कम माना गया है।

१७. इन अनुमानों को दूसरी पंचवर्षीय योजना के इस उद्देश्य के संदर्भ में कि खेती के अतिरिक्त क्षेत्र में समुचित रूप से रोजगार को अवसर देना है, देखना उचित होगा। यदि वर्तमान बेरोजगारी ऐसी ही बनी रह जाए, तो भी इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए १ करोड़ नई नौकरियां शुरू करनी पड़ेंगी। पर श्रमिक समाज में शामिल होने वाले १ करोड़ नवागन्तुकों में से बहुत-से ऐसे परिवारों के होंगे जो भूमि पर निर्भर करते हैं। ऐसे लोगों के मामले में, जैसा पहले कहा जा

*१९५१ की जनगणना के व्यवसाय-वर्गीकरण में उल्लिखित "सामान्य मजदूर" शीर्षक उपसमूह छोड़ दिया गया है, क्योंकि उसे दोनों मुख्य समूहों में ठीक-ठीक बांटना असम्भव है।

चुका है, अतिरिक्त काम का परिमाण नौकरियों से नहीं, उनकी अतिरिक्त आय से मापा जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त दूसरी योजना में सिंचाई की जो व्यवस्था है, उसके अनुसार यह अनुमान कर लेना सही होगा कि अधिक भूमि पर सिंचाई होने पर उसके एक अंग के द्वारा गांवों के हिसाब से पूरे वक्त के काम के और अवसर मिलने लगेंगे। इसी के साथ ही, जन श्रम द्वारा भूमि को खेती योग्य बनाने की कुछ योजनाएं हैं और कुछ योजनाएं केन्द्रीय ट्रैक्टर संगठन आदि की हैं—बागान, काली मिर्च और वृक्ष आदि के विस्तार और विकास की भी योजनाएं है। इनको मिलाकर देखा जाए तो ग्राम क्षेत्र में कोई १६ लाख नए श्रमिकों को काम मिल सकता है। सिंचाई की बाकी सुविधा से उत्पन्न नए काम खेती, बारी में कम काम पाने वालों को और काम दे सकेंगे। इसके अलावा ग्रामोद्योग और छोटे पैमाने के उद्योगों की योजनाओं में और अधिक काम की जो व्यवस्था की गई है, उसको भी दृष्टि में रखना होगा। इस प्रकार जहां तक रोजगार का सवाल है, आशा की जाती है कि योजना का परिणाम महत्वपूर्ण होगा, पर बेरोजगारी की समस्या पर दूसरी योजना के कार्यकाल में काफी ध्यान देते रहने की जरूरत बनी रहेगी।

१८. इस स्थल पर, पहली और दूसरी योजनाओं के रोजगार पक्षों की तुलना करना उपयोगी होगा। आयोग ने जांच करके मालूम किया है कि पहली योजना की अवधि में सरकारी और निजी क्षेत्र में सीधे ४५ लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला। इस अनुमान में वाणिज्य, व्यापार जैसे क्षेत्रों में मिलने वाला रोजगार शामिल नहीं है। अब विकास प्रयत्न जब करीब-करीब दुगुना हो रहा है तो भी दूसरी योजना में अतिरिक्त रोजगार का लक्ष्य बहुत ऊंचा नहीं होने वाला है। इसकी वजह यह है कि दूसरी योजना में विकास व्यय की वृद्धि पहली योजना से बहुत अधिक होने की आशा नहीं है। और इसका कारण यह है कि १९५५-५६ में सरकारी क्षेत्र में योजना सम्बन्धी व्यय ६००–६२० करोड़ रुपया रहा है, जबकि १९५०-५१ में विकास पर २२४ करोड़ रुपया खर्च हुआ था। पहली योजना के अन्तिम वर्ष में सरकारी क्षेत्र में खर्च, १९५०-५१ की उसी अवधि के मुकाबले कोई ४०० करोड़ रुपया अधिक होगा। सम्भव है कि पहली योजना के अन्तिम वर्ष के मुकाबले दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष में विकास व्यय में ६०० करोड़ रुपए की वृद्धि हो। साथ ही तीसरे अध्याय में वर्णित पूंजी लगाने के ढंग से स्पष्ट है कि परिवहन और मूलोद्योगों पर कहीं अधिक व्यय करना सोचा गया है और इनमें अल्प काल में, रोजगार की सम्भावनाएं अपेक्षाकृत कम होती हैं।

विशेष क्षेत्रों के लिए कार्यक्रम

१९. योजना की रोजगार सामर्थ्य को समग्र रूप में देख लेना ही यथेष्ट नहीं है। रोजगार के अवसरों में वृद्धि को प्रादेशिक आधार पर भी आंकना होगा। इस कोशिश में सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि केन्द्रीय योजनाओं और निजी क्षेत्र के उद्योगों का रोजगार के हिसाब से प्रादेशिक विवरण अभी तैयार नहीं किया गया है। फिर भी, विशेष क्षेत्रों में रोजगार बढ़ाने के लिए किन दिशाओं में काम किया जाएगा, इसकी कुछ आम बातें नीचे दी जाती हैं।

२०. रोजगार का एक पहलू जो विशेष रूप से उल्लेखनीय है, वह है घोर बेरोजगारी और अर्ध-रोजगारी की समस्या। कुछ क्षेत्रों में पुरानी कम रोजगारी चली आ रही है और आमदनियां देश के औसत आय प्रतिमान की तुलना में भी बहुत कम हैं। ऐसी परिस्थितियां कुछ अधिक समृद्ध देशों में भी अज्ञात नहीं हैं। उदाहरण के लिए, अमरीका में ऐसे इलाके हैं, जहां देश की कुल अर्थ-व्यवस्था में लक्षित बेरोजगारी के स्तर से अधिक गहरी बेरोजगारी है। ब्रिटेन में भी पिछड़े क्षेत्रों के लिए विशेष कार्यक्रम बनाए गये थे। इन देशों में किए गए उपायों के अनुभवों से

मालूम हुआ है कि नीति निर्धारण के लिए पहले जिन महत्वपूर्ण बातों की जरूरत है उनमें ऐसे इलाकों का गहन अध्ययन भी एक है; हाल के अनुशीलनों से समस्या के समग्र रूप का कुछ पता तो चलता है, पर विभिन्न क्षेत्रों की विशदतर जानकारी—जैसे स्थानिक कारीगरों का सुलभ होना, सामग्री, प्राप्य सुविधाएं, वहां के समाज की तात्कालिक आवश्यकताएं आदि—प्राप्त करना भी जरूरी है। ऐसा सर्वेक्षण विभिन्न राज्यों में करना चाहिए। यदि पिछड़े क्षेत्रों में स्थानिक समुदायों ने विशेष योजनाएं तैयार की हों तो शायद उन्हें आवश्यक सहायता देना भी सम्भव हो सके। महत्वपूर्ण बात यह है कि रोजगार बढ़ाने वाले कार्यक्रमों की नींव, स्थानिक जनता और समाज की दिलचस्पी और कोशिश ही होती है। स्थानिक लोग सहकारिता से कुछ करें, उद्योगपति नए काम शुरू करें और केन्द्र या राज्य सरकारें सहायता करें तो ऐसे क्षेत्रों में रहन-सहन बहुत शीघ्र अच्छा होने लग सकता है। स्थानिक नेतृत्व ऐसे क्षेत्रों में उपयुक्त कार्यक्रम स्थिर करने एवं उन्हें कार्यरूप देने में क्या कुछ कर सकता है यह स्पष्ट ही है।

२१. उपरोक्त कारणों से यह अभी ठीक-ठीक कल्पना करके नहीं देखा जा सकता कि सरकारी नीति किस दिशा में बननी चाहिए। जिन क्षेत्रों के प्राकृतिक साधन अपेक्षाकृत हीन हैं, उनमें से कहीं-कहीं इसकी भी जरूरत पैदा हो सकती है कि अतिरिक्त श्रमिकों को आयोजित रूप से किसी अन्य स्थान को भेज दिया जाए। पर आम तौर से ऐसा भी होता है कि जब बहुत-से श्रमिक अपनी जगह छोड़ दूसरी को जाते हैं तो उलझनें पैदा होने लगती हैं। इसलिए, कष्ट-ग्रस्त लोगों को उन्हीं के क्षेत्रों में सार्थक काम दिलाना समस्या हल करने का ज्यादा उपयोगी तरीका हो सकता है। हां, उचित जान पड़ने पर, स्थानान्तरण करना भी निषिद्ध न समझना चाहिए। सरकार ऐसे क्षेत्रों में रोजगार के अवसर इस प्रकार बढ़ा सकती है : (१) और वजहें ज्यादा बड़ी न हों तो सरकारी क्षेत्र के नए योजना कार्य ऐसे ही स्थानों में पहले स्थापित करके, (२) स्थानिक व्यापारियों और उद्योगपतियों को अपेक्षाकृत अच्छी शर्तों पर ऋण देकर, (३) सरकारी क्षेत्रों के ठेकों का कुछ प्रतिशत ऐसे क्षेत्रों के रहने वालों के लिए सुरक्षित रखकर, और (४) अन्य धन सम्बन्धी उपाय करके जिनसे उद्योगपति पूंजी लगाने का उत्साह पा सकें। इस प्रकार के विशेष क्षेत्रों में बिना और अधिक जांच-पड़ताल के कोई पक्के उपाय नहीं किए जा सकेंगे।

शिक्षित बेरोजगार

२२. पढ़े-लिखों की बेरोजगारी को भी देश की अर्थ-व्यवस्था की आम बेरोजगारी का एक अंग मानकर देखना होगा। भारत जैसे देश में इतने अधिक बेकार और उन बेकारों में पढ़े-लिखे बेकार इसी वजह से हैं कि श्रमिक वर्ग में लोग बढ़ते रहे हैं परन्तु उन्हें खपाने योग्य हमारे यहां कई वर्षों से यथेष्ट विकास कार्य नहीं हुआ। वैसे, शिक्षितों की बेरोजगारी का विशेष महत्व है, खासकर निम्नलिखित कारणों से :

(क) सही हो या गलत, जनता की धारणा है कि जो आदमी पढ़ाई में रुपया लगाता है उसे पैसे वाली नौकरी जरूर मिलनी चाहिए;

(ख) शिक्षित व्यक्ति स्वाभाविक रूप से उसी विशेष शिक्षा के अनुरूप नौकरी ढूंढ़ता है जो उसने प्राप्त की है—नतीजा यह हुआ है कि देश में शिक्षा के विकास के अनुसार कुछ पेशों में उम्मीदवारों की बाढ़ आ गई है और कुछ में कमी पड़ गई है। फिर, शिक्षित लोग अपने मन के प्रदेशों में भी नौकरी चाहते हैं—जिससे समस्या और उलझ जाती है; और

(ग) शिक्षित लोग आम तौर पर आफिस की नौकरी के अलावा और कोई नौकरी खोजना नहीं चाहते ।

२३. शिक्षितों में बेरोजगारी कम करने के कार्यक्रम बनाने के लिए दिसम्बर १९५५ में एक अध्ययन मण्डल स्थापित किया गया था, जिसने अपना प्रतिवेदन हाल ही में दिया है। इसने अनुमान लगाया है कि अगले ५ वर्षों में श्रमिक समाज में १४·५ लाख शिक्षित जन शामिल हो जाएंगे । इस मण्डल ने मैट्रिक या उसके बराबर कक्षा तक पढ़े हुए लोगों तक को शिक्षित वर्ग में रखा है। राष्ट्रीय सर्वेक्षण निदेशालय की शहरी बेरोजगारी सम्बन्धी प्रारम्भिक जांच की रिपोर्ट के आधार पर इस मण्डल ने शिक्षित बेरोजगारों की संख्या ५·५ लाख कूती है। इस अध्ययन मण्डल के अनुमानों की पुष्टि कुछ विश्वविद्यालयों की उन रिपोर्टों से हो जाती है जो उन्होंने अपने स्वाधीन अध्ययन के बारे में मण्डल की रिपोर्ट के बाद प्रकाशित की है। यदि पढ़े-लिखे लोगों में बेरोजगारी दूर करनी है तो उनके लिए कोई २० लाख नौकरियों की व्यवस्था करना अगले ५ वर्षों की समस्या है। इस को दृष्टि में रखकर, अध्ययन मण्डल ने अनुमान लगाया है कि केन्द्रीय और राज्य सरकारों के दूसरे पंचवर्षीय योजनाकार्यों से लगभग १० लाख नौकरियां निकल सकती हैं। अगले ५ वर्षों में जो लोग अवकाश ग्रहण करेंगे, उनका स्थान भरने से २·४ लाख शिक्षित व्यक्तियों को रोजगार मिल जाएगा । इसके अतिरिक्त निजी उद्योग क्षेत्र कोई २ लाख को खपा लेगा । इसका अर्थ यह हुआ कि समस्या का रूप दूसरी योजना की अवधि में कुछ बहुत न बदलेगा । अध्ययन मण्डल ने इस समस्या के प्रादेशिक पक्ष पर भी जोर दिया है और सुझाव दिया है कि तिरुवांकुर-कोचीन और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में इस समस्या को बहुत ध्यान से जांचते रहने की जरूरत है।

२४. इस अध्ययन मंडल के अनुसार, शिक्षितों में बेरोजगारी के सवाल पर सिर्फ संख्या की दृष्टि से विचार करना काफी नहीं है। गैर-सीखे या अशिक्षित वर्गों के लिए तो कहा जा सकता है कि इतनी संख्या में नौकरियों की जरूरत है, पर शिक्षित बेकारों के बारे में यह भी बताना जरूरी हो जाता है कि किस-किस विद्या के जानकारों के लिए रोजगार की व्यवस्था करनी है। इस समस्या के प्रादेशिक और व्यावसायिक पक्षों पर अलग से विचार करना होगा । काफी ऊंचे वर्गों को छोड़कर शिक्षित लोगों का एक प्रदेश से दूसरे में कम जाना—उनके पूरा-पूरा इस्तेमाल होने में बाधक है। ऐसी मिसालें मौजूद हैं कि काम दिलाने के कुछ दफ्तरों में कुछ प्रकार के शिक्षित और प्रशिक्षित उम्मीदवारों की भरमार रही है और कुछ में इन्हीं प्रकारों का अभाव रहा है। ऐसे मामलों में मांग और पूर्ति का सामंजस्य, आवश्यक प्रोत्साहन और अवसर देने से ही काफी हद तक हो जाएगा । जहां तक व्यावसायिक पहलू का सवाल है, काफी पहले से यह योजना करने की जरूरत होगी कि कितने व्यक्तियों की जरूरत पड़ेगी और भविष्य में ऐसे व्यक्ति जुटाने का क्या प्रबन्ध होगा ।

२५. इस समस्या के विस्तार और स्वभाव को देखते हुए अध्ययन मण्डल ने कुछ ऐसे क्षेत्रों के नाम सुझाए हैं जिनमें शिक्षितों को रोजगार के अवसर मिल सकते हैं। इस मण्डल ने योजनाएं मुख्यतः इस आधार पर चुनी हैं कि वे या तो उत्पादन सम्बन्धों में सुधार की दृष्टि से बहुत जरूरी हैं या और सामान्य आर्थिक विकास के लिए बहुत अधिक महत्व की हैं। पहली श्रेणी की योजनाओं में मण्डल ने उत्पादन और वितरण के क्षेत्र में सहकारिता संगठनों को मजबूत बनाने की योजनाएं भी शामिल की हैं। भविष्य में शीघ्र ही जो समाज व्यवस्था हम स्थापित करना चाहते हैं, उसके सन्दर्भ में इन योजनाओं का महत्व स्पष्ट ही है। संगठनात्मक,

प्रशासनिक और निरीक्षणात्मक प्रशिक्षण आदि का विस्तार करने की काफी गुंजाइश दिखाई देती है। सुझाव दिया गया है कि छोटे उद्योगों में माल का उत्पादन और विक्रय सहकारी संस्थाएं करें। ग्रामोद्योगों में शिक्षितों को वास्तविक उत्पादन में खपा लेने की गुंजाइश कम है। खास तौर से इसलिए कि इस क्षेत्र में जो कारीगर काम कर रहे हैं वे खुद ही बेरोजगार या अर्ध-रोजगार पर हैं। भारी उद्योगों का जहां तक सवाल है, उनमें एक प्रकार के टेकनीकल जानकारों की जरूरत होगी। इन दोनों के बीच में छोटे उद्योगों का एक विशाल क्षेत्र है और अध्ययन मण्डल इसे शिक्षितों को रोजगार दिलाने के लिए उपयुक्त समझता है। उसने इस क्षेत्र के उद्योगों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है :

(१) निर्माता उद्योग, जैसे औजार, खेलकूद का सामान, फर्नीचर आदि बनाना।

(२) सहायक उद्योग, जैसे फाउंड्रियां, भट्ठियां, मोटर की दूकान, मशीन के पुर्ज़े, बिजली की कलई और गैल्वनाइजिंग की दूकानें आदि।

(३) मरम्मत उद्योग, जैसे मोटरों, बाइसिकलों और अन्य मशीनों की मरम्मत आदि।

२६. शिक्षितों को काम से लगाने की गुंजाइश कुछ और योजनाओं में भी है और माल परिवहन सहकारिता योजनाएं भी इसमें शामिल हैं। इस क्षेत्र में कार्यक्रम यह बनाया गया है कि १,२०० अन्तर्नगर चालन इकाइयां स्थापित की जाएं, जिनमें हर नगर में औसतन ५ गाड़ियां हों और इनके अलावा २४० नगरान्तरीय सहकारिता संस्थाएं और खोली जाएं, जिनमें औसतन २५-२५ गाड़ियां हों। मण्डल का एक प्रस्ताव यह भी है कि नई दृष्टि देने के लिए विशेष शिविर आयोजित किए जाएं ताकि शिक्षितों के मन से हाथ का काम करने का संकोच निकल जाए और उनमें आत्मविश्वास आ सके। इन शिविरों से यह भी पता चल सकेगा कि अमुक युवक कौन-सा धंधा अच्छी तरह कर सकता है। काम देने वाले से सम्पर्क रहे तो वे लोग इन्हीं शिविरों से उपयुक्त शिक्षितों को चुनकर ले भी जा सकते हैं।

२७. इस मण्डल की प्रस्तावित योजनाओं में कुल १३० करोड़ रुपए का खर्च होगा और आशा है इनसे कोई २·३५ लाख जनों को अतिरिक्त रोजगार मिलेगा। कुल खर्च, वापसी, शुद्ध खर्च और रोजगार सामर्थ्य का ब्योरा इस प्रकार है :

तालिका ३

(रकमें करोड़ रुपयों में)

योजनाएं	अनुमानित कुल खर्च	वापसी	शुद्ध खर्च	रोजगार शक्ति (व्यक्ति संख्या)
छोटे पैमाने के उद्योग	८४·०	५८·३	२५·७	१,५०,०००
माल परिवहन सहकारिता ...	२०·०	१८·०	२·०	३२,०००
राज्य सरकारों की योजनाएं ...	१९·०	९·५	९·५	५३,०००
काम और नवजीवन शिविर ...	७·१	शून्य	७·१	शून्य
योग ...	१३०·१	८५·८	४४·३	२,३५,०००

शिक्षितों को नौकरी के लिए अनिश्चित समय तक इन्तजार करने की तकलीफ से बचाने के लिए मण्डल ने जो प्रस्ताव किये हैं वे ये हैं : (१) सरकारी नौकरियों में भरती करने की वर्तमान पद्धति में सुधार, (२) होस्टलों की व्यवस्था, और (३) विश्वविद्यालयों के लिए काम दिलाने के कार्यालय।

२८. अध्ययन मण्डल की सिफारिशों पर प्रयोग के तौर पर काम करके देखना चाहिए कि शिक्षितों की प्रतिक्रिया क्या होती है। इसके लिए उपयुक्त प्रबन्ध कर दिया गया है और मण्डल से कहा गया है कि वह इन प्रायोगिक योजनाओं का ब्योरा तैयार करे। यदि शिक्षितों की तरफ से यथेष्ट प्रोत्साहन मिला तो इस क्षेत्र में और बड़े प्रयोगों के लिए प्रबन्ध कर दिया जाएगा।

२९. अन्त में, कहना होगा कि शिक्षितों की बेरोजगारी एक ऐसी समस्या है जो लम्बी अवधि में ही दूर हो सकती है; उसके लिए दूर तक असर डालने वाले उपाय करने होंगे। छोटे-मोटे तात्कालिक उपायों से समस्या का स्थायी हल कैसे हो सकता है? अनुभव बताता है कि शिक्षितों को उपयोगी ढंग से काम में लगाने का रोजगार न मिलने की एक वजह यह भी रही है कि हमारी शिक्षा पद्धति का हमारे आर्थिक विकास की जरूरतों से यथेष्ट सम्बन्ध नहीं रहा है। इससे यह भी किसी हद तक स्पष्ट हो जाता है कि क्यों एक ओर शिक्षितों में इतनी बेरोजगारी रहती है तो दूसरी ओर कभी-कभी कुछ विशेष प्रकार के शिक्षित कर्मियों की कमी पड़ जाया करती है। इसलिए शिक्षा और प्रशिक्षण आदि का विकास अर्थ व्यवस्था की भावी आवश्यकताओं के अनुसार होना चाहिए और ऐसी शिक्षा-व्यवस्थाएं कम करनी चाहिएं जिनसे शिक्षितों में बेरोजगारों की संख्या में और वढ़ती हो। बाकायदा पता लगाना चाहिए कि विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षित व्यक्तियों और शिक्षितों के लिए क्या-क्या रास्ते हैं और यह जानकारी शिक्षा और व्यवसाय सम्बन्धी परामर्श के रूप में या विश्वविद्यालय के छात्रों के रोजगार कार्यालयों की मार्फत अच्छी तरह सब को सुलभ कर देनी चाहिए। ग्राम क्षेत्रों में सहकारिता के और छोटे या मध्यम पैमाने के उद्योगों के विकास के साथ, शिक्षितों को उपयोगी ढंग से काम पर लगाने की सम्भावना अधिकाधिक बढ़ती जाएगी। शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन करते समय विकास सम्बन्धी उन प्रकार की सब बातों को दृष्टि में रखना होगा जो दूसरी पंचवर्षीय योजना में परिकल्पित हैं—ताकि, शिक्षा व्यवस्था में वे तत्व धीरे-धीरे पुष्ट हो जाएं, जिनसे रोजगार और काम मिलना बढ़ता और आसान होता है।

३०. उपरोक्त विश्लेषण से मालूम होता है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में परिकल्पित प्रयत्नों से श्रमिक वर्ग में नवागन्तुकों के लिए रोजगार के और अवसर आएंगे। खेती में लगे लोगों की संख्या में थोड़ी वृद्धि होगी, परन्तु खेती, सिचाई और ग्रामीण सामुदायिक विकास की अनेक योजनाओं से अर्ध-रोजगारी भी घटेगी तथा संख्या में वृद्धि होने पर भी आशा है प्रति व्यक्ति आय कोई १७ प्रतिशत बढ़ जाएगी। ग्रामोद्योगों और छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए इस अध्याय में जो अनुमान दिए हुए हैं, उनमें केवल पूरे वक्त के रोजगारों का ही विचार किया गया है। इसलिए, कम रोजगार कारीगरों के लिए और काम का भी थोड़ा-बहुत प्रबन्ध हो जाएगा। शिक्षित बेरोजगारों को योजना की ग्राम स्कीमों से भी फायदा होगा और उन स्कीमों से तो होगा ही जो उन्हें विभिन्न व्यवसायों की शिक्षा देने के लिए खास तौर पर लागू की जाएंगी।

इन निष्कर्षों से मालूम होता है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना में प्राप्त साधनों के उपयोग का संगठित प्रयत्न करने और उनका पूरा-पूरा लाभ प्राप्त करने पर भी बेरोजगारी और

अर्द्ध-रोजगारी की दोमुंही समस्या को सुलझाने की दिशा में उतना असर न होगा जितना होना चाहिए। साथ ही, यह भी एक तथ्य है कि पंचवर्षीय योजना में जो पूंजी लगाई जा सकती है उसकी भी सीमा है। भारी उद्योगों पर जोर दिया जा रहा है, इस वजह से पूंजी लगाने के क्रम में थोड़ा ही परिवर्तन किया जा सकता है—प्राथमिकता में और अधिक हेर-फेर करने से रोजगार की शक्ल में बहुत अधिक लाभ सम्भव नहीं दीखता। एक बात यह भी है कि जितना कुछ इस समय ज्ञात है, उसके आधार पर इसी समय यह जान सकना सम्भव नहीं कि योजना में परिकल्पित भारी उद्योगों में पूंजी लगाने से रोजगार की स्थिति पर किस-किस प्रकार से असर पड़ेगा। इस सम्बन्ध में इस बात पर जोर देना जरूरी जान पड़ता है कि योजना को इस तरह कार्यरूप देना चाहिए कि उत्पादन और रोजगार की सुविधा में अधिकतम वृद्धि हो। ऐसे कार्यों का, जो एक-दूसरे के पूरक हों, उचित प्रकार से समन्वय करके तथा योजनाजन्य पानी, बिजली आदि साधनों का सुनियोजित उपयोग करके यह सम्भव हो सकता है—इसमें यह भी देखना होगा कि जिनके लाभ के लिए नई संस्थाएं या नए अभिकरण स्थापित हो रहे हैं उन्हें उनका पूरा-पूरा लाभ मिले। जैसे-जैसे योजना का कार्य होता चले, उससे प्राप्त होने वाले अतिरिक्त रोजगार का मूल्यांकन भी निरन्तर होता रहना चाहिए ताकि रोजगार के लक्ष्य प्राप्त करने के लिए उचित उपाय किए जा सकें।

अध्याय ६

प्रशासनिक कर्तव्य और संगठन

दूसरी योजना के काम

इस समय राष्ट्रीय विकास की समस्याओं के प्रति देश में जो सामान्य सामाजिक-आर्थिक दृष्टिकोण प्रकट हो रहा है, उसमें समस्याओं के विश्लेषण और अनेक मूल नीतिगत प्रश्नों के विषय में बहुत काफी सहमति है। गौर से देखने पर मालूम होता है कि जो भेद हैं वे बहुधा दृष्टि-क्षेत्र या ब्योरे के मामले में हैं। नीति सम्बन्धी मामलों के बारे में यथेष्ट सहमति होने हुए भी इस सम्बन्ध में कुछ संशय प्रकट किया जाता है कि प्रशासनिक प्रयत्न अपनी सीमाओं के अन्दर उन उत्तरदायित्वों को संभाल सकेगा या नहीं जो केन्द्र और राज्य सरकारों ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत उठाए हैं। सम्भव है कि जैसे-जैसे योजना आगे चले, नीति और दृष्टिकोण के क्षेत्र में नहीं, प्रशासन और संगठन के क्षेत्र में अधिक कठिनाइयां आती चलें। कर वसूली व्यय, और छोटी बचतों द्वारा धनराशि जमा करना आदि सरकार के कार्यांग के ही अंग हैं। इसलिए वित्त को भी प्रशासन की सामान्य समस्या के अन्तर्गत माना जा सकता है।

२. विकास में वृद्धि के साथ "प्रशासन" शब्द का अर्थ भी बराबर विकसित होता जाता है। उसमें कर्मियों की वृद्धि, प्रशिक्षण, प्रशासन व्यवस्था का संचालन, जनता के सहयोग और सहकार्य का आवेदन, जनता में सूचना और जानकारी का प्रचार और अन्त में, प्रत्येक स्तर पर जन सहयोग एवं प्रौद्योगिक, आर्थिक व आंकिक जानकारी के आधार पर एक योजना पद्धति की रचना, यह सब कुछ शामिल हो जाता है। उत्तरोत्तर क्रम से नए-नए क्षेत्रों में प्रशासनिक कार्य आरम्भ किए जाते हैं—विशेषतः आर्थिक, औद्योगिक और वाणिज्य क्षेत्रों में। यदि केन्द्र और राज्यों में प्रशासन व्यवस्था अपना काम दक्षता, निष्ठा और फुर्ती से करे और जनहित न भूले, तो दूसरी पंचवर्षीय योजना की प्रगति निश्चित है। इस प्रकार दूसरी पंचवर्षीय योजना वास्तव में प्रशासनिक कार्यों की एक सुनिश्चित शृंखला का रूप धारण कर लेती है।

३. पहली योजना के मुकाबले में कार्य अधिक व्यापक है—और कहीं अधिक जटिल भी है। कुछ कार्य तो पूर्वपरिचित क्षेत्रों में ही होंगे और पिछले कामों की परम्परा में होंगे, तथापि उनका विस्तार पहले से बड़ा होगा। इसके अतिरिक्त बहुत कुछ ऐसा होगा जो वस्तुतः नया है और जिसके लिए आम तौर पर काफी लम्बी तैयारी की जरूरत होती है। दूसरी पंचवर्षीय योजना के मुख्य प्रशासनिक कार्य मोटे तौर पर शायद इस प्रकार बांटे जा सकते हैं:

(१) प्रशासन में निष्ठा और ईमानदारी पैदा करना।

(२) प्रशासनिक और प्रौद्योगिक संवर्ग स्थापित करना और रचनात्मक सेवा की प्रेरणा एवं अवसर प्रदान करना।

(३) नए कार्यों के सन्दर्भ में कर्मियों की आवश्यकता का निरन्तर अनुमान करते रहना, सब क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर प्रशिक्षण के कार्यक्रम शुरू करना और प्राप्य प्रशिक्षण

साधनों को संगठित करना—इनमें, सरकारी गैर-सरकारी संस्थाओं, औद्योगिक एवं अन्य प्रतिष्ठानों, अप्रेन्टिसों और नौकरी में रहते हुए काम सिखाने के केन्द्रों को भी शामिल किया गया है।

(४) काम के ऐसे तरीके निकालना जिससे जल्दी, अच्छी तरह और कम खर्च में काम हो जाए; निरन्तर निरीक्षण का प्रबन्ध करना और नियत अन्तर पर तरीकों और नतीजों के निरपेक्ष मूल्यांकन का प्रबन्ध करना।

(५) खेती, राष्ट्रीय विस्तार सेवा, सामुदायिक कार्य, और ग्रामोद्योग अथवा छोटे पैमाने के उद्योग जैसे क्षेत्रों में उत्पादकों को प्रौद्योगिक, आर्थिक अथवा अन्य प्रकार की सहायता पहुंचाना।

(६) औद्योगिक, वाणिज्यिक कार्यों में, परिवहन सेवाओं में और नदी घाटी योजनाओं जैसे कार्यों में सरकारी उद्योग के कुशल प्रबन्ध का संगठन करना।

(७) खेती और समाज सेवा जैसे क्षेत्रों में स्थानिक जन सहयोग उपलब्ध करना ताकि सार्वजनिक पैसे का पूरा-पूरा लाभ उठाया जा सके।

(८) संचालकीय और प्रौद्योगिक कर्मियों की सहायता द्वारा सहकार, वित्त, हाट-व्यवस्था आदि संस्थान स्थापित कर सहकारिता क्षेत्र का विकास करना।

प्रशासनिक कार्यों का यह विवरण किसी तरह सम्पूर्ण नहीं माना जा सकता। इनमें से प्रत्येक कार्य अपने में विशिष्ट है, फिर भी इन सबको दूसरी योजना के सन्दर्भ में अन्तरावलम्बित मानना ठीक होगा। इन कार्यों को उठाते समय यह जरूरी है कि नीति और कार्यक्रम की दृष्टि से अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में उद्देश्यों और लक्ष्यों का यथेष्ट समन्वय हो।

प्रशासन में ईमानदारी

४. जैसा कि पहली पंचवर्षीय योजना में उल्लेख किया जा चुका है, भ्रष्टाचार के ऐसे कुपरिणाम होते हैं कि उनसे छूटना मुश्किल हो जाता है और जनता का प्रशासन में विश्वास क्षीण हो जाता है। इस समय प्रशासन के कई क्षेत्रों में अधिकारियों में ईमानदारी की कमी की शिकायत की जाती है। बराबर सचेत रहकर तथा उपाय सोचते रहकर प्रशासन और समाज दोनों में से भ्रष्टाचार को निर्मूल कर देने की आवश्यकता है। कुछ वर्षों से केन्द्र और राज्यों में कुछ निश्चित उपाय किए भी जा रहे हैं। कई राज्यों ने भ्रष्टाचार विरोधी विभाग खोले हैं। विभागीय पड़ताल में देर न लगे ऐसा प्रबन्ध किया गया है। सरकारी नौकरों को नियत समय के अन्तर पर अपनी चल और अचल सम्पत्ति का ब्योरा देना पड़ता है। जनता के आवेदन पत्रों का हिसाब पहले से कहीं अधिक देना होता है। जिन अधिकारियों की नीयत सन्दिग्ध है, उन्हें वक्त से पहले ही अवकाश देकर विशेष दायित्व के पदों से दूर रखा जा रहा है। रेल मंत्रालय की एक जांच समिति ने रेलवे में भ्रष्टाचार की समस्या की जांच करके कई दुर्गुणों के लिए कई उपाय बताए हैं। रेल मंत्रालय बड़े-बड़े मामलों और गजटशुदा अफसरों के विरुद्ध मामलों के निपटारों के लिए एक भ्रष्टाचार विरोध संगठन नियुक्त करना चाहता है, और इस प्रकार की समितियां हर रेल व्यवस्था में खोली जाएंगी।

५. पहली पंचवर्षीय योजना में प्रशासन के अन्तर्गत ही निरीक्षण और सतर्कता की आवश्यकता पर जोर दिया गया था और कहा गया था कि भ्रष्टाचार पर असली हमला प्रशासन के हर क्षेत्र में कार्यकुशलता बढ़ाने से ही हो सकता है। विशेष रूप से यह कहा गया था कि विभागाध्यक्ष पता लगाएं कि प्रचलित नीतियों और पद्धतियों के कारण भ्रष्टाचार के मौके कहां-कहां निकलते हैं, ताकि वे अपने-अपने विभाग में ऐसी परिस्थितियों का उत्पन्न होना रोक सकें जिनमें भ्रष्टाचार आसानी से हो सकता है। कई जांच समितियों की राय है कि भ्रष्टाचार का एक साधन मामलों या अर्जियों के निपटारे में देर होना भी है। देर होने का कारण यह हो सकता है कि एक व्यक्ति पर कार्य का बोझ अत्यधिक हो, अथवा सत्ता केन्द्रित हो, कर्मचारियों की कमी हो, कर्मी अयोग्य हों, स्पष्ट नीति या निदेश न हों या ऐसी ही और कोई बात हो। प्रत्येक संगठन में पता लगाना चाहिए कि देर क्यों होती है और फिर आवश्यक उपाय करने चाहिएं। यह भी बताया गया था कि सरकारी कर्मचारियों की ढील की वजह बहुधा यह होती है कि ईमानदारी से किया गया अच्छा काम पूछा नहीं जाता और काम न जानने वाले या बेईमानी करने वालों को पूरी सजा नहीं मिलती। अन्त में, यह भी जरूरी है कि जनता को भ्रष्टाचार दूर करने का महत्व समझाया जाए और सरकारी प्रशासन के अन्दर ईमानदारी बनाए रखने में उसका सहयोग प्राप्त किया जाए। इसी खयाल से गृह मंत्रालय में एक प्रशासनिक चौकसी विभाग खोला गया है। यह विभाग एक ओर विशेष पुलिस प्रतिष्ठान से और दूसरी ओर विशेष रूप से नियुक्त चौकसी अधिकारियों से सम्पर्क रखता है जो सीधे विभिन्न मंत्रालयों और विभागों के सचिवों और विभागाध्यक्षों के नीचे कार्य करते हैं। प्रशासनिक चौकसी विभाग और उससे सम्बद्ध इकाइयों का उद्देश्य भ्रष्टाचार देखते ही तुरन्त कार्रवाई करना भी है और भ्रष्टाचार के कारणों को दूर करना भी है। इस प्रकार इस विभाग के निदेशक के अधीन विभिन्न मंत्रालयों और विभागों में नियुक्त चौकसी अधिकारी वर्तमान संगठनों और पद्धतियों की जांच करके पता लगाते हैं कि किन कारणों से भ्रष्टाचार या कुरीतियां बढ़ती हैं, उन्हें कैसे दूर या कम किया जाए; भ्रष्टाचार के प्रमाण पाने के लिए अचानक निरीक्षण या दौरा करते हैं और जहां यथेष्ट प्रमाण होता है वहां तुरन्त कार्रवाई करते हैं। चौकसी अधिकारी बाकायदा चलते हैं—पहले उन क्षेत्रों को लेते हैं जिनमें भ्रष्टाचार की सबसे अधिक गुंजाइश होती है। उनसे कहा गया है कि जिन मामलों से जनता का सम्बन्ध है, उनके लिए प्रक्रिया सम्बन्धी सहज स्वीकार्य नियम सर्व प्रचारित कर दिए जाएं। गृह मंत्रालय का चौकसी विभाग और उससे सम्बद्ध इकाइयां कोई साल भर से काम कर रहे हैं। अब तक जो अनुभव हुआ है उससे इतना कहा जा सकता है कि ऐसी ही व्यवस्था राज्यों में और बड़े-बड़े सरकारी उद्योगों में भी कर दी जाए तो हितकर होगा।

६. रेलवे भ्रष्टाचार जांच समिति ने भ्रष्टाचार निवारण की सफलता के लिए कुछ अनिवार्य आवश्यकताओं की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। ऐसा हो सकता है कि कभी कोई अधिकारी जिस पर भ्रष्टाचार का सन्देह हो बचा लिया जाए। व्यक्तियों को भ्रष्टाचार का भण्डा-फोड़ करने से दंडित किए जाने का डर होता है और यह डर हमेशा झूठ भी नहीं होता। बहुत-से छोटे-छोटे मामलों में भी लोग व्यक्तिगत प्रभाव से बच नहीं पाते और इससे यह भी होता है कि निर्बल पक्ष की हानि होती है। किसी खास रियायत की अपेक्षा न होने पर भी लोग अक्सर महसूस करते हैं कि प्रभाव के जरिए काम निकल सकते हैं। इस कुरीति के बने रहने से लोकतंत्रीय आयो-जन की बड़ी क्षति हो सकती है। और इसे दूर करने में जागरूक जनता बहुत सहायता दे सकती है। सही प्रकार की जन चेतना विकसित करने के लिए आवश्यक है कि भ्रष्टाचारी व्यक्तियों की

करतूत का पर्दाफाश किया जाए, जनता के अधिकारों और कर्तव्यों का प्रचार किया जाए और ऐसे दृष्टांत सब जगह प्रचारित किए जाएं जिनसे जनता को मालूम होता हो कि भ्रष्ट व्यक्ति को दंड दिया गया है।

प्रशासनिक और प्रौद्योगिक संवर्ग

७. आवश्यक कर्मियों के बिना कोई भी बड़ा कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता। प्रत्येक क्षेत्र में अधिकांश कार्य ऐसे हैं कि उनका प्रभाव दूर तक पड़ता है और प्रत्येक महत्वपूर्ण समस्या पर कई वर्षों तक बराबर ब्योरेवार ध्यान देते रहने की आवश्यकता है। कुछ वर्षों से यह प्रवृत्ति दिखाई देने लगी है कि नए कर्मचारी अस्थायी तौर पर नियुक्त कर लिये जाते हैं और उन्हें बरसों अस्थायी रखा जाता है। उनमें न सुरक्षा की भावना रहती है न अपनी सफलता का सन्तोष ही उन्हें मिलता है। इससे जनशक्ति का अपव्यय होता है और अन्ततः यह तरीका ज्यादा महंगा भी पड़ता है। जैसा कि 'दूसरी योजना में कर्मचारियों की आवश्यकता' शीर्षक आठवें अध्याय से प्रकट होगा, देश के साधनों के सुनियोजित विकास के साथ-साथ लगभग प्रत्येक क्षेत्र में कर्मियों की आवश्यकता बहुत बढ़ जाएगी। प्रत्येक विभाग के लिए सबसे ठीक तरीका यही है कि वह अपने यहां संवर्ग स्थापित करे और दूसरी योजना के कार्यक्रमों के लिए वर्तमान संवर्गों में स्थायी तौर पर भर्तियां करे। भारतीय सीमान्त प्रशासन सेवा द्वारा एवं राष्ट्रीय सेवा विस्तार अथवा सामुदायिक विकास कार्यक्रमों द्वारा पहली पंचवर्षीय योजना के अधीन ऐसा किया जा चुका है और इसमें सफलता भी मिली है।

८. भारतीय प्रशासन सेवा पर, जो केन्द्र और राज्य दोनों के लिए है, अब उत्तरदायित्व बढ़ता जा रहा है। इस संवर्ग के लिए आवश्यक कर्मचारियों की संख्या का हाल में ही पांच आगामी वर्षों को दृष्टि में रखकर पुनः निर्धारण किया गया है और अनुभवी व्यक्तियों में से ३८६ अतिरिक्त नियुक्तियां करने का प्रबन्ध भी किया जा चुका है। इनके अलावा अगले ५ वर्षों में प्रतियोगिता द्वारा निम्नतर श्रेणी में २२५ व्यक्ति और लिये जाएंगे।

९. दूसरी पंचवर्षीय योजना को कार्य रूप देने के लिए राज्य सरकारें भी विभिन्न स्तरों पर प्रशासकीय कर्मचारियों की आवश्यकता का अनुमान करती रही हैं। जैसा पहली योजना में कहा गया था, जिलों में ब्योरेवार प्रशासन का अधिकांश दायित्व राज्य प्रशासन सेवा के कर्मचारियों पर ही रहता है और यह बहुत कुछ उन्हीं का जिम्मा हो जाता है कि प्रशासन की विभिन्न शाखाओं में समन्वय करें तथा विकास कार्यों में जनता का सहयोग प्राप्त करें। यह निश्चय करने के लिए कि ये सेवाएं राज्यों में अपना दायित्व पूरा कर सकें, यह जरूरी है कि संवर्गों की शक्ति यथेष्ट हो। अलग-अलग अधिकारियों का प्रशिक्षण भी उतना ही जरूरी समझा जाए जितना अखिल भारतीय सेवा में आने वालों का। और राज्य सेवाओं के सर्वोत्तम व्यक्तियों को उदारतापूर्वक पदवृद्धि के अवसर दिए जाएं। राज्य प्रशासन सेवाओं पर दूसरे योजना काल में बहुत अधिक दायित्व बढ़ जाएगा। हाल की समीक्षा के बाद निम्नांकित प्रस्ताव राज्य सरकारों के विचारार्थ प्रस्तुत किये जा रहे हैं :

(१) राज्य संवर्गों की अभिवृद्धि करने से पहले काफी लम्बे समय, कोई १० वर्ष, की जरूरतें सोच लेनी चाहिएं।

(२) आवश्यकताओं का अनुमान करते समय राज्य सरकारों के उस दायित्व में संभावित विस्तार का यथेष्ट ध्यान रखना चाहिए जो वे अपने कार्यक्रमों और

केन्द्रीय सरकार के कार्यक्रमों के सम्बन्ध में उठाएंगी । प्रत्येक संवर्ग में काफी लोग सुरक्षित रखने चाहिएं—प्रशिक्षण में सहायता देने के लिए भी लोग रखे जाएं ।

(३) राज्य संवर्गों में वृद्धि यथासम्भव स्थायी आधार पर की जाए ।

(४) जैसा कि आगे चलकर स्पष्ट कर दिया गया है, जिला विकास कार्यक्रमों से कलक्टरों पर काम बढ़ रहा है । इसलिए उन्हें अपना कर्तव्य भली-भांति पालन करने के लिए यथेष्ट सहायता दी जानी चाहिए ।

(५) प्रशासकीय कर्मचारियों के प्रशिक्षण के कार्यक्रम कई राज्यों में सम्पुष्ट किए जा रहे हैं और अब उनमें ग्राम विकास को भी शामिल कर लिया गया है । अनुभवी और योग्य अधिकारी चुनकर उन्हें ऐसी जगहों पर नियुक्त करना चाहिए जहां से वे नए कर्मचारियों के शुरू-शुरू के वर्षों में उनके काम का बारीकी से निरीक्षण कर सकें और उनके परीक्षण में व्यक्तिगत तौर पर दिलचस्पी ले सकें । प्रशिक्षण के तरीकों की ओर भी ज्यादा ध्यान देना ठीक होगा—इस विषय में राज्य सरकारों को एक-दूसरे से अनुभव और ज्ञान का आदान-प्रदान करते रहना चाहिए ।

१०. पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में जो अनुभव प्राप्त हुआ, उससे यह तथ्य प्रमाणित हुआ है कि अधिक विकसित राज्यों में भी विकास कार्यक्रम का सामान्य विस्तार करने से प्राप्य टेकनीकल व्यक्ति-साधन पर जोर पड़ता है और खास तौर से ऊंचे स्तरों पर । सब प्रकार के विकास में ऐसा ही होता है और कुछ कम विकसित राज्यों में तो इसके कारण दशा शोचनीय भी हो गई है । उदाहरण के लिए, कुछ राज्यों में महत्वपूर्ण विभागों में ऊंचे अधिकारियों या निदेशकों के बिना काम चलाना पड़ रहा है । 'ग' भाग के कुछ राज्यों में नीचे स्तर पर भी टेकनीकल व्यक्तियों की कमी रही है और वहां खर्च में कमी पड़ जाने और अन्ततः पहली पंचवर्षीय योजना के लक्ष्य न पा सकने में जितना हाथ इस बात का रहा है उतना किसी और का नहीं । हो सकता है कि कुछ राज्यों में टेकनीकल व्यक्ति उपलब्ध करने की सुविधा हो, फिर भी योजना की एक महत्वपूर्ण सीख यह रही है कि औसत राज्य विकास की बढ़ती हुई जरूरतों के अनुसार ऊंची योग्यता के व्यक्ति जुटाने, समुचित प्रशिक्षण का प्रबन्ध करने और हमेशा कुछ आदमी अलग से तैयार रखने में समर्थ नहीं होता । इसलिए यदि पहली योजना की परिकल्पना के अनुसार अखिल भारतीय सेवाओं, सम्मिलित विकास संवर्ग या केन्द्र और राज्यों में अन्य प्रकार के सहकारिता प्रबन्ध किए जाएं और इसी सिलसिले में राज्य समूहों की आवश्यकता पूरी करने के लिए प्रादेशिक आधार पर संवर्ग बनाए जाएं और अन्य सहकारिता प्रबन्ध किए जाएं तो उनसे लाभ होगा । सिफारिश की जाती है कि इस विषय में विस्तार से प्रस्ताव तैयार किए जाएं ।

कम खर्च और कार्यकुशलता

११. दूसरी योजना का विशाल आकार देश पर काफी बड़ा भार डालेगा और जनता के सब वर्गों पर काफी प्रयत्न करने का दायित्व होगा । आम तौर से यदि जनता को विश्वास हो कि सरकार जो साधन जुटाएगी उन्हें मितव्ययिता और कुशलता से खर्च करेगी और उसकी बरबादी नहीं होगी तो वह और भी अधिक दायित्व उठाने को तैयार हो सकती है । यह बात माननी पड़ेगी कि दूसरी योजना में पहली योजना के मुकाबले हर विभाग या अधिकरण द्वारा अधिक

व्यय होने के कारण खर्च में पहले से ज्यादा सावधानी वरतनी होगी। खर्च में किफायत के उपाय वरतने के लिए केन्द्र और कुछ राज्यों में विशेष दल काम करते रहे हैं। जैसे-जैसे विकास कार्य बढ़ रहा है, अधिकाधिक धन ऐसे कार्यों में खर्च हो रहा है जिनमें निर्माण या दुष्प्राप्य माल और सामान के आयात की जरूरत है। इसलिए हर विभाग को संगठन, पद्धति और कार्यक्रम इस प्रकार बनाने चाहिएं कि जनता के पैसे का दुरुपयोग न होने पाए और उससे अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। प्रत्येक संगठन में आन्तरिक कार्यकुशलता की जांच-पड़ताल करने और व्यय पर नियन्त्रण रखने की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। योजना कार्यों में किफायत के खास इरादे से राष्ट्रीय विकास परिषद् ने हाल ही में एक योजना कार्य समिति नियुक्त की है। इसका विशेष कर्तव्य यह होगा कि—

(१) केन्द्र और राज्यों में विशेष रूप से चुने हुए लोगों द्वारा महत्वपूर्ण योजना कार्यों की पड़ताल कराए, मौके पर जाकर भी देखे;

(२) किफायत करने, फिजूलखर्ची रोकने और कार्यों का कुशलतापूर्वक सम्पादन करने के लिए संगठन के रूप, पद्धतियां, प्रतिमान और तरीके खोज निकाले;

(३) विभिन्न योजना कार्यों और उनके सम्पादन के अभिकरणों में आन्तरिक कार्य-कुशलता की निरन्तर पड़ताल की समुचित व्यवस्था निर्धारित करने में मदद दे;

(४) उसके पास आए हुए प्रतिवेदनों में जो सुझाव हों उनको कार्य रूप दे और अध्ययन और शोध के परिणाम आम तौर से सबको प्राप्य हों, इसका प्रबन्ध करे; और

(५) दूसरी पंचवर्षीय योजना में किफायतशारी और कार्यकुशलता के लिए राष्ट्रीय विकास परिषद् और जो काम बताए वह करे।

योजनाधीन कार्य पड़ताल के लिए ६ वर्गों में बांटे गए हैं: सिंचाई और बिजली, सार्वजनिक निर्माण और आवास, खेती और सामुदायिक विकास, परिवहन और संचार, सार्वजनिक कारखाने और खनिज उद्योग तथा समाज सेवा। प्रत्येक विभाग के लिए समिति केन्द्रीय मंत्रियों और राज्यों के मुख्य मंत्रियों की गोष्ठियों के माध्यम से कार्य करेगी। पड़ताल टोलियों के प्रतिवेदनों पर विचाराधीन योजना कार्यों से सम्बद्ध राज्यों के मुख्य मंत्रियों के साथ विचार-विमर्श होगा और आम तौर से पड़ताल टोलियां अपने प्रतिवेदनों के मसौदों को समिति के सामने रखने से पहले उस पर केन्द्र या राज्य के विभागों या अधिकरणों की राय जान लिया करेंगी। पड़ताल के सम्बन्ध में आम नीति सम्बन्धी बातों पर राष्ट्रीय विकास परिषद् की स्थायी समिति में समय-समय पर विचार हुआ करेगा।

१२. पिछले दो वर्षों से केन्द्र के मंत्रिमण्डल सचिवालय में एक संगठन और पद्धति निदेशालय काम कर रहा है। विभिन्न मंत्रालयों ने भी विशेष संगठन और पद्धति विभाग खोले हैं जो उक्त निदेशालय से घनिष्ठ रूप से सहयोग करते हैं। इस प्रबन्ध से काम का निपटारा जल्दी होने लगा है और प्रशासनिक कार्यकुशलता में ज्यादा दिलचस्पी ली जाने लगी है। अनेक राज्यों में भी संगठन और पद्धति विभाग खोलने का उपाय हुआ है। सिफारिश की गई है कि प्रत्येक राज्य संगठन और पद्धति विषयक विशेष विभाग खोले और उनकी मदद से आवश्यक टेकनीकल निदेशन देने के अलावा अनुभव का ऐसा भण्डार एकत्र करे जिससे सब विभाग लाभ उठा सकें। केन्द्रीय संगठन और पद्धति निदेशालय प्रशिक्षण की सुविधा देने की स्थिति में है और उसके अनुभव से राज्य भी लाभ उठा सकते हैं।

१३. संगठन और पद्धति की ओर ध्यान देने से अमूल्य लाभ हो सकता है, पर साथ ही साथ सब श्रेणियों के सार्वजनिक नौकरों को अपनी कार्यकुशलता बढ़ाने के लिए सही मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण भी अपनाना होगा। सुनियोजित विकास और गरीबी दूर करके एक ऐसी सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था करना जिसमें सबको समान अवसर प्राप्त हों—इन उद्देश्यों से प्रेरित होकर कालान्तर में आशा की जा सकती है कि सभी सरकारी नौकरों की कार्यकुशलता बढ़ेगी। अपने कर्तव्य का योग्यतापूर्वक पालन उस व्यक्ति का स्वाभाविक गुण होना चाहिए जिसे किसी काम के लिए प्रशिक्षित किया गया हो और सरकारी नौकरी को जिसने अपना पेशा बनाया हो। प्रशासनिक व्यवस्था का सबसे अच्छा उपयोग करने के लिए कुछ पहलुओं पर खास जोर दिया जाना चाहिए। पहले तो कोशिश करके ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए कि सब स्तरों पर अधिकारियों को अधिकाधिक उत्तरदायित्व निबाहने का अवसर मिले और वे सचमुच उसे निबाहें। दूसरे योग्यता और नेतृत्व शक्ति वाले व्यक्तियों को उनके कार्यकाल के काफी आरम्भ में ही चुन लिया जाए और ऐसे काम सौंपे जाएं कि उनकी योग्यताएं और बढ़ें और अधिक दायित्व वाले कार्यों का भार वे उठा सकें। तीसरे, यह देखते हुए कि जो प्रशासनिक कार्य सब क्षेत्रों में किया जाना है वह कितना विशाल है, फुर्ती और मेहनत की भावना पर जोर देना चाहिए। चौथे, विकास के सन्दर्भ में कर्मचारी नीति में कठिन नियमबद्धता की जगह परिवर्तन करना चाहिए। उदाहरण के लिए प्रशासकों में और टेकनीकल कर्मचारियों में जो प्रशासनिक काम करते हों, या विभिन्न श्रेणियों और संवर्गों के अधिकारियों में भेदभाव की अब जगह ही नहीं है। विभिन्न क्षेत्रों में नए स्थानों से नए लोग लेने की जरूरत है और थोड़े या ज्यादा समय के लिए विविध अनुभवों और योग्यताओं वाले व्यक्तियों को प्रशासन में लाने की आवश्यकता है। अन्ततः सरकार के अन्दर प्रत्येक विभाग में सही मानवीय सम्बन्ध की स्थापना पर पहले से ज्यादा जोर देना होगा। उन सब क्षेत्रों की भांति जिनमें मनुष्य विभिन्न रूपों में मिलकर एक ही उद्देश्य के लिए काम करते हैं, प्रशासन में भी बंधुत्व की भावना, अच्छे काम की प्रशंसा से उत्पन्न आत्म-विश्वास और उन निर्णयों के स्थिर करने में योग देने का अवसर जिन्हें स्वयं कार्यरूप देना है आदि, सरकारी कर्मचारियों में उत्साह और कार्यकुशलता बढ़ाने में बहुत अधिक सहायक होंगे।

१४. वर्तमान प्रशासन प्रणाली की एक कमजोरी यह है कि उसमें प्रशासनिक नियंत्रण का ढंग ठीक नहीं है। इस सिलसिले में दो बातें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। पहली पंचवर्षीय योजना में बताया गया था कि ऊंचे सरकारी नौकरों का बहुत-सा समय उस काम में लग रहा है जो पहले नीचे के स्तर पर ही हो जाता था। "सरकार का प्रत्येक विभाग नए-नए दायित्व लेता जा रहा है पर साथ ही साथ प्रत्येक विभाग में सार्थक निर्णय लेने का अधिकार अधिकाधिक ऊंचे अधिकारियों के पास ही एकत्र होता जा रहा है।" पथ-प्रदर्शन करने का और निर्णय लेने का अधिकार ऊंचे अफसरों में ही केन्द्रित होता जाए—ऐसी प्रवृत्ति अब भी थोड़ी-बहुत है। इसको दूर करना अंशतः संगठन और पद्धति का काम है अंशतः इसमें यह बात भी देखनी है कि प्राप्य कर्मचारी साधनों का सबसे अच्छा इस्तेमाल कैसे किया जाए और लोगों को दायित्व ग्रहण करने का प्रोत्साहन कैसे दिया जाए।

१५. लगभग ऐसी ही समस्या सचिवालय के विभागों और सचिवालय के बाहर के विभागों या अधिकरणों के पारस्परिक सम्बन्ध में उठती है। पहली पंचवर्षीय योजना में इस बात पर जोर दिया गया था कि सम्बद्ध या अधीन कार्यालयों जैसे कार्यपालक संगठनों के प्रधानों को

यथेष्ट स्वाधीनता से काम करने दिया जाए और साथ ही साथ उन्हें यह भान भी रहे कि अपने मंत्रालयों के वे विश्वासपात्र हैं। जब कोई सचिवालय या मंत्रालय मामूली-मामूली बात पर नियन्त्रण रखता है तो उस विभाग में उत्साह और स्फूर्ति कम होने लगती है। इस दिशा में थोड़ा सुधार हुआ है और कार्यांग विभागों को और ज्यादा दायित्व ग्रहण करने का प्रोत्साहन दिया जा रहा है, पर यह प्रोत्साहन जारी रखने की जरूरत है। पहली पंचवर्षीय योजना में यह भी सुझाव दिया गया था कि केन्द्रीय मंत्रालयों और राज्य सरकारों को उस दायित्व की, जो उन्होंने हाल के वर्षों में ग्रहण किया है, विधिवत समीक्षा करनी चाहिए और सोचना चाहिए कि उसमें से कितना और कौन-सा काम अधीनस्थ अधिकरणों के जिम्मे सौंपा जा सकता है। आम तौर से यह अच्छा होगा कि मंत्रालयों या सचिवालयों की विशिष्ट नीति के क्षेत्र यथासम्भव स्पष्टतः निर्दिष्ट कर दिए जाएं और कार्यपालक दायित्व अलग-अलग विभागों को इस प्रकार सौंप दिए जाएं कि वे सचिवालय का कम से कम सहारा लेकर उनका पालन कर सकें।

१६. दूसरी पंचवर्षीय योजना के परिपालन में पहले से ज्यादा महत्वपूर्ण रूप में एक समस्या यह आती है कि अल्प साधनों वाले लोगों को टेकनीकल, वित्तीय और अन्य सहायता पहुंचाने के लिए उपयुक्त प्रशासनिक पद्धतियों और माध्यमों की जरूरत है। खेती में हो या छोटे उद्योगों में या समाज सेवा में, व्यक्ति और धन दोनों के सीमित साधनों से ही विशाल व्यक्ति समुदाय की सेवा करनी है। विभिन्न योजनाओं में सहायता देने की शर्तें इस प्रकार की रखनी चाहिएं कि उनसे अल्प साधन वाले लोगों का हित हो। फिलहाल, अक्सर यह होता है कि किस-किस को सहायता दी जाए, इस मामले में काफी छूट रहती है और हो सकता है कि जरूरत से ज्यादा सहायता उन लोगों को मिल जाए जो अपेक्षाकृत समृद्ध हैं या जो अपने दावों की ओर खास ध्यान दिलवा सकते हैं। इसके अलावा प्रत्येक क्षेत्र में सार्वजनिक सहायता का समुचित वितरण करने के लिए यह जरूरी है कि छोटे उत्पादकों को संगठित किया जाए जैसे कि सहकारिता संस्थाओं आदि में होता है, ताकि उस संगठन के सदस्यों की सच्ची मदद हो सके। जहां-जहां ऐसे संगठन हैं और उनके सदस्य जागरूक हैं, वहां प्रशासन भी विभिन्न व्यक्तियों की अपेक्षा उन्हें अधिक सहायता और निदेश दे सकता है। ये संगठन अपने सदस्यों के प्रति अधिक दायित्व ग्रहण करते जा सकते हैं जिससे प्रशासन व्यवस्था का बोझ भी कम हो सकता है। खेती, छोटे उद्योगों और अन्य क्षेत्रों में सहकारिता का योग आगे के अध्यायों में बताया गया है। यहां केवल इस बात पर जोर दे देना काफी है कि यथासम्भव सहकारिता संस्थाओं की रचना और पारस्परिक सहायता की व्यवस्था दूसरी पंचवर्षीय योजना के महत्वपूर्ण प्रशासनिक कार्यों में शामिल है और ऐसे ही प्रबन्धों द्वारा अल्प साधन वाले व्यक्तियों का स्वयं अपने कार्य का विकास तथा सार्वजनिक सहायता का पूर्ण उपयोग सम्भव हो सकता है।

सार्वजनिक उद्योग

१७. दूसरी पंचवर्षीय योजना के अधीन सार्वजनिक उद्योगों की क्या प्रशासनिक आवश्यकताएं होंगी—इस पर औद्योगिक नीति प्रस्ताव में उल्लिखित सार्वजनिक उद्योग के स्थान की दृष्टि से विचार करना होगा। दूसरी योजना में औद्योगिक विकास की योजनाओं के कारण सरकार पर और बातों के अलावा नए इस्पात संयंत्रों, कोयला खानों, भारी मशीन बनाने के कारखानों, खाद कारखानों, भारी बिजली का सामान बनाने वाले कारखानों और तेल अनुसन्धान और विकास का दायित्व डाला गया है। पहली और दूसरी योजनाओं में पूंजी विनियोग की तुलना से

आधुनिक उद्योग में सरकार की बढ़ती हुई जिम्मेदारी का आभास हो जाता है। राज्य व्यापार निगम स्थापित करने का निर्णय इस बात का एक और प्रमाण है कि सरकार को अगले पांच ही नहीं आगे के अनेक वर्षों के लिए अपने काम को कर्मचारियों से सम्पन्न कराना है और संगठन रचने हैं। उन औद्योगिक कार्यों के अतिरिक्त जिन्हें सरकार स्वयं चलाती है, ऐसी भी बहुत-सी योजनाएं हैं जिनमें सरकार को औद्योगिक विकास में घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध होना है। औद्योगिक साज-सामान और संयंत्रों को बनाने के लिए डिजाइन तैयार करने वाले संगठन सरकार के अन्तर्गत ही बनाए जाते हैं। उद्योग (विकास और नियमन) अधिनियम, १९५१ के अधीन विभिन्न उद्योगों के सहायतार्थ विकास परिषदों के लिए भी व्यक्ति खोजने हैं।

१८. पहली पंचवर्षीय योजना में केन्द्र और राज्य सरकारों के औद्योगिक प्रयत्नों के लिए कर्मी खोजने के विशेष प्रबन्ध की ओर ध्यान आकर्षित किया गया था। हाल ही में उत्पादन, परिवहन और संचार, लोहा और इस्पात और वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के अधीन सरकारी उद्योगों में कर्मचारी नियुक्त करने के लिए एक उद्योग प्रबन्ध सेवा स्थापित करने का निर्णय किया गया है। इस सेवा का अभिप्राय यह है कि औद्योगिक दायित्वों के लिए प्रबन्ध कर्मचारी जुटाए जा सकें, जैसे, आम प्रबन्ध, वित्त और हिसाब-किताब (सर्वोच्च नौकरियां छोड़कर) क्रय-विक्रय, परिवहन, भण्डार कर्मचारी, प्रबन्ध और कल्याण, नगर प्रशासन इत्यादि में जरूरी होते हैं। इस सेवा में सार्वजनिक सेवा में से और बाहर से भी लोग भरती किए जाएंगे। नीचे के स्तरों पर कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाएगी ताकि बाद में वे कर्मचारी अधिक दायित्व संभाल सकें। इस सेवा का नियामक गृह मंत्रालय होगा और इसे परामर्श देने के लिए एक मण्डल स्थापित किया जाएगा जिसमें सम्बद्ध मंत्रालयों के प्रतिनिधि और मंत्रिमंडल के सचिव सदस्य रहेंगे। यह भी विचार है कि सार्वजनिक उद्योगों को नीचे स्तर पर निर्दिष्ट संख्या से अधिक स्थानों पर अस्थायी नियुक्तियां करने को कहा जाए ताकि कालान्तर में विकासशील सार्वजनिक उद्योगों की जरूरतें पूरी हो सकें। इस सेवा से राज्यों के उद्योग विभागों में ऊंची श्रेणियों के कर्मचारी भी जा सकेंगे—वहां छोटे, मध्यम और सहकार उद्योगों का काम निरन्तर बढ़ता ही जाएगा। टेकनीकल कर्मचारियों के बारे में यह प्रस्ताव विचाराधीन है कि एक या अधिक टेकनीकल संवर्ग बनाए जाएं जिनसे राज्य के औद्योगिक कार्यों के लिए टेकनीकल आदमी मिल सकें।

१९. व्यापार प्रबन्ध में प्रशिक्षण की सुविधाएं बढ़ाने का असर औद्योगिक क्षेत्र के विकास की गति पर काफी पड़ेगा। छोटे अफसरों को व्यापार प्रशासन की शिक्षा देने के कोर्स हाल ही में बम्बई, कलकत्ता, मद्रास और दिल्ली में शुरू किए गए हैं। एक प्रशासनिक कर्मचारी कालेज खोलने का भी प्रस्ताव है जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के ऊंचे कार्यपाल एकत्र होकर संगठन और प्रशासन की पद्धतियों का अध्ययन करेंगे। प्रमुख केन्द्रों में प्रबन्ध संस्थाएं भी खोली जा रही हैं।

२०. जहां बड़ी-बड़ी संस्थाओं के संचालन का सवाल है, वहां दो स्तरों पर उचित संगठन की आवश्यकता होती है: (क) विभिन्न उद्योगों के लिए, और (ख) विभिन्न उद्योगों या उद्योग समूहों के समन्वय, निदेशन, संगठन या आयोजन से सम्बद्ध दायित्वों को पूरा करने के लिए। इस तरह उदाहरण के लिए दूसरी श्रेणी के कार्य रेलवे, लोहा और इस्पात और उत्पादन मंत्रालय तथा राष्ट्रीय उद्योग विकास निगम करते हैं। इस स्तर के नीचे कुछ वर्षों से अनेक प्रकार के संगठन विकसित होते रहे हैं, पर औद्योगिक कार्यों में ज्वाइंट स्टाक कम्पनी प्रणाली जिसमें सारी पूंजी सरकार की ही होती है अधिकाधिक अपनाई जा रही है। इस प्रकार राष्ट्रीय इंस्ट्रूमेंट फैक्टरी,

इन्टीगरल कोच फैक्टरी और चित्तरंजन लोकोमोटिव विभागीय प्रबन्ध के उदाहरण हैं। सिन्दरी, हिन्दुस्तान केबल्स, भारत इलेक्ट्रोनिक्स, एन्टीबायोटिक्स और अन्य स्थानों में कम्पनी पद्धति अपनाई गई है। दामोदर घाटी योजना और विमान सेवाओं के लिए विधिसम्मत निगम बनाए गए हैं। अनेक सिंचाई कार्यों का प्रशासन, केन्द्र और राज्य के प्रतिनिधियों से युक्त नियंत्रण बोर्डों द्वारा होता है। विभिन्न सार्वजनिक उद्योगों में कौन-कौन-सी संगठन पद्धतियां ठीक हैं, इसका निर्णय करते समय सबसे अधिक ध्यान इस बात पर देना है कि विभागीय प्रशासन में सामान्य रूप से प्रयुक्त प्रशासनिक और वित्तीय पद्धतियां वाणिज्य और औद्योगिक प्रशासनों में उपयुक्त सिद्ध नहीं होतीं। इन प्रशासनों में व्यापार सम्बन्धी नियमों और आदर्शों के अनुरूप व्यवस्था रखनी पड़ती है और बाकी उद्योगों की ही तरह बल्कि कुछ अर्थ में उससे अधिक दायित्व निभाने पड़ते हैं। इसलिए मोटे तौर पर नीति यह है कि सरकार की अन्तिम जिम्मेदारियां और संसद् के प्रति उत्तरदायित्व को रखते हुए इन संगठनों को अधिकतम प्रबन्धकीय और प्रशासकीय स्वाधीनता दे दी जाए। सार्वजनिक उद्योगों के संगठनों के प्रश्नों पर निरन्तर विचार होता रहता है और काफी अनुभव के बाद ही कुछ प्रकट हो सकता है कि विभिन्न प्रकार के संगठनों के अपने-अपने लाभ क्या हैं। उदाहरणार्थ इस विषय पर लोक सभा की अनुमान समिति की हाल की रिपोर्टों में भी काफी ध्यान दिया जा चुका है। संचालक मण्डलों की रचना और कार्य अधीनस्थ सार्वजनिक उद्योगों के प्रति मंत्रालय या सचिवालय का सम्बन्ध और एक-से सार्वजनिक उद्योगों के लिए किसी हद तक एक प्रबन्ध की आवश्यकता—ये कुछ प्रश्न हैं जो विभिन्न मंत्रालयों में विचाराधीन हैं।

२१. बड़े पैमाने के उद्योगों में और उन मण्डलों या मंत्रालयों में जिनके अधीन वे काम कर रहे हैं काफी दीर्घकालीन आयोजन की जरूरत है। कठिन समस्याएं हैं, जैसे योग्य और विश्वास-पात्र टेकनीकल सलाहकार, विदेशों और विदेशी फर्मों से व्यवहार, निरीक्षकों और मुख्य कर्मचारियों का संगठन, विदेशी विशेषज्ञों का चयन और अलग-अलग उद्योगों की जरूरत के हिसाब से वैज्ञानिक प्रबन्ध पद्धति को अपनाना। इसलिए सार्वजनिक उद्योगों में प्रबन्ध पद्धति और कर्मचारी नीति के प्रश्नों के सम्बन्ध में बराबर सावधानी से अध्ययन की जरूरत है और इसमें विभिन्न विशेषज्ञ और प्रमुख संगठन, चाहे वे सार्वजनिक क्षेत्र में हों या निजी क्षेत्र में महत्वपूर्ण अनुभव दान कर सकते हैं।

राज्यों में योजना व्यवस्था

२२. पहली पंचवर्षीय योजना में अधिकांश राज्यों ने अपनी योजना गोष्ठियां बना ली थीं। ऐसा नियम है कि प्रत्येक राज्य में योजना और विकास के काम पूर्णकालिक या लगभग पूर्णकालिक सचिवों के जिम्मे हैं जिनमें से बहुतों को राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों में कार्यपालक का दायित्व भी निबाहना पड़ता है। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में राज्यों में योजना का काम विस्तार और जटिलता में बढ़ेगा, ऐसी आशा है। अभी तक राज्यों में योजना विभाग का काम यही रहा है कि वह बाकी विभागों के काम का सीमित मात्रा में समन्वय करता रहे। अब उसका काम अधिकाधिक राज्य की आर्थिक और सामाजिक आवश्यकताओं तथा वित्तीय और भौतिक साधनों के अध्ययन, प्रशिक्षण कार्यक्रम और राज्य के कार्यक्रमों की समस्त नीति से सम्बन्धित होगा। रोजगार का स्तर, प्रशिक्षण कर्मचारियों की पूर्ति, योजना के सम्पादन के योग्य भौतिक साधनों की पूर्ति, थोड़ा-थोड़ा बचाने का आंदोलन, मूल्यों की प्रवृत्ति और उपभोग्य सामग्री की पूर्ति आदि ऐसे विषय हैं जो कि अधिकाधिक राज्यों की योजना के क्षेत्र में आते जाने

चाहिएं। वार्षिक योजनाओं की रचना, योजना की शैलियों में सुधार और राज्य की अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की तथा विभिन्न योजना कार्यों की प्रगति का नियमित एवं सही लेखा-जोखा, इन सबके कारण राज्यों के योजना संगठनों का विकास करना और उन्हें मजबूत करना अपेक्षित होगा। कुछ राज्यों में आवश्यक काम हो भी रहा है। इस सम्बन्ध में इस बात पर जोर देना जरूरी है कि राज्यों में अंक-संकलनकर्ता कर्मचारियों और अर्थशास्त्रियों की वृद्धि करनी है और उन्हें योजना विभागों से मिलकर काम करना है।

२३. जैसा कि अगले अध्याय में बताया गया है, जिला और राज्य दोनों स्तरों पर प्रमुख गैर-सरकारी व्यक्ति योजनाओं की रचना और सम्पादन से सम्बद्ध हैं। अन्य लोगों के अतिरिक्त राज्य विधान मण्डलों और संसद के सदस्य, जिला विकास समितियों में और योजना कार्य परामर्श समितियों के अलावा राज्य योजना मण्डलों में भी काम कर रहे हैं। संसद सदस्य केन्द्रीय सरकार से और घनिष्ठ सहयोग कर सकें, इसके लिए दो साल हुए अनौपचारिक सलाहकार समितियां बनाई गई थीं जिनमें लोक सभा और राज्य सभा के सदस्य थे और जो अनेक मंत्रालयों के हेतु बनी थीं। पिछले साल ये परामर्श समितियां विभिन्न क्षेत्रों में योजना कार्य से सम्बद्ध रही हैं और विभिन्न स्तरों पर योजना आयोग ने अपने से सम्बद्ध परामर्श समिति से सलाह ली है। योजना आयोग ने राज्य सरकारों के आगे यह प्रस्ताव भी रखा था कि प्रत्येक राज्य से निर्वाचित संसद् सदस्य आयोजन के काम से और खास तौर से दूसरी योजना की तैयारी से सम्बद्ध किए जा सकते हैं। इस प्रकार का सम्बन्ध योजना के सम्पादन में बहुत महत्व का होगा और आशा है कि राज्यों में संसद सदस्यों और राज्य विधान मण्डलों से अनौपचारिक परामर्श का प्रबन्ध किया जाएगा जिससे योजना की प्रगति की समीक्षा हो सके और जनता का उसके परिपालन में सहयोग और समर्थन मिल सके।

राष्ट्रीय और राज्य योजनाओं का वार्षिक संशोधन

२४. जैसा कि प्रथम अध्याय में बताया गया है, नियोजित विकास के आर्थिक और सामाजिक उद्देश्यों का विचार करते समय काफी दूर तक—जैसे १५ वर्ष तक—आगे देखना चाहिए। दूसरी पंचवर्षीय योजना बनाते समय इस्पात और भारी उद्योगों के विकास के लिए, सिंचाई और बिजली में, कर्मचारी योजना में, शिक्षा के आयोजन तथा खाद्य पूर्ति के सन्दर्भ में और जनसंख्या की प्रवृत्ति आंकने में दो या तीन योजनाकालों की सम्भाव्य आवश्यकताओं और विकास का ध्यान रखा गया है। दूर तक के आयोजन में एक ऐसा दृष्टि-विस्तार मिलता है जो विभिन्न क्षेत्रों के सन्तुलित विकास के लिए और सामाजिक प्रवृत्तियों को आंकने के लिए उपयोगी होता है। कम अवधि, जैसे १ वर्ष के लिए, निस्सन्देह ब्योरेवार योजना की जरूरत होती है। पांच साल की योजनाओं को एक तरह से इन दीर्घकालिक ग्राम योजनाओं और एक-एक साल की सविस्तर योजनाओं में बैठाना पड़ेगा। पांच बरस की योजना से उन सुस्पष्ट कार्यों पर ध्यान एकाग्र करना सम्भव हो जाता है जिनके लिए देश के साधनों और शक्तियों को संगठित करना है। पांच साल की योजना स्वभावतः परिकल्पना और परिपालन दोनों की दृष्टि से ऐसी होनी चाहिए कि वह छोटे-मोटे परिवर्तनों को स्वीकार कर सके।

२५. पंचवर्षीय योजना के सम्पादन में रद्दोबदल की गुंजाइश जरूरी भी है और लाभप्रद भी। साज-सामान और इस्पात मंगाने में और विदेशी मुद्रा विनिमय में जो अनिश्चितता रहती है उसे देखते हुए और मूल आर्थिक हालतों में होने वाले परिवर्तनों को देखते हुए योजना की कार्य-प्रगति को समय-समय पर जांचना जरूरी हो जाता है। योजना में जितनी गुंजाइश परिवर्तनों

की होगी उतना ही उसमें नई जानकारी और अनुभव का लाभ उठाना सम्भव होगा और उतना ही उसमें नए प्रौद्योगिक विकास शामिल हो सकेंगे। यह सच है कि लम्बी अवधि की योजनाओं और विकास योजनाओं में कई वर्षों तक के दायित्व उठाए जाते हैं और इस तरह के कार्यों के लिए स्थान कम बच रहता है जिनमें कम समय के दायित्व उठाये जा सकें और हेर-फेर किए जा सकें। प्रस्ताव है कि १९५६-५७ में आरम्भ करके प्रत्येक सालाना बजट के बाद प्रत्येक वर्ष की विस्तृत योजनाएं जो पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत हों प्रकाशित कर दी जाया करें। इससे कार्य सम्पादन में अनावश्यक नियमबद्धता नहीं आएगी और अर्थ-व्यवस्था की बदलती जरूरतों के अनुसार परिवर्तनों की भी गुंजाइश रहेगी।

२६. जो परिवर्तन और हेर-फेर वार्षिक योजनाओं के कारण सम्भव हो सकेगा, वह अधिक करके राष्ट्रीय योजना के उन्हीं क्षेत्रों में हो सकेगा जो खास तरह से केन्द्र सरकार के काम हैं, जैसे उद्योग, खनिज और परिवहन। इन परस्पर सम्बद्ध क्षेत्रों में सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार किया जाएगा और खर्च पहली योजना से कहीं अधिक होने लगेगा। इसमें बड़े-बड़े प्रशासनिक कार्य निहित हैं। कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाना है और कार्यकुशल संगठन बनाए जाने हैं। इन क्षेत्रों में योजना बनाते समय इस्पात और सामान के बाहर से आने की अनिश्चितता का ध्यान जरूर रखना पड़ेगा और यह भी देखना पड़ेगा कि कितनी विदेशी मुद्रा प्राप्य है। इस क्षेत्र के प्रत्येक विभाग में कार्यों की प्राथमिकताएं सावधानी से निश्चित करने की जरूरत है ताकि हेर-फेर और परिवर्तन आदि शीघ्रता से किए जा सकें। दूसरी बात यह है कि उद्योगों, खनिजों और परिवहन के कार्यक्रमों का सम्बद्ध रूप से सम्पादन करना चाहिए और उनसे सम्बन्ध रखने वाले कार्यों को एक-दूसरे से मिलाकर करना चाहिए ताकि प्रत्येक योजना समूह पर जो व्यय किया जाए उसका पूरा-पूरा लाभ मिले। यह भी प्रस्ताव है कि एक विशेष समिति बनाई जाए जो मंत्रिमंडल की आर्थिक समिति को और योजना आयोग को कार्यों की प्राथमिकताओं, विदेशी मुद्रा, माल और कुछ प्रकार के प्रौद्योगिक कर्मचारियों आदि साधनों के वितरण के विषय में प्रतिवेदन दे।

इससे कुछ कम सीमा तक राज्यों में भी योजना की परिधि के भीतर ही हेर-फेर की जरूरत होगी। राज्यों के प्रतिनिधियों से बात करके वार्षिक समीक्षाएं करने और राज्यों के लिए वार्षिक योजनाएं प्रस्तुत करने की पद्धति हाल ही में निश्चित की जा चुकी है।

जन साहचर्य और जन सहयोग

२७. लोकतंत्रीय योजना में जन सहयोग और जन साहचर्य का महत्व भली-भांति समझा जाता है। जैसा कि पहली पंचवर्षीय योजना में कहा गया था, योजना की तरफ भारत का जो रवैया है उसकी मुख्य शक्ति ही जन सहयोग और जन मत हैं। पिछले कुछ वर्षों में जब-जब लोगों से, खास तौर पर गांवों के लोगों से, मदद मांगी गई है उन्होंने उत्सुकतापूर्वक साथ दिया है। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों में स्थानिक विकास कार्यों में, श्रमदान में, सामाजिक कल्याण विस्तार कार्यों में और स्वयंसेवी संगठनों के कार्य में श्रमदान करने के लिए जनता हमेशा राजी और तैयार रही है और स्थानिक साधन भी पूरी तरह जुटा दिए गए हैं।

२८. हमारी अविकसित अर्थ-व्यवस्था में मानव शक्ति का अतुल भण्डार है जिसका अभी पूरा लाभ नहीं उठाया जा रहा है। इस भण्डार का इस्तेमाल स्थायी महत्व की रचनाओं में

करना चाहिए। यह लक्ष्य तभी अच्छी तरह पूरा होगा जब प्रत्येक नागरिक अपने समय और शक्ति का एक अंश सामाजिक हित के कार्यों में देने को तैयार हो; यही लोकतंत्रीय सहकारी उन्नति का तरीका है। राष्ट्रीय विस्तार सेवा का एक मुख्य लक्ष्य ही यह है कि मानव शक्ति के भण्डार का नियमित इस्तेमाल किया जाए, खास तौर से गांवों में, जिससे कि सारे समाज का हित हो। इसके कई तरीके हैं, जैसे गांव की सड़क बनाना, ईंधन योग्य जंगल लगाना, तालाब खोदना, पानी पहुंचाना और सफाई में योग देना और वर्तमान छोटे सिचाई कार्यों की रक्षा करना आदि। जहां बड़ा काम उठाया गया हो, जैसे सिचाई कार्य, वहां राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक योजना कार्य के कर्मचारियों को आगे बढ़ना चाहिए और गैर-सरकारी नेताओं की मदद से गांव के उन श्रमिकों का संगठन करना चाहिए जो नहर पर काम करने में दिलचस्पी रखते हों। सड़कों या अन्य कार्यों में भी ऐसा ही किया जा सकता है। योजना कार्यों के लिए लोगों में स्थानिक सहयोग की भावना उत्पन्न करने और काम के अवसर देने के अतिरिक्त इससे स्थानीय लोगों को उस धन में से भी लाभ होगा जो इस काम पर खर्च होगा और उनकी आर्थिक स्थिति भी सुधरेगी। स्वेच्छा से श्रम करने वालों को संगठित करके और स्थानिक जन शक्ति का उपयोग करके दूसरी योजना के अधीन अनेक क्षेत्रों में लक्ष्य से कहीं अधिक कार्य हो सकता है। इस ढंग से सहकारितापूर्वक काम करने के बहुत-से अवसर दूसरी पंचवर्षीय योजना में मिलेंगे।

२९. पहली पंचवर्षीय योजना में गांवों में स्वेच्छा से काम करने वालों के संगठन की जरूरत का उल्लेख किया गया था। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों का मुख्य उद्देश्य गांव वालों को अपनी जरूरतों के लिए खुद के परिश्रम से गांवों का जीर्णोद्धार करना है। चूंकि राष्ट्रीय विस्तार सेवा दूसरी योजना पूरी होने के पहले समस्त ग्रामीण आबादी तक नहीं पहुंच सकेगी, इसलिए उन क्षेत्रों में जहां राष्ट्रीय विस्तार सेवा नहीं है आरम्भिक प्रयास के रूप में एक स्थानिक विकास कार्यक्रम जारी करना निश्चित किया गया, ताकि ग्रामवासी अपनी बड़ी-बड़ी जरूरतों के लिए मुख्यतः अपने ही परिश्रम से काम शुरू कर सकें। इसे दृष्टि में रखकर पहली योजना में १५ करोड़ रुपए रखे गए थे। यह योजना कोई तीन साल से जारी है। उत्तर प्रदेश में स्थानिक विकास कार्यक्रम श्रमदान से सम्बद्ध है ही, वहां के अलावा और राज्यों में जैसा कि खबरों से मालूम होता है कोई ३९,००० स्थानिक कार्य अब तक अनुमोदित किए जा चुके हैं। इनमें छोटे भवनों, दवाखानों, सामुदायिक केन्द्रों, पंचायतघरों, पुस्तकालयों, गांव की सड़कों और पुलियों तथा कुओं और छोटे सिचाई कार्यों का निर्माण शामिल है। इस समय विभिन्न राज्यों के इस कार्य का विस्तार पूर्वक अध्ययन तीन निरीक्षण दलों द्वारा किया जा रहा है। उनके मूल्यांकन के बाद कार्यक्रम में आवश्यक परिवर्तन और सुधार आदि किए जाएंगे।

३०. कालेजों और स्कूलों के नवयुवक और नवयुवतियां राष्ट्रीय विकास के कामों में बराबर अधिकाधिक हिस्सा लेते रहे हैं। पहली पंचवर्षीय योजना में युवक शिविरों और श्रम सेवाओं के लिए विशेष व्यवस्था की गई थी। अक्तूबर १९५५ तक शिक्षा मंत्रालय की प्रेरणा से ७९५ युवक शिविर लगाए जा चुके थे और इनमें ६६,००० व्यक्ति भाग ले चुके थे। इन शिविरों से मेहनत के प्रति एक गर्व की भावना उत्पन्न होती है, नई-नई रुचियां पैदा होती हैं। नैशनल कैडेट कोर ने बहुमूल्य कार्य किया है; उसके सीनियर डिवीजन में ४६,०००, जूनियर डिवीजन में ६४,०००; लड़कियों के डिवीजन में ८,००० व्यक्ति हैं और इनके अलावा शिक्षालयों से लिये गए ३,००० शिक्षक तथा अन्य व्यक्ति भी हैं। आग्जिलरी कैडेट कोर में इस समय ७,५०,००० व्यक्ति हैं। भारत स्काउट और गाइड्स में ४,३८,४०५ स्काउट और

६१,११८ गाइड हैं, यानी पहली योजना के बाद से अब तक उसमें ५० प्रतिशत की वृद्धि हो चुकी है। भारत सेवक समाज ने करीब ५०० युवक और विद्यार्थी शिविरों का आयोजन किया है, जिसमें करीब ४०,००० विद्यार्थी और युवकगण भाग ले चुके हैं। इन सब संगठनों में दूसरी योजना के अधीन विकास के बड़े-बड़े कार्यक्रम हैं। युवकों को देश के निर्माण में विशेष योग देना है और योजना का उद्देश्य उन्हें सेवा और सहयोग के अधिकाधिक अवसर देना है।

३१. दूसरी पंचवर्षीय योजना की रचना के सिलसिले में यह हाल ही में कोशिश शुरू की गई है कि योजना के क्षेत्र में विद्यार्थी और अध्यापकों का घनिष्ठ सहयोग प्राप्त हो सके। योजना आयोग के सुझाव पर कई विश्वविद्यालयों और कालेजों में योजना विचार गोष्ठियां स्थापित की गई हैं ताकि अध्यापक और विद्यार्थी राष्ट्रीय विकास सम्बन्धी समस्याओं पर विचार कर सकें और अपने सुझाव योजना आयोग, राज्य सरकारों और स्थानीय संस्थाओं को भेज सकें। आशा की जाती है कि सब विश्वविद्यालयों और शिक्षालयों में इस तरह की गोष्ठियां कालान्तर में स्थापित हो जाएंगी। सूचना का प्रचार करके, राष्ट्रीय, राज्यीय और स्थानीय योजनाओं का महत्व और अधिक व्यापक रूप से समझाकर तथा विकास कार्यों में स्वेच्छापूर्वक योगदान का संगठन करके, ये योजना गोष्ठियां अध्यापकों और विद्यार्थियों को दूसरी योजना की सफलता में हाथ बटाने का अमूल्य अवसर देंगी।

३२. पहली पंचवर्षीय योजना के अनुसार स्थापित भारत सेवक समाज ने एक गैर-सरकारी और गैर-राजनीतिक संगठन के रूप में सारे राष्ट्र को रचनात्मक कार्यों की सुविधा दी है। अब इसकी ३१ प्रदेश शाखाएं, २२६ जिला शाखाएं और अनेक तहसील, ताल्लुका और ग्राम शाखाएं हैं। जिन सदस्यों ने सप्ताह में ५ घंटे समाज सेवा करना स्वीकार किया है, उनकी कुल संख्या अब ५०,००० तक पहुंच गई है। भारत सेवक समाज में पूरे वक्त काम करने वाले कर्मचारी थोड़े-से हैं और इनके अलावा अनेक अवकाशप्राप्त और अनुभवी सार्वजनिक कार्यकर्ता भी हैं। ये सब उसके समाज शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, श्रम सहकार, कार्य केन्द्र, युवक और विद्यार्थी गोष्ठी, सूचना केन्द्र और सांस्कृतिक समारोह आदि कार्यों में भाग लेते हैं। भारत सेवक समाज के अपने कार्यक्रम तो होते ही हैं, वह अन्य समाजसेवी संगठनों के साथ भी काम करता है। शिविर नेताओं को तैयार करने के लिए विशेष प्रबन्ध किया गया है। कुछ शिविर शिक्षा विभागों और विश्व-विद्यालय के अधिकारियों की ओर से आयोजित किए गए हैं। भारत सेवक समाज ने हाल ही में भारत युवक समाज नामक एक युवक संगठन आयोजित किया है। भारत सेवक समाज के कार्यों में कोसी योजना में १६॥ मील लम्बा पुश्ता बांधना, जमुना बांध पर काम करना, सहकारी संस्थाएं स्थापित करना, छोटी बचत आन्दोलन में सहायता देना और स्थानीय विकास कार्यों में हिस्सा लेना उल्लेखनीय हैं।

३३. गांधी जी के बहुत-से मूल सिद्धांत आज भारत की राष्ट्रीय विरासत हैं। उन्होंने तथा रचनात्मक कार्यों में उनके साथ काम करने वालों ने वर्षों के अनुभव से जो तरीके और पद्धतियां निर्धारित की हैं, वे ग्रामोपयोगी कार्यों के सम्पादन में बहुमूल्य प्रमाणित हुई हैं। सेवा की भावना, जो उनका आदर्श थी, ग्रामोद्धार, ग्रामोद्योग, बुनियादी तालीम, हरिजन कल्याण और सभी दलितों का कल्याण, दूसरी योजना की सफलता की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। सर्व सेवा संघ, कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक निधि और गांधी स्मारक निधि अपने कार्यों से राष्ट्रीय योजना के सम्पादन में महत्वपूर्ण योग दे रही हैं। गांधी जी के सामने ही रचनात्मक कार्य करने वाले अनेक

संगठन बन गए थे, जैसे अखिल भारतीय चर्खा संघ, अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ, तालीमी संघ, गोसेवा संघ आदि। सर्व सेवा संघ, एक संपृक्त और व्यापक रचनात्मक कार्यक्रम तैयार करने तथा सभी क्षेत्रों में रचनात्मक कार्यकर्ताओं का पथप्रदर्शन करने के लिए बनाया गया था। सर्व सेवा संघ के कार्यकर्ता जिन कार्यों में मुख्य रूप से संलग्न हैं, उनमें भूदान यज्ञ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उड़ीसा के कोरापुट जिले में ग्रामदान के रूप में प्राप्त ८०० गांवों में वे ग्राम-परिवार आन्दोलन भी चला रहे हैं जिसका उद्देश्य सारे गांव को एक परिवार मानकर उसकी अर्थ-व्यवस्था का विकास करना है। ग्रामोद्योग के क्षेत्र में सर्व सेवा संघ ने अम्बर चर्खे के विकास में भी योग दिया है जो ग्रामक्षेत्रों में जगह-जगह कताई का प्रचार करने के काम आएगा।

३४. कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक निधि ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों व औरतों के कल्याण के लिए ही मुख्य रूप से काम कर रही है। यह निधि ग्राम सेविकाओं के प्रशिक्षण का प्रबन्ध करती है और ग्रामीण दस्तकारियों, बुनियादी तालीम, दाईगीरी आदि की विशेष शिक्षा देती है, १६ ग्राम सेविका विद्यालयों और ७ दाई शिक्षा केन्द्रों का संचालन करती हैं, साथ ही अन्य संस्थानों का भी उपयोग करती रहती है। १९५५-५६ में इस निधि ने केन्द्रीय समाज कल्याण मंडल के लिए ६५० ग्राम सेविकाएं प्रशिक्षित कीं और १९५६-५७ में १,०९५ ग्राम सेविकाएं प्रशिक्षित करने का कार्यक्रम है। इस निधि का एक और महत्वपूर्ण काम गांवों में शिशु विद्यालय और आरोग्य केन्द्र खोलना रहा है। अभी तक २९० केन्द्र खुल चुके हैं। गांधी स्मारक निधि ने गांधी साहित्य प्रकाशित किया है। दिल्ली, सेवाग्राम, साबरमती और मदुरै में गांधी जी की स्मृति में संग्रहालय खोले हैं। यह निधि २०० संस्थाओं को धन देती है और देश भर में इसने ३०० ग्रामोद्धार केन्द्र स्थापित किए हैं। गांधी स्मारक निधि ने कुष्ठ निवारण और जापानी ढंग की धान की खेती के प्रचार में भी काम आगे बढ़ाया है।

३५. हर जगह ग्राम योजनाएं तैयार करने में जनता ने गहरी दिलचस्पी और योजना के सिलसिले में उत्तरदायित्व संभालने के लिए भी तत्परता दिखाई है। दूसरी योजना में स्थानिक विकास कार्यों के लिए १५ करोड़ रुपया और जन सहयोग के संगठन की योजनाओं के लिए ५ करोड़ रुपया रखा गया है। अधिकांश कार्यक्रमों में कमोबेश गुंजाइश इस बात की है कि जनता से और अधिक सहयोग प्राप्त किया जाए। केन्द्र और राज्यों में उपयुक्त अभिकरणों को ऐसे क्षेत्रों को विशेष रूप से छांट लेना चाहिए जिनमें जन सहयोग से सचमुच अधिक लाभ हो सकता है और लक्ष्य जल्दी प्राप्त हो सकते हैं, तथा इनमें जन सहयोग के लिए लगातार बाकायदा प्रयत्न करना चाहिए।

३६. जन सहयोग में वृद्धि करने के साधन केवल ग्राम संगठन और स्वेच्छा कार्य का संगठन ही नहीं हैं, जैसा कि पहली पंचवर्षीय योजना में कहा गया था। राज्य सरकारों को स्थानिक अधिकरणों का अपनी ही संस्थाओं की तरह अधिक से अधिक उपयोग करना चाहिए। इसी तरह स्थानिक अधिकरणों को स्वेच्छा कार्य संगठनों और समाज सेवकों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए। डाक्टर, वकील, अध्यापक, प्रौद्योगिक और प्रशासक लोगों की संस्थाएं सामुदायिक कल्याण में अमूल्य योग दे सकती हैं। विश्वविद्यालयों, शिक्षालयों और युवक समाजों ने कल्याण कार्यक्रमों में नेतृत्व करने और हिस्सा लेने की इच्छा प्रकट की है जो कि उत्साहवर्द्धक बात है। इसका और उपर्युक्त अन्य सम्भावनाओं का दूसरी पंचवर्षीय योजना में जितना हो सके उतना उपयोग करना चाहिए।

३७. काम की शक्ल में तो लोग योग दे ही सकते हैं, थोड़ा-थोड़ा धन बचाकर भी वे अपनी हैसियत और परिस्थिति के अनुसार राष्ट्रीय योजना की सफलता में हाथ बंटा सकते हैं। जिस पैमाने पर दूसरी पंचवर्षीय योजना शुरू की जा रही है उसको देखते हुए यह जरूरी हो जाता है कि समाज के साधनों का भरपूर उपयोग किया जाए। सभी लोग थोड़ा-थोड़ा प्रयत्न करें तो राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के विकास में गति ला सकते हैं। पहली योजना में छोटी बचत का हाल उत्साह-जनक रहा है पर दूसरी योजना में उससे भी ज्यादा अच्छा काम इस सम्बन्ध में करना होगा। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक कार्यों का एक उद्देश्य यह भी रहा है कि गांवों के प्रत्येक परिवार तक जाकर बचत करने का उत्साह बढ़ाएं। देश भर में पढ़े-लिखे स्त्री-पुरुष अपने-अपने क्षेत्रों के सब परिवारों से मिल-मिलकर उनसे बचत यज्ञ में बराबर योग देते रहने का अनुरोध करें तो राष्ट्रीय योजना को सहायता मिलेगी। स्त्रियों के बचत आन्दोलन में जो काम पिछले तीन साल के अन्दर हुआ है, वैसा ही काम सब जगह होना चाहिए। देश भर की संस्थाओं को और प्रत्येक योजना को अपने और कामों के साथ-साथ, अल्प बचत आन्दोलन के विस्तार के लिए व्यावहारिक रूप से योग देना भी एक महत्वपूर्ण कार्य समझना चाहिए।

योजना का प्रचार

३८. सामुदायिक सहयोग की बदौलत और अपनी सफलताओं के कारण पहली पंचवर्षीय योजना बहुत-से लोगों तक पहुंची है। फिर भी देश की जनसंख्या का वह केवल एक छोटा-सा अंश है। जैसा कि पहली योजना में कहा गया था योजना की सफलता के लिए एक बात यह भी जरूरी है कि अधिकाधिक लोग उसका अर्थ समझते हों। लोगों को मालूम होना चाहिए कि अनेक दिशाओं में जो प्रगति होती है वह सब सम्बद्ध है और एक दिशा में प्रयत्न करने से दूसरी दिशाओं में भी प्रगति तो होती ही है तथा प्रयत्न की आवश्यकता भी बढ़ती है। यदि लोग यह समझ लें कि योजना के लिए कौन चीज पहले जरूरी है, कौन बाद में, तो समस्त देश के हित को बड़ा मानते हुए वे अपने कर्तव्य भी समझ सकेंगे। इन बातों को दृष्टि में रखकर राज्यों में ६ करोड़ और केन्द्र में ७ करोड़ रुपया दूसरी योजना के प्रचार के लिए रखा गया है। सूचना और प्रसारण मंत्रालय के तथा राज्य सरकारों के कार्यक्रमों में होशियारी के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जा रहा है। इन कार्यक्रमों के बनाने में प्रचार के अलग-अलग माध्यमों की अलग-अलग प्रभावोत्पादकता का और देश में एक समान प्रचार संगठन होने की जरूरत का ध्यान रखा गया है और इनका अभिप्राय यह है कि राज्य सरकारों से सहयोग बढ़ाते हुए तथा गैर-सरकारी संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करते हुए जगह-जगह काम करके दूसरी योजना का संगठित रूप से कारगर प्रचार किया जाए। इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत देश भर में बहुत-से सूचना केन्द्र खोलने, योजना के विभिन्न पहलुओं पर साहित्य प्रस्तुत करने, फिल्मों, दृश्य-श्रव्य साधनों की व्यवस्था करने, जगह-जगह प्रचार करने के लिए गाड़ियों का प्रबन्ध करने तथा प्रदर्शनियों, पंचायती रेडियो सेटों और पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं की व्यवस्था करने का प्रबन्ध है।

३९. सूचना केन्द्र राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों तथा जिला प्रधानालयों में स्थापित किए जाएंगे। इन केन्द्रों में प्रचार साहित्य, फिल्म एवं अन्य दृश्य-श्रव्य साधनों का संग्रह रहेगा। धीरे-धीरे इनमें ऐसा यथेष्ट प्रबन्ध भी कर दिया जाएगा कि योजना सम्बन्धी पूछताछ का उत्तर दिया जा सके। केन्द्र और राज्य सरकारों के साधन मिलाकर ग्राम क्षेत्रों में प्रचार के लिए दृश्य-श्रव्य साधनयुक्त मोटर गाड़ियों की वर्तमान संख्या बढ़ा दी जाएगी।

ग्राम क्षेत्रों में घूम-घूमकर प्रदर्शनियां दिखाने वाली चल प्रचार गाड़ियां भी चला दी जाएंगी। दूसरी योजना की अवधि में, १,००० से अधिक जनसंख्या वाले गांवों से शुरू करते हुए, कोई ७२,००० गांवों म पंचायती रेडियो भेजने का विचार है।

४०. फ़िल्म के माध्यम से प्रचार पर खासा जोर दिया जाएगा। इनमें वृत्तचित्र, कथाचित्र और व्यंग्यचित्र भी शामिल होंगे। इनके लिए योजना में २·२ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। कक्षाओं में दिखाने योग्य और अन्य प्रकार की शिक्षात्मक फिल्में बनाना शुरू किया जा रहा है। गैर-सरकारी संगठनों और शिक्षालयों को फिल्में दिखाने की सुविधाएं अधिकाधिक दी जाएंगी और बच्चों के लिए फिल्में बनाने पर खास ध्यान दिया जाएगा। गान और नृत्य मंडलियां भी संगठित की जाएंगी। हिन्दी और अंग्रेजी के टेलीप्रिंटरों की व्यवस्था और दूर-दूर तक की जाएगी ताकि छोटे-छोटे अखबारों और अलग-अलग स्थानों को भी समाचार जल्दी से पहुंच सकें। जनता को अच्छी नागरिकता का ज्ञान देने, उसके सामने नीति और नीतिपालन सम्बन्धी महत्वपूर्ण बातें रखने तथा रचनात्मक आलोचना करने में अखबारों का बड़ा हाथ रहेगा। प्रचार के कार्यक्रम में अखबारों का सहयोग और सहायता इसीलिए विशेष रूप से अपेक्षित समझी जा रही है।

४१. योजना सम्बन्धी साहित्य तैयार करने में सूचना और प्रसारण मंत्रालय मुख्यतः हिन्दी और अंग्रेजी में, तथा थोड़ा-बहुत प्रादेशिक भाषाओं में भी प्रकाशन करेगा; प्रादेशिक भाषाओं के संस्करणों के प्रकाशन का भार वह धीरे-धीरे राज्यों पर डालता जाएगा। एक ऐसे पत्र की आवश्यकता अनुभव की गई है जो दूसरी पंचवर्षीय योजना का सन्देश, उसके उद्देश्यों और आदर्शों का अर्थ देश के गांव-गांव में फैला सके और राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में संलग्न सरकारी और गैर-सरकारी कार्यकर्ताओं, सहकारिता संस्थाओं, स्वेच्छा कार्य संगठनों तथा पंचायतों तक पहुंच सके। इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए "योजना" नामक एक बहुप्रचारित नया पत्र निकालने का विचार है।

अध्याय ७

जिलों में विकास प्रशासन

हाल में की गई कार्रवाइयां

भारत में सदा से जिला, प्रशासन के गठन का आधार रहा है। जब से हमने अपना लक्ष्य कल्याणकारी राज्य की स्थापना बना लिया है, तब से जिले के प्रशासन में विकास कार्यों पर बहुत अधिक बल दिया जाने लगा है। विकास कार्यक्रम बनाकर उन्हें जिले में पूरा करने के लिए हर स्तर पर जनता के सर्वोत्तम नेताओं का सहयोग और समर्थन प्राप्त करते जाने का महत्व बहुत अधिक होता है। जिलों में अब तक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यों की जिस प्रकार प्रगति हुई है, गांव पंचायतों की जितनी संख्या बढ़ी है, और विकास कार्यक्रमों में भाग लेने के अवसरों से लाभ उठाने के लिए जनता जैसी उत्सुकता दिखलाने लगी है, उन सबसे इस तथ्य की पुष्टि होती है।

२. प्रथम पंचवर्षीय योजना में जिलों के कार्यक्रम पूरा करने की समस्याओं पर विचार करके बहुत-सी सिफारिशें की गई थीं। अब इस अध्याय में यह विचार किया जाएगा कि विगत तीन या चार वर्षों में उन सिफारिशों पर क्या कार्रवाई की गई और द्वितीय पंचवर्षीय योजना में जो काम उठाए जाएंगे, उनकी दृष्टि से जिला कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए बनाए गए संगठन को और अधिक बलशाली किस प्रकार बनाया जा सकता है। जैसा कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में बतलाया गया था, जिले के प्रशासन का पुनर्गठन करते हुए उपयुक्त कार्यकर्ताओं की तलाश करने और प्रशासन के गठन को लोकतन्त्री पद्धति के अनुसार ढालने के अतिरिक्त इन आवश्यकताओं का भी ध्यान रखना होगा :

१. गांवों में विकास का कार्य करने के लिए ऐसे उपयुक्त संगठन की स्थापना करना, जिसे कि अपने अधिकार देहाती जनता से ही प्राप्त हों;

२. जिले के विभिन्न विकास विभागों के कार्यों में सामंजस्य रखना और एक सामान्य विस्तार संगठन की स्थापना करना;

३. स्थानीय स्वशासन संस्थाओं और राज्य सरकार के प्रशासन विभागों में ऐसा सम्बन्ध स्थापित करना कि वे विकास के सब कार्य मिलकर किया करें;

४. जिले के विकास कार्यक्रमों में प्रादेशिक समन्वय और निरीक्षण की व्यवस्था करना; और

५. सामान्य प्रशासन के संगठन को सुधारना और अधिक समर्थ बनाना।

इन सब कार्यों का महत्व द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए और भी अधिक है।

३. साधारण प्रशासन के संगठन को सुधारने और अधिक मजबूत बनाने का कार्य राज्य के मुख्यालयों में तो होना ही चाहिए, साथ ही अन्य स्तरों पर भी किया जाना चाहिए। मुख्यालयों में समन्वय का कार्य, जिन सचिवों के सुपुर्द विकास के विभिन्न विभाग हों, उनकी अन्तर्विभागीय समिति संगठित करके किया जा सकता है। समिति का अध्यक्ष राज्य का मुख्य सचिव अथवा योजना विभाग का सचिव होता है। साधारणतया योजना के विभिन्न कार्यों में समन्वय रखने और

जिलों के कार्यक्रम पूरा करवाने के काम, एक ही अधिकारी के सुपुर्द रहते हैं, और उन्हें "डिवेलपमेंट कमिश्नर" अर्थात विकास आयुक्त कहते हैं, और राज्य के मन्त्रिमण्डल की एक समिति, मुख्य मन्त्री के अधीन रह कर, सर्वोपरि मार्ग-दर्शन और निदेशन का कार्य करती है। अधिकतर राज्यों में राज्य योजना मण्डलों का संगठन भी किया जा चुका है और उनमें प्रमुख गैर-सरकारी व्यक्ति भी रखे गए हैं।

४. प्रथम पंचवर्षीय योजना आरम्भ होने के समय कुछ राज्यों में, विशेषतः हाल में नवगठित राज्यों में, पर्याप्त योग्य प्रशासन कर्मचारियों की कमी थी। यह कमी तो अब पूरी हो चुकी है, परन्तु कुछ छोटे राज्यों को दूसरे राज्यों से कुछ समय के लिए अनुभवी अधिकारी उधार लेने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। बिहार, राजस्थान और हैदराबाद आदि जिन राज्यों ने जमींदारी या जागीरदारी प्रथा का अन्त कर दिया है, वे विभिन्न स्तरों पर प्रशासन का आवश्यक संगठन करने के उपाय कर रहे हैं।

५. विगत कुछ वर्षों में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम चलाने, जिले के विकास कार्यों को राष्ट्रीय विस्तार के नमूने पर गठित करने और गांव पंचायतों का विकास करने आदि के जो उपाय किए गए हैं उनसे ज्ञात हुआ है कि जिलों में लोकतन्त्री संस्थाओं का विकास और भी द्रुत गति से करने की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में बहुत समय से एक कमी चली आ रही है जिसे दूर करने की आवश्यकता है। प्रत्येक क्षेत्र में यथाशीघ्र ऐसी समर्थ संस्थाओं का संगठन कर देने की आवश्यकता है जो अपने यहां की जनता को इस योग्य बना दें कि वह अपने राज्य और समूचे राष्ट्र की व्यापक विकास कल्पना के अन्तर्गत अपने साधनों का विकास करने और अपनी स्थानीय समस्याओं को हल करने का प्रधान उत्तरदायित्व स्वयं उठा ले।

६. योजना और राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के कारण जिलों के शासनों की जिम्मेदारी बढ़ गई है। राज्यों के विकास विभागों ने राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए जिलों में जो अतिरिक्त कर्मचारी नियुक्त किए हैं, उनसे जिलों के प्रशासन की भी शक्ति बढ़ी है। इसके विपरीत, विभिन्न शाखाओं के कार्य का निरीक्षण करने का काम बढ़ जाने तथा उसके अधिक पेचीदा हो जाने के कारण जिला कलक्टर के समय और सामर्थ्य पर पहले से अधिक बोझ पड़ने लगा है। कृषि की उन्नति करने के बड़े-बड़े कार्यक्रम, सहकारिता आन्दोलन का विस्तार और सुधार, देहाती और लघु उद्योगों को बढ़ावा देना, और नागरिक क्षेत्रों का विकास करना आदि ऐसी नई जिम्मेदारियां हैं जिन्हें निभाने के लिए जिला कलक्टरों को खास तैयारी करनी पड़ेगी। स्पष्ट है कि प्रशासन की विभिन्न शाखाओं को इन सब कामों में पहले से कहीं अधिक भाग लेना पड़ेगा। जनता भी विभिन्न कार्यक्रमों में अधिक भाग लेना चाहती है। कई राज्यों में नई आवश्यकताएं पूरी करने में जिलों के कलक्टरों और पदाधिकारियों की सहायता करने के लिए, अतिरिक्त कलक्टर और जिला विकास या योजना अधिकारी नियुक्त करके उनको अधिक अधिकार दे दिए गए हैं। कलक्टर, सब-डिविजनल अफसर और ब्लाक डिवेलपमेण्ट अफसर, विशेषज्ञों के दल के नेता का काम देते हैं और उनको मार्ग दिखलाकर उनके काम में समन्वय रखते हैं। कई राज्यों में सब-डिविजनों की संख्या या तो बढ़ा दी गई है या नए सब-डिविजन बनाने के लिए निर्धारित कार्यक्रम पर चला जा रहा है। शेष सब राज्यों में भी कार्य इसी प्रकार किया जाना चाहिए, क्योंकि द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं का कार्य सारे देश में फैला देने का निश्चय किया जा चुका है।

ग्रामों की योजनाएं और ग्राम पंचायतें

७. राज्यों में प्रथम पंचवर्षीय योजना प्रायः राज्यों के मुख्यालयों में तैयार की गई थी। बाद में राज्य योजनाओं को जिला योजनाओं में विभक्त करने का यत्न किया गया। जब राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास क्षेत्रों में कार्यक्रम गांवों तक पहुंच गए और उन्हें ग्रामीण जनता की सहायता से कार्यान्वित किया जाने लगा, तब अनुभव हुआ कि ग्रामों की योजना बनाने का महत्व कितना अधिक है। स्थानीय विकास कार्यक्रम तैयार करते हुए यह बात स्थानीय जनता पर ही छोड़ दी जाती है कि वह स्वयं ऐसे कार्य सुझावे जिन्हें वह सरकार की सहायता लेकर अपने ही श्रम से पूरा कर सके। यह माना जा चुका है कि जब तक देहातों के विकास की योजना सारी बस्ती का ध्यान रखकर व्यापक रूप में नहीं बनाई जाएगी, तब तक पट्टेदार खेतिहर मजदूर और कारीगर आदि समाज के निर्बल लोगों को सरकार द्वारा दी हुई सहायता का पूरा लाभ नहीं मिलेगा। राष्ट्रीय विस्तार आन्दोलन का लक्ष्य गांव के प्रत्येक परिवार तक पहुंचने का है। जैसा कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में बतलाया गया था, इस लक्ष्य की पूर्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक कि गांव में वहां की सारी बस्ती का प्रतिनिधित्व करने वाली कोई ऐसी संस्था न हो जो कि गांव के साधनों का विकास करने की जिम्मेदारी अपने सिर पर लेने और उसमें पहल करने और नेतृत्व करने के लिए तैयार न हो। सारांश यह है कि गांवों की उन्नति पूर्णतया गांव के ही ऐसे सक्रिय संगठन पर निर्भर करती है जो कि गांव के सब लोगों को—ऊपर-निर्दिष्ट निर्बल लोगों को भी—एक संयुक्त कार्यक्रम में लगा सके और सरकार की सहायता से उसे पूरा कर सके।

८. द्वितीय पंचवर्षीय योजना को तैयार करते हुए इन सब विचारों को ध्यान में रखा गया है। १९५४ के आरम्भ में राज्य सरकारों से कहा गया था कि वे अकेले-अकेले ग्रामों और तहसील, ताल्लुका, विकास खण्ड आदि ग्राम-समूहों के लिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना बनाने की तैयारी करें। उसके लिए आवश्यक था कि योजनाएं बनाने के लिए स्थानीय सूझ-बूझ को और उन्हें पूरा करने के लिए स्थानीय प्रयत्न और साधनों को यथासम्भव अधिकतम बढ़ावा दिया जाए। इससे योजनाओं को स्थानीय आवश्यकताओं और परिस्थितियों के साथ संगत करने और उनकी पूर्ति के लिए जनता का सहयोग, स्वेच्छा प्रयत्न और दान प्राप्त करने में सहायता मिलेगी। गांवों की योजनाओं का सम्बन्ध मुख्यतया खेती की पैदावार के साथ, और उससे मिलते-जुलते सहकारिता, ग्रामोद्योग, परिवहन और स्थानीय महत्व के अन्य कार्यक्रमों के साथ है। इन सुझावों पर अमल किया गया और सब राज्यों में गांवों और जिलों की योजनाएं तैयार करके, उन्हें ही राज्य सरकारों द्वारा पेश की गई योजनाओं का आधार बनाया गया।

९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना तैयार करने के लिए जो मार्ग अपनाया गया उससे ग्रामीण जनता और विकास कार्य से सम्बद्ध ग्रामीण अधिकारियों दोनों को मूल्यवान प्रशिक्षण का अवसर मिला। यह अनुभव किया गया है कि यदि ग्रामीण संस्थाओं का आधार दृढ़ न किया गया और स्थानीय कार्यक्रम पूरा करने के उत्तरदायित्व का एक बड़ा भाग उनके सुपुर्द न किया गया तो राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में जिला प्रशासन के जिस ढांचे की कल्पना की गई है वह अधूरा ही रह जाएगा। गांवों में विकास कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए तदर्थ विशेष संगठन बना देने से जो अनुभव मिला, उससे भी इसी विचार की पुष्टि हुई। गांव पंचायतों का ठीक प्रकार से विकास करने का महत्व कई अन्य कारणों से भी बहुत अधिक है। आबादी की वृद्धि, भूमि सुधार,

शहरों का विस्तार, शिक्षा का प्रसार, उत्पादन और परिवहन में सुधार आदि नई प्रगतियों के प्रभाव से ग्रामीण समाज बहुत जल्दी-जल्दी बदलता जा रहा है। ग्राम पंचायतें, सहकारिता समितियों के साथ मिलकर, देहातों के समाज को संगठित करके एक बनाने और वहां नए प्रकार के नेता उत्पन्न करने में सहायक हो सकती हैं। वे देहाती लोगों को समझा सकती हैं कि सब काम सारी जनता के हितों का, विशेषतः इस समय अनेक प्रकार की रुकावटों के कारण पिछड़े हुए लोगों की आवश्यकताओं का ध्यान रखकर करने चाहिएं।

१०. एक लक्ष्य यह रखा गया है कि प्रत्येक गांव में कानून-सम्मत पंचायत की स्थापना हो जाए, विशेषतः उन इलाकों में जिन्हें राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्य करने के लिए चुना गया है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय गांव पंचायतों की संख्या ८३,०८७ से बढ़कर १,१७,५९३ हो चुकी है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए अब तक जो कार्यक्रम बनाया गया है उसके अनुसार १९६०-६१ तक गांव पंचायतों की संख्या बढ़कर २,४४,५६४ हो जाएगी। भारत भर में गांवों की सीमाओं का भी पुनर्गठन करने की आवश्यकता है, जिससे कि गांवों की ऐसी इकाइयां बन जाएं जो अच्छी, सजीव, काम करने वाली और चुस्त गांव पंचायतों से सम्पन्न हों। इस समय भारत में ५०० या इससे कम आबादी के गांवों की संख्या ३,८०,०२० है। ७ करोड़ ८० लाख से अधिक, अथवा देहाती आबादी के २७ प्रतिशत लोग, इन्हीं गांवों में रहते हैं। ५०० और १,००० के बीच की आबादी के गांवों की संख्या १,०४,२९८ है। लगभग ७ करोड़ ३० लाख, अथवा देहाती आबादी के २५ प्रतिशत से अधिक लोग, इन गांवों में बसे हुए हैं। इस प्रकार, आधे से अधिक देहाती लोग १,००० से कम आबादी के गावों में आबाद हैं। इन गांवों का एक भाग पहाड़ी है; उनकी आबादी इतनी छितरी है कि वहां कई-कई गांवों के समूह बनाना सरल नहीं होगा। अन्य क्षेत्रों में, वर्तमान कई-कई गांवों को मिलाकर, लगभग एक-एक हजार की आबादी की इकाइयों में संगठित कर देने का सुझाव विचार करने के योग्य है। आवश्यकता इस बात की है कि गांव इतने छोटे तो हों कि उनमें एकता की भावना रहे, परन्तु इतने छोटे भी न हों कि उनके लिए कार्यकर्ताओं और अन्य आवश्यक सेवाओं का प्रबन्ध न किया जा सके। १९५४ में स्थानीय स्वायत्त शासन मन्त्रियों के द्वितीय सम्मेलन ने सिफारिश की थी कि जो गांव इतने बड़े न हों कि उनमें स्वतन्त्र पंचायतें बनाई जा सकें, उनमें कई-कई गांवों को मिलाकर १,००० से १,५०० तक की आबादी के लिए एक-एक पंचायत बनाई जा सकती है। यह सिफारिश एक हद तक उपयोगी है, परन्तु वास्तविक समस्या गांवों की सुविधाजनक इकाइयां बनाने की है।

११. गांवों में विकास कार्यक्रमों का संगठन पंचायतें भली प्रकार कर सकें, इस प्रयोजन से प्रथम पंचवर्षीय योजना में सिफारिश की गई थी कि गांवों में उत्पादन बढ़ाने और जमीनों तथा साधनों का विकास करने के कुछ काम, कानून बनाकर, पंचायतों के सुपुर्द कर देने चाहिएं। हाल में इस सिफारिश पर और भी विचार किया गया था। तब पंचायतों के काम को मोटी दृष्टि से दो भागों में बांटा गया, शासन के काम और न्याय के काम। शासन के कामों के सुगमता से चार विभाग किए जा सकते हैं: (१) नागरिक, (२) विकास सम्बन्धी, (३) जमीन का बन्दोबस्त, और (४) भूमि सुधार। पंचायतों के नागरिकता सम्बन्धी कर्तव्य, विभिन्न राज्यों में कानून द्वारा निर्धारित किए जा चुके हैं, और वे सब जगह बहुत कुछ एक-से हैं। उनमें इस प्रकार के काम सम्मिलित हैं: जैसे कि गांव की सफाई, जन्म और मृत्यु का हिसाब रखना, गांव में चौकीदारी का प्रबन्ध करना, गांवों में गलियां बनाना, उन्हें ठीक रखना और उनमें रोशनी करना आदि।

१२. पंचायतों के विकास सम्बन्धी कर्तव्यों की परिगणना कुछ इस प्रकार की जा सकती है :

(१) गांवों में उत्पादन कार्यक्रम बनाना;
(२) सहकारिता संस्थाओं की सहायता से गांव की आवश्यकताओं का ब्योरा तैयार करना और कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए वित्तीय व्यवस्था का बजट तैयार करना;
(३) गांव को अधिकाधिक मात्रा में सरकारी सहायता दिलाने के साधन के रूप में कार्य करना;
(४) पड़ती जमीनों, जंगलों, आबादियों, तालावों आदि गांव की सामान्य जगहों को सुधारने का और भूमि के संरक्षण का प्रबन्ध करना;
(५) गांव की पंचायती इमारतें, कुएं, तालाब और सड़कें आदि बनाना, उनकी मरम्मत करना और उन्हें ठीक रखना;
(६) सब कामों में परस्पर सहायता और सम्मिलित प्रयत्न का संगठन करना;
(७) सहकारिता समितियों को बढ़ावा देना;
(८) पंचायती कामों के लिए श्रमदान का आयोजन करना;
(९) लोगों को अल्प बचत करना सिखलाना; और
(१०) पशुओं की नस्ल सुधारना।

१३. गांवों की, जमीन के प्रबन्ध और भूमि सुधार को क्रियान्वित करने के सम्बन्ध में पंचायतों के कर्तव्य उन बातों से सम्बद्ध हैं जिनके आधार पर भारत के देहातों का पुनर्निर्माण करने का विचार है। इनकी विस्तार से चर्चा अध्याय ९ में की गई है। पंचायतों के भूमि प्रबन्ध सम्बन्धी मोटे-मोटे काम ये हैं :

(१) पड़ती जमीनों, जंगलों, आबादी की जगहों और तालाबों आदि सामान्य स्थानों के प्रयोग के नियम बनाना;
(२) चकबन्दी के समय अथवा अन्य अवसरों पर गांव के सब लोगों के लाभ के लिए पृथक रखी गई जमीनों में खेती का प्रबन्ध करना;
(३) अच्छे प्रबन्ध और अच्छी खेती के प्रतिमानों को, स्थानीय अवस्थाओं के अनुसार, बदलकर उन्हें अपने यहां लागू करना; और
(४) भूमि सम्बन्धी लेखा रखने के काम के साथ सहयोग करना।

पंचायतों के भूमि सुधार सम्बन्धी कर्तव्य उन कानूनों पर आधारित होंगे जो कि उनके राज्य में बनाए जाएंगे। मोटे हिसाब से, गांव पंचायतों को इस प्रकार के कार्यों में योग देना होगा :

(१) निजी खेती करने के लिए जमींदार द्वारा जमीन पर पुनः अधिकार कर लेने के अधिकार का प्रयोग करने पर जमीन में मालिकों और काश्तकारों के भागों का निश्चय करना;
(२) खेती की भूमि की अधिकतम सीमा का नियम लागू होने पर अवशिष्ट भूमि के परिमाण का निश्चय करना; और
(३) अधिकतम सीमा का नियम लागू हो चुकने पर शेष भूमि का पुनर्वितरण

कई राज्यों में गांव पंचायतें चकबन्दी के काम में पहले से ही योग दे रही हैं।

१४. पंचायतों के न्याय सम्बन्धी कर्तव्य इस प्रकार के हैं :

(१) दीवानी और फौजदारी मुकदमों का फैसला करना;

(२) कृषि मजदूरों को न्यूनतम मजूरी दिलवाना; और

(३) भूमि सम्बन्धी छोटे-छोटे झगड़ों को निवटाना।

इन कर्तव्यों के पालन को सरल बनाने के लिए राज्यों में साधारणतया न्याय पंचायतों का पृथक संगठन करके उनका अधिकार क्षेत्र कई-कई गांवों तक सीमित कर दिया जाता है।

१५. प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह मान लिया गया था कि पंचायतों का संगठन चुनाव की जिस पद्धति से किया जाएगा उसमें सम्भव है कि गांव के पुनर्निर्माण के लिए अच्छे किसानों, सहकारिता के कार्यकर्ताओं और समाजसेवकों आदि जिस प्रकार के व्यक्तियों की आवश्यकता होती है, वे सदा पर्याप्त संख्या में न चुने जा सकें। इसी प्रकार, ऐसा भी हो सकता है कि आबादी के निर्बल भागों के, विशेषतः भूमि-हीन लोगों के, प्रतिनिधि पंचायत में न पहुंचने पावें। इन त्रुटियों के प्रतिकार के रूप में प्रथम पंचवर्षीय योजना में अतिरिक्त सदस्यों को नामजद कर देने का जो उपाय सुझाया गया था वह भी दोष-रहित नहीं है। इसलिए गांव पंचायतों को एक सीमित संख्या में कुछ सदस्य अपने में सम्मिलित कर लेने का अधिकार दे देना उचित जान पड़ता है। यह संख्या छोटी पंचायतों के लिए दो या तीन, और बड़ी पंचायतों के लिए अपनी सदस्य संख्या के पांचवें भाग तक निश्चित की जा सकती है। गांव की प्रमुख सहकारिता समिति के प्रतिनिधि को भी पंचायत का सदस्य होने का अधिकार दिया जा सकता है। कुछ राज्यों के पंचायत कानूनों में हरिजनों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए पंचायत में कुछ स्थान सुरक्षित कर देने का नियम बना दिया गया है। पंचायत कानून पर अमल करते हुए इस बात का विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है कि चुनाव में देहाती आबादी के निर्बल भागों के प्रतिनिधि अवश्य चुने जाएं।

१६. एक बार अच्छी तरह काम आरम्भ कर देने पर गांव पंचायत सरीखी संस्था को शीघ्र ही वित्त की कठिन समस्या का सामना करना पड़ेगा। अधिकतर राज्यों के पंचायत कानूनों में पंचायतों को अपनी आमदनी के लिए रोजगारों या पेशों और सम्पत्ति पर कर लगाने, लाइसेन्सों की फीस वसूल करने, जुर्माने करने और चौकीदारी कर लगाने आदि के अधिकार दे दिए गए हैं। परन्तु प्रायः सर्वत्र ही इनसे कोई अधिक आमदनी नहीं होती। अधिकतर पंचायतों को आमदनी के लिए राज्य सरकारों द्वारा दी हुई तीन प्रकार की सहायता का सहारा लेना पड़ता है। इनमें से प्रथम है लगान के एक अंश का अनुदान। द्वितीय यह है कि पंचायत लगान एकत्र करे और इस लगान के एकत्र करने के लिए जो वसूली रकम गांव के मुखिया को मिलती थी वह पंचायत को मिले। परन्तु इसके उदाहरण अभी अधिक नहीं मिलते। तृतीय सूत्र है सामान्य भूमियों और तालाबों आदि की आय का उपयोग कर लेने का अधिकार। पंजाब में और अन्य एक-दो राज्यों में चकबन्दी करते समय, आपसी समझौते से जमीन का कुछ भाग गांव की बस्ती को दे दिया जाता है, जिससे कि उसकी आमदनी का उपयोग सबके लाभ के लिए किया जा सके। कई राज्यों में लगान का एक भाग अनुदान के रूप में पंचायतों को दे दिया जाता है। यह भाग विभिन्न राज्यों में १० से १५ प्रतिशत से लेकर ३० प्रतिशत तक है। उचित तो यह है कि प्रत्येक गांव में लगान का एक निश्चित अनुपात स्थानीय विकास के लिए पंचायत के नाम पृथक रख दिया जाए। यह राशि मूल कोश का काम देगी, और इसे पंचायत अपने यहां के लोगों के श्रमदान तथा सम्पत्तिदान आदि द्वारा बढ़ा सकेगी। हमारा सुझाव

तो यह है कि राज्य सरकारें पंचायतों को अनुदान दो भागों में बांट कर देने पर विचार करें। पहला भाग तो उन्हें लगान का १५ या २० प्रतिशत अनुदान के रूप में दिया जाए, और दूसरा भाग लगान के १५ प्रतिशत तक अतिरिक्त अनुदान के रूप में इस शर्त पर दिया जाए कि पंचायत उतनी ही राशि करों द्वारा अथवा दान आदि द्वारा स्वयं एकत्र कर ले। राज्य सरकारों को आय के ऐसे साधन ढूंढ़ने में भी पंचायतों की सहायता करनी चाहिए जिनसे पंचायतों को बार-बार धन प्राप्त हो सके।

१७. राज्य सरकारें और जिला अधिकारी जो कार्यक्रम बनावें, उनके व्यय में पंचायतें श्रमदान द्वारा अथवा अन्य प्रकार क्या योग दे सकती हैं, इसका निश्चय उन्हें स्वयं कर लेना चाहिए। उनका सीधा सम्बन्ध तो गांव की आरम्भिक सेवाओं और उनके लिए आवश्यक न्यूनतम कर्मचारी रखने के व्यय के साथ ही है। इस प्रकार की जो जिम्मेदारियां पंचायतों के सुपुर्द की जाएंगी, वे क्रमशः बढ़ती ही जाएंगी। इसीलिए कई स्थानों पर तो पंचायतों के लिए पूरे समय के सेक्रेटरी नियुक्त कर दिए गए हैं, और कई जगह केवल कुछ समय के कार्यकर्ता रखने से काम चल गया है। सब जगह किसी एक निश्चित मार्ग पर चलना आवश्यक नहीं, परन्तु विभिन्न राज्यों में विभिन्न स्थानों पर गांव पंचायतों के कर्मचारियों को सहायता पहुंचाने के लिए जो उपाय किए जा रहे हैं उन्हें ध्यानपूर्वक देखकर परिस्थिति के अनुसार जहां जो ठीक जान पड़े वहां उसे अपना लेना चाहिए। पंचायतों के कार्यकर्ताओं को भली प्रकार प्रशिक्षित भी कर देना चाहिए।

१८. ज्यों-ज्यों राष्ट्रीय विस्तार आन्दोलन का प्रसार होता जाए, त्यों-त्यों गांव पंचायतों के काम का सामंजस्य विकास क्षेत्रों के कार्यक्रमों के साथ करते जाना चाहिए। पंचायतों के करने के काम दो प्रकार के रहेंगे: एक तो वे जिन्हें राज्य सरकारें अपने विस्तार कार्यकर्ताओं द्वारा अथवा जिला बोर्ड अपने अधीन संगठनों द्वारा आरम्भ कराएंगे; और दूसरे वे जिन्हें गांव के लोग स्वयं अपने श्रमदान, सम्पत्तिदान अथवा अन्य साधनों की सहायता से आरम्भ करेंगे। पहली प्रकार के कार्यों के व्यय में गांव के लोगों को केवल श्रमदान करके हिस्सा बंटाना पड़ेगा। काम तो दोनों ही प्रकार के महत्वपूर्ण हैं, और गांव पंचायतों का उपयोग भी विकास कार्यक्रमों को पूरा करने में जहां कहीं सम्भव हो वहां करना चाहिए, परन्तु पंचायत संस्था की सफलता की एक बड़ी कसौटी यह है कि पहली प्रकार के कामों की तुलना में उसने दूसरी प्रकार के कितने काम किए। पंचायत की वास्तविक उपयोगिता इस बात में है कि वह देहाती जनता को कार्य में प्रवृत्त होने के लिए कितना प्रेरित कर सकती है। दूसरी ओर, यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जहां कहीं गांव पंचायतें, सिंचाई, भूमि के विकास और भूमि के संरक्षण आदि के छोटे-मोटे काम आरम्भ करें, वहां उन्हें उतनी सहायता तो दे ही देनी चाहिए जितनी कि विभिन्न कार्यों के लिए साधारणतया व्यक्तियों को दे दी जाती है। सारांश यह है कि स्थानीय आबादियों को स्वयं मिल-जुल कर यथासम्भव अधिकतम काम करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

जिला योजनाएं

१९. जब कोई योजना राष्ट्रीय पैमाने पर बनाई जाती है, तब साथ ही यह भी ध्यानपूर्वक देख लेना होता है कि किन-किन कामों को राष्ट्र, राज्यों और जिला योजनाओं का भाग बना देना चाहिए। यह देखते हुए जिन बातों का विचार करना होता है उनमें से कुछ ये हैं:

(१) आवश्यक प्रौद्योगिक और प्रशासनिक साधनों की सहायता से किस काम को कौन-से स्तर पर आरम्भ किया जाए;

(२) किसी काम का सम्बन्ध किसी क्षेत्र-विशेष के साथ है या अधिक व्यापक प्रदेश के साथ, ताकि उसे अनेक स्थानों से सम्बद्ध बड़ी योजना का भाग बनाया जा सके; और

(३) किसी कार्यक्रम को पूरा करते हुए अथवा उसका क्षेत्र और प्रभाव बढ़ाते हुए, जनता के कितने सहयोग और सहायता की आवश्यकता पड़ेगी ।

इन बातों का विचार करके केन्द्रीय सरकार को रेलों, देशव्यापी बड़ी-बड़ी सड़कों और बड़े-बड़े उद्योगों के विकास का और विभिन्न क्षेत्रों में सिंचाई, बिजली और छोटे-बड़े उद्योगों आदि के विकास में सामंजस्य रखने का प्रधान उत्तरदायित्व अपने सिर लेना पड़ता है । कई कार्य ऐसे हैं जिनका आयोजन राज्य सरकारें अधिक अच्छी प्रकार कर सकती हैं—जैसे कि सिंचाई और बिजली की मध्यम योजनाएं, सड़क परिवहन सेवाएं और सिंचाई के छोटे-मोटे कार्यक्रम तैयार करने के लिए सर्वेक्षण का काम आदि । जिलों और गावों की योजनाएं राज्यों की योजनाओं में खपनी चाहिएं । उधर राज्यों को अपनी योजनाएं बनाते हुए समस्त देश की दृष्टि से बनाई गई योजना का ध्यान रखकर चलना पड़ता है ।

२०. द्वितीय पंचवर्षीय योजना तैयार करते हुए इस बात पर सबकी सहमति हो गई थी कि जो कार्यक्रम राज्य सरकारों अथवा स्थानीय संस्थाओं अथवा राज्यों में स्थापित किए हुए विशेष मण्डलों द्वारा पूरे किए जाएंगे, उन सबको जहां तक सम्भव होगा वहां तक राज्यों की ही योजनाओं में सम्मिलित किया जाएगा । केवल इस कारण से कि किसी कार्यक्रम की पूर्ति के लिए सब या कुछ साधन केन्द्रीय सरकार द्वारा अथवा उसकी बनाई हुई विभिन्न एजेन्सियों द्वारा दिए गए हैं, उस कार्यक्रम को राज्यों की योजनाओं में सम्मिलित करने का सिद्धान्त बदल नहीं जाता । यह मार्ग इसलिए अपनाया गया कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना की तैयारी का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू यह था कि बहुत-सी योजनाएं राज्य से निम्न स्तरों पर, अर्थात ग्रामों, नगरों, ताल्लुकों, तहसीलों अथवा राष्ट्रीय विस्तार खण्डों और जिलों में बनेंगी । यह मान लिया गया था कि जन-प्रतिनिधि संस्थाओं द्वारा प्रस्तावित तीन प्रकार के कार्यक्रमों को जिलों और राज्यों की योजनाओं में सम्मिलित कर लिया जाएगा, अर्थात —

(क) उन कार्यक्रमों को जो कि ताल्लुके, जिले या राज्य द्वारा प्रस्तुत किए जाएंगे;

(ख) उन कार्यक्रमों को जो कि इससे भी निम्न स्तर पर प्रस्तुत किए गए होंगे, परन्तु जो संख्या (क) के कार्यक्रमों का अंग बनाए जा चुके होंगे; और

(ग) उन कार्यक्रमों को जो कि प्रस्तुत तो ऊपर से किए गए होंगे, परन्तु जो संख्या (क) में उल्लिखित कार्यक्रमों का भाग बन चुके होंगे; उदाहरणार्थ, वे योजनाएं जिन्हें तैयार तो केन्द्रीय सरकार ने किया, परन्तु जो कार्यान्वित की गई राज्य सरकारों द्वारा, अथवा वे योजनाएं जिन्हें तैयार तो किया किसी राज्य सरकार ने परन्तु कार्यान्वित किया गया किसी जिले में उपलब्ध साधनों द्वारा ।

२१. राज्यों की योजनाएं दो प्रकार से तैयार की जाती हैं—एक तो उनमें दिखनाए हुए विकास के विभिन्न विभागों के अनुसार और दूसरे, विभिन्न अंचलों और जिलों के अनुसार । विभिन्न विभागों के कार्यक्रमों में वे कार्यक्रम भी सम्मिलित रहते हैं जो कि सीधे राज्य सरकारों के महकमों द्वारा पूरे किए जाते हैं और वे भी, जो पूरे तो किए जाते हैं जिला अधिकारियों द्वारा, परन्तु जिनका समन्वय किया जाता है राज्य के मुख्यालय में । इस प्रकार जिलों की योजनाओं में ग्रामों, ग्राम

समूहों, ताल्लुकों, राष्ट्रीय विस्तार खण्डों और म्युनिसिपल क्षेत्रों आदि सीमित प्रदेशों के लिए बनाए गए कार्यक्रम रहेंगे जो राज्य सरकारों द्वारा बनाए जाकर, उनके महकमों की मार्फत, पूरे जिलों में किए जाएंगे। जिला योजनाओं का वह भाग कई दृष्टियों से अधिक महत्वपूर्ण होता है जो कि जिलों में ही बनाया जाता है। उसमें सम्मिलित कार्यों की दृष्टि से तो वह महत्वपूर्ण होता ही है, इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण होता है कि उसके प्रत्येक पग पर उसे पूरा करने में लोग स्वयं भाग लेते हैं, और उसके कारण उन्हें अपनी आवश्यकताओं का अन्दाजा लगाने और उन्हें स्वयं पूरा करने का अवसर मिलता है।

२२. जिस प्रकार राज्य योजनाएं बनाते हुए जिला योजनाएं बनाना एक आवश्यक कदम होता है, उसी प्रकार राज्य योजनाओं पर अमल करते हुए उन्हें जिला योजनाओं में विभक्त कर देना भी आवश्यक होता है। विशेष करके राज्य योजनाओं के विभिन्न खण्डों में जिन कार्यक्रमों अथवा आयोजनों की पूर्ति में स्थानीय सहयोग और जनता के श्रम से विशेष सहायता मिल सकती हो उनकी पृथक तालिका बनाकर ऐसा प्रकट करना चाहिए कि वे जिला योजनाओं के अंग हैं। जिन कार्यों की पूर्ति में सरकार द्वारा दिए हुए साधन केवल आरम्भिक साधनों के रूप में रहकर उनकी वृद्धि प्रधानतया जनता के प्रयत्न और सहयोग से होती है, उन कार्यों को जिला योजनाओं का ही अंग समझना चाहिए। भविष्य में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के आयोजनों को बहुत अधिक बढ़ाने का विचार है। इससे योजना कार्यों में जिला योजनाएं तैयार करने का महत्व और भी बढ़ जाता है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक ये आयोजन प्रायः सारे देश की ग्राम जनता में फैल चुकेंगे। विभिन्न ग्राम समूहों और ताल्लुकों आदि को धीरे-धीरे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के अन्तर्गत ले आने का कार्यक्रम प्रत्येक राज्य का अपना-अपना होगा। जिले के किसी भाग में किसी निश्चित दिन राष्ट्रीय विस्तार का कार्यक्रम आरंभ हो चाहे न हो, जिला योजना जिले के सब भागों का ध्यान रखकर तैयार की जाएगी। इसलिए जिला योजना तैयार करते हुए जिले के जिन भागों में राष्ट्रीय विस्तार का कार्य आरम्भ हो चुका है, उनके अतिरिक्त जिनमें यह कार्य शुरू नहीं हुआ, उनकी आवश्यकताओं का भी ध्यान रखना होगा। इस प्रकार, जिला योजना लोक-मत को शिक्षित करने, जिले के विभिन्न कार्यक्रमों को एक सूत्र में बांधने, लोगों में उन्हें स्वयं पूरा करने का उत्साह भरने, एक-दूसरे की स्वेच्छा से सहायता करने और आप आगे बढ़ने की भावना उत्पन्न करने, और उन्हीं में से नए नेता तैयार करने का प्रभावशाली साधन सिद्ध होगी। इससे प्रत्येक जिले के लोगों को अवसर मिलेगा कि वे अपनी आवश्यकताओं और साधनों का अन्दाजा स्वयं लगावें और देखें कि कौन-से कामों में, सक्रिय सहायता देने के लिए सरकार को तैयार किया जा सकता है, और उसके लिए वे आवश्यक प्रयत्न करें। इसके अतिरिक्त यदि जिला योजना का रूप प्रशासन और जनता के सम्मिलित प्रयत्न पर आधारित रहेगा, तो उसे पूरा करने के लिए दोनों की जिम्मेदारी स्पष्ट हो जाएगी।

२३. जिला योजना के प्रधान अंग ये हैं :

(१) सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रम,

(२) समाज कल्याण के कार्य,

(३) कृषि उत्पादन के कार्यक्रम, और ग्राम विकास के क्षेत्र में पशु पालन तथा भूमि संरक्षण आदि जैसे सम्बद्ध कार्य,

(४) सहकारिता का विकास;

(५) ग्राम पंचायतें;

(६) देहाती तथा अन्य छोटे उद्योग;

(७) सिंचाई, बिजली, संचार, औद्योगिक विकास और प्रशिक्षण सुविधाओं के विस्तार के लिए राज्य योजनाओं द्वारा विकसित साधनों का प्रभावशाली ढंग से उपयोग करने की योजनाएं;

(८) मकानों की व्यवस्था और नगरों का विकास करना;

(९) अल्प बचत कार्यक्रम;

(१०) निर्माण कार्यों में श्रमिकों के सहकारी संगठनों तथा श्रमदान द्वारा सहायता देना,

(११) पिछड़े वर्गों के कल्याण के कार्यक्रम;

(१२) देहाती और शहरी इलाकों में समाज सेवा के, विशेष करके आरम्भिक तथा माध्यमिक शिक्षा के विस्तार, स्वास्थ्य सेवा की इकाइयां संगठित करने, स्वास्थ्य के नियमों के प्रचार, सफाई, मलेरिया नियन्त्रण और परिवार नियोजन आदि के कार्यक्रम;

(१३) रचनात्मक समाज सेवा के कार्यों में लगे हुए स्वयंसेवक संगठनों से काम लेना और उनकी सहायता करना;

(१४) भूमि सुधार;

(१५) नशाबन्दी और

(१६) राष्ट्रीय, राज्यीय, प्रादेशिक और स्थानीय विकास कार्यक्रमों के सम्बन्ध में लोगों की जानकारी बढ़ाना ।

२४. ये सब कार्यक्रम अनेक सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों की मार्फत पूरे किए जाएंगे और उनमें से कई एक में एक से अधिक संगठनों के बीच समन्वय रखने की आवश्यकता है। इस प्रकार सरकारी अधिकारियों और विभिन्न विकास विभागों के अधिकारियों के अतिरिक्त, प्रत्येक जिले में एक देहाती स्थानीय बोर्ड, बहुत-सी गांव पंचायतें और देहातों की अनेक म्युनिसिपैलिटियां भी रहेंगी। आर्थिक हलचलों के केन्द्र के रूप में कस्बों का महत्व शायद बढ़ जाएगा, और आंचलिक विकास की योजनाओं पर विचार करते हुए शहरी और देहाती इलाकों को मिलाकर विचार करना होगा। जिन इलाकों में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम अधिक तीव्रता से चलाए जाएंगे, उनमें योजना अथवा ग्राम समूह सलाहकार समितियां बना दी जाएंगी, और उनमें संसद तथा राज्य विधानमण्डल के सदस्यों के अतिरिक्त, राज्य सरकार द्वारा कुछ गैर-सरकारी व्यक्तियों को भी नियुक्त किया जाएगा । जिले में ऐसी बहुत-सी संस्थाओं के विद्यमान होने से, जिनके काम में समन्वय जिला योजना के द्वारा किया जाएगा, इस सम्भावना की सूचना मिलती है कि जिलों के विकास साधनों का शायद पुनर्गठन करना पड़े ।

जिला विकास संगठन

२५. जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार व्यवस्था, जिलों के साधारण प्रशासन संगठन का ही भाग बन गई थी। प्रायः सब राज्यों

में जिला विकास अथवा योजना समितियां बना दी गई हैं, जो जिले में विकास कार्यक्रम बनाने और उनको कार्यान्वित करने में राज्य विधानमंडल तथा संसद में जिले के प्रतिनिधियों तथा जिला बोर्ड, मुख्य म्युनिसिपल संस्थाओं और प्रमुख गैर-सरकारी कार्यकर्ताओं के प्रतिनिधियों का सहयोग प्राप्त करती हैं । इन समितियों का मुख्य काम सलाह-मशविरा देने का ही है । कुल मिलाकर वे जनता से वह सहायता और सहयोग प्राप्त करने में सफल नहीं हुई, जिसे जिले की योजना बनाने के विचार का आधार माना गया था । इन समितियों की मार्फत विकास कार्यों में जिला बोर्ड तथा अन्य स्थानीय निकायों का सहयोग प्राप्त करने का विशेष लाभ नहीं हुआ । प्रथम पंचवर्षीय योजना में स्थानीय निकायों ने विकास के कार्यक्रमों में जो भाग लिया, उस पर विचार करके सुझाव दिया गया था कि साधारणतया नीति यह रहनी चाहिए कि उन्हें अपने क्षेत्र में प्रशासन और समाज सेवा के काम की यथाशक्ति अधिकतम जिम्मेदारी अपने सिर लेने के लिए उत्साहित करके, उसका निर्वाह करने में उनकी सहायता की जाए । यह भी बतलाया गया था कि विभिन्न क्षेत्रों के स्थानीय स्वायत्त शासन निकायों के काम का एक-दूसरे के साथ मेल बैठाने के लिए शायद आवश्यक व्यवस्था करनी पड़े; उदाहरणार्थ, गांव पंचायतों और जिला अथवा सब-डिविजनल लोकल बोर्डों के काम का समन्वय करना पड़े । यह भी सुझाया गया था कि इस प्रक्रिया का विकास स्वयं होने देने के साथ-साथ राज्य सरकारों को चाहिए कि वे विकास के क्षेत्र में इन निकायों में घनिष्ठ सहयोग इन दिशाओं में करवाने का प्रयत्न करें :

(१) स्थानीय निकायों द्वारा उठाए गए कार्यक्रमों को राज्य कार्यक्रमों के साथ संगठित करके उन्हें जिला योजनाओं के भाग के रूप में दिखलाना चाहिए;

(२) राज्य सरकारों के समाज सेवा कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए स्थानीय निकायों का उपयोग करना चाहिए । "किसी भी जन-प्रतिनिधि संस्था के लिए साधारणतया उपयोगी एक नियम यह है कि जिस कार्य को उसके तुरन्त बाद की अधीन अधिकारी संस्था उतनी ही भली प्रकार अथवा लगभग उतनी भली प्रकार कर सके, उसे करने का उत्तरदायित्व उन पर डालकर उसे करने में उसकी कुछ सहायता और उसका मार्ग-दर्शन कर दिया जाए";

(३) स्थानीय निकाय जिन संस्थाओं को चलावें और जो सेवाएं करें, उनका निरीक्षण और मार्ग-दर्शन राज्य सरकार के टेकनीकल और प्रशासनिक कर्मचारियों को ठीक उसी प्रकार और उतनी ही चुस्ती से करना चाहिए जितनी चुस्ती से वे सरकार द्वारा संचालित संस्थाओं और सेवाओं का करते;

(४) जिलों और ताल्लुकों के विकास कार्यक्रमों की पूर्ति की विधि निश्चित करने और उनकी निगरानी करने के लिए जो विकास समितियां बनाई जाएं, उनके मूल सदस्य जिला बोर्डों के प्रतिनिधि होने चाहिएं । इन समितियों में अन्य संस्थाओं के प्रतिनिधि भी सम्मिलित रहेंगे; और

(५) जहां कहीं सब-डिविजन हों या भविष्य में बनाए जाएं, वहां सब-डिविजनल लोकल बोर्डों की स्थापना पर भी विचार करना चाहिए ।

२६. अभी तक इन सिफारिशों पर अधिक अमल नहीं किया गया । मध्य प्रदेश, उड़ीसा, बिहार, पंजाब, उत्तर प्रदेश और अन्य कुछ राज्यों में हाल ही में इस बात पर विचार किया गया है कि जिला बोर्डों के भावी संगठन और कर्तव्यों का निश्चय, ग्राम पंचायतों और जिले की

अन्य अधिकृत संस्थाओं के कामों का ध्यान रखकर करना चाहिए। कर जांच आयोग ने यही विचार प्रकट किया है कि जिला लोकल बोर्डों का वर्तमान रूप आगे नहीं रह सकेगा, और स्थानीय स्वायत्त शासन के गठन में उनकी स्थिति अस्थिर से अस्थिरतर होती जा रही है। अब यह आवश्यकता व्यापक रूप से अनुभव की जा रही है कि जिले के प्रशासन का गठन लोकतन्त्री और सुगठित होना चाहिए। इस गठन में ऊपर के लोकतन्त्री संगठनों के साथ गांव पंचायतों को भी सम्बद्ध करना चाहिए। कुछ राज्यों में लोकतन्त्री संस्था जिले के स्तर पर रखने में सुगमता होगी, और कुछ में सब-डिविज़न के स्तर पर। दोनों अवस्थाओं में दो जरूरी शर्तों का ध्यान रखना होगा। पहली शर्त यह है कि लोक-निर्वाचित निकाय को, कानून और अमन-अमान, न्याय का शासन और माल विभाग के कुछ काम छोड़कर, उसके क्षेत्र के साधारण शासन और विकास के सभी कार्य सौंपने का लक्ष्य सामने रखा जाए। आवश्यकता हो तो उसे ये कार्य क्रमशः सौंपे जा सकते हैं, परन्तु उस क्रम का निश्चय पहले से कर देना चाहिए। दूसरी शर्त यह है कि विकास ग्राम समूह या ताल्लुका आदि, जिले अथवा सब-डिवीज़न के जो छोटे क्षेत्र हों, उनमें स्थानीय कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए जिला निकाय की उपसमितियां बनाकर उनके कामों को स्पष्ट-स्पष्ट निर्धारित कर दिया जाए। देश के विभिन्न भागों की अवस्थाओं और प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय में हुए अनुभव का ध्यान रखते हुए इस विषय पर सर्वथा निष्पक्ष विचार करने की आवश्यकता है। इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि राष्ट्रीय विकास परिषद स्वयं इसका विशेष अनुसन्धान करवाए। यह अनुसन्धान और विभिन्न राज्यों में किए हुए परीक्षणों के परिणाम का अध्ययन तो ऊपर निर्दिष्ट दृष्टियों से होता रहेगा, उसके साथ ही, विकास कार्यों की पूर्ति के लिए जिलों में, और विशेषतः राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास खण्डों में जो गैर-सरकारी संगठन सब राज्यों में स्थापित किए जा चुके हैं उनकी शक्ति बढ़ाने और उनका पुनर्गठन करने की शीघ्र आवश्यकता है।

२७. मूल उद्देश्य यह है कि जिले में विकास का काम करने वाली विभिन्न एजेन्सियों के काम में परस्पर सामंजस्य स्थापित कर दिया जाए, और जो सरकारी और गैर-सरकारी प्रतिनिधि उनकी विशेष सहायता कर सकते हों उनका सम्बन्ध उनके साथ जोड़ दिया जाए। विकास खण्डों और ताल्लुकों के लिए मुख्य लक्ष्य यह रखा गया है कि सब एजेन्सियां, विशेष करके सहकारिता संस्थाएं, गांव पंचायतें और स्वयंसेवी संगठन, अधिकतम सहयोगपूर्वक कार्य करें। जिला विकास समितियों और योजना सलाहकार समितियों ने अभी तक जिस प्रकार कार्य किया है उस पर विचार करने से प्रकट होता है कि पुनर्गठन की दिशा में राज्य सरकारों को तुरन्त ही एक काम यह करना चाहिए कि वे जिलों में जिला विकास परिषदों, और विकास खण्डों या ताल्लुकों जैसे इलाकों में विकास समितियों की स्थापना कर दें।

जिला विकास परिषद का गठन करते हुए निम्नलिखित को सम्मिलित किया जा सकता है :

(१) राज्य विधानमण्डल और संसद में जिले के प्रतिनिधि;
(२) म्युनिसिपैलिटियों और देहाती स्थानीय निकायों के प्रतिनिधि,
(३) सहकारिता आन्दोलन के प्रतिनिधि;
(४) ग्राम पंचायतों के प्रतिनिधि;
(५) प्रधान-प्रधान समाज-सेवक संस्थाओं, शिक्षण संस्थाओं और रचनात्मक सामाजिक कार्यकर्ताओं की ओर से सम्मिलित किए हुए सदस्य; और
(६) जिले का कलक्टर, सब-डिवीजनल अफसर, और विभिन्न विकास विभागों के अध्यक्ष अधिकारी।

२८. जिला विकास परिषद के निम्नलिखित कार्य हो सकते हैं :

(१) राज्य की पंचवर्षीय योजना के दायरे में रहते हुए विकास का वार्षिक कार्यक्रम निश्चित करने के सम्बन्ध में सलाह देना;

(२) विकास का स्वीकृत कार्यक्रम कहां तक पूरा हुआ और कहां तक नहीं, इस पर विचार करना;

(३) आर्थिक और सामाजिक विकास की योजनाओं, विशेषतः राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रमों, कृषि उत्पादन और स्थानीय विकास कार्यों, समाज सेवाओं और छोटे ग्रामोद्योगों को शीघ्र तथा प्रभावकारी ढंग से सफल बनाने के उपाय सुझाना;

(४) विकास कार्यक्रमों में भाग लेने और योग देने के लिए जनता को उत्साहित करना और शहरी तथा देहाती इलाकों में स्थानीय लोगों के प्रयत्नों का विस्तार करना;

(५) सहकारिता संस्थाओं और ग्राम पंचायतों का विकास करने में सहायता देना;

(६) अल्प बचत करने के लिए लोगों को बढ़ावा देना;

(७) गांव पंचायतों के भूमि सुधार, भूमि प्रबन्ध और ग्राम विकास के कामों की निगरानी करना;

(८) अध्यापकों, विद्यार्थियों और अन्य लोगों की सक्रिय सहायता और सहयोग से स्थानीय सम्पत्ति और साधनों का पता लगाना और उनका विकास करना;

(९) मेलों, प्रदर्शनियों और वाद-विवाद सभाओं आदि द्वारा आम लोगों को ज्ञान-वृद्धि के अवसर देना; और

(१०) पंचायतों और सहकारिता समितियों के सदस्यों को प्रशिक्षित करना ।

विकास खण्डों अथवा ताल्लुकों के लिए बनाई हुई विकास समितियों के काम, जिला विकास परिषदों जैसे ही होंगे । उनके सदस्य निम्न प्रकार के लोगों में से लिये जा सकते हैं :

(१) ग्राम पंचायतों के प्रतिनिधि;

(२) शहरी स्वायत्त शासन संस्थाओं और देहाती लोकल बोर्डों के प्रतिनिधि;

(३) सहकारिता आन्दोलन के प्रतिनिधि;

(४) उस क्षेत्र से राज्य विधानमण्डल और संसद् के लिए निर्वाचित प्रतिनिधि (यदि उन्हें अपने अन्य कामों से फुर्सत मिले तो);

(५) समाजसेवी संस्थाओं, शिक्षण संस्थाओं और रचनात्मक समाज सेवकों में से चुनकर सम्मिलित किए हुए कुछ व्यक्ति; और

(६) विकास विभागों के अध्यक्ष सरकारी अधिकारी ।

२९. यद्यपि जिला विकास परिषदों और विकास खण्डों अथवा ताल्लुकों की विकास समितियों का काम सलाह देने का होगा, फिर भी उनको विभिन्न कार्यक्रमों के सम्बन्ध में अपनी ओर से सुझाव देने की स्वतन्त्रता पर्याप्त मात्रा में देनी चाहिए । राज्य सरकार ने जिले के लिए जो कार्यक्रम स्वीकृत कर लिये हों, उनके दायरे में सहायता और साधन वितरण करने का काम भी बहुत हद तक उन्हीं को सौंप देना चाहिए । उनका कार्य सुनियोजित ढंग से होना चाहिए । किसी

भी कार्यक्रम को अन्तिम रूप देने से पहले उनकी सलाह ले लेनी चाहिए, और जो काम पूरे होते जाएं उनका समय-समय पर सिंहावलोकन करने का अवसर भी उनको देना चाहिए । उनकी एक खास जिम्मेदारी यह देखने की है कि जनता सब कामों में अधिक से अधिक योग दे, विभिन्न कार्यक्रम इस प्रकार पूरे किए जाएं कि वे एक-दूसरे के पूरक हों, और आबादी में पुराने रीति-रिवाजों आदि की बाधाओं के शिकार लोगों को भी यथेष्ट लाभ पहुंचता रहे ।

ऊपर बतलाए गए ढंग से जिला विकास परिषदों और विकास खण्डों या ताल्लुका विकास समितियों का गठन हो चुकने पर वे वर्तमान विकास समितियों और कार्यक्रम सलाहकार समितियों की जगह काम करने लगेंगी । आरम्भ में इन संगठनों का रूप कानून द्वारा अनिर्धारित रह सकता है । परन्तु जब वे प्रभावशाली ढंग से काम करने लगेंगी, तब जिले के प्रशासन के पुनर्गठन की एक महत्वपूर्ण मंजिल तय हो जाएगी । उनके द्वारा जो अनुभव प्राप्त होगा उससे पता चलेगा कि जिले के प्रशासन को लोकतन्त्री ढंग पर चलाने के लिए उसके वर्तमान रूप में क्या-क्या परिवर्तन और सुधार कर देने चाहिएं । इसके अतिरिक्त, इस प्रकार कार्य करने से जिला और क्षेत्रीय योजना की दो महत्वपूर्ण विशेषताओं पर आप से आप जोर पड़ जाता है । स्थानीय कार्यक्रम सम्मिलित प्रयत्न द्वारा पूरे किए जाते हैं, जिससे प्रकट होता है कि वे सारी जनता के लिए कितने लाभदायक हैं, और उस लाभ की तुलना में पुराने विचारों, विश्वासों, मत-मतान्तरों या जात-पांत के अन्तर का मूल्य कितना कम है । दूसरी विशेषता यह है कि जब स्थानीय सरकारी अधिकारियों को परस्पर मिलकर और जनता तथा उसके प्रतिनिधियों के साथ काम करना पड़ेगा, तब उनके विचारों और प्रवृत्तियों में बहुत-कुछ ऐसा परिवर्तन हो जाएगा कि वे समाजवादी ढंग के समाज की आवश्यकताओं से संगत हो जाएंगी, और ऊपर तथा नीचे के अधिकारियों के मध्य जो एक बाड़-सी खड़ी रहती है और सम्मिलित प्रयत्नों की सफलता में बाधक बन जाया करती है वह टूट जाएगी । ये संस्थाएं, वाद-विवाद सभाएं, अपने अनुभव एक-दूसरे को बतलाने और कार्यक्रम बनाने तथा उनकी पूर्ति पर विचार करने के लिए परस्पर सलाह-मशविरा करने की परम्पराएं इस दिशा में पहले भी उपयोगी सिद्ध हो चुकी हैं ।

समन्वय और निरीक्षण

३०. विकास कार्यक्रमों में सामंजस्य रखने और उनका निरीक्षण करते रहने का काम विभिन्न स्तरों पर—ताल्लुके या विकास कार्य के लिए बनाए हुए ग्राम समूह में, जिले में, या सब-डिवीजन में, कई-कई जिलों के सम्मिलित प्रदेश और राज्य के लिए संगठित करना होगा । प्रत्येक स्तर पर दो समस्याएं खड़ी होंगी । पहली होगी विभिन्न टेकनीकल विभागों के काम में सामंजस्य रखने की, जिससे कि उन सबका एक समन्वित कार्यक्रम बनाया जा सके । दूसरी होगी मार्ग-दर्शन, निरीक्षण मूल्यांकन और वृत्त-लेखन की । सामंजस्य की आवश्यकता एक ओर तो नीति में और साधनों के वितरण में निरन्तरता रखने के लिए होती है, और दूसरी ओर विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले एक ही विस्तार संगठन की आवश्यकताएं सर्वत्र एक-सी रखने के लिए । समन्वित कार्यक्रम का बल इस बात पर निर्भर करता है कि विशिष्ट सेवा करने का काम जिन लोगों से लिया जा रहा है वे कितने योग्य हैं । इसलिए समन्वय इस प्रकार करना चाहिए कि विशेषज्ञों की योग्यता का अधिकतम लाभ मिल जाए । इसके लिए आवश्यक है कि कार्यक्रमों का संचालन करते हुए प्रत्येक प्रौद्योगिक विभाग की जिम्मेदारियों को भली-भांति समझ लिया जाए और यह जान लिया जाए कि समस्त कार्यक्रम में उनका कितना योग रहेगा । जैसा कि पहले

बतलाया जा चुका है कि राज्य के स्तर पर समन्वय का काम मन्त्रिमण्डल की विकास समिति की देख-रेख में विकास आयुक्त करेगा; जिले और सब-डिविज़न में यह जिम्मेदारी क्रमशः कलक्टर और सब-डिविज़नल अफसर को उठानी पड़ेगी। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के विकास कार्यक्रमों का क्षेत्र प्रथम योजना के क्षेत्र की अपेक्षा बहुत बड़ा है। इस कारण विकास आयुक्त के लिए यह सम्भव नहीं होगा कि राज्य में उसे और जो काम करने पड़ते हैं उन्हें करते हुए वह काफी घूम-फिर सके और राज्य योजना पर जिलों में कैसा अमल हो रहा है इसका निरीक्षण समीप से कर सके। इस कठिनाई का अनुभव बड़े राज्यों में और भी अधिक होगा। इसलिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना की परिस्थितियों में आंचलिक सामंजस्य रखने और जिले में विकास कार्यों का समन्वय तथा निरीक्षण करने की प्रभावशाली व्यवस्था करना बहुत अधिक आवश्यक हो जाता है।

३१. जिले का प्रशासन, नई समाज व्यवस्था की दिशा में बढ़ने का एक साधन है। इसलिए उसे जनता की आशाओं और अभिलाषाओं के अनुरूप होना चाहिए। उसकी सफलता-असफलता का निर्णय, उसके कार्यों के परिणामों के अतिरिक्त, उन्हें करने की विधियों और उन संस्थाओं से भी किया जाएगा जो कि वह अपने गठन में जनता का सहयोग प्राप्त करने के लिए संगठित करेगा।

अध्याय ८

कर्मचारियों की आवश्यकता और उनके प्रशिक्षण का कार्यक्रम

किसी भी योजना में भौतिक और जनशक्ति के साधनों का सफलतापूर्वक उपयोग कर सकने का बड़ा महत्व होता है। विकास कार्य को अभीष्ट गति प्रदान करने के लिए आवश्यक है कि भौतिक और जनशक्ति के साधनों में यथासम्भव अधिकतम सन्तुलन रखकर आगे बढ़ा जाए। जनशक्ति को प्रायः किसी भी राष्ट्र का प्रथम साधन माना जाता है। यह बात प्रौद्योगिक जन-शक्ति के विषय में और भी सही है।

२. १९५३ में रोजगार की स्थिति काफी बिगड़ गई थी, और प्रौद्योगिक कर्मचारी पर्याप्त संख्या में नहीं मिलते थे; इस कारण जीविकोपार्जन के अवसरों की संख्या में वृद्धि करना कठिन हो गया था। इसलिए तब यह आवश्यकता तीव्र रूप में अनुभव की गई कि यह हिसाब लगा लिया जाए कि हमारी प्रौद्योगिक कर्मचारियों की आवश्यकता कितनी है और वे हमें कितने मिल सकते हैं। इस दिशा में कुछ समय पूर्व प्रथम प्रयत्न वैज्ञानिक जनशक्ति समिति ने किया था। परन्तु यह बात प्रथम पंचवर्षीय योजना बनने से भी पहले की है। प्रथम योजना आरम्भ हो जाने पर उसमें कर्मचारियों को विभिन्न कार्यों का प्रशिक्षण देने की जो सुविधाएं रखी गई थीं, उनका क्रमशः विस्तार किया जाने लगा। इसका फल यह हुआ कि द्वितीय योजना आरम्भ होने के समय स्थिति पहले से सुधरी हुई थी। द्वितीय योजना में प्रौद्योगिक कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने की योजना बहुत पहले से तैयार कर ली गई है, जिससे कि भविष्य में सम्भावित आवश्यकताओं की पूर्ति भली प्रकार की जा सके। इस विचार से प्रायः सबकी सहमति होते हुए भी भावी आवश्यकताओं का पहले से अन्दाजा लगा लेना कठिन है। इसलिए उन कठिनाइयों की ओर ध्यान खींच देना आवश्यक है। भविष्य में टेकनोलोजिकल उन्नति किस दिशा में होने की सम्भावना है, इसका हमें पूरा ज्ञान न होने के कारण उचित होगा कि हम अपनी चौमुखी और विभिन्न क्षेत्रों की—विशेषतः निम्न स्तरों की—सम्भावित आवश्यकता और पूर्ति दोनों का विचार कर लें। इसके अतिरिक्त प्रौद्योगिक कर्मचारियों में—विकास के व्यापक क्षेत्रों में भी—सदा अनेक प्रकार के व्यक्ति मिले-जुले रहेंगे, इस कारण उनमें सन्तुलन हो जाने की सम्भावना है, विशेषतः इस कारण कि विस्तार की बातों पर पहले से ध्यान नहीं दिया जा सकता।

३. आगे जो विश्लेषण किया जा रहा है, उसमें सभी प्रकार के प्रौद्योगिक कर्मचारियों की चर्चा करने का विचार नहीं है। इस समस्या को हल करने का प्रयत्न केवल कुछ चुनी हुई दिशाओं में किया जाएगा, क्योंकि प्रथम योजना काल में जिस प्रकार के कर्मचारियों की कमी अनुभव हुई थी, उन पर स्वभावतः विशेष ध्यान दिया जाएगा। अन्य जिन कई प्रकार के कर्मचारियों को तैयार करने में बुनियादी प्रशिक्षण और पर्याप्त व्यावहारिक अनुभव दोनों की आवश्यकता पड़ती है, उनकी भावी मांग का—उदाहरणार्थ, तृतीय योजना काल में—मोटा अन्दाजा अभी से लगा लेना और प्रशिक्षण का कार्यक्रम उसी के अनुसार बना लेना होगा। यह बात इंजीनियरों के कामों पर विशेष रूप से लागू होती है क्योंकि द्वितीय योजना में उत्पादन के उपादान पर खास जोर दिया गया है और उससे सम्बद्ध कामों में रोजगार की बहुत गुंजाइश हो जाने की

सम्भावना है। तृतीय योजना काल में इस्पात का उत्पादन और भी बढ़ाया जाएगा, इसलिए आशा है कि इस क्षेत्र के कार्यों में कर्मचारियों की मांग निरन्तर बढ़ती जाएगी। सीमेंट का उत्पादन भी विगत कुछ वर्षों में बहुत बढ़ गया है। द्वितीय योजना में भी उसका उत्पादन खूब बढ़ाने का कार्यक्रम रखा गया है; यहां तक कि इस उद्योग के आरम्भ में अब तक उसकी जितनी क्षमता हो चुकी है वह उससे भी आगे बढ़ जाएगा। इस्पात और सीमेंट मिलकर तामीर के कामों में रोजगार मिलने के अवसरों की वृद्धि करेंगे; इस कारण तामीरी कामों के लिए प्रौद्योगिक कर्मचारियों की योजना बनाने का महत्व विशेष बढ़ जाता है। प्रथम योजना में जिन कर्मचारियों की कमी अनुभव हुई उनमें कृषि के ग्रेजुएट और डिप्लोमा-प्राप्त व्यक्ति, पशु चिकित्सक, वन, सहकारिता, तथा भूमि संरक्षण विभागों के कर्मचारी, विकास अधिकारी, योजनाओं के प्रशासक, चिकित्सक और प्रशिक्षित अध्यापक भी थे। इसलिए अब इन्हें तथा अन्य कुछ विशिष्ट प्रकार के कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने की सुविधाओं पर विचार किया जाता है।

इंजीनियर कर्मचारी

४. प्रथम योजना में इंजीनियरी पेशों में कर्मचारी प्रशिक्षित करने की सुविधाएं बढ़ाने के अनेक उपाय किए गए थे। खड़गपुर में इन्स्टिट्यूट आफ टेकनोलौजी (यन्त्रकला विज्ञान का प्रतिष्ठान) खोला गया और बंगलौर के इण्डियन इन्स्टिट्यूट आफ साइन्स का और भी विकास किया गया। चार नए कालेज और १९ पोलीटेकनीक विद्यालय भी स्थापित किए गए। इसके अतिरिक्त, प्रौद्योगिक शिक्षण की अखिल भारतीय परिषद की सिफारिशों के अनुसार पहले से विद्यमान २० कालिजों और ३० स्कूलों में विद्यार्थियों की संख्या बढ़ा दी गई। इन उपायों का परिणाम यह निकला कि प्रथम योजना की समाप्ति पर देश में ४५ इंजीनियरी संस्थाएं ग्रेजुएटों के लिए और ८३ संस्थाएं डिप्लोमा के स्तर तक प्रशिक्षण देने वाली हो गई थीं। गत पांच वर्षों में प्रति वर्ष निकलने वाले इंजीनियर ग्रेजुएटों की संख्या प्रायः दुगुनी और डिप्लोमा लेने वालों की १,८५० से बढ़कर ४,९०० हो चुकी थी। अन्य टेकनोलौजिकल विषयों के शिक्षण में भी पर्याप्त उन्नति हुई थी।

५. द्वितीय योजना काल में इंजीनियर, सुपरवाइजर, ओवरसियर और अन्य कार्यकर्ता तैयार करने के लिए प्रौद्योगिक शिक्षण की सुविधाएं बढ़ाने पर लगभग ५० करोड़ रुपए व्यय करने का विचार है। जो कार्यक्रम तैयार किए गए हैं, उनमें मुद्रण विज्ञान, नगरों और प्रदेशों के रूपांकन और स्थापत्य कला के विभिन्न पाठ्यक्रमों का विकास, वर्तमान प्रौद्योगिक प्रतिष्ठानों का विस्तार, उच्चतर प्रौद्योगिक प्रतिष्ठानों की स्थापना, इण्डियन स्कूल आफ माइन्स एण्ड एप्लाइड ज्योलौजी (खानों तथा भू-गर्भशास्त्र के विद्यालय) का विस्तार, और सेवा में संलग्न इंजीनियरों के लिए प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रमों का संगठन आदि सम्मिलित हैं। इससे इंजीनियर कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने वाली संस्थाओं की संख्या १२८ से बढ़कर १५५ हो जाएगी। १९५५ में प्रति वर्ष पढ़कर निकलने वाले इंजीनियर ग्रेजुएटों की संख्या ३,६०० और डिप्लोमा वालों की ४,९०० थी; १९६० में इन दोनों की संख्या बढ़कर क्रमशः ४,५०० और ६,५०० हो जाने की आशा है।

६. इतने विस्तार के पश्चात भी विभिन्न राज्य सरकारों और केन्द्रीय मंत्रालयों का कर्मचारियों की आवश्यकता का अन्दाजा इतना अधिक था—इनमें से कइयों ने तो यह अन्दाजा लगाने के लिए विशेष समितियां नियुक्त की थीं—कि योजना आयोग ने एक इंजीनियर कर्मचारी

समिति का संगठन करके उसे आदेश दिया कि वह द्वितीय योजना से भी अधिक व्यापक क्षेत्र को ध्यान में रखकर इंजीनियर कर्मचारियों की सम्भावित आवश्यकता और पूर्ति के प्रश्न का अध्ययन करे। यह समिति अनुसन्धान के पश्चात इस परिणाम पर पहुंची कि द्वितीय योजना में इंजीनियरी के शिक्षण की सुविधाएं जितनी बढ़ा देने का विचार किया जा रहा है उतनी के पश्चात भी अतिरिक्त प्रशिक्षण की इतनी आवश्यकता रहेगी कि उसमें सिविल, मिकैनिकल, बिजली, दूर संचार, धातु विज्ञान और खानों के लगभग २,३०० ग्रेजुएट इंजीनियर तैयार किए जा सकें। इनके अतिरिक्त, इंजीनियरी के जिन क्षेत्रों की चर्चा पहले की जा चुकी है, उनमें निम्न स्तर के पदों पर कार्य करने के लिए लगभग ५,६४० व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ेगी। यदि इंजीनियर कर्मचारी मुहैया करने के लिए तुरन्त ही उपाय न किए गए तो तृतीय पंचवर्षीय योजना में भी इस भारी कमी के जारी रहने और उसके और बढ़ जाने की आशंका है। समिति का विचार है कि विकास में प्रगति का यह एक आशाजनक चिह्न है कि औद्योगिक प्रशिक्षण की जितनी सुविधाएं बढ़ाई गई वे सब न केवल हमारी अर्थ-व्यवस्था में खप गई, अपितु और अधिक की आवश्यकता अनुभव होने लगी। समिति ने सुझाया है कि :

(क) पहले से विद्यमान संस्थाओं का जितना विस्तार करना सम्भव हो, उतना कर देना चाहिए। इससे उनके उत्पादन में २५ प्रतिशत वृद्धि हो जाने की आशा है;

(ख) इंजीनियरी के १८ अतिरिक्त कालेज और ६२ अतिरिक्त स्कूल खोल देने चाहिएं;

(ग) ओवरसीयरी से निम्न स्तर के खास-खास कार्यों को करने के लिए प्रशिक्षित लोगों का एक नया वर्ग उनके कामों के आधार पर तैयार कर लेना चाहिए;

(घ) अप्रेन्टिस के तौर पर काम सिखाने और कारखानों में काम करने के आधार पर प्रशिक्षण देने के कार्यक्रम बड़ी संख्या में संगठित करने चाहिए;

(ङ) भरती में अनावश्यक विलम्ब नहीं करना चाहिए,

(च) पढ़ाई का दर्जा ऊंचा करने के लिए टेकनीकल संस्थाओं में अध्यापकों का कुछ काम सरकारी विभागों में काम करने वाले अधिकारियों से लेना चाहिए। इस समय सरकारी नौकरियों में जो इंजीनियर काम कर रहे हैं, उनकी संख्या बढ़ा देनी चाहिए जिससे कि यह आवश्यकता पूरी करने के लिए वे सुरक्षित शक्ति का काम दे सकें; और

(छ) टेकनीकल कर्मचारियों के नीति सम्बन्धी प्रश्नों का निर्णय करने के लिए एक निकाय बनाकर उसे काफी अधिकार दे देने चाहिएं, और उसकी सुविधा के लिए एक कार्यकारिणी का भी संगठन कर देना चाहिए। (अधिक विवरण के लिए पैरा संख्या २१ और २२ देखिए)।

समिति की इन सिफारिशों पर विचार किया जा रहा है।

७. जो ग्रेजुएट इंजीनियर और दूसरे लोग उद्योगों में काम कर रहे हैं परन्तु जिन्हें पर्याप्त अनुभव नहीं है, उनके लिए सिन्दरी में एक बड़ा कार्यक्रम तैयार किया गया है। द्वितीय योजना के समय और उसके बाद के वर्षों में रासायनिक खाद के जो नए कारखाने खोले जाएंगे उनकी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए इस कार्यक्रम को और भी बढ़ाया जा रहा है। दूसरे कारखानों के भी कुछ कार्यकर्ताओं को सिन्दरी में प्रशिक्षित किया जा रहा है। डी० डी० टी० का जो नया

कारखाना खोला जाएगा, उसके भावी कार्यकर्ताओं को दिल्ली के डी० डी० टी० कारखानों में प्रशिक्षित किया जा रहा है। इसी प्रकार जहाज बनाने का जो नया कारखाना खोला जाएगा उसके भावी कार्यकर्ताओं को विशाखापतनम् के जहाजी कारखाने में बड़ी संख्या में प्रशिक्षित किया जा रहा है। कोयले का उत्पादन बढ़ाने के लिए जिन अतिरिक्त टेकनीकल कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पड़ेगी, उनमें से सुपरवाइजर, ओवरसीयर और बिजली का तथा मिकैनिकल काम करने वाले निम्न तथा मध्यम कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने के लिए पहला कदम यह उठाया जा रहा है कि कारगली, गिरिडीह, तालचेर और कुरसिया में चार केन्द्र खोले जा रहे हैं।

८. नए इंजीनियरों को विशेष प्रशिक्षण देने और काम से लगे हुए इंजीनियरों, कर्मचारियों और मिकैनिकों के लिए अपने काम के प्रत्यास्मरण कार्यक्रम प्रथम योजना के समय में ही अनेक योजना केन्द्रों में आरम्भ कर दिये गये थे। इन कार्यक्रमों को द्वितीय योजना काल में भी जारी रखा और बढ़ाया जाएगा। इस समय प्रतिवर्ष ४५ इंजीनियरों को बांध बनाने और बिजली के कारखाने लगाने की विधियों और डिजाइन के विषय में विशेष प्रशिक्षण देने की जो व्यवस्था है उसे जारी रखा जाएगा। इस समय काम से लगे हुए इंजीनियरों को जल साधनों का विकास करने की विधियां सिखाने का एक केन्द्र रुड़की में है। उसे भी चालू रखा जाएगा। इस केन्द्र में भारतीय इंजीनियरों को ही नहीं, एशिया और अफ्रीका के अन्य देशों से भेजे हुए भी कुछ कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया जाता है। एक प्रशिक्षण केन्द्र, कन्स्ट्रक्शन प्लाण्ट एण्ड मैशीनरी कमेटी की सिफारिश पर कोटा (चम्बल घाटी योजना) में कारीगरों और मिकैनिकों के प्रशिक्षण के लिए खोला जा चुका है। एक और केन्द्र शीघ्र ही नागार्जुनसागर योजना कार्य के स्थान पर खोला जाएगा। इस समय ऊंची ताकत की बिजली ले जाने और उसका वितरण करने वाले तारों को ठीक रखने की कला के जानकार हमारे देशों में नहीं मिलते। यह काम सिखाने के लिए दो प्रशिक्षण केन्द्र खोलने का विचार है।

कारीगर

९. उच्च स्तर का प्रशिक्षण देने की योजना बना देना ही पर्याप्त नहीं है। सरकारी या निजी प्रतिष्ठानों को चलाने के लिए भी हर कदम पर कुशलता और अनुभव की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए कारीगरों को प्रशिक्षित करने का महत्व बहुत बढ़ जाता है। परन्तु कारीगरों की आवश्यकता और पूर्ति का अन्दाजा लगाने में कई बड़ी और स्वाभाविक कठिनाइयां हैं। कितने कारीगर मिल सकते हैं, इसका अन्दाजा लगाना कठिन इसलिए है कि एक ही कुनबे में बाप ने बेटों को, भाइयों ने भाइयों को और दूसरे रिश्तेदारों ने दूसरे लोगों को कितना काम सिखलाया, इसका ठीक हिसाब नहीं लगाया जा सकता। कारीगर कैसा हो, इसका ठीक पता होते हुए भी उनकी आवश्यकता का ठीक-ठीक पता नहीं लगता। इस सम्बन्ध में अधिक से अधिक इतना ही किया जा सकता है कि संस्थाओं में प्रशिक्षण की सुविधाओं को लेख-बद्ध कर लिया जाए, कितने कारीगर मिलने की सम्भावना है यह बतलाया जाता रहे, और आवश्यकता का ठीक अन्दाजा लगाने का यत्न किया जाता रहे। कारीगरों को काम सिखाने की सुविधाओं का सर्वाधिक संगठित स्थान वे संस्थाएं हैं जो देश भर में श्रम मंत्रालय द्वारा चलाई जा रही हैं। प्रशिक्षण की सुविधाओं का संगठन करने में कितनी उन्नति हुई और प्रशिक्षितों को काम दिलाने में उनका कितना उपयोग हुआ, इसका विचार प्रशिक्षण तथा कामदिलाऊ संगठन समिति ने किया था। इस समिति की राय थी कि अब तक उपलब्ध परिणाम प्रभाव-रहित न होते

हुए भी प्रशिक्षण को और अधिक सोद्देश्य बनाया जा सकता है। इसलिए उसने अन्य बातों के अतिरिक्त ये सिफारिशें भी की थीं :

(क) कर्मचारियों के प्रशिक्षण का आरम्भ सम्बद्ध उद्योगों द्वारा ही होना चाहिए, परन्तु सरकार को प्रशिक्षण की बुनियादी सुविधाएं पर्याप्त मात्रा में देते रहना चाहिए;

(ख) श्रम मंत्रालय के प्रशिक्षण कार्यक्रमों और राज्य सरकारों के विविध कार्यक्रमों में समन्वय रखने के लिए आवश्यक है कि केन्द्र, प्रशिक्षण केन्द्रों को राज्यों के सुपुर्द कर दे;

(ग) केन्द्रीय सरकार को चाहिए कि वह इन तीन विषयों की जानकारी एकत्र करे : (१) उद्योगों को कितने प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता है; (२) प्रशिक्षण की कितनी सुविधाएं उपलब्ध हैं; और (३) प्रशिक्षण के स्तर और विधियां क्या हैं, और उनके लिए किस पाठ्यक्रम का प्रयोग किया जाता है;

(घ) केन्द्रीय सरकार परिस्थिति का निरन्तर पर्यालोचन करती रहे, जिससे कि इन प्रशिक्षण केन्द्रों की उपयोगिता बढ़ाई जा सके; और

(ङ) सरकार ऐसा कानून बना दे जिससे कि निजी कारखानों के लिए अप्रेन्टिसों को प्रशिक्षित करना अनिवार्य हो जाए।

इन सब सिफारिशों पर अमल किया जा रहा है। श्रम मंत्रालय के कार्यक्रमों में प्रशिक्षण के कई कार्य सम्मिलित कर लिये गए हैं। इस समय श्रम मंत्रालय के टेकनीकल काम और पेशे सिखाने के कार्यक्रमों में प्रति वर्ष १०,३०० व्यक्ति भरती किए जाते हैं। द्वितीय योजना के अन्त तक यह संख्या बढ़ाकर ३०,००० प्रति वर्ष कर दी जाएगी। आशा है कि अप्रेन्टिस रखकर काम सिखाने की योजना द्वारा भी प्रति वर्ष ३,००० से ५,००० तक कारीगर काम सीख जाएंगे। इसी प्रकार उद्योगों में पहले से काम करते हुए २०,००० कारीगरों के लिए सरकार द्वारा संचालित संस्थाओं में सायंकाल की कक्षाएं लगाकर अथवा उनके कारखानों में ही प्रशिक्षण केन्द्र खोलकर उन्हें ऊंचे पदों के लिए प्रशिक्षित कर दिया जाएगा। मंत्रालय के प्रशिक्षण केन्द्रों को उपयुक्त योग्य व्यक्तियों की कमी न पड़े, इस उद्देश्य से शिक्षक और निरीक्षक कर्मचारी तैयार करने की व्यवस्था कर ली गई है।

१०. व्यावहारिक प्रशिक्षण पर सरकार कितना जोर देती है, इसका प्रमाण यह है कि उसने माध्यमिक शिक्षा आयोग की सिफारिशें मानकर कई माध्यमिक प्रशिक्षण संस्थाओं को बहुद्देश्यीय स्कूलों में परिवर्तित कर दिया है। इसका अधिक विवरण शिक्षा के अध्याय में दिया गया है। यहां तो इतना ही जिक्र कर देना काफी है कि यदि इन सब प्रशिक्षण सुविधाओं का अर्थ-व्यवस्था की भावी आवश्यकताओं के साथ मेल मिला दिया जाए तो टेकनीकल कार्यकर्ताओं की विभिन्न स्तरों पर कमी अवश्य घटती चली जाएगी। इस बुनियादी प्रशिक्षण का उपयोग काम देने वाले अधिकारियों की विशिष्ट आवश्यकताएं पूरी करने के लिए किस प्रकार किया जा सकता है, इसका एक उदाहरण लोहा तथा इस्पात मंत्रालय की हाल की कार्रवाई से मिलता है। इस मंत्रालय की सलाह से पुनःस्थापन तथा नियोजन महानिदेशक ने अपने पाठ्यक्रमों में ऐसा परिवर्तन कर दिया कि उन्हें पूरा कर चुकने वाले व्यक्ति इस्पात के कारखाने खुलने पर उनमें काम कर सकें। इसी प्रकार का प्रयत्न सरकार निजी उद्योगों की भावी आवश्यकताओं

की पहले से कल्पना करके कार्यकर्ताओं को उनमें स्थान दिलाने के लिए कर रही है। विचार यह है कि एक तरफ तो काम देने वाले अधिकारियों और दूसरी तरफ प्रशिक्षण संस्थाओं तथा निजी उद्योगों में अधिकतम सहयोगपूर्वक कार्य करने की व्यवस्था हो जाए।

कृषि तथा उससे सम्बद्ध क्षेत्रों के कर्मचारी

११. योजना की आवश्यकताओं के अनुसार, इंजीनियरी के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में भी प्रशिक्षण की सुविधाएं बढ़ाने पर बहुत ध्यान दिया जा रहा है। अन्दाजा लगाया गया है कि द्वितीय योजना में लगभग ६,५०० कृषि ग्रेजुएटों की आवश्यकता पड़ेगी। इस समय कृषि सिखाने की जो सुविधाएं हैं, उनके आधार पर लगभग १,००० ग्रेजुएटों की कमी पड़ने की सम्भावना है, और उसे पूरा करने का प्रयत्न किया जा रहा है। राज्यों ने वर्तमान कालेजों को अधिक समर्थ बनाकर उनमें अधिक विद्यार्थियों को पढ़ाने, और कहीं-कहीं नए कालेज खोलने के भी कार्यक्रम बनाए हैं। प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की सबसे अधिक मांग आने की एक दिशा राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम हैं। उदाहरणार्थ, देहातों में काम करने के लिए लगभग ३८,००० व्यक्तियों की मांग है। इस मांग को पूरा करने के लिए बुनियादी कृषि और विस्तार कार्यों का प्रशिक्षण देने वाली संस्थाओं की संख्या बढ़ाकर द्वितीय योजना काल में १५८ कर दी जाएगी। इसी प्रकार, ग्राम समूहों के स्तर पर काम करने वाले ११,४०० कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पूरी करने के लिए विस्तार प्रशिक्षण केन्द्रों में ग्राम समूह स्तर के कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने के २१ कक्ष और आरम्भ कर दिए जाएंगे। ऐसे १७ कक्ष पहले से चल रहे हैं। कार्यक्रमों के योजना अधिकारियों और खण्ड विकास अधिकारियों आदि को प्रशिक्षित करने की वर्तमान व्यवस्थाएं द्वितीय योजना काल में भी यथापूर्व चलती रहेंगी।

१२. हमें लगभग ६,००० पशु चिकित्सा ग्रेजुएटों की आवश्यकता है। पशु चिकित्सकों की इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए ये काम किए जाएंगे :

(क) कुछेक वर्तमान कालेजों में पढ़ाई की दो पालियां कर दी जाएंगी;

(ख) अन्य कालेजों की सामर्थ्य बढ़ा दी जाएगी;

(ग) चार नए कालेज खोले जाएंगे; और

(घ) दस स्कूल खोलकर उनमें पशु चिकित्सा का जरूरी काम थोड़े समय में सिखा दिया जाएगा।

१३. वन विभाग के कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पूरी करने के लिए देहरादून और कोयम्बत्तूर के वन कालेजों का विस्तार किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, कई राज्य सरकारों ने फारेस्ट गार्डों (जंगलों के रक्षकों) तथा अन्य कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने के लिए स्कूल खोलने की योजनाएं बनाई हैं। आशा है कि प्रशिक्षण का इतना विस्तार करने के पश्चात वन विभाग में कार्यकर्ताओं की कमी नहीं रहेगी।

भूमि संरक्षण विभाग के अधिकारियों और सहायक अधिकारियों को भूमि संरक्षण का काम सिखाने की व्यवस्था केन्द्रीय भूमि संरक्षण मण्डल के अनुसन्धान तथा प्रदर्शन केन्द्रों और दामोदर घाटी निगम के हजारीबाग प्रशिक्षण केन्द्र में की गई है।

सहकारिता के कार्यक्रम पूरे करने के लिए भी प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता बड़ी संख्या में पड़ेगी विभिन्न स्तरों पर कोई २५,००० कार्यकर्ताओं का प्रबन्ध करना पड़ेगा।

आशा है कि ऊंचे पदों पर तो कार्यकर्ताओं की कमी नहीं रहेगी, परन्तु मध्यम पदों पर कार्यकर्ता पर्याप्त संख्या में मिलते रहने का निरन्तर ध्यान रखना पड़ेगा। विचार यह है कि आरम्भ में सहकारिता संस्थाओं के सदस्यों को सहकारिता के सिद्धांतों और कार्य करने की विधियों का प्रशिक्षण देने के लिए परीक्षण के रूप में चलती-फिरती प्रशिक्षण इकाइयों का संगठन किया जाए।

ग्रामोद्योग और लघु उद्योग

१४. ग्रामोद्योग और लघु उद्योगों के अखिल भारतीय बोर्ड ने और राज्य सरकारों ने इन उद्योगों का प्रशिक्षण देने और अनुसन्धान करने के लिए कई योजनाएं बनाई हैं। जुलाहों तथा बुनकरों को कपड़ा बुनने की उन्नत विधियां सिखाने के लिए प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाएंगे। देसी रंगों का अनुसन्धान करने के लिए भी अनुसन्धान केन्द्र खोलने की व्यवस्था कर ली गई है। अ० भा० खादी तथा ग्रामोद्योग मण्डल ने जो कार्यक्रम बनाया है उसमें उत्पादन का संगठन करने के लिए ही ३०,००० प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पड़ेगी। वह इसके लिए अपने ही प्रशिक्षण केन्द्र खोल रहा है। खाद्य और अन्य ग्रामोद्योगों के संयुक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम में भी ४ केन्द्रीय संस्थाओं और २० प्रादेशिक विद्यालयों का खोलना सम्मिलित है। इनके अतिरिक्त अनेक केन्द्रीय प्रशिक्षण संस्थाओं में विभिन्न ग्रामोद्योगों का विशिष्ट और उच्च प्रशिक्षण दिया जाएगा। अम्बर चर्खे का कार्यक्रम तो १९५५-५६ में ३० लाख रुपए की राशि से आरम्भ किया जा चुका है। उसमें चर्खे को चलाने और अनुसन्धान करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। ग्रामोद्योगों में अनुसन्धान करने के लिए वर्धा में एक केन्द्रीय टेकनोलौजिकल इन्स्टीट्यूट नामक संस्था पहले से चल रही है। दस्तकारियों के प्रशिक्षण और अनुसन्धान के कार्यक्रमों में ये कार्य भी सम्मिलित हैं: एक केन्द्रीय दस्तकारी विकास केन्द्र की स्थापना, औद्योगिक अनुसन्धान संस्थाओं की सहायता करना, प्रबन्ध, सहकारिता और अन्य कार्यों के लिए कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना, और कारीगरों को और प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए छात्रवृत्तियां देना। लघु उद्योगों के लिए अधिकतर राज्यों में प्रशिक्षण तथा उत्पादन और प्रशिक्षण तथा प्रदर्शन के संयुक्त केन्द्र खोले जाएंगे। कुछ राज्यों में 'पोलिटेकनीक' (अनेक शिल्प कलाएं सिखाने वाली संस्थाएं) भी खोली जाएंगी। लघु उद्योगों की सहायता करने वाली संस्थाओं के अतिरिक्त, नमूने के और चलते-फिरते कारखाने भी चलाए जाएंगे। रेशम के कीड़े पालने का काम सिखाने के लिए राज्यों के रेशम विभागों की ओर से दो, और अन्य कामों के लिए अन्य अनेक केन्द्र खोले जाएंगे। वर्तमान रेशम अनुसन्धान केन्द्र का भी विस्तार किया जाएगा। नारियल के रस्सों के व्यवसाय की उन्नति के कार्यक्रम में तिरुवांकुर-कोचीन में तीन प्रशिक्षण विद्यालयों और एक केन्द्रीय अनुसन्धान संस्थान की स्थापना भी सम्मिलित है। लघु उद्योगों के लिए लगभग ३० प्रौद्योगिक विशेषज्ञ विदेशों में भरती किए जा रहे हैं। ये विशेषज्ञ प्रौद्योगिक सलाह देने के अतिरिक्त भारतीय कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित भी करेंगे।

सामाजिक सेवाएं

१५. अन्दाजा लगाया गया है कि प्रथम योजना की समाप्ति पर देश में ७०,००० डाक्टर होंगे। राज्य सरकारों और केन्द्रीय मंत्रालयों द्वारा दिए हुए विवरण के अनुसार योजना के सरकारी विभाग के विभिन्न विकास कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए लगभग ७,८०० अतिरिक्त डाक्टरों की आवश्यकता होगी। अब तक के अनुभव से पता लगता है कि देश की सब चिकित्सा

संस्थाओं से जितने डाक्टर निकलते हैं उन सबमें से ३५ प्रतिशत तो सरकारी, स्थानीय निकायों की अथवा अन्य नौकरियों में खप जाते हैं, और शेष निजी रोजगार करने लगते हैं। सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार हो जाने पर ऐसी सम्भावना है कि निजी रूप से चिकित्सा करने वाले डाक्टरों की संख्या घट जाएगी, क्योंकि उनकी अधिक संख्या सरकारी या अर्ध-सरकारी नौकरियों में खप जाएगी। जितने अतिरिक्त डाक्टरों की मांग होती है और जितने डाक्टर बन जाने पर नौकरी पाने का यत्न करते हैं, उन सबके हिसाब से द्वितीय योजना के समय २० से २२ हजार तक मेडिकल ग्रेजुएटों की आवश्यकता पड़ेगी। प्रथम योजना काल में मेडिकल कालेजों की संख्या ३० से बढ़कर ४२ हो गई थी। उन सबसे अन्दाजन प्रति वर्ष २,५०० डाक्टर पढ़कर निकलते हैं। यह संख्या डाक्टरों की आवश्यकता पूरी करने के लिए पर्याप्त नहीं है, इसलिए राज्यों की योजनाओं में वर्तमान मेडिकल कालेजों में से २८ का विस्तार करने की बात सोची गई है। ६ नए मेडिकल कालेज खोलने का भी विचार है। योजना में अखिल भारतीय चिकित्सा विज्ञान संस्थान को पूरा कर देने और कुछेक चुने हुए मेडिकल कालेजों का दर्जा ऊंचा करके उनमें स्नातकोत्तर अध्ययन तथा अनुसन्धान का कार्य आरम्भ करने की व्यवस्था रखी गई है। दन्त-चिकित्सा सिखाने के लिए चार कालेज तो नए खोले जाएंगे और वर्तमान कालेजों में से दो का विस्तार किया जाएगा। इस समय चिकित्सा की जो अतिरिक्त सुविधाएं सोची जा रही हैं, योजना की अवधि समाप्त होने तक अधिकांश के पूर्ण हो जाने की आशा है। परन्तु डर है कि डाक्टरों की कमी बनी ही रहेगी। डाक्टरों के अतिरिक्त, नर्सों, मिड-वाइफों, हेल्थ विजिटरों, दाइयों, हेल्थ असिस्टैण्टों और सैनिटरी इन्स्पेक्टरों आदि सम्बद्ध कर्मचारियों की पर्याप्त संख्या में उपलब्धि का भी उतना ही महत्व है। इन सबकी प्रशिक्षण सुविधाएं पर्याप्त मात्रा में बढ़ा देने का प्रयत्न किया जा रहा है।

१६. शिक्षा के क्षेत्र में नए स्कूल खोलने के लिए ३ लाख १० हजार प्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता पड़ने का अन्दाजा लगाया गया है। इनके अतिरिक्त, लगभग दो लाख अध्यापकों की आवश्यकता पुराने अध्यापकों के सदा रिक्त होते रहने वाले स्थानों को भरने के लिए पड़ेगी। इस प्रकार आवश्यकता तो अन्दाजन ५ लाख प्रशिक्षित अध्यापकों की पड़ेगी, परन्तु योजना काल में कोई ६ लाख अध्यापकों को प्रशिक्षित करने का प्रबन्ध कर लिया गया है। शिक्षा पद्धति को प्रारम्भिक स्तर से ही नए मार्ग पर डालने के कार्य की गति बढ़ाने के लिए द्वितीय योजना के अन्त तक बुनियादी प्रशिक्षण कालेजों की संख्या ३३ से बढ़ाकर ७१, और बुनियादी प्रशिक्षण स्कूलों की ४४६ से बढ़ाकर ७२६ कर दी जाएगी। इसके अतिरिक्त बुनियादी तालीम की भी एक केन्द्रीय संस्था स्थापित करने का विचार है। यह बुनियादी तालीम के अनुसन्धान केन्द्र का काम देगी। विश्वविद्यालयों के स्नातकोत्तर प्रशिक्षण के कालेज बुनियादी प्रशिक्षण स्कूलों के लिए अध्यापकों के स्रोत का काम देते हैं। इसलिए इन कालेजों में बुनियादी तालीम पर भी पर्याप्त ध्यान देने के प्रश्न पर विचार किया जा रहा है। इस दिशा में प्रशिक्षण की सुविधाएं बढ़ाने के जो प्रयत्न किए जाएंगे, उन सबसे मिलकर लगभग १ लाख २० हजार बुनियादी अध्यापक तैयार हो जाएंगे; मांग उनकी केवल एक लाख की है। इस प्रकार जो लक्ष्य रखे गए हैं उनसे न केवल विभिन्न प्रकार के अध्यापकों की अतिरिक्त मांग पूरी हो जाएगी, बल्कि इस समय प्रशिक्षित अध्यापकों की जो कमी है वह भी एक हद तक दूर हो जाएगी।

१७. प्रशिक्षण सुविधाओं का बढ़ाना पिछड़ी हुई जातियों के कल्याणार्थ बनाए गए कार्यक्रमों का एक महत्वपूर्ण भाग है। एक टेकनीकल इंस्टिट्यूट इम्फाल में खोलने का विचार

किया जा रहा है। उसमें आदिम जातियों के विद्यार्थियों को सिविल और मिकैनिकल इंजीनियरी का डिप्लोमा और सर्टिफिकेट लेने के लिए प्रशिक्षित किया जाएगा। इसी प्रकार के तीन और इंस्टिट्यूट, आदिम जातियों के युवकों के लिए ७५ लाख रुपए की लागत से अन्य उपयुक्त स्थानों पर खोले जाएंगे। इनके अतिरिक्त, आदिम जातियों के विद्यार्थियों को पेशों और टेकनीकल विषयों की पढ़ाई करने के लिए छात्रवृत्तियां भी दी जाएंगी। दर्जीगिरी, लुहारगिरी, चमड़े की कमाई, बुनाई और टोकरी बनाने आदि के काम और दस्तकारियां १८,००० युवकों को सिखलाई जाएंगी। समाज कल्याण के इन कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए सामाजिक विज्ञानों में प्रशिक्षित युवकों की बड़ी संख्या में आवश्यकता पड़ेगी। ऊपर सामाजिक सेवाओं के लिए आवश्यक जिन कार्यकर्ताओं की चर्चा हुई है उनके अतिरिक्त, समाज कल्याण बोर्ड अपने विस्तार कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए ८,००० ग्रामसेविकाएं, १,६०० मिड-वाइफें और ६,००० दाइयां प्रशिक्षित करने की सोच रहा है। आशा है कि जितने व्यक्ति वर्तमान संस्थाओं से काम सीखकर निकलते हैं और इनके लिए जो नई संस्थाएं खोलने की सोची जा रही है, उन्हें मिलाकर आवश्यकता और उसकी पूर्ति में सन्तुलन हो जाएगा।

१८. ऊपर प्रशिक्षण के जिन कार्यक्रमों की चर्चा हुई है, उनके बाद टेकनीकल कर्मचारियों के क्षेत्र का अन्त नहीं हो जाता। इनकी चर्चा तो यह दिखलाने के लिए केवल उदाहरण के रूप में की गई है कि टेकनीकल अथवा प्रौद्योगिक कर्मचारियों की आवश्यकता पूरी करने की समस्या का हल किस प्रकार किया जा रहा है। कुछ कार्यक्रमों की चर्चा विशेष रूप से इसलिए कर दी गई है कि यह पता लग जाए कि केन्द्र और राज्य सरकारें कार्यकर्ताओं की समस्या से भली-भांति परिचित हैं और द्वितीय योजना के समय में जिन कर्मचारियों की विशेष कमी अनुभव होने की सम्भावना है उन्हें तैयार करने के लिए उन्होंने उपायों की योजना की है। जैसा कि पहले भी लिखा जा चुका है, कुछ प्रदेशों में असन्तुलन हो सकता है, परन्तु जहां और जब वह हो, वहां और तब उसे दूर करने के लिए विशेष उपाय किए जा सकते हैं।

कुछ सामान्य विचार

१९. योजना के कार्यक्रमों पर विचार करते हुए प्रशिक्षण व्यवस्था के एक खास पहलू की ओर ध्यान खींच देना उचित है। वह है, इंजीनियरी, टेकनोलोजी, चिकित्सा और कृषि आदि किसी भी क्षेत्र के ऊंचे कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करते हुए हमारे सीमित साधनों पर भारी बोझ का पड़ जाना। फिर भी, केवल इस कारण कोई प्रशिक्षण कार्य बन्द कर देने का विचार नहीं है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि धन के प्रयोग में मितव्ययिता, अथवा उससे भी बढ़कर कर्मचारियों के प्रयोग में मितव्ययिता का ध्यान न रखा जाए। इसका एक उपाय यह है कि प्रशिक्षण के लिए नई संस्थाएं खोलने के स्थान पर यथाशक्ति पहले से विद्यमान संस्थाओं में ही प्रशिक्षण की सुविधाओं का विस्तार करने का यत्न किया जाए। कुछ टेकनीकल कलाओं को सिखलाते हुए यह भी आवश्यक हो सकता है कि प्रशिक्षण की सुविधाएं देने के प्रश्न पर विचार प्रदेशों या राज्यों की दृष्टि से न किया जाए। ऊंचे कर्मचारियों को प्रशिक्षित करते हुए इस बात का महत्व और भी अधिक हो जाता है।

२०. एक और बात जिसकी ओर विशेष रूप से ध्यान खींचना आवश्यक है, यह है कि कर्मचारियों की नियुक्ति करने वाले अधिकारी उनके अनुभवी होने पर अत्यधिक जोर देने

लगते हैं। जो व्यक्ति उनकी दृष्टि से पर्याप्त रूप से योग्य नहीं होते, उन्हें नियुक्त करने में उनका संकोच समझ में तो आता है, परन्तु केवल 'तैयार माल' को मंजूर करने का आग्रह, विकास को आगे बढ़ाने की दृष्टि से अधिक उपयुक्त नहीं है। इसका परिणाम एक प्रकार के भंवर में फंस जाना हो सकता है। टेकनीकल कार्यकर्ताओं की कमी के कारण विकास के कार्यक्रम आगे नहीं बढ़ पाएंगे और काम में न लग सकने के कारण बुनियादी प्रशिक्षण पाए हुए कार्यकर्ता अनुभव प्राप्त नहीं कर सकेंगे। नियुक्ति करने वाले अधिकारियों को चाहिए कि जिन प्रशिक्षित व्यक्तियों में सफल कार्यकर्ता की संभावना हो उनमें अनुभव और दक्षता की अपर्याप्तता को, वे कुछ समय तक सह लें। नियुक्त करने वाले और नौकरी चाहने वाले टेकनीकल कर्मचारियों दोनों को चाहिए कि वे संस्थाओं में मिले हुए प्रशिक्षण को इसी दृष्टि से देखें कि उससे प्रशिक्षित व्यक्ति में काम करने की बुनियादी योग्यता उत्पन्न हो जाती है।

२१. भारत व्यापक औद्योगिक विकास की देहरी पर है। इसलिए टेकनीकल कार्यकर्ता अभीष्ट संख्या में मिलने में जिन कठिनाइयों का सामना होने की सम्भावना है, उनकी कल्पना पहले से कर लेना और उन्हें हल करने के लिए उपाय सोच लेना उचित है। जन-शक्ति की किसी भी नीति को सफल करने के लिए इन बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है :

(क) टेकनीकल और अन्य क्षेत्रों में जिन जगहों पर काम मिल सकता हो, सबके विषय में आंकड़े तथा अन्य सम्बद्ध जानकारी एकत्र करके रखना;

(ख) उक्त जगहों के लिए जो कर्मचारी मिल सकते हों उनकी ठीक-ठीक जानकारी रखना;

(ग) उपरोक्त (क) और (ख) मदों में जो जानकारी उपलब्ध हो, उसके आधार पर नीति निर्धारित कर लेना जिससे कि विभिन्न स्तरों पर आवश्यक प्रशिक्षित कार्यकर्ता मिलते चले जाएं; और

(घ) जो कार्य पूरे हो जाएं उनमें से कार्यकर्ताओं को नए आरम्भ किए हुए कामों में बदल देने की सुविधा करते रहना।

२२. केन्द्रीय मंत्रालय इस समय कर्मचारियों की आवश्यकता के सम्बन्ध में तथ्यों का संग्रह करने का यत्न कर रहे हैं, परन्तु प्रौद्योगिक कर्मचारियों के विषय में अभी तक किसी समन्वित नीति और मार्ग का निश्चय नहीं किया जा सका है। योजना के सरकारी भाग में कार्यकर्ताओं की आवश्यकता निरन्तर बढ़ती चली जाएगी। इसलिए आवश्यक है कि इन कार्यकर्ताओं की भरती और इनका उपयोग करने की नीतियों के सम्बन्ध में निर्णय उच्चतर स्तर पर किए जाएं। यदि टेकनीकल जन-शक्ति के सम्बन्ध में मन्त्रिमण्डल की एक समिति बना दी जाए तो वह आवश्यक मार्ग का निदेश कर सकती है, और उसके अनुसार, योजना आयोग और श्रम मंत्रालय में जन-शक्ति तथा काम की जगहें बढ़ाने के उपाय किए जा सकते हैं। इसी प्रकार की व्यवस्था राज्यों की विभागीय आवश्यकताएं पूरी करने के लिए वहां भी की जानी चाहिए। जन-शक्ति की योजना बनाने के लिए केन्द्र और राज्यों में समन्वय होना आवश्यक है।

अध्याय ९

भूमि सुधार और कृषि व्यवस्था का पुनर्गठन

योजना में भूमि सुधार का महत्व

दूसरी योजना की अवधि में अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में जिन नीतियों और कार्यक्रमों का पालन किया जा रहा है, उनसे आर्थिक उन्नति और सामाजिक न्याय की मुख्य समस्या के प्रति एक सन्तुलित और समन्वित दृष्टि का परिचय मिलता है। इन कार्यक्रमों में भूमि सुधार के उपायों का खास महत्व है और इसकी वजहें दो हैं; एक तो यह कि भूमि सुधार कार्य कृषि विकास का सामाजिक, आर्थिक और संस्थात्मक ढांचा प्रस्तुत करते हैं, और दूसरे इनका बहुत ज्यादा लोगों के जीवन पर गहरा असर पड़ता है। दरअसल इनका असर देहात की अर्थ-व्यवस्था तक ही सीमित नहीं रहता—देहात से बाहर के आर्थिक जीवन को भी ये प्रभावित करते हैं। भूमि सुधार की योजना परिवर्तन और पुनर्गठन के जिन सिद्धातों पर आधारित है, वे आर्थिक और सामाजिक प्रश्नों के प्रति एक व्यापकतर रवैये के ही अंग हैं जिसे अर्थ-व्यवस्था के सभी क्षेत्रों में कमोवेश अपनाना ही होता है। इसलिए भूमि सुधार के उपायों का विचार करते समय भूमि से रोजी कमाने वाले लोगों के विभिन्न वर्गों के स्वार्थों में सामंजस्य लाने से कुछ अधिक ही सोचना होगा।

२. प्रथम पंचवर्षीय योजना के लिए भूमि विषयक नीति निर्धारित करते समय यद्यपि भूमि सुधार के सामाजिक पहलू का पर्याप्त विचार किया गया, तथापि यह माना गया कि अगले कुछ वर्षों में कृषि की पैदावार में ज्यादा से ज्यादा वृद्धि को ही सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाए; अतएव कृषिपरक अर्थ-व्यवस्था का विस्तार करना होगा और कृषि के क्षेत्र में कार्यकुशलता बढ़ानी होगी। दूसरी योजना की अवधि में भी इस आग्रह का अपना विशेष महत्व है। पहली बात तो यही है कि आज हमारे यहां औद्योगिक विकास की जो बड़ी योजना कार्यान्वित की जा रही है, उसकी वजह से कच्चे माल और खाद्य की मांग निरन्तर बढ़ती ही जाएगी। पहली योजना के अधीन औद्योगिक उत्पादन में जो वृद्धि हो सकी उसका मुख्य कारण यही था कि कच्चा माल अधिक उपलब्ध था। भारत में ऐसे अनेक कृषि-जन्य पदार्थ होते हैं जिनकी सारी दुनिया में मांग है—जैसे चाय, पटसन, कपास, तिलहन आदि। देश की इस क्षमता का औद्योगिक उन्नति के लिए अधिकाधिक विकास करना जरूरी है। इधर हमारे यहां पहले के मुकाबले बाहर से कहीं कम अनाज मंगाया जा रहा है। लेकिन देश में खाद्य उत्पादन अब भी इस सीमा तक नहीं पहुंच पाया है कि लोगों को पोषक खुराक मिले, देश की सारी जरूरत हर हालत में पूरी की जा सके और साथ ही स्टाक में सदा इतना खाद्य बच रहे कि बाहर से मशीनें और कच्चा माल मंगाने के लिए रुपया बच रहे और इस प्रकार विकासशील उद्योग व्यवस्था की बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति हो। और फिर आबादी के बढ़ने से नए-नए शहरों, कस्बों और उद्योग केन्द्रों के बसते जाने से और रहन-सहन के तौर-तरीकों में सुधार हो जाने से देश में खाद्य की मांग बढ़ चली है और बढ़ती जा रही है। उसका स्वरूप भी बदलता जा रहा है। जैसा पिछले अध्यायों में भी समझाया जा चुका है कि दूसरी योजना में बड़े पैमाने पर विकास कार्य करना तभी सम्भव होगा जब

देश में आम तौर से सभी चीजों का और खास तौर से खाद्य और कपड़े का उत्पादन तेजी से बढ़ाया जाए। चाहे उद्योगों के विकास में सहारा देने के लिए कृषि व्यवस्था की क्षमता बढ़ाने की बात सोचिए, चाहे उन आर्थिक आवश्यकताओं की, जो योजना को सम्पन्न करने के लिए अपेक्षित हैं, आप एक ही नतीजे पर पहुंचेंगे और वह यह कि दूसरी योजना की अवधि में जो निहायत जरूरी काम करने हैं उनमें कृषि उत्पादन में खासी वृद्धि करना, कृषिपरक अर्थ-व्यवस्था को बहुमुखी बनाना, और कृषि उत्पादन की कारगर और प्रगतिशील व्यवस्था कर देना भी शामिल है।

३. इन सब बातों को सोच-समझकर भूमि सुधार के लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं। कृषि व्यवस्था की जो बातें पैदावार बढ़ाने में बाधक सिद्ध होती हों, वे दूर कर दी जाएं और ऐसा इन्तजाम कर दिया जाए कि देश में जल्दी से जल्दी ऐसी कृषिपरक अर्थ-व्यवस्था की प्रतिष्ठा हो जिसमें उत्पादन और कार्यकुशलता दोनों के मान बहुत ऊंचे हों। ये दो लक्ष्य परस्पर सम्बद्ध हैं; बस इतना ही है कि भूमि सुधार के कुछ कार्यों का पहले लक्ष्य से ज्यादा सीधा वास्ता है, कुछ का दूसरे से। इस प्रकार सरकार और किसानों के बीच वाले वर्ग को समाप्त करने से और पट्टेदारों को संरक्षण देने से जमीन जोतने वाले को कृषि व्यवस्था में अपना उचित स्थान मिलता है और साथ ही परम्परागत बेड़ियों के टूट जाने अथवा कम हो जाने से काश्तकार को पैदावार बढ़ाने की नई प्रेरणा और नया उत्साह भी मिलता है। इसी तरह पट्टेदार का राज्य से सीधा सम्बन्ध स्थापित हो जाने से और जमींदारी समाप्त हो जाने से टिकाऊ और सन्तुलित ग्राम-व्यवस्था के लिए आवश्यक आधार तैयार होता है। भारत की परिस्थितियों में आय और सम्पत्ति की अत्यधिक विषमता का होना आर्थिक प्रगति के लिए हर दिशा में बाधक ही होगा। जमीन के विषय में तो यह बात खासकर लागू होती है। खेती-बारी के लिए उपलब्ध जमीन अनिवार्यतः सीमित है। पिछले जमाने में मुख्यतः भूमि सम्बन्धी अधिकारों से ही ग्राम्य जनता के विभिन्न वर्गों की सामाजिक हैसियत और आर्थिक अवस्था निर्धारित होती थी। प्रगतिशील ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था की प्रतिष्ठा के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि भू-स्वामित्व विषयक विषमताएं कम की जाएं। आज देश में कृषि भूमि जिस तरह बंटी हुई है उसे और चकों के वर्तमान आकार-प्रकार को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि भूमि की अधिकतर सीमा निश्चित करके अतिरिक्त भूमि का पुनर्वितरण करने से कोई खास बात नहीं बन पाएगी। जो हो, फिर भी यह काफी जरूरी है कि दूसरी योजना की अवधि में इस दिशा में भी कुछ ठोस काम किया जाए ताकि देहातों के भूमिहीन लोगों की सामाजिक हैसियत बढ़े और वे अनुभव कर सकें कि उन्नति करने के लिए उन्हें भी औरों के समान अवसर प्राप्त हैं। कृषि अर्थ-व्यवस्था का स्वरूप सहकारी बनाने के लिए भी भू-स्वामित्व विषयक विषमताओं का कम किया जाना अपेक्षित है। कारण, सहकार ऐसे ही वर्गों में पनप सकता है, जिनकी हैसियत लगभग एक-सी हो। यदि विषमता ज्यादा हो तो सहकार व्यवस्था चल नहीं पाती है। इस प्रकार सरकार और किसान के बीच के बिचौलियों की समाप्ति, पट्टेदारों के संरक्षण और पट्टेदार को जमीन का मालिक बनाने की दिशा में प्रथम चरण के रूप में पट्टेदार और राज्य में सीधे सम्बन्ध की स्थापना से अन्ततः एक ऐसी कृषिपरक अर्थ-व्यवस्था की प्रतिष्ठा होती है जिसमें जमीन जोतने वाला ही जमीन का मालिक समझा जाता है।

४. ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था के विकास में शुरू से ही सबसे बड़ी बाधा यह रही है कि देश में खेतों का आकार आम तौर से बहुत छोटा और अर्थलाभ की दृष्टि से अनुपयुक्त होना है। यह सभी मानते हैं कि सहकारिता के आधार पर पुनर्गठन करके ही देश की कृषि-व्यवस्था में उत्पादनशीलता और दक्षता की वृद्धि की जा सकती है। दूसरी योजना की अवधि में ऐसे कई उपाय किए

जाने वाले हैं, जिनसे ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था का सहकारिता के आधार पर पुनर्गठन सम्भव हो जाएगा। अधिकतर काश्तकारों को अपनी काश्त की जमीन के पूरे या लगभग पूरे स्वामी वन चुकने के वाद चकवन्दी करना न सिर्फ चकवन्दी के लिए ही, वल्कि सहकारिता के विकास के लिए भी आवश्यक हो जाता है। चकवन्दी के काम का देश के कई भागों में इतना अनुभव प्राप्त किया जा चुका है कि दूसरी योजना की अवधि में इस क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की जा सकेगी। चकवन्दी से जुड़ी हुई एक और समस्या है—भूमि प्रवन्ध के तरीकों में सुधार करने की। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों का एक मुख्य उद्देश्य प्रत्येक गांव और प्रत्येक क्षेत्र के लोगों को सुसंगठित होकर उत्पादन बढ़ाने की प्रेरणा देना, टेकनीकल मामलों में उनका पथ-प्रदर्शन करना, हर तरह से उन्हें सहायता पहुंचाना और ग्राम्य जनता के साधनहीन और गरीब वर्गों की हैसियत बढ़ाने में हाथ वंटाना है। ऐसी उपयुक्त परिस्थिति की अपेक्षा है जिसमें ग्राम्य आर्थिक जीवन में सहकार संस्थाओं के माध्यम से कृषिपरक और इतर दोनों ही तरह के अधिकाधिक कार्य सपन्न हों। सहकार व्यवस्था के विकास के लिए सवसे सुविधाजनक और उपयुक्त इकाई एक गांव की रहती है। अतएव सहकार संस्थाओं और पंचायतों के विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा, ऋण, हाट-व्यवस्था और विधायन के सुसंगठन के लिए जो उपाय किए जा रहे हैं उनके और ग्राम और लघु उद्योगों की स्थापना के द्वारा प्रत्येक क्षेत्र में सहकारी ग्राम-प्रवन्ध की ऐसी व्यवस्था करा दी जाएगी जो उस क्षेत्र विशेष की परिस्थिति के अनुकूल हो। एक क्षेत्र में सहकारिता की प्रतिष्ठा से दूसरे क्षेत्र में सहकारिता को वढ़ावा और सहारा प्राप्त होता है। सहकारिता के क्षेत्र में रचनात्मक उद्यम करने के लिए वड़ी संभावनाएं हैं। ये संभावनाएं अब निरन्तर वढ़ती ही जाएंगी। सरकार के प्रति जनता में उत्साह और अटूट लगन जगाने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि सहकारिता का प्रवन्ध अधिक से अधिक कुशलता से किया जाए।

५. भूमि सुधार के कार्य के विभिन्न चरण शुरू करते समय इस वात का ध्यान रखना जरूरी होता है कि खास जोर भूमि सुधार कार्य के अच्छे और रचनात्मक पहलुओं पर ही दिया जाना है, और भूमि सुधार के उपाय इस ढंग से किए जाने हैं कि कृषि पैदावार में वृद्धि हो सके। इस दृष्टि से राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के कार्यक्रम और कृषि विकास, ग्राम्य ऋण-व्यवस्था, हाट-व्यवस्था आदि की योजनाएं भूमि सुधार की सफलता के लिए उतनी ही जरूरी हो जाती हैं जितना कि उनकी सफलता के लिए भूमि सुधार। स्वाभाविक ही है कि भूमि सुधार कार्य की दिशा भले ही कितनी स्पष्ट और सुनिश्चित क्यों न हो, उसकी गति, स्वरूप और व्योरा हर राज्य को अपनी विशिष्ट परिस्थिति के अनुसार निर्धारित करना होगा। भूमि सुधार के काम के लिए सरकार को वड़ी प्रशासनिक जिम्मेदारियां उठानी पड़ती हैं, और जैसा कि इसी अध्याय में आगे चलकर दर्शाया गया है, भूमि सुधार योजना के लिए राज्य सरकारों को अनेक पेचीदा मसले जो इस समय कई राज्य प्रशासनों को अपनी सामर्थ्य से वाहर जान पड़ते हैं, कुछेक वर्षों में ही हल कर दिखाने होंगे। करीव-करीव इन सभी मसलों को हल करने में जन-सहयोग, सद्भाव और आपसी व्यवस्था की वहुत अपेक्षा होगी। कितने ही ऐसे जटिल मामले भी हो सकते हैं जिन पर गौर करना हरेक राज्य के लिए जरूरी हो। केन्द्रीय भूमि सुधार समिति ने, जिसमें योजना आयोग के सदस्य और तत्सम्वन्धी प्रमुख मंत्रालयों के प्रतिनिधि सम्मिलित हैं, और जो समय-समय पर देश के विभिन्न भागों में भूमि सुधार की प्रगति की समीक्षा करती है, पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में अपना दायित्व निभाते समय इन सव वातों का पूरा ध्यान रखा। गत वर्ष योजना आयोग को पट्टेदारी सुधार, चकों के आधार, कृषि पुनर्गठन और भूदान की विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करने में भूमि सुधार विषयक जिस मण्डल ने सहायता दी, उसने भी इन तथ्यों को

भली-भांति ध्यान में रखा था। अतएव योजना में भूमि सुधार और सहकार विकास के जो उपाय सुझाए गए हैं वे ऐसे हैं जो सभी को समान रूप से मान्य हो सकें और जिन्हें राष्ट्रीय योजना के एक अंग के रूप में हरेक राज्य स्थानिक परिस्थितियों और आवश्यकताओं का पर्याप्त ध्यान रखते हुए क्रियान्वित कर सके।

भूमि सुधार

बिचौलियों की समाप्ति

६. कुछ ही वर्ष पहले तक देश के करीब आधे भाग में बिचौलियों की पट्टेदारी का प्रचलन था। थोड़े-बहुत राज्यों में बिचौलियों के उन्मूलन का कानून १९५१ से पहले बन चुका था। लेकिन बिचौलियों की प्रथा समाप्त करने और बिचौलियों की जमीन पर कब्जा करने के कानून वगैरह का ज्यादातर काम पहली योजना की अवधि में ही उठाया गया। अब बिचौलियों का करीब-करीब सारे देश में उन्मूलन हो चुका है। बस कुछेक ही ऐसे इलाके यहां-वहां बच रहे हैं जनमें बिचौलिया पट्टेदारी खत्म करने के लिए आगे कार्रवाई करने की जरूरत है; उदाहरण के लिए—असम की वे एस्टेटें जिनका पक्का बन्दोबस्त नहीं हुआ है, राजस्थान की जमींदारियां, सेना में काम करने के पुरस्कार के रूप में मिली हुई पट्टेदारियां, इनाम में मिली अन्य छोटी-मोटी पट्टेदारियां (ये कई राज्यों में हैं) और कुर्ग, त्रिपुरा, कच्छ आदि 'ग' भाग के राज्यों की बिचौलिया जमीन। बिचौलिय पट्टेदारी की समाप्ति के कानून लागू करने का काम शुरू-शुरू में मुकदमेबाजी के कारण रुका रहा; कई बिचौलियों ने अदालतों से कहा कि बिचौलिया पट्टेदारी उन्मूलन कानून संविधान के अनुसार अवैध ठहरता है। इसलिए इसे लागू न होने दिया जाए। इस आपत्ति को दूर करने की खातिर १९५२ में देश के संविधान में आवश्यक संशोधन कर दिया गया।

७. बिचौलिया पट्टेदारी खत्म करना जरूरी तो बहुत है लेकिन उससे राज्य सरकारों को प्रशासन के मामले में बहुत ही भारी जिम्मेदारी उठानी पड़ जाती है। बिचौलियों को कितना मुआवजा दिया जाए, यह तय करना, मुआवजे की रकम अदा करना, पट्टेदारों के नाम और उनकी जमीन के बारे में जो दस्तावेज हों उनमें संशोधन-परिवर्द्धन कराना, या जरूरी हो तो नए सिरे से दस्तावेज तैयार कराना, बिचौलिया उन्मूलन के बाद किस पट्टेदार को कितना लगान या मालगुजारी देनी होगी, इसका हिसाब कराना, लगान या मालगुजारी वसूल करने और जमीन का हिसाब-किताब रखने के लिए जरूरी इन्तजाम करना, इत्यादि अनेक नए काम उठ खड़े होते हैं। भूमि-सुधार के बाद बिचौलिया जितनी जमीन का हकदार रहता है उसकी सीमा पर निशान लगाना, और कानून के अनुसार जिस पंचायती जमीन पर सरकार का अधिकार हो जाता है उसकी देख-रेख और विकास का इन्तजाम कराना—यह भी प्रशासन की ही जिम्मेदारी हो जाती है।

८. उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में, जहां बन्दोबस्त अस्थायी था, भूमि सुधार का काम तेजी से पूरा करना अपेक्षाकृत सरल रहा। कारण, वहां जमीन का हिसाब-किताब पहले से ही बाकायदा लिखा रखा था और भूमि सुधार के लिए समुचित प्रशासनिक व्यवस्था मौजूद थी। बिहार, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल में, जहां बन्दोबस्त स्थायी था, और राजस्थान और सौराष्ट्र जैसे प्रदेशों में, जहां जागीरदारियां थीं, बिचौलियों का उन्मूलन करना जरा मुश्किल था। वहां जमीन का हिसाब-किताब शुरू से तैयार करने और मालगुजारी प्रशासन की व्यवस्था करने की जरूरत थी। फिर भी ज्यादातर राज्यों में बिचौलिया प्रथा खत्म करने के कानून बना दिए गए हैं और उनका पालन किया जा रहा है।

९. विचौलियों की समाप्ति के लिए मोटे तौर पर ये कदम उठाए जाते हैं :

(१) पड़ती जमीन, जंगल, आवादी-मुकाम जैसी विचौलियों की जो भी पंचायती जमीन होती है, उसे राज्य सरकार अपने हाथ में ले लेती है और उसके विकास वगैरह का इन्तजाम कराती है ।

(२) विचौलियों की खुदकाश्त जमीन, और घरेलू फार्म जमीन विचौलियों के पास ही रहने दी जा रही है । विचौलियों के घरेलू फार्म में जो लोग खेती करने आए हों उन्हें विचौलियों के पट्टेदारों के रूप में खेती करते रहने दिया जाता है । कुछ राज्यों में अलवत्ता पट्टेदार भी सीधे राज्य के नियन्त्रण में ले लिये गए हैं और विचौलियों का अपनी पट्टेदारी की जमीन पर कोई हक नहीं रह गया है । ऐसे राज्यों में उत्तर प्रदेश, मध्य भारत (जागीरदारी क्षेत्र), दिल्ली, अजमेर और भोपाल शामिल हैं । राजस्थान और मध्य भारत (जमींदारी क्षेत्र) में इस तरह के पट्टेदारों को यह सुविधा दी गई है कि वे चाहें तो जमीन के स्वामित्व का अधिकार खरीद लें सकते हैं । ज्यादातर राज्यों में विचौलियों को खुदकाश्त के लिए सिर्फ वही जमीन दी गई है जिसमें वे पहले से खुद खेती करते आए थे और जो उनके घरेलू फार्मों में शामिल थी । लेकिन हैदरावाद, मैसूर (इनामी जमीन), राजस्थान, सौराष्ट्र, अजमेर, भोपाल, और विन्ध्य प्रदेश आदि कुछ राज्यों में ऐसी व्यवस्था रखी गई है कि अगर विचौलिए की खुदकाश्त की जमीन कानून में खुदकाश्त के लिए निश्चित अधिकतम भूमि से कम हो, तो उसे खेती करने के लिए कुछ और जमीन दे दी जाए।

(३) ज्यादातर राज्यों में विचौलियों के मुख्य पट्टेदार सीधे राज्य सरकार के मातहत ले लिये गए हैं । बम्बई में (विचौलियों के अनेक विशिष्ट वर्गों के सम्बन्ध में) और हैदरावाद और मैसूर में (इनामी जमीन के सम्बन्ध में) और कुछ अन्य राज्यों में ऐसी व्यवस्था नहीं की गई है । इन राज्यों में कहीं-कहीं विचौलियों के पट्टेदारों की जमीन विचौलिए के नाम कर दी गई है । कुछ राज्यों में पट्टेदारों का अधिकार स्थायी था, और उन्हें अपनी जमीन दूसरे के नाम कर देने का हक मिला हुआ था, इसलिए वहां इस दिशा में कोई और कार्रवाई करने की जरूरत नहीं हुई । ऐसे राज्यों में असम, पश्चिम बंगाल, विहार, उड़ीसा, भोपाल और विन्ध्य प्रदेश शामिल थे । बम्बई, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हैदरावाद, मैसूर और दिल्ली वगैरह में पट्टेदारों को स्वामित्व का अधिकार पाने के लिए राज्य सरकार को एक निश्चित रकम अदा करनी पड़ी । आंध्र, मद्रास, राजस्थान, सौराष्ट्र, (वारखली क्षेत्र) मध्य भारत, हैदरावाद (जागीर क्षेत्र) और अजमेर जैसे कुछ राज्यों में या तो पट्टेदार को पहले से ज्यादा अधिकार दिला दिए गए थे, या उससे सीधे कुछ लिये वगैर उसका लगान कम कर दिया गया ।

१०. विचौलियों को मुआवजे और पुनःस्थापन सहायता के रूप में जो रकम दी जानी है वह कुल मिलाकर ४५० करोड़ रुपए के आस-पास वैठती है । मुआवजे की कुल रकम का सत्तर प्रतिशत हिस्सा तो उत्तर प्रदेश और विहार ही का है । आम तौर पर मुआवजा, विचौलियों को जमीन से होने वाली शुद्ध आय का कुछ गुना तय कर लिया गया है । अधिकतर राज्यों में न्यून आय वर्ग के विचौलियों के लिए आमदनी की ज्यादा गुनी रकम मुआवजे के रूप में स्थिर की

गई। बिचौलियों के खत्म हो जाने से राज्य की आय बढ़ जाती है और आय में जो वृद्धि होती है उसी में से मुआवजे की रकम अदा की जाती है। मुआवजा कभी-कभी नकद भी दिया जाता है। लेकिन ज्यादातर मुआवजे में ऐसे बौंड दिए जाते हैं जिन्हें अदायगी के लिए दूसरे के नाम भी किया जा सकता है, जो परक्राम्य (निगोशिएबल) होते हैं, और जिन्हें एक निश्चित अवधि के बाद भुनाया जा सकता है। यह अवधि १० से लेकर ४० वर्ष तक रखी गई है। मुआवजे की रकम आंकना, और उस हिसाब से मुआवजा में बौंड देना खासा बड़ा काम रहा है। ज्यादातर राज्यों में काम जल्दी से पूरा करने की खातिर प्रशासन की अतिरिक्त व्यवस्था करनी पड़ी है। फिर भी मुआवजा आंकने और अदा करने का बहुत-सा काम अभी बाकी पड़ा है। यह बहुत जरूरी है कि छोटे-छोटे जमींदारों और विधवाओं और नाबालिगों को मुआवजा देने का काम अब जल्दी पूरा किया जाए।

मालिकों के अधिकार

११. बिचौलियों की समाप्ति के बाद अब मोटे तौर पर दो तरह की पट्टेदारियां बच रही हैं—एक वर्ग में वे लोग आते हैं जिन्होंने सीधे राज्य से जमीन ले रखी है, और दूसरे में वे जिन्होंने पहले वर्ग के लोगों से जमीन ले रखी है। इनके कर्तव्य और अधिकार आम तौर पर उन कानूनों में निर्दिष्ट होते रहे जो राज्य सरकारें पट्टेदारी के बारे में समय-समय पर बनाती रहीं। अधिकांश पट्टेदारों को कानून से यह आश्वासन मिल चुका था कि उनकी पट्टेदारी को कभी आंच न आने पाएगी। साथ ही लगान की रकम भी नियमित कर दी गई। यही नहीं, कुछ राज्यों में उन्हें पट्टेदारी की जमीन किसी और के नाम कर देने के सम्बन्ध में बाकी अधिकार मिल चुके थे। मगर इतना सब होते हुए भी विभिन्न वर्गों की पट्टेदारी की विविधता काफी कम हो चली है और जो काश्तकार बिचौलियों के मातहत काम कर रहे थे, उनमें से अधिकांश खुद जमीन के मालिक हो गए हैं। जमीन के स्वामित्व के बारे में कुछ मोटे सिद्धांत तय करके अगर सभी जगह एक-सी नीति पर चला जाए तो बहुत अच्छा रहे।

१२. जमीन का मालिक होने का मतलब है कुछेक जिम्मेदारियां निभाने के लिए तैयार रहना। सबसे बड़ी जिम्मेदारी तो जमीन के उपयोग और देख-रेख की है। स्वामित्व के इस पहलू पर हम इसी अध्याय में आगे चलकर विचार करेंगे।

अनेक राज्यों में चकबन्दी विषयक कानूनों के अन्तर्गत ऐसे उपाय किए गए हैं कि जमीन के अधिकाधिक छोटे टुकड़े न होते जाएं। पर होता अक्सर यह है कि इन नियमों को सख्ती से लागू नहीं किया जाता। कृषि विकास के लिए यह जरूरी है कि जमीन के कटे-फटे टुकड़े न बनने दिए जाएं और बंटवारे या हस्तांतरण द्वारा उनके भी और छोटे-छोटे टुकड़े न होने दिए जाएं और जो छोटे कटे-फटे टुकड़े इस समय हैं उनके हस्तांतरण के नियमन की कोई व्यवस्था कर दी जाए।

१३. कुछेक राज्यों में काफी इलाका ऐसा है जिसमें उन लोगों को अपनी जमीन दूसरे के नाम कर देने का अधिकार नहीं है जिन्होंने जमीन सीधे राज्य से ले रखी है। ऐसे मालिक-जमीन फसल को रेहन रखकर थोड़े समय के लिए कर्ज ले सकते हैं। लेकिन रेहन में रखने के लिए कोई चीज न होने पर ये शायद सहकारी ऋण संस्थाओं से लम्बे और दरमियाने अर्से के लिए कर्ज न ले पाएं। इसलिए यह जरूरी है कि जिन लोगों ने जमीन सीधे राज्य से ले रखी हो उन्हें

सरकार या सहकारी संस्थाओं से कर्ज लेने की खातिर जमीन रेहन रखने का अधिकार दिया जाए।

१४. कुछ राज्यों में जमीन को पट्टे पर उठाने का अधिकार ऐसे ही व्यक्तियों को दिया गया है जो अपनी जमीन की आय की देख-रेख करने में किसी दृष्टि से असमर्थ हों; उदाहरण के लिए विधवाएं, नाबालिग, और सशस्त्र सेनाओं के कर्मचारी। अनुभव से पता चलता है कि इस तरह के निषेध से गांव की अर्थ-व्यवस्था में एक तरह की जड़ता आ जाती है। यही नहीं, इस तरह के निषेध को सख्ती से लागू कर सकना प्रशासनिक दृष्टि से बहुत मुश्किल हो जाता है। पहली पंच-वर्षीय योजना में यह परिकल्पना की गई थी कि जमीन को पट्टे पर उठाने के जो भी नियम वगैरह बनाए जाएं उन्हें लागू करने की जिम्मेदारी पंचायतों पर रहे, यानी जमीन पंचायतों के माध्यम से ही पट्टे पर उठाई जाए। इस तरह की प्रथा को यथासम्भव बढ़ावा दिया जाए। हर हालत में जब कोई व्यक्ति अपनी जमीन पट्टे पर उठाए तो पट्टे की अवधि कम से कम पांच से दस वर्ष हो।

पट्टेदारी सुधार

१५. समय के साथ पट्टेदारी की समस्या तीन तरह से जटिल होती गई। एक तो इसलिए कि अक्सर बिचौलिए अपनी घरेलू-फार्म जमीन को खुद नहीं जोतते-बोते थे और उसे पट्टे पर उठा देते थे। दूसरे इसलिए कि जिन लोगों ने बिचौलियों से जमीन ले रखी थी—इस वर्ग के लोग सब सीधे राज्य के नियंत्रण में आ गए हैं—वे कभी-कभी पट्टे पर ली हुई जमीन को खुद भी पट्टे पर उठा देते थे। तीसरे इसलिए कि रैयतवाड़ी क्षेत्रों में रैयत की जमीन के एक काफी बड़े हिस्से में पट्टेदार काश्त करते रहे थे।

१६. बेदखली रोकने के लिए विभिन्न राज्यों में विभिन्न उपाय किए गए हैं। बारीकियों में जाएं, तो इन उपायों में खासा अन्तर दीख पड़ेगा। पट्टेदारी की सुरक्षा की दृष्टि से हम विभिन्न राज्यों को इस प्रकार बांट सकते हैं:

(१) वे राज्य जहां पट्टेदारों को पट्टेदारी बनाए रखने का पूरा आश्वासन दिया गया है।

(२) वे राज्य जहां पट्टेदारी के आंशिक रक्षण की व्यवस्था है, और जहां जमींदार एक सीमित क्षेत्र में खुद काश्त करने के अधिकार का उपयोग करने के लिए पट्टेदार को बेदखल कर सकता है। अलबत्ता इस शर्त का ध्यान रखते हुए कि बेदखल पट्टे-दार के पास खेती-बारी के लिए कम से कम उतनी जमीन बच रहे जितनी कानून में निश्चित है।

(३) वे राज्य जहां जमींदार एक निश्चित सीमा तक ही पट्टेदारों से जमीन खुदकाश्त के लिए वापस ले सकता है, लेकिन जहां पट्टेदार को खेती-बारी के लिए थोड़ी-बहुत जमीन अपने पास रखे रहने का हक नहीं है।

(४) अन्य राज्य, जहां बेदखली फिलहाल रोक दी गई है, या जहां पट्टेदारों के संरक्षण के लिए कदम उठाए जाने हैं।

उत्तर प्रदेश और दिल्ली पहले वर्ग में, बम्बई, पंजाब, राजस्थान, हैदराबाद और हिमाचल प्रदेश दूसरे वर्ग में, और असम, मध्य प्रदेश (बरार), उड़ीसा, पेप्सू और कच्छ तीसरे वर्ग में आते हैं। उत्तर प्रदेश में पट्टेदारों को सीधे राज्य के नियन्त्रण में ले लिया गया है और उन्हें स्थायी

और मौरूसी हक दे दिए गए हैं। राज्य सरकार उनसे लगान लेती है और जमींदारों को बॉंडों के रूप में मुआवजा अदा करती है। दिल्ली में पट्टेदारों को स्वामित्व का पूरा अधिकार दिया गया, और उनसे सरकार को लगान देने के साथ-साथ जमींदारों को मुआवजा देने को भी कहा गया। बम्बई में जमींदार पट्टे पर उठाई जमीन में से आधी खुदकाश्त के लिए वापस ले सकता है, लेकिन इस सिलसिले में आर्थिक दृष्टि से लाभदायी तीन चक की अधिकतम सीमा निर्धारित कर दी गई है। आर्थिक दृष्टि से लाभदायी चक का क्षेत्रफल जमीन की उर्वरता के हिसाब से ४ से लेकर १६ एकड़ तक कुछ भी हो सकता है। पंजाब में खुदकाश्त के लिए ३० 'स्टेण्डर्ड एकड़' से ज्यादा जमीन वापस नहीं ली जा सकती, और पट्टेदार के लिए कम से कम ५ 'स्टेण्डर्ड एकड़' जमीन छोड़ देना जरूरी होता है। ३० 'स्टैण्डर्ड एकड़' से ज्यादा जो भी जमीन होती है, सरकार के हाथ में चली जाती है। न्यूनतम क्षेत्र ५ स्टेण्डर्ड एकड़ जमीन में से कोई पट्टेदार तभी बेदखल किया जा सकता है जब सरकार उसे अपनी अतिरिक्त प्राप्त जमीन में से बदले की जमीन दे। हैदराबाद में भी पट्टेदार के लिए कुछ जमीन छोड़ देने का नियम है। हां, अगर कुछ जमीन के पास ही कानून में निर्दिष्ट सीमा से भी कम या बिल्कुल बराबर जमीन हो तो बात दूसरी है। राजस्थान में भी पट्टेदार को आम तौर पर थोड़ी-बहुत जमीन अपने लिए रखे रहने का हक मिला हुआ है। हिमाचल प्रदेश में जमींदार खुदकाश्त के लिए पांच एकड़ जमीन वापस ले सकता है। पट्टेदार को पट्टी की तीन-चौथाई जमीन अपने पास रखे रहने का हक दिया गया है। तीसरे वर्ग के राज्यों में खुदकाश्त के लिए कितनी जमीन वापस ली जा सकती है, इसका ब्योरा यों हैं:—असम में ३३$\frac{1}{3}$ एकड़, मध्य प्रदेश (बरार) में ५० एकड़, पेप्सू में ३० 'स्टैण्डर्ड एकड़', कच्छ में ५० एकड़, और उड़ीसा में ७ से १४ एकड़। देश के अन्य भागों में तरह-तरह की व्यवस्था है और वहां पट्टेदारों की रक्षा के लिए उपरोक्त राज्यों के मुकाबले बहुत ही कम इन्तजाम हुआ है। भूमि सुधार कानूनों के बनने के बाद की स्थिति का मूल्यांकन करते हुए यह कहना पड़ेगा कि देश के विभिन्न भागों में इन कानूनों का व्यावहारिक पालन एक जैसा नहीं हुआ है, और एक ही राज्य में कानूनों के कुछ हिस्सों का तो पालन बहुत जोर-शोर से हुआ है, और कुछ में खास ध्यान नहीं दिया गया है। कुल मिलाकर खासी विषमता रही है।

१७. पिछले कुछ वर्षों में राज्यों में बड़े पैमाने पर बेदखली किए जाने के और पट्टेदारी का स्वेच्छा से त्याग करने के मामले हुए हैं। इसके खास-खास कारण ये हैं कि लोग पट्टेदारी संरक्षण के कानूनों की व्यवस्था जानते नहीं हैं, कानूनों में कहीं और कसर रह गई है, जमीन का हिसाब-किताब बाकायदा रखा हुआ नहीं है, और प्रशासन का इन्तजाम अच्छा नहीं है। स्वेच्छा से पट्टेदारी त्याग देने के ज्यादातर मामलों की सचाई सन्दिग्ध होती है। सिफारिश की जाती है कि ऐसा प्रबन्ध कर दिया जाए कि पट्टेदारों या उप-पट्टेदारों को लगान न देने या जमीन का दुरुपयोग करने को छोड़ और किसी आधार पर बेदखल न किया जा सके। पिछले तीन-एक वर्ष में जो बेदखलियां या पट्टेदारी-त्याग हुए हों, उन पर बाकायदा गौर किया जाए और अगर कोई पट्टेदारी लौटाना उचित समझा जाए तो लौटा दी जाए। लोग दबाव में आकर पट्टेदारी का 'स्वेच्छा से' त्याग न करें और इसके लिए ऐसा विधान कर दिया जाए कि पट्टेदारी का छोड़ा जाना तब तक वैध नहीं समझा जाएगा जब तक कि उसके बारे में माल विभाग को बाकायदा खबर न की गई हो। पट्टेदार जो जमीन छोड़े, उसमें से जमींदार को सिर्फ उतनी ही जमीन लेने दी जाए जितनी वह कानून के अनुसार ले सकता हो।

खुदकाश्त का अर्थ

१८. पट्टेदारी के संरक्षण के कानूनों का पालन करने में कुछ दिक्कतों का इस वजह से सामना करना पड़ता है कि खुदकाश्त की कोई सुनिश्चित परिभाषा नहीं है। इस शब्द का अक्सर इस्तेमाल किया जाता है, पर इसके मतलब सब कहीं अलग-अलग लगाए जाते हैं। सभी राज्यों में खुदकाश्त में वह खेती-बारी भी शामिल की जाती है जो नौकरों या मजदूरों से कराई जा रही हो। अर्थभेद है तो इन बातों में कि खेती-बारी की देख-रेख कैसी और कितनी है, और नौकरों या मजदूरों का वेतन किस रूप में और किस तरह दिया जाए। दोनों ही चीजों का कानून से विधान हुआ है। अनेक राज्यों में देख-रेख के विषय में कोई प्रतिबन्ध नहीं है। बम्बई, सौराष्ट्र और कुछ अन्य राज्यों में ऐसी व्यवस्था है कि खुदकाश्त की देख-रेख या तो स्वयं मालिक-जमीन या उसके परिवार का कोई सदस्य करे, लेकिन इस प्रसंग में 'परिवार' की कोई परिभाषा नहीं दी गई है। रही नौकरों और मजदूरों के वेतन की बात। बम्बई और कुछ अन्य राज्यों में ऐसी व्यवस्था है कि वेतन चाहे नकद दे लो चाहे किसी और तरह, मगर पैदावार के हिस्से के रूप में न दो। उधर पंजाब में आप मजूरी चाहे किसी तरह अदा कर सकते हैं। खुदकाश्त का मतलब सभी जगह एक ही जैसा लगाया जाए, ऐसा प्रबन्ध कर देना अपेक्षित है।

१९. देखा जाए तो खुदकाश्त में तीन बातें खास होनी चाहिएं—पहली, फायदा-नुकसान जो हो मालिक उठाए; दूसरी, खेती-बारी की देख-रेख मालिक खुद करे, और तीसरी यह है कि खेती में वह खुद भी मेहनत करे। जो आदमी सारा फायदा-नुकसान खुद न उठाता हो, या जिसने पैदावार का एक हिस्सा किसी दूसरे के नाम पर कर दिया हो, उसके बारे में यह कहना गलत होगा कि वह खेती स्वयं कर रहा है। जहां तक देख-रेख का मतलब है वह यह होना चाहिए कि या तो स्वयं मालिक-जमीन या उसके परिवार का कोई सदस्य करे। देख-रेख अच्छी हो सके, इसके लिए ऐसा विधान करना जरूरी है कि देख-रेख करने वाला फसल के समय ज्यादातर या तो उसी गांव में रहे जहां उसके खेत हैं या उसके आसपास के किसी गांव में। इस प्रसंग में 'आसपास' की स्पष्ट परिभाषा कह दी जाए। सिद्धांत रूप से तो खुदकाश्त के लिए खेती में मालिक का थोड़ा-बहुत योग देना जरूरी होना चाहिए, लेकिन इस विधान का पालन करने में कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसलिए सुझाव दिया जाता है कि इस शर्त को जरूरी न समझा जाए और खुदकाश्त की परिभाषा यों कर दी जाए; जिसमें जमीन का मालिक फायदे-नुकसान का सारा जोखिम खुद उठाता हो और खुद मालिक या उसके परिवार का कोई सदस्य खेती-बारी की देखरेख बाकायदा करता हो, वही खुद-काश्त है। लेकिन जहां खुदकाश्त के लिए जमीन पट्टेदार से वापस ली गई हो, वहां खुदकाश्त की तीसरी यानी मालिक की खेती-बारी में खुद भी थोड़ी-बहुत मेहनत की शर्त भी लागू की जाए तो अच्छा रहे। इस तरह जो जमीन वापस ली गई हो अगर उसमें खुदकाश्त न की जाए या एक निश्चित अवधि में उसे किराए पर उठा दिया जाए तो बेदखल पट्टेदार को यह दावा करने का हक रहे कि पट्टे की जमीन फिर उसे लौटा दी जाए।

२०. ऊपर खुदकाश्त की जो व्याख्या की गई है, उसे ध्यान में रखकर वर्तमान कानूनों पर फिर से विचार किया जाना चाहिए और उन लोगों को जो अब तक सिर्फ खेतिहर मजदूर या साझेदार समझे जाते रहे हैं, पट्टेदारी के अधिकार दिलाने का समुचित प्रबन्ध किया जाना चाहिए। खुदकाश्त की गलत व्याख्या किए जाने से अनेक राज्यों में जमींदार खेती में साझा करने की ऐसी व्यवस्था करते रहे हैं जो पट्टेदारी जैसी होते हुए भी पट्टेदारी नहीं समझी जाती, और इस प्रकार साझेदार उन अधिकारों से वंचित रह जाता है जो कानून में पट्टेदारों को दिए गए हैं।

जमीन का खुदकाश्त के लिए हासिल किया जाना

२१. पट्टेदारी कानून की कई-एक कठिनाइयां पट्टेदार से खुदकाश्त के लिए जमीन वापस लेने के सवाल को लेकर उठती हैं। आम रिवाज कानून में ऐसी व्यवस्था रखने का है कि सेना के कर्मचारी, अविवाहित औरतें, विधवाएं, नावालिग लड़के-लड़कियां, और शारीरिक या मानसिक दृष्टि से असमर्थ व्यक्ति अपनी जमीन पट्टे पर उठा सकते हैं और समर्थ होने पर पट्टेदार से जमीन खुदकाश्त के लिए वापस ले सकते हैं।

जहां तक प्रतिरक्षा सेवा में नियुक्त कर्मचारियों का सम्बन्ध है, इस बात का ध्यान रखना बहुत ही जरूरी है कि पट्टेदारी के कानून की वजह से उन्हें किसी तरह की असुविधा न हो। सैनिकों को इस बात का पूरा इतमीनान होना चाहिए कि उनके हितों का ध्यान रखा जाएगा और उनके अधिकारों पर आंच नहीं आएगी। अगर वे जमीन के मालिक हों तो उन्हें जमीन पट्टे पर उठा देने का हक रहे, अगर वे पट्टेदार हों तो उन्हें पट्टे पर मिली जमीन किसी और को उठा देने का हक रहे। सेना से निवृत्त होने पर वे अपनी खुद की या पट्टे की जमीन खुदकाश्त के लिए वापस ले सकें। इस दिशा में कोई रोक-टोक न हो।

२२. आम राय यह है कि जमींदार को खुदकाश्त के लिए पट्टेदार से जमीन वापस लेने का अधिकार होना चाहिए। पहली पंचवर्षीय योजना में यह प्रस्ताव किया गया था कि जमींदार को खुदकाश्त के लिए हद से हद इतनी जमीन वापस लेने दी जाए जिसका क्षेत्रफल एक परिवार के लिए पर्याप्त जमीन से तिगुना हो। जमीन सिर्फ खुदकाश्त के लिए ही वापस लेने दी जाए और उसका क्षेत्रफल इतना ही रखा जाए जिसे जमींदार के परिवार के प्रौढ़ सदस्य जोत-बो सकते हों। इस प्रस्ताव का पालन करने में पिछले तीन वर्षों में जो अनुभव प्राप्त हुआ है उससे यह लगता है कि बड़े पैमाने पर बेदखली न होने देने की कोई कारगर व्यवस्था होनी चाहिए। व्यवहार में सवाल यह उठता है कि जो मालिक खुदकाश्त करना चाहता हो और जिस पट्टेदार की इस वजह से रोटी-रोजी जाती हो, उनके परस्पर-विरोधी हित का समन्वय किस प्रकार किया जाए कि दोनों की बात रह जाए। बहुत-से राज्यों में एक सीमा से आगे जमींदार खुदकाश्त के लिए जमीन वापस नहीं ले सकता। लेकिन इसके बाद भी उन जमींदारों की समस्या बच रहती है जिनकी जमीन एक परिवार के लिए पर्याप्त समझी जाने वाली जमीन से कम हो, या उससे तो ज्यादा हो पर खुदकाश्त की निर्धारित सीमा से कम पड़ती हो।

२३. छोटे-मोटे जमींदारों की आर्थिक दशा पट्टेदारों की आर्थिक दशा से इतनी भिन्न नहीं कि पट्टेदारी कानून में उनके नुकसान की कोई बात रखना उचित ठहराया जा सके। यह जरूर वांछनीय है कि जो छोटा जमींदार खुदकाश्त के लिए जमीन वापस लेना चाहता हो उसे वैसा करने दिया जाए। मगर साथ ही पट्टेदार का हित-अहित बिसार देना भी मुश्किल है। काफी लोगों की यह राय है कि जिन जमींदारों की कुल जमीन बहुत थोड़ी-सी हो, उन्हें पट्टेदारों से सारी जमीन वापस लेने देनी चाहिए। इसकी सीमा इतनी रखी जाए कि जिसे बुनियादी चक समझा जा सके। जमीन के टुकड़े न होने देने के कानूनों में 'बुनियादी चक' की परिभाषा आम तौर से यों की जाती है: वह छोटे से छोटा क्षेत्र जिसमें खेती करना आर्थिक दृष्टि से फायदेमन्द हो। व्यवहार में हम यह मान सकते हैं कि परिवार का चक तीन बुनियादी चकों के बराबर है। तो मतलब यह हुआ कि जिन लोगों के पास एक परिवार के लिए पर्याप्त समझी जाने वाली जमीन की तिहाई जमीन हो, उन्हें अपनी सारी जमीन खुदकाश्त के लिए वापस लेने का अधिकार होना चाहिए। रहे वे लोग

जिनकी जमीन बुनियादी चक से तो ज्यादा हो मगर पारिवारिक चक से कम हो; उनके बारे में यह सुझाव दिया जाता है कि उन्हें अपनी आधी जमीन वापस लेने का अधिकार दिया जाए; हां, इस बात का ध्यान रखा जाए कि इन्हें जो जमीन वापस मिले वह किसी भी हालत में बुनियादी चक से कम न हो। अगर जमींदार के वापस लेने के बाद पट्टेदार के पास जमीन बिल्कुल ही न बच रहे, या बुनियादी चक से कम बच रहे, तो सरकार उसे कहां से इतनी जमीन दिलाए कि उनके पट्टे में कम से कम एक पूरा बुनियादी चक हो जाए। जब जमीन की अधिकतम सीमा निश्चित कर दी जाएगी और अतिरिक्त भूमि पर सरकार का कब्जा हो जाएगा तो पट्टेदारों को बुनियादी चक दिलाने के काम में किसी हद तक सुविधा हो जाएगी।

२४. जहां तक उन लोगों का सवाल है जिनकी जमीन पारिवारिक चक से ज्यादा हो मगर खुदकाश्त के लिए निश्चित से कम, खास ध्यान इसी बात का रखा जाना चाहिए कि पट्टेदारों के पास भी थोड़ी-बहुत जमीन बच रहे। 'थोड़ी-बहुत' का मतलब क्या है, यह तो जमींदार की खुदकाश्त की जमीन के क्षेत्रफल पर निर्भर है। प्रस्ताव यह है कि—

(१) अगर जमींदार के पास खुदकाश्त की इतनी जमीन हो जो एक पारिवारिक चक से ज्यादा मगर निश्चित अधिकतम सीमा से कम हो, तो उसे पट्टेदार से जमीन वापस लेने दी जाए, अलबत्ता इस बात का ध्यान रखकर कि पट्टेदार के पास कम से कम एक पारिवारिक चक के बराबर जमीन बच रहे, और जमींदार की खुदकाश्त की जमीन का क्षेत्र कुल मिलाकर निश्चित अधिकतम सीमा से ज्यादा न हो जाए।

(२) अगर जमींदार के पास खुदकाश्त की जमीन एक पारिवारिक चक से कम हो तो उसे पट्टेदार की जमीन की आधी या इतनी जमीन वापस दे दी जाए कि उसका खुदकाश्त का इलाका कुल मिलाकर एक पारिवारिक चक के बराबर हो जाए, मगर शर्त यह हो कि पट्टेदार के पास कम से कम एक बुनियादी चक के बराबर जमीन बच रहे।

२५. यह जरूरी है कि मालिक-जमीन खुदकाश्त के लिए जो जमीन वापस ले सकता हो उसकी सीमा पर निशान लगाने का काम जितनी जल्दी हो सके पूरा कर दिया जाए। पांच-छः महीने की एक ऐसी उचित अवधि तय कर ली जाए जिसमें मालिक-जमीन खुदकाश्त का क्षेत्र निर्धारित कराने के लिए आवेदन कर सकें। माल विभाग के अधिकारी इस बात का न्यायोचित फैसला करें कि पट्टेदार से कितनी जमीन वापस ली जा सकती है, कितनी नहीं। जो इलाका खुदकाश्त की सीमा के अलावा हो, उसमें पट्टेदारों को स्थायी और मौरूसी हक दिया जाए। उन्हें पट्टे की जमीन दूसरे के नाम करने का भी थोड़ा-बहुत अधिकार दिया जाए ताकि वे जमीन रेहन रखकर सरकार से या सहकारी समितियों से कर्ज ले सकें। जो जमीन वापस ली जा सकती हो उसके पट्टेदारों को मौरूसी (मगर स्थायी नहीं) हक होने चाहिएं। उन्हें जमीन में सुधार करने का अधिकार भी मिलना चाहिए। ऐसा विधान कर देना भी वांछनीय है कि जमींदार एक निश्चित अवधि में ही जमीन वापस ले सकता है और उस अवधि के बाद स्वामित्व पट्टेदार को दे दिया जा सकता है। इसके लिए पहली योजना में पांच वर्ष की जो अवधि सुझाई गई है वह पर्याप्त जान पड़ती है। छोटे-छोटे जमींदारों के लिए ऐसा कोई प्रतिबन्ध लगाना जरूरी नहीं।

लगान का नियमन

२६. पहली पंचवर्षीय योजना में कहा गया था कि लगान की ऐसी दर जो पैदावार के चौथाई या पांचवे हिस्से से ज्यादा हो, बगैर किसी खास वजह के लागू न होने दी जाए। लगान नियमित करने का काम सभी जगह बराबर नहीं हुआ है; कई राज्यों में अभी तक इसकी कानूनी व्यवस्था नहीं हुई है। लगान के बारे में विभिन्न राज्यों में अब भी बहुत अन्तर है। अधिकतम लगान राजस्थान और बम्बई में पैदावार का छठा हिस्सा, दिल्ली और अजमेर और किसी हद तक हैदराबाद और असम में पांचवां हिस्सा, उड़ीसा, हिमाचल प्रदेश, मैसूर के कुछ भागों में, और असम, हैदराबाद और विन्ध्य प्रदेश में कुछ मामलों में चौथाई हिस्सा, पंजाब और पेप्सू में, मैसूर के कुछ भागों में और कच्छ में कुछ मामलों में तिहाई हिस्सा, और बिहार में ७/२० हिस्सा निश्चित हुआ है। दूसरी ओर मद्रास में सिर्फ तंजौर और मलाबार में ही लगान नियमित है। तंजौर में लगान पैदावार का साठ प्रतिशत भाग लिया जाता है और मलाबार में आम तौर पर पचास प्रतिशत। पश्चिम बंगाल में साझेदार को, अगर काश्त का खर्च उसी ने उठाया हो तो, फसल का चालीस प्रतिशत, नहीं तो पचास प्रतिशत भाग जमींदार को देना पड़ता है। आंध्र जैसे कुछेक राज्यों में तो लगान का नियमन बिल्कुल हुआ ही नहीं है। यह आवश्यक हो चला है कि जल्दी ही लगान की दरों को घटाकर उतना कर दिया जाए जितना कि पहली योजना में सुझाया गया था। साथ ही, लगान को नकद चुका सकने की व्यवस्था भी कर दी जाए तो और भी अच्छा रहे। लगान का सामान्य ढंग से नियमन करने के साथ-साथ अधिकतम लगान को मालगुजारी के कुछ गुने के बराबर तय कर देना भी बहुत उपयोगी रहेगा।

पट्टेदार और स्वामित्व का अधिकार

२७. यह बात तय पाई जा चुकी है कि जो जमीन खुदकाश्त के लिए वापस न ली जा सकती हो उसके पट्टेदारों को अपने-अपने चकों का स्वामित्व प्रदान करने के लिए जल्दी ही जरूरी कदम उठाने चाहिएं। इस दिशा में अब तक प्रगति मन्द रही है। सुझाव यह है कि फौरन यह काम तो कर दिया जाए कि जो जमीन खुदकाश्त के लिए वापस न ली जा सकती हो उसके पट्टेदारों का राज्य से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाए। इस प्रसंग में लगान घटाने का बड़ा महत्व होगा। लगान घटाने का काम पहले पूरा कर दिया जाए, उसके बाद हर राज्य में वापस न ली जा सकने वाली जमीन के पट्टेदारों को स्वामित्व का अधिकार दिलाने का, और जमींदार-पट्टेदार सम्बन्ध की आखिरी निशानियां भी मिटा डालने का आयोजन हो। जैसा पहले बताया जा चुका है, उत्तर प्रदेश और दिल्ली में सब पट्टेदार सीधे राज्य के नियन्त्रण में रख दिए गए हैं। अन्य राज्यों में इस मामले में दो भिन्न रास्ते अपनाए गए हैं। मध्य प्रदेश, पंजाब, हैदराबाद, मध्य भारत राजस्थान और जल्द एक अन्य राज्य में पट्टेदारों को यह सुविधा दी गई है कि अगर उनकी मर्जी हो तो स्वामित्व के अधिकार खरीद लें। लेकिन हैदराबाद और हिमाचल प्रदेश, इन दो राज्यों में सरकार ने पट्टेदारों से सीधा सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार भी रखा है। यह देखा गया है कि जहां जमीन का स्वामी बनना पट्टेदारों की मर्जी पर छोड़ दिया गया है, वहां विरले ही पट्टेदार स्वामित्व का अधिकार खरीदते हैं। इसकी एक खास वजह यह है कि उनके पास स्वामित्व का अधिकार खरीदने के लिए फालतू धन नहीं होता।

२८. ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे स्पष्ट हो जाता है कि पट्टेदारों को अपनी मर्जी से स्वामित्व खरीदने का अधिकार दे देना ही काफी नहीं है। जो जमीन खुदकाश्त के लिए

वापिस न ली जा सकती हो, उसके सब पट्टेदारों का सरकार से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर देने की जरूरत है। पहली पंचवर्षीय योजना में यह बात अच्छी तरह समझ ली गई थी और इसलिए सुझाव दिया गया था कि खुदकाश्त के लिए निर्धारित सीमा से ज्यादा जो भी जमीन हो उसके बारे में आम तौर से पट्टेदारों को मालिक-जमीन बना देने की ही नीति अपनाई जाए। यह तीन तरह से किया जा सकता है :—

(१) राज्य लगान वसूल करे, और जमींदारों को मुआवजा देने का प्रबन्ध करे।

(२) राज्य पट्टेदारों से लगान के साथ-साथ किस्तों में मुआवजा भी वसूल कर ले।

(३) राज्य पट्टेदारों से लगान वसूल करे, और पट्टेदार मुआवजे की किस्तें सीधे जमींदार को ही अदा कर दिया करें।

पहले और दूसरे रास्ते पर चलने के माने यह होंगे कि राज्य मुआवजे की रकम ऐसे बौण्डों के रूप में अदा करेगा जो बीस-बाईस वर्ष बाद भुनाए जा सकते हैं। पहला उपाय अपनाने पर मुआवजा उस वृद्धि पर आधारित होगा जो कि राज्य सरकार की आय में होगी, यानी जमींदारों से जो मालगुजारी मिला करती थी उसके और अब जो पट्टेदारों से उचित लगान मिलेगा उसके अन्तर से मुआवजा अदा किया जाएगा। लेकिन इस उपाय को अपनाने से कुछ दिक्कतें सामने आ सकती हैं; कारण, लगान की दरें जगह-जगह अलग-अलग हैं और नीति के अनुसार उनका क्रमशः घटाया जाना निश्चित है। इस प्रकार मुआवजा तय करने का कोई पक्का आधार मिलना मुश्किल हो सकता है। तीसरा जो उपाय बताया गया है उसमें दिक्कत हो सकती है कि पट्टेदार किस्तें समय से अदा न करें।

इसलिए कुल मिलाकर ऊपर के तीन उपायों में से दूसरा उपाय ही सबसे अच्छा जान पड़ता है। लेकिन इसमें यह ध्यान रखने की जरूरत होगी कि पट्टेदार पर बहुत ज्यादा भार न पड़ जाए। भार ज्यादा न होने देने के लिए ऐसा विधान कर दिया जा सकता है कि पट्टेदार को साल में लगान और मुआवजे की किस्तों के रूप में जो रकम देनी पड़े वह योजना में निर्दिष्ट लगान के स्तर से ज्यादा न हो, यानी कुल पैदावार के चौथाई या पांचवें हिस्से से ज्यादा न हो। खयाल है कि मुआवजे की कुल रकम पट्टेदार से मय व्याज के वसूल की जा सकेगी; सरकार पर कोई आर्थिक भार नहीं पड़ेगा।

२९. पहली पंचवर्षीय योजना के दौरान में पट्टेदारों को जमीन का स्वामित्व प्रदान करने के काम की प्रगति आंकना सही-सही और पूरी-पूरी सूचना के अभाव में मुश्किल रहा है। राज्यों को इस सम्बन्ध में साल के साल ब्योरेवार सूचना तैयार करनी चाहिए।

जमीन की बांट और चकों का आकार

३०. पहली पंचवर्षीय योजना में यह सिद्धांत माना गया है कि कोई आदमी ज्यादा से ज्यादा कितनी जमीन का मालिक हो सकता है। इस बारे में एक सुनिश्चित सीमा निर्धारित होनी चाहिए। सुझाव दिया गया था कि यह सीमा हर राज्य अपनी खास समस्याओं और कृषि इतिहास का विचार करके निश्चित करे। चक किस तरह बंटे हुए हैं, और उनका आकार कितना है, इस बारे में प्रामाणिक सूचना के अभाव की ओर ध्यान खींचा गया था और प्रस्ताव किया गया था कि चक और खेती के बारे में परिगणना कराई जाए। इस सुझाव के अनुसार जनवरी १९५४ में राज्य

सरकारों से चक और खेती के विषय में परिगणना कराने को कहा गया। यह तय पाया गया कि जिन इलाकों में जमीन का सालाना हिसाब-किताब रखने का इन्तजाम है, उनमें यह परिगणना आम तौर से राज्य सरकार की मालगुजारी शाखा से कराई जाए। शजरा, खतौनी वगैरह ज़ो भी दस्तावेज उपलब्ध हो सकें उनके आंकड़ों पर अच्छी तरह विचार किया जाए और जरूरत हो तो किन्हीं खास बातों की जानकारी पाने के लिए पड़ताल भी करा ली जाए। परिगणना के काम को जल्दी पूरा करने के खयाल से नवम्बर १९५४ में राज्यों के एक सम्मेलन में यह फैसला हुआ कि कोई राज्य सरकार अगर चाहे तो परिगणना सिर्फ उन चकों के बारे में कर सकती है जो १० एकड़ या उससे ज्यादा के हों। जिन इलाकों में जमीन का साल का हिसाब-किताब न रखा जाता हो, वहां नमूने की पड़ताल से काम चलाने का प्रस्ताव हुआ।

३१. जिन मुख्य-मुख्य धारणाओं को लेकर यह परिगणना की गई, उनका ब्योरा इस प्रकार है :—

(१) परिगणना का सम्बन्ध किसी आदमी की उस जमीन से है जो कृषि योग्य हो; खेती की इस जमीन में चरागाह और बाग-बगीचे भी शामिल किए जाएं। ऐसी जमीन की, जिसमें खेती न हो सकती हो—उदाहरण के लिए जंगल—गणना न की जाए। शहर में जो जमीन हो उसका भी हिसाब न लिया जाए।

(२) "अपनी जमीन" की परिभाषा इस प्रकार की जाए कि उसमें जमींदार की खुद जमीन के साथ-साथ वह जमीन भी शामिल की जा सके जिसे उसने (स्थायी और मौरूसी रूप से) ले रखा हो। अगर "क" की कोई जमीन "ख" ने कब्जे के अधिकार से ले रखी हो तो उसे "ख" ही की जमीन में गिना जाए, "क" की में नहीं। यह भी तय पाया गया था कि जिन लोगों को जमीन पर कानून से स्थायी और मौरूसी अधिकार न मिले हों पर जिन्हें व्यवहार में इन अधिकारों का उपयोग करने का पूरा अवसर प्राप्त हो उन्हें भी मालिक-जमीन समझा जाए—यथा बम्बई राज्य के संरक्षित पट्टेदारों की जमीन उनकी खुद की जमीन मानी गई है।

(३) किसी आदमी के पास सारे राज्य में कुल मिलाकर जितनी कृषि भूमि हो, वह एक ही चक के बराबर मानी जाए। अगर स्वामित्व में साझा हो तो हर साझेदार का अपना हिस्सा अलग चक समझा जाए।

(४) खुदकाश्त का क्षेत्र, खुद की कुल जमीन और पट्टे पर उठाई जमीन के क्षेत्रफलों के अन्तर के बराबर माना जाए। पट्टेदार को मिली उस जमीन को पट्टे पर उठाई जमीन समझा जाए जिस पर उसे स्थायी और मौरूसी अधिकार प्राप्त न हुए हों।

३२. भूमि सुधार की कोई भी व्यापक योजना कार्यान्वित करते समय ऐसा उपाय करना जरूरी हो जाता है कि जमीन के क्षेत्रफल के साथ-साथ उसके उपजाऊपन की भी अभिव्यक्ति हो जाए, या दूसरे शब्दों में यों कहें कि किस्म-किस्म की जमीन के लिए एक ही मापदण्ड निर्धारित हो सके। पंजाब और पेप्सू में पाकिस्तान से बेघर होकर आए ५ लाख से भी ज्यादा लोगों को कोई ५० लाख एकड़ जमीन में इस बात का विचार करते हुए बसाया गया था कि वे पाकिस्तान में जो जमीन छोड़कर आए हैं वह कैसी थी और उस पर उन्हें क्या हक मिले हुए थे। इस तरह जो

अनुभव प्राप्त हुआ उसे देखते हुए सभी राज्य सरकारों से यह अनुरोध किया गया कि वे स्टैण्डर्ड एकड़ के निर्धारण के लिए कोई अच्छा-सा सूत्र निकालें। उससे हर राज्य में विभिन्न प्रकार की जमीन अनुमोदित स्टैण्डर्ड एकड़ के हिसाव में मापी जा सकती है। स्टैण्डर्ड एकड़ किसी खास किस्म की ऐसी एक एकड़ जमीन है जिसे आधार मानकर सभी किस्म की जमीन मूल्यांकित की जा सके। कुछ राज्यों में स्टैंण्डर्ड एकड़ वन्दोवस्त में दर्ज पैदावार का और दूसरे उपलब्ध आंकड़ों का विचार करते हुए जमीन के उपजाऊपन के संदर्भ में तय किया गया है। अन्य राज्यों में सिंचाई साधनों, या मालगुजारी के किन्हीं दिए हुए आंकड़ों, या लगान दरों की दृष्टि से, कहीं-कहीं स्टैंण्डर्ड एकड़ निश्चित करते समय एक से ज्यादा वातों को ध्यान में रखा गया है। इस प्रकार हर राज्य या प्रदेश की जमीन के किसी विषय में तुलना करने के लिए स्टैंण्डर्ड एकड़ों का उपयोग अभी सम्भव नहीं। इसके लिए और अध्ययन करने की जरूरत है। हां, किसी एक राज्य या प्रदेश-विशेष में सभी तरह की जमीन की माप करने के लिए स्टैंण्डर्ड एकड़ तय हो जाने से पुनर्वास और पुनर्वितरण के कार्यक्रम में वहुत सुविधा हो जाती है। हो सकता है कि आगे कभी जांच-पड़ताल करके सारे देश के लिए ऐसा स्टैंण्डर्ड एकड़ निश्चित कर दिया जाए जिसके आधार पर विभिन्न राज्यों के स्टैण्डर्ड एकड़ों की तुलना संभव हो।

३३. चक और खेती सम्बन्धी परिगणना २२ राज्यों में हो चुकी है। आंध्र, वम्बई, मध्य प्रदेश, मद्रास, हैदरावाद, मध्य भारत, सौराष्ट्र, अजमेर, भोपाल और कच्छ—इन दस राज्यों में सभी चकों की पूरी तरहग णना की गई। पंजाव, पेप्सू, मैसूर, कुर्ग, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश और विन्ध्य प्रदेश—इन सात राज्यों में गणना पूरी तरह तो की गई मगर सिर्फ १० एकड़ या उससे ज्यादा चकों की ही की गई। उत्तर प्रदेश में जहां गांवों में जमीन का वाकायदा सालाना हिसाव-किताव रखने की प्रथा है, राज्य सरकार ने सिर्फ नमूने की एक पड़ताल कर लेने का फैसला किया क्योंकि माल विभाग के कर्मचारी चकवन्दी के काम में व्यस्त थे। विहार, उड़ीसा, राजस्थान और तिरुवांकुर-कोचीन में, जहां जमीन के पूरे सालाना लेखे उपलब्ध नहीं हैं, नमूने की पड़ताल कराई गई। असम और पश्चिम वंगाल में राज्य सरकारें चकों के वारे में पहले ही कुछ सूचना प्राप्त कर चुकी थीं। जमीन की अधिकतम सीमा निश्चित कर देने के विषय में पश्चिम वंगाल में आवश्यक कानून वन चुका है और असम में एक विधेयक पास किया जा चुका है। जम्मू-कश्मीर में भी अधिकतम सीमा का निर्धारण हो चुका था, इसलिए वहां कोई विशेष परिगणना करने की जरूरत नहीं समझी गई। मणिपुर और त्रिपुरा में कर्मचारियों की कमी थी और सभी स्थान खासे दुर्गम थे, इसलिए वहां परिगणना करने का इरादा छोड़ दिया गया। वीस राज्यों से परिगणना की रिपोर्ट आ चुकी है। वाकी से भी जल्दी ही आती होगी।

३४. चक वितरण और आकार के वारे में जो आंकड़े जमा किए गए हैं वे जमींदार की कुल जमीन और खुदकाश्त जमीन दोनों के ही हिसाव से जमा किए गए हैं। ये आंकड़े अन्तिम या अपरिवर्तनीय नहीं। अधिकतर राज्यों से यह सूचना साधारण एकड़ों और स्टैण्डर्ड एकड़ों दोनों में ही प्राप्त हुई है। स्टैंण्डर्ड एकड़ की माप हर राज्य ने अपनी सुविधा के लिए अलग निर्धारित की है और उसे अभी राज्य-राज्य की तुलना करने का आधार नहीं माना गया है। इसलिए इस अध्याय के दूसरे परिशिष्ट में उपलब्ध आंकड़े सिर्फ साधारण एकड़ों में दिए गए हैं। आगे चलकर चक और खेती सम्वन्धी इस परिगणना के वारे में अलग से एक विशेष रिपोर्ट प्रकाशित करने का प्रस्ताव है।

कृषि भूमि की अधिकतम सीमा का निर्धारण

३५. पहली पंचवर्षीय योजना में यह सिद्धांत अपनाने की सिफारिश की गई थी कि कोई आदमी ज्यादा से ज्यादा कितनी जमीन का मालिक हो सकता है—इस विषय में एक सीमा निश्चित होनी चाहिए। चक और खेती के बारे में जो परिगणना हुई है उससे राज्यों की अधिकतम सीमा निर्धारित करने के प्रस्ताव पर चलने के वास्ते काफी सूचना प्राप्त हो गई है। परिगणना से जो आंकड़े सामने आए हैं, कोई भी ब्योरेवार आयोजन करने से पहले उनका ध्यान से विचार करने की जरूरत है। अधिकतम सीमा के निर्धारण की समस्या के प्रति क्या रवैया अपनाया जाए, इस बारे में यहां सिर्फ मोटी-मोटी बातें दी जा रही हैं। जाहिर है, हर राज्य को इनके आधार पर ब्योरेवार योजना खुद ही ध्यानपूर्वक तैयार करनी होगी। मुख्य विचारणीय प्रश्न ये हैं :—

(क) अधिकतम सीमा किस-किस जमीन पर लागू हो ?

(ख) यह अधिकतम सीमा मोटे तौर पर कितनी हो ?

(ग) इससे छूट दी जाए तो किस आधार पर ?

(घ) क्या कदम उठाए जाएं कि लोग अधिकतम सीमा की व्यवस्था से बचने के लिए जमीन को बेइमानी की नीयत से किसी और के नाम न कर पाएं ?

(ङ) जो अतिरिक्त जमीन सरकार अपने हाथ में ले उसके लिए मुआवजा किस हिसाब से दिया जाए ?

(च) उस अतिरिक्त भूमि को फिर से किस तरह बांटा जाए ?

३६. सीमा-निर्धारण के दो पहलू हैं : (१) आगे जो जमीन ली जाए उसकी सीमा का निर्धारण; और (२) अब जो जमीन है उसकी सीमा का निर्धारण। उत्तर प्रदेश में ऐसा विधान है कि कोई भी व्यक्ति आगे से ३० एकड़ से ज्यादा जमीन नहीं ले सकता। इस विषय में दिल्ली में ३० स्टैण्डर्ड एकड़ की, बम्बई में जमीन की किस्म के अनुसार १२ से लेकर ४८ एकड़ तक की, पश्चिम बंगाल में २५ एकड़ की, हैदराबाद में तीन पारिवारिक चकों की, सौराष्ट्र में तीन लाभकारी चकों की, और मध्य भारत में ५० एकड़ की सीमा निर्धारित है। अन्य राज्यों में यह सीमा अभी तक निर्धारित नहीं हुई है। इन राज्यों में इस काम में अब ज्यादा विलम्ब नहीं करना चाहिए।

३७ दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में हर राज्य में विद्यमान कृषि भूमि की भी अधिकतम सीमा तय कर देने का विचार है। यह सीमा हर जमींदार की अपनी जमीन के विषय में हो। अपनी जमीन में उस जमीन की भी गिनती की जाए जिस पर उसे पट्टे द्वारा स्थायी और मौरूसी हक प्राप्त हों। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, इस तरह की पट्टेदारी की जमीन का स्वामित्व पट्टेदार को ही दे देने की व्यवस्था की जा सकती है।

३८. एक विचारणीय प्रश्न यह है कि अधिकतम भूमि की सीमा एक व्यक्ति के बारे में हो या एक परिवार के बारे में। दूसरे सुझाव के पक्ष में यह तर्क किया जा सकता है कि खेती के मामले में परिवार को ही बुनियादी इकाई माना जाता रहा है, व्यक्ति को नहीं। इस बात का विचार करते हुए योजना आयोग द्वारा नियुक्त भूमि सुधार मण्डल ने यह सिफारिश की है कि अधिकतम भूमि की सीमा सारे परिवार की कुल जमीन के बारे में होनी चाहिए। इस प्रसंग में परिवार में पत्नी और पति के अतिरिक्त बेटे-बेटियों और नाती-पोतों की गिनती की जाए।

लेकिन ऊपर चक और खेती की परिगणना में यह मानकर चला गया है। किसी व्यक्ति विशेष के पास सारे राज्य में कुल मिलाकर जितनी जमीन हो वह एक ही चक के बराबर है और अगर स्वामित्व में साझा है तो हर साझेदार का अपना हिस्सा एक अलग चक के बराबर है। इसलिए प्रशासन की सुविधा की दृष्टि से व्यक्ति विशेष की जमीन की अधिकतम सीमा निर्धारित करने का सुझाव ज्यादा उपयुक्त जान पड़ता है, क्योंकि सीमा-निर्धारण की योजना लागू करते समय हलफनामों और नियतकालिक विवरणों के साथ-साथ चक और खेती की परिगणना के दस्तावेजों का भी बहुत उपयोग होगा। परिवार की जगह व्यक्ति को इकाई मानने के विरोध में यह अवश्य कहा जा सकता है कि उससे सरकार को पुनर्वितरण के लिए अपेक्षाकृत कम जमीन प्राप्त होगी।

३९. रास्ता चाहे जो अपनाया जाए, साथ-साथ इस बात की पक्की व्यवस्था जरूर कर दी जाए कि कोई भी जमींदार बेईमानी की नीयत से अपनी जमीन दूसरे के नाम न कर पाए। अधिकतम भूमि की सीमा लागू करते समय अगर एक व्यक्ति की जमीन का विचार किया गया, एक परिवार का नहीं तो शायद इस तरह की धोखेबाजी की ज्यादा आशंका रहेगी, क्योंकि उस दशा में जमींदार अपनी जमीन को परिवार वालों में इस तरह बांट सकेगा कि अधिकतम सीमा के नियम से उसे कम से कम नुकसान हो। स्पष्ट है कि इस तरह के हस्तान्तरण रोकने का खास इन्तजाम करना होगा। हर राज्य को चाहिए कि उसके यहां पिछले दो-तीन वर्षों में बेईमानी की नीयत से जमीन के जो हस्तान्तरण हुए हों उनके प्रभाव की जांच कराए और इस तरह के हस्तान्तरण के तात्कालिक निषेध का कोई उपाय करें। जो हस्तान्तरण हो चुके हों, उनकी जांच कराई जाए। यदि कोई व्यक्ति अपनी जमीन का हस्तान्तरण कर दे और उसके बाद भी उसके पास जमीन बच रहे, तो उस हालत में इस सवाल पर गौर किया जाना चाहिए कि क्या भूमि की सीमा लागू करते समय यह मानकर चला जाए कि हस्तान्तरण मानो हुआ ही नहीं। राज्यों को यह भी प्रबन्ध कर देना चाहिए कि आगे बेईमानी की नीयत से जमीन का हस्तान्तरण न हो पाए।

अधिकतम सीमा कितनी हो

४०. अधिकतम सीमा किस स्तर पर लागू हो, इसका विचार करते समय कोई ऐसी सुविधाजनक इकाई ढूंढ निकाली जाए जो मोटे तौर पर देश के सभी भागों के लिए समुचित ठहरती हो। और बाद में हर राज्य अपनी विशिष्ट परिस्थिति को ध्यान में रखकर उसमें आवश्यक संशोधन-परिवर्द्धन कर सकता है और उसका ब्योरा तय कर सकता है। पहली पंचवर्षीय योजना में सुझाव दिया गया था कि इस और ऐसे ही अन्य प्रसंगों में क्षेत्र विशेष की परिवार-पर्याप्त भूमि की कुछ गुने भूमि अधिकतम निश्चित कर दी जाए। 'परिवार-पर्याप्त भूमि' या 'पारिवारिक चक' के दो पहलू हैं: (१) वह कृषि की एक इकाई हो; और (२) वह इतनी जमीन हो जिसमें खेती करने से एक निर्दिष्ट औसत आय हो सकती हो। पहली पंचवर्षीय योजना में 'पारिवारिक चक' की व्याख्या यों हुई थी: स्थानिक परिस्थिति और कृषि प्रणाली के अनुसार एक औसत परिवार सिर्फ इतनी ही सहायता लेकर जितनी कि खेती में आम तौर से ली जाती रही हो, जितनी जमीन को जोत या बो सकता हो, उसे ही एक पारिवारिक चक समझा गया है। किसी जमीन से कितनी आय होगी, यह इस पर निर्भर है कि उसमें क्या कुछ बोया जाता है, खेती कितनी कुशलता से की जाती है। एक ही जमीन से विभिन्न लोगों को उनकी कुशलता, क्षमता

और साधन के अनुसार विभिन्न आय हो सकती है। ज्यों-ज्यों कृषि के नए तरीकों का प्रचलन होता जाएगा, और कृषि प्रणाली अधिक कुशल और नानाविध होती जाएगी, भूमि से प्रति इकाई आय भी बढ़ती ही जाएगी। इसलिए 'पारिवारिक चक' की आय के हिसाब से निर्धारण करना, और वह भी तब जब स्वयं निर्दिष्ट आय कृषि-जन्य पदार्थों के एक कल्पित भाव के आधार पर तय की गई हो, मुश्किल ही है। इसलिए सुविधा इसी में है कि हर राज्य विभिन्न इलाकों की परिस्थिति, जमीन की किस्म, सिंचाई के साधन आदि को ध्यान में रखकर आय की नहीं क्षेत्रफल की दृष्टि से यह तय कर दे कि एक परिवार के लिए कितनी जमीन पर्याप्त होती है। 'पारिवारिक चक' के सिद्धांत पर व्यवहार करते समय भी काफी कठिनाइयां उठ सकती हैं। इस प्रश्न का आगे विचार करने के लिए बन्दोबस्त और माल विभाग के अनुभवी लोगों की एक छोटी-सी समिति बैठा देना अच्छा रहेगा।

यह देखते हुए कि देश में लोगों के पास जो कृषि भूमि हैं उसमें से कुछ ही को 'बड़े चक' की संज्ञा दी जा सकती है। भूमि की अधिकतम सीमा तीन 'पारिवारिक चक' निश्चित कर देने में सुविधा होगी। अगर अधिकतम सीमा एक सम्पूर्ण परिवार की जमीन क संदर्भ में निश्चित हो तो इस बारे में कोई न कोई विधान करना आवश्यक हो जाएगा कि परिवार की इकाई में किन-किन लोगों की गिनती करनी होगी। अगर अधिकतम सीमा व्यक्तिगत चक के संदर्भ में निश्चित हुई तो ऐसा विधान करने की आवश्यकता शायद न पड़े। सामाजिक परिस्थिति और अन्य प्रासंगिक तथ्यों का विचार करके हर राज्य यह तय कर सकता है कि भूमि की अधिकतम सीमा व्यक्तिगत चक के सन्दर्भ में लागू की जाए कि पारिवारिक चक के। दूसरा रास्ता अपनाए जाने पर यह खास तौर से जरूरी हो जाएगा कि परिवार के आकार-प्रकार के बारे में कोई स्पष्ट निर्धारण हो। इस प्रसंग में यह भी तय करना होगा कि अगर परिवार बड़ा हो तो उसके लिए अधिकतम सीमा बढ़ानी होगी कि नहीं। भूमि सुधार मण्डल ने, जिसका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, यह विचार प्रकट किया है कि जिस परिवार में पांच से ज्यादा सदस्य हों, उसके लिए अधिकतम भूमि की सीमा बढ़ाकर अधिक से अधिक छः पारिवारिक चकों तक नियत की जाए।

अधिकतम सीमा से छूट

४१. किसी राज्य में भमि की सामान्य अधिकतम सीमा निश्चित करते समय इस बात का भी विचार करना होगा कि किस-किस तरह की कृषि भूमि को अधिकतम सीमा के विधान से मुक्त रखा जाए। इस विषय में कोई फैसला करते समय इन तीन मुख्य बातों को ध्यान में रखा जा सकता है :

(१) जहां संयुक्त कार्य होते हों, खासकर जहां औद्योगिक और कृषि कार्य साथ-साथ किए जाते हों;

(२) विशिष्ट कृषि; और

(३) पैदावार की दृष्टि से बड़े-बड़े खास ढंग के सुसंचालित फार्म तोड़े न जाएं।

इन मान्यताओं का विचार करते हुए निम्नलिखित वर्ग के फार्मों को अधिकतम सीमा से मुक्त रखना लाभदायी जान पड़ता है :—

(१) चाय, कहवा, और रबड़ के बागान;

(२) फलों के ऐसे बगीचे जिनका इलाका खासा गठा हुआ हो;

(३) ऐसे फार्म जो गोसंवर्द्धन, डेरी, भेड़ पालन आदि किन्हीं खास कार्यों के लिए खोले गए हों;

(४) चीनी के कारखानों के गन्ना फार्म; और

(५) ऐसे सुसंचालित फार्म जिनका इलाका बिखरा हुआ न हो, जिनमें बहुत धन लगाया जा चुका हो और स्थायी सुधार किए जा चुके हों और जिनके भंग किए जाने से पैदावार घट सकती हो।

ये सुझाव मोटे तौर पर दिए गए हैं; इनके ब्योरे का तो हर राज्य को अपनी विशेष परिस्थिति और आवश्यकता के सन्दर्भ में विचार करना होगा। उदाहरण के लिए, देश के उन भागों में जहां कृषियोग्य भूमि बंजर पड़ी है और काश्तकारों का अभाव है, वहां भूमि की अधिकतम सीमा निश्चित करने की फिलहाल शायद कोई जरूरत न हो। और हो भी तो वहां सीमा अन्य प्रदेशों की अपेक्षा ज्यादा ऊंची रखना उचित ठहरे। इसके विपरीत जिन इलाकों में आबादी घनी है वहां सीमा कम ऊंची रखना अपेक्षित हो सकता है।

मुआवजा

४२. मालिक-जमीन को मुआवजा किस आधार पर दिया जाए, और जिन लोगों को उनकी जमीन दिलाई गई है उनसे जमीन की कीमत किस आधार पर वसूल की जाए—ये नीति विषयक ऐसे सवाल हैं जिनका हर राज्य को अपनी परिस्थिति के अनुसार सोच-समझकर हल निकालना होगा। जहां तक मुआवजे का सम्बन्ध है, मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि किसी निश्चित अवधि, उदाहरण के लिए २० वर्ष के बौण्ड जारी करना सुविधाजनक रहेगा। मुआवजे की रकम तय करने के तीन तरीके हो सकते हैं : (१) विभिन्न किस्म की जमीन के भाव निश्चित करके उनके हिसाब से मुआवजा आंक लिया जाए; (२) जमीन से जो लगान मिलता हो उसका कुछ गुना मुआवजे के रूप में दे दिया जाए; और (३) कोई और उपाय सम्भव हो तो उसे अपना लिया जाए। रहा उन पट्टेदारों से कीमत वसूल करने का सवाल जिन्हें जमीन दिलाई गई हो। इस सिलसिले में यह तय करना होगा कि कीमत क्या हो और उसे कितनी किस्तों में और कितने समय में वसूल किया जाए। जैसा पहले सुझाव दिया जा चुका है, ऐसी व्यवस्था करनी होगी कि जिन पट्टेदारों के नाम जमीन की जाए उन पर कर, मालगुजारी और जमीन की कीमत की किस्त वगैरह का कुल मिलाकर ज्यादा से ज्यादा इतना ही भार पड़े जितना उचित दर पर सालाना लगान का पड़ता है, यानी उनसे कर आदि के रूप में साल में कुल मिलाकर सम्पूर्ण फसल का चौथाई या पांचवें भाग के मूल्य की ही रकम वसूल की जाए। अगर भूमि सुधार कार्य उपरोक्त सुझावों के अनुसार किया जाए तो मुआवजे की रकम और ब्याज से राज्य सरकारों पर अतिरिक्त देनदारी नहीं आ पड़ेगी।

पुनःस्थापन की योजनाएं

४३. अधिकतम सीमा के निर्धारण से सरकार को जो जमीन मिले, उसका बन्दोबस्त करते समय खुदकाश्त के लिए जमीन वापस लिये जाने से विस्थापित पट्टेदारों का तथा उन किसानों का जिनकी जमीन आर्थिक दृष्टि से अपर्याप्त हो, और भूमिहीन खेतिहरों का खास खयाल रखा जाए।

जहां तक सम्भव हो; जमीन सहकारी खेती के लिए ही दी जाए। जिन किसानों के पास इतनी कम जमीन हो कि उसमें खेती करने में कोई फायदा न हो, उन्हें इस तरह के सहकारी कृषि फार्मों में ले लिया जाए। हां, शर्त यह हो कि वे अपनी भूमि फार्म के लिए दे दें। इस तरह किसानों की अपनी जमीन और जमींदारों की अतिरिक्त जमीन में से सरकार द्वारा दी गई जमीन से जो सहकारी फार्म बनाए जाएं उनके सदस्यों को सरकार द्वारा प्रदत्त जमीन का हिस्सा कराने का अधिकार न हो।

४४. भूमि सुधार के प्रसंग में भूमिहीन खेतिहरों की जिन समस्याओं की ओर ध्यान देना जरूरी है उन पर सोलहवें अध्याय में विचार किया गया है। लोग इस बात को मानते हैं कि खेतिहरों की संख्या को देखते हुए कृषि योग्य भूमि इतनी कम है कि थोड़े-से ही भूमिहीन खेतिहरों को जमीन दिलाई जा सकती है। यह जरूरी होगा कि राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का ज्यों ज्यों विकास होता जाएगा, त्यों-त्यों अन्य साधनहीनों की भांति भूमिहीन खेतिहर भी उद्योग आदि क्षेत्रों में रोजगार पाते जाएंगे। तो भी सामाजिक नीति और आर्थिक विकास दोनों की दृष्टि से यह अपेक्षित है कि भूमिहीन खेतिहरों के वर्ग को जो अर्से से साधनों और सुविधाओं से वंचित रहा है, और जिसे सामाजिक और आर्थिक उन्नति के न्यूनतम अवसर भी प्राप्त नहीं हुए, अब ग्राम अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत थोड़ी-बहुत सुख-सुविधा प्रदान की जाए। इसलिए यह सिफारिश की जाती है कि हर राज्य चक और खेती परिगणना से प्राप्त आंकड़ों से यह पता लगाए कि अधिकतम सीमा के निर्धारण से उसे कितनी जमीन मिलेगी, और फिर खेतिहर मजदूरों को उस जमीन पर बसाने की ब्योरेवार योजना तैयार करे। भूदान यज्ञ के द्वारा जो जमीन उपलब्ध हो, उसे भी अतिरिक्त भूमि के बन्दोबस्त सम्बन्धी योजना के लिए ले लिया जाए।

४५. यह ठीक है कि भूमिहीन खेतिहरों को फिर से बसाने के लिए अलग से खास कर्मचारी नियुक्त करने होंगे, लेकिन जहां तक जमीन के विकास के लिए आवश्यक साधनों का सवाल है, वे कृषि, राष्ट्रीय विस्तार, सामुदायिक विकास, ग्रामोद्योग और योजना में निर्दिष्ट अन्य कार्यक्रमों से भी प्राप्त किए जा सकते हैं। लेकिन पहले यह विचार कर लेना होगा कि इन कार्यक्रमों से विकास के साधन किस हद तक मिल पाएंगे। अगर हर राज्य अपने यहां खेतिहर मजदूरों के पुनःस्थापन के बारे में परामर्श करने, और पुनःस्थापन की प्रगति का समय-समय पर लेखा-जोखा कर लेने के लिए सरकारी और गैर-सरकारी प्रतिनिधियों का एक मण्डल नियुक्त करे तो बहुत अच्छा रहे। इस तरह का एक सार्वदेशिक मण्डल स्थापित करना भी बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। उनमें पुनः-स्थापन योजनाओं की नीति, संचालन और प्रगति का सारे देश के संदर्भ में विचार हो सकेगा।

४६. इस प्रसंग में भूदान यज्ञ का भी उल्लेख किया जा सकता है। उससे भूमिहीन खेतिहरों के वास्ते अब तक ४० लाख एकड़ से भी ज्यादा जमीन दान में मिल चुकी है और कोई ३ लाख एकड़ जमीन वितरित की जा चुकी है।

कृषि पुनर्गठन

४७. पट्टेदारी सुधार की प्रगति और कृषि भूमि की अधिकतम सीमा के निर्धारण से छोटे-छोटे जमींदारों की संख्या में खासी वृद्धि हो जाएगी। लगान वसूल करने वाले बिचौलियों की समाप्ति करके, और जमीन जोतने वाले पर कर वगैरह का भार कम करके भूमि सुधार, कृषि पुनर्गठन का रास्ता तैयार कर देता है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, भूमि सुधार और कृषि पुनर्गठन दरअसल एक ही आयोजन के दो पहलू हैं। भूमि सुधार तब तक सफल नहीं हो सकता

जब तक कर्ज पाने की सुविधा काफी बढ़ा नहीं दी जाती, भूमि के छोटे-छोटे और आर्थिक दृष्टि से अनुपयुक्त चक समाप्त नहीं कर दिए जाते, और कृषि भूमि के इस्तेमाल और प्रबन्ध की कमियों को दूर नहीं कर दिया जाता। खेती के लिए कर्ज पाने की सुविधा के प्रश्न का भूमि सुधार के संदर्भ में अगले अध्याय में विचार किया जाएगा। यहां हम कृषि पुनर्गठन की इन चार खास बातों पर संक्षेप में विचार करेंगे : (१) चकबन्दी; (२) भूमि की देखरेख के तरीके; (३) कृषि की सहकारी व्यवस्था का विकास; और (४) ग्राम संचालन की सहकारी प्रणाली जिसकी स्थापना ग्राम अर्थ-व्यवस्था के पुनर्गठन का लक्ष्य है।

चकबन्दी

४८. पहली पंचवर्षीय योजना में सभी राज्यों से यह आग्रह किया गया था कि वे चकबन्दी की ओर भी बड़ी योजनाएं बनाएं और उनका उत्साह से पालन करें। चकबन्दी कितनी लाभप्रद होती है, यह बताने की जरूरत नहीं। यह सर्वविदित है कि उससे समय और मेहनत की बचत होती है। सिंचाई की व्यवस्था द्वारा जमीन अच्छी बन पाती है. अलग-अलग चकों और आबादी के इलाके को नया स्वरूप देने का अवसर प्राप्त होता है, और पक्की सड़कें और ऐसी ही अन्य सुविधाएं उपलब्ध हो पाती हैं। फिर भी कुछेक को छोड़ बाकी सब राज्यों में चकबन्दी की दिशा में पर्याप्त यत्न नहीं हुआ है। मार्च १९५५ की समाप्ति तक पंजाब में ४० लाख एकड़, मध्य प्रदेश में २५ लाख एकड़, और पेप्सू में १० लाख एकड़ से कुछ ज्यादा जमीन की चकबन्दी हो चुकी थी। बम्बई और दिल्ली में क्रमश: १,०६० और २१० गांवों में चकबन्दी की जा चुकी थी। उत्तर प्रदेश में २१ जिलों में चकबन्दी का काम चल रहा है। इस प्रकार कुछ राज्यों में चकबन्दी में उल्लेखनीय प्रगति हो चुकी है। अन्य राज्यों में भी यह काम खासा चल निकला है। मगर कुल मिलाकर अभी चकबन्दी के क्षेत्र में बहुत कुछ करने को पड़ा है। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास खण्डों में चकबन्दी का काम, कृषि कार्यक्रम के परम महत्व का काम समझकर उठाया जाए। अनेक राज्यों ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए अपने कार्यक्रमों में चकबन्दी की व्यवस्था कर रखी है।

४९. देश के विभिन्न भागों में चकबन्दी का काम शुरू हुए अब एक पीढ़ी गुजर गई। जिन राज्यों में चकबन्दी पहले शुरू हुई थी, अन्य राज्य उनके अनुभव से फायदा उठा रहे हैं। इस अनुभव के आधार पर वे अपनी विशिष्ट परिस्थिति का विचार करते हुए अपने यहां चकबन्दी का काम कर सकते हैं। चकबन्दी सम्बन्धी प्रश्नों को हल करने के लिए देश के विभिन्न भागों में जो तरीके अपनाए गए हैं, योजना आयोग उनका तुलनात्मक अध्ययन कर रहा है। योजना आयोग चाहता है कि अब तक के अनुभव के आधार पर जो तरीके सर्वोत्तम ठहरते हों, उन्हें सबके उपयोग के लिए उपलब्ध कर दिया जाए।

भूमि की देख-रेख के तरीके

५०. पहली पंचवर्षीय योजना में यह सिद्धांत अपनाने की सिफारिश की गई थी कि जमीन की जुताई-बुवाई और रख-रखाव के विषय में एक निश्चित स्तर बनाए रखने के लिए कानूनी व्यवस्था की जाए। शुरू-शुरू में केवल बड़ी जमींदारियों के ही संदर्भ में ऐसी व्यवस्था करने का विचार था। दूसरी योजना के सिलसिले में कृषि और रख-रखाव की कुशलता के प्रश्न का व्यापकतर दृष्टि से विचार किया जाना होगा। खेती की छोटी-बड़ी सभी तरह की जमीन में

कुशलता से काम हो, ऐसा प्रबन्ध कर देना होगा। भूमि सुधार मण्डल की एक समिति ने इस विषय का इसी पहलू से ब्योरेवार अध्ययन किया है। उसने अनुसन्धान करके अनेक सुझाव, जिनकी हम सिफारिश करते हैं, प्रस्तुत किए जिनमें से खास-खास ये हैं :—

(१) सभी काश्तकारों का कर्तव्य है कि वे उत्पादन के उचित स्तर को बनाए रखें और जमीन की उपजाऊ शक्ति को न केवल बनाए रखें बल्कि बढ़ाएं भी। जमीन के प्रबन्ध के विषय में जो कानून बनाए जाएं उनमें इस कर्तव्य का पालन कराने के लिए समुचित प्रेरणा और दण्ड का विधान किया जाए। लेकिन इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि अच्छी खेती के लिए काश्तकार की लगन और मेहनत के अलावा और भी कई चीजें जरूरी होती हैं। कहीं ऐसा न हो कि जमीन के रख-रखाव का कानून एकांगी होकर काश्तकार को बाध्य करने का साधन मात्र रह जाए। स्तरों के निर्धारण के साथ-साथ पट्टेदारी संरक्षण, चकबन्दी, सहकारिता विकास, आर्थिक और टेकनीकल सहायता आदि की भी व्यवस्था की जाए।

(२) रख-रखाव सम्बन्धी कानून में ऐसे स्तर निश्चित किए जाएं जिनके आधार पर निरपेक्ष और गुणात्मक निर्णय संभव हो। किसी फाम या चक के रख-रखाव की अच्छाई-बुराई का विचार करते समय जिन बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए वे परिशिष्ट संख्या एक में सूचीबद्ध हैं। इन बातों को ध्यान में रखते हुए प्रबन्ध-कुशलता की दृष्टि से फार्मों को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: उदाहरणार्थ, दो सामान्य से बढ़िया फार्मों के और दो सामान्य से घटिया फार्मों के। पहले दो वर्गों के फार्मों को समुचित प्रोत्साहन और मान्यता दी जाए और अन्तिम दो वर्गों के फार्मों को निश्चित स्तर प्राप्त करने में सहायता देने के लिए जरूरी कदम उठाए जाएं।

(३) रख-रखाव कानून में कुछ कर्तव्यों के विषय में ऐसी व्यवस्था रखी जानी चाहिए कि उनका पालन न करने वाले को दण्ड भोगना होगा। उदाहरण के लिए, कुछ कर्तव्य ये हैं: (क) बड़ी और मझोली जमींदारियों में कृषि योग्य बंजर भूमि में एक निश्चित अवधि में खेती शुरू कर देना; (ख) जमीन को चौरस बनाना, बाड़ वगैरह लगाना, सिंचाई की नालियों की देख-रेख करना, फसल के कीड़ों और बीमारियों की रोकथाम, नराई, और खेत की जमीन ऊंची उठाना और मेड़ बांधना; और (ग) अच्छे बीज का उपयोग, मैले से खाद बनाना आदि।

(४) जमीन के रख-रखाव का कानून तो सभी तरह के फार्मों पर लागू होना चाहिए। लेकिन अनुभव प्राप्त करने और उपयुक्त तरीके खोजने के लिए हर राज्य शुरू-शुरू में इसे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के कुछ चुने हुए क्षेत्रों में ही लागू करे।

(५) गांव में इस कानून का परिपालन कराने की जिम्मेदारी आम तौर पर ग्राम पंचायत को सौंपी जाए; हां, साथ ही उसके काम की देख-रेख का प्रबन्ध जरूर कर दिया जाए।

५१. ये कुछ मोटे-मोटे सिद्धांत हैं जिनका रख-रखाव सम्बन्धी कानून बनाते समय विचार किया जा सकता है। कानून के ब्योरे की बातें तो हर राज्य को अपनी आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार तय करनी होंगी। कृषि पैदावार बढ़ाने और प्राकृतिक साधनों को बनाए रखने में जमीन के कुशल रख-रखाव का महत्वपूर्ण योग होगा, इसलिए राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास खण्डों में इस ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

सहकारी कृषि

५२. इस बारे में सभी सहमत हैं कि देश में सहकारी कृषि का जल्दी से जल्दी विकास होना चाहिए। लेकिन इस दिशा में अब तक जो कुछ करके दिखाया गया है, वह अपर्याप्त और असंतोषप्रद है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में खास काम यह करना होगा कि सहकारी कृषि की पक्की नींव डाल देनी होगी, जिससे कि दस वर्ष या लगभग इतने ही समय में काफी जमीन में सहकारी प्रणाली से कृषि होने लगे। दूसरी योजना में सहकारी कृषि के विषय में लक्ष्य क्या हो—यह योजना के पहले वर्ष में हर राज्य से परामर्श करके और अब तक की प्रगति और अनुभव पर विचार-विमर्श करके तय किया जाने वाला है। ये लक्ष्य कृषि पैदावार के लक्ष्य और राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के कार्यक्रम से जुड़े हुए होंगे और उनके साथ ही सिद्ध किए जाएंगे।

५३. कभी-कभी यह सवाल किया जाता है कि आखिर सहकारी कृषि है क्या चीज ? सहकारी कृषि के लिए यह तो अनिवार्य है कि सहयोगी अपनी-अपनी जमीन दें, और इस तरह जो जमीन इकट्ठी हो उसकी देख-रेख और जुताई-बुवाई वगैरह मिल-जुलकर करें। लेकिन विकास की वर्तमान स्थिति में जमीन मिलाने और फिर सहकारिता के आधार पर उसमें खेती करने के सम्बन्ध में काफी नरमी बरती जाए। संगठन कई तरह के संभव हैं। विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न प्रकार की व्यवस्था की जा सकती है; यथा जमीन इकट्ठा करने के बारे में निम्नलिखित तरीकों में से खाली कोई एक या किन्हीं दो का मिश्रण अपनाया जा सकता है :

(१) हर सहयोगी अपनी-अपनी जमीन का मालिक बना रहे, लेकिन संगठन की सारी जमीन का प्रबन्ध एक इकाई के रूप में चलाया जाए, और इसके लिए सहयोगियों को किसी तरह का स्वामित्व लाभांश दिया जाता रहे।

(२) सहयोगी अपनी जमीन सहकारी संगठन को पट्टे पर उठा दें और बदले में कानून में निर्दिष्ट दर से या आपस में तय की हुई किसी अन्य दर से रकम पाते रहें।

(३) सहयोगी अपनी जमीन का स्वामित्व सहकारी संगठन के नाम कर दें और बदले में उन्हें उनकी जमीन के मूल्य के हिस्से दे दिए जाएं।

सहकारी कृषि संगठनों के कार्य-संचालन के कई तरीके अपनाये जा सकते हैं। संगठन के या तो सभी काम मिल-जुलकर किए जा सकते हैं या कुछ मिल-जुलकर और बाकी अलग-अलग अपने आप परिवारों के समूह संगठन के अन्तर्गत अलग-अलग छोटी इकाइयों के रूप में काम कर सकते हैं। या, जैसा सहकारिता विकास के पहले-पहले दौर में ज्यादा संभव है, हर परिवार अपनी जमीन पर काम करे और कुछ निश्चित कार्यों में दूसरे परिवारों का हाथ बंटाए। सहकारी प्रणाली तो ऐसी चीज है कि कृषि या अन्य किसी क्षेत्र में किसी परिस्थिति विशेष में उसका कौन-सा रूप उपयुक्त होगा, इस बारे में बिना आजमाइश किए कुछ नहीं कहा जा

सकता । व्यावहारिक अनुभव नितांत आवश्यक हो जाता है। इसलिए सहकारिता के विषय में पग-पग पर अनुसन्धान और प्रयोग की दृष्टि अपनाई जाए। कोशिश यही रहे कि बाकायदा अध्ययन और समीक्षा करके विभिन्न समस्याओं में सबसे उपयुक्त समाधान निश्चित किए जाएं और उन्हें ज्यादा से ज्यादा किसानों को बता दिया जाए ताकि वे उनके आधार पर अपनी परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए अपनी विशेष पद्धति तय कर सकें।

५४. पहली पंचवर्षीय योजना में छोटे-मोटे काश्तकारों को मिलकर स्वेच्छा से सहकारी कृषि संगठन बनाने में बढ़ावा और सहायता देने के बारे में कई सुझाव रखे गए थे। सिफारिश की गई थी कि भारत की विशेष परिस्थिति में सहकारी कृषि के कौन-कौन-से तरीके उपयुक्त रहेंगे, यह पता चलाने के लिए सुनियोजित प्रयोग किए जाएं। आगे चलकर राज्य सरकारों से सहकारी कृषि के बारे में श्रेणीबद्ध कार्यक्रम तैयार करने को कहा गया। मगर कुल मिलाकर इस दिशा में अब तक कोई खास काम नहीं हुआ है। बस यही हुआ है कि बहुत-से राज्यों में लोगों ने मिलकर स्वेच्छा से थोड़ी-बहुत सहकार कृषि समितियां बना ली हैं। इनमें से कुछेक ही सफल हो पाई हैं। बाकी के सामने ऐसी व्यावहारिक कठिनाइयां प्रस्तुत हुई हैं जिनके समाधान के बारे में उन्हें कोई निदेश प्राप्त नहीं हो सका है। नतीजा यह हुआ है कि जो काम बड़े उत्साह से उठाया गया था उसे बेकार समझकर छोड़ दिया गया है। भारत में सहकारी कृषि समितियां बनाने में लोगों को जो सफलता और विफलता मिली है उन दोनों पर ध्यान से विचार किया जाए तो शायद सहकारी कृषि की विभिन्न समस्याओं के सर्वोत्तम समाधान खोजे जा सकें। यही सोचकर योजना आयोग ने कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन के मार्फत १३ राज्यों की चुनी हुई २३ सहकारी कृषि समितियों के काम की जांच कराने का प्रबन्ध किया। इस जांच से बहुत उपयोगी जानकारी हासिल हो रही है। इस विषय में जल्दी ही किसी समय अलग से एक खास रिपोर्ट प्रकाशित की जाएगी।

५५. इस समय देश के विभिन्न भागों में कुल मिलाकर कोई एक हजार सहकारी कृषि समितियां काम कर रही हैं। सहकारिता के विकास का चाहे जो कार्यक्रम हो, सहकारी और कृषि विभाग के कर्मचारी और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के कार्यकर्ता उसमें सबसे पहले इन समितियों की ओर ही ध्यान दें। इनमें से जितनी अधिक समितियां सफल होंगी उतना ही अधिक लोगों में इस प्रकार की समितियां बनाने का उत्साह बढ़ेगा।

५६. चकबन्दी के समय लोगों को सहकारी कृषि के लाभ से अवगत कराने की कोशिश की जानी चाहिए, ताकि लोग यथासंभव अपनी जमीन की सहकारी कृषि के लिए एक खण्ड में या कुछ सुगठित खण्डों में चकबन्दी करा लें। जो लोग इस तरह स्वेच्छा से कृषि सहकारी प्रणाली अपनाएं, उन्हें कृषि उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रम और अन्य योजनाओं के साधनों से विशेष सहायता मिले। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के क्षेत्रों में इस बात का खास तौर पर ध्यान रखा जाए। उनमें निम्नलिखित सुविधाएं बहुत आसानी से जुटाई जा सकती हैं:

(१) सरकारी या सहकार ऋण संस्थाओं से कर्ज दिलाना, और अनुमोदित कृषि कार्यक्रमों के विषयों में सरकारी सहायता देते समय खास ध्यान रखना।

(२) अच्छे किस्म का बीज, रासायनिक खाद, और निर्माण सामग्री देते समय खास रियायत करना।

(३) सहकारी फार्म की जमीन की चकबन्दी कराने की सुविधाएं देना।

(४) सरकार ने जो बंजर जमीन छोड़ी हो, कृषि योग्य जो परती जमीन हो, सरकार ने जिस जमीन का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया हो, और ग्राम पंचायतों की देख-रेख में जो जमीन हो, उसको पट्टे पर उठाते समय प्राथमिकता देना।

(५) ऐसा विधान कर देना कि सहकार समिति एक बार बनकर जब तक स्थापित रहे और उसका प्रबन्ध कानून में निर्दिष्ट शर्तों के अनुसार चलता रहे, तब तक किसी को कोई ऐसा अधिकार न मिले जिसके प्रयोग से समिति के सदस्यों का अहित हो सकता हो। जहां पट्टेदारों को स्थायी अधिकार मिले हुए हैं वहां सहकार समिति का सदस्य बनना न बनना उनकी मर्जी पर निर्भर होगा। रही वह जमीन जिसके पट्टेदार को स्थायी अधिकार प्राप्त न हों, उसके बारे में यह है कि उसका मालिक सहकार समिति में तभी शामिल हो सकता है जब पट्टेदार भी राजी हो।

(६) फार्म संचालन, बिक्री, उत्पादन कार्यक्रमों के निर्माण आदि के कर्मचारियों को टेकनीकल सहायता दिलाना।

(७) सहकारी कृषि समिति के सदस्यों और उनके सहयोगियों के लिए कुटीर उद्योग, गो-पालन, बागवानी आदि कृषि से भिन्न रोजगार उपलब्ध कराने में टेकनीकल या आर्थिक सहायता दिलाना।

(८) जहां जरूरत समझी जाए, प्रबन्ध व्यय के खातिर कुछ समय के लिए अनुदान दिलाना।

इस बात का ध्यान रखा जाए कि ये रियायतें जिन संस्थाओं के साथ की जाएं वे सच्चे मानों में कृषि सहकार समितियां हों और उनके इरादे नेक हों। अगर यह सावधानी न बरती गई तो धड़ाधड़ ऐसी समितियां बनने लगेंगी जो कुछ समय बाद सरकार का घाटा कराके ठप्प हो जाएंगी।

५७. यह ज्यादा अच्छा रहेगा कि शुरू-शुरू में अनुभव और प्रयोग के लिए पहले हर जिले में और आगे चलकर हर राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक क्षेत्र में दो-एक सहकारी फार्म चुन लिये जाएं। इन फार्मों के कामकाज पर निगाह रखी जाए और इनकी प्रगति का ब्योरा दर्ज किया जाता रहे। कोशिश यह हो कि इनमें प्रबन्ध और संगठन के बढ़िया तरीकों का विकास हो। आगे चलकर ये फार्म सहकारिता, कृषि और अन्य विस्तार सेवाओं के कार्यकर्ताओं के लिए व्यावहारिक प्रशिक्षण के केन्द्र बन जाएं।

५८. भूमि की अधिकतम सीमा निर्धारित होने पर जब सारी अतिरिक्त भूमि सरकार के हाथ में आ जाएगी, तब सहकारी कृषि का बड़े पैमाने पर आयोजन करना आसान हो जायगा। जैसा पहले सुझाव दिया जा चुका है अतिरिक्त भूमि में जहां तक हो सके सहकारी कृषि की ही व्यवस्था की जाए।

५९. आदिम जातियों के इलाकों में, जहां सामुदायिक स्वामित्व का विधान है, कृषि की सहकारी प्रणाली का विकास करने के लिए खास प्रयत्न किया जाए।

६०. कृषि की जो जमीन बुनियादी चक से भी छोटी होती है वह कृषि पुनर्गठन के सिलसिले में टेढ़ी समस्या प्रस्तुत कर देती है। अगर इस तरह की जमीन मिलाकर सहकारी इकाइयां खोली जाएं तो इनके मालिकों को बड़े पैमाने पर होने वाली खेती के सब लाभ मिल जाएंगे। साथ ही

उनके लिए कृषि विकास के आर्थिक साधन और रोजगार-वृद्धि के अवसर भी उपलब्ध हो जाएंगे। सामान्य उद्देश्य यही रहना चाहिए कि जो जमीन बुनियादी चक से भी छोटी हो उसे मिलाकर सहकारी फार्म खोल दिए जाएं। इस दिशा में पहला कदम उठाने के लिए हर गांव में अतिरिक्त भूमि और अन्य उपलब्ध भूमि में सहकारी इकाइयां खोल दी जाएं। जिन लोगों की जमीन बुनियादी चक से कम हो, उन्हें इन इकाइयों में शामिल हो जाने का निमन्त्रण दिया जाए। यह भी अपेक्षित है कि चकबन्दी करते समय बहुत ही छोटी जमींदारियां, सहकारी कृषि के लिए संगृहीत जमीन के नजदीक से नजदीक रखी जाएं, ताकि अगर उनके मालिक आगे चलकर कभी सहकारी फार्म में शामिल होना चाहें तो उन्हें सुविधा रहे। एक क्षेत्र में सहकारिता बढ़ने से अन्य क्षेत्रों में भी सहकारिता पनपती है। इसलिए यह जरूरी है कि कृषि के क्षेत्र में सहकारिता प्रतिष्ठित करने की खातिर पहले कृषि से भिन्न क्षेत्रों में सहकारिता बढ़ाई जाए।

६१. सहकारी कृषि के विकास कार्यक्रम के परिपालन के प्रसंग में प्रशिक्षण के व्यापक आयोजन का भी बहुत महत्व हो जाता है। सहकार प्रशिक्षण के विद्यालयों में सहकारी कृषि के सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्षों के बारे में विशेष अध्ययन करने की सुविधा होनी चाहिए। विस्तार कार्यकर्ताओं और कृषि विभाग अधिकारियों को भी सहकारी कृषि के विषय में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इसमें प्रबन्ध और संगठन की समस्याओं के और हिसाब लिखने के तरीकों के बारे में उनकी जानकारी बढ़ाई जानी चाहिए। इससे भी ज्यादा जरूरी यह है कि उन्हें सहकारिता के मानव सम्बन्ध के पहलू से भली-भांति अवगत करा दिया जाए।

ग्रामोन्नति किस तरह होगी

६२. सहकारी कृषि समितियों की वृद्धि और कृषीतर क्षेत्रों में सहकारिता के विकास से गांव की अर्थ-व्यवस्था सुदृढ़ बन जाएगी और पैदावार व आमदनी निरन्तर बढ़ती जाएगी। भारत की विशेष परिस्थिति में कृषि और जनहित सम्बन्धी अन्य कई आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में संचालन की बुनियादी इकाई का स्थान गांव को देना कई कारणों से उपयुक्त जान पड़ता है।

६३. जैसा पहले बताया जा चुका है, सहकारी सामुदायिक विकास के लिए वर्तमान परिस्थिति में गांव की ही इकाई सर्वोत्तम ठहरती है। हो सकता है कि इस काम के लिए कुछ गांव बहुत छोटे पड़ें, कुछ बहुत बड़े; लेकिन जिला विकास प्रशासन वाले अध्याय में गांवों की सीमा नए सिरे से निश्चित करने का जो सुझाव दिया गया है उससे यह दिक्कत काफी हद तक दूर हो जाएगी। तब अधिकांश गांवों का आकार-प्रकार ऐसा होगा कि उन्हें सहकारी कृषि की इकाई मानना संचालन और संगठन दोनों की ही दृष्टि से उपयुक्त रहेगा। गांव के सहकारी प्रशासन की बात यह मानकर की जाती है कि गांव में जमीन किसानों की खुद की है। ज्यों-ज्यों भूमि सुधार का काम आगे बढ़ेगा, त्यों-त्यों ग्राम समुदाय में मालिक जमीनों की संख्या बढ़ती जाएगी और भूमि स्वामित्व के सम्बन्ध में विषमता कम होती जाएगी। लेकिन तो भी हर गांव में दस्तकारों, कारीगरों वगैरह के अलावा और बहुत-से ऐसे लोग बच रहेंगे जिनकी रोटी-रोजी खेती से चलती होगी लेकिन जिनके पास अपनी कहने को नाम मात्र भी जमीन नहीं होगी। इस वर्ग के लोगों का सवाल बहुत टेढ़ा और विचारणीय है, इसलिए और भी कि वास्तव में गांवों में इन्हें पूरा रोजगार दिलाया नहीं जा सकता। गांव की अर्थ-व्यवस्था में पूरे समय काम करने वालों के रूप में इनकी कोई आवश्यकता नहीं है।

६४. कृषि में और उससे बाहर लोगों के लिए तरह-तरह के व्यवसाय उपलब्ध कराने के लिए ग्राम अर्थ-व्यवस्था को ही एक नया रूप दे देना होगा। इस दृष्टि से नए-नए तरीकों का जल्दी से जल्दी अपनाया जाना बहुत जरूरी हो जाता है। गांवों में बिजली लाई जाए और गांव वालों को आधुनिक साज-सामान से परिचित कराया जाए। छोटे-छोटे चक खत्म किए जाएं क्योंकि जब तक कृषि प्रबन्ध की इकाई का स्थान उन्हें मिलता रहेगा तब तक ग्राम अर्थ-व्यवस्था को समृद्ध बनाकर गांव वालों के लिए तरह-तरह के व्यवसाय उपलब्ध करना बहुत ही मुश्किल होगा। इस प्रसंग में प्रबन्ध और कार्य-संचालन की इकाई में भेद करने की जरूरत है। समूचे गांव को ही यदि प्रबन्ध की इकाई बना लिया जाए तो भी वर्षों तक कृषि कार्य की इकाई किसान की अपनी जमीन ही रहेगी। अगर योजना की इकाई का स्थान गांव को दिया जाए तो कई कामों में, उदाहरण के लिए अच्छे बीज के इस्तेमाल में, क्रय-विक्रय में, उर्वर भूमि संरक्षण में, पानी के उपयोग में, और स्थानीय सार्वजनिक निर्माण में, और धीरे-धीरे जुताई-बुवाई वगैरह में सहकारिता संभव हो सकेगी।

६५. ग्राम-प्रबन्ध की सहकारी व्यवस्था होने तक संक्रांति काल में गांवों में जमीन के रख-रखाव वगैरह के तीन तरीके प्रचलित रहेंगे। किसान अपनी जमीन को स्वयं ही जोतते-बोते रहेंगे। कुछ किसान ऐसे होंगे जो अपनी-अपनी जमीन मिलाकर स्वेच्छा से सहकारी इकाइयां बना लेंगे। तीसरे, कुछ जमीन ऐसी होगी जिसका प्रबन्ध न व्यक्तिगत न सहकारी, बल्कि सामुदायिक होगा। इसमें गांव की पंचायती जमीन, आबादी मुकाम, गांवों की प्रदत्त कृषि योग्य बंजर भूमि, ऐसी जमीन जिसका स्वामित्व का प्रबन्ध अधिकतम सीमा निर्धारण के बाद समूचे गांव को सौंप दिया गया हो और वह जमीन शामिल होगी जो भूमिहीन खेतिहरों को बसाने के लिए उपलब्ध की गई हो। इस तरह हर गांव में प्रबन्ध व्यवस्था की दृष्टि से तीन क्षेत्र हो जाएंगे निजी या व्यक्तिगत क्षेत्र, सहकारी क्षेत्र और पंचायती क्षेत्र। इन क्षेत्रों का अनुपात प्रगति और विकास के साथ-साथ सुनिश्चित आयोजन पर भी निर्भर होगा। कोशिश यह रहेगी कि सहकारी क्षेत्र को बढ़ाया जाता रहे, ताकि होते-होते गांव की सारी जमीन का प्रबन्ध सहकारी प्रणाली से होने लगे। ऋण, विक्रय, और परिष्कार के विषय में सहकारी प्रणाली अपनाये जाने से उत्पादन के क्षेत्र में भी सहकारिता बढ़ेगी। ये सब काम एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। इनमें जो आसान हों, जाहिर है पहले उनको ही उठाया जाएगा। सहकारिता चाहे जैसी हो और चाहे जिस क्षेत्र में हो प्रशंसनीय समझी जाए, क्योंकि सहकारिता की भावना भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितना कि सहकारिता का स्वरूप।

६६. ग्राम-प्रबन्ध की सहकारी प्रणाली का लक्ष्य सिद्ध करने के मुख्य साधन और माध्यम ये हैं :—

(१) राष्ट्रीय विस्तार सेवा, और कृषि और उससे सम्बद्ध कार्यों के विकास के आयोजन।

(२) ग्राम पंचायत और गांव के विकास की देख-रेख करने वाली संस्था के रूप में उसे सौंपे गए काम।

(३) ऋण, विक्रय, गोदाम, प्रबन्ध, परिष्कार आदि की सहकारी व्यवस्था के आयोजन।

(४) ग्रामोद्योग की उन्नति के कार्यक्रम, खास करके वे जो स्थानिक जरूरतों को पूरा करने और गांव के सभी लोगों के लिए रोजगार उपलब्ध करने की खातिर शुरू किए गए हों।

(५) लोगों को स्वेच्छा से सहकारी कृषि समितियां बनाने को प्रोत्साहित करने और इस प्रकार बनी समितियों की सहायता करने के आयोजन।

(६) गांवों में पंचायती क्षेत्रों का विकास (इसमें पंचायती जमीन, प्रदत्त जमीन वगैरह शामिल की जाती हैं) और गांव वालों के सामुदायिक आयोजन।

इन माध्यमों और साधनों द्वारा जो काम होंगे वे अन्योन्याश्रित और परस्पर सम्बद्ध काम होंगे। एक की प्रगति दूसरे की प्रगति पर निर्भर होगी। इसलिए ग्राम-प्रबन्ध की सहकारी प्रणाली रातों-रात प्रतिष्ठित नहीं हो जाएगी, उसका विकास धीरे-धीरे और क्रमिक रूप से ही हो पाएगा। कई व्यावहारिक कठिनाइयां प्रस्तुत होंगी जिनका सोच-समझकर समाधान करना होगा। कुशल संगठन और संचालन की व्यवस्था करनी होगी। विस्तार सेवा कार्यकर्ताओं को सहकारिता विकास के काम के लिए पूरी तरह तैयार करना होगा, और गांव-गांव में सहकार का एक सुसंचालित और सोद्देश्य आन्दोलन चलाना होगा।

ग्राम-प्रबन्ध की सहकार व्यवस्था कौन-कौन-से स्वरूप धारण करेगी और उसे प्राप्त करने के रास्ते में कौन-कौन-सी मंजिलें आएंगी, यह तो हर क्षेत्र के निवासियों के अनुभव और उत्साह पर और ग्राम सामुदायिक योजना के एक-एक कार्यक्रम की सफलता पर निर्भर करेगा।

६७. जहां एक बार ग्राम-प्रबन्ध की सहकार व्यवस्था हो गई और ग्राम अर्थ-व्यवस्था के ही अन्तर्गत रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हो गए कि भूमि सम्पन्न और भूमिहीन का भेद बहुत कुछ जाता रहेगा। तब असल भेद कृषि और कृषीतर दोनों तरह के विभिन्न धंधों में लगे हुए लोगों की निपुणता का होगा। ग्राम समुदाय को कृषि, व्यापार और उद्योग से जो साधन प्राप्त होंगे, उनका गांव में तरह-तरह के आयोजन करके और गांव से बाहर के आयोजनों में सहयोग करके पैदावार और रोजगार बढ़ाने में उपयोग किया जाएगा। इस तरह के ग्राम समुदाय का सुगठित सामाजिक और आर्थिक रूप होगा। उसे तहसील और जिले के आर्थिक कार्य-कलाप में उत्पादन और वाणिज्य की एक सक्रिय इकाई का स्थान प्राप्त होगा। इसके आधार पर हम ऐसी ग्राम अर्थ-व्यवस्था की परिकल्पना कर सकते हैं जिसमें खेती, ग्रामोद्योग, परिष्कार उद्योग, विक्रय, और ग्राम व्यापार, सभी कार्य सहकारी प्रणाली से मिल-जुलकर किए जाया करेंगे।

६८. ग्राम अर्थ-व्यवस्था का सहकारी प्रणाली के अनुसार विकास करने की दिशा में इधर एक बड़ा काम हुआ है—ग्रामदान आन्दोलन का समारम्भ। भूदान यज्ञ में उड़ीसा और कुछेक अन्य राज्यों के जमींदारों ने गांव के गांव दे डाले हैं। कुल मिलाकर आठ सौ गांव प्राप्त हुए हैं। इन गांवों के विकास में जो सफलता प्राप्त होगी, उसका देश के सहकारी ग्राम विकास आन्दोलन की प्रगति पर गहरा असर पड़ेगा। सहकारी कृषि समितियों के लिए जो सुविधाएं निर्दिष्ट की गई थीं वे सहकारी गांवों के लिए अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में उपलब्ध की जाएं। यहां दो अन्य चीजों की ओर ध्यान आकृष्ट कराना जरूरी है। सहकारी गांवों में मालगुजारी पंचायतों की मार्फत ली जाया करे; दूसरी यह कि ग्राम समुदाय में वैयक्तिक अधिकार जिस रूप से दिए गए हों उसके अनुसार किसी व्यक्ति को और अन्य सहायता या तो समुदाय द्वारा प्रस्तुत जमानत

के आधार पर दी जाए, या ग्राम भूमि में उस व्यक्ति के हिस्से के आधार पर। मालगुजारी और सहकार विषयक वर्तमान कानूनों में भूमि के वैयक्तिक स्वामित्व के स्थान पर सहकारी या सामुदायिक स्वामित्व की प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक संशोधन-परिवर्द्धन कर दिए जाएं।

भूमि सुधार कार्यक्रमों का प्रशासन

६९. भूमि सुधार कार्यक्रम राष्ट्रीय आयोजन का एक अभिन्न अंग है। उसे जल्दी से जल्दी कुशलतापूर्वक सम्पन्न न किया जाए तो कई और योजनाएं अटकी रह जाती हैं। लेकिन साथ ही इससे प्रशासन पर बहुत ज्यादा बोझ पड़ जाता है। इसलिए यह जरूरी है कि इस महत्वपूर्ण कार्यक्रम की पूर्ति के लिए विशेष प्रशासनिक व्यवस्था की जाए। भूमि सुधार के लिए प्रशासन को जो काम करने पड़ते हैं, उन्हें मोटे तौर पर दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है : वे कार्य जिनका मालगुजारी प्राप्त करने की सफल व्यवस्था से सम्बन्ध हो, और वे कार्य जो चकबन्दी, भूमि प्रबन्ध, अधिकतम सीमा-निर्धारण, भूमि वितरण, और सहकारी कृषि या किसी अन्य विशिष्ट आयोजन के सम्बन्ध में हों। इन कर्तव्यों के प्रति समान दृष्टि अपनाई जानी चाहिए क्योंकि मूलतः ये अन्योन्याश्रित हैं, और एक ही योजना के विभिन्न पहलू हैं।

७०. पहले वर्ग के प्रशासनिक कार्यों की सूची इस प्रकार है :—

(१) भूमि सुधार के लिए खसरा, खतौनी आदि जमीन के लेखों में सही-सही और ताजी से ताजी सूचना उपलब्ध रहना बहुत जरूरी है। कई राज्यों में बिचौलियों की समाप्ति हो जाने पर मालगुजारी के सिलसिले में जमीन का हिसाब-किताब लिया गया है या अब लिया जा रहा है। जमीन के बारे में जो दस्तावेज तैयार किए जाते हैं, उनमें अक्सर पट्टेदारों और साझेदारों की जमीन के बारे में कोई सूचना नहीं दी जाती और इस दृष्टि से वे अधूरे रह जाते हैं।

(२) बहुत-से क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें बहुत समय से पैमाइश नहीं हुई है। पैमाइश आम तौर पर बन्दोबस्त के साथ-साथ की जाती है। लेकिन कई राज्यों में यह काम अभी करने को बाकी पड़ा है। ग्राम अभिलेखों की तैयारी और संशोधन-परिवर्द्धन का काम जल्दी से जल्दी पूरा किया जाना चाहिए। पैमाइश-पड़ताल के लिए रुका नहीं रहा जा सकता, इसलिए यह जरूरी मालूम होता है कि इस समय सबसे पहले जो भी जैसे भी नक्शे उपलब्ध हो सकें, उनके आधार पर मालगुजारी के अभिलेख तैयार कर लिये जाएं।

(३) माल विभाग के कर्मचारियों पर इधर काम का बोझ बहुत ज्यादा रहा है, इसलिए उन्होंने जो वार्षिक विवरण तैयार करके दिए हैं, उनमें अशुद्धियां रह गई हैं। विवरण को जांचने और सही करने के बारे में जो लम्बे-चौड़े निदेश दिए गए हैं, निरीक्षण कर्मचारियों की कमी के कारण उनका पालन करना बहुत मुश्किल हो गया है। पट्टेदारों और फसल के साझेदारों की जमीन के बारे में जो सूचना दी गई है उसमें अशुद्धियां होने की विशेष आशंका है। इसलिए यह वांछनीय है कि माल विभाग के अधिकारी जब कभी मौके पर जाकर मुआयना करने निकलें, ग्राम पंचायत के किसी सदस्य को साथ ले जाएं। जमीन के बारे में जो भी दस्तावेज तैयार किए जाएं उनकी प्रतियां जांच के लिए पंचायत कार्यालय में उपलब्ध रहा करें और भूमि सम्बन्धी

दस्तावेज में कोई परिवर्तन करने से पहले तत्सम्बन्धी लोगों को सूचित किया जाया करे।

(४) कुछ इलाकों में मालगुजारी या लगान की ताजी और विश्वसनीय दर आसानी से नहीं मालूम हो पाती है। जो प्रदेश पहले इस्तमरारी बन्दोबस्त के अधीन थे, उन पर यह बात खास तौर पर लागू होती है। मालगुजारी और लगान की दर तय करने में आम तौर पर बहुत समय लगता है। इसलिए जहां संभव हो, इसका कोई आसान-सा तरीका अपना लिया जाए। उदाहरण के लिए, मालगुजारी लगान की कुछ गुनी निश्चित कर दी जाए। लगान में कमी करने और लगान नकद लेने की व्यवस्था करने के लिए यह काम बहुत ही जरूरी है।

७१. दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में भूमि सुधार के विशेष कार्यक्रमों के लिए दूसरे वर्ग की जो प्रशासनिक कार्रवाइयां करनी होंगी उनमें से निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं :—

(१) चकबन्दी करना।

(२) जिन पट्टेदारों को अकारण बेदखल कर दिया गया हो उन्हें पट्टेदारी फिर से दिलाना।

(३) बेईमानी की नीयत से जमीन दूसरे के नाम किए जाने के मामले पकड़ना।

(४) विभिन्न अधिकारों के ग्रहण किए जाने पर कितना-कितना मुआवजा दिया जाए यह तय करना।

(५) चक की अधिकतम सीमा निर्धारित करना।

(६) सीमा के निशान लगाना, अधिकतम सीमा, भूदान आदि से प्राप्त अतिरिक्त जमीन पर कब्जा लेना और उसे फिर से बांटना।

(७) गांव-गांव में जमीन के अच्छे रख-रखाव के कानूनों का पालन करना।

(८) सहकारी कृषि और सहकारी प्रबन्ध में मदद देना।

७२. इतने सारे प्रशासनिक कार्यों से माल विभाग के कर्मचारियों पर बोझ तो बहुत ज्यादा पड़ जाएगा। जाहिर है कि शुरू से ही निरीक्षण और कर्मक्षेत्र दोनों तरह के कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि करने का आयोजन करना होगा। भूमि सम्बन्धी नए कानून ज्यादातर खासे जटिल हैं, और यह जरूरी हो चला है कि माल विभाग के कर्मचारी उनका पालन कराने की जिम्मेदारी उठाने से पहले उनके लक्ष्य और लक्ष्य सिद्धि के उपायों से भली-भांति अवगत हो लें। इस दृष्टि से थोड़े-थोड़े समय में प्रशिक्षण क्रम शुरू करना उपयोगी सिद्ध होगा। लगान में कमी करना, खुदकाश्त के लिए वापस ली जा सकने वाली और न ली जा सकने वाली जमीन का अलग-अलग करना, और ऐसे ही कुछेक और काम तो सारे राज्य में एक साथ करने ही पड़ेंगे। मगर बाकी काम ऐसे हैं जिन्हें अनुभव और प्रशिक्षण के लिए शुरू-शुरू में कुछ चुने हुए क्षेत्रों में किया जाए तो बाद में अन्य क्षेत्रों में वे बहुत आसानी से और बहुत जल्दी सम्पन्न हो सकेंगे। अगर जनता को मालूम हो कि भूमि सुधार से क्या-क्या लाभ हैं और वह इस शुभ कार्य में आगे बढ़कर हाथ बंटाने को तैयार हो, तो भूमि सुधार कार्यकर्ताओं को बहुत सुविधा हो जाए। इसलिए ग्राम समाज के विभिन्न वर्गों को यह समझाने का आवश्यक प्रबन्ध शीघ्र किया जाए कि भूमि सुधार कानून के अनुसार उनके दायित्व और अधिकार क्या हो जाते हैं। भूमि सुधार के विभिन्न

कार्यों में सरकारी कर्मचारी जिला विकास प्रशासन के अधिकरणों से बहुत मदद ले सकते हैं और लें। इन अधिकरणों का ब्यौरा सातवें अध्याय में दिया गया है और इनके नाम हैं—ग्राम पंचायत, ताल्लुका विकास समिति, विकास खण्ड, और जिला विकास परिषद। ग्राम पंचायतें तो खासकर बड़ी काम की साबित हो सकती हैं। जमीन के रख-रखाव की उत्तम व्यवस्था कराने में और चकबन्दी की प्रगति में उनसे बहुत मदद मिल सकती है। उनकी सहायता ली जाए तो खसरा, खाता, खतौनी आदि मालगुजारी विषयक अभिलेखों के लिए ज्यादा सही सूचना प्राप्त हो सकती है और अन्याय होने की आशंका दूर की जा सकती है। यही नहीं, ग्राम पंचायतें बेदखली, लगान अदायगी में देरी, जमीन पर कब्जा लिये जाने, जमीन पट्टेदार को वापस दिलाने, और जमीन में बगैर किसी हक के आकर जम जाने वाले को हटाने के मामले निबटाने में भी बहुत सहायक हो सकती है। जिला और ग्राम विकास आयोजन में भूमि सुधार कार्यक्रम का विशिष्ट स्थान है। भूमि सुधार की सफलता से उत्साहित होकर लोग इन कार्यक्रमों की ओर अधिकाधिक आकृष्ट होंगे।

परिशिष्ट १

किसी फार्म या चक के कामकाज की परख करते समय किन-किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए, इस विषय में भूमि सुधार मंडल की एक समिति ने जो सूची तैयार की है वह नीचे दी जा रही है। इस सूची का उपयोग करने से पहले स्थानिक परिस्थिति के अनुसार इसमें आवश्यक हेर-फेर कर लिया जाए। हर क्षेत्र में इसमें से वे बातें छांट ली जाएं जिनका वहां खास महत्व हो, और फिर उन्हीं बातों को खरे-खोटे की पहचान करने की मुख्य कसौटी मान लिया जाए।

(१) भूमि :

(क) चौरस बनाना, बाड़ लगाना, धरातल उठाना, मेंड़ और पुश्ते बांधना (जहां आवश्यक और आर्थिक दृष्टि से संभव हो) और जमीन का उपजाऊपन बनाए रखने के दूसरे उपाय करना।

(ख) कृषि योग्य बंजर भूमि का उपयोग उदाहरण के लिए जिन इलाकों में पानी भरा रहता हो वहां नालियों का इन्तजाम करना, जिस इलाके में खार या कल्लर हो वहां जमीन का कटाव रोकने या उर्वरता बनाए रखने के उपाय करना, ऐसे पौधों का उन्मूलन करना जो खेती को नुकसान पहुंचाते हों, झाड़-झंखाड़ साफ करना आदि।

(२) जानकारों ने जो बीज अच्छा बताया हो उसका इस्तेमाल करना।

(३) खाद और रासायनिक खाद :

(क) खेत में खाद की जो सामग्री हो उसे बचाए रखना।

(ख) हर तरह का कूड़ा-करकट खाद बनाने के लिए गड्ढों में भर देना।

(ग) हरी खाद का नियमित उपयोग करना।

(घ) जहां आवश्यक हो वहां रासायनिक खाद का इस्तेमाल करना, बशर्ते उसमें खर्च बहुत ज्यादा न बैठता हो।

(४) सिंचाई :

(क) जहां नहरी सिंचाई की व्यवस्था न हो, वहां कुएं, नलकूप, पम्पदार कुएं, तालाब और बांध वगैरह बनाना, या तो खुद ही या पास पड़ोस के किसानों से मिलकर।

(ख) पानी जाया न होने देने के लिए सिंचाई की नालियों के समुचित रख-रखाव की व्यवस्था करना, यानी नालियों में पलस्तर लगाना, जहां तक हो सके उन्हें सीधी बनाना टेढ़ी-मेढ़ी नहीं, उन्हें घास-फूस आदि से मुक्त करना, और अगर हो सके तो उन्हें पक्का करवा लेना।

(५) खेती के औजार :

खेती के उन बढ़िया किस्म के उपकरणों का ही उपयोग करना जिनकी कृषि विभाग ने इस इलाके के लिए सिफारिश की हो।

(६) निराई :

फसल के कीड़ों और बीमारियों की रोकथाम, फसल को नुकसान पहुंचाने वाले जंगली पौधों का उन्मूलन करना, कृषि विभाग द्वारा सुझाए गए तरीके के अनुसार अपने आप भी और स्थानिक काश्तकारों से मिल-जुलकर भी।

(७) उन्नत कृषि प्रथाओं का इन कार्यों में अपनाया जाना :

(क) बीज क्यारियों की तैयारी।
(ख) बुवाई।
(ग) फसलों का अन्तर-संवर्द्धन।
(घ) निराई।
(ङ) बुरे पौधों की छंटनी।
(च) कटाई।

(८) फसल का उपयुक्त क्रम।

(९) वृक्षारोपण और वृक्ष संरक्षण (खासकर नालियों-कुलियाओं के किनारे-किनारे, कुओं के आस-पास और परती जमीन में)।

(१०) जिन इलाकों में खेती वर्षा पर निर्भर हो, वहां सिंचाई हीन कृषि के उन उत्तम तरीकों का उपयोग जो कृषि विभाग द्वारा सुझाए गए हैं; उदाहरण के लिए :—

(क) वर्षा शुरू होने से पहले खेत में हलका हल चलाना।
(ख) झाड़-झंखाड़ उखाड़ फेंकना।
(ग) बाड़ लगाना और जमीन ऊपर उठाना।
(घ) वर्षा बन्द होने के बाद फौरन हल चलाकर और सोहागा देकर नमी को बचाए रखना।

(११) मिश्रित कृषि (यानी कृषि के साथ-साथ फल-फूल लगाने, सब्जी उगाने, गाय-भैंसें, मुर्गियां मधुमक्खियां वगैरह पालने जैसे सम्बद्ध कार्य करने) के बारे में कृषि विभाग की सिफारिशों का पालन करना।

(१२) पशु पालन :

(क) अनुमोदित नस्ल के पशुओं का संवर्द्धन करना।
(ख) जानवरों के दाना-पानी का अच्छा इन्तजाम करना।
(ग) गोबर वगैरह से खाद बनाना।
(घ) जानवर बांधने की अच्छी जगह बनाना।
(ङ) जानवरों को बीमारियों से बचाने और बीमार जानवरों के इलाज की व्यवस्था करना।

(१३) खेती के साज-सामान और स्थायी सुधार में रकम लगाना।

(१४) फसल काटकर रखने के लिए गोदाम वगैरह का प्रबन्ध करना।

(१५) खेतिहर मजदूरों के रहने के स्थान का प्रबन्ध करना।

(१६) बड़े और मझोले आकार के फार्मों में निर्धारित रीति से आमदनी और खर्च का हिसाब-किताब रखना।

(१७) सहकारी संघों में सम्मिलित होना।

परिशिष्ट २

जमीन की बांट और चकों का आकार

पैरा ३० से ३४ तक में चकों और उन पर होने वाली खेती सम्बन्धी आंकड़ों को एकत्र करने की कार्य-विधि और विचार-विधि का वर्णन किया गया है; इस संलग्न सूची में निम्नलिखित विषयों पर संक्षेप में १६ राज्यों के इस विषय में आंकड़े दिए गए हैं : (क) स्वामित्व के आधार पर चकों का वर्गीकरण; और (ख) खुदकाश्त के अंतर्गत जमीन का वर्गीकरण। बिहार सम्बन्धी आंकड़े विचाराधीन हैं। उत्तर प्रदेश और उड़ीसा के आंकड़े अभी प्राप्त नहीं हुए हैं। अन्य राज्यों में चकों और खेती सम्बन्धी आंकड़ों के संग्रह की प्रगति का विवरण इस अध्याय में दिया गया है।

(क) वे राज्य जिनमें सभी आकार-वर्गों के चकों का विवरण प्राप्त किया गया (हजार में)

—			चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
			५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
१. आंध्र										
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	...	१७६७	४२३	१७८	१८१	५०	२०	२६	२६४५
	प्रतिशत ...	...	(६६·८)	(१६·०)	(६·७)	(६·८)	(१·९)	(०·८)	(१·०)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	...	३२७०	२९७६	२१६८	३७३७	१८०४	१००५	३०७४	१८०३४
	प्रतिशत ...	...	(१८·१)	(१६·५)	(१२·०)	(२०·७)	(१०·०)	(५·६)	(१७·१)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन[†]	चकों की संख्या	...	१६७४	३९६	१६६	१६६	४५	१७	२१	२४८६
	प्रतिशत ...	...	(६७·३)	(१५·९)	(६·७)	(६·७)	(१·८)	(०·७)	(०·८)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	...	३०१७	२७३९	१९९७	३३८०	१६०१	८६८	२१९९	१५८०१
	प्रतिशत ...	...	(१९·१)	(१७·३)	(१२·६)	(२१·४)	(१०·१)	(५·६)	(१३·९)	(१००)

[†]खुदकाश्त वाली जमीन के अंतर्गत आम तौर पर एक साल से अधिक समय तक बेकार पड़ी कृषि योग्य परती जमीन नहीं आती।

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
——		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
		२. बम्बई							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या ...	२४४६	९६१	४८३	५६८	१७२	६५	६६	४७६४
	प्रतिशत ...	(५१·३)	(२०·२)	(१०·२)	(११·६)	(३·६)	(१·४)	(१·४)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	५०८६	६६२३	६००१	११८६६	६२५८	३३२७	७७१०	४७२०४
	प्रतिशत ...	(१०·८)	(१४·७)	(१२·७)	(२५·२)	(१३·३)	(७·०)	(१६·३)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	२१८३	८६२	४४२	५१५	१५५	५७	५६	४२७३
	प्रतिशत ...	(५१·०)	(२०·२)	(१०·३)	(१२·२)	(३·६)	(१·३)	(१·४)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	४४८१	६०६३	५३५०	१०५४१	५५२७	२८७५	५८८६	४०७२६
	प्रतिशत ...	(११·०)	(१४·६)	(१३·१)	(२५·६)	(१३·६)	(७·०)	(१४·५)	(१००)
		३. मध्य प्रदेश							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या ...	२६४८	८४२	३७६	३८५	१०५	४२	६०	४४५८
	प्रतिशत ...	(५६·४)	(१८·६)	(८·४)	(८·७)	(२·४)	(०·६)	(१·३)	१००)
	क्षेत्रफल ...	५०७५	५६८८	४५६२	७६६५	३८०६	२१५६	७६१७	३७२०२
	प्रतिशत ...	(१३·६)	(१६·२)	(१२·३)	(२१·४)	(१०·२)	(५·८)	(२०·५)	(१००)
(ग) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	२५५३	७७६	३४४	३५०	६५	३७	४६	४२०७
	प्रतिशत ...	(६०·७)	(१८·५)	(८·२)	(८·३)	(२·२)	(०·६)	(१·२)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	४७८२	५५३१	४१६५	७२१८	३४०१	१६०७	५७०५	३२७३६
	प्रतिशत ...	(१४·६)	(१६·६)	(१२·८)	(२२·१)	(१०·४)	(५·८)	(१७·४)	(१००)

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
४. मद्रास									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	३३४८	८६०	३२४	२८५	७०	२७	४४	४९५८
	प्रतिशत	(६७·६)	(१७·४)	(६·५)	(५·७)	(१·४)	(०·५)	(०·९)	(१००)
	क्षेत्रफल‡	६५९२	६००६	३९५२	५८५३	२५५३	१३९९	६१९४	३२५४९
	प्रतिशत	(२०·३)	(१८·५)	(१२·१)	(१८·०)	(७.८)	(४·३)	(१९·०)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन†	चकों की संख्या	३२१९	८०८	३०१	२६०	६१	२३	३१	४७०३
	प्रतिशत	(६८·४)	(१७·२)	(६·४)	(५·५)	(१·३)	(०·५)	(०.७)	(१००)
	क्षेत्रफल‡	६३१६	५६३६	३६६४	५२६९	२२०५	११५९	४२८४	२८५३३
	प्रतिशत	(२२·१)	(१९·८)	(१२·८)	(१८·५)	(७.७)	(४·१)	(१५·०)	(१००)
५. हैदराबाद									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	८९७	५९५	३८५	५३५	१९०	८२	११४	२७९८
	प्रतिशत	(३२·०)	(२१·३)	(१३·८)	(१९·१)	(६·८)	(२.९)	(४.१)	(१००)
	क्षेत्रफल‡	२१२५	४३८२	४७२९	११२८७	६८९०	४२४५	१३५२८	४७१८६
	प्रतिशत	(४·५)	(९·३)	(१०·०)	(२३·९)	(१४·६)	(९·०)	(२८·७)	(१००)

†मद्रास में भू-स्वामी की लापरवाही के कारण परती पड़ी जमीन और 'मामूल' परती को स्वामित्व वाली जमीन में शामिल कर लिया गया है, पर खुदकाश्त में नहीं।

‡मद्रास और हैदराबाद में क्षेत्रफल को सूखे एकड़ों में लिखा जाता है। पनियारी जमीन को स्वीकृत फार्मूले के अनुसार सूखे एकड़ों में तबदील कर लिया जाता है।

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
		५ से कम	५—१०	१०—१५	१५—३०	३०—४५	४५—६०	६० से ऊपर	योग
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	८४४	५२८	३३६	४६४	१६३	७०	९२	२४९७
	प्रतिशत ...	(३३·८)	(२१·१)	(१३·५)	(१८·६)	(६·५)	(२·८)	(३·७)	(१००)
	क्षेत्रफल‡ ...	१९८५	३८९५	४१३९	९७९१	५९०८	३६०३	९७७७	३९०९८
	प्रतिशत ...	(५·१)	(१०·१)	(१०·६)	(२५·०)	(१५.१)	(९·२)	(२५·०)	(१००)
६. मध्य भारत									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या ...	६५२	३२३	१७३	१९३	५१	१८	१९	१४२९
	प्रतिशत ...	(४५·६)	(२२·६)	(१२·१)	(१३·५)	(३·५)	(१·३)	(१·४)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	१४१४	२३२५	२१२४	४००४	१८३१	९२१	२०२४	१४६४३
	प्रतिशत ...	(९·६)	(१६·०)	(१४·५)	(२७·३)	(१२·५)	(६·३)	(१३·८)	(१००)
(ग) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	६२७	३०७	१६२	१७९	४५	१६	१६	१३५२
	प्रतिशत ...	(४६·४)	(२२·७)	(१२·०)	(१३·२)	(३·३)	(१·२)	(१·२)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	१३५२	२२०२	१९८७	३६९९	१६२८	७९९	१५१६	१३१८३
	प्रतिशत ...	(१०·३)	(१६·७)	(१५·१)	(२८·०)	(१२·३)	(६·१)	(११·५)	(१००)

‡मद्रास और हैदराबाद में क्षेत्रफल को सूखे एकड़ों में लिया जाता है। पनियारी जमीन को स्वीकृत फार्मूले के अनुसार सूखे एकड़ों में तबदील कर लिया जाता है।

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
		७. सौराष्ट्र							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	३४	४६	४६	११५	६०	२४	१८	३४३
	प्रतिशत	(९·९)	(१३·४)	(१३·४)	(३३·६)	(१७·५)	(७·०)	(५·२)	(१००)
	क्षेत्रफल	१००	३५५	५७९	२५२८	२१८२	१२२८	१५३३	८५०५
	प्रतिशत	(१·२)	(४·२)	(६·८)	(२९·७)	(२५·७)	(१४·४)	(१८·०)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	३३	४५	४५	११३	५९	२४	१८	३३७
	प्रतिशत	(९·८)	(१३·४)	(१३·४)	(३३·५)	(१७·५)	(७·१)	(५·३)	(१००)
	क्षेत्रफल	९४	३४२	५६७	२४९२	२१६१	१२१६	१४९९	८३७१
	प्रतिशत	(१·१)	(४·१)	(६·८)	(२९·८)	(२५·८)	(१४·५)	(१७·९)	(१००)
		८. अजमेर							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या ...	७८	१८	७	६	१	—	१	१११
	प्रतिशत	(७०·३)	(१६·२)	(६·३)	(५·४)	(०·९)	—	(०·९)	(१००)
	क्षेत्रफल	१३१	१२८	८८	११९	३९	१६	३०	५५१
	प्रतिशत	(२३·७)	(२३·३)	(१६·०)	(२१·६)	(७·१)	(२·९)	(५·४)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	७८	१८	७	६	१	—	—	११०
	प्रतिशत	(७०·९)	(१६·४)	(६·४)	(५·४)	(०·९)	—	—	(१००)
	क्षेत्रफल	१२९	१२६	८७	११६	३८	१६	३०	५४२
	प्रतिशत	(२३·८)	(२३·२)	(१६·१)	(२१·४)	(७·०)	(३·०)	(५·५)	(१००)

(—) नगण्य

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
—		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
९. भोपाल									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या ...	३९	२३	१७	२५	९	४	६	१२३
	प्रतिशत	(३१·७)	(१८·७)	(१३·८)	(२०·३)	(७·३)	(३·३)	(४·९)	(१००)
	क्षेत्रफल	६२	१७४	२१२	५२२	३२१	१९४	७७०	२२५५
	प्रतिशत	(२·७)	(७·७)	(९·४)	(२३·२)	(१४·२)	(८·६)	(३४·२)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	३७	२३	१६	२४	८	३	५	११६
	प्रतिशत	(३१·९)	(१९·८)	(१३·८)	(२०·७)	(६·९)	(२·६)	(४·३)	(१००)
	क्षेत्रफल	६०	१६५	२००	४९४	२९६	१७८	६३०	२०२३
	प्रतिशत	(३·०)	(८·२)	(९·९)	(२४·४)	(१४·६)	(८·८)	(३१·१)	(१००)
१०. कच्छ									
(क) स्वामित्व वाली जमीन|	चकों की संख्या ...	१६	१७	१०	१७	८	४	६	७८
	प्रतिशत	(२०·५)	(२१·७)	(१२·८)	(२१·७)	(१०·३)	(५·२)	(७·८)	(१००)
	क्षेत्रफल	४९	१२८	१२९	३७९	२९९	२१२	६२८	१८२४
	प्रतिशत	(२·७)	(७·०)	(७·१)	(२०·८)	(१६·४)	(११·६)	(३४·४)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	१४	१४	९	१५	७	४	४	६७
	प्रतिशत	(२०·८)	(२०·८)	(१३·४)	(२२·३)	(१०·४)	(५·९)	(५·९)	(१००)
	क्षेत्रफल	४३	१०७	११२	३२७	२६५	१८०	३०३	१३३७
	प्रतिशत	(३·२)	(८·०)	(८·३)	(२४·५)	(१९·८)	(१३·५)	(२२·७)	(१००)

| कृषि योग्य बेकार जमीन की पतली पट्टियों को स्वामित्व वाली जमीन में शामिल कर लिया गया है, पर खुदकाश्त वाली जमीन में नहीं।

(ग) वे राज्य जिनमें १० एकड़ या उससे अधिक जमीन के आंकड़े लिये गए।

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)					
		१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
१. पंजाब							
(क) स्वामित्व वाली जमीन ...	चकों की संख्या ...	१२१	१३१	३८	१५	१९	३२४
	क्षेत्रफल ...	१५१५	२७४३	१३७८	७५७	२३०१	८६९४
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन ...	चकों की संख्या ...	१०१	१०४	२७	१०	१०	२५२
	क्षेत्रफल ...	१२४६	२१४६	९७५	४८५	९९०	५८४२
२. मैसूर							
(क) स्वामित्व वाली जमीन ...	चकों की संख्या ...	८६	८४	२२	८	१०	२१०
	क्षेत्रफल ...	१०३९	१७३६	७७२	४१२	१०८५	५०४४
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन ...	चकों की संख्या ...	८१	७९	१९	७	८	१९४
	क्षेत्रफल ...	९६७	१६०७	६९९	३६२	८९४	४४९९
३. पेप्सू							
(क) स्वामित्व वाली जमीन ...	चकों की संख्या ...	६३	६४	१६	६	६	१५५
	क्षेत्रफल ...	७८८	१३२१	५८७	२८८	६१६	३६००
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन ...	चकों की संख्या ...	५१	५४	१३	४	४	१२६
	क्षेत्रफल ...	६४३	११०८	४६२	२२३	३६३	२७९९
४. दिल्ली							
(क) स्वामित्व वाली जमीन ...	चकों की संख्या ...	३	२	—	—	—	५
	क्षेत्रफल ...	३३	३७	११	३	६	९०

(—) नगण्य

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)					
		१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन ...	चकों की संख्या	३	२	—	—	—	५
	क्षेत्रफल	३३	३६	९	३	६	८७
५. हिमाचल प्रदेश							
(क) स्वामित्व वाली जमीन ...	चकों की संख्या	६	३	१	—	—	१०
	क्षेत्रफल	६७	६५	१४	५	१७	१६८
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन ...	चकों की संख्या	५	३	१	—	—	९
	क्षेत्रफल	६५	६१	१३	५	१६	१६०
६. विन्ध्य प्रदेश							
(क) स्वामित्व वाली जमीन ...	चकों की संख्या	५१	६४	१६	७	९	१५०
	क्षेत्रफल	६३१	१३४३	६६०	३८३	९६८	४०१५
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन ...	चकों की संख्या	५०	६३	१८	७	८	१४६
	क्षेत्रफल	६१६	१२९६	६५७	३६१	८५४	३७८४
७. कुर्ग							
(क) स्वामित्व वाली जमीन ...	चकों की संख्या ...	१	१	—	—	—	२
	क्षेत्रफल ...	६	२३	१२	६	७५	१२७
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन ...	चकों की संख्या	१	१	—	—	—	२
	क्षेत्रफल	८	२१	११	७	७०	११७

(—) नगण्य

(ग) वे राज्य जिनमें चकों सम्बन्धी आंकड़ों का संग्रह नमूना-प्रणाली के आधार पर किया गया

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
१. राजस्थान (केवल २२ चुनी हुई तहसीलों के बारे में)									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या ...	८४	३४	१६	१८	६	२	३	१६३
	प्रतिशत ...	(५१·४)	(२०·९)	(१०·१)	(११·४)	(३·४)	(१·३)	(१·५)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	१७२	२४४	२००	३८२	१९८	१०७	२६०	१५६३
	प्रतिशत ...	(११·०)	(१५·७)	(१२·८)	(२४·४)	(१२·६)	(६·८)	(१६·७)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	७६७	३२	१५	१६	४	२	२	१४८
	प्रतिशत ...	(५२·५)	(२१·५)	(१०·०)	(१०·९)	(२·६)	(१·१)	(१·१)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	१६३	२२८	१८१	३३२	१५७	८१	१४२	१२८४
	प्रतिशत ...	(१२·७)	(१७·७)	(१४·१)	(२५·८)	(१२·३)	(६·३)	(११·१)	(१००)

(हजार में)

	चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)					
	५ से कम	५–१०	१०–२५	२५–४०	४० से ऊपर	योग
२. तिरुवांकुर-कोचीन (नमूने के आधार पर)						
...ामित्व वाली जमीन						
चकों की संख्या	२१६५	८०	३०	४	३	२२८२
प्रतिशत	(९४·९)	(३·५)	(१·३)	(०·२)	(०·१)	(१००)
क्षेत्रफल	१८९७	५४१	४३२	१२६	३२७	३३२३
प्रतिशत	(५७·१)	(१६·३)	(१३·०)	(३·८)	(९·८)	(१००)

अध्याय १०

सहकारिता का विकास

सहकारिता और राष्ट्रीय आयोजन

लोकतन्त्रीय पद्धति पर आर्थिक विकास करने में सहकारिता के विविध रूपों में प्रयोग की बहुत बड़ी गुंजाइश रहती है। समाजवादी ढंग के समाज की हमारी परिकल्पना में कृषि और उद्योग दोनों में बहुत बड़ी संख्या में विकेन्द्रीकृत इकाइयों की स्थापना निहित है। इन छोटी इकाइयों को विस्तार और संगठन के लाभ मुख्यतः एकत्र होकर प्राप्त हो सकते हैं। भारत में आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन पर भी और जोर दिया जा रहा है और इसमें सहकारिता के संगठन के लिए बड़ा भारी क्षेत्र है। इसलिए नियोजित विकास के रूप में एक सहकारिता क्षेत्र की रचना हमारी राष्ट्रीय नीति का एक प्रमुख उद्देश्य है।

२. सहकारिता का सिद्धान्त किन-किन कार्यों पर लागू किया जा सकता है, इसका निर्धारण इस तथ्य द्वारा होता है कि हर एक प्राथमिक सहकारिता संगठन को इतना छोटा होना ही चाहिए जितने में उसके सदस्य एक-दूसरे को जान सकें और उन पर विश्वास कर सकें। कुछ विशेष उद्देश्यों से कई छोटे-छोटे समूह मिलकर बड़े संगठन बना सकते हैं और बनाने भी चाहिएं, परन्तु अन्ततः सहकारिता की शक्ति अपेक्षाकृत छोटे समूहों में ही है, जिनमें सब लोग एक-से हों और सक्रिय होकर काम कर सकें। यदि मूल स्तर पर मजबूत प्राथमिक इकाइयां बनी हों तो ऊंचे स्तरों पर सफल संगठन बनाए जा सकते हैं। तब सम्पूर्ण व्यवस्था एक होकर ऐसे काम उठा सकती है और ऐसी सेवाएं प्रस्तुत कर सकती है जिनमें अधिक धन और संगठन की आवश्यकता पड़ती हो। इस दृष्टि से सहकारी संगठन के लिए विशेष रूप से उपयुक्त क्षेत्र ये हैं: ग्रामीण ऋण, हाट-व्यवस्था और माल की तैयारी, ग्राम क्षेत्रों में उत्पादन के सब पक्ष, उपभोक्ता सहकारी भंडार, कारीगर और श्रम सहकार और निर्माण सहकार संस्थाएं आदि। इन क्षेत्रों में उद्देश्य यह होता है कि सहकारिता का धीरे-धीरे विकास करके उसे आर्थिक जीवन का मूल आधार बना दिया जाए।

३. सहकारिता के विकास का जिन क्षेत्रों में विशेष अवसर मिलता है, उनमें सहकारी संगठन से होने वाले फायदों का मुकाबला निजी उद्योग और सरकारी उद्योग दोनों ही नहीं कर सकते। वास्तव में सहकारिता एक ऐसा साधन है जिसका लाभ सामाजिक और व्यक्तिगत दोनों क्षेत्रों के उद्दीपकों द्वारा समाज को मिलता है। जहां वह सफल होती है वहां समाज का प्रचुर हित होता है, किन्तु उसकी एक विशेषता यह है कि उसमें कुछ जटिल मानवीय तत्व भी छिपे होते हैं और कुछ अर्थों में एक सम्पूर्णतः समाजीकृत उद्योग या एक निरे व्यक्तिगत उद्योग के मुकाबले सहकारी संगठन का सफल होना कहीं अधिक कठिन होता है। इसलिए जहां सम्भव हो वहां सहकारिता की सफलता के हेतु कुछ सार्थक उपाय करना आवश्यक है, विशेषतः राष्ट्रीय विकास की योजना में जो क्षेत्र सहकारिता के लिए चुने गए हैं उनमें तो यह आवश्यक है ही।

४. रिजर्व बैंक आफ इंडिया द्वारा आयोजित ग्राम ऋण सर्वेक्षण ने जो प्रतिवेदन तैयार किया है उसमें इस पहलू पर काफी प्रकाश डाला गया है। दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए सहकारिता के विकास के कार्यक्रम मोटे तौर पर इसी प्रतिवेदन की सिफारिशों के आधार पर बनाए गए हैं। अभी इन कार्यक्रमों में सहकारिता का सम्पूर्ण क्षेत्र समाहित हो गया है, ऐसा नहीं कहा जा सकता है। कुछ दिशाओं में आगे भी कार्यक्रम बनाना है, कुछ में लक्ष्यों तथा अन्य ब्योरों को योजना के परिपालन के साथ-साथ ध्यानपूर्वक निश्चित करके चलना है। भारत की ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण गत पचास वर्ष में सहकारिता का अधिकतर विकास कृषि ऋण के कारण ही हुआ है। समुचित शर्तों पर यथेष्ट कर्ज की व्यवस्था करना सहकारिता का निस्सन्देह एक बड़ा महत्वपूर्ण काम है। पर इस काम के प्रभाव इससे अधिक व्यापक और दूरगामी हैं। ग्राम सहकार में सबसे महत्वपूर्ण इकाई होती है — गांव। ग्राम सहकार के कार्यक्रम लागू करते समय उसके तीन पहलुओं पर विशेष ध्यान देना जरूरी है। पहले तो यह समझना है कि ऋण की व्यवस्था सहकारिता का केवल आरम्भिक कदम है। ऋण से आगे चलकर सहकारिता को गांवों के अनेक कार्यों में लागू करना होगा जिनमें सहकारिता की खेती भी शामिल होगी। सहकारिता में विकास के अडिग और अचल नियम नहीं बनाए जा सकते और हर कदम जनता के अनुभव द्वारा निश्चित होता चलता है। दूसरे यह कि गांव के प्रत्येक परिवार को कम से कम एक सहकार संस्था का सदस्य होना चाहिए। तीसरे यह कि सहकारिता आन्दोलन का उद्देश्य यह भी होना चाहिए कि गांव का प्रत्येक परिवार कर्ज चुकाने में समर्थ हो सके। इस समय उन क्षेत्रों में भी, जहां सहकारिता सबसे अधिक प्रचलित है, केवल तीस-चालीस प्रतिशत परिवार ही इस शर्त को पूरा करने में समर्थ हैं। प्राथमिक सहकारी संस्था और ग्राम पंचायतों को गांव के सब परिवारों की आवश्यकताएं पूरी करने का उद्देश्य लेकर मिलकर काम करना होगा।

५. प्राथमिक ग्राम संस्था का आकार कैसा हो, यह कर्ज के और सामान्य सहकारिता के विकास के पहलुओं से निश्चित किया जाएगा। कुल मिलाकर, जैसा ऊपर कहा जा चुका है, उद्देश्य यह है कि गांव के सब कामों में—खेती में भी—सहकारिता लागू हो जाए। जैसा कि सातवें अध्याय में बताया जा चुका है, पांच सौ या उससे कम की आबादी वाले गांव ३८०,००० से भी अधिक हैं और यह प्रश्न विचारणीय है कि कम आबादी वाले छोटे गांवों को मिलाकर लगभग एक हजार की आबादी वाली इकाइयां बनाई जाएं। ऐसे गांवों का होना आवश्यक है जो इतने छोटे तो हों कि उनमें एक होने की भावना रहे पर इतने छोटे न हों कि उनके लिए संगठित आवश्यक सेवाओं की खातिर कर्मचारी न मिल सकें। जिन बातों का विचार सुविधाजनक ग्राम इकाइयां संगठित करने में जरूरी है, उन्हीं बातों का विचार करते हुए प्राथमिक सहकारी संस्था का आकार निर्धारित किया जा सकता है। इस संस्था का कार्यक्षेत्र इतना बड़ा तो होना चाहिए कि वह सार्थक रूप से काम कर सके, पर इतना बड़ा नहीं होना चाहिए कि उसके सदस्यों में ज्ञान, पारस्परिक कर्तव्य की भावना, समाज के कमजोर वर्गों को उन्नत करने की इच्छा और प्रबन्ध समिति तथा अलग-अलग परिवारों के बीच घनिष्ठ सम्पर्क की भावना पैदा करना कठिन हो जाए। इसके बिना सहकारिता ग्राम जीवन पर कोई सच्चा प्रभाव नहीं डाल सकती। ग्राम पंचायतों की भांति सहकारी संस्थाएं भी सामाजिक एकता उत्पन्न करने की माध्यम हैं। जिस देश में आर्थिक व्यवस्था की जड़ें गांवों में हों वहां सहकारिता सहकार पद्धति पर संगठित कार्यों की कोरी शृंखला नहीं हो सकती; वहां उसका मूल उद्देश्य एक ऐसी सहकारी सामुदायिक संगठन की पद्धति तैयार करना है जो जीवन के सब पहलुओं पर प्रभाव डालती हो। ग्राम समाज के अन्दर

ही ऐसे वर्ग भी हैं जिन्हें विशेष सहायता की जरूरत है। इसलिए सहकारिता को गांवों के सब परिवारों का हित करना चाहिए और समूचे गांवों के हित में भूमि तथा अन्य साधनों का विकास और सामाजिक सेवाओं का प्रबन्ध करना चाहिए। ग्राम अर्थ-व्यवस्था में नया जीवन लाने के लिए सहकारी ग्राम प्रबन्ध की स्थापना करने का यही मूल उद्देश्य है।

६. शहरों का तेजी से विकास होने के कारण और ग्रामीण तथा औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था में सम्पर्क बढ़ते जाने के कारण शहरी क्षेत्रों में भी सहकारिता के विकास की गुंजाइश बढ़ती जा रही है। पहले के दिनों में नगर सहकारिता पर समुचित ध्यान नहीं दिया गया है। उदाहरण के लिए, फुटकर और थोक व्यापार, परिवहन, छोटे उद्योग, महाजनी, आवास और निर्माण में सहकारिता के आधार पर अच्छे संगठन बना कर बहुत कुछ उन्नति की जा सकती है। जब सहकारिता यथेष्ट विकास को प्राप्त हो जाती है तो उत्पादक, विक्रेता, उपभोक्ता और अन्य सहकारी संगठन एक परस्परावलम्बित और परस्पर सम्बद्ध सहकार क्षेत्र का अंग बन जाते हैं। इस क्षेत्र का अर्थ-व्यवस्था के अन्य क्षेत्रों से घनिष्ठ सम्पर्क होता है और ग्राम और शहरी सहकारिता में जो इस समय भेद है उसका महत्व इतना नहीं रह जाता है।

प्रगति की समीक्षा

७. जब सहकारी ऋण संस्था अधिनियम, १९०४ के अधीन सहकारिता पहले-पहल लागू की गई तो वह कर्जदारी घटाने और किफायतशारी बढ़ाने के उद्देश्य से ग्राम और शहरी क्षेत्रों में सहकारी ऋण संस्थाएं संगठित करने तक ही सीमित थी। सहकारी संस्था अधिनियम, १९१२ ने कर्ज देने के अलावा और काम करने वाली सहकारी संस्थाओं की रजिस्ट्री तथा प्राथमिक संस्थाओं के ऊंचे स्तरों पर संघबद्ध होने की अनुमति दे दी। कर्ज देने और उसके अतिरिक्त अन्य कार्यों में संलग्न सहकारिता का रूप यह है कि गांवों या शहरों में पहले प्राथमिक संस्थाएं, फिर जिलों में केन्द्रीय संगठन और राज्य स्तर पर सर्वोच्च संगठन बने हुए हैं।

८. किसानों को कर्ज देने के संगठनों का विकास दो खण्डों में हुआ है। एक वे हैं जो थोड़े समय के लिए कर्ज देते हैं, और दूसरे वे जो लम्बे समय के लिए देते हैं। पहले खण्ड में जून १९५४ में २२ राज्य सहकार बैंक, ४९९ केन्द्रीय सहकार बैंक और १२६,९५४ कृषि ऋण संस्थाएं थीं, जिनकी कुल सदस्यता ५८ लाख थी। ये सब संगठन १९५३-५४ में कुल ३९ करोड़ रुपए की मूल पूंजी से चल रहे थे। उसके अतिरिक्त इनमें करीब ७१ करोड़ रुपया जमा था और लगभग १६१ करोड़ रुपए की चालू पूंजी थी। कृषि ऋण संस्थाओं ने लगभग ३० करोड़ रुपए के नए कर्ज दिए थे। लम्बे समय के लिए किसानों को कर्ज देने वाली संस्थाएं इससे कहीं कम विकसित थीं; उनमें केवल १० केन्द्रीय और ३०४ प्राथमिक भूमि रेहन बैंक थे जिनकी कुल चालू पूंजी लगभग २४ करोड़ रुपए थी। कृषि के क्षेत्र से बाहर काम करने वाली संस्थाओं में ७१६ शहरी बैंक थे जिनकी कुल चालू पूंजी लगभग ३३ करोड़ रुपए थी, ८,३८९ सहकारी ऋण संस्थाएं थीं जिनकी सदस्यता लगभग २७ लाख थी और ३,६५१ वेतन भोगी और मजदूरी भोगी कर्मचारियों की संस्थाएं थीं।

९. पिछले कुछ वर्षों में ऋण देने के अतिरिक्त और काम करने वाले संगठनों का विकास करने पर और ज्यादा ध्यान दिया गया है, और यह नहीं कहा जा सकता कि इन कामों में सहकारिता ने सभी जगह और केवल चुने हुए केन्द्रों को छोड़कर और कहीं कोई खास

असर डाला है। कृषि हाट-व्यवस्था के क्षेत्र में जून १९५४ में १६ राज्य हाट-व्यवस्था संस्थाएं, २,१२५ हाट-व्यवस्था संघ और ६,२४० प्रायमिक हाट-व्यवस्था संस्थाएं थीं, जिन्होंने १९५३-५४ में करीब ५२ करोड़ रुपए का कुल काम किया। कुछ राज्यों में पहली योजना में सिंचाई संस्थाओं और दुग्ध संस्थाओं ने उत्साहवर्द्धक काम कर दिखाया है। १९५३-५४ में ६३७ सिंचाई संस्थाएं, ६५ दुग्ध संघ और १,४७३ प्राथमिक दुग्ध संस्थाएं थीं। १९५३-५४ में २३४ बस्ती संस्थाएं और ६०१ सहकारी कृषि संस्थाएं भी थीं। खेती से भिन्न क्षेत्र में शायद सबसे अधिक सफलता करघा बुनकर संस्थाओं की स्थापना में मिली है। इनकी संख्या १९५३-५४ में ५,७४८ थी। इन संस्थाओं के अन्तर्गत करघों की संख्या पहली योजना की अवधि में ६२६,११९ से बढ़कर लगभग १० लाख हो गई और दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक लगभग साढ़े १४ लाख हो जाएगी। उपभोक्ता सहकार में अभी तक बहुत थोड़ा काम हो सका है। प्राथमिक भण्डारों की संख्या ८,२५१ और थोक भण्डारों की संख्या ८६ है, जिन्होंने ४० करोड़ रुपए से कुछ कम का काम किया है। हाल के वर्षों में कर्ज देने से भिन्न काम करने वाली जो संस्थाएं बनी हैं उनमें २,०३६ आवास संस्थाएं, ५३६ श्रम संस्थाएं, १२४ वन्य श्रम संस्थाएं और ७८ परिवहन संस्थाएं हैं। इनमें से काफी अच्छी तरह काम कर रही हैं। इनके अलावा ४,६४३ ऐसी संस्थाएं भी हैं जो स्वास्थ्य और जीवन-स्तर उन्नत करती हैं और ये सब लगभग ग्राम क्षेत्रों में ही हैं।

ग्राम ऋण और हाट-व्यवस्था का पुनर्गठन

१०. ग्राम ऋण सर्वेक्षण की निदेशन समिति के मुख्य प्रस्ताव केन्द्रीय सरकार ने, रिजर्व बैंक आफ इंडिया ने और सहकारिता आन्दोलन के प्रतिनिधियों ने सिद्धान्त रूप में मान लिए हैं। इन्हीं के आधार पर दूसरी पंचवर्षीय योजना में विकास कार्यक्रम तैयार किए गए हैं। पहले के कार्यक्रमों में और नए कार्यक्रमों में सबसे महत्वपूर्ण अन्तर जो ग्राम सर्वेक्षण ने सुझाया है यह है कि राज्य भिन्न स्तरों पर सहकार संस्थाओं में साझेदार हो। यह अनुभव किया गया था कि इस प्रकार की वित्तीय साझेदारी से सहकारी संस्थाओं को अतिरिक्त शक्ति मिलेगी और सरकार से उन्हें सहायता और निदेश पहले से अधिक मिल सकेगा। राजकीय साझेदारी का सिद्धान्त विशेषतः शिखर पर और केन्द्रीय बैंक स्तर पर तथा सामान्यतः प्राथमिक स्तर पर लागू होगा। यह स्पष्ट कर दिया गया है कि राजकीय साझेदारी का वास्तविक आधार सहायता है, हस्तक्षेप या नियन्त्रण नहीं।

११. सहकारी संस्थाओं में राज्य की साझेदारी सुगम बनाने के लिए रिजर्व बैंक ने लम्बी अवधि वाले एक राष्ट्रीय कृषि ऋण कोष की स्थापना १० करोड़ रुपये की आरम्भिक पूंजी से कर दी है। दूसरी योजना की अवधि में इसमें ५ करोड़ रुपए वार्षिक और दिया जाएगा, ताकि १९६०-६१ तक कोश के पास ३५ करोड़ रुपये की पूंजी हो जाए। इस कोश से राज्यों को ऋण दिए जाएंगे, ताकि वे सहकारी ऋण संस्थाओं की पूंजी के रूप में हिस्से खरीद सकें। राष्ट्रीय सहकारिता विकास कोश नामक एक अन्य कोश भी केन्द्रीय सरकार स्थापित करेगी जिसमें से ऋणेतर सहकारी संस्थाओं के हिस्से खरीदने के लिए राज्य कर्ज ले सकेंगे। इस कोश से गोदाम बनाने, सहकारी संस्थाओं में कर्मचारी नियुक्त करने और सहकार विभागों का प्रशासन पुष्ट करने के लिए भी रुपया मिल सकेगा।

१२. ग्राम ऋण सर्वेक्षण में प्रस्तावित पुनर्गठन योजना की एक और विशेषता यह है कि उसके अनुसार ऋण और ऋणेतर संस्थाओं को परस्पर जोड़ दिया जाएगा ताकि कृषक भी खाद, औज़ार और अपने दैनिक इस्तेमाल की चीजें खरीदने के लिए ऋण ले सकें और अपने उत्पादन की निकासी में भी सहायता पा सकें। यह देखते हुए कि इसमें वहुत प्रकार के कार्यों का प्रवन्ध सोचा गया है, ग्राम ऋण सर्वेक्षण ने यह सिफारिश की है कि ग्राम समूहों के लिए काम करने वाली वड़ी ऋण संस्थाएं वनाई जाएं और इन्हें वनाने के लिए वर्तमान छोटी संस्थाओं को मिलाकर एक कर दिया जाए। जो नई संस्थाएं वनें, वे सर्वेक्षण की सिफारिशों के आधार पर वनें और वड़ी सहकारी संस्था के संगठन का आम रूप यह होगा कि उसमें पांच सौ सदस्य होंगे और प्रत्येक सदस्य का दायित्व उसके द्वारा दी गई पूंजी के अंकित मूल्य का पांच गुना होगा। संस्था के पास कम से कम १५,००० रुपए के करीव पूंजी होगी और वह कम से कम इतने गांवों की सेवा करेगी जो एक साथ मिलकर यथासम्भव डेढ़ लाख रुपए का वार्षिक लेन-देन करते हों। प्रस्ताव यह है कि १९६०-६१ तक इस प्रकार की १०,४०० वड़ी ऋण संस्थाएं वन जावें और हर एक में एक प्रशिक्षित संचालक रहे।

१३. ग्राम ऋण संस्थाएं चाहे नई वनी हों या पहले वाली हों, ये मण्डियों का काम करने वाली प्राथमिक हाट-व्यवस्था संस्थाओं से सम्वद्ध की जाएंगी। कृषकों को खेती-वारी के लिए ऋण संस्थाओं से कर्ज मिलेगा। उन्हें इनसे अपनी जरूरत की चीजें नकद दाम देकर या स्वीकृत सीमा के अन्दर कर्ज पर भी मिल जाया करेंगी। ऋण संस्थाएं अपने सदस्यों के उत्पादन को हाट-व्यवस्था संस्थाओं द्वारा निकालने के लिए एकत्र करेंगी। वे जितना माल चाहेंगी हाट-व्यवस्था संस्थाओं से खरीद कर अपने सदस्यों को वितरित भी करेंगी। प्राथमिक हाट-व्यवस्था संस्थाओं को संघवद्ध करके एक सर्वोच्च हाट-व्यवस्था संस्था वना दी जाएगी जो सारे राज्य के लिए काम करेगी।

१४. भूतकाल में ग्राम ऋण के विकास में शायद सवसे वड़ी वाधा यह रही है कि किसानों की एक वड़ी संख्या ऋण देने के लिए आम तौर से प्रचलित ऋण नियमों की कसौटी पर खरी नहीं उतरती थी। इस वाधा को हटाने के लिए प्रस्ताव किया गया है कि ऋण संस्थाएं उत्पादन कार्यक्रमों और प्रत्याशित फसलों के आधार पर कर्ज दे दिया करें। प्रत्येक सदस्य के लिए कर्ज लेने की एक सीमा निश्चित कर दी जाएगी और इस सीमा के भीतर वह अपनी जरूरत के हिसाव से कर्ज ले सकेगा। धन का दुरुपयोग न हो, इस खयाल से जहां तक हो सकेगा कर्ज वीज, उर्वरक इत्यादि माल की शक्ल में दिए जाएंगे। जव नकद कर्ज दिया जाएगा तो उसका भुगतान किस्तों में भी हो सकेगा। ऋण संस्थाओं के सदस्यों को पहले से इस वात पर राजी कर लिया जाएगा कि वे अपने उत्पादन की विक्री प्राथमिक हाट-व्यवस्था संस्थाओं के माध्यम से करें।

१५. ऋण और ऋणेतर संस्थाओं के कार्यों में गोदाम व्यवस्था द्वारा एक महत्वपूर्ण सम्वन्ध वना रहेगा। प्राथमिक हाट-व्यवस्था संस्थाओं और सुसंगठित ऋण संस्थाओं को वड़े पैमाने पर गोदाम वनवाने होंगे। ग्राम ऋण सर्वेक्षण की सिफारिश के अनुसार एक केन्द्रीय गोदाम निगम और अनेक राज्य गोदाम निगम स्थापित करने का प्रस्ताव है। ये निगम राष्ट्रीय सहकारिता विकास और गोदाम मण्डल के अधीन कार्य करेंगे। राजकीय गोदाम निगम की अधिकतम अधिकृत पूंजी लगभग दो करोड़ रुपए तक हो सकती है, लेकिन जारी हिस्सा पूंजी की राशि अलग-अलग राज्यों की जरूरत के हिसाव से स्थिर की जाया करेगी। प्रस्ताव के यह है कि केन्द्रीय गोदाम निगम आधी पूंजी दे और वाकी आधी

रकम राज्य सरकारें जुटाएं। अनुमान है कि सोलह गोदाम निगम खोले जाएंगे और दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में वे विभिन्न केन्द्रों में लगभग दस लाख टन की कुल भण्डार शक्ति के कोई २५० गोदाम खोलेंगे। केन्द्रीय गोदाम निगम के पास १० करोड़ रुपए की कुल पूंजी होगी। इसमें से राष्ट्रीय सहकारिता विकास और गोदाम मण्डल के माध्यम से केन्द्रीय सरकार ४ करोड़ रुपए देगी और बाकी स्टेट बैंक आफ इंडिया, अनुसूचित बैंक, सहकारी संस्थाएं आदि देंगी। केन्द्रीय गोदाम निगम बड़े-बड़े लगभग १०० गोदाम महत्वपूर्ण केन्द्रों में खोलेगा। गोदाम की रसीदें हुण्डियों का काम देंगी जिनके आधार पर लेन-देन करने वाली संस्थाएं उन लोगों को उधार देंगी जो गोदाम में अपना कृषि उत्पादन जमा करावेंगे।

१६. दूसरी पंचवर्षीय योजना में चीनी, रुई, तेल और पटसन की तैयारी के लिए विशेष रूप से और अन्य वस्तुओं की तैयारी के लिए भी सहकारी व्यवस्था का विकास काफी बड़े पैमाने पर करने का प्रबन्ध किया गया है।

१७. दूसरी पंचवर्षीय योजना में सहकारी ऋण, हाट-व्यवस्था, माल तैयार करने, गोदाम और भण्डार के जो लक्ष्य निश्चित किए गए हैं वे निम्नलिखित हैं :

ऋण :

बड़ी संस्थाओं की संख्या	१०,४००
अल्पकालीन ऋण का लक्ष्य	१५० करोड़ रुपए
मध्यमकालीन ऋण का लक्ष्य	५० करोड़ रुपए
दीर्घकालीन ऋण का लक्ष्य	२५ करोड़ रुपए

हाट-व्यवस्था और माल की तैयारी :

प्राथमिक हाट-व्यवस्था संस्थाएं जो संगठित की जाएंगी	१,८००
सहकारी चीनी फैक्टरियां	३५
सहकारी कपास धुनाई कारखाने	४८
अन्य सहकारी माल तैयार करने वाली संस्थाएं	११८

गोदाम और भण्डार :

केन्द्रीय और राज्य निगमों के गोदाम	३५०
हाट-व्यवस्था संस्थाओं के गोदाम	१,५००
बड़ी संस्थाओं के गोदाम	४,०००

सहकारी ऋण के लिए उपर्युक्त लक्ष्य वर्तमान और नई दोनों प्रकार की संस्थाओं द्वारा प्राप्त किए जाएंगे। आशा है कि सहकारी ऋण संस्थाओं की सदस्यता जो कि इस समय ६० लाख से कम है एक करोड़ ५० लाख के करीब पहुंचा दी जाएगी।

१८. ग्राम ऋण सर्वेक्षण की सिफारिश के अनुसार इम्पीरियल बैंक आफ इण्डिया को स्टेट बैंक आफ इण्डिया का रूप दिया गया। स्टेट बैंक आफ इण्डिया को कानून के अनुसार अपने आरम्भ के पांच वर्षों, या केन्द्रीय सरकार यदि इस अवधि को बढ़ाये तो उस अवधि के अन्दर, चार सौ नई शाखाएं खोलनी होंगी। शुरू में सौ जगहें चुनी गई हैं। इनके अलावा उस विकास कार्यक्रम के अनुसार जिस पर इम्पीरियल बैंक राष्ट्रीयकरण के पहले चल रहा था ३१

शाखाएं भी खोली जाएंगी। गांवों में रुपया जमा करने और उधार लेने की व्यवस्था के अतिरिक्त स्टेट बैंक रुपया भेजने और हाट-व्यवस्था के लिए बड़ी रकमें देने की सुविधाएं पहले से अधिक प्रदान कर सकेगा।

उत्पादक और अन्य सहकारी संस्थाएं

१९. उपरोक्त खण्ड में ग्राम ऋण, हाट-व्यवस्था और माल की तैयारी के विकास के जो उपाय उल्लिखित हैं, उनसे खेती में उत्पादकों की सहकारी संस्थाएं खोलने और विकसित करने में सहायता मिलेगी। वित्तीय सहकारी संस्थाएं अगर मजबूत होंगी तो औद्योगिक सहकारी संस्थाओं को भी वे अधिकाधिक सहायता देने में समर्थ होंगी। अध्याय ९ (भूमि सुधार और कृषि व्यवस्था का पुनर्गठन) में कहा गया है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के समय में ऐसे मौलिक काम करने होंगे जिनसे कृषि सहकारी संस्थाओं के विकास की मजबूत नींव पड़ जाए और दस-एक वर्ष में कृषि भूमि का एक काफी बड़ा हिस्सा सहकारिता के आधार पर जोता जाने लगे। निम्नलिखित कार्रवाइयों की सिफारिश की गई है :

(१) प्रत्येक जिले में और बाद में प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य क्षेत्र में प्रबन्ध और संगठन के और अच्छे तरीके प्रस्तुत करने के लिए प्रयोगात्मक या प्रारम्भिक योजना-कार्य चलाने चाहिएं। फिर इन केन्द्रों का विकास व्यावहारिक प्रशिक्षण केन्द्रों के रूप में होना चाहिए जहां सहकारिता, खेती और अन्य विकास कार्य के कार्यकर्ताओं को शिक्षा दी जा सके।

(२) जहां तक सम्भव हो उस जमीन में, जो जमीन रखने की अधिकतम सीमा निश्चित करने के बाद फालतू बच रहेगी, सहकारिता के आधार पर खेती की जाए।

(३) निर्धारित निम्नतम भूमि से भी छोटे खेतों को उन सहकारी संस्थाओं में शामिल कर लेना चाहिए जिन्हें फालतू भूमि दी गई है, मगर शर्त यही है कि उन भूमिखण्डों के मालिक अपनी जमीनें एकत्र करने पर राजी हों। चकबन्दी करते समय बहुत कम जमीन वाले लोगों की जमीन जहां तक सम्भव हो एकत्र भूमि के पास होनी चाहिए ताकि वे किसान जो सहकारिता की खेती में तुरन्त शामिल नहीं हो रहे हैं आगे चलकर उसमें शामिल होने के फायदे देख सकें और उसमें शामिल हो जाएं।

(४) वर्तमान सहकारी कृषि संस्थाओं की ओर जो अधिकांशतः ऐसे-वैसे काम चला रही हैं विशेष ध्यान देना चाहिए और उनमें से जितनी अधिक सम्भव हों उतनी सुधारनी चाहिएं ताकि उनकी सफलता से औरों को भी प्रेरणा मिले तथा सहकारी कृषि संस्थाएं बनें।

(५) लोगों को सहकारी कृषि संस्थाएं बनाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए और उन्हें अध्याय ९ में वर्णित तरीकों के अनुसार सहायता दी जानी चाहिए।

(६) आदिम जाति क्षेत्रों में, जहां सामुदायिक स्वामित्व अब भी माना जाता है, जैसे-जैसे विधिवत खेती का चलन हो वैसे-वैसे सहकारिता की खेती को प्रोत्साहन दिया जाए।

(७) सहकारी खेती में प्रशिक्षण देने का एक व्यापक कार्यक्रम संगठित किया जाए।

राज्यों से परामर्श करके अगले वर्ष की अवधि में दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए ब्योरेवार कृषि उत्पादक सहकारी संस्थाओं के लक्ष्य तैयार करने का विचार है।

२०. औद्योगिक सहकारी संस्थाओं की समस्याओं पर ग्रामोद्योग और लघु उद्योग शीर्षक से अध्याय २० में विचार किया गया है। ग्रामोद्योगों में शायद सहकारी उत्पादक संस्थाओं के लिए छोटे पैमाने के उद्योगों और दस्तकारियों के मुकाबले, जहां पूर्ति और हाट-व्यवस्था सहकार अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण है, ज्यादा गुंजाइश है। करघा उद्योग में औद्योगिक सहकारी संस्थाओं के बनाने के मोटे-मोटे लक्ष्य निर्धारित किए जा चुके हैं। अन्य ग्रामोद्योगों में भी जितनी जल्दी हो सके सहकारी संस्थाओं के विकास कार्यक्रम बनाये जाएं और सहकारी संस्थाओं की सहायता के लिए कर्मचारी नियुक्त किए जाएं।

२१. यद्यपि उपभोक्ता सहकारी आन्दोलन के लिए भी बहुत गुंजाइश है, तथापि अभी तक उसका विकास नहीं हो सका है। युद्ध काल में और युद्धोत्तर काल में शहरों और गांवों दोनों जगह काफ़ी बड़े पैमाने पर सहकारी विक्रय संस्थाएं बनाई गई थीं और उनका काम उन चीज़ों की बिक्री करना था जो कम मिलती थीं और जिन पर नियन्त्रण था। नियन्त्रण हट जाने के बाद इनमें से कई संस्थाएं बन्द हो गईं। केवल कुछ राज्यों को छोड़कर शहरों में सहकार विभागों ने कोई बड़ा काम नहीं किया है। शहरों में उपभोक्ता सहकार भण्डार अनेक हों तो उससे ग्राम क्षेत्रों में उपभोक्ता सहकार आन्दोलन को तथा उत्पादक सहकारी संस्थाओं को शक्ति मिलेगी। यद्यपि उपभोक्ता सहकार आन्दोलन के विकास के लक्ष्य अभी तक निर्धारित नहीं हुए हैं तो भी सिफारिश की जाती है कि इस क्षेत्र की समस्याओं पर अभी गौर से ध्यान किया जाए और कार्यक्रम तैयार किए जाएं। कुछ समय के बाद लक्ष्य निर्धारित करना भी सम्भव हो जाएगा। सहकारिता के आधार पर कृषि उत्पादन की बिक्री के लिए जो काम किए जाएंगे उनसे बाकी ग्रामीण व्यापार को सहकारिता के आधार पर पुनर्गठित करना आसान हो जाएगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि ग्राम व्यापार को अधिकाधिक व्यापारिक पद्धति पर सहकारी अभिकरणों द्वारा नियोजित किया जाता है तो ग्राम जनता के लिए सस्ते ऋण, सस्ता माल और अन्य सुविधाओं का प्रबन्ध करना पहले से या परिकल्पना से कहीं अधिक निश्चित हो जाता है। ग्रामीण व्यापार में हाट-व्यवस्था और माल की तैयारी से तथा उपभोक्ता को जरूरत की चीजें लाने से वृद्धि होगी। ग्रामीण आवश्यकताएं पूरी करने वाली अन्य वस्तुओं के व्यापार से भी मुनाफा होगा और इस प्रकार गांवों का उत्पादन बढ़ेगा तथा ग्राम जनता का कल्याण होगा। सहकारी उत्पादक संस्थाओं और उपभोक्ता सहकार का घनिष्ठ सम्पर्क होने से गांवों में आय और रोजगार बढ़ाने में महत्वपूर्ण सहायता मिलेगी।

२२. ऐसी अर्थ-व्यवस्था में जहां ग्राम्य क्षेत्रों में जन शक्ति की अधिकता है, श्रम और निर्माण संस्थाएं संगठित करने के अधिकाधिक अवसर आने लगते हैं। विकास के साथ से श्रम और निर्माण सहकारी संस्थाएं संगठित करने के अवसर बढ़ते ही जाते हैं। इस विषय में अध्याय ६ (प्रशासनिक कर्तव्य और संगठन) और अध्याय १७ (सिंचाई और बिजली) में सुझाव दिए गए हैं। सुझाव है कि अन्य विभागों के साथ मिलकर सहकारिता विभागों को यत्न करना चाहिए कि वर्तमान ठेका पद्धति का स्थान सहकारी संस्थाएं क्रमशः जिन विभागों में वे सम्बद्ध हैं ताकि प्रत्येक क्षेत्र में आय और रोजगार की दृष्टि से अधिकाधिक लाभ हो सके। जिला और ग्राम परिकल्पना में श्रम और निर्माण सहकारी संस्थाओं का ठोस आधार पर संगठन करना और

उन्हें समुचित शर्तों पर काम देना तथा आवश्यक निदेशन और निरीक्षण की व्यवस्था करना एक मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

२३. सहकारी आवास संस्थाओं के योग और उन उपायों के बारे में जो ग्राम और शहरी क्षेत्रों में उनके विकास के लिए किए जा सकते हैं, अध्याय २६ (आवास) में विचार किया गया है।

प्रशिक्षण और संगठन

२४. इस अध्याय में वर्णित तथा दूसरी पंचवर्षीय योजना की प्रगति के साथ-साथ नियोजित होने वाले सहकारिता के विकास कार्यक्रमों के लिए जिन कर्मचारियों की आवश्यकता होगी उनके प्रशिक्षण के लिए भी व्यापक कार्यक्रम लागू करने होंगे। अनुमान है कि २५,००० से अधिक व्यक्तियों को ग्राम ऋण, हाट-व्यवस्था और माल तैयार करने के कार्यक्रमों में विशेष कर्तव्यों के लिए तथा प्रशासनिक और अन्य प्रौद्योगिक कार्यों के लिए जरूरत पड़ेगी। यदि सहकारिता विकास के सब पहलुओं को लिया जाए तो इससे भी अधिक संख्या की आवश्यकता पड़ सकती है। सहकारिता की सफलता बहुत करके इसी बात पर निर्भर है कि आरम्भिक काल के बाद सहकारी संगठन अपने कर्तव्यों को अपने सदस्यों की हानि किए बिना अथवा सरकार पर अतिरिक्त बोझ डाले बिना पूरा करने लगें। इसलिए यह बहुत जरूरी है कि सहकारिता विभाग और सहकारी संस्थाएं ऐसे व्यक्तियों द्वारा संचालित हों जो सहकारिता के सिद्धान्तों में विश्वास रखते हों तथा उन्हें कार्यरूप देने में व्यावहारिक योग्यता और अनुभव रखते हों। इतना ही जरूरी यह भी है कि प्रत्येक राज्य में सामान्य जनता को सहकारिता के सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाए और प्रत्येक समाज क प्रमुख व्यक्तियों को प्रशिक्षण के विशेष अवसर मिलें जिससे कि वे सहकारिता आन्दोलन में ज्यादा बड़े दायित्व उठा सकें।

२५. इन सब बातों पर पहली पंचवर्षीय योजना में भी जोर दिया गया था। १९५३ में भारत सरकार और रिजर्व बैंक ने मिलकर सहकारिता प्रशिक्षण की एक केन्द्रीय समिति बनाई थी और उसे सहकारिता कर्मचारियों क लिए आवश्यक प्रशिक्षण सुविधाएं जुटाने का दायित्व सौंपा था। इस केन्द्रीय समिति के निदेशन में पूना का सहकारिता विद्यालय सहकारिता विभागों और संस्थाओं के ऊंचे अधिकारियों के लिए छः महीने का एक पाठ्यक्रम चलाता है। मध्यम श्रेणी के कर्मचारियों के शिक्षण के लिए पूना, रांची, मेरठ, मद्रास और इन्दौर में पांच प्रादेशिक सहकारिता प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए हैं। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कायक्षेत्रों की आवश्यकता पूरी करने के लिए खण्ड स्तर के चार हजार सहकारिता अधिकारियों को प्रशिक्षण देने के लिए आठ विशेष केन्द्र खोले गए हैं। अधीनस्थ कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए राज्य सरकारें आवश्यक सुविधाएं प्रदान कर रही हैं और केन्द्रीय सरकार इसका खर्च बंटा रही है। सहकारिता संगठन के सदस्यों और पदाधिकारियों के प्रशिक्षण के लिए सरकार की सहायता से और सहकारिता प्रशिक्षण केन्द्रीय समिति द्वारा प्रस्तावित कार्यक्रमों के अनुसार अखिल भारत सहकारिता संघ और राज्य सहकारिता संघ इत्यादि कक्षाएं संगठित करेंगे। इन पहलुओं पर विधिवत ब्योरेवार जोर देना जरूरी है। सहकारिता की सफलता पर चूंकि बहुत कुछ निर्भर है, इसलिए यह सिफारिश की जाती है कि सहकारिता प्रशिक्षण के लिए स्थापित विशेष संस्थाओं के अतिरिक्त राज्य सरकार और विश्वविद्यालय विभिन्न स्तरों पर शिक्षा के पाठ्यक्रमों में सहकारिता के विषय को भी शामिल करन के उपाय सोचें।

२६. ग्राम ऋण और हाट-व्यवस्था के पुनर्गठन का जो कार्यक्रम ऊपर बताया गया है, वह सहकारिता और कृषि विभागों तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा के घनिष्ठ पारस्परिक सहयोग से लागू किया जाएगा। ग्राम स्तर कार्यकर्ता (ग्राम सेवक) प्रत्येक परिवार से परिचित होने के कारण सहकारिता विभाग के कर्मचारियों और गांवों के लोगों से सार्थक सम्पर्क रख सकता है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में सरकार ने जो प्रशासनिक कार्य अपने जिम्मे लिये हैं उनमें से अधिकतम कार्यों का दायित्व राज्यों के सहकारिता विभागों पर पड़ेगा। अतएव यह आवश्यक है कि इन विभागों में समुचित कर्मचारी हों और वे भली-भांति संगठित हों। कुछ वर्ष पहले तक रीति यह थी कि ग्रामीण जनता से विशेष रुचि रखने वाले ऊंचे और अनुभवी कर्मचारियों को संस्थाओं के रजिस्ट्रार पद पर चुना जाता था। कुछ वर्षों से इस रीति में अन्तर आ गया है और आजकल जो लोग चुने जाते हैं उन्हें थोड़े-थोड़े अन्तर के बाद अन्य पदों पर भेज दिया जाता है। फलतः आवश्यक गुणों और अनुभवों का विकास नहीं हो पाता। सहकारिता को सफल बनाने के लिए, सब स्तर के कर्मचारियों पर और विशेषतः उन पर जो उच्चाधिकार की जगहों पर हैं, प्रशासनिक योग्यता और अनुभव, सहकारिता आन्दोलन में आस्था, जनता से पूरा लगाव या तादात्म्य और साथ ही साथ व्यावहारिक ब्यौरों की ओर खास तौर से ध्यान देने की शक्ति प्रदर्शित करने का दायित्व आ पड़ा है। प्रत्येक जिले में सहकारी संस्थाओं का विकास करने का अधिकांश भार जिला सहकारिता अफसर को उठाना होगा, जिसे साधारणतः सहायक रजिस्ट्रार कहा जाता है। इस कर्मचारी को जिले की अर्थ-व्यवस्था से तथा जिला योजना में शामिल विभिन्न विभागों के कार्यक्रमों से पूर्ण परिचय प्राप्त करना होगा। उसे पता लगाना चाहिए कि सहकारिता पद्धति के विकास के विशेष अवसर किन दिशाओं में प्राप्त हो सकते हैं, तथा जिले में कार्यरत अन्य विभागों की सहायता से सहकारिता का विस्तार ठोस और स्थायी आधार पर करना चाहिए। उसकी सफलता बहुत हद तक इस बात पर निर्भर होगी कि वह जिले में सहकारिता ऋण पद्धति का संगठन और पुष्टीकरण किस प्रकार से करता है और कराता है। उसे किसानों, कारीगरों तथा अन्य लोगों को सहायता देने वाले विभिन्न सरकारी विभागों से एवं केन्द्रीय सहकारिता बैंक, स्टेट बैंक आफ इंडिया और अन्य संस्थाओं से घनिष्ठतम सम्पर्क रखना चाहिए। उदाहरण के लिए, यह अच्छा होगा कि प्रत्येक जिले का सहकारिता विभाग, कृषि विभाग और राष्ट्रीय विस्तार सेवा संगठन के सहयोग से प्रत्येक वर्ष अल्पकालीन ऋण की व्यवस्था का एक ब्योरेवार आयोजन तैयार किया करे। फसल के पहले ही विभिन्न फसलों के लिए कर्जों की प्रतिमान श्रेणियां निर्धारित की जाएं और कर्ज के आवेदनों की मंजूरी दे दी जाए, ताकि बीजों, उर्वरकों आदि के लिए समय रहते ही कर्ज दिया जा सकता है। अन्त में यह भी कह देना उचित होगा कि ऋण के अलावा अन्य दिशाओं में, जैसे खेती, उपभोक्ता भण्डार, औद्योगिक संस्थाएं, श्रम और निर्माण की सहकारी संस्थाएं, मकान इत्यादि में, सहकारी संस्थाओं का संगठन करने के लिए जिला सहकारिता कर्मचारियों की संख्या में काफी वृद्धि करनी होगी।

भूमि सुधार और सहकारिता ऋण

२७. भूमि सुधार की सफलता और सहकारिता की सफलता में गहरा सम्बन्ध है, पर इसे बहुधा समझा नहीं जाता। सहकारिता की पूर्ण सफलता के लिए यह आवश्यक है कि भूमि व्यवस्था का पुनर्गठन तुरन्त कर दिया जाए ताकि समाज की उत्पादन शक्ति बढ़ाने और

शोषण बढ़ाने के कारण दूर हो जाएं। इस प्रकार भूमि सुधार कार्यक्रमों के द्वारा सहकारिता आन्दोलन की उन्नति में बहुत सहायता मिलेगी। होता यह है कि भूमि सुधार हो जाने से छोटे-छोटे किसानों की संख्या बढ़ जाती है। ज्यादा भूमि या काफी फालतू भूमि रखने वाले किसान कम हो जाते हैं और नए किसानों को बहुत अधिक ऋण की आवश्यकता पड़ती है। साथ ही जैसे-जैसे राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम सर्वत्र स्थापित होते जाते हैं और ग्रामीण जनता विकास कार्यक्रमों में अधिकाधिक हिस्सा लेने के लिए प्रस्तुत हो जाती है, उसकी ऋण और वित्त सम्बन्धी आवश्यकताएं बहुत बढ़ जाती हैं। सहकारी संस्थाएं भी वे माध्यम हैं जिनसे कि गांवों के बहुत-से कामकाज पुनर्गठित किए जा सकते हैं और उनके लिए धन दिया जा सकता है। इसलिए यह जरूरी है कि भूमि सुधार कार्यक्रम तैयार करते समय इस बात की सावधानी बरती जाए कि उसके उद्देश्य भी पूरे हो जाएं और सहकारिता ऋण संस्थाओं को किसी प्रकार की क्षति न पहुंचने पाए जिससे उनकी वित्तीय स्थिति कमजोर होती हो।

२८. सहकारिता ऋण पर भूमि सुधार का प्रभाव दो दृष्टियों से देखा जा सकता है—एक तो पुराने कर्जों की और दूसरे भावी कर्जों की दृष्टि से। जहां तक पुराने कर्जों का सवाल है जो भूमि रेहन रखकर दिए गए हैं, सहकारी वित्त संस्थाओं को अदा किए जाने वाला धन उस मुआवजे के पहले आना चाहिए जो भूमि के व्यक्तिगत स्वामियों को दिया जाने वाला हो। उधार चुकता करने का जिम्मा उन व्यक्तियों पर पड़ना चाहिए जिन्हें भूमि के अधिकार हस्तान्तरित कर दिए गए हैं। इन दो साधनों से सहकारी वित्त संस्थाओं को धन प्राप्त होने के बाद भी सम्भव है कि सहकारी संस्थाएं घाटे में रहें। उदाहरण के लिए जमीन का मूल्य घट जाने से उन्हें घाटा हो सकता है। ऐसी दशा में सहकारी संस्थाओं को वित्तीय दृष्टि से पुष्ट बनाए रखने के लिए राज्य सरकारों को आवश्यक सहायता देनी चाहिए। इन बातों का महत्व भूमि रेहन बैंकों के सिलसिले में और भी बढ़ जाता है, क्योंकि वे लोगों को पुराने कर्ज चुकाने के लिए पैसा दे चुके हैं।

२९. भावी कार्यों के सम्बन्ध में तीन पहलुओं का उल्लेख किया जा सकता है। पहले तो यह मान लिया जाना चाहिए कि कृषि उत्पादन के कार्यक्रमों से सम्बद्ध असाधारण कारणों को छोड़कर सहकारी संस्थाएं और किसी कारण से नहीं केवल व्यक्तिगत खेती के क्षेत्र को देखकर कर्ज देंगी। दूसरे, मध्यकालीन और दीर्घकालीन ऋण उन पट्टेदारों को देने के लिए जो भूमि सुधार के परिणामस्वरूप राज्य से सीधे सम्पर्क में आ गए हैं सहकारी वित्त संस्थाओं के नाम जमीन हस्तान्तरित करने का अधिकार दिया जाना चाहिए। तीसरे, उस भूमि के सम्बन्ध में जो सहकारी वित्त संस्थाओं के अधिकार में उनके कार्य के दौरान आ गई हो, खेती की जमीन की अधिकतम सीमा का नियन्त्रण या पट्टेदारों के द्वारा या बटाई पर खेती कराने के नियन्त्रण लागू न किए जाएं। सहकारी संस्थाओं को वह जमीन बाजार भाव पर जिसे चाहे उसके हाथ बेच देने का अधिकार होना चाहिए; शर्त केवल यह होनी चाहिए कि खरीदने वाला जमीन पर स्वयं खेती करेगा और खरीद या हस्तान्तरण के परिणामस्वरूप उसकी जमीन कानून द्वारा निश्चित सीमा से अधिक नहीं बढ़ेगी।

अध्याय ११

सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार

ग्रामवासियों के लिए जब सबसे अधिक प्रभाव डालने वाले विकास कार्यों में सामुदायिक योजना कार्यों और राष्ट्रीय विस्तार सेवा का स्थान प्रमुख है। [illegible] इस आन्दोलन के तीन पहलुओं पर जोर डाला गया है। पहले तो राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों को ऐसे प्रकार प्रबन्ध के रूप माना जाता है जिससे [illegible] एक दल की भांति, पहले से निर्धारित और समन्वित कार्यक्रमों का [illegible]। सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रमों में [illegible] पक्षों में सुधार करने के एक व्यापक कार्यक्रम का [illegible]। दूसरी [illegible] कि इस सम्बन्ध कार्य में यह जरूरी है कि ग्रामवासियों को [illegible] करने के लिए एक साथ जुटे हैं इनके लिए एक नए [illegible] दी जाए और वे अपने कल्याण के लिए [illegible] पूरा करने में अधिकाधिक जागरूकता और उत्तरदायित्व से काम [illegible]। इस आन्दोलन से उन्हें नए अवसर प्राप्त होंगे और बदले में [illegible] उसे एक विशिष्ट रूप देते हुए उसके क्षेत्र और प्रभाव को [illegible] प्राप्त करना और विस्तार करना ही वे सिद्धान्त हैं जिन पर यह आन्दोलन [illegible]। तीसरी बात यह है कि इस आन्दोलन में शीघ्र ही [illegible] विशेषतः उनको जो कि वंचित हैं—इन व्यक्तियों का [illegible] अन्य वर्गों से समानता का स्थान प्राप्त करने का [illegible] हुए यह कहा जाता है कि राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना [illegible] के संचालन का मूल उद्देश्य है।

२. पहली पंचवर्षीय योजना में सामुदायिक विकास को एक [illegible] और राष्ट्रीय विस्तार को उसका अभिकरण माना गया था जो कि गांवों के [illegible] और [illegible] के लिए लागू की जाने वाली थी। [illegible] पूरे हो जाने पर सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार [illegible] अनुभव और गति से कार्यान्वित होने लगता है। [illegible] जाए पूरी हो सकता है, [illegible] जाते हैं, उनमें से कभी कभी [illegible] और दोनों की दृष्टि से [illegible] धीरे-धीरे, गांवों की समस्याएं एक [illegible] दोनों के कार्य एक-दूसरे से पृथक हो जाते हैं। [illegible] कार्य के स्तर ही राष्ट्रीय योजना [illegible] पूर्ति करने में सहायक होती है। [illegible]

अन्तर्गत उन परिवर्तनों की अधिकाधिक अभिव्यक्ति होती जाए जो समग्र योजना की परिकल्पना करते समय हमारी दृष्टि में होते रहे हैं, जैसे पहले की अपेक्षा अन्य बातों पर अधिक जोर देना, या किन्हीं अन्य कार्यों को अधिक महत्वपूर्ण मानना इत्यादि। इसलिए एक चौथाई ग्रामीण जनता के स्थान पर अब लगभग समस्त ग्रामीण जनता के लिए कार्यक्रमों की व्यवस्था करना उस परिवर्तन का केवल एक पहलू है जो कि इनको अधिक प्रगाढ़ और व्यापक बनाने के लिए किया जाना है। कृषि अर्थ-व्यवस्था को अनेक दिशाओं में प्रतिफलित करने के लिए और कृषि उत्पादन बढ़ाने में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों का योग बहुत विशाल होना चाहिए। उन्हें दक्ष कारीगरों की संख्या बढ़ाकर स्थानिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नई-नई विधियां आविष्कार करने की प्रवृत्ति में बहुत वृद्धि करनी चाहिए, क्योंकि बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण करने के लिए यह जरूरी है। अविकसित देशों में सामाजिक परिवर्तन के बिना कोई ठोस आर्थिक विकास नहीं हो सकता। सामुदायिक विकास कार्यक्रम को भूमि सुधार करके, भूमिहीन और वंचित जनों की आवश्यकताएं समझ करके, ग्राम संगठन पुष्ट करके, स्थानिक नेतृत्व का विकास करके और सहकारिता आन्दोलन को आगे बढ़ाकर देश में एक संपृक्त ग्राम समाज तथा एक विकासशील ग्राम अर्थ-व्यवस्था को जन्म देने में निश्चित रूप से समर्थ हो जाना चाहिए।

३. सारे देश पर छाए हुए ऐसे प्रभावशाली कार्यक्रम के लिए यह जरूरी है कि उसकी प्रत्येक मंजिल पर उसके काम का ध्यान से और निरपेक्ष भाव से अध्ययन किया जाए। राष्ट्रीय विकास और सामुदायिक योजनाएं सर्वप्रथम स्थानिक आवश्यकताओं, समस्याओं और साधनों के सम्बन्ध में, राष्ट्रीय और राज्य योजनाओं की नीति, उद्देश्य और कार्यक्रमों को सम्पन्न करने के साधन हैं। एक ओर तो प्रत्येक योजना क्षेत्र के कार्यक्रम उस जिला योजना के अंग होते हैं जिसका वर्णन अध्याय ७ में किया जा चुका है, दूसरी ओर राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों में प्रगाढ़ कार्य करने की भी आवश्यकता होती है—खास तौर से खेती और उससे सम्बद्ध सहकारिता, भूमि सुधार, ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग, ग्रामों में बिजली लगाना, आरोग्य, शिक्षा, आवास एवं पिछड़े वर्गों के कार्यक्रमों के सम्बन्ध में। इस प्रकार राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के सम्पादन से ही यह स्पष्ट हो सकता है कि विकास खण्ड के बजट में निर्धारित विशिष्ट कार्य किस हद तक पूरे किए जा रहे हैं। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह बात है कि उन कार्यों का प्रभाव ग्राम स्तर पर, राष्ट्रीय और राज्य योजनाओं की कार्य पद्धति और उनसे प्राप्य परिणामों पर बहुत ही ज्यादा पड़ता है। सामुदायिक योजना कार्य और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों के कार्य के सम्बन्ध में प्रकाशित योजना आयोग के कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन की तीसरी मूल्यांकन रिपोर्ट के वक्तव्यों को इन कार्यक्रमों से सम्बद्ध प्रत्येक व्यक्ति को इसी संदर्भ में गम्भीरता से समझना चाहिए।

४. राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्य में कार्य-सम्पादन की इकाई विकास खण्ड है जो कि औसतन १५० से १७० वर्ग मील में बसे हुए १०० गांवों में रहने वाले ६० हजार से ७० हजार जनों का प्रतिनिधित्व करता है। अक्तूबर १९५२ से, अर्थात आरम्भ से लेकर अब तक, कुल १,२०० विकास खण्ड खोले जा चुके हैं जिनमें से ३०० सामुदायिक योजना कार्य और ९०० राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अधीन हैं। इन ९०० में से ४०० विकास खण्ड कालान्तर में वैसा ही अधिक प्रगाढ़ विकास करने लगे हैं जैसा कि सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में होता है। इस समय प्रचलित पद्धति के अनुसार प्रत्येक नया

विकास खण्ड सर्वप्रथम राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अधीन रखा जाता है जिसके लिए पहली पंचवर्षीय योजना में ४,५०,००० रुपए का कार्यक्रम बजट रखा गया था। यह रुपया उस रुपए के अतिरिक्त था जिसकी राष्ट्रीय विस्तार सेवा में अल्पकालीन ऋण देने के सम्बन्ध में विशेष व्यवस्था की गई थी। यह ऋण इसलिए देने का प्रबन्ध किया गया था कि विस्तार सेवा कर्मचारियों के प्रयत्नों द्वारा इस धन का नियोजित उपयोग होकर विस्तार क्षेत्रों में कृषि उत्पादन बढ़े। राष्ट्रीय विस्तार कार्यों में से कुछ को एक-दो साल की अवधि के बाद तीन साल का समय विकास के लिए और मिलेगा और उस अवधि में पन्द्रह लाख रुपए के विकास खण्ड बजट की सहायता से बाकी सामुदायिक कार्यक्रम पूरे किए जाएंगे। इस प्रकार राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम एक सम्पूर्ण कार्यक्रम के दो अंग बन गए हैं और विकास प्रशासन की सामान्य पद्धति ने राष्ट्रीय विस्तार सेवा का रूप ले लिया है। प्रत्येक वर्ष आरम्भ होने वाले राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास खण्ड अलग-अलग माने जाते हैं और प्रत्येक वर्ष उनकी प्रगति और संख्या का अलग-अलग हिसाब रखा जाता है। पहली योजना में जो १,२०० खण्ड खोले गए थे उनका वितरण, उनकी जनसंख्या और ग्राम संख्या का विवरण नीचे दिया जाता है।

पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में आरम्भ किए गये विकासखण्ड

	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६	कुल
विकास खण्ड					
सामुदायिक विकास	२४७	५३	—	—	३००
राष्ट्रीय विस्तार	—	२५१	२५३	३९६	९००
कुल	२४७	३०४	२५३	३९६	१२,००
ग्रामसंख्या					
सामुदायिक विकास	२५,२६	४७,६९३	—	—	३२,९५७
राष्ट्रीय विकास	—	२५,१००	२५,३००	३९,६००	९०,०००
कुल	२५,२६४	३२,७९३	२५,३००	३९,६००	१,२२,९५७
जनसंख्या (करोड़)					
सामुदायिक विकास	१·६४	·४	—	—	२·०४
राष्ट्रीय विकास	—	१·६६	१·६७	२·६१	५·९४
कुल	१·६४	२·०६	१·६७	२·६१	७·९८

इस प्रकार पहली पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत लगभग १,२३,००० ग्रामों के रहने वाले लगभग आठ करोड़ जनों के लिए सम्बद्ध विकास कार्यक्रम जारी हो चुके होंगे। जिन गांवों में अभी राष्ट्रीय विस्तार सेवा या सामुदायिक विकास कार्यक्रम नहीं लागू हुए हैं, उनमें स्थानिक विकास तथा कृषि सम्बन्धी अनेक कार्यक्रम सम्पादित किए गए हैं।

५. जैसा कि पहले कहा जा चुका है, राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों में जो कुछ काम किया जाता है वह अलग-अलग विकास क्षेत्रों के अलग-अलग सम्पूर्ण कार्य-

क्रमों का एक अभिन्न हिस्सा होता है। यह जरूरी है कि प्रत्येक राज्य में इस बात पर और ज्यादा जोर दिया जाए कि ग्रामीण कार्यक्रमों की समीक्षा तथा उनके परिणामों का मूल्यांकन करने के तरीके ठीक होने चाहिएं। प्राप्य जानकारी से मालूम होता है कि छोटी-मोटी सिंचाई, रासायनिक उर्वरक और सुधरे हुए बीज के वितरण के कार्यक्रम राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास क्षेत्रों में अधिकांश अन्य क्षेत्रों से कहीं अधिक लागू किए गए हैं। जनता ने अनेक प्रकार के कार्यों में योग दिया है और इससे उसे अपनी योग्यता तथा कुछ सहायता पाकर स्थानिक समस्याओं को हल करने में अपनी योग्यता में पहले से अधिक विश्वास हो गया है। इस तरह योजना क्षेत्रों में १४,००० नए स्कूलों की स्थापना, ५,१५४ प्राथमिक स्कूलों का बुनियादी स्कूलों में परिवर्तन, ३५,००० प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों की स्थापना जो ७,७३,००० प्रौढ़ों को साक्षर बना चुके हैं, ४,०६९ मील पक्की और २८,००० मील कच्ची सड़कों का निर्माण और ८०,००० ग्राम शौचालयों का निर्माण उस स्थानिक विकास का उदाहरण हैं जिसका प्रभाव समाज पर गहरा पड़ेगा। इन सबमें अधिकांश प्रयत्न जनता ने किया है और सरकारी अभिकरण जिनमें विस्तार कार्यकर्ता मुख्य रहे हैं निदेशन का काम करते रहे हैं। यदि सहयोग और ग्रामोद्योग के क्षेत्र में सफलता बहुत कम मिली है तो इसकी कुछ वजह यह भी है कि इन क्षेत्रों में सारे देश को देखा जाए तो कहना पड़ेगा कि सहकारिता और नए कामों के अवसर अभी भी समुचित रूप से संगठित किए जाने हैं।

६. तीसरी मूल्यांकन रिपोर्ट ने कार्यक्रमों के व्यावहारिक सम्पादन की कुछ बातों पर ध्यान दिलाया है और इन पर राज्य सरकारें और जिला अधिकारी निश्चय ही गौर से विचार करेंगे। इनमें से अधिक महत्वपूर्ण ये हैं :

(१) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम आशा के अनुरूप सफल हो सकें, इसके लिए सब स्तरों पर और सब शाखाओं में विभिन्न प्रौद्योगिक विभागों को पुष्ट करना बहुत आवश्यक है। अनेक जगह जिला और क्षेत्र स्तर पर विभागीय संगठनों की संख्या और कार्यकुशलता की दृष्टि से सुधार की बहुत अपेक्षा है।

(२) शोध की सुविधाएं आम तौर से बढ़ानी चाहिएं और साथ-साथ क्षेत्र के निकट स्थित शोध केन्द्रों को और मजबूत करना चाहिए। क्षेत्र से शोध केन्द्र को सूचना और जानकारी का संचार और सुगम होना चाहिए।

(३) खण्ड स्तर पर विविध विषयों से सम्बद्ध विशेषज्ञों का नियन्त्रण खण्ड विकास अधिकारी (जिनका प्रशासनिक नियन्त्रण कभी-कभी सीमा के बाहर भी जा सकता है) और जिला स्तर पर नियुक्त प्रौद्योगिक अधिकारियों दोनों के द्वारा होता है और वह तरीका अभी तक संतोषजनक रूप से चल नहीं पाया है। कई बार ऐसा हुआ है कि विभागीय अधिकारियों ने राष्ट्रीय विस्तार या सामुदायिक योजना कार्य को अपना ही अभिकरण मानकर चलने के बजाय उन क्षेत्रों से भिन्न क्षेत्रों में अपना ध्यान केन्द्रित किया है जिनमें उन्हें अपने विशेषज्ञ कर्मचारियों पर अपेक्षाकृत अधिक प्रत्यक्ष नियन्त्रण था। स्पष्ट ही इस बात की बहुत ज्यादा जरूरत है कि राज्य, जिला और खण्ड स्तर पर प्रशासनिक और प्रौद्योगिक समन्वय सही ढंग से हो क्योंकि अगले कुछ वर्षों में राष्ट्रीय विस्तार सेवा समस्त ग्रामीण जनता तक पहुंचने वाली है।

(४) निर्माण कार्यों में ग्राम स्तर कार्यकर्ताओं (ग्राम सेवकों) का, जिन्हें मूलतः कृषि और कृषि विस्तार की शिक्षा दी गई है और जिनका सर्वप्रमुख कर्तव्य कृषि उत्पादन बढ़ाना है, अधिकाधिक समय लगने लगा है।

(५) ग्राम पंचायतों को निरन्तर निदेशन और सक्रिय सहायता मिलती रहनी चाहिए ताकि वे अपने बढ़ते हुए दायित्वों को पूरा कर सकें।

(६) कार्यक्रमों के सम्पादन में भौतिक और वित्तीय सफलता पर बहुत ज्यादा जोर दिया जाता रहा है, अर्थात लक्ष्य सिद्ध कर लेना, खर्च कर देना, मकान खड़े कर देना इत्यादि अधिक महत्वपूर्ण रहा है और जनता को जीवन की नई पद्धति सिखाने और राष्ट्रीय विस्तार सेवा को राष्ट्रीय और राज्य योजनाओं में निहित विकास और सुधार का सार्थक साधन बनाने की ओर कम ध्यान दिया गया है।

७. ग्रामीण योजनाओं की परिकल्पना और सम्पादन में जनता का सहयोग इस आन्दोलन का एक मौलिक तत्व है और इस दिशा में जो कुछ सफलता मिली है वह उत्साहवर्द्धक है। जब-जब प्रशासन की ओर से रवैया सही रखा गया है तो जनता अपना काम पूरा करने के लिए खुशी-खुशी आगे आई है। जनता ने राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य क्षेत्रों में जो कुछ योग दिया है उसका मूल्य सरकार द्वारा किए गए व्यय का लगभग ५६ प्रतिशत के बराबर है। जनता का सहयोग प्राप्त करने में पंचायत और सहकारी संस्थाओं जैसे स्थानिक संगठनों का इस्तेमाल किया गया है, पर यह माना जाता है कि इस दिशा में और भी कुछ करना है। कुछ क्षेत्रों में विकास कार्य तदर्थ गैर-निर्वाचित संस्थाओं, जैसे ग्राम विकास मंडलों आदि को सौंप दिए गए हैं। ऐसी संस्थाओं ने कुल मिलाकर काफी व्यावहारिक काम किया है। फिर भी जैसा कि दूसरी और तीसरी सामुदायिक कार्य मूल्यांकन रिपोर्ट में कहा गया है, ग्रामों में मजबूत मूल संस्थान स्थापित करने, उनके साधन सुदृढ़ बनाने और उन्हें निरन्तर निदेश, अवसर और अनुभव का लाभ देते रहने पर और अधिक जोर देना होगा।

८. पहली योजना की अवधि में सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रमों को पूरा करते समय समुचित प्रशासनिक व्यवस्था करना, सही प्रथाओं की स्थापना करना, कर्मचारियों को प्रशिक्षित करना और सरकारी और गैर-सरकारी अभिकरणों के बीच दिन-प्रति-दिन का सहयोग उपलब्ध करना एक बड़ा भारी और जरूरी काम रहा है। इन दिशाओं में जो प्रगति की जा सकी है, उसी के आधार पर दूसरी पंचवर्षीय योजना में पहले से अधिक प्रयत्न करना सोचा गया है। उस प्रगति से यह भी मालूम हुआ है कि किन दिशाओं में और अधिक ध्यान देने तथा पहले से अच्छा प्रबन्ध करने की जरूरत है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि यद्यपि कुछ बातों को दूर करना बाकी है (जिनका उल्लेख जिला विकास प्रशासन के अध्याय में किया गया है), तथापि जिलों में प्रशासन के अन्दर समन्वय की जो पद्धति प्रकट हुई है वह काफी अच्छी साबित हुई है। जिला प्रशासन दिन-दिन एक लोकहितकारी प्रशासन के अनुरूप कर्तव्य पालन करता जा रहा है। पहली योजना के अन्त में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों में संलग्न कर्मचारियों की संख्या ८०,००० से अधिक थी।

९. कई प्रकार के कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने के कार्यक्रम बड़े पैमाने पर संगठित किए गए हैं। ग्राम स्तर कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए १९५२ में ३४ विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र संगठित

किए गए और इस समय ऐसे ४३ केन्द्र काम कर रहे हैं जिनमें प्रति वर्ष लगभग ५,००० कार्यकर्ता तैयार किए जाते हैं। बहुत बड़ी संख्या में ऐसी संस्थाएं भी हैं जिनमें उन्हें कृषि की बुनियादी शिक्षा दी जाती है—इनमें ३० नए कृषि बुनयादी स्कूल, वर्तमान प्रशिक्षण केन्द्रों से सम्बद्ध १८ कृषि विभाग और अनेक मान्यता-प्राप्त संस्थाएं हैं। ग्राम स्तर कार्यकर्त्रियों (ग्राम सेविकाओं) के प्रशिक्षण के लिए विस्तार प्रशिक्षण केन्द्रों में २५ गृह अर्थशास्त्र विभाग और दो सहायक गृह अर्थशास्त्र कक्षाएं खोली गई हैं। नर्सों और दाइयों की जो कमी है उसे पूरा करने के लिए सहायक नर्सों-दाइयों के प्रशिक्षण के वास्ते १८ संस्थाओं को सहायता दी जा रही है और आरोग्य निरीक्षिकाओं के प्रशिक्षण के लिए ९ तथा दाइयों के प्रशिक्षण के लिए १२ स्कूल स्वीकृत किए गए हैं। सहकारिता अधिकारियों के शिक्षण का प्रबन्ध सहकारिता प्रशिक्षण की केन्द्रीय समिति के आयोजन में किया गया है तथा ग्राम और छोटे उद्योगों के कर्मचारियों के प्रशिक्षण का प्रबन्ध खादी और ग्रामोद्योग मंडल एवं छोटे उद्योग मंडल के सहयोग से किया गया है। खण्ड विकास अधिकारियों के प्रशिक्षण के लिए तीन और समाज शिक्षा संगठनकर्ताओं के लिए नौ केन्द्र खोले गए हैं। वर्तमान केन्द्रों में समाज शिक्षा संगठनकर्ताओं के प्रशिक्षण की जो सुविधाएं प्राप्त हैं उन्हें भी बढ़ाया गया है। एक केन्द्र में आदिम जाति क्षेत्रों के योग्य समाज शिक्षा संगठनकर्ताओं को तैयार किया जा रहा है।

१०. राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के लिए जिस पैमाने पर प्रशिक्षण की सुविधाएं संगठित करना जरूरी था, वह काफी बड़ा काम था। उसके सफल होने पर भी सम्पूर्ण कार्यक्रम की सफलता निर्भर थी। इस कार्यक्रम को विस्तार देते हुए इस सिद्धान्त से चालित हुआ जाता है कि कर्मचारियों को कार्यक्रम के लिए पहले से ही प्रशिक्षित करके रखा जाए और विस्तार की गति प्रशिक्षित कर्मचारियों की संख्या पर निर्भर रहे। संस्थाओं में प्रशिक्षण देने के अतिरिक्त अनुभवों का आदान-प्रदान, अपने विचार स्वच्छन्द भाव से व्यक्त करने का अवसर और विभिन्न स्तरों पर तथा विभिन्न क्षेत्रों में कार्यक्रम में संलग्न व्यक्तियों का सहयोग राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के गतिशील सम्पादन के लिए आवश्यक दृष्टि-कोण बनने में सहायक होता है। इस सिलसिले में अन्तर्राज्य विचार-गोष्ठियों ने, और काम करते हुए सीखने तथा अध्ययन के लिए भ्रमण करने के प्रबन्धों ने काफी सहायता दी है एवं उनके द्वारा अन्दर से आलोचना और सुधार का उपयोगी प्रयत्न हुआ है। इतने बड़े कार्यक्रम को सम्पादित करने में यह जरूरी है कि उसमें काम करने वाला हर आदमी नए अनुभव ग्रहण करे और उन्हें आत्मसात करके पुरानी प्रथाओं की फिर से जांच करने तथा अपने मूल उद्देश्यों की प्राप्ति के नए तरीके ढूंढने के लिए सर्वथा मुक्त रहे। कार्यक्रम का कोई भी हिस्सा ऐसा नहीं होना चाहिए जो ढर्रा मात्र बनकर रह जाए और प्रत्येक बड़े कार्य में जो खतरा होता है कि उसमें जड़ता आने लगती है, नई परिस्थितियों के अनुसार ग्रहणशीलता नहीं रह जाती या व्यापकतर उद्देश्यों और प्राथमिकताओं की ओर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता उससे बचा जाए।

दूसरी योजना के लिए कार्यक्रम

११. सितम्बर १९५५ में राष्ट्रीय विकास परिषद ने यह तय किया था कि दूसरी पंच-वर्षीय योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार सेवा सारे देश में लागू हो जानी चाहिए और उसके कम से कम ४० प्रतिशत खण्ड सामुदायिक विकास खण्डों में बदल दिए जाने चाहिएं। यदि यथेष्ट साधन प्राप्त हुए तो ५० प्रतिशत तक खण्डों को बदलने का विचार किया जाएगा। दूसरी योजना के समय में राष्ट्रीय विस्तार योजना के अन्तर्गत ३,८०० अतिरिक्त विकास

खण्ड लाए जाएंगे और आशा है कि इनमें से १,१२० सामुदायिक विकास खण्ड बना दिए जाएंगे। इस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए दूसरी योजना में २०० करोड़ रुपया रखा गया है।

१२. सामुदायिक योजना कार्य प्रशासन के प्रस्तावित कार्यक्रम में यह व्यवस्था की गई है कि राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों को सामुदायिक विकास खण्डों में बदलने की योजना दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रत्येक वर्ष में निम्नलिखित क्रम से पूरी की जाए :

	विकास खण्डों की संख्या	
वर्ष	राष्ट्रीय विस्तार सेवा	सामुदायिक विकास खण्डों में परिवर्तन
१९५६-५७	५००	—
१९५७-५८	६५०	२००
१९५८-५९	७५०	२६०
१९५९-६०	९००	३००
१९६०-६१	१,०००	३६०
	३,८००	१,१२०

अनुमान है कि सामान्य निदेशन के लिए राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड में ४ लाख रुपया और सामुदायिक विकास खण्ड में १२ लाख रुपया खर्च होगा। राज्यों के लिए स्वीकृत २०० करोड़ रुपए का वितरण नए कार्यक्रम के अन्तर्गत अभी स्थिर नहीं किया गया है। राज्य योजनाओं में उसके वर्तमान वितरण का जो उल्लेख है, वह पूरी तौर से अस्थायी है। अनुमान है कि इस राशि में से लगभग १२ करोड़ रुपया सामुदायिक योजना प्रशासन द्वारा सम्पादित या प्रत्यक्षतः अनुप्राणित योजनाओं के लिए केन्द्र में खर्च होगा और लगभग १८८ करोड़ रुपया राज्य योजनाओं में जाएगा। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के लिए निश्चित कुल रकम का विभिन्न विकास मदों में प्रस्तावित वितरण इस प्रकार है :

	(करोड़ रुपयों में)
(१) कर्मचारी और साज-सामान (खण्ड मुख्यालय)	५२
(२) कृषि (पशुपालन, कृषि विस्तार, सिंचाई और भूमि खेती योग्य बनाना)	५५
(३) संचार	१८
(४) ग्राम्य कलाएं और शिल्प	५
(५) शिक्षा	१२
(६) समाज शिक्षा	१०
(७) स्वास्थ्य और गांव की सफाई	२०
(८) आवास (योजना कर्मचारियों और ग्रामवासियों के लिए)	१६
(९) सामुदायिक विकास—विविध (केन्द्र)	१२
कुल	२००

दूसरी पंचवर्षीय योजना में विभिन्न मदों के लिए राशि का वितरण करते समय उपर्युक्त व्यवस्था को ध्यान में रखना होगा ।

१३. दूसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम पर अमल करते समय प्रत्येक ग्राम परिवार को अच्छी तरह समझा दिया जाना चाहिए कि वह स्वयं योजना में योग दे रहा है और उसके रहन-सहन का स्तर ऊपर उठाने के लिए एक निश्चित कार्यक्रम का पालन किया जा रहा है । आशा है कि राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम तथा अन्य पूरक कार्यक्रमों द्वारा अगले कुछ वर्षों में कृषि उत्पादन के अतिरिक्त निम्नलिखित क्षेत्रों में भी उल्लेखनीय उन्नति होगी :

(१) सहकारिता कार्यों का विकास जिनमें सहकारी खेती भी शामिल है;
(२) ग्राम विकास के लिए उत्तरदायी संस्थाओं के रूप में ग्राम पंचायतों का विकास;
(३) चकबन्दी;
(४) ग्रामोद्योगों और छोटे उद्योगों का विकास;
(५) ग्राम समाज के कमजोर वर्गों, विशेषत: छोटे किसानों, खेतिहरों और कारीगरों की सहायता करने के लिए कार्यक्रमों का संगठन;
(६) स्त्रियों और युवक-युवतियों में और अधिक प्रगाढ़ कार्य; और
(७) आदिम जाति क्षेत्रों में प्रगाढ़ कार्य ।

१४. ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग, सहकारिता, कृषि उत्पादन, भूमि सुधार, समाज सेवा आदि विविध क्षेत्रों में कार्यक्रम लागू करने के लिए वे क्षेत्र विशेषत: उपयुक्त अवसर प्रदान करेंगे जो राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यों के अधीन प्रगाढ़ कार्य के लिए चुने गए हैं । जब ये कार्यक्रम समन्वित रूप में पूरे किए जाएंगे और स्थानिक संस्थाओं तथा स्थानिक समर्थन का संगठन हो जाएगा, तो एक कार्यक्रम की सफलता से दूसरे कार्यक्रम को सफलता मिलेगी और सम्पूर्ण क्षेत्र की अर्थ-व्यवस्था पहले से शक्तिशाली हो जाएगी । दूसरी योजना में कृषि उत्पादन विस्तार कार्यकर्त्ताओं का सर्वप्रथम और सर्वोपरि कार्य होना चाहिए । उसके बाद गांवों के लिए सबसे जरूरी काम है बेरोजगारी, अर्थात काम के अवसरों की कमी को दूर करना । सन्तुलित ग्राम अर्थ-व्यवस्था में खेती न करने वाले लोगों के लिए भी उतने ही अवसर बढ़ते रहने चाहिएं जितने खेती करने वालों के लिए । ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग कार्यक्रमों से प्राप्त अनुभव से कहा जा सकता है कि ऐसी एक विस्तार सेवा की बहुत बड़ी जरूरत है जिसका कारीगरों से सम्पर्क रहे और जो उन्हें आवश्यक निदेश और सहायता दे और उनके सहकारी संगठन स्थापित करते हुए उन्हें अपनी उत्पादित वस्तुएं ग्राम क्षेत्र के अन्दर तथा बाहर निकालने में सहायता दे । इस दिशा में २६ मार्गदर्शक योजना कार्यों का आरम्भ करके शुरुआत की गई है । यह आवश्यक है कि यथाशीघ्र प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यक्षेत्र में ग्रामोद्योग कार्यक्रम सम्पादित करने के लिए एक प्रशिक्षित विशेषज्ञ हो जाए ।

१५. सामुदायिक योजना और राष्ट्रीय विस्तार कार्यों में सहकारिता कार्यक्रम पर अमल सर्वत्र एक-सा नहीं हो सका है और बहुधा या तो समुचित कर्मचारी उपलब्ध नहीं रहे

हैं या वर्तमान सहकारिता संगठनों का पुनर्गठन न हो सकने के कारण वे योजना के कार्य में सहयोग नहीं दे सके हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना में जिन बातों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए उनमें चकबन्दी के महत्व पर पहले भी जोर डाला जा चुका है।

१६. प्रत्येक सामुदायिक विकास खण्ड के बजट में दो ग्राम सेविकाओं की व्यवस्था है। ग्राम सेविकाओं का प्रशिक्षण पाने के लिए स्त्रियां बराबर अधिक से अधिक संख्या में आगे आने लगी हैं। परन्तु यह स्पष्ट है कि शीघ्र ही इनसे भी अधिक संख्या में उनकी आवश्यकता पड़ेगी। समाज कल्याण विस्तार कार्यों तथा सामुदायिक योजना क्षेत्रों में प्राप्त अनुभव को हमें इस उद्देश्य से और अधिक जांचना चाहिए कि गांवों में स्त्रियों और बच्चों के मध्य कार्य करने के लिए कौन-सी पद्धतियां उपयुक्त होंगी। प्रत्येक जिले में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना तथा सामाजिक कल्याण विस्तार कार्यों में घनिष्ठ सम्पर्क होना चाहिए। गांवों के नौजवानों में अभी भी बहुत ही थोड़ा काम हुआ है। पर ग्राम क्षेत्रों में नेतृत्व का विकास करने के लिए उसका महत्व जितना बताया जाए उतना कम है।

१७. आदिम जाति क्षेत्रों की विशेष समस्याओं पर अध्याय २८ में विचार किया गया है। राष्ट्रीय विस्तार सेवा का उद्देश्य इन क्षेत्रों के विकास में अधिकतम सहायता देना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति में उन नए प्रशासनिक प्रबन्धों से सहायता मिलेगी जो गृह मंत्रालय और सामुदायिक योजना प्रशासन ने हाल में मिलकर किए है। आदिम जाति क्षेत्रों की जन-संख्या छितरी हुई है, इसे देखते हुए यह प्रस्ताव किया जाता है कि राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड ६६,००० नहीं बल्कि लगभग २५,००० की औसत आबादी के आधार पर सीमांकित किए जाएं। जहां जनसंख्या अंशतः आदिम जाति और अंशतः अन्य हो, वहां योजना कार्य के अधीन इससे भी अधिक जनसंख्या रखी जा सकती है। नए विकास खण्डों को शुरू करने में आदिम जाति क्षेत्रों को प्राथमिकता देने का विचार है ताकि वे यथाशीघ्र राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम के आधीन आ जाएं। कार्यक्रम का बजट स्थानिक आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन करने की सुविधा देता है। जिन क्षेत्रों में आदिम जाति और अन्य दोनों ही प्रकार के लोग हैं, वहां के लिए यह सोचा गया है कि विस्तार टोली में एक ऐसा अधिकारी रहा करे जिसे आदिम जाति जनों का अच्छा परिचय प्राप्त हो। जहां तक सम्भव हो, अनुसूचित जातियों के कल्याण के विशेष कार्यक्रमों के लिए चुने हुए क्षेत्र और अनुसूचित क्षेत्र राष्ट्रीय विस्तार खण्डों के बराबर माने जाएं। इस कार्यक्रम के अधीन लोक हितकारी योजनाएं शुरू में राष्ट्रीय विस्तार योजना के अधीन विकास खण्डों में लागू की जाएंगी ताकि उपलब्ध प्रशिक्षित कर्मचारियों का अधिकतम उपयोग हो सके।

१८. दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यों के लिए वर्तमान कर्मचारियों के अतिरिक्त लगभग २,००,००० कार्यकर्ताओं की जरूरत पड़ेगी। प्रशिक्षण के लिए आवश्यक प्रबन्ध किया जा चुका है। १८ विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र, २५ बुनियादी कृषि स्कूल और १६ बुनियादी कृषि प्रशिक्षण देने वाले विभाग खोलने का निश्चय किया गया है। इस प्रकार दूसरी योजना के अन्तर्गत विस्तार और कृषि के प्रशिक्षण के लिए कुल मिलाकर ६१ प्रशिक्षण विस्तार केन्द्र और ९५ कृषि स्कूल या वर्तमान केन्द्रों से सम्बद्ध कृषि विभाग हो जाएंगे।

१९. जैसे-जैसे कार्यक्रम आकार और रूप में बढ़ता जाएगा तथा जैसे-जैसे उससे अन्य क्षेत्र प्रभावित होते जाएंगे, वैसे-वैसे उसे संपादित करने का अधिकांश श्रेय स्थानिक जनता

को मिलता जाना चाहिए। गांवों की सड़कें, पीने का पानी, सफाई और शिक्षा आदि मामूली-मामूली जरूरतों में से कुछ काफी शुरु में ही पूरी हो जाएंगी। उत्पादन और रोजगार बढ़ाने तथा ग्रामीण आर्थिक जीवन में वैविध्य लाने की समस्याएं अपेक्षाकृत अधिक जटिल हैं और इनको निपटाने के लिए काफी लम्बे समय तक निरन्तर प्रशासनिक प्रयत्न आवश्यक होगा। इस बात पर जोर देना जरूरी है कि लोगों की पार्थिव परिस्थितियां सुधार लेने पर भी गांवों का सामाजिक और आर्थिक जीवन बदलना यथार्थ में एक मानव समस्या रह जाता है। संक्षेप में यह समस्या गांवों में रहने वाले सात करोड़ परिवारों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने की, उनमें नए ज्ञान की लालसा उत्पन्न करने, नए जीवन के लिए उत्साह भरने और आकांक्षा जगाने तथा पहले से अधिक सुखद जीवन के लिए परिश्रम करने का उत्साह भरने की समस्या है। विस्तार सेवाओं और सामुदायिक संगठनों को लोकतन्त्रीय आयोजन का प्राण कहना चाहिए और ग्राम विकास कार्यों को वह साधन बनाना चाहिए जिनसे ग्राम और ग्राम समूह मिल-जुलकर अपनी सहायता आप करते हुए सामाजिक और आर्थिक उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं और राष्ट्रीय योजना में योग दे सकते हैं।

अध्याय १२

आयोजन के लिए अनुसन्धान और अंक-संकलन

योजना सम्बन्धी अनुसन्धान, अंक-संकलन और मूल्यांकन का विकास करने के लिए गत तीन वर्षों में जो उपाय किए गए हैं, प्रस्तुत अध्याय में उनका संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है और यह भी बताया जा रहा है कि आगे किस दिशा में काम करने का प्रस्ताव है। जिस समय पहली योजना तैयार की जा रही थी, कई महत्वपूर्ण चीजों के बारे में पर्याप्त सूचना उपलब्ध नहीं थी। राष्ट्रव्यापी आयोजन का स्वरूप और कार्रवाई ही कुछ ऐसी होती है कि उपलब्ध सूचना के तरतीब से सिलसिलेवार जमा किए जाने की व्यवस्था हो जाती है। साथ ही आयोजन के कारण कुछ ऐसी नई समस्याएं उठ खड़ी होती हैं जिनके समाधान के लिए मौके पर जाकर पड़ताल करने, विश्लेषण के नजरिए से पूछताछ और तहकीकात करने, और अंक-संकलन विद्या का उपयोग करने का बहुत ज्यादा महत्व हो जाता है। यही देखते हुए पहली पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय विकास की आर्थिक, सामाजिक और प्रशासनिक समस्याओं के विषय में अनुसन्धान की खातिर पचास लाख रुपया रख छोड़ा गया था। विचार यह था कि विकास कार्य की कुछ चुनी हुई समस्याओं के बारे में विश्वविद्यालयों और अन्य संस्थाओं के सहयोग से जांच-पड़ताल कराई जाए। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए योजना आयोग ने जुलाई १९५३ में एक अनुसन्धान कार्यक्रम समिति नियुक्त की जिसमें देश के अग्रणी अर्थशास्त्री और अन्य समाजवेत्ता सम्मिलित किए गए।

२. इस अनुसन्धान कार्यक्रम समिति ने तय पाया कि शुरू-शुरू में इन चार मोटी-मोटी बातों के बारे में जांच-पड़ताल कराई जाए : (१) बचत, पूंजी-विनियोग, रोजगार, और लघु उद्योग; (२) प्रादेशिक विकास की समस्याएं, गांवों-कस्बों के तेजी से शहरों के रूप में विकसित होने की समस्याओं की ओर खास ध्यान देते हुए; (३) भूमि सुधार, सहकारिता, और फार्म प्रबन्ध; (४) समाज कल्याण के प्रश्न और सार्वजनिक प्रशासन। अनुसन्धान कार्य समिति के निदेशन में विश्वविद्यालयों और अन्य शिक्षा केन्द्रों के माध्यम से कुल मिलाकर ६४ पड़ताल कार्य शुरू किए जा चुके हैं। इनमें से १९ की रिपोर्ट भी मिल चुकी है, जिनमें चार नमूने के सर्वेक्षण के विषय में हैं। बाईस में मौके पर जाकर तहकीकात करने का काम पूरा हो चुका है। बस, रिपोर्ट तैयार करना बाकी है। तेईस में तहकीकात और पड़ताल का काम अभी चल ही रहा है।

३. बचत, पूंजी-विनियोग, रोजगार, और लघु उद्योग विषयक सर्वेक्षण यह पता लगाने के उद्देश्य से किए गए कि नदी घाटी योजना कार्यों और भारी उद्योगों में बड़े पैमाने पर पूंजी लगाने का प्रभाव क्या हुआ है, छोटे पैमाने पर जो उद्योग शुरू किए जाते हैं, अर्थनीति की दृष्टि से उनकी स्थिति कैसी है, और बचत सम्बन्धी समस्याएं क्या हैं। व्यक्तिगत अध्ययनों का आयोजन इस दृष्टि से किया गया कि जिन उद्यमों में भारी पूंजी लगती है उनका आय और रोजगार पर क्या प्रभाव पड़ता है, अप्रधान विनियोग (सैकेन्डरी इन्वेस्टमेंट) का आकार-प्रकार क्या है, और इस तरह के विनियोग के प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव के कारण

अन्य क्या परिवर्तन सम्भव हैं? लघु उद्योग सर्वेक्षण का ध्येय इस क्षेत्र के औद्योगिक कार्यों के विषय में विनियोग, पूंजी उत्पादन अनुपात और रोजगार सम्बन्धी सूचना उपलब्ध करना, लघु और बड़े उद्योगों की प्रतिद्वन्द्विता के क्षेत्र की और इस होड़ से पैदा होने वाली समस्याओं की निर्धारणा करना, और अर्थ-व्यवस्था के विकास की दृष्टि से लघु उद्योगों का महत्व आंकना था। अध्ययन के लिए जो पड़ताल कार्य किए गए उनमें ये भी शामिल थे: भाखड़ा-नंगल योजना कार्य के रोजगार पक्ष की जांच, मिलाई क्षेत्र में सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण, तिरुवांकुर-कोचीन में बेरोजगारी की पड़ताल, असम में शहरी इलाकों में रोजगारी और बेरोजगारी की तहकीकात, गांवों में आय और बचत के सम्बन्ध में सर्वेक्षण, और चुने हुए केन्द्रों में लघु उद्योग विषयक अनेक अध्ययन।

४. गांवों से लोगों का शहरों में आना, और गांवों के तेजी से शहरों के रूप में विकसित होने से रोजगार के अवसरों में वृद्धि होना प्रगति के इन दो महत्वपूर्ण पहलुओं का अध्ययन करने के लिए इक्कीस शहरों और नगरों* में पड़ताल शुरू कराई गई। इस पड़ताल का मुख्य उद्देश्य यह पता लगाना है कि लोगों का गांव छोड़कर शहरों में जा बसना किन चीजों के असर से होता है, इस स्थानान्तरण में कौन-सी बातें सहायक होती हैं और कौन बाधक, गांव छोड़कर शहरों में आने वालों की आर्थिक अवस्था क्या होती है और शहरों में आ बसने पर उनके पेशों में क्या परिवर्तन होता है।

५. तीसरे वर्ग के विषयों में १८ अनुसन्धान योजनाएं सम्मिलित थीं जिनमें से ७ भूमि सुधार के बारे में और ११ फार्म प्रबन्ध के आर्थिक पक्ष और तत्सम्बन्धी अन्य प्रश्नों के बारे में थीं। बम्बई, हैदराबाद, आंध्र, सौराष्ट्र और मध्य प्रदेश के भूमि सुधार कार्य के विभिन्न पहलू पड़ताल के लिए छांटे गए। इन जांच-कार्यों में बिचौलियों की समाप्ति, पट्टेदारी का नियमन और चकबन्दी के प्रभाव की पड़ताल करना सम्मिलित था। फार्म प्रबन्ध के आर्थिक पक्ष के बारे में जो जांच की गई वह यह मालूम करने की दृष्टि से की गई कि लागत का लेखा-जोखा निकालना और सर्वेक्षण प्रणाली, इन दोनों में से कौन-सी विधि ज्यादा उपयुक्त है, लागत और पैदावार में क्या सम्बन्ध है, खर्च का स्वरूप कैसा है, विभिन्न आकार के फार्मों की पूंजी और मजूरी की जरूरतें क्या और कितनी हैं, और अर्थलाभ के प्रसंग में प्रतियोगी फसलों की तुलनात्मक स्थिति कैसी है। इन अध्ययन कार्यों का क्षेत्र बहुत विशाल है और ये उत्तर प्रदेश, बम्बई, मध्य प्रदेश, पंजाब, पश्चिम बंगाल और मद्रास में किए जा रहे हैं।

६. समाज कल्याण के विषय में जो सर्वेक्षण किए गए हैं, उनमें भिखमंगों की समस्या की तहकीकात, एक ग्राम्य क्षेत्र में सांस्कृतिक परिवर्तन की निर्धारणा और भूतपूर्व अपराध-जीवी जातियों की सामाजिक और आर्थिक दशा की पड़ताल भी शामिल है। इस क्षेत्र में योजना आयोग ने समाज कल्याण विषयक विभिन्न अध्ययन लेखों के संग्रह का भी प्रबन्ध किया। भारत सरकार ने यह संग्रह हाल में "सोशल वैलफेयर इन इण्डिया" शीर्षक से प्रकाशित किया है। सार्वजनिक प्रशासन के क्षेत्र में जिला प्रशासन सम्बन्धी अध्ययन किया जा रहा है।

७. १९५५ के आरम्भ में योजना आयोग ने दूसरी पंचवर्षीय योजना की तैयारी में सहायता करने के लिए अर्थशास्त्रियों का एक मण्डल नियुक्त किया था। इस मण्डल के सदस्यों ने अनेक

---

*आगरा, इलाहाबाद, अलीगढ़, अमृतसर, बड़ोदा, भोपाल, बम्बई, कलकत्ता, कटक, दिल्ली, गोरखपुर, हैदराबाद, हुबली, जयपुर, जमशेदपुर, कानपुर, लखनऊ, मद्रास, पूना, सूरत और विशाखापत्तनम।

विशिष्ट अध्ययन लेख तैयार किए, जिन्हें योजना आयोग ने 'पेपर्स रिलेटिंग टु दि फॉर्मूलेशन आफ द सैकण्ड फाइव इयर प्लान' शीर्षक से प्रकाशित किया है। ये अध्ययन, पूंजी निर्माण विनियोग के आकार-प्रकार, रोजगार और व्यवसाय के विधान, साधन उपलब्ध करने की समस्याएं, बड़े और छोटे उद्योगों के परस्पर सम्बन्ध और दूसरी योजना की नीति और संस्थागत पहलुओं से सम्बद्ध थे। भारतीय अंक-संकलन संस्था ने भी राष्ट्रीय विकास के आयोजन के सम्बन्ध में कई प्रौद्योगिक एवं अंक-संकलन अध्ययन तैयार किए, जिन्हें वह संस्था स्वयं ही प्रकाशित कर रही है।

८. अनुसन्धान कार्यक्रम समिति का काम दूसरी योजना की अवधि में जारी रखने की खातिर ४० लाख रुपए की व्यवस्था की गई है। इस समिति ने यह निदेश कर दिया है कि आगे किन-किन प्रमुख क्षेत्रों में अध्ययन कार्य करना उपयोगी होगा। चूंकि पहली योजना के दौरान में विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षण कार्यों की ओर विशेष ध्यान दिया गया था, दूसरी योजना की अवधि में अब विश्लेषणात्मक अध्ययन करने पर और ज्यादा जोर देने का प्रस्ताव है। अनुसन्धान और गवेषणा के विषय निर्धारित करते समय इस बात का ध्यान रखा जाएगा कि उन समस्याओं के अध्ययन पर विशेष जोर रहे जो दूसरी योजना के कार्यान्वित होने के दौरान में उठ सकती हों। अनुसन्धान कार्यक्रम समिति की एक उपसमिति ने इस बात का विचार करके सुझाव दिया है कि निम्नांकित क्षेत्रों में अध्ययन करना उपयुक्त रहेगा :

(१) योजना के लिए साधनों की उपलब्धि जिसमें पूंजी निर्माण, कर आपात और छोटी बचत आन्दोलन के सवाल भी शामिल हैं;
(२) शहर और गांव में सम्बन्ध;
(३) विभिन्न प्रदेशों में निर्माण कार्यों का रोजगार पर प्रभाव;
(४) विकेन्द्रीकरण की समस्याएं, जिनमें यह मालूम करना भी शामिल है कि कुटीर और लघु उद्योगों के विकेन्द्रीकृत विकास के लिए उनकी अपनी समग्र आर्थिक और सामाजिक सामर्थ्य कम से कम कितनी होनी चाहिए;
(५) भवन निर्माण का आर्थिक पक्ष;
(६) कृषि सम्बन्धी कानूनों, भूमि सुधार और सामुदायिक विकास का अध्ययन; तथा
(७) आदिम जातियों की आर्थिक-सामाजिक समस्याएं।

भारतीय अर्थ-व्यवस्था के सम्बन्ध में भी उसकी दीर्घकालीन संभावनाओं की दृष्टि से अध्ययन कार्य शुरू करने का इरादा है। इनमें विभिन्न क्षेत्रों के परस्पर सम्बन्ध का विशेष रूप से विचार किया जाएगा।

९. तरतीब से आयोजन करने के लिए यह जरूरी हो जाता है कि पूंजी का उत्पादन, पूंजी और रोजगार का अनुपात, विभिन्न चीजों के उत्पादन और खपत के प्रतिमान, और आर्थिक उन्नति के विभिन्न क्षेत्रों की जनशक्ति विषयक आवश्यकता के बारे में पर्याप्त सूचना उपलब्ध रहे। इस समय जो सूचना उपलब्ध है वह बहुत ही सीमित है और इसलिए आर्थिक उन्नति की ब्योरेवार कोई योजना बनाने के लिए यथेष्ट नहीं है। अतएव आज इस बात की अपेक्षा है कि देश की समस्याओं के बारे में ज्ञान बढ़ाने के लिए बाकायदा प्रौद्योगिक अध्ययन किया जाए और इस महान कार्य में टेकनीकल आदमी, अर्थशास्त्री, और अंक-संकलन विशेषज्ञ सभी सहयोग करें।

१०. पिछले चार सालों में पड़ताल के कई महत्वपूर्ण कार्य किए गए हैं जिनसे बहुत-सी जरूरी बातें पता चली हैं। इनमें कृषि श्रम जांच १९५१ की जनगणना, कर-व्यवस्था जांच समिति का जांच-पड़ताल का काम और उसका निष्कर्ष, ग्राम्य ऋण व्यवस्था सम्बन्धी सर्वेक्षण और राष्ट्रीय नमूना पड़ताल के प्रतिवेदन विशेष उल्लेखनीय हैं। योजना आयोग ने विकास कार्य के विभिन्न क्षेत्रों की जन-शक्ति सम्बन्धी आवश्यकता के बारे में भी अध्ययन कार्य शुरू कराए। यद्यपि कई क्षेत्रों में उपलब्ध सूचना सफल आयोजन की दृष्टि से अब भी अपर्याप्त है, तथापि यह कहा जा सकता है कि अब आंकड़े वगैरह काफी जमा हो चुके हैं, और साथ ही देश में ऐसी कई संस्थाएं हो गई हैं जिन्हें जांच-पड़ताल करने का अनुभव है और जिनके पास काफी प्रशिक्षित कर्मचारी हैं। पहली योजना की अवधि में सूचना उपलब्ध करने की दिशा में जहां तक काम हो चुका है, ये संस्थाएं उससे और आगे तक काम करने में असमर्थ हैं।

मूल्यांकन

११. पहली पंचवर्षीय योजना में यह सिफारिश की गई थी कि जन-कार्य-कलाप की सभी शाखाओं में कार्य प्रगति की समय-समय पर समीक्षा करते रहना साधारण प्रशासनिक कर्तव्यों में शामिल समझा जाना चाहिए। विकास की किसी योजना को कार्यान्वित करते समय कदम-कदम पर यह सवाल उठता है कि नई नीतियों और नए कार्यक्रमों का क्या असर पड़ रहा है और उनके प्रति जनता का विचार क्या है? अतएव मूल्यांकन नीति-निर्धारण के वास्ते निहायत जरूरी है। मूल्यांकन को अनुसन्धान की ही एक शाखा माना जा सकता है, जिसमें मुख्य रूप में व्यावहारिक कार्यक्रम की जरूरतों के अनुसार परिवर्तन किया जा सकता है।

१२. मूल्यांकन विधियों का विकास करने की गरज से योजना आयोग ने १९५२ में फोर्ड प्रतिष्ठान के सहयोग से कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में स्थापित किया। इसे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के कार्य का मूल्यांकन करने का भार सौंपा गया। इस कार्यक्रम के सन्दर्भ में उसके निम्नांकित कर्तव्य निश्चित किए गए :

(१) कार्यक्रम के लक्ष्य पूरे करने में जो भी प्रगति हो रही हो, तत्सम्बन्धी सभी लोगों को उससे अवगत कराते रहना;

(२) यह बताना कि विस्तार के कौन-से उपाय कारगर सिद्ध हो रहे हैं और कौन-से नहीं;

(३) यह समझने में मदद देना कि जो विधियां सुझाई जा रही हैं, गांव वाले उन्हें स्वीकार अथवा अस्वीकार क्यों कर रहे हैं; और

(४) ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था और संस्कृति पर राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम का प्रभाव दर्शाना।

इस प्रकार मूल्यांकन का उद्देश्य यह निर्धारित करना था कि कार्यक्रम अपने मूल उद्देश्यों की पूर्ति में सफल हो रहा है या नहीं। मूल्यांकन के पीछे यह धारणा थी कि विस्तार के उपायों और जनता द्वारा उनके अपनाए जाने और विकास कार्यक्रम के प्रभाव से आर्थिक और सामाजिक दशा में हुए परिवर्तनों का अध्ययन किया जाए।

१३. कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन का इस समय अपना एक संचालक, प्रधान कार्यालय में एक यूनिट, तीन प्रादेशिक यूनिटें और देश के विभिन्न भागों में स्थित २० योजना कार्य मूल्यांकन यूनिटें हैं। योजना कार्य मूल्यांकन यूनिटें राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों की प्रगति का मूल्यांकन करती हैं और क्षेत्रीय सर्वेक्षण तथा जांच-पड़ताल का कार्य करती हैं। योजना कार्य के कर्मचारियों से बराबर सम्पर्क बनाए रखा जाता है, लेकिन रिपोर्ट सिर्फ कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन को ही दी जाती है। इस संगठन के वार्षिक मूल्यांकन प्रतिवेदन से और कार्यक्रम के विशिष्ट पहलुओं के बारे में पड़ताल द्वारा उपलब्ध तथ्यों से सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रम के परिपालन में बहुत सहायता मिली है। संगठन ने राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक योजना कार्यों के विषय में तीन मूल्यांकन प्रतिवेदन तैयार किए हैं जिनका अध्ययन किया जा रहा है। इन प्रतिवेदनों में उन प्रशासनिक और अन्य समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित कराया गया है जो कार्यक्रम के परिपालन के दौरान में विभिन्न स्तरों पर, खास कर गांवों में उठ खड़ी होती हैं। १९५४ के आरम्भ में मूल्यांकन केन्द्रों में एक पीठ चिह्न सर्वेक्षण (बेंचमार्क सर्वे) किया गया। हर क्षेत्र में हजार-डेढ़ हजार परिवारों से खास तौर से पूछताछ की गई। समय-समय पर इस प्रकार के सर्वेक्षण करते रहने का प्रस्ताव है ताकि परिवर्तनों का लेखा-जोखा ज्ञात होता रहे। कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन ने जो अध्ययन किए हैं उनमें वे विशेषतः उल्लेखनीय हैं जिनका सम्बन्ध गांव संगठन के विधान, ग्राम्य जन समुदाय के विभिन्न वर्गों में कार्यक्रम की प्रारम्भिक प्रतिक्रिया, उन्नत तरीकों के अंगीकरण, और ग्रामसेवक के कार्यों से है। उन्नत तरीकों के अंगीकरण के बारे में जो तहकीकात की गई है, उसके परिणाम शीघ्र ही प्रकाशित कर दिए जाएंगे। इस तहकीकात का उद्देश्य यह पता लगाना था कि नई विधियों में से कौन-कौन-सी ग्रामीण जनता को स्वीकार्य हुई, गांव वालों को इन नई विधियों को अपनाने के लिए किस तरह राजी किया गया, नई विधियों को अपनाने वालों के लिए क्या-क्या सुविधाएं देने का वचन दिया गया और गांव वालों का नई विधियां अपनाने के परिणामों के प्रति क्या विचार है? २३ सहकारी कृषि समितियों के कामकाज का भी गहन अध्ययन किया गया है और इसके विषय में शीघ्र ही एक प्रतिवेदन प्रकाशित किया जाएगा।

१४. दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान में राष्ट्रीय विस्तार सेवा का काम समस्त देश में फैल जाएगा। अतएव मूल्यांकन के क्षेत्र में ग्रामोन्नति के समग्र कार्य-कलाप और जिला योजना के अधिकांश कार्य आ जाएंगे। भूमि सुधार, सहकार, ग्राम और लघु उद्योगों की प्रगति से और शहरों और उद्योगों के तेजी से विकसित होने से देहातों में भी मौलिक परिवर्तन होने लगे हैं। दूसरी योजना की अवधि में ये परिवर्तन शायद और भी तेजी से होंगे। यह निहायत जरूरी हो जाता है कि जैसे-जैसे सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन होते जाएं, वैसे-वैसे उनका निरपेक्ष दृष्टि से विश्लेषण किया जाता रहे और यह देखा जाए कि आर्थिक विकास का ग्रामीण जनता के विभिन्न वर्गों पर क्या असर पड़ रहा है। विकास कार्य के सभी क्षेत्रों में मूल्यांकन की अपेक्षा है, उन क्षेत्रों में तो खासकर जहां नए या विस्तृत काम उठाए जा रहे हैं। सुनियोजित विकास के सभी क्षेत्रों में कई अज्ञात और अप्रत्याशित चीजों का सामना करना पड़ जाता है। जिन कार्यक्रमों का जनजीवन से निकट सम्बन्ध होता है, उनमें निहित विभिन्न तत्वों की परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया को समझना, उन्हें जनकल्याण की दृष्टि से अधिक सार्थक और सफल बनाने में बड़ा सहायक हो सकता है। अतएव यह अपेक्षित है कि मूल्यांकन के अन्तर्गत कुछ चुने हुए विषयों का ही गहनतर अध्ययन किया जाए, ताकि

इसके सहारे आगे कुछ ठोस काम किया जा सके। इसके लिए विभिन्न स्तरों पर आयोजन अभिकरणों के अनुभव, विशिष्ट क्षेत्रों के विशेषज्ञों के विचार, अर्थशास्त्रियों और अंक-संकलन-विदों के विश्लेषणात्मक अध्ययन, - इन सब पर एकीकृत रूप से विचार किया जाए, जिससे कि न केवल यह ठीक-ठीक पता लग सके कि क्या कार्य किया जा रहा है, अपितु व्यावहारिक समस्याओं और नए कार्यों के बारे में भी नया रुख अपनाया जा सके। इस दिशा में उत्तर प्रदेश में आयोजन अनुसन्धान और कार्य संस्था ने कुछ उपयोगी काम शुरू भी कर दिया है। उत्तर प्रदेश में विभिन्न क्षेत्रों में आम तौर से प्रयोगात्मक योजना कार्य पद्धतियों के विषय में जो अनुभव प्राप्त हुआ है, वह अन्य राज्यों के लिए भी लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

अंक-संकलन

१५. जिस समय पहली पंचवर्षीय योजना का सूत्रपात किया जा रहा था उस समय देश की आर्थिक अवस्था के कई महत्वपूर्ण पहलुओं के बारे में ऐसे आंकड़े प्राप्त नहीं थे जिन पर भरोसा किया जा सकता। राज्यों में आंकड़े जमा करने के लिए जो संस्थाएं थीं वे भी सुसंगठित नहीं थी। यद्यपि लड़ाई के जमाने में केन्द्रीय सरकार द्वारा आंकड़े जमा करने का काम और अधिक विस्तार से किया जाने लगा था, तथापि अंक-संकलन की समन्वित व्यवस्था करने की दिशा में कोई कोशिश न हो पाई थी। नीति या प्रशासन के मामलों में कोई फैसला करते समय पुराने आंकड़ों का भली-भांति विचार करने का रिवाज नहीं था, इसीलिए उपलब्ध सूचना के सच-झूठ की ओर काफी ध्यान नहीं दिया जाता था।

१६. देश के स्वाधीन होने के साथ यह स्थिति बदल गई। पहले के मुकाबले ज्यादा और विश्वसनीय आंकड़े जमा करने की जरूरत महसूस की गई। १९४९ के शुरू में अंक-संकलन का काम समन्वित करने के लिए एक केन्द्रीय अंक-संकलन यूनिट स्थापित की गई। उसी साल राष्ट्रीय आय समिति नियुक्त की गई जिसके काम से राष्ट्रीय आय विषयक आंकड़े जमा करने की बहुत सुविधा हुई है। १९५० में नेशनल सैम्पल सर्वे नामक संस्था इस उद्देश्य से खोली गई कि जनजीवन के विभिन्न पहलुओं के बारे में राष्ट्रीय आधार पर नमूने की पड़ताल कराई जाए। यह संस्था वर्ष में दो बार तहकीकात करके जन्म लेने वालों की संख्या तथा व्यापारियों आदि, उपभोग, घरेलू उत्पादन, चक, फसल, बेरोजगारी, उद्योग आदि के बारे में शहरों और गांवों से जानकारी और आंकड़े उपलब्ध कराती है। इस संस्था की ओर से तहकीकात के विशिष्ट आयोजन भी होते रहे हैं। समय-समय पर किसी खास बात का पता चलाने के लिए अलग से भी सर्वेक्षण किए जाते रहे हैं। श्रम मंत्रालय द्वारा आयोजित खेतिहर मजदूर तहकीकात और रिजर्व बैंक द्वारा आयोजित ग्राम्य ऋण व्यवस्था सर्वेक्षण से बहुत-सी काम की बातें मालूम हुई हैं। १९५१ में केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन की स्थापना हुई (जिसमें केन्द्रीय अंक-संकलन यूनिट मिला दी गई) यह नई संस्था राज्यों के अंक-संकलन कार्यालयों को भी सलाह-मशविरा देती है और उनसे परामर्श करती है। भारतीय अंक-संकलन संस्था में भी इस बीच काफी प्रगति हुई है। वहां अनुसन्धान और प्रशिक्षण का एक विद्यालय खुल गया है जिसमें केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन के सहयोग से अंक-संकलन की विद्या के बारे में स्नातकोत्तर पठन-पाठन और सरकारी अंक-संकलन कर्मचारियों के प्रशिक्षण का इन्तजाम किया गया है। भारतीय अंक-संकलन संस्था में एक योजना कार्य शाखा भी है जो नेशनल सैम्पल सर्वे और अन्य पड़ताल कार्यों के प्राविधिक कार्य की देख-रेख करती है। इस संस्था ने जगह-जगह अंक-संकलन विषयक किस्म नियंत्रण यूनिटें भी खोल रखी हैं।

यहां आधुनिक यंत्रों से हिसाब-किताब का काम करने से सम्बद्ध एक प्रयोगशाला भी है जिसका अपना कारखाना भी है।

१७. केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन का राज्यों के अंक-संकलन कार्यालयों से घनिष्ठ सम्पर्क है। उनके काम-काज में वह सहयोग और समन्वय करता है। समन्वय के काम में उसकी सहायता करने के लिए विभिन्न विभागों के अंक-संकलनविदों की एक स्थायी समिति और केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारों के अंक-संकलन विशेषज्ञों की एक मिली-जुली सभा नियुक्त है। केन्द्र और राज्यों की इस संयुक्त सभा की नियमित बैठक साल में एक बार होती है। खास जरूरत पड़ने पर तदर्थ बैठक भी बुला ली जाती है। केन्द्रीय सरकार ने राज्य सरकारों से अपने यहां नमूने की पड़ताल शुरू कराने को कहा है, और उसके निमित्त उन्हें आर्थिक सहायता भी दी है। इस प्रकार राज्यों में जो नमूने की पड़तालें होंगी उनका नेशनल सैम्पल सर्वे से कोई ताल्लुक न होगा, यद्यपि वे बिल्कुल उसी तरह, उसी ढंग पर, और उन्हीं मान्यताओं, परिभाषाओं, और प्रतिमानों को लेकर की जाएंगी। इससे एक ही जगह के बारे में दो संस्थाओं के माध्यम से पृथक तथापि तुलनीय आंकड़े प्राप्त होंगे जिनका अध्ययन करके सही-सही जानकारी हासिल की जा सकेगी।

१८. अंक-संकलन की धीरे-धीरे एक समग्र और सुचारु व्यवस्था हो जाने से दूसरी पंचवर्षीय योजना की तैयारी में बहुत सहायता मिली। १९५४ में योजना आयोग ने यह तय किया कि केन्द्रीय अंक-संकलन में योजना संबंधी एक विशेष शाखा खोली जाए जो योजना आयोग, विभिन्न मंत्रालयों और भारतीय अंक-संकलन संस्थान की परियोजना विषयक अनुसन्धान यूनिट से निकट सम्पर्क बनाए रखे। योजना आयोग के सुझाव पर भारतीय अंक-संकलन संस्थान और केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन ने आयोजन के विषय में संयुक्त रूप से कई अध्ययन कार्य किए और उनके आधार पर लेख लिखे। इनके बाद मार्च १९५५ में योजना की एक रूपरेखा तैयार की गई जिसमें बताया गया था कि दूसरी पंचवर्षीय योजना का किन-किन बातों के आधार पर सूत्रपात किया जा सकता है।

१९. योजना की रूपरेखा में खास आग्रह दो चीजों पर था :— मशीन वगैरह तैयार करने वाले मूल उद्योगों का तेजी से विकास किया जाए, और शिक्षा, टेकनीकल प्रशिक्षण, अनुसन्धान, आरोग्य आदि की सुविधा में जल्दी से जल्दी वृद्धि की जाए जिससे लोगों की क्रय सामर्थ्य और उपभोग की वस्तुओं की मांग बढ़ जाए। उपभोग्य वस्तुओं की इस बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए कुटीर और लघु उद्योगों का विस्तार किया जाए। मशीन, कच्चा माल, और जनशक्ति उचित मात्रा में और उचित समय पर उपलब्ध रहे, तभी उत्पादन के लक्ष्य सिद्ध किए जा सकते हैं। यही नहीं, मुद्रास्फीति से बचने के लिए जनता की मांग पूरी करने के निमित्त रोजमर्रा की जरूरत की चीजें भी उचित समय पर और उचित मात्रा में उपलब्ध रहनी चाहिएं। अतएव योजना बनाने में खास ध्यान इस बात का रखना होगा कि मशीन, कच्चा माल, और श्रम की मांग में और उसकी पूर्ति में बराबर संतुलन बनाए रखा जाए। वार्षिक योजनाएं बनाकर लघुकालीन संतुलन और आगामी दस, बीस, तीस वर्ष या अधिक समय को ध्यान में रखते हुए भावी योजनाओं का निर्धारण योजनाएं बनाने का आवश्यक अंग होना चाहिए।

२०. इस तरह योजनाएं तैयार करने के काम में मौजूदा और भावी योजनाओं के निर्धारण में आंकड़ों की अधिकाधिक आवश्यकता पड़ेगी। इसके अतिरिक्त अभावों, या टेकनीकल

और आंकड़े सम्बन्धी सूचनाओं की अशुद्धि, विदेशों की आर्थिक स्थिति का अप्रत्याशित प्रभाव, देश की अर्थ-व्यवस्था में अप्रत्याशित परिवर्तन और अन्य गड़बड़ियों के कारण योजना पर अमल करने में छोटी-बड़ी बाधाएं आती ही रहेंगी। इसलिए आर्थिक और भौतिक सफलता की दृष्टि से योजना की प्रगति का मूल्यांकन, और उनसे अनुभवों के प्रकाश में प्राप्त मौजूदा और भावी योजनाओं में आवश्यक परिवर्तन करते रहना निहायत जरूरी है। अंक-संकलन व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि मौजूदा और भावी योजनाओं के निर्धारण और परिवर्तन के लिए बराबर प्रामाणिक आंकड़े और सूचनाएं प्राप्त होती रहें।

२१. केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा किए जाने वाले कार्यों को समन्वित करने के लिए एक अंक-संकलन व्यवस्था बनाना हमारा उद्देश्य है। सूचनाओं का परिमाण बढ़ाने पर नहीं वरन् उन्हें अधिक विश्वसनीय बनाने पर अधिक बल दिया जा रहा है। योजना से सम्बद्ध कार्य की देखभाल के लिए केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन में एक योजना शाखा विशेष रूप से खोली गई है। योजना आयोग ने राज्य सरकारों को सुझाया है कि राज्य स्तर पर बनने वाली योजनाओं से सम्बद्ध अंक-संकलन कार्य, राज्य अंक-संकलन ब्यूरो को सौंप देना चाहिए। इस कार्य के लिए विशेष अनुक्रमणिकाएं और सूचना-पत्र तैयार करके वितरित कर दिए गए हैं। केन्द्रीय और राज्यीय अंक-संकलन अभिकरणों की क्षमता बढ़ाई जा रही है और इस कार्य के लिए केन्द्रीय सहायता भी दी जा रही है। केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन के तत्वावधान में देश भर में अंक-संकलन का समन्वित विकास हो, इस उद्देश्य से एक योजना बनाई जा रही है। राज्यीय अंक-संकलन ब्यूरो यदि चाहें तो राज्यों में विशेष योजना यूनिटें स्थापित की जा सकती हैं। सूचना के मूल स्रोतों से अधिक से अधिक, समय से और सही आंकड़ों की उपलब्धि के क्रमिक अनुष्ठान के अनुसार जिलों में अंक-संकलन अभिकरण स्थापित करने का भी प्रस्ताव है। केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन और भारतीय अंक-संकलन संस्था दोनों मिलकर राज्यों और केन्द्रीय मंत्रालयों के सहयोग से विभिन्न स्तरों पर प्रशिक्षण की व्यवस्था का प्रबन्ध कर रहे हैं।

२२. योजना आयोग मांग और पूर्ति के या विनियोग, रोजगार और आमदनी के, हाट-व्यवस्था के संतुलन और जन-शक्ति के भौतिक सम्बन्धों के विषय में टेकनीकल और अंक-संकलन कार्य का और योजना के परिपालन सम्बन्धी अनुसन्धान कार्य को विस्तार देने और दृढ़ बनाने का विचार कर रहा है। इसके अतिरिक्त वह योजना के भावी रूप और भारतीय अंक-संकलन संस्था के तत्सम्बन्धी कार्य की ओर भी अधिक ध्यान दे रहा है। समन्वय की सुचारु व्यवस्था के लिए एक संयुक्त समिति बनाने का निर्णय किया गया है। संयुक्त समिति में योजना आयोग, वित्त मंत्रालय के अर्थ विभाग, केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन और भारतीय अंक-संकलन संस्थान के प्रतिनिधि होंगे।

अध्याय १३

कृषि कार्यक्रम

पहली पंचवर्षीय योजना में कृषि और सामुदायिक विकास के कार्यक्रमों को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। चूंकि उस योजना का उद्देश्य सारी जनता का, विशेषतः देहाती क्षेत्रों के लोगों के जीवन-स्तर को ऊंचा उठाना था, इसलिए इन कार्यक्रमों को प्राथमिकता प्रदान करना स्वाभाविक था और यह इसलिए भी जरूरी था कि जिस समय योजना बनाई गई थी उस समय कमी और मुद्रास्फीति की विशेष परिस्थितियां मौजूद थीं। १९५२-५३ से कृषि की पैदावार में जो वृद्धि हुई है उससे मुद्रास्फीति को समाप्त करने, अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने और दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में और तेजी से विकास का मार्ग तैयार करने में जितनी सहायता मिली है उतनी अन्य किसी चीज से नहीं मिली। १९४९-५० को आधार वर्ष मानकर १९५०-५१ में कृषि उत्पादन का देशनांक ९६ था, १९५३-५४ और १९५४-५५ में यह ११४ और १९५५-५६ में ११५ था। पहली योजना में राष्ट्रीय पैदावार में १८ प्रतिशत वृद्धि हुई और इसी अनुपात में कृषि के क्षेत्र में आय बढ़ी। कृषि उत्पादन में वृद्धि होने के कारण अर्थ-व्यवस्था के अन्य क्षेत्रों में भी वृद्धि हुई।

पहली योजना की समीक्षा

२. पहली पंचवर्षीय योजना में कृषि उत्पादन में जिस वृद्धि की परिकल्पना की गई थी, वह इस प्रकार थी :—

वस्तु	इकाई	आधार वर्ष में उत्पादन*	अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य	प्रतिशत वृद्धि
खाद्यान्न	लाख टन	५४०	७६	१४
मुख्य तिलहन	,,	५१	४	८
गन्ना (गुड़)	,,	५६	७	१३
कपास	लाख गांठ	२९	१३	४५
पटसन	,,	३३	२१	६४

*खाद्यान्नों के लिए आधार वर्ष १९४९-५० है; अन्यों के लिए १९५०-५१।

सिंचाई, उर्वरकों का अधिक मात्रा में प्रयोग, सुधरे हुए बीजों का वितरण और भूमि को कृषि योग्य बनाने एवं उसका विकास करने आदि विभिन्न कार्यक्रमों से मिलने वाली सहायता को ध्यान में रखकर ही अतिरिक्त उत्पादन, विशेषतः खाद्यान्नों के उत्पादन के ये लक्ष्य निर्धारित

किए गए थे। दूसरे शब्दों में, यह अनुमान लगाया गया था कि यदि योजना में निर्धारित विकास सम्बन्धी कार्यों को पूरा किया गया तो सम्भवतः निर्दिष्ट सीमा तक उत्पादन अवश्य बढ़ जाएगा। किन्हीं भी वर्षों में विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के वास्तविक स्तर मौसम सम्बन्धी परिस्थितियों तथा विभिन्न फसलों के सापेक्ष मूल्य जैसी अन्य बातों के अनुसार आवश्यक रूप से भिन्न-भिन्न होंगे।

३. पहली योजना में कृषि उत्पादन की गति इस प्रकार रही :—

वस्तु	इकाई	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६ (अनुमानित)
अनाज	लाख टन	४२९	४९२	५८३	५५३	५५०
दालें	"	८३	९१	१०४	१०५	१००
कुल खाद्यान्न	"	५१२	५८३	६८७	६५८	६५०
मुख्य तिलहन	"	४९	४७	५३	५९	५५
गन्ना (गुड़)	"	६१	५०	४४	५५	५८
कपास	लाख गांठें	३१	३२	३९	४३	४२
पटसन	"	४७	४६	३१	२९*	४०

*अंशतः संशोधित अनुमान।

यह प्रगट होता है कि योजना काल में १९५३-५४ में खाद्यान्नों और १९५४-५५ में तिलहन और कपास का सर्वाधिक उत्पादन हुआ। गन्ना और पटसन का सर्वाधिक उत्पादन १९५१-५२ में हुआ और यद्यपि उत्पादन कम हो जाने के कुछ समय बाद योजना की समाप्ति के समय उत्पादन फिर बढ़ गया, फिर भी जो लक्ष्य निर्धारित किए गए थे वे पूरे न हो सके।

४. नीचे दी गई तालिका से ये प्रवृत्तियां और भी अधिक स्पष्ट हो जाती हैं। इसी तालिका में योजना की अवधि में विभिन्न फसलों के उत्पादन के देशनांक भी दिए गए हैं :—

(आधार : १९४९-५० = १००)

——	भार	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६ (अनुमानित)
१. खाद्यान्न—						
अनाज	५८.३	९१	१०१	११९	११२	११२
दालें	८.६	९०	९९	११२	११३	१०८

——	भार	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६ (अनुमानित)
२. खाद्येतर फसलें–						
तिलहन	९.९	९७	९२	१०७	११५	१०८
कपास	२.८	११९	१२१	१५३	१६६	१६२
पटसन	१.४	१५१	१४९	-१०१	१०२	१३६
विविध–						
गन्ना	८.७	१२३	१०२	९०	११२	११८
अन्य फसलें जिनमें चाय, कहवा, रबड़ आदि शामिल हैं	१०.०	१०५	१०७	१०५	१११	१२५
कुल खाद्येतर फसलें	३३.१	१११	१०४	१०६	११७	१२२
सभी वस्तुएं	१००.०	९८	१०२	११४	११४	११५

यह बात महत्वपूर्ण है कि पिछले तीन सालों में कृषि उत्पादन का देशनांक काफी ऊंचे स्तर पर बना रहा। इसके साथ-साथ खाद्यान्नों में कुछ कमी रही जो कृषि उत्पादन के कुल मूल्य की लगभग ६७ प्रतिशत थी। एक अधिक लम्बी अवधि में इन प्रवृत्तियों के अध्ययन के बाद ही निश्चित परिणाम निकाले जा सकते हैं।

५. भिन्न-भिन्न खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि के वास्तविक आंकड़ों से यह साबित होता है कि कृषि कई ऐसी बातों पर निर्भर होती है जिनके बारे में पहले से ठीक-ठीक कुछ नहीं कहा जा सकता, और इसलिए यह आवश्यक है कि कृषि सम्बन्धी लक्ष्यों को अस्थायी ही मानना चाहिए :–

(लाख टन)

——	१९४९-५०	१९५०-५१	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६ (अनुमानित)
चावल	२३२	२०३	२१०	२२५	२७८	२४२	२५५
गेहूं	६३	६४	६१	७४	७९	८५	८५
ज्वार और बाजरा	८५	८०	८३	१०४	१२४	१२६	१२०
अन्य अनाज	८०	७०	७५	८९	१०२	१००	९०
कुल अनाज	४६०	४१७	४२९	४९२	५८३	५५३	५५०
चना और दालें	८०	८३	८३	९१	१०४	१०५	१००
कुल खाद्यान्न	५४०	५००	५१२	५८३	६८७	६५८	६५०

यह आशा की गई थी कि पहली पंचवर्षीय योजना में ७६ लाख टन की अनुमानित वृद्धि में से चावल की ४० लाख टन, गेहूं की २० लाख टन, चना और दालों की १० लाख टन और अन्य अनाजों की ५ लाख टन वृद्धि होगी। ज्वार-बाजरा तथा अन्य अनाजों में सबसे अधिक वृद्धि हुई है और गेहूं के उत्पादन का लक्ष्य भी पूरा हो गया है। सामान्यतः एक विशेष रूप से अनुकूल वर्ष को छोड़कर चावल के उत्पादन के सम्बन्ध में जो आशा की गई थी, वह पूरी नहीं हुई। फिर भी, खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि के कारण आयात में कमी करना सम्भव हो सका। १९५० में खाद्यान्न का आयात ४७ लाख ३० हजार टन और १९५१ में ३८ लाख ६० हजार टन था जो पिछले दोनों सालों में घटकर १० लाख टन से भी कम हुआ। इससे देश की सामान्य अर्थ-व्यवस्था को एक निश्चित लाभ पहुंचा।

६. उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर कृषि की अलग-अलग फसलों के उत्पादन की प्रगति को पहली योजना काल की वर्ष-प्रति-वर्ष की वास्तविक प्रगति से बहुत अधिक सम्बन्धित करके देखना ठीक न होगा। ऐसा देखने में आता है कि एक ही समय में अनेक बातें एक साथ काम करती हैं। यह सुझाव दिया गया है कि पहली पंचवर्षीय योजना में कृषि उत्पादन विषयक आंकड़ों की, जिनमें फसलें काटने सम्बन्धी सर्वेक्षण के परिणाम भी सम्मिलित हैं, कई प्रकार के विशेष एवं गम्भीर अध्ययनों द्वारा जांच की जानी चाहिए। नीति-निर्धारण एवं परिणामों के निर्माण के लिए जिन पहलुओं के बारे में और अधिक विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना महत्वपूर्ण होगा, उनमें से निम्नलिखित का उल्लेख करना जरूरी है :–

१. विभिन्न प्रदेशों की उत्पादन प्रवृत्तियां,
२. कृषि उत्पादन के प्रभाव और विस्तार कार्यक्रम,
३. अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों का प्रभाव क्षेत्र,
४. अतिरिक्त उत्पादन के वर्तमान पैमानों की समीक्षा,
५. मुख्य-मुख्य फसलों की पैदावार की गतिविधि, और
६. जो लाभ हुए हों उनकी दृष्टि से विभिन्न कृषि उत्पादन और विस्तार कार्यों की लागत।

७. उपलब्ध सीमित जानकारी से यह पता चलता है कि पहली पंचवर्षीय योजना में जिन विकास कार्यक्रमों से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है उनमें सिंचाई के छोटे-छोटे कार्य, उर्वरकों का और अधिक प्रयोग, भूमि को खेती योग्य बनाना और उसका विकास और खेती की जमीन में वृद्धि—ये सब विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। योजना के पहले ही कई वर्षों से सिंचाई के छोटे-छोटे कार्यक्रम चालू किए जा रहे थे। १९४३-४४ से १९५०-५१ तक की अवधि में 'अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन' के सिलसिले में लगभग ६२ करोड़ रु० की लागत के कार्यक्रम स्वीकार किए गए थे और इनमें से अधिकांश सिंचाई के छोटे-छोटे कार्यों के सम्बन्ध में थे। पहली योजना के अन्तर्गत अनुमानतः लगभग १ करोड़ एकड़ भूमि में सिंचाई के छोटे-छोटे साधनों से और लगभग ६३ लाख एकड़ भूमि में सिंचाई की बड़ी और मध्यम योजनाओं से सिंचाई की गई। सिंचाई के छोटे-छोटे कार्यों से लाभान्वित क्षेत्र की आधे से अधिक वृद्धि योजना के पहले दो वर्षों में हुई। कई राज्यों में, विशेषतः बिहार, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, पंजाब, असम, बम्बई, मद्रास और मैसूर में काफी वृद्धि हुई है। उर्वरकों के प्रयोग के साथ ही सिंचाई का अधिक लाभ होता है। योजना की अवधि में अमोनियम सल्फेट की

खपत दुगुनी से अधिक हो गई है। योजना आरम्भ होने से पहले २,७५,००० टन की खपत थी, जो चार साल बाद बढ़कर ६,१०,००० टन हो गई। जापानी ढंग से चावल की खेती करने के तरीके के प्रचार की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। अब तक १६ लाख एकड़ भूमि में इस ढंग से चावल की खेती की जाती है।

८. पहली पंचवर्षीय योजना के पहले चार वर्षों में १० लाख एकड़ से अधिक भूमि केन्द्रीय ट्रैक्टर संगठन द्वारा और १४ लाख एकड़ भूमि राज्यों के ट्रैक्टर संगठनों द्वारा खेती के योग्य बनाई गई। इसके अतिरिक्त कृषकों ने यांत्रिक खेती के लिए सहायता, तथा शारीरिक परिश्रम द्वारा बन्द बनाना, भूमि को इकसार करना और उसका सुधार करना आदि कार्यक्रमों द्वारा लगभग ५० लाख एकड़ भूमि को खेती योग्य बनाया है। खेती की जमीन में वृद्धि होने के कारण उत्पादन में जितनी बढ़ोतरी हुई है, उतनी की योजना बनाते के समय आशा नहीं की गई थी। इस प्रकार योजना से पहले ३२ करोड़ ६० लाख एकड़ भूमि में खेती होती थी, जबकि १६५४-५५ में ३५ करोड़ २० लाख एकड़ भूमि में खेती होने लगी। अनाज की खेती का क्षेत्र २५ करोड़ ७० लाख एकड़ से बढ़कर २७ करोड़ २० लाख एकड़ हो गया और व्यावसायिक फसलों का क्षेत्र ४ करोड़ ६० लाख एकड़ से बढ़कर ६ करोड़ हो गया। व्यावसायिक फसलों का क्षेत्र, जो कुल खेती के क्षेत्र का १५ प्रतिशत था, बढ़कर १७ प्रतिशत हो गया, जबकि अनाज की खेती का क्षेत्र जो कुल खेती के क्षेत्र का ७८ प्रतिशत था घटकर ७७ प्रतिशत रह गया। अन्य फसलों के क्षेत्र (२ करोड़ एकड़) में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ।

दूसरी योजना का दृष्टिकोण

९. पहली पंचवर्षीय योजना में यह बहुत आवश्यक था कि कृषि सम्बन्धी कार्यक्रमों में सफलता प्राप्त हो, क्योंकि सामान्यतः अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए कोई और बात इतनी महत्वपूर्ण नहीं थी। दूसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि के कार्यक्रमों का उद्देश्य यह है कि बढ़ती हुई आबादी के लिए पर्याप्त खाद्य मिले और निरन्तर बढ़ती हुई औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था के लिए आवश्यक कच्चा माल प्राप्त हो तथा खेती की चीजें इतनी बची रहें कि और भी अधिक मात्रा में उनका निर्यात किया जा सके। दूसरी पंचवर्षीय योजना पहली योजना की भी अपेक्षा, कृषि सम्बन्धी और औद्योगिक विकास की पारस्परिक निर्भरता के प्रति अधिक सचेष्ट है। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्यक्रम बनाते समय दीर्घकालीन दृष्टि अपनानी आवश्यक है ताकि पदार्थों और मानवीय साधनों का सर्वोत्तम उपयोग हो सके, कृषि की विभिन्न शाखाओं में संतुलित विकास हो सके और ग्रामीण आय तथा जीवन-यापन के स्तर में यथेष्ट वृद्धि की स्थिति उत्पन्न की जा सके। राष्ट्रीय दृष्टिकोण से यह आवश्यक है कि कार्यक्रम बनाते समय गांवों के लोगों के सामने एक ध्येय रखा जाए जिसे प्राप्त करने का उन्हें प्रयत्न करना चाहिए। दूसरी पंचवर्षीय योजना तैयार करने के सम्बन्ध में यह कहा गया था कि उक्त ध्येय यह होना चाहिए कि लगभग १० वर्ष की अवधि में कृषि का उत्पादन दुगुना कर दिया जाए जिसमें अनाज की फसलें, तिलहन, कपास, गन्ना, बागान और अन्य फसलें, पशु-पालन जनित अन्य वस्तुएं आदि भी सम्मिलित हैं।

१०. खाद्य समस्या के सम्बन्ध में जिन बातों पर विचार करना चाहिए वे ये हैं : (१) कुल आबादी में वृद्धि, (२) शहरी आबादी में वृद्धि, (३) प्रति व्यक्ति उपभोग को बढ़ाने की

आवश्यकता, (४) दूसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यान्वित होने के कारण पैदा होने वाले संभावित मुद्रास्फीति के प्रभावों को दूर करने की आवश्यकता, और (५) राष्ट्रीय आय में वृद्धि और उसके वितरण में परिवर्तनों का खाद्य के उपभोग पर प्रभाव। उपभोग की वर्तमान दर के अनुसार १९६०-६१ में खाद्य की कुल आवश्यकता ७ करोड़ ५ लाख टन होगी। दूसरी पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक उपभोग की दर अनुमानतः बढ़कर १८·३ औंस प्रति व्यस्क व्यक्ति (अनाज १५·५ औंस और चना तथा दालें २·८ औंस) हो जाएगी जिससे कि खाद्य की कुल आवश्यकता ७ करोड़ ५० लाख टन होगी। योजना में अगले पांच वर्षों में खाद्य उत्पादन में १ करोड़ टन की वृद्धि की व्यवस्था की गई है। केलोरीज़ की दृष्टि से प्रति दिन प्रति व्यस्क व्यक्ति खाद्य का उपभोग २,२०० है जो १९६०-६१ तक बढ़कर २,४५० हो जाएगा, जबकि पोषक आहार सम्बन्धी विशेषज्ञों ने कम से कम ३,००० केलोरीज़ की सिफ़ारिश की है।

११. कई अन्य देशों की तुलना में भारत में अनाज के उपभोग की दर अपेक्षाकृत अधिक ऊंची है। इसका कारण यह है कि दूध और दूध से बनी वस्तुएं, फल और सब्जियां, अंडे, मछली और मांस आदि शक्तिदायक खाद्य जन-साधारण को खाने को नहीं मिलते। खाने-पीने की सही आदतों के सवाल के अलावा, जो निस्संदेह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण मसला है, इनमें से प्रत्येक पूरक खाद्य की पैदावार इस समय बहुत कम है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि की एक ही प्रकार की चीजों के उत्पादन पर जोर नहीं दिया जाएगा और अब तक अनाज की फसलों के उत्पादन पर ही जो बहुत अधिक बल दिया जाता रहा है वह अब थोड़ा-थोड़ा दूसरी चीजों के उत्पादन पर दिया जाएगा। दूसरी योजना में सुपारी, नारियल, लाख, काली मिर्च, काजू आदि चीजों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए कार्यक्रमों की व्यवस्था की गई है। पहली योजना में इन चीजों का उत्पादन बढ़ाने की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया था।

१२. खेती के क्षेत्र में वृद्धि करने की गुंजाइश बहुत ही कम है। इस क्षेत्र में जो वृद्धि हो भी सकती है, उससे भी मुख्यतः घटिया प्रकार के अनाजों के उत्पादन में वृद्धि होने की सम्भावना है। राष्ट्रीय आय बढ़ने के साथ घटिया प्रकार के अनाजों के स्थान पर बढ़िया प्रकार के अनाजों, जैसे चावल, गेहूं और मक्का आदि की मांग बढ़ने की सम्भावना है। इन परिस्थितियों में कृषि उत्पादन में वृद्धि करने का मुख्य साधन यही है कि अधिक भरपूर, कुशल और लाभदायक रूप से खेती करके खेती की पैदावार बढ़ाई जाए। यद्यपि उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर हमेशा ही तुलना कर सकना ठीक नहीं होता फिर भी इस बात में कोई शक नहीं कि भारत में गेहूं और चावल आदि मुख्य फसलों की औसत पैदावार कई अन्य देशों की वर्तमान पैदावार से बहुत कम है। देश के विभिन्न भागों में हाल के वर्षों में फसल काटने के जो परीक्षण किए गए हैं उनसे पता चलता है कि विभिन्न प्रदेशों की फसलों की औसत पैदावार में बड़ा अन्तर है और प्रत्येक प्रदेश में भी यह अन्तर ऐसा ही है। गत कुछ वर्षों से की जाने वाली फसल प्रतियोगिताओं से भी यह प्रकट होता है कि यदि आवश्यक प्रयत्न किया जाए और आवश्यक सहायता प्राप्त हो तो भारतीय परिस्थितियों में फसलों की पैदावार कहां तक बढ़ाई जा सकती है। अब खेती की पैदावार में तेजी से और काफी व्यापक रूप से वृद्धि कर सकना बिल्कुल सम्भव है। उसके लिए प्रदेशों, राज्यों, जिलों और ऐसे योजना क्षेत्रों को, जहां अभी तक कार्य शुरू नहीं हुआ है, ध्यान में रखकर और अधिक विस्तृत तथा क्रमबद्ध योजना बनाने की जरूरत है। फसल प्रतियोगिताओं के आंकड़ों का व्यापक रूप से प्रचार किया जाना चाहिए जिससे कि प्रत्येक प्रदेश प्रमाणित तथ्यों की दृष्टि

में अपने लक्ष्य निर्धारित कर सकें। जहां तक आवश्यक हो, फसल प्रतियोगिताओं का क्षेत्र विस्तृत करना चाहिए। केवल यही आवश्यक नहीं है कि कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए कृषकों को उत्साहित किया जाए, बल्कि यह भी जरूरी है कि प्रत्येक प्रदेश की सामान्य औसत पैदावार को बढ़ाने के लिए सब प्रकार के प्रयत्न किए जाएं। देश के प्रत्येक भाग के लिए विभिन्न फसलों की औसत पैदावार के लक्ष्य निर्धारित होने चाहिएं और इनके लिए पहले सिंचाई की सुविधाओं, वर्षा और भूमि की बनावट आदि चीजों का व्यापक वर्गीकरण किया जाना चाहिए। इन लक्ष्यों के अनुसार प्रत्येक गांव और प्रत्येक परिवार के वास्ते उत्पादन का स्तर बढ़ाने के कार्यक्रम होने चाहिएं।

१३. खेती जिन अनिश्चित बातों पर निर्भर है, उनके होते हुए भी यह जरूरी है कि खेती के क्रमबद्ध विकास के लिए भरपूर प्रयत्न किए जाएं। कृषि आयोजन के मुख्य तत्व निम्नलिखित हैं :

(१) भूमि के उपयोग की योजना;

(२) दीर्घकालीन और अल्पकालीन लक्ष्यों का निर्धारण;

(३) विकास कार्यक्रमों तथा सरकारी सहायता को उत्पादन लक्ष्यों और भूमि उपयोग योजना के साथ शृंखलाबद्ध करने जिसमें योजना के अनुसार खाद का आबंटन भी शामिल है; और

(४) एक उचित मूल्य नीति।

प्रत्येक जिले, विशेषतः प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास योजना क्षेत्र की एक सावधानी से तैयार की गई कृषि योजना होनी चाहिए जिसमें इस बात का उल्लेख होना चाहिए कि गांवों के लक्ष्य क्या हैं, भूमि में क्या-क्या चीज बोई जाएगी और विकास का क्या कार्यक्रम बनाया गया है। पहले के एक अध्याय में निर्दिष्ट एक सामान्य मूल्य नीति की दृष्टि से ऐसी स्थानीय योजनाएं बड़ी महत्वपूर्ण साबित होंगी जिनसे राज्यों, प्रदेशों और समस्त देश के लिए और अधिक सतर्कता से योजना बनाने में सहायता मिलेगी। इन स्थानीय योजनाओं की फसलों पर निम्नलिखित बातों का प्रमुख रूप से प्रभाव पड़ेगा : सिंचाई की व्यवस्था, ऋण और बाजार की सुविधाएं, खाद की व्यवस्था और विस्तार कार्यकर्ताओं तथा विशेषतः ग्रामीण कार्यकर्ताओं का कृषक के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध।

१४. उपर्युक्त लक्ष्यों की पूर्ति के लिए ग्रामीण क्षेत्र में विकास के निमित्त दूसरी पंचवर्षीय योजना में निम्नलिखित रूप से व्यय करने का प्रस्ताव रखा गया है :

कृषि और सामुदायिक विकास

विकास शीर्षक	पहली योजना		दूसरी योजना	
	करोड़ रु०	प्रतिशत	करोड़ रु०	प्रतिशत
(क) कृषि कार्यक्रम :				
१. कृषि	१९६	८१·७	१७०	४६·६
२. पशुपालन	२२	९·२	५६	१६·४
३. वन और भूमि-संरक्षण ...	१०	४·२	४७	१३·८
४ मछली उद्योग	४	१·६	१२	३·५

विकास शीर्षक	पहली योजना		दूसरी योजना	
	करोड़ रु०	प्रतिशत	करोड़ रु०	प्रतिशत
५. सहकारिता, जिसमें गोदाम और क्रय-विक्रय शामिल हैं	७	२·९	४७	१३·८
६. विविध	१	०·४	९	२·६
योग	२४०	१००·०	३४१	१००·०
(ख) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य	९०	७७·६	२००	८८·१
(ग) अन्य कार्यक्रम :				
१. ग्राम पंचायतें	११	९·५	१२	५·३
२. स्थानीय विकास कार्य ...	१५	१२·९	१५	६·६
योग	११६	१००	२२७	१००·०
	३५६		५६८	

उत्पादन लक्ष्य

१५. दूसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि उत्पादन के मुख्य लक्ष्य नीचे की तालिका में बताए गए हैं :

वस्तु	इकाई	अनुमानित उत्पादन १९५५-५६	अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य	अनुमानित उत्पादन १९६०-६१	प्रतिशत वृद्धि
खाद्यान्न	लाख टन	६५०	१००	७५०	१५
तिलहन	"	५५	१५	७०	२७
गन्ना (गुड़)	"	५८	१३	७१	२२
कपास	लाख गाँठें	४२	१३	५५	३१
पटसन	"	४०	१०	५०	२५
नारियल (तेल)	लाख टन	१·३	०·८	२·१	६२
सुपारी	लाख मन	२२·०	५·०	२७·०	२३
लाख	"	१२·०	४·०	१६·०	३३
तम्बाकू	लाख टन	२·५	—	२·५	—
काली मिर्च	हजार टन	२६·०	६·०	३२·०	२३
काजू	"	६०·०	२०·०	८०·०	३३
चाय	लाख पौंड	६,४४०	५६०	७,०००	९

इन लक्ष्यों के देशनांक निम्नलिखित हैं (आधार वर्ष १९४९-५०):

	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१
खाद्यान्न	९१	१११	१२९
तिलहन	९६	१०८	१३७
गन्ना (गुड़)	११४	११८	१४४
कपास	१०६	१६२	२१३
पटसन	१०९	१३६	१६४
अन्य फसलें जिनमें बागान भी शामिल हैं	१०५	१२५	१३६
कुल खाद्येतर फसलें	१०६	१२२	१४८
सभी वस्तुएं	९६	११५	१३५

ये लक्ष्य आरम्भिक अनुमानों के रूप में हैं जिनका आधार वह सम्भावित उत्पादन है जो विभिन्न विकास कार्यक्रमों के फलस्वरूप प्राप्त होगा। दसवें पैरे में उल्लिखित बातों की दृष्टि से विशेषतः मुद्रास्फीति की सम्भावनाओं को दूर करने के उपाय बरतने की आवश्यकता के कारण ऐसा विचार है कि साधनों में थोड़ी हेर-फेर करके कृषि उत्पादन के और अधिक ऊंचे लक्ष्य प्राप्त कर सकना आवश्यक और सम्भव है। विशेषतः राष्ट्रीय विस्तार सेवा के द्वारा प्रत्येक गांव और परिवार तक पहुंचने का उद्देश्य होना चाहिए और इन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक साधनों, सेवाओं तथा अल्प, मध्यम एवं दीर्घकालीन वित्त की व्यवस्था की जानी चाहिए। उच्चतर लक्ष्य निर्धारित करने और उन्हें पूरा करने की दृष्टि से योजना आयोग तथा खाद्य और कृषि मंत्रालय ने फसल की किस्म, भूमि तथा जल साधनों और सिंचाई, राष्ट्रीय विस्तार और अन्य क्षेत्रों के विकास कार्यक्रमों के संदर्भ में प्रत्येक राज्य और प्रदेश में कृषि कार्यक्रमों का और विस्तृत अध्ययन करने का विचार किया है।

१६. खाद्यान्न—खाद्यान्नों के लक्ष्य का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। आशा की जाती है कि खाद्यान्न में १ करोड़ टन की वृद्धि होगी, जिसमें से चावल में ३० से ४० लाख टन, गेहूं में २० से ३० लाख टन, अन्य अनाजों में २० से ३० लाख टन और दालों में १५ से २० लाख टन की वृद्धि होगी।

१७. कपास—दूसरी पंचवर्षीय योजना में सूती कपड़े के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए कपास का उत्पादन १९५५-५६ में ४२ लाख गांठ से बढ़ाकर १९६०-६१ में ५५ लाख गांठ करना होगा। कपास विकास के कार्यक्रमों में वे सब कार्य जारी रहेंगे जो पहली योजना में किए गए थे, जैसे बीजों की व्यवस्था, बीज विकास और उन्नत बीजों का वितरण, बीज और उर्वरक खरीदने के लिए किसानों को ऋण तथा कपास की खेती करने वालों में प्रचार कार्य। दूसरी योजना में विकास का एक मुख्य पहलू यह होगा कि लम्बे रेशे वाली कपास की किस्मों का उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया जाएगा, विशेषकर उन क्षेत्रों में जो सिंचाई की बड़ी-बड़ी योजनाओं के अन्तर्गत हैं। लम्बे रेशेवाली किस्मों का उत्पादन बढ़ाने में अब तक महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हुई है और इन किस्मों का अनुपात १९४८-४९ में १७·५ प्रतिशत से बढ़कर १९५४-५५ में लगभग ३७ प्रतिशत हो गया।

१८. पटसन—देश के बंटवारे से पहले पटसन के उत्पादन एवं उपलब्धि के सम्बन्ध में भारत का लगभग एकाधिकार था, क्योंकि यह भारत के लिए विदेशी मुद्रा अर्जित करने का सदा ही प्रमुख साधन रहा है। विभाजन के बाद अविभक्त भारत के पटसन का कुल उत्पादन का लगभग केवल १९ प्रतिशत ही भारत के हिस्से में आया। पटसन के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है। १९४७-४८ में इसका उत्पादन १७ लाख गांठ था, जो १९५५-५६ में बढ़कर लगभग ४० लाख गांठ हो गया, किन्तु पिछले कुछ वर्षों में भारत में जो अतिरिक्त पटसन पैदा हुआ वह सीमान्त जमीनों में हुआ था और उसकी किस्म घटिया थी, जिसके परिणामस्वरूप वह कम दामों पर बिका। पटसन के उत्पादन के कार्यक्रम में मात्रा पर जोर न देकर किस्म के बढ़िया होने पर जोर दिया जाना चाहिए, और अब पटसन की जो नई खेती की जाएगी वह बढ़िया किस्म के अनुकूल क्षेत्रों में ही की जाएगी। यदि मिलें अपनी पूरी क्षमता पर चलें, तो पटसन उद्योग को कुल ७२ लाख गांठ कच्चे पटसन की आवश्यकता होगी। इसके अलावा मिलों को लगभग १,५०,००० गांठों की और आवश्यकता होगी। इसलिए ५० लाख गांठें आंतरिक उत्पादन से और शेष बाहर से मंगाकर पूरा करने का विचार है। मुख्यतः खेती के उपायों के द्वारा १० लाख गांठें अतिरिक्त पटसन उत्पन्न करना सम्भव होना चाहिए और अन्तिम उद्देश्य यह होना चाहिए कि प्रत्येक एकड़ से पटसन की बढ़िया किस्म की औसत पैदावार हो। पटसन का उत्पादन बढ़ाने की वर्तमान योजनाओं को और अधिक विस्तृत आधार पर दूसरी योजना में भी जारी रखा जाएगा, बीज फार्म स्थापित किए जाएंगे, सुधरे हुए बीज मुहैया किए जाएंगे और साथ ही अन्य आवश्यक उपाय भी किए जाएंगे। उन्नत तरीकों से पटसन की खेती किस प्रकार की जा सकती है, इसका प्रदर्शन करने के लिए एक विस्तार सेवा का संगठन करना पटसन विकास कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग है।

१९. तिलहन—जनता के भोजन में चर्बी की पूर्ति तिलहन और वनस्पति तेलों से होती है। इसके अतिरिक्त ये निर्यात के लिए भी मूल्यवान् वस्तुएं हैं। पांच प्रमुख तिलहनों—मूंगफली, तिल, अलसी, राई और सरसों तथा रेंडी का उत्पादन १९५०-५१ में ५१ लाख टन से बढ़कर १९५५-५६ में ५५ लाख टन हो जाने की आशा थी। पहली योजना में इनके लिए यही लक्ष्य निर्धारित किया गया था। दूसरी पंचवर्षीय योजना में ५ प्रमुख तिलहनों का उत्पादन बढ़ाकर ७० लाख टन कर देने का विचार है, जिसका विवरण इस प्रकार है :-

	(लाख टन)
मूंगफली	४७·००
तिल	६·५१
अलसी	४·२८
राई और सरसों	१०·६०
रेंडी	१·६१
योग ...	७०·००

अच्छी किस्म के बीजों के उत्पादन और वितरण के लिए भारतीय केन्द्रीय तिलहन समिति ने पहली योजना में जो योजनाएं आरम्भ की थीं उनके बहुत अच्छे परिणाम निकले हैं। दूसरी योजना में अधिकाधिक रूप से इन उन्नत बीजों का प्रचार करने का प्रस्ताव रखा गया है। राज्यों की योजनाओं में सम्मिलित अन्य योजनाएं ये हैं : उर्वरकों तथा खाद का प्रयोग, कीड़ों

और बीमारियों की रोकथाम, तथा और अधिक अच्छी तथा नई किस्में तैयार करने के लिए शोध की व्यवस्था। तिलहनों के लिए और अधिक अच्छी हाट-व्यवस्था करने के लिए भी प्रयत्न किए जाएंगे।

२०. तिलहनों के अतिरिक्त उत्पादन से वनस्पति, चर्बियों तथा वनस्पति तेलों की उपलब्धि में कितनी वृद्धि होगी, इस बात पर विचार करते हुए अन्य महत्वपूर्ण खाद्य तेल—नारियल के तेल के उत्पादन, निर्यात के लिए आवश्यक मात्रा, औद्योगिक खपत आदि को भी ध्यान में रखना होगा। पांच प्रमुख तेलों तथा बिनौले और नारियल के तेल के बारे में जो स्थिति है वह नीचे की तालिका में स्पष्ट की गई है :

(हजार टन तेल)

—	अनुमानित १९५४-५५	अनुमानित १९६०-६१
कुल उत्पादन	१७६०	२११४
खाने के लिए	११३९	११९२
वनस्पति निर्माण के लिए	२५९	४३०
औद्योगिक कार्यों के लिए	२२४	२७८
निर्यात	१३८	२१४

इसके अनुसार मूंगफली के तेल का निर्यात लक्ष्य ५ लाख टन तथा अन्य तेलों का (बीज के सम्बन्ध में) निर्यात लक्ष्य २ लाख टन है। बिनौले के तेल और जो तेल खींचकर तैयार किए जाते हैं उनके उत्पादन और निर्यात बढ़ाने पर भी जोर दिया जाएगा।

२१. गन्ना—हाल के वर्षों में चीनी और गुड़ की खपत निरन्तर बढ़ी है। १९५०-५१ में जब कि नियन्त्रण की स्थिति थी, १०·७ लाख टन चीनी की खपत हुई। दूसरी योजना में दानेदार चीनी का उत्पादन २२·५ लाख टन तक बढ़ा देने का विचार है और १९६०-६१ के अन्त तक चीनी मिलों की उत्पादन क्षमता २५ लाख टन तक हो जाएगी। चीनी के कारखानों को और अधिक मात्रा में गन्ना मिल सके तथा गुड़ की खपत भी बढ़ सके, इसलिए गन्ने के १३ लाख टन अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। इससे १९५५-५६ में प्रत्याशित गन्ने का कुल उत्पादन ५८ लाख टन से बढ़कर १९६०-६१ में ७१ लाख टन हो जाएगा। परिणामतः प्रतिदिन प्रति वयस्क व्यक्ति १·७२ औंस गुड़ प्राप्त होगा। गन्ने की भरपूर खेती के लिए जो योजनाएं हैं उनमें ये बातें सम्मिलित हैं : सिंचाई की सुविधाओं की व्यवस्था, बीज-घर स्थापित करना, रोगमुक्त एवं उन्नत प्रकार के बीजों का वितरण, खाद तथा उर्वरकों का वितरण, कीड़ों और बीमारियों की रोकथाम, प्रदर्शनों एवं फसल प्रतियोगिताओं का संगठन। मुख्य बल इस बात पर दिया जाएगा कि गन्ने में मिठास की वृद्धि हो जिससे चीनी अधिक बने और गन्ना पेरने के मौसम में अधिक से अधिक मात्रा में गन्ना उपलब्ध किया जा सके।

२२. नारियल—संसार में सबसे अधिक नारियल पैदा करने वाले देशों में भारत का स्थान दूसरा है। भारत में प्रतिवर्ष लगभग तीन अरब अस्सी करोड़ नारियल पैदा होते हैं। फिर भी नारियल के तेल की दृष्टि से देश में ४०,००० टन की कमी है। आबादी में और अधिक

वृद्धि हो जाने तथा खपत का स्तर और अधिक बढ़ जाने के कारण आशा है कि १९६०-६१ में नारियल के तेल की यह कमी ८०,००० टन बढ़ जाएगी। अल्पकालीन और दीर्घकालीन प्रकार के उपायों द्वारा १९६०-६१ तक नारियल का उत्पादन तेल की दृष्टि से २,१०,००० टन तक बढ़ाने का विचार है, जबकि इस समय यह उत्पादन १,३०,००० टन है। अल्पकालीन कार्यक्रम के अन्तर्गत नारियल की बुवाई के उन्नत तरीकों का प्रचार करने के लिए प्रदर्शन केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। साथ ही यह भी बताया जाएगा कि फसल को कीड़ों और बीमारियों से किस प्रकार बचाया जाए। दीर्घकालीन कार्यक्रम के अनुसार उपयुक्त परती भूमि में खेती करके नारियल के कृषि क्षेत्र को बढ़ाया जाएगा तथा और अधिक अच्छी किस्म के पौधों के वितरण के लिए नर्सरियों का विकास किया जाएगा। नारियल की प्रति वृक्ष पैदावार ३० से बढ़ाकर ४५ कर देने की भी योजना बनाई गई है।

२३. सुपारी—नारियल की भांति देश में सुपारी की भी कमी है। सुपारी का वर्तमान उत्पादन ८१,००० टन है, जबकि आवश्यकता १,१८,००० टन की है। आबादी बढ़ जाने और खपत के स्तर में वृद्धि हो जाने के कारण १९६०-६१ के अंत में १,२९,००० टन सुपारी की आवश्यकता होगी। लेकिन चूंकि सुपारी के पेड़ पर ८ से १० वर्ष की अवधि में फल लगता है, इसलिए सुपारी के कृषि क्षेत्र में वृद्धि करने से जो परिणाम निकलेंगे वे तीसरी योजना की अवधि में ही मालूम होंगे।

फिर भी खेती के भरपूर उपायों, कीड़ों और बीमारियों की रोकथाम, अच्छे किस्म के बीज वितरण आदि उपायों द्वारा सुपारी के उत्पादन में लगभग २५ प्रतिशत वृद्धि करने का विचार है। प्रति एकड़ ६५८ पौंड औसत पैदावार को बढ़ाकर ८२० पौंड कर देने के प्रयत्न किए जाएंगे। १९६०-६१ के अंत तक सुपारी के उत्पादन का लक्ष्य ९९,००० टन होगा। भारतीय केन्द्रीय सुपारी समिति ने सुपारी बोने के लिए उपयुक्त परती भूमियों का सर्वेक्षण किया है, और दूसरी योजना में इन सम्भावनाओं की पूरी तरह से जांच करने और उनका लाभ उठाने का विचार है।

२४. लाख—कच्ची लाख से चपड़ा और कणात्मक लाख बनाई जाती है। दोनों ही निर्यात व्यापार की बड़ी महत्वपूर्ण वस्तुएं हैं। पिछले कुछ वर्षों में लाख का उत्पादन ३७,००० से ४८,००० टन तक रहा है। १९५५-५६ में ४४,००० टन उत्पादन की आशा थी। अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित करते समय निर्यात की सम्भावनाओं तथा विदेशी लाख और कृत्रिम वस्तुओं के साथ प्रतियोगिता को भी ध्यान में रखना चाहिए। दूसरी योजना में लाख का उत्पादन बढ़ाकर ५९,००० टन तक कर देने का लक्ष्य है। इसकी किस्म में सुधार करने पर भी जोर दिया जाएगा। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विभिन्न क्षेत्रों में प्रादेशिक शावक फार्म (ब्रूड फार्म) स्थापित किए जाएंगे, पौधों का सर्वेक्षण किया जाएगा और लाख की खेती के बारे में प्राविधिक शिक्षण दिया जाएगा। लाख पैदा करने वाले महत्वपूर्ण क्षेत्रों में लाख विस्तार सेवा संगठित करने का भी विचार है। इसके अतिरिक्त, क्रय-विक्रय के महत्वपूर्ण केन्द्रों में लाख के संग्रह के लिए वातानुकूलित तथा साधारण गोदाम स्थापित करने का विचार है।

२५. तम्बाकू—संसार के सबसे अधिक तम्बाकू पैदा करने वाले देशों में अमरीका और चीन के बाद भारत का स्थान है। १९५४-५५ में २,५०,००० टन तम्बाकू पैदा हुआ। तम्बाकू

की खेती के बारे में जो असली समस्या है, वह इसका उत्पादन बढ़ाने के सम्बन्ध में इतनी नहीं है जितनी कि इसकी किस्म सुधारने के विषय में। प्रतिकूल मौसम होने के कारण हाल के वर्षों में अधिकांश फसल घटिया किस्म की पैदा हुई और उसको बेचना मुश्किल हो गया। परिणामतः बहुत सारा स्टाक जमा हो गया और इस कारण दाम गिर गए। दूसरी योजना के कार्यक्रम में उत्पादन तो बहुत अधिक नहीं बढ़ाया जाएगा किन्तु इसकी किस्म सुधारने पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाएगा।

२६. **काली मिर्च**—काली मिर्च डालर अर्जित करने का महत्वपूर्ण साधन है और तिरुवांकुर-कोचीन, मलाबार तथा दक्षिण कनारा में इसका स्थानीय महत्व भी है। हाल के वर्षों में भारत को अन्य देशों की प्रतियोगिता का सामना करना पड़ा है। काली मिर्च का किस प्रकार विकास किया जाए और इसके बारे में क्या शोध की जाए, इस बारे में एक विशेष समिति ने अपने सुझाव दिए हैं। १९५४-५५ में इस बारे में एक योजना आरम्भ की गई थी और दूसरी योजना में उस पर और अधिक कार्य किया जाएगा। इस योजना का लक्ष्य मिर्च के कृषि क्षेत्र में लगभग ५०,००० एकड़ की वृद्धि करना है तथा इसके उत्पादन को २६,००० टन से बढ़ाकर ३२,००० टन तक पहुंचा देना है।

२७. **काजू**—काजू डालर अर्जित करने का एक अन्य महत्वपूर्ण साधन है। इसका वार्षिक उत्पादन लगभग ६०,००० टन है और मुख्यतः वह मद्रास और तिरुवांकुर-कोचीन में पैदा होता है। यद्यपि कुछ अन्य देशों, विशेषतः पूर्वी अफ्रीका में व्यावसायिक पैमाने पर काजू का संग्रह किया जाता है, किन्तु काजू के विधायन में व्यावहारिक रूप से भारत का ही एकाधिकार है। काजू के विधायन के बारे में निरन्तर बढ़ती हुई प्रतियोगिता की दृष्टि से देश में काजू के उत्पादन में विकास करने की बड़ी भारी आवश्यकता है। मसाला जांच समिति ने यह सुझाव दिया था कि मद्रास के पूर्वी तटवर्ती जिलों, कोंकण के तटवर्ती जिलों और पश्चिमी तट पर अन्य क्षेत्रों में बागान आधार पर काजू की खेती की जानी चाहिए। जिन कारखानों में काजू तैयार किया जाए उनके आस-पास ही काजू की खेती होनी चाहिए। मध्य भारत, मैसूर, कुर्ग, आंध्र, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल और अंडमान द्वीप में भी काजू की खेती करने की गुंजाइश है। १९६०-६१ के अन्त तक काजू का उत्पादन ६०,००० टन से बढ़ाकर ८०,००० टन तक पहुंचा देने का विचार है।

२८. **चाय, काफी और रबड़**—चाय, काफी और रबड़ के उत्पादन एवं अन्य कार्यक्रमों के सम्बन्ध में बागान जांच आयोग ने विचार किया है। १९५० और १९५४ के बीच चाय का उत्पादन ६१ करोड़ ३० लाख से ६४ करोड़ ४० लाख पौंड तक रहा है, और इसका निर्यात ४२ करोड़ ७० लाख से ४७ करोड़ पौंड तक हुआ है। सामान्यतः ऐसा प्रतीत होता है कि योजना के अन्त तक चाय का उत्पादन लक्ष्य, जो ७० करोड़ पौंड है, प्राप्त किया जा सकेगा और इसी प्रकार इसका निर्यात भी लगभग ४७ करोड़ से ५० करोड़ पौंड तक होने लगेगा। काफी बोर्ड ने काफी का उत्पादन बढ़ाने के लिए एक १५ वर्षीय विकास कार्यक्रम की जांच की है जिसके अनुसार काफी का उत्पादन २५,००० टन से बढ़कर ४८,००० टन हो जाएगा। जितनी वृद्धि होगी, उसमें से १०,००० टन की वृद्धि भरपूर खेती और वर्तमान बागानों को सुधारकर की जाएगी और १३,००० टन की वृद्धि सुधार एवं नए बागान लगाकर की जाएगी। वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय ने रबड़ बोर्ड द्वारा तैयार की गई एक योजना पर विचार किया है जिसके अनुसार १० साल की अवधि में ७,००० एकड़ प्रति वर्ष के

हिसाब से ७०,००० एकड़ क्षेत्र में रबड़ की खेती की जाएगी और २,००० एकड़ प्रति वर्ष के हिसाब से १०,००० एकड़ नई भूमि में रबड़ की खेती की जाएगी। चाय, काफी और रबड़ के लिए निश्चित कार्यक्रम अभी स्वीकृत नहीं हुए हैं।

विकास कार्यक्रम

२९. यह बात पहले ही स्पष्ट की जा चुकी है कि किसी योजना के अंतर्गत कार्यान्वित विकास कार्यक्रमों तथा कृषि उत्पादन के स्तर के बीच कोई निश्चित सम्बन्ध स्थापित करना कठिन है। केवल कुछ समय के बाद ही ऐसी प्रवृत्तियों का अध्ययन किया जा सकता है। किसी एक प्रकार की फसलों, जैसे खाद्यान्नों के उत्पादन का कार्यान्वित किए गए विकास कार्यक्रमों के साथ सम्बन्ध स्थापित कर सकना या विभिन्न प्रकार की फसलों के उत्पादन पर इन कार्यक्रमों का जो प्रभाव पड़ता है उसे अलग-अलग बता सकना और भी अधिक कठिन है। फिर भी, पहली योजना की तरह सम्भावित उत्पादन में, विशेषत: खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि के सम्भव साधनों की जांच के लिए प्रयत्न किया गया है। पूर्व उल्लिखित एक करोड़ टन की वृद्धि मोटे तौर पर निम्नलिखित कार्यक्रमों से होगी :

	(लाख टन)
सिंचाई के बड़े साधनों से	२४
सिंचाई के छोटे साधनों से	१८
उर्वरक और अन्य खादों से	२५
उन्नत बीजों से	१०
भूमि को खेती योग्य बनाने और उसके विकास से ...	८
कृषि प्रणाली में आम सुधार से	१५
योग .	१००

हालांकि पिछले कई वर्षों में सिंचाई या उर्वरकों के प्रयोग अथवा अन्य कारणों से खाद्य उत्पादन में वृद्धि को जानने के लिए मोटे पैमाने तैयार किए गए हैं, फिर भी इन्हें बहुत अधिक प्रामाणिक नहीं माना जा सकता। यह जानने के लिए कि विभिन्न कार्यक्रमों का अलग-अलग क्या प्रभाव होता है और ऐसे तरीके निकालने के लिए कि जिनसे यह ठीक-ठीक पता चल सके कि सामान्य मौसम में उत्पादन में कितनी वृद्धि होगी, बहुत अधिक अध्ययन की आवश्यकता है। सिंचाई, उर्वरकों और खेती के सुधरे हुए तरीकों आदि कार्यक्रमों का निस्संदेह एक-दूसरे पर प्रभाव पड़ता है और वे अन्योन्याश्रित हैं। इसके अतिरिक्त, कृषक खेती के सुधरे हुए तरीकों से खेती करने लगेगा और जब वह उन उपलब्ध साधनों को जान जाएगा जिनका उसकी चारों ओर की परिस्थिति पर प्रभाव पड़ता है और जब स्थानीय जनता कार्य करने के लिए और अधिक संगठित हो जाएगी, तब सिंचित क्षेत्रों के उत्पादन पर काफी प्रभाव पड़ने की सम्भावना है।

३०. दूसरी पंचवर्षीय योजना में २ करोड़ १० लाख एकड़ भूमि में सिंचाई की जाने की आशा है—१ करोड़ २० लाख एकड़ भूमि में सिंचाई की बड़ी और मध्यम योजनाओं से और ९० लाख एकड़ में सिंचाई के छोटे-छोटे साधनों द्वारा। राज्यों के कृषि कार्यक्रमों में सिंचाई के छोटे-छोटे कार्यों की आंशिक रूप से व्यवस्था की जाती है और उसी अंश में

राष्ट्रीय विस्तार एवं सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में भी ऐसा किया जाता है। पहले कार्यक्रम में यह भी व्यवस्था है कि राज्यों की नलकूप योजनाओं द्वारा लगभग १० लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जाएगी। विभिन्न राज्यों में ३,५०० से अधिक उत्पादन नलकूप बनाए जाने की आशा है। अब तक उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब और पेप्सू में ही नलकूप बने हैं। दूसरी योजना में नए प्रदेशों में नलकूप कार्यक्रम कार्यान्वित किया जाएगा। एक प्रारम्भिक नलकूप योजना के अन्तर्गत भूगर्भस्थ जल की प्राप्ति के लिए इन प्रदेशों की जांच की जा रही है। सिंचाई के लघु कार्यक्रम की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि राज्यों के कृषि विभाग तथा राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों के लिए उत्तरदायी जिला विकास कर्मचारियों के बीच पूरा-पूरा सहयोग हो। प्रत्येक राज्य और जिले में इन दोनों को मिलाकर सिंचाई के लघु कार्यों का कार्यक्रम तैयार करना चाहिए और यह तय करना चाहिए कि सिंचाई के लक्ष्य क्या हों। सिंचाई के उपयुक्त छोटे-छोटे कार्यों की स्थापना के लिए वैज्ञानिक सर्वेक्षणों की आवश्यकता है। पिछले दस वर्षों में प्रत्येक क्षेत्र में सिंचाई के बहुत-से कार्य जो दीर्घ-काल से आवश्यक और संभव समझे जा रहे थे किए गए हैं, और अब नए रूप से जांच करना जरूरी है। अभी हाल में खाद्य और कृषि मंत्रालय ने मध्य प्रदेश, हैदराबाद और बम्बई राज्य के पूर्वी भागों में, जहां खाद्यान्न की कमी हो जाती है, जल साधनों का सर्वेक्षण आरम्भ किया है। एक दूसरा पहलू जिसकी ओर फिर से ध्यान दिया जाना चाहिए, यह है कि सिंचाई के छोटे-छोटे साधनों के निर्माण के साथ-साथ पुराने अधिकांश साधनों का उपयोग नहीं किया जा रहा है। यह सुझाव दिया गया है कि राज्य सरकारों को सिंचाई के छोटे-छोटे कार्यों की देखभाल के लिए विद्यमान व्यवस्थाओं की समीक्षा करनी चाहिए और जहां आवश्यक हो, उन्हें नए कानून बनाने चाहिएं जिनसे कि ग्रामीण जनता पर काफी जिम्मेदारी डाली जा सके ताकि यदि सिंचाई के छोटे साधनों की देखभाल न की जाए तो उनकी मरम्मत की जा सके और सम्बद्ध ग्रामीण जनता से उनकी लागत वसूल की जा सके। कई राज्यों के पंचायत कानून में यह व्यवस्था की गई है कि जनता मेहनत-मजदूरी करके अपना सहयोग दे। इस प्रकार की सहायता का उपयोग सिंचाई के स्थानीय साधनों की देखभाल के लिए किया जाना चाहिए।

३१. १९५५ में नत्रजन उर्वरक की खपत ६,१०,००० टन थी, जिसे दूसरी योजना में बढ़ाकर १८ लाख टन कर देने का विचार है। फास्फेट उर्वरकों की खपत भी बढ़ाई जाएगी। योजना में कूड़े और कचरे की खाद के उपयोग की भी व्यवस्था की गई है। सब क्षेत्रों में हरी खाद, खली और अन्य खादों के प्रयोग की ओर भी विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। दूसरी पंचवर्षीय योजना में रासायनिक उर्वरकों की और अधिक पैमाने पर प्राप्ति तथा वितरण के कारण केन्द्र तथा राज्यों की वर्तमान प्रशासनिक प्रबन्धों को और सुदृढ़ बनाने का सवाल पैदा होता है। केन्द्रीय सरकार ने १९४४ से केन्द्रीय उर्वरक संगठन नामक एक व्यापारिक योजना कार्यान्वित की है। इस संगठन का कार्य यह है कि वह राज्यों तथा उपभोक्ताओं की, उदाहरणार्थ चाय और काफी बागान उपभोक्ताओं की जरूरतें मालूम करे, आवश्यक मात्रा में उर्वरक प्राप्त करे, मूल्य निश्चित करे और उर्वरकों के वितरण के लिए आवश्यक प्रबन्ध करे। राज्यों में राज्य सरकारें ही सरकारी बिक्री केन्द्रों, निजी वितरण संस्थाओं तथा सहकारी संगठनों द्वारा उर्वरकों का वितरण करती हैं। विभिन्न राज्यों में वितरण की व्यापक व्यवस्थाएं अलग-अलग हैं। चूंकि नए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जा रहा है और देश में खाद विषयक परीक्षण किए जा रहे हैं, इसलिए यह बात बड़ी महत्वपूर्ण है कि उर्वरकों के प्रयोग के सम्बन्ध

में अधिक से अधिक व्यापक पैमाने पर जानकारी कराई जाए और कृषकों को पर्याप्त पथ-प्रदर्शन तथा सहायता दी जाए। जिन केन्द्रों से उर्वरक ख़रीदे जा सकें, उनकी संख्या में काफी वृद्धि करने की जरूरत है। यह भी जरूरी है कि उर्वरकों का इतना स्टाक जमा रखा जाए कि उनकी उपलब्धि में कभी कोई कमी न आ सके। और अन्तिम बात यह है कि गांवों में उर्वरकों के वितरण के लिए मुख्यतः सहकारी समितियों का ही उपयोग किया जाना चाहिए।

३२. राज्यों की योजनाओं में बीज विकास के लगभग ३,००० फार्मों की व्यवस्था है, जिनके अन्तर्गत कुल मिलाकर लगभग ९३,००० एकड़ क्षेत्र आता है। सामान्यतः प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड में एक बीज फार्म और एक बीज गोदाम होगा। स्थानीय फार्मों में उत्पन्न बीज को रजिस्टर-शुदा बीज उत्पादकों के फार्मों में और अधिक विकसित किए जाने के बाद खेतिहरों को दिया जाएगा। बीज विकास और वितरण कार्यक्रम को और भी अधिक आगे बढ़ाना होगा ताकि राष्ट्रीय विस्तार क्षेत्रों की सारी जरूरतें पूरी की जा सकें। बीज की जांच करने के केन्द्र भी खोले जाएंगे जिससे कि कुछ प्रकार के बीजों, विशेषतः सब्जी उगाने के लिए किस्मों के मानदण्ड निर्धारित किए जा सकें और उनके अनुसार ही कार्य कराया जा सके। कई राज्यों ने सहकारी बीज गोदाम स्थापित करने के लिए भी कार्यक्रम बनाए हैं। दूसरी योजना में जापानी ढंग से धान की खेती किए जाने वाला क्षेत्र १६ लाख एकड़ से बढ़कर ४० लाख एकड़ हो जाएगा।

३३. दूसरी योजना में केन्द्रीय और राज्य ट्रैक्टर संगठनों, किसानों के व्यक्तिगत परिश्रम तथा अन्य साधनों द्वारा १५ लाख एकड़ भूमि को फिर से खेती योग्य बनाने और २० लाख एकड़ से अधिक क्षेत्र में भूमि सुधार के कार्यक्रम आरम्भ करने का विचार है। तैयार किए गए एक कच्चे कार्यक्रम के अनुसार अगले दो वर्षों में केन्द्रीय ट्रैक्टर संगठन लगभग ९६,००० एकड़ परती और जंगली भूमि को खेती योग्य बनाएगा और जिसमें पहले खेती की जा चुकी है ऐसी १,४९,००० एकड़ भूमि की जुताई करेगा। भोपाल में एक ट्रैक्टर प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किया जा चुका है और एक अन्य केन्द्र खोलने का विचार है ताकि ट्रैक्टरों के मिस्त्रियों और चालकों को प्रशिक्षण के अवसर मिल सकें। योजना में ट्रैक्टरों की जांच करने वाला एक केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था की गई है जो भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल सब प्रकार के ट्रैक्टरों की उपयुक्तता की जांच करने के अलावा डीजल इंजनों तथा पम्पिंग सेटों की भी जांच करेगा।

३४. राज्यों के विस्तार कार्य में शुष्क खेती (बिना नहरों वाली कृषि भूमि) के तरीकों से जो सहायता मिल सकती है उसकी ओर अभी तक पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। जिस पैमाने पर सिंचाई के कार्यक्रम किए जा रहे हैं, उसके बावजूद बहुत-सी भूमि को वर्षा पर निर्भर रहना होगा। इसलिए शुष्क खेती की सर्वोत्तम प्रणालियों को व्यापक रूप से अपनाने के महत्व पर विशेष जोर देना होगा। विशेषतः जल और भूमि दोनों के संरक्षण के लिए विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों के क्षेत्रों में ऊंची-नीची जमीन पर समोच्च बांध बनाने को खास तौर पर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। यद्यपि देश के कुछ भागों में यान्त्रिक साज-सामान की व्यवस्था करना आवश्यक है, फिर भी सामान्यतया स्थानीय श्रमिकों के द्वारा ऊंची-नीची जमीन में समोच्च बांध बनाने का कार्य किया जा सकता है और इस कार्य में प्रशिक्षित कृषि कर्मचारियों की आवश्यक सहायता एवं परामर्श प्राप्त किया जाना चाहिए। बम्बई, सौराष्ट्र, मध्य प्रदेश, हैदराबाद, विंध्य प्रदेश, भोपाल और उत्तर प्रदेश आदि राज्यों ने इस प्रकार के बांध बनाने के

लिए बड़े-बड़े कार्यक्रम बनाए हैं। दूसरी योजना की अवधि में इन राज्यों में १५ लाख एकड़ से अधिक भूमि में इस प्रकार के बांध बनाए जाएंगे।

कई राज्यों में शुष्क क्षत्रों में चकबन्दी के महत्व को पूरी तरह से अनुभव नहीं किया जा रहा है। जिन क्षेत्रों में कूओं जैसे सिंचाई के छोटे-छोटे साधन जुटाए जा सकते हैं, वहां निस्संदेह चकबन्दी के और भी अधिक लाभ हैं, किन्तु शुष्क खेती की परिस्थितियों में भी चकबन्दी के काफी लाभ हैं। इस विषय पर भूमि सुधार एवं कृषि पुनर्गठन सम्बन्धी अध्याय में और अधिक विस्तार से विचार किया गया है।

३५. पौधों को कीड़ों से बचाने की दिशा में, विशेषतः टिड्डी नियंत्रण के सम्बन्ध में सरकारी अभिकरणों ने महत्वपूर्ण कार्य किया है। किसान अपनी फसल को कीड़ों और बीमारियों से किस प्रकार बचाए, इस बारे में उसे शिक्षित करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इसी प्रकार राज्यों के कृषि विभागों को बैलों द्वारा चलाए जाने वाले उपयुक्त प्रकार के खेती के औजार तैयार करने के लिए और अधिक एवं निरन्तर अध्ययन करना चाहिए। योजना काल में केन्द्रीय तथा राज्य सरकारें पौधों को कीड़ों से बचाने के अपने-अपने कार्य और अधिक तेजी से करेंगी। मुख्य बन्दरगाहों तथा हवाई अड्डों पर ऐसे केन्द्र स्थापित किए जाएंगे जहां बीमारी लगे पौधों को अलग कर दिया जाएगा। पहली पंचवर्षीय योजना में पौधों के संरक्षण सम्बन्धी उपकरणों के लिए चार केन्द्र स्थापित किए गए थे। इन्हें सुदृढ़ किया जाएगा और १० नए केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। टिड्डी दल के बारे में जांच करने के लिए एक क्षेत्रीय केन्द्र भी स्थापित किया जाएगा।

खाद्य और कृषि मंत्रालय ने एक ऐसी योजना बनाने की व्यवस्था की है जिसके अनुसार खेती के औजारों को सुधारा जाएगा और नए प्रकार के औजार बनाए जाएंगे। पिछले वर्षों में देश के कई केन्द्रों में यह कार्य किया गया है और दूसरी योजनाओं में इसे और अधिक तेजी से करने की जरूरत है। अनेक राज्यों ने किसानों को उचित मूल्य पर खेती के सुधरे हुए औजार देने की व्यवस्था की है।

पश्चिमी देशों में खेती की उन्नत प्रणालियों के विकास में कृषि सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तिकाओं तथा अन्य प्रकार के साहित्य से बड़ी सहायता मिली है। भारतीय कृषि शोध परिषद ने इस दिशा में कदम उठाए हैं और खाद्य और कृषि मंत्रालय की योजना में इस प्रकार के अन्य कार्यों की व्यवस्था की गई है। यह भी एक ऐसा कार्य है जिसे राज्यों के कृषि एवं विस्तार अधिकारियों तथा अन्य संगठनों को उच्च प्राथमिकता देनी चाहिए।

बाग-बगीचे

३६. आगे आने वाले अध्यायों में पशुपालन, डेरी और दूध की उपलब्धि, वन तथा भूमि संरक्षण सम्बन्धी कार्यक्रमों का विस्तार से विवेचन किया गया है, किन्तु दूसरी पंचवर्षीय योजना में सब्जियों और फसलों की खेती के विकास के लिए जो कार्य किए जाएंगे, उनके बारे में यहां उल्लेख कर देना उचित होगा। उत्पादन के वर्तमान स्तर पर फल और सब्जियां क्रमशः लगभग १·५ और १ औंस प्रति व्यक्ति उपलब्ध हैं। संरक्षक खाद्यों की उपलब्धि बढ़ाने तथा कृषि उत्पादन में और अधिक विभिन्नता लाने के लिए फलों तथा सब्जियों के उत्पादन में वृद्धि करना आवश्यक है। बाग-बगीचों के विकास के लिए योजना में ८ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। नए बगीचे लगाने के लिए कृपकों को दीर्घकालीन ऋण दिए जाएंगे और वर्तमान बगीचों को ठीक-ठाक करने के लिए अल्पकालीन ऋण की व्यवस्था की जाएगी।

नई नर्सरियां भी स्थापित की जाएंगी। मालियों के प्रशिक्षण और राज्यों के बाग-बगीचों के कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि करने के लिए भी व्यवस्था की गई है। राज्यों की योजनाओं में लगभग ५,००,००० एकड़ वर्तमान बगीचों को ठीक-ठाक करने और लगभग २,००,००० एकड़ जमीन में नए बगीचे लगाने की व्यवस्था की गई है। सब्जी उगाने वालों को अच्छी किस्म के बीज उधार देकर तथा उन्हें टेकनीकल परामर्श देकर विशेषतः शहरों के आसपास सब्जियों के उत्पादन को प्रोत्साहित किया जाएगा। राज्यों की योजनाओं में आलू के बीज के विकास के लिए भी व्यवस्था की गई है। फल और सब्जी पैदा करने वालों के लिए क्रय-विक्रय सहकारी समितियां संगठित करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा। फल विकास एवं सब्जियों के संरक्षण के लिए, डिब्बा बन्द उद्योग की सहायता के लिए तथा ठंडे गोदाम स्थापित करने के लिए खाद्य और कृषि मंत्रालय ने १·७५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की है। डिब्बा बन्द फल और सब्जियों का वार्षिक उत्पादन २०,००० टन से बढ़ाकर ५०,००० टन तक पहुंचा देने का विचार है। योजना में फलों एवं सब्जियों से बनी संरक्षित वस्तुओं के निर्यात को प्रोत्साहन देने की भी व्यवस्था की गई है और आशा है कि योजना के अन्त तक इन चीजों का निर्यात १,००० टन से बढ़कर ११,००० टन हो जाएगा।

कृषि सम्बन्धी शोध और शिक्षा

३७. राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक योजना के अधिक उन्नत क्षेत्रों में कृषकों को जो शोध सम्बन्धी परिणाम बताए गए थे, वे उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिए हैं तथा और अधिक सूचना की मांग की है। ऐसी सम्भावना है कि पुरानी और नई समस्याओं के समाधान की मांग दूसरी पंचवर्षीय योजना में और तेजी से बढ़ेगी। इस मांग को पूरा करने के लिए कृषि विभागों तथा संस्थाओं को तैयार रहना चाहिए। पिछले कई वर्षों से भारतीय कृषि शोध परिषद और उससे सम्बद्ध संस्थाएं अलग-अलग समस्याओं की जांच-पड़ताल करने में लगी रही हैं। शोध के परिणामों को कार्यान्वित करने में ढिलाई हुई है और शोधकों ने किसानों के दिन प्रतिदिन के अनुभवों और जरूरतों को ध्यान में रखकर समस्याओं का विवेचन नहीं किया। दूसरी पंचवर्षीय योजना में उन जटिल समस्याओं पर अधिक ध्यान दिया जाएगा जो शोध एवं विकास के बीच एक कड़ी स्थापित करती हैं, और साथ ही आधारभूत समस्याओं के बारे में भी कार्य जारी रहेगा। ये कार्य केन्द्रीय और राज्य सरकारों तथा भारतीय कृषि शोध परिषद और राज्यों के कृषि कालेजों तथा अन्य संस्थाओं के सहयोग से किए जाएंगे। हाल में कृषि सम्बन्धी शोध एवं शिक्षा के संगठन विषयक कुछ प्रश्नों पर भारतीय और अमेरिकी विशेषज्ञों के एक संयुक्त दल ने विचार किया है।

३८. कृषि विषयक शोध के लिए योजना में लगभग १४·१५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है—४·६५ करोड़ रुपए केन्द्रीय माल समितियों द्वारा और ९·५० करोड़ रुपए खाद्य और कृषि मंत्रालय के कार्यक्रमों में। राज्यों की योजनाओं में भी काफी संख्या में शोध सम्बन्धी योजनाएं हैं। भारतीय कृषि शोध परिषद इन योजनाओं में सहायता देगी। इस परिषद ने कई जांच-पड़ताल विषयक कार्य आरम्भ किए हैं, जो दूसरी योजना में जारी रखे जाएंगे। इनमें ये बातें सम्मिलित हैं: जिसमें रतुआ न लगे ऐसा गेहूं पैदा करना, कृषकों के खेतों में खाद सम्बन्धी परीक्षण करना ताकि खाद सम्बन्धी कार्यक्रम तैयार हो सकें, और नए प्रकार के उर्वरक से खेत तैयार करना। भारत-अमेरिकी टेकनीकल सहयोग कार्यक्रम के अधीन जारी की गई एक योजना के अनुसार १८ केन्द्रों में फसलों के उत्पादन और भूमि प्रबन्ध के

सम्बन्ध में जो परीक्षण किए गए हैं, वे १६ अन्य केन्द्रों में भी किए जाएंगे। न्यासर्गीय तृणकघाती (हार्मोनल वीड़ी साइड्स) द्वारा नियन्त्रण के तरीकों की जांच के लिए पहली पंचवर्षीय योजना में जो योजना आरम्भ की गई थी, उसका विस्तार किया जाएगा। बैलों से चलने वाले खेती के औजारों के लिए ४ शोध एवं जांच केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। अंकुरण के सम्बन्ध में उन्नत प्रकार के बीजों की किस्म की जांच के लिए और यह जानने के लिए कि झाड़-झंखाड़ के बीजों का कहां तक बुरा असर पड़ता है, आशा है ११ जांच केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। अपनी वर्तमान शोध प्रयोगशालाओं तथा फार्मों को सुदृढ़ करने के लिए राज्य सरकारों को सहायता दी जाएगी।

३९. भारतीय कृषि शोध संस्थान केन्द्रीय आलू शोध संस्थान केन्द्रीय चावल शोध संस्थान और गन्ना विस्तार संस्थान ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए आधारभूत शोध के बारे में कार्यक्रम बनाए हैं। भारतीय कृषि शोध संस्थान ने पहली योजना में भूमि की उर्वरता, उर्वरक के प्रयोग तथा गेहूं में लगने वाले रतुए की रोकथाम के बारे में जांच-पड़ताल की थी, जिसके परिणामस्वरूप गेहूं की ऐसी किस्में निकल आई है, जिन्हें रतुआ नहीं लगता। हाल में एक विशेषज्ञ समिति ने इसके शोध संगठन तथा कार्यक्रम की समीक्षा की है, और सिफारिश की है कि इसके विभिन्न विभागों को सुदृढ़ बनाया जाए। जिन नई दिशाओं में जांच-पड़ताल की जाएगी, उनमें से कुछ ये हैं: भूमि का प्रमापीकरण, भूमि के सम्बन्ध में शीघ्रता से जांच, कीड़ों को मारने वाली चीजों की जांच और उनको प्रमाणित करना, टिड्डियों को एक जगह एकत्र करना, पौधों की बीमारियों के कारण होने वाली हानि का निर्धारण तथा कृषि शोध विषयक समस्याओं के समाधान में आणविक शक्ति का प्रयोग। बाग-बगीचों के लिए एक विभाग भी स्थापित किया जाएगा। संस्था के कार्यक्रमों के अनुसार विषाणु तत्वों की शोध के लिए प्रादेशिक केन्द्र, बीजों की जांच के लिए एक प्रयोगशाला और पौधों को लगाने के लिए एक ब्यूरो भी स्थापित किया जाएगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना में कार्यान्वित करने के लिए संस्थान ने ९८ शोध विषयक योजनाएं बनाई हैं।

४०. पहली पंचवर्षीय योजना में केन्द्रीय आलू शोध संस्थान ने प्रायोगिक शोध तथा आलुओं के विकास के लिए एक एकीकृत योजना आरम्भ की थी। अब यह संस्थान रोगमुक्त बीजों का भंडार जमा रखने तथा सुधरी हुई किस्मों के उत्पादन की ओर विशेष ध्यान देगा। साथ ही आलुओं के अलावा अन्य कन्द फसलों के बारे में भी जांच करेगा। केन्द्रीय चावल शोध संस्थान चावल के सम्बन्ध में आधारभूत शोध कार्य करता रहा है और इस विषय में सब प्रकार की सूचना का समन्वय केन्द्र रहा है। अब यह संस्थान और अच्छा चावल पैदा करने के लिए उप-केन्द्र स्थापित करेगा। भारतीय केन्द्रीय गन्ना समिति के तत्वावधान में गन्ना सम्बन्धी शोध की समस्याओं का अध्ययन किया जा रहा है। गन्ना सम्बधी शोध कार्यक्रम के अन्तर्गत जो कार्य किए जाएंगे, वे ये हैं:—गन्ने की ऐसी किस्मों का अध्ययन जिनसे अधिक गन्ना पैदा हो और उससे अधिक चीनी प्राप्त हो, पैदावार तथा रस की किस्म की दृष्टि से उर्वरकों और खादों का इन किस्मों पर होने वाला प्रभाव, विभिन्न प्रदेशों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त अदल-बदलकर गन्ना बोने की प्रणालियां, झाड़-झंखाड़ और कुकुरमुत्ता से होने वाली बीमारियों की रोकथाम, रोग विरोधी शक्ति की प्राप्ति, फसलों में लगने वाले कीड़ों पर जलवायु का प्रभाव, गुड़ बनाने तथा उसके संग्रह, कीड़ों और उन्नत प्रकार के कोल्हू तथा रस पकाने वाली भट्ठियों के बारे में शोध। भारतीय गन्ना शोध संस्थान भारतीय चीनी टेकनोलोजी संस्थान और गन्ना विकास संस्थान में कई शोध विषयक योजनाओं को कार्यान्वित किया जा रहा है।

४१. भारत सरकार द्वारा स्थापित सात केन्द्रीय हाट-व्यवस्था समितियों में से हरेक ने अपने-अपने से सम्बन्धित फसल के बारे में जांच-पड़ताल करने का एक कार्यक्रम बनाया है। इस प्रकार भारतीय केन्द्रीय कपास समिति की ७२ शोध योजनाओं के बारे में इस समय जांच-पड़ताल की जा रही है। यह समिति चार प्रादेशिक शोध केन्द्र स्थापित करेगी, बम्बई में टेकनोलौजिकल प्रयोगशाला का पुनर्निर्माण कराएगी तथा लम्बे रेशे वाली कपास के सम्बन्ध में शोध सम्बन्धी कार्य और तेजी से करेगी। कलकत्ता में पटसन की टेकनोलौजिकल प्रयोगशाला का, जो भारतीय केन्द्रीय पटसन समिति के अधीन कार्य करती है, विकास किया जाएगा तथा उसे और सुदृढ़ बनाया जाएगा। भारतीय केन्द्रीय तिलहन समिति तेलों के लिए एक टेकनोलौजिकल संस्था स्थापित करेगी। इस समिति ने तिलहन की कुछ सुधरी हुई किस्में तैयार की हैं और यह ऐसी किस्मों को पैदा करने के बारे में और आगे कार्य करेगी जो सुधरी हुई हों और जिनसे तेल भी अधिक मात्रा में प्राप्त हो। भारतीय केन्द्रीय तम्बाकू समिति तम्बाकू के बारे में अपना शोध कार्य और बढ़ाएगी, क्योंकि हाल ही में बढ़िया किस्म के तम्बाकू की पैदावार में कमी होने के कारण तम्बाकू के निर्यात में भी कमी हो गई है। तम्बाकू की किस्म सुधारने के बारे में विशेष जोर दिया जाएगा और राजमुन्द्री में तैयार की गई नई किस्मों के वैज्ञानिक परीक्षण किए जाएंगे। चूंकि देश की आवश्यकताओं को पूरा करने की दृष्टि से नारियल का उत्पादन अपर्याप्त है, इसलिए भारतीय केन्द्रीय नारियल समिति अपने दो वर्तमान शोध केन्द्रों को सुदृढ़ करेगी और तीन प्रादेशिक शोध केन्द्रों का संगठन करेगी ताकि नारियल बोने की प्रणालियों को सुधारकर, अधिक पैदावार की किस्में तैयार करके और पौधों को कीड़े एवं बीमारियां लग जाने के कारण होने वाली हानियों को कम करके प्रति वृक्ष नारियल की पैदावार बढ़ाई जा सके। सुपारी के सम्बन्ध में भी दीर्घकालीन कार्य के रूप में शोध करनी होगी, क्योंकि देश में सुपारी की भी कमी है। सुपारी की फसल हमेशा बनी रहती है और इस पर फल लगने में ८ से १० वर्ष तक का समय लगता है। एक केन्द्रीय शोध केन्द्र और तीन प्रादेशिक शोध केन्द्र पहले ही स्थापित किए जा चुके हैं और भारतीय केन्द्रीय सुपारी समिति के तत्वावधान में एक केन्द्रीय शिल्प विज्ञान सम्बन्धी प्रयोगशाला और तीन अन्य प्रादेशिक केन्द्र स्थापित करने का विचार है। लाख उपकर समिति भी लाख के प्रयोग के सम्बन्ध में अपने शोध विषयक कार्य और तेजी से करेगी। दूसरी पंचवर्षीय योजना में फलों और सब्जियों के विकास के लिए कार्यक्रम बनाया गया है। इसके अतिरिक्त भारतीय कृषि शोध संस्थान में बाग-बगीचों सम्बन्धी एक विभाग स्थापित किया जाएगा, साथ ही आम, अंगूर, अनन्नास, सेब आदि महत्वपूर्ण फलों की फसलों में सुधार करने के लिए प्रादेशिक आधार पर बाग-बगीचों सम्बन्धी शोध केन्द्र स्थापित करने का भी विचार है।

४२. उपर्युक्त प्रौद्योगिक शोध कार्यक्रमों के अतिरिक्त इस समय कृषि के आर्थिक पहलुओं का चार कृषि-अर्थ शोध केन्द्रों में अध्ययन किया जा रहा है। ये केन्द्र १९५४-५५ में दिल्ली, शांति निकेतन, पूना और मद्रास में स्थापित किए गए थे। योजना काल में दो और कृषि-अर्थ केन्द्र स्थापित करने का विचार है। योजना आयोग की शोध कार्यक्रम समिति के तत्वावधान में बम्बई, पंजाब, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, और मद्रास में कृषि फार्मों के प्रबन्ध के सम्बन्ध में अध्ययन किए जा रहे हैं। योजना आयोग के कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन के कार्य के परिणामस्वरूप कृषि विकास के संस्थापन के पहलुओं के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध हो रही है। इन अध्ययनों तथा ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण के सम्बन्ध में भारत

के रिजर्व बैंक द्वारा किए गए अन्य अध्ययनों की सहायता से भारतीय कृषि के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी की जो कमी है, उसके पूरा होने की आशा है। जिन चीजों के बारे में जानकारी की कमी है, वे ये हैं : फार्मों की लागत, खेतों के आकार का आर्थिक पक्ष, कृषि में बीज और पैदावार का सम्बन्ध, मिली-जुली खेती के आर्थिक पहलू, अर्ध रोजगार का परिमाण, ऋण की आवश्यकताएं, कर्जदारी, पूंजी निर्माण आदि।

४३. सारे देश में राष्ट्रीय विस्तार सेवा लागू करने के निर्णय के साथ ही कृषि शिक्षा की उपलब्ध सुविधाओं में विस्तार करने पर भी विचार किया गया था। बिहार, राजस्थान, तिरुवांकुर-कोचीन को नए कृषि कालेज स्थापित करने में सहायता दी गई। असम, हैदराबाद, मद्रास, मध्य प्रदेश और पंजाब में वहां के वर्तमान कृषि कालजों को सुदृढ़ किया गया है। मध्य प्रदेश में दो नए कालेज खोले जा रहे हैं। अब देश में २८ कृषि कालेज हो गए हैं और ये संस्थाएं दूसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि स्नातकों की, जिनकी संख्या अनुमानतः ६,५०० होगी, समस्त आवश्यकता को पूरा कर सकेंगी। ग्राम-स्तर कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए वर्तमान ५४ प्रारम्भिक कृषि स्कूलों और ४४ विस्तार केन्द्रों के अलावा, २५ नए प्रारम्भिक कृषि स्कूल, २१ विस्तार केन्द्र और १६ प्रारम्भिक कृषि विभाग स्थापित करने का विचार है। ये सब विस्तार प्रशिक्षण केन्द्रों से सम्बद्ध होंगे।

कृषिजन्य वस्तुओं की क्रय विक्रय व्यवस्था

४४. कृषि सम्बन्धी हाट-व्यवस्था के विकास के लिए मुख्य रूप से विचारणीय बात यह है कि वर्तमान प्रणाली को इस प्रकार से पुनर्गठित किया जाए कि जिससे उपभोक्ता द्वारा अदा किए गए मूल्य का उचित भाग किसानों को मिल जाए और क्रमबद्ध विकास की आवश्यकताएं पूरी हो जाएं। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कृषिजन्य वस्तुओं के खरीदने और बेचने के बारे में जो खराबियां विद्यमान हैं उन्हें दूर करना होगा। साथ ही ऐसे प्रबन्ध करने होंगे कि क्रय-विक्रय योग्य अतिरिक्त वस्तुओं को उत्पादन क्षेत्रों से उपभोग्य क्षेत्रों में ले जाकर कुशलतापूर्वक वितरित किया जाए। इसके अतिरिक्त सहकारी आधार पर हाट-व्यवस्था को अधिकाधिक रूप में विकसित करना होगा। सहकारी आधार पर हाट-व्यवस्था और चीजों को तैयार करने की प्रणाली का विकास करके ग्रामीण हाट-व्यवस्था और वित्त का एकीकरण करना होगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए अब तक सहकारी हाट-व्यवस्था और निर्माण प्रणाली के सम्बन्ध में जो कार्यक्रम बनाए गए हैं, वे पहले के एक अध्याय में बताए गए हैं। यहां कृषि हाट-व्यवस्था के अन्य पहलुओं का उल्लेख करना अभीष्ट है। अनुमान है कि दूसरी योजना के अन्त तक सहकारी एजेंसियों द्वारा क्रय-विक्रय योग्य अतिरिक्त पैदावार के लगभग दस प्रतिशत का क्रय-विक्रय किया जाने लगेगा। शेष बची हुई वस्तुएं अन्य क्रय-विक्रय एजेंसियों द्वारा बेची जाती रहेंगी। इसलिए यह किसान के हित की ही बात है कि बाजारों और बाजारों में बरते जाने वाले तरीकों के नियमन की आवश्यकता पर विशेष जोर दिया जाए। इसके अतिरिक्त सहकारी आधार पर की जाने वाली हाट-व्यवस्था की सफलता इसी बात पर निर्भर करती है कि नियमित बाजार कितनी कुशलता से काम करते हैं। यह देखने में आया कि जिन राज्यों में बाजारों का नियमन नहीं किया गया, वहां किसान को जो नुकसान उठाना पड़ता है, वह दूसरी जगह नहीं उठाना पड़ता।

४५. पिछले कुछ वर्षों में कृषि बाजारों के नियमन में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई। पहली पंचवर्षीय योजना में यह सुझाव दिया गया था कि राज्य कृषि उत्पादन (बाजार) अधिनियम

को योजना काल के समाप्त होने से पहले ही सब महत्वपूर्ण बाजारों पर लागू कर देना चाहिए। योजना से पहले सात राज्यों में यह कानून लागू था। योजना काल में केवल तीन और राज्यों ने कानून बनाया है। नियमित बाजारों की संख्या, जो १९५०-५१ में २६५ थी, बढ़कर ४५० से अधिक हो गई है। कुछ राज्यों में जहां आवश्यक कानून लागू है, वहां कई महत्वपूर्ण वस्तुओं, जैसे खाद्यान्नों, फलों, सब्जियों पशुओं आदि के व्यापार का नियमन किया जा रहा है। गांवों में बिक्री की प्रणाली भी दूषित है, किन्तु अभी तक इसका नियमन नहीं किया गया। शहरों में म्युनिसिपैलिटियों के बाजारों में जहां माल बेचने भी पहुंचता है और जहां उत्पादक खुद भी माल ले जाते हैं, अभी तक सामान्यतः राज्य कृषि उत्पादन (बाजार) अधिनियम लागू नहीं किया गया है। सहकारी आधार पर हाट-व्यवस्था के प्रस्तावों को छोड़कर अगले पांच साल के लिए कई राज्यों ने जो योजनाएं बनाई हैं, उनमें कृषि बाजारों के नियमन के लिए पर्याप्त व्यवस्था नहीं की गई है। किन्तु इस उद्देश्य के लिए कुछ राज्यों ने अपने लक्ष्य निर्धारित किए हैं। जिन राज्यों ने ऐसा नहीं किया है, उन्हें वर्तमान स्थिति की समीक्षा करनी चाहिए तथा दूसरी पंचवर्षीय योजना में समस्त महत्वपूर्ण थोक बाजारों के नियमन के लिए उपयुक्त कार्यक्रम बनाने चाहिएं। अब तक जो कार्यक्रम तैयार हुए हैं, उनसे पता चलता है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक नियमित बाजारों की संख्या दुगुनी हो जाएगी।

४६. यद्यपि कृषि उत्पादन (वर्गीकरण तथा हाट-व्यवस्था) अधिनियम १९३७ में पास किया गया था, फिर भी कुछ निर्यात की जाने वाली वस्तुओं को छोड़कर, कृषि उत्पादन के वर्गीकरण के सम्बन्ध में पर्याप्त प्रगति नहीं हुई है। निर्यात के लिए सन तम्बाकू का आवश्यक रूप से वर्गीकरण करने की प्रणाली युद्धकाल में ही आरम्भ की गई थी। पहली पंचवर्षीय योजना में यह सुझाव दिया गया था कि निर्यात के लिए अन्य वस्तुएं, जैसे ऊन, कड़े बाल, बकरी के बाल, लाख, भेड़ और बकरी की खालें, पूर्वी भारतीय कमाया हुआ चमड़ा, काजू, मिर्च, अदरक, तिलहन, तेल, गन्धयुक्त तेल तथा शाल्मली (रेशमी कपास) वृक्ष से प्राप्त कोमल, हल्का रोएंदार रेशे आदि का आवश्यक रूप से वर्गीकरण किया जाए। योजना काल में केवल ऊन, कड़े बाल और कुछ गन्धयुक्त तेलों के बारे में ही कुछ प्रगति हुई है तथा शेष वस्तुओं के सम्बन्ध में प्रारम्भिक कार्य किया गया है। पहली पंचवर्षीय योजना में उल्लिखित सभी वस्तुओं के लिए शीघ्र ही आवश्यक रूप से वर्गीकरण करने का कार्य किया जाना चाहिए।

४७. निर्यात की जाने वाली वस्तुओं के लिए ही नहीं अपितु आन्तरिक व्यापार के लिए भी यह वर्गीकरण किया जाना आवश्यक है। अभी तक व्यापारियों की अपनी ही इच्छा पर यह काम छोड़ दिया गया था कि वे अपनी बनाई हुई वस्तुओं का एगमार्क वर्गीकरण कराएं या न कराएं। मुख्यतः घी और वनस्पति तेलों का ही वर्गीकरण किया जाता रहा है। इन वस्तुओं के अलावा अन्य वस्तुओं का भी वर्गीकरण किया जाना चाहिए। किस्म और शुद्धता की जांच के लिए प्रयोगशाला की सुविधाएं प्रदान की जानी चाहिएं। इस दिशा में आरम्भिक कार्य के रूप में नागपुर में केन्द्रीय किस्म प्रयोगशाला नियन्त्रण तथा ८ प्रादेशिक सहायक किस्म नियन्त्रण प्रयोगशालाएं स्थापित की गई हैं। आशा है कि दूसरी योजना की समाप्ति से पहले ये प्रयोगशालाएं कार्य आरम्भ कर देंगी। किस्मों के नियन्त्रण के सामान्य कार्य के अतिरिक्त ये प्रयोगशालाएं विभिन्न वस्तुओं की श्रेणियों के नमूने निश्चित करने तथा उनमें संशोधन करने के सम्बन्ध में जांच-पड़ताल करने का कार्य भी करेंगी। कृषिजन्य वस्तुओं का वर्गीकरण, सहकारी व्यापार एवं गोदामों के विकास का भी एक आवश्यक अंग है। कृषिजन्य वस्तुओं के

समन्वय तथा बड़ी मात्रा में उनके संग्रह के लिए कुछ महत्वपूर्ण अनाजों, तिलहन, दालों, कपास, पटसन, मसालों आदि के बारे में उपयुक्त श्रेणियां निश्चित करनी होंगी। इस दिशा में कुछ कार्य किया गया है।

४८. अन्तर्राज्यीय व्यापार के लिए और कृषि की पैदावार की बिक्री को बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि नाप-तोल तथा बिक्री और खरीद के ठेकों का प्रतिमानीकरण किया जाए। बहुत-से राज्यों में नाप-तोल के सम्बन्ध में कानून विद्यमान हैं, किन्तु उनमें से कुछ राज्यों ने निरीक्षण और देखभाल के लिए आवश्यक संगठन की व्यवस्था नहीं की है। नाप-तोल की मीटरिक प्रणाली अपनाने के लिए हाल में ही जो निर्णय किया गया है उस के कारण नाप-तोल सम्बन्धी कानून को कार्यान्वित करना-स्थगित कर दिया गया है।

४९. ठेके की जिन शर्तों के आधार पर विभिन्न बाजारों में व्यापार होता है उनमें बड़ी भिन्नता है। अन्तर्राज्यीय व्यापार और विभिन्न बाजारों के मूल्यों का एक-दूसरे से तालमेल बैठाने के लिए यह भी जरूरी है कि किस्म और सामान अच्छी तरह पैक करने के लिए दी जाने वाली छूट आदि के सम्बन्ध में ठेके की शर्तों का अखिल भारतीय आधार पर प्रतिमानी-करण किया जाए। वायदा सौदा (नियमन) अधिनियम, १९५२ की व्यवस्था के अनुसार विभिन्न स्वीकृत व्यापार संघों द्वारा बनाए गए उपनियमों की वायदा सौदा आयोग द्वारा पूर्व स्वीकृति आवश्यक है। यह सुझाव दिया गया है कि गेहूं, अलसी, मूगफली, खोपा तथा इन तिलहनों से तैयार होने वाले तेलों के लिए खाद्य और कृषि मंत्रालय ने ठेके की जो स्टैंडर्ड शर्तें तैयार की हैं उन्हें ये संघ भी स्वीकार कर लें। जिन वस्तुओं के बारे में वायदा व्यापार का नियमन किया जाना है, उनके सम्बन्ध में भी ठेके की स्टैंडर्ड शर्तें तैयार की जानी चाहिएं।

५०. बाजारों के सम्बन्ध में ठीक-ठीक और नवीनतम सूचना उपलब्ध न होने के कारण किसान और प्रशासन दोनों को बड़ी परेशानी उठानी पड़ती है। बाजारों के बारे में आवश्यक जानकारी फौरन ही उपलब्ध न करा सकने के कारण भिन्न-भिन्न बाजारों में एक ही चीज का मूल्य भिन्न-भिन्न होता है। कुछ बाजारों में सूचना देने का कार्य निजी एजेंसियों द्वारा किया जाता है और इस प्रकार की गई व्यवस्थाएं संतोषजनक सिद्ध नहीं हुई हैं। यद्यपि सीमान्त बाजारों से कई बातों के बारे में सूचना मिल सकती है, किन्तु संग्रह एवं वितरण केन्द्रों से व्यावसायिक एजेंसियों को महत्वपूर्ण बाजारों के सम्बन्ध में जानकारी होती है किन्तु उन्हें जो सूचना मिलती है उसकी जनता को कभी जानकारी नहीं हो पाती। योजना में मुख्यतः किसानों के लिए एक अखिल भारतीय बाजार समाचार सेवा स्थापित करने की व्यवस्था की गई है जिसका राज्यों के सहयोग से संगठन किया जाएगा। हर साल २० से ३० उम्मीदवारों को कृषि हाट-व्यवस्था के बारे में विशिष्ट प्रशिक्षण देने के लिए प्रशिक्षित कर्मचारियों का भी प्रबन्ध किया जा रहा है।

५१. कृषि हाट-व्यवस्था के विकास के लिए बाजारों के बारे में शोध कार्य भी आवश्यक है जिसमें ये सभी बातें सम्मिलित हैं: हाट-व्यवस्था विषयक सर्वेक्षण, मूल्य विस्तार का विश्लेषण और अध्ययन और श्रेणी-नमूनों तथा बण्डलों का प्रतिमानीकरण। केन्द्रीय कृषि हाट-व्यवस्था संगठन ने अब तक लगभग ४० मुख्य-मुख्य वस्तुओं के क्रय-विक्रय के बारे में अध्ययन किए हैं और उनके विषय में रिपोर्टें प्रकाशित की है। कुछ रिपोर्टों में जो सामग्री दी गई है वह पुरानी है। कृषि उत्पादन के स्वरूप तथा विदेशी और आन्तरिक व्यापार के गठन में काफी परिवर्तन हो गए हैं। इसलिए यह जरूरी है कि कार्य अध्ययन पुनः से किए जाएं और ताजी से ताजी सामग्री एकत्र की जाए। महत्वपूर्ण फसलों के सम्बन्ध में प्रादेशिक अध्ययन भी किए जाएंगे।

५२. पहली पंचवर्षीय योजना में एक महत्वपूर्ण बात यह हुई की कि वायदा शर्तनामा (नियमन) अधिनियम, १९५२ पास किया गया और उससे अगले वर्ष वायदा सौदा आयोग की नियुक्ति की गई। विभिन्न वस्तुओं तथा क्षेत्रों में वायदे के सौदों के लिए किन संघों को स्वीकार किया जाए तथा अधिनियम के अधीन किन वस्तुओं के बारे में वायदे के सौदे करने की अनुमति दी जा सकती है, इन बातों के सम्बन्ध में आयोग सरकार को सलाह देता है। यह स्वीकृत संघों के कार्य का नियमन एवं नियन्त्रण करता है, उनके हिसाब-किताब की जांच करता है और विभिन्न वायदा बाजारों की कार्य प्रणाली पर बराबर नजर रखता है। आशा है कि इसके कार्यों से बाजारों में होने वाली कृत्रिम कमी और व्यापक उथल-पुथल को दूर करने में बड़ी सहायता मिलेगी। पिछले साल केन्द्रीय सरकार ने कई वस्तुओं के वायदा व्यापार के लिए नए केन्द्र स्वीकार किए हैं—कपास के लिए अकोला और इंदौर, तिलहनों तथा मूंगफली के तेल के लिए बम्बई, अहमदाबाद, मद्रास, अड़ौनी, दिल्ली, राजकोट, हैदराबाद और कलकत्ता; हल्दी के लिए सांगली; नारियल के तेल के लिए एलप्पी; और काली मिर्च के लिए कोचीन। इस समय वायदा सौदा आयोग विभिन्न केन्द्रों में प्राप्त संघों के उन प्रार्थनापत्रों पर विचार कर रहा है जो उन्होंने मान्यता प्राप्त करने के लिए भेजे हैं और आशा है कि देश भर में लगभग ४० संस्थाओं को मान्यता दे दी जाएगी। इसके बाद आयोग का मुख्य कार्य वायदा बाजारों की देखभाल करना होगा और उनके कार्यों का नियमन करना होगा ताकि विभिन्न स्थानों के बीच और विभिन्न समयों पर मूल्यों का भारी उतार-चढ़ाव न हो सके। आयोग व्यापारियों को क्रय-विक्रय की सुविधाएं भी देगा।

कृषि सम्बन्धी आंकड़े

५३. कृषि के बारे में सही नीति निर्धारित करने और कृषि उत्पादन की योजना बनाने के लिए यह आवश्यक है कि कृषि सम्बन्धी आंकड़ों का संग्रह ठीक-ठीक और विश्वसनीय ढंग से किया जाए और वैज्ञानिक आधार पर उनका विश्लेषण एवं व्याख्या की जाए। पहली पंचवर्षीय योजना में इस प्रकार के आंकड़ों की कमी और उनमें सुधार करने की आवश्यकता की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया था। तब से लेकर अब तक कृषि सम्बन्धी आंकड़ों में सुधार करने के लिए विभिन्न उपाय बरते गए हैं। पहले की अपेक्षा अब और अधिक फसलों के बारे में अनुमान उपलब्ध किए जाते हैं और उनके प्रकाशन में होने वाला व्यवधान भी कम कर दिया गया है। और अधिक असर्वेक्षित क्षेत्रों में भू-कर सर्वेक्षण किए गए हैं, और जहां प्रारम्भिक रिपोर्ट देने वाली एजेंसियां नहीं थीं, वहां ये स्थापित कर दी गई हैं। इसके परिणामस्वरूप अब जितने क्षेत्र के बारे में कृषि सम्बन्धी आंकड़े उपलब्ध हैं वह पहली योजना के प्रारम्भ में ६१ करोड़ ५० लाख एकड़ से बढ़कर ७२ करोड़ एकड़ से ऊपर हो गया है। प्रामाणिक परिभाषाएं और एक जैसी मान्यताएं निर्धारित कर दी गई हैं और भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद ने कई व्यवस्था सम्बन्धी अध्ययन किए हैं। अप्रैल १९५६ में की गई पशुगणना के तरीकों में सुधार करने के लिए भी कदम उठाए गए हैं। अभी भी बहुत कुछ करना शेष है; पशुओं की संख्या, उनसे बनने वाली वस्तुओं और मछली पालन के सम्बन्ध में जो आंकड़े उपलब्ध हैं, वे अपर्याप्त तथा दोषपूर्ण हैं। व्यावसायिक महत्व की कई छोटी-मोटी फसलों के बारे में विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। योजना में कृषि सम्बन्धी आंकड़ों का क्षेत्र, तथ्य, और किस्म सुधारने के लिए व्यवस्था की गई है। प्रारम्भिक अध्ययनों के आधार पर, जो पूरे हो चुके हैं, मछली पालन तथा पशुओं के आंकड़ों में सुधार किया जाएगा।

अध्याय १४

पशु पालन और मछली पालन

१. पशु पालन और डेरी उद्योग

विषय प्रवेश

पशु पालन और डेरी उद्योग से ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था के विकास में तथा रहन-सहन का स्तर ऊंचा उठाने में जितनी सहायता मिल सकती है, उसे देखते हुए इस समय उसका योग बहुत ही कम है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पशु पालन और डेरी उद्योग की उन्नति के लिए ५६ करोड़ रुपए से अधिक व्यय की व्यवस्था की गई है और आशा है कि आगामी वर्षों में कृषि के इस क्षेत्र में पहले से अधिक प्रगति होगी। पशु पालन कार्यक्रमों का उद्देश्य एक तो यह है कि दूध, मांस और अण्डों की उपलब्ध होने वाली मात्रा बढ़ाई जाए क्योंकि खाने-पीने की मौजूदा सामग्रियों को संतुलित करने के लिए यह जरूरी है कि इनका उपभोग अधिक हो और दूसरे यह कि देश के प्रत्येक भाग में कृषि कार्यों के लिए समर्थ बलों की सुविधा मिल सके। वास्तव में गांवों की अर्थ-व्यवस्था सुधारने में अच्छे मवेशियों का बहुत अधिक महत्व है। यही नहीं, ऊन, बाल, खाल और चमड़ा आदि कुछ ऐसी वस्तुएं पशुओं से मिलती हैं जिनका औद्योगिक कच्चे माल के रूप में ठीक-ठीक उपयोग करना आर्थिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण होगा। जो भी हो, पशु पालन कार्यक्रमों के सामने अभी भी कई गम्भीर और व्यावहारिक कठिनाइयां हैं। इसके पहले कि इन कठिनाइयों का हल खोजा जाए, यह जरूरी है कि समस्या के आकार-प्रकार तथा मूल तत्वों को भली-भांति समझ लिया जाए।

२. १९५१ की पशु गणना के अनुसार भारत में मवेशियों की संख्या इस प्रकार थी :—

मवेशी	(अंक लाखों में)
प्रजनन करने वाली गायें	४६३·४
प्रजनन करने वाले सांड	६·५
जोतने और ढोने में काम आने वाले पशु :	
नर	५८४·१
मादा	२३·१
बाल पशु	४३४·९
अन्य	३८·९
योग ...	१५५०·९

मवेशी	(अंक लाखों में)
भैंसें :	
प्रजनन करने वाली भैंसें	२०६·६
प्रजनन करने वाले भैंसे	३·१
जोतने और ढोने में काम आने वाले पशु :	
नर	६०·१
मादा	५.३
बाल पशु	१४७·३
अन्य	७·८
योग ...	४३३·५

मवेशियों की इस भारी संख्या के बावजूद १९५०-५१ में पशुधन उत्पादनों का कुल मूल्य केवल ६६४ करोड़ रुपए अर्थात कृषि से होने वाली आमदनी का लगभग १६ प्रतिशत हुआ। अध्ययन से पता चलता है कि देश में पशुओं की वर्तमान संख्या चारे की व्यवस्था को देखते हुए कहीं अधिक है। यह आम ख्याल है कि सूखे चारे की दृष्टि से देश में मवेशियों की संख्या कम से कम एक-तिहाई अधिक है और हरे चारे तथा खली वगैरह की दृष्टि से तो स्थिति और भी खराब है। मनुष्यों की अनाज सम्बन्धी आवश्यकताएं बढ़ गई हैं, इसलिए जिन क्षेत्रों में चराई की व्यवस्था हो सकती थी वे क्षेत्र बराबर कम होते जा रहे हैं। पशुओं की अधिक संख्या का परिणाम यह होता है कि उन्हें चारा कम मिल पाता है और खराब खिलाई के कारण उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्नों में रुकावट आती है। यह एक ऐसी उलझन है जिसे सुलझाना कठिन जान पड़ता है।

३. कृषि उपज से मिलने वाली अन्य चीजों के अतिरिक्त अभी तक मवेशी चरागाहों पर ही निर्भर रहे हैं। पशुओं के पालने की विधियों में हमें आमूल परिवर्तन करना होगा क्योंकि मिश्रित कृषि व्यवस्था का ही उसे भविष्य में अधिक आश्रय लेना है। कृषि पुनर्गठन की समुचित व्यवस्थाएं खोजते समय हमें इस पहलू को ध्यान में रखना होगा।

४. अकाल और महामारियां बहुत कुछ वश में कर ली गई हैं और साधारणतया प्रवृत्ति ऐसी जान पड़ती है कि फालतू पशुओं की संख्या बढ़ रही है। हाल के वर्षों में पशुवध का पूर्णतः निषेध करने के सम्बन्ध में जो कार्रवाई की गई है उससे इस प्रवृत्ति को और बल मिलने की आशंका है। पशु-वध निषेध के सुझावों के मूल में व्यापक लोक-भावना है और उसने न केवल संविधान में अभिव्यक्ति पाई है बल्कि राष्ट्रीय योजना में भी उसका समावेश होना ही चाहिए। संविधान के ४८वें अनुच्छेद में उल्लिखित है कि राज्य कृषि तथा पशु पालन का संगठन आधुनिक एवं वैज्ञानिक रीति से करने का प्रयत्न करेंगे और खास तौर पर नस्लों को अच्छा बनाए रखने और सुधारने तथा गायों, बछड़ों, दुधार पशुओं और दूध न देने वाले पशुओं के वध के निषेध के लिए कदम उठाएंगे। लेकिन इस निदेशक सिद्धान्त को कार्यान्वित करते समय इस बात का ध्यान रखना होगा कि ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न न कर दी जाएं कि संविधान द्वारा जिस उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयत्न किया गया है वह ही नष्ट हो जाए।

५. पशु-वध की रोकथाम के लिए भारत सरकार ने १९५४ में एक विशेषज्ञ समिति इस उद्देश्य से नियुक्त की थी कि वह पशुओं की बुरी दशा को सुधारने के लिए उपाय सुझाए। यह समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची कि इस समय देश में उपलब्ध चारे के तथा अन्य साधन इतने अपर्याप्त हैं कि वे वर्तमान पशु संख्या का भी भरण-पोषण नहीं कर सकते। समस्त पशुओं के वध पर पूर्णतया निषेध लगा देने का परिणाम यह होगा कि पशुओं की संख्या और अधिक बढ़ जाएगी और इस तरह देश के पास सीमित संख्या में जो भी अच्छे पशु हैं उनके हितों की रक्षा नहीं हो सकेगी। इसका परिणाम यह भी हो सकता है कि वन्य पशुओं की संख्या तीव्र गति से बढ़ने लगे। इस समिति ने अनुमान लगाया कि यदि पशु-वध का पूर्ण निषेध कर दिया जाए तो पशु संख्या प्रायः छः प्रतिशत प्रति वर्ष के हिसाब से बढ़ने लगेगी। १९५३ में उत्तर प्रदेश की गोसंवर्धन जांच समिति ने इन प्रवृत्तियों का पता लगाया था और अनुमान किया था कि राज्य में उपलब्ध चारे आदि के साधन मात्र इतने हैं कि उनसे पशु संख्या के लगभग ५८ प्रतिशत का ही भरण-पोषण हो सकता, और यह भी कहा था कि अनेक जिलों में छुट्टा पशुओं तथा जंगली जानवरों के कारण फसलों को नुकसान पहुंचता है।

६. प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में ऐसा लगा था कि कदाचित गोसदनों द्वारा इस समस्या को सुलझाया जा सकेगा। अतः योजना में इस बात की व्यवस्था की गई थी कि पहले दौर में १६० गोसदन स्थापित किए जाएं, जिनसे ३,२०,००० पशुओं की देखभाल हो सके। यह योजना संतोषजनक रीति से प्रगति नहीं कर सकी। कुल मिलाकर ८,००० पशुओं के लिए २२ गोसदन स्थापित किए गए हैं और इनमें से भी कई गोसदनों को आवश्यक जमीन पाने में कठिनाई हुई है। द्वितीय योजना में ३०,००० पशुओं के लिए ६० गोसदन खोले जाने का प्रस्ताव है। स्पष्ट है कि यदि केवल अयोग्य और बेकार पशुओं की देखभाल के लिए गोसदन स्थापित करने का प्रश्न होता तो भी काफी गोसदनों की स्थापना कर सकना असम्भव होता। इसलिए निष्कर्ष यह निकलता है कि राज्यों को चाहिए कि वे पशु-वध निषेध की सम्भावनाओं पर दृष्टिपात करते समय चारे के उपलब्ध साधनों के सम्बन्ध में वास्तविकता का ध्यान रखें और यह भी देख लें कि बेकार और अयोग्य पशुओं के भरण-पोषण का मुख्य उत्तरदायित्व संभालने में उन्हें ऐसी स्वयंसेवी संस्थाओं का सहयोग कहां तक मिल सकता है जो सरकारी सहायता से तथा सामान्य रूप से जनता की सहायता से उस जिम्मेदारी को निभा सकती हैं।

७. प्रस्ताव है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ३,००० गोशालाओं में से २५० को चुनकर उन्हें पशु-धन सुधार केन्द्रों के रूप में विकसित किया जाए। ये गोशालाएं अपने बेकार और अयोग्य पशुओं को सबसे निकट के गोसदन में भेजेंगी। प्रत्येक गोसदन के पास खालों, हड्डियों तथा अन्य वस्तुओं के बेहतर उपयोग के साधन रहेंगे। मृत पशुओं की खालों, हड्डियों आदि के उचित उपयोग का बहुत अधिक आर्थिक महत्व है और अखिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग बोर्ड ने इस क्षेत्र में अनेक कार्यक्रम बनाए हैं। प्रत्येक गोशाला को सरकार बढ़िया नस्ल के कुछ पशु देगी और प्रत्येक गोशाला को भी स्वयं अपने साधनों द्वारा इतने ही पशु जुटाने होंगे। उन्हें आर्थिक सहायता भी दी जाएगी। इस योजना के लिए लगभग १ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

पशु प्रजनन नीति और कार्यक्रम

८. भारत में ढोरों की २५ और भैंसों की ६ सुनिश्चित नस्लें हैं। ये सब देश के विभिन्न भागों में बंटी हुई हैं। हर नस्ल के बढ़िया नमूनों की संख्या बहुत सीमित है, और वह भी केवल उन इलाकों के भीतरी हिस्सों में मिलती हैं जहां कि ये नस्लें होती हैं। इस तरह के इलाकों के आस-पास एक ही तरह के पशु अवश्य होते हैं, लेकिन ये घटिया किस्म के होते हैं। इनमें से कुछ नस्लें डेरी वर्ग की हैं, जिनमें मादा पशु काफी मात्रा में दूध देते हैं और नर पशु काम के लिए बेकार होते हैं। पशुओं की अधिकांश नस्लें भारवाही वर्ग की हैं, जिनमें गायें बहुत कम दूध देती हैं और बैल बढ़िया किस्म के होते हैं। इनके बीच कई नस्लें ऐसी हैं जिन्हें इस अर्थ में 'दोकारी' नस्ल कहा जा सकता है क्योंकि मादा पशु औसत मात्रा से कुछ अधिक दूध देते हैं और नर पशु अच्छे खासे काम करने वाले बैल होते हैं। ये सुनिश्चित नस्लें देश के सूखे जलवायु वाले भागों में पाई जाती हैं। इन क्षेत्रों के बाहर भारत के पूर्वी और दक्षिणी हिस्सों में, जहां बहुत अधिक वर्षा होती है, मवेशी किसी निश्चित नस्ल के नहीं हैं।

९. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने पशु प्रजनन सम्बन्धी एक अखिल भारतीय नीति बनाई है ताकि अच्छे से अच्छे नतीजे हासिल किए जा सकें। केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने यह नीति स्वीकार कर ली है। संक्षेप में यह नीति इस प्रकार है :—

(क) श्रेष्ठ प्रजनन के द्वारा सुनिश्चित दुधार नस्लों की दूध देने की सामर्थ्य अधिक से अधिक बढ़ानी चाहिए और अज्ञात नस्ल वाले मवेशियों के विकास के लिए नर पशुओं का उपयोग करना चाहिए।

(ख) सुनिश्चित भारवाही नस्लों के पशुओं में जितना भी सम्भव हो सके दूध बढ़ाना चाहिए। पर ध्यान रहे कि इसके कारण उनकी काम करने की सामर्थ्य कम न हो जाए।

इस प्रकार प्रजनन सम्बन्धी नीति का सामान्यतः उद्देश्य यह है कि देश में दूध का उत्पादन बढ़े और साथ ही खेती के लिए आवश्यक बैलों के मिलते रहने पर कोई बुरा असर भी न पड़े। प्रत्येक भारवाही नस्ल में हमेशा थोड़े-से ऐसे पशु होते हैं जो औसत मात्रा से कुछ अधिक दूध देते हैं। इस वर्ग के सांड़ों को चुनने और आगे भी चुनाव करते रहने तथा प्रजनन कराने पर दूध का उत्पादन काफी बढ़ाया जा सकता है। नस्ल क्षेत्रों के भीतरी इलाकों में जब यह काम पूरा हो जाए तो वहां से मिले सांड़ों का उपयोग बाहरी इलाकों में किया जा सकता है ताकि समूची पशु संख्या का सामान्य सुधार हो जाए।

१०. इस नीति को लागू करने के लिए विभिन्न राज्यों में जो भी नस्लें काम में लाई जाती हैं उनके हिसाब से प्रत्येक राज्य को क्षेत्रों में बांट दिया गया है। इस तरह अहमदाबाद, कैरा, भड़ौच और सूरत जिलों में 'कंकरेज' नस्ल का उपयोग किया जाएगा। सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, अलीगढ़, मथुरा आदि उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भागों में 'हरियाना' नस्ल का प्रयोग किया जाएगा। पहाड़ी क्षेत्रों में, जैसे देहरादून, गढ़वाल, अलमोड़ा, और नैनीताल के कुछ भागों में जहां के मवेशी अज्ञात नस्ल के हैं सिन्धी सांड़ों का उपयोग होगा।

११. राज्य सरकारें केन्द्र ग्राम योजनाओं के माध्यम से ही पशुधन सुधार कार्यक्रमों को आगे बढ़ा रही हैं। इस योजना के अनुसार कुछ चुने हुए इलाकों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इन इलाकों में घटिया किस्म के सांडों को वधिया कर दिया जाता है और कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र स्थापित किए जाते हैं। इनमें से प्रत्येक केन्द्र में लगभग ५ हजार गायों का कृत्रिम गर्भाधान किया जा सकता है, लोगों को बछड़े पालने के लिए सरकारी सहायता दी जाती है, चारे के साधनों का विकास किया जाता है और पशु पालन उद्योग की वस्तुओं की बिक्री के लिए सहकारी ढंग की व्यवस्था की जाती है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में ६०० केन्द्र ग्राम और १५० कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र स्थापित किए गए। द्वितीय योजना की अवधि में १,२५८ केन्द्र ग्राम, २४५ कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र और २५४ विस्तार केन्द्र खोले जाएंगे। कार्यक्रम का लक्ष्य यह है कि लगभग २२,००० बढ़िया सांड, ६, ५०,००० बढ़िया बैल और दस लाख बढ़िया गायें हो जाएं। योजना में उत्साहजनक प्रगति हुई है, लेकिन चारे तथा पशु पालन जनित वस्तुओं की बिक्री व्यवस्था की दिशा में अधिक कार्य नहीं किया जा सका है। उलटे, नियंत्रित प्रजनन को काफी हद तक स्वीकार किया गया है और राज्यों ने इस योजना को लागू करने के लिए आवश्यक कानून बनाए हैं। शुरू-शुरू में अनेक केन्द्र ग्रामों और कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों में समितियों तथा कर्मचारियों की कमी के कारण काम में देरी हुई थी, लेकिन सर्वत्र स्थानीय लोग बगैर किराए की इमारतें देने के लिए और योजना को सफल बनाने के लिए अन्य रूपों में सहायता देने को इच्छुक थे। द्वितीय योजना में चारे का प्रबन्ध करने के कार्यक्रम पर काफी ध्यान दिया जाना चाहिए क्योंकि पशुधन उन्नति कार्यक्रम का यह एक मुख्य आधार है। प्रत्येक क्षेत्र में जो भी कम-ज्यादा चरागाह सुलभ हों, उन्हें विकसित करने के प्रयत्न होने चाहिएं। द्वितीय योजना में परिकल्पित विशाल कार्यक्रम के कारण पर्याप्त कर्मचारियों का होना, उपलब्धि के लिए अधिक अच्छी प्रशासकीय व्यवस्था करना और पशु पालन विकास के बारे में जनता को शिक्षित करना बहुत अधिक आवश्यक हो गया है।

डेरी उद्योग और दूध की व्यवस्था

१२. भारत में दूध सम्बन्धी आंकड़ों के बारे में अब भी केवल मोटा अनुमान ही लगाया जा सकता है। अनुमान है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में देश में दूध का कुल उत्पादन १ करोड़ ८० लाख टन से कुछ अधिक था। इसका लगभग ३८ प्रतिशत दूध पीने के, लगभग ४२ प्रतिशत घी बनाने के और शेष खोआ, मक्खन, दही तथा अन्य वस्तुएं बनाने के काम में आता था। दूध की कुल मात्रा का आधे से कुछ कम हिस्सा गायों से और आधे से कुछ ज्यादा हिस्सा भैंसों से मिलता है। प्रति व्यक्ति दूध की औसत खपत ५ औंस से कुछ अधिक है, जबकि संतुलित भोजन की दृष्टि से कम से कम १५ औंस की सिफारिश की गई है। अतएव, और अधिक मात्रा में दूध उपलब्ध करना अत्यन्त आवश्यक है। विकास की इस स्थिति में दूध उत्पादन के लक्ष्यों को प्रादेशिक आधार पर निर्धारित करना होगा और शहरी इलाकों में दूध की व्यवस्था पर विशेष रूप से ध्यान देना पड़ेगा। अभी तक दूध के लिए कोई राष्ट्रीय उत्पादन लक्ष्य नहीं बनाया गया है। प्रस्ताव यह है कि राष्ट्रीय विस्तार एवं सामुदायिक योजनाओं में तथा अन्य क्षेत्रों में स्थानीय और क्षेत्रीय लक्ष्य निर्धारित किए जाएं ताकि अगले पांच वर्षों के समय में इन इलाकों में दूध के कुल उत्पादन में लगभग १० प्रतिशत की वृद्धि हो सके। सामान्य उद्देश्य यह होना चाहिए कि जिन इलाकों में काफी काम हुआ हो, वहां १० से लेकर १२ वर्ष की अवधि में दूध का उत्पादन ३० से लेकर ४० प्रतिशत बढ़ जाए।

१३. अच्छी किस्म की भारतीय नस्लों की गाय-भैंसों का औसत दूध उत्पादन प्रत्येक दूध देने की अवधि में लगभग १,५०० पौंड होता है। सामान्य औसत तो इस मात्रा से आधे से कुछ अधिक होगा। इन आंकड़ों की तुलना में पश्चिमी देशों में दूध देने की प्रत्येक अवधि में औसत उत्पादन ३,००० से ४,००० पौंड तक होता है। जहां भी प्रजनन तथा संचालन का व्यवस्थित प्रवन्ध हो सका है (जैसे कि सुसंगठित डेरी फार्मों से होता है) वहां भारत में भी उत्पादन का औसत वढ़ाया जा सका है, लेकिन जिन पशुओं ने दूध औसत से अधिक दिया है, उनकी संख्या वहुत कम है। समुचित परिस्थितियों में गायें भी भैंसों के वरावर दूध दे सकती हैं। अधिक दूध देने वाले पशुओं की नस्लें वढ़ाने के लिए द्वितीय योजना में वंशानुसार प्रजनन केन्द्रों की स्थापना के लिए एक योजना चलाई जाएगी। इससे किसान यह जान जाएंगे कि दूध का अधिक उत्पादन करने के लिए प्रमाणित प्रजनन सांड़ों की संतति का उपयोग करना फायदेमन्द और कम खर्चीला होता है। दूध उत्पादन को अव तक हानि पहुंचाने वाला एक कारण यह भी रहा है कि अच्छी किस्म के दुधार मवेशी प्रसिद्ध नस्ल क्षेत्रों और वम्वई, कलकत्ता जैसे वड़े शहरों के वीच खरीदे-वेचे जाते रहे हैं। इन शहरों में आम चलन यह रहा है कि दूध सूख जाने पर मवेशियों को वेच दिया जाए। शहरी इलाकों में दूध पहुंचाने के जो कार्यक्रम अव लागू किए जा रहे हैं, उनसे यह लाभ होगा कि इस तरह के व्यापार से होने वाले नुकसान की गुंजाइश न रहेगी।

१४. पिछले वर्षों में कई कारणों से शहरी इलाकों में दूध की व्यवस्था करना एक वहुत जरूरी समस्या वन गई है। शहरी इलाकों में गन्दे-गन्दे ढंग से जो ढेरों डेरियां चल रही हैं, उनसे लोगों के स्वास्थ्य को वड़ा खतरा रहता है। शहरों-कस्वों में विकने वाला वहुत-सा दूध मिलावटी और घटिया किस्म का होता है। इसलिए ऐसा प्रवन्ध करना जरूरी है जिससे कि शहरी इलाकों में लोगों को काफी मात्रा में अच्छा दूध उचित भाव पर मिलने लगे और साथ ही गाय-भैंस पालने वालों को भी अपने दूध का उचित मूल्य मिल जाए। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए द्वितीय योजना में दूध वितरण की ३६ योजनाएं शहरों में चलाई जाएंगी और क्रीम निकालने के १२ सहकारी कारखाने और दूध का पाउडर तैयार करने के ७ कारखाने खोले जाएंगे। ये कारखाने गांवों में स्थापित किए जाएंगे और इनमें मक्खन, घी और मक्खन निकले हुए दूध का पाउडर तैयार किया जाएगा। सामान्य नीति यह है कि शहरों की दूध वितरण योजनाओं और क्रीम निकालने तथा दूध का पाउडर तैयार करने के कारखानों के लिए आवश्यक दूध उन दूध उत्पादक सहकारी संघों से आए जो कि गांवों में खोले गए हों। इसके लिए दूध उत्पादकों को यथोचित दाम, सांड़ों या कृत्रिम गर्भाधान की सुविधाओं, टेकनीकल सलाह, उत्पादन वढ़ाने, चारा भरकर रखने और दुहने के लिए शेडों की सुविधाओं के रूप में सहायता मिलनी चाहिए। गांवों से एकत्र किया गया दूध शहरों में दूध मंडल जैसे उपयुक्त अधिकरणों की देख-रेख में वितरित किया जाएगा। वम्बई में आरे में एक वड़ी दूध वस्ती स्थापित की गई है और कलकत्ते में ऐसी ही एक वस्ती हरिन-घाटा में वनाई जा रही है। इन शहरों में वहुत-से मवेशी थे, जिन्हें शहर से वाहर हटाना ही था। इसलिए दूध वस्ती स्थापित करने के अलावा कोई दूसरा उपाय न था। दिल्ली और मद्रास में भी वड़े पैमाने पर दूध योजनाएं चलाई जाएंगी और उनकी आवश्यकताओं के अनुसार मवेशी वस्तियां वसाई जाएंगी। जहां भी दूध वस्तियां वनाई जा रही हैं, उनकी यथासम्भव गांवों के इलाकों से वरावर मिलते रहने वाले दूध के द्वारा की जानी चाहिए, जैसा कि वम्वई में होता है। शहरी इलाकों में सस्ता दूध मिल सके, इसके लिए पोषक तत्व मिलाए हुए

दूध का वितरण बढ़ाने का भी इरादा है। कुछ मौजूदा डेरियों को भी बढ़ाया जाएगा ताकि वे अधिक मात्रा में दूध की व्यवस्था कर सकें। गांव के इलाकों से दूध आने की व्यवस्था में मुख्य रूप से संगठनात्मक कठिनाइयां ही बाधक हैं। और इस दिशा में राज्यों की योजनाओं में जो कार्यक्रम निर्धारित किए गए हैं, वे कम से कम हैं जिन्हें पूरा करना ही है। जैसे-जैसे कार्यक्रम पूरे होते जाएंगे, निश्चय ही अन्य क्षेत्रों के लिए ऐसे ही कार्यक्रम बनाए जा सकेंगे, विशेषकर उन इलाकों में जहां क्षेत्रीय संगठन का भार उठाने के लिए आवश्यक कर्मचारी मौजूद हों।

बीमारियों की रोकथाम

१५. मालमारी या पशु ताऊन (रिंडरपेस्ट) और छूत की दूसरी बीमारियों के कारण बहुत तादाद में मवेशी मरते रहे हैं। मरने वाले पशुओं की लगभग ६० प्रतिशत संख्या की मृत्यु का कारण मालमारी ही है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत चलाई गई एक प्रमुख योजना के द्वारा ऐसा कार्यक्रम बनाया जा सका है जिसका उद्देश्य यह है कि द्वितीय योजना काल में देश के अधिकांश भाग से मालमारी का रोग मिटा दिया जाए। राज्यों की योजनाओं में भी छूत की अन्य बीमारियों और कीड़ों की रोकथाम के तरीके अपनाए गए हैं। खुरपका, मुंहपका रोग, गलघोट रोग, जहरवाद और गिल्टी रोग पर विशेष रूप से ध्यान दिया जा रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में मवेशी चिकित्सालयों की संख्या २,००० से बढ़ाकर २,६५० कर दी गई थी। द्वितीय योजना काल में आशा है कि १,६०० मवेशी चिकित्सालय और खुल जाएंगे जिनमें १४५ चल चिकित्सालय भी होंगे।

भेड़-बकरियां

१६. भारत में अनुमानतः ३ करोड़ ८० लाख भेड़ें हैं, जो प्रतिवर्ष ६ करोड़ पौंड ऊन देती हैं। लगभग २ करोड़ ४० लाख पौंड देशी कच्चे ऊन का उपयोग देश में होता है और शेष का निर्यात किया जाता है। प्रतिवर्ष लगभग १ करोड़ १० लाख पौंड बढ़िया किस्म का ऊन बाहर से मंगाया जाता है। देशी भेड़ों से मिलने वाले ऊन का औसत प्रायः दो पौंड प्रति भेड़ है। बढ़िया किस्म की भेड़ें ६ पौंड तक ऊन दे सकती हैं। इसलिए विकास की काफी गुंजाइश है। ऊन की आवश्यकता मुख्यतया पांच कार्यों के लिए पड़ती है, यथा कुटीर उद्योगों में कालीन, गलीचे, कम्बल बनाने के लिए, मिलों में वस्त्रादि और बुनाई ऊन बनाने के लिए तथा अन्य उद्योगों में शाल-दुशाले, ट्वीड आदि का निर्माण करने के लिए। बाहर से मंगाए गए ऊन का उपयोग मुख्यतः मिलों में ही होता है।

१७. कई वर्षों से इस तरह के परीक्षण किए जा रहे हैं कि स्थानीय पशुओं की नस्ल में सुधार कश्मीर, मैसूर और दक्कन की मेरीनो भेड़ों से किया जाए। बीकानेरी, दक्खिनी और बेलारी भेड़ों का चुना हुआ प्रजनन हो और घटिया किस्म की स्थानीय भेड़ों को बीकानेरी भेड़ों द्वारा उन्नत किया जाए। फलस्वरूप, इस समस्या के प्रति जो रवैया लम्बे अरसे तक रखा जाएगा वह इस प्रकार है :—

(क) मैदानों में, या जहां कहीं भी सुनिश्चित नस्लें मिलती हैं, देशी नस्लों का चुना हुआ प्रजनन हो;

(ख) बीकानेरी भेड़ों द्वारा अज्ञात नसल की भेड़ों को उन्नत बनाया जाए; और

(ग) कुछ खास चुने हुए पहाड़ी इलाकों में विदेशी नस्लों की सहायता से नस्ल सुधार किया जाए। मेरीनो भेड़ों से नसल पैदा करने के परिणामस्वरूप प्राप्त ऊन की मात्रा और गुण दोनों ही में अत्यन्त वृद्धि हुई है। चुने हुए प्रजनन और और स्थानीय घटिया भेड़ों की उन्नत बनाने के परिणाम भी उत्साहप्रद सिद्ध हुए हैं। कश्मीरी नस्ल की औसत पैदावार १६ औंस ऊन है, जबकि दो नस्ली भेड़ों की पैदावार ३७ औंस और कहीं-कहीं तो ५६ औंस तक है। अस्तु, ऊन की वर्तमान पैदावार बढ़ाने की बड़ी गुंजाइश है।

१८. द्वितीय पंचवर्षीय योजना म तीन नए भेड़ प्रजनन फार्म खोलने की व्यवस्था है जो कि हिमाचल प्रदेश, मध्य भारत और सौराष्ट्र में होंगे। इन फार्मों का उद्देश्य यह है कि शुद्ध नस्ल और दो नस्ल दोनों के लिए अच्छे किस्म के मेढ़े तैयार किए जाएं। प्रत्येक फार्म में एक ऊन परीक्षण प्रयोगशाला और एक ऊन प्रयोग केन्द्र स्थापित किया जाएगा। विभिन्न प्रदेशों में ३९६ भेड़ एवं ऊन विस्तार केन्द्र खोलने का प्रस्ताव है। योजना में भेड़ तथा ऊन विकास के लिए १·५ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। देश के बहुत-से भागों में जहां समय-समय पर अभाव की परिस्थितियां आ पड़ती हैं, ग्राम अर्थ-व्यवस्था को बल देने के लिए भेड़ पालन बहुत सीमा तक सहायक हो सकता है।

१६. बकरी को अक्सर 'निर्धन की गाय' कहा जाता है, हालांकि बकरियों की ४ करोड़ ७० लाख की संख्या का केवल पांचवा हिस्सा दूध उत्पादन के काम आता है। औसत उत्पादन बहुत कम है लेकिन खास-खास नस्लों की बकरियां १५० दिन की दूध देने की अवधि में औसतन ४०० पौंड दूध देती हैं। बकरियां भू-क्षरण का बहुत बड़ा कारण होती हैं और यदि कृषि अर्थ-व्यवस्था में बकरी पालन का विशेष महत्व होना है तो उसे जोतने योग्य भूमियों के अन्तर्गत ही विकसित करना चाहिए। बकरियों को एक स्थान पर बांधकर खिलाने से जो भी मांस उत्पादन सम्भव हो, उसके आर्थिक पहलुओं का तथा बकरियों की खास बीमारियों का सूक्ष्म अध्ययन करना भी आवश्यक है।

मुर्गी पालन

२०. सहायक उद्योग के रूप में मुर्गी पालन का महत्व बहुत पहले से अनुभव किया जा चुका है, पर मुर्गी पालन का विकास अपेक्षाकृत धीमी गति से हुआ है। औसत देशी मुर्गी हमारे देश में ५० अण्डे प्रति वर्ष देती है, जबकि अनेक दूसरे देशों में मुर्गियां १२० तक अण्डे देती हैं। मुर्गी पालन के विकास के मार्ग में एक बाधा यह भी है कि मुर्गी पालने वालों को मुर्गियों की बीमारी के कारण बड़ा नुकसान उठाना पड़ता है। गांवों की बहुत-सी मुर्गियों को तो मांसभक्षी जानवर और परिन्दे ही खा डालते हैं। गर्मी के दिनों में होने वाले अण्डों का एक अंश तो ठंडे गोदामों आदि उचित साधनों के अभाव में यों ही खराब हो जाता है।

२१. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ४ क्षेत्रीय फार्म खोले जाने की व्यवस्था है, जिनमें से प्रत्येक में अण्डे देने वाली २,००० मुर्गियां ऐसी होंगी जो बाहर से लाकर फार्म की जलवायु के लिए अभ्यस्त बनाई जाएंगी। ३०० विस्तार केन्द्रों को शुरुआत करने के लिए इन्हीं फार्मों से मुर्गियां दी जाएंगी। प्रत्येक विस्तार केन्द्र में प्रदर्शन यूनिट और उसके साथ एक विकास क्षेत्र रहेगा। हर एक प्रदर्शन यूनिट में निजी मुर्गी पालकों को मुर्गी पालन की आधुनिक विधियों की शिक्षा देने की व्यवस्था रहेगी। प्रत्येक विस्तार केन्द्र में एक अनुत्पत्ति यूनिट भी रहेगी,

जो खास तौर से गर्मी के मौसम में गांव के अण्डों को अधिक समय तक टिकाए रखने के लिए सुरक्षा उपचार करेगी। राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास योजना क्षेत्रों में मुर्गियों को अनेक बीमारियों से बचाने के लिए टीके लगाने का काम पहले से ही बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि देशी मुर्गियों की नस्ल सुधार अथवा उनकी उन्नति के लिए व्हाइट लेगहार्न और रोड आइलैंड रेड सबसे अधिक उपयोगी नस्लें हैं। ऐसा ख्याल है कि जो उपाय सोचे जा रहे हैं उनके फलस्वरूप समुन्नत देशी मुर्गियों का उत्पादन लगभग ५० प्रतिशत बढ़ सकेगा। अगर पर्याप्त मात्रा में अच्छी नस्ल की मुर्गियां सुलभ हो सकें तथा लोगों को प्राथमिक जानकारी आसानी से मिल सके और बाजार आदि की आवश्यक सुविधाएं भली-भांति संगठित की जा सकें तो देश के प्रत्येक गांव में एक सहायक उद्योग के रूप में मुर्गी पालन के विकास की बड़ी सम्भावनाएं हैं। द्वितीय योजना की समाप्ति तक प्रति व्यक्ति उपलब्धि ४ के बजाय २० अण्डे प्रति वर्ष हो जाएगी।

अनुसंधान तथा शिक्षा

२२. जन स्वास्थ्य एवं देश की अर्थ-व्यवस्था को पशुधन से जो योगदान मिलता है, उसे अनुकूल प्रजनन, उचित भोजन, बीमारियों तथा अन्य कारणों से होने वाले नुकसानों की पर्याप्त रोकथाम और पशु पालन तथा प्रबन्ध की सामान्य दशाओं में सुधार द्वारा कहीं अधिक बढ़ाया जा सकता है। विकास कार्यक्रमों को विस्तृत वैज्ञानिक अनुसंधान पर आधारित होना चाहिए। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की अनुसंधान योजनाओं के अतिरिक्त पशु चिकित्सा अनुसंधान और पशु पालन पर यथेष्ट ध्यान नहीं दिया गया था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पशु पालन के विकास और अनुसंधान सुविधाओं में विस्तार विषयक बहुत अधिक कार्यक्रमों की व्यवस्था की गई है। पशु पालन अनुसंधान का आयोजन राष्ट्रीय, प्रादेशिक और राज्यीय तीन स्तरों पर करना होगा। राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान और राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान जैसे केन्द्रीय संस्थानों को अखिल भारतीय महत्व की समस्याओं के विषय में मूल अनुसंधान, नई प्रणालियों जीव (उत्पादनों) तथा विशिष्ट स्नातकोत्तर शिक्षण क्रमों का संस्थापन आदि कार्यों को मुख्य रूप से करना होगा। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत इन संस्थाओं को सुदृढ़ बनाया जाएगा और उनका विकास किया जाएगा। भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान में पशु उत्पत्ति, मुर्गी पालन, पशु आहार, रोग निदान, जीवाणु विज्ञान, परान्नपोषी विज्ञान तथा जीव उत्पादनों के लिए वर्तमान अनुसंधान विभागों को अधिक कर्मचारी तथा सामग्री दी जाएगी। विभिन्न केन्द्रों में तैयार होने वाले टीकों और सेरा के गुण तथा प्रयोग को संचालित और नियंत्रित करने के लिए एक जीव उत्पादन मानकीकरण विभाग भी खोला जा रहा है। करनाल में खोले गए राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान ने बंगलौर के भारतीय अनुसंधान संस्थान का स्थान ग्रहण कर लिया है। इसमें डेरी उद्योग, आहार, रसायन, जीवाणु विज्ञान, टेकनीकल ज्ञान और मशीनों में अनुसन्धान के लिए अलग-अलग विभाग होंगे और डेरी विस्तार कार्य के लिए एक विभाग तथा एक डेरी विज्ञान विद्यालय भी होगा। इस संस्थान का एक क्षेत्रीय केन्द्र बंगलौर में भी है, जहां विद्यार्थियों को डेरी उद्योग की प्रारम्भिक शिक्षा दी जाती है और अनुसंधान कार्य होता है।

२३. देश के विभिन्न भागों में पशु पालन की परिस्थितियों में बड़ा अन्तर पड़ जाता है। बहुत-सी ऐसी अनुसंधानगत समस्याएं हैं जो किन्हीं खास इलाकों के लिए महत्वपूर्ण हैं और

क्षेत्रीय संस्थाओं में ही उनका अध्ययन भली प्रकार हो सकता है। इसलिए भारत सरकार चार अनुसंधान संस्थान खोलने जा रही है। पशु पालन के अनुसंधान तथा विकास के लिए देश को जिन चार प्रदेशों में बांटा गया है, उनमें से हर एक में एक-एक संस्थान रहेगा। ये प्रदेश हैं—समशीतोष्ण (हिमालयी), शुष्क (उत्तरी), पूर्वी तथा दक्षिणी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने इस दिशा में कार्य प्रारम्भ किया था। उक्त परिषद ने पशु आहार समस्याओं में अनुसंधान के लिए चारों क्षेत्रीय केन्द्रों का खर्च उठाना स्वीकार किया था। पशुओं में बांझपन के कारणों की खोज करने के लिए और पशु चिकित्सा कालेज के विद्यार्थियों को मादा पशुओं के रोगों तथा प्रसव सम्बन्धी बातों की शिक्षा देने के लिए, इससे सम्बद्ध विषय कृत्रिम गर्भाधान की शिक्षा देने के लिए और प्रजनन सम्बन्धी दैहिक व्यापार तथा रोग निदान की जानकारी देने के लिए प्रथम योजना के अन्तर्गत विशेष कर्मचारी वर्ग नियुक्त किया गया था। द्वितीय योजना में और अधिक कर्मचारी नियुक्त किए जाएंगे।

२४. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के कार्यों के परिणामस्वरूप अधिकांश राज्यों में पशु चिकित्सा अनुसंधान के लिए प्रमुख केन्द्रों की स्थापना हो चुकी है और राज्य सरकारों ने अपनी योजनाओं में अपने वर्तमान संगठनों को और भी पुष्ट बनाने की व्यवस्था की है। यह आवश्यक है कि केन्द्रीय तथा क्षेत्रीय संस्थानों में किए गए अनुसंधानों के परिणामों को स्थानीय दशाओं के अनुरूप बनाया और लागू किया जाए। पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित तथा अनुभवी कर्मचारियों की कमी के बावजूद आशा है कि राज्यों में अनुसंधान केन्द्रों के कार्य में प्रगति होगी।

२५. राष्ट्रीय विस्तार एवं अन्य क्षेत्रों में केन्द्र ग्रामों तथा मालमारी दूर करने और शहरों तथा गांवों में दूध पहुंचाने की योजनाओं से सम्बन्धित जो भी कार्यक्रम द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बनाए गए हैं, उन्हें पूरा करने के लिए लगभग ५,००० पशु चिकित्सा स्नातकों की आवश्यकता होगी, जबकि वर्तमान संस्थाओं से २,७५० स्नातक प्राप्त होने की आशा है। दो वर्ष पहले ही पशु चिकित्सा कर्मचारियों की इस कमी का अनुमान कर लिया गया था और कुछ कदम भी उठाए गए थे। हिसार, हैदराबाद, पटना, बम्बई और बीकानेर के पांच पशु चिकित्सा कालेजों में दूसरी पारी शुरू की गई थी और मध्य भारत, उड़ीसा, आन्ध्र तथा तिरुवांकुर-कोचीन में चार नए कालेज खोले गए। वर्तमान पशु चिकित्सा कालेजों को भी विद्यार्थियों की प्रवेश-संख्या बढ़ाने और प्रशिक्षण की सुविधाओं को अधिक अच्छा बनाने के लिए सहायता दी जा रही है। इज्जतनगर में भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान में एक स्नातकोत्तर पशु चिकित्सा कालेज खोला जा रहा है। चूंकि पशु चिकित्सा की डिग्री का पाठ्यक्रम चार साल का होता है, इसलिए बीच के समय में कमी पूरी करने के लिए दो वर्षों का एक तात्कालिक पाठ्यक्रम दस ऐसे केन्द्रों में शुरू कर दिया गया है जिनमें से हर एक में लगभग १०० विद्यार्थी पढ़ सकेंगे। इन केन्द्रों में जो लोग प्रशिक्षित होंगे, वे पशु चिकित्सा कालेज में प्रशिक्षण प्राप्त लोगों के साथ तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति करेंगे। पशु पालकों और अन्य मातहत कर्मचारियों जैसे कंपाउंडरों और मरहम-पट्टी करने वालों की कमी को पूरा करने के लिए राज्य सरकारें कार्रवाइयां कर रही हैं। अनेक राज्यों में कृत्रिम गर्भाधान, मुर्गी पालन, मृत पशुओं को काम में लाने या खाल उतारने आदि विषयों में विशेष प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाए जा रहे हैं। भारत सरकार सूअर पालने तथा उनके रोगों के बारे में शिक्षा देने के लिए एक पाठ्यक्रम चलाने वाली है।

२६. डेरी उद्योग के लिए १,००० कर्मचारियों की व्यवस्था करने के लिए करनाल में राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के साथ ही एक डेरी विज्ञान कालेज भी खोलने का प्रस्ताव है। फिलहाल डेरी विज्ञान की शिक्षा सुविधाएं केवल डिप्लोमा स्तर तक ही हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में करनाल और बंगलौर में, आरे और हरिन घाटा की दूध बस्तियों में और इलाहाबाद के कृषि संस्थान में डेरी उद्योग के विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण के लिए कम समय वाले अनेक विशेष पाठ्यक्रम चलाए जाएंगे। पशुधन के विकास में इन संस्थाओं के साधनों का उपयोग किया जा सके, इसलिए केन्द्रीय गोसंवर्धन परिषद ने अधिक महत्वपूर्ण गोशालाओं में नियुक्त करने के लिए गोशाला कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण का बारह महीने का पाठ्यक्रम चलाया है।

२. मछली पालन का विकास

२७. इधर कुछ वर्षों से ताजे पानी की मछली और समुद्री मछली दोनों का ही उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्न किए गए हैं। इस दिशा में जो भी विकास हुआ है, उसे केन्द्र और राज्य सरकारों की प्रेरणा तो मिली ही है, साथ ही भारत-अमेरिकी टेकनीकल सहयोग कार्यक्रम, भारत-नार्वे मछली पालन सामुदायिक विकास कार्यक्रम और खाद्य एवं कृषि संगठन से भी उसे गति मिली है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस पर ५ करोड़ रुपए खर्च किए गए थे और द्वितीय योजना में इस पर कुल मिलाकर लगभग १२ करोड़ रुपए खर्च करने का विचार है। इसमें से लगभग ४ करोड़ रुपए खाद्य और कृषि मंत्रालय खर्च करेगा और लगभग ८ करोड़ रुपए राज्यों की योजनाओं में खर्च होंगे।

२८. प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में मछली पालन सम्बन्धी आंकड़ों की स्थिति असंतोषजनक थी। इनमें कुछ हद तक सुधार हुआ है और खाद्य और कृषि मंत्रालय का विचार है कि मछलियों के उत्पादन, प्राप्ति और बिक्री की सूचना देने वाले ठीक आंकड़े प्राप्त करने के लिए कदम उठाए जाएं। यद्यपि मछली उत्पादन के आंकड़े बिलकुल ही नाकाफी हैं, फिर भी यह अनुमान किया जाता है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में कुल मछली उत्पादन एक करोड़ मीटरिक टन था, जिसमें से लगभग २० प्रतिशत घरेलू उपयोग में आती थी और शेष समुद्री मछली या बाजार में बेचने योग्य अतिरिक्त अन्तर्देशीय मछली थी। अनुमान है कि प्रथम योजना काल में मछली उत्पादन १० प्रतिशत बढ़ा है क्योंकि १९५५-५६ में उत्पादन ११ लाख मीटरिक टन था। आशा है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में मछली उत्पादन ३३ प्रतिशत बढ़ जाएगा, अर्थात १४ लाख मीटरिक टन हो जाएगा। मछली का वर्तमान उपभोग प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष ४ पौंड से कुछ कम है। दस वर्षों के समय में मछली उत्पादन को ५० प्रतिशत बढ़ा देना एक ऐसा काम है जिसे पूरा करना व्यावहारिक रूप से सम्भव है।

अन्तर्देशीय मछली पालन

२९. अन्तर्देशीय मछली पालन का विकास छोटे पैमाने पर प्रथम पंचवर्षीय योजना के पहले से किया जा रहा था, लेकिन उसके बाद से इसे और भी बढ़ाया गया। पश्चिम बंगाल में प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में २,५०० एकड़ के अर्ध-त्यक्त तालाब, ३७८ एकड़ के अन्य विकसित झीलों और लगभग १३,५०० एकड़ के छोटे-मोटे जलाशय मछली पालन के लिए अपनाए और काम में लाए गए थे। उड़ीसा में लम्बे-चौड़े दलदल क्षेत्रों को मछली पालन के लिए पुनः प्राप्त किया गया और काम में लाया गया है। मछली बीजों को और अधिक

सुलभ बनाने पर विशेष बल दिया गया है। १९५४-५५ में लगभग २६ करोड़ अंडों और छोटी मछलियों को जुटाया गया। पालन-पोषण करने वाले तालाबों में या लाने-ले जाने के दौरान में जो छोटी मछलियां और आंगुलिक मछलियां मर जाती हैं, उनकी मृत्यु दर को घटाने के प्रयत्न काफी हद तक सफल हुए हैं। जिन जल क्षेत्रों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था, उन्हें मछली पालन के उपयोग में लाने के लिए कुछ राज्यों ने कानून बना दिए हैं। जल क्षेत्रों का सर्वेक्षण भी किया जा रहा है। उदाहरण के लिए, १९५४-५५ में विभिन्न राज्यों में लगभग २५,००० एकड़ जल क्षेत्र का सर्वेक्षण किया गया और उसके अतिरिक्त ९,००० एकड़ से अधिक जल क्षेत्र का 'स्टाक' किया गया। बड़े-बड़े जलाशयों में मछली पालन का विकास करने का कार्य भी उठाया गया है। मद्रास में मट्टूर जलाशय विकसित किया गया है, जहां से अब करीब हर रोज ५ टन मछली मिल सकती है। बहुत-से दूसरे जलाशयों में भी मछली पालन का काम या तो शुरु कर दिया गया है या शुरू करने की योजना है। राज्यों में अन्तर्देशीय मछली पालन के और अधिक विकास के लिए लगभग ५ करोड़ रुपए की व्यवस्था है।

समुद्री मछली पालन

३०. यद्यपि अन्तर्देशीय मछली पालन का विकास महत्वपूर्ण है, तथापि मछली पालन के विकास कार्यक्रम का अधिकतर भाग समुद्र से मछली उपलब्ध करने से सम्बद्ध है। मछुए जिस वातावरण में रहते हैं, उसे ध्यान में रखकर उनकी समस्याओं को समझना और सुलझाना होगा। इस क्षेत्र में प्रौद्योगिक विकास एवं अनुसंधान को तो काफी योग देना ही है, किन्तु विशेष बल स्वयं मछुए पर, उसके साज-सामान और साधनों पर, और उसके समाज तथा उस विधि पर होना चाहिए जिस पर उसके काम का पुनर्गठन और विकास किया जाएगा। मछुओं में सामुदायिक विकास कार्यों की विशेष समस्याएं विस्तार संगठन और प्रौद्योगिक उन्नति की हैं। तिरुवांकुर-कोचीन में भारत-नार्वे मछली पालन योजना कार्य ने जो कार्य इस समय उठाए हैं, उनको यदि हम इस पहलू से देखें तो वास्तविक महत्व प्रकट होगा। मछली पालन विकास में उन गांवों और गांवों के समूहों के सामाजिक और आर्थिक जीवन के प्रति संगठित दृष्टि पर उत्तरोत्तर अधिक बल दिया जाना चाहिए जिनकी मुख्य आजीविका मछली पालन ही है।

३१. इन गांवों में बाजार के लिए मछली पकड़ने का काम होता है, इसलिए इन गांवों की अर्थ-व्यवस्था बहुत हद तक मछलियों को इकट्ठा करने, उन्हें एक जगह से दूसरी जगह पहुंचाने तथा उनकी बिक्री की व्यवस्था से सम्बद्ध है। आज वस्तुस्थिति यह है कि अधिकतर मछुए अपनी घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति और उत्पादन सम्बन्धी साज-सामान प्राप्त करने के लिए बिचौलियों पर निर्भर करते हैं। अक्सर उन्हें कर्ज की अदायगी के रूप में पहले से ही उन मछलियों को देने का वायदा करना पड़ता है जो वे पकड़ेंगे। फलस्वरूप कम उत्पादन होता है और अधिकांश मछुओं को अत्यन्त दरिद्रता का जीवन बिताना पड़ता है। इसके अतिरिक्त उनके निरन्तर शोषण का रास्ता खुला रहता है। यह काम कठिन अवश्य है, पर समुद्र से मछलियां पकड़ने के काम का और स्वयं मछुआ समाज का पुनर्गठन बहुत कुछ सहकारी ढंग पर करना होगा। प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस दिशा में उपयोगी शुरुआत की जा चुकी है। मछुओं की लगभग ८०० सहकारी संस्थाएं संगठित की गई हैं। इनमें से अधिकांश ऋण से सम्बन्धित हैं, पर कई संस्थाएं साज-सामान की खरीद के लिए सुविधाएं देती हैं

और कुछ संस्थाएं सहकारी उत्पादन तथा बिक्री भी करती हैं। बम्बई में मछुओं की सहकारी संस्थाओं ने उत्साहवर्धक प्रगति की है। इन संस्थाओं को केन्द्रीय संगठन का सहयोग मिलता है, जो औसत से लगभग ८ लाख रुपए मूल्य की मछलियों की प्रति वर्ष बिक्री करवाता है। इन संस्थाओं ने सरकार की सहायता से नावों, इंजनों और बर्फ के तथा ठंडे गोदामों की व्यवस्था के लिए कदम उठाए हैं। मद्रास में २३६ संस्थाएं हैं। उनमें से अधिकांश ऋण देती हैं, लेकिन कुछेक ने अनाज, सूत, पान, मछली मारने के कांटे आदि मुहैया करने का भी प्रबन्ध किया है। उड़ीसा में मछुओं के सहकारी संगठन लगभग ३२ लाख रुपए मूल्य की मछली प्रति वर्ष बेचते हैं और मछुओं को जरूरी वस्तुएं मुहैया करने का प्रबन्ध करते हैं। सौराष्ट्र के जिन गांवों में मछली पकड़ी जाती है, वहां सहकारी बिक्री का काम भी दिखलाया किया गया है।

३२. समुद्र से मछली पकड़ने के कार्य का विकास मुख्य रूप से इन चार शीर्षकों के अन्तर्गत आता है :—(१) मछली पकड़ने के तरीकों में सुधार, (२) गहरे समुद्र में मछली पकड़ने के काम का विकास, (३) मछली पकड़ने के लिए बन्दरगाहों की व्यवस्था, और (४) मछलियों को एक जगह से दूसरी जगह भेजने, उन्हें गोदामों में रखने तथा उनकी बिक्री की व्यवस्था और उनका उपयोग। आजकल मछुए जिन बजरों का प्रयोग करते हैं, उनसे वे अधिकतर तट से ७ से लेकर १० मील तक के इलाकों में ही मछलियां पकड़ पाते हैं, इसलिए अधिक दूर या अधिक गहरे पानी की मछलियों को बहुत ही कम पकड़ा जाता है। इन बजरों का यंत्रीकरण और मछली पकड़ने के तरीकों में सुधार—ये दोनों ही बातें तटवर्ती समुद्री क्षेत्र में अधिक मछलियां पकड़ने के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। पिछले पांच वर्षों में बम्बई में लगभग ६०० नावों में 'मोटर' इंजन लगा दिए गए हैं और बम्बई शहर में पहुंचने वाली मछली की मात्रा १०,००० टन से बढ़कर चौगुनी, अर्थात ४०,००० टन प्रति वर्ष हो गई है। सौराष्ट्र में ४० नावों में 'इन बोर्ड' इंजन लगा दिए गए हैं। इनके अतिरिक्त कुछ नावों में 'आउट-बोर्ड' मोटरों का प्रयोग किया जाता है। कुछ समुद्रतटीय राज्यों में विदेशी विशेषज्ञों की सहायता से वर्तमान नावों को सुधारा जा रहा है और नए डिजाइनों का अध्ययन किया जा रहा है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में मछली पालन के उन्नत तरीकों के विकास और यंत्रीकरण से सम्बन्ध रखने वाले मौजूदा कामों को बढ़ाने की व्यवस्था है।

३३. गहरे समुद्र में मछली पकड़ने के बम्बई-स्थित केन्द्रीय स्टेशन ने मछली स्थलों के नक्शे बनाने के लिए, भारतीय दशाओं में किस-किस तरह के बेड़े और गियर उपयोगी हो सकते हैं यह जानने के लिए, मछली मारने के मौसमों का पता लगाने के लिए, और कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए मछली पकड़ने की गवेषणात्मक कार्रवाइयां की हैं। बम्बई और सौराष्ट्र के समुद्र तट से ४० फैदम सीमा आगे वाले क्षेत्रों के नक्शे काफी हद तक बना लिए गए हैं और कुछ बहुमूल्य मछली स्थलों का पता लगाया गया है। लाल जहाजों वाले बेड़े के द्वारा मछली पकड़ने के तरीकों की परीक्षा की जा रही है। पश्चिम बंगाल सरकार ने इसी तरह का काम बंगाल की खाड़ी में शुरू किया है और मद्रास, त्रिवांकुर-कोचीन तथा सौराष्ट्र में भी विभिन्न प्रकार की नावों और गियरों की सहायता से प्रयोगात्मक मछली पालन का कार्य प्रगति कर रहा है। गहरे समुद्र में मछली पकड़ने के बम्बई-स्थित केन्द्र के कामों को द्वितीय पंचवर्षीय योजना में विस्तृत किया जाएगा और ४० फैदम सीमा से आगे मछली स्थलों के नक्शे बनाए जाएंगे। दक्षिण में तथा पश्चिमी और पूर्वी तटों पर मछली पकड़ने के

सम्बन्ध में परीक्षण कार्य किए जाएंगे और मछली स्थलों के नक्शे भी बनाए जाएंगे। कोचीन, विशाखापत्तनम और पोर्ट ब्लेयर में मछली पकड़ने के लिए तीन परीक्षण केन्द्र स्थापित करने की योजना है।

३४. मछली पकड़ने के तटवर्ती और यंत्रीकृत कार्यक्रमों के विस्तार के साथ-साथ मछली पकड़ने के जहाजों के लिए बन्दरगाह की सुविधाओं में सुधार करना आवश्यक है। नए बन्दरगाह बनाने और वर्तमान बन्दरगाहों में जहाजों के ठहरने के लिए भी प्रबन्ध करना है। इस क्षेत्र में जो बहुत-सी कठिनाइयां हैं, उनका अध्ययन खाद्य तथा कृषि संगठन के विशेषज्ञों की सहायता से किया जा रहा है। समुद्रतटीय राज्यों की योजनाओं में मछली पकड़ने के लिए बन्दरगाह की सुविधाओं में विस्तार करने की व्यवस्था है।

३५. यद्यपि कुछ क्षेत्रों में, विशेषकर पश्चिमी तट पर मछलियां बहुतायत से मिलती हैं, लेकिन उन्हें एक जगह से दूसरी जगह पहुंचाने और ठंडे गोदामों की सुविधाएं नाकाफी हैं। इस लिए अन्तर्देशीय क्षेत्रों में मछली अपर्याप्त और अनियमित रूप से ही पहुंच पाती है। राज्यों की योजनाओं में परिवहन की सुविधाओं के सुधार पर जोर दिया गया है। बम्बई में ६० ट्रकों और ३० ढोने वाले लांचों को शहर में मछली लाने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। केन्द्रीय सरकार का विचार है कि लम्बी यात्रा के लिए रेलवे के ऐसे २० डिब्बे प्राप्त किए जाएं जो शीतानकूलित हों। अंडों और छोटी मछलियों को कलकत्ते से अभावग्रस्त क्षेत्रों में भेजने के लिए किसी हद तक वायु-परिवहन का उपयोग भी किया जा रहा है। बर्फ और ठंडे गोदामों की सुविधाओं की आवश्यकता अनुभव करके केन्द्रीय सरकार ने बम्बई में एक गोदाम स्थापित किया है। मद्रास सरकार ने दो गोदाम कोजीकोड और मंगलौर में खोले हैं और भारत-नार्वे कार्यक्रम के अन्तर्गत एक बर्फ का गोदाम तिरुवांकुर-कोचीन में स्थापित किया जा रहा है। भारत-अमेरिकी टेकनीकल सहयोग कार्यक्रम के अन्तर्गत बर्फ के कई छोटे तथा ठंडे गोदाम महत्वपूर्ण मछली केन्द्रों में स्थापित किए जा रहे हैं, जिनमें से कुछ सहकारी संस्थाओं द्वारा संचालित किए जाएंगे।

३६. अनेक स्थानों पर मछली बाजारों का नियन्त्रण या तो बिचौलियों या व्यापारियों के गुटों के हाथ में है। इसके परिणामस्वरूप, मछुए को अपने माल के लिए बहुत कम दाम मिलता है और खरीदार को अपनी खरीद के लिए अधिक ऊंचा दाम देना पड़ता है। कुछ क्षेत्रों में बिक्री के लिए काफी बड़ी मात्रा में मछली फाजिल रहती है। उदाहरण के लिए, सौराष्ट्र में पकड़ी जाने वाली कुल मछली का प्रायः ९० प्रतिशत बाहर भेजा जा सकता है। उड़ीसा में चिल्का झील क्षेत्र की स्थिति भी यही है। अपर्याप्त परिवहन सुविधाओं के कारण बहुत-सी मछली उपचार-सुरक्षा केन्द्रों में भेज दी जाती है, जहां आवश्यक उपचार करने के बाद उसे सुखाई गई मछली के रूप में बेचा जाता है। राज्यों की योजनाओं में सुखाई गई मछली के सुरक्षा उपचार तथा बिक्री के अच्छे प्रबन्ध करने की व्यवस्था है। इस समय लगभग २७,००० टन मछली पड़ोसी देशों को निर्यात होती है। यह अधिकतर सुखाई हुई, सूखी नमकीन या गीली नमकीन मछली के रूप में होती है। जो खराब मछली खाने के लायक नहीं रहती, वह मछलियों के भोजन अथवा मछलियों की खाद के रूप में तैयार कर दी जाती है। कुछ राज्यों में शार्क मछली का तेल भी बनाया जाता है। शार्क मछली का तेल थोड़ा-बहुत निर्यात किया जाता है। इस बात के लिए भी कदम उठाए जा रहे हैं कि

कुटीर उद्योग के ढंग पर समुद्री घास-पात का उपयोग किया जाए और उनसे समुद्री घास, जेली, सेवार पशुओं का भोजन तथा खाद बनाई जाए। मछली पालन के उप-उत्पादनों से सम्बन्धित उद्योग के विकास के लिए पर्याप्त क्षेत्र है और मछलीमार गांवों में काम करने वाली बहुधंधी संस्थाओं को इसे भी अपने काम का एक अंग समझकर करना चाहिए।

अनुसंधान और प्रशिक्षण

३७. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में अनुसंधान के विकास को बहुत महत्व दिया गया है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के पूर्व ही एक शुरुआत की गई थी, जब कि १९४७ में केन्द्रीय सरकार ने दो मछली पालन अनुसंधान केन्द्र स्थापित किए थे—एक समुद्री मछली के लिए मंडपम में और दूसरा ताजे तथा खारे पानी की मछलियों के लिए कलकत्ते में। केन्द्रीय समुद्री मछली अनुसंधान केन्द्र, जिसके उपकेन्द्र बम्बई, कारवाड़, कालीकट, कोचीन और मद्रास में हैं, समुद्र में मछली पकड़ने की समस्याओं पर अनुसंधान कार्य करता है। इन अनुसंधान कार्य में मछली पकड़ने के स्रोतों का अनुमान लगाना, उन स्रोतों को किस हद तक काम में लाया जा रहा है, इसका पता लगाना उत्पादन बढ़ाने की सम्भावनाएं खोजना और मछली को सुरक्षित रखने के उपायों तथा उपयोगों पर विचार करना आदि बातें शामिल हैं। व्यावसायिक मछली पालन की जिन आर्थिक और टेकनीकल समस्याओं का विशेष रूप से अध्ययन किया गया है, वे ये हैं—मैकेरल, सारडीन, प्रान, ट्राल आदि मछलियों को पकड़ने, खारी समुद्रतटीय क्षेत्र को मछली स्थल के रूप में विकसित करने, समुद्री घास-पात का उपयोग करने आदि का विशेष रूप से अध्ययन किया गया है। छान-बीन से उन अनेक दिशाओं का पता चला है जिनमें मछली पकड़ने और अन्य सम्बद्ध कार्यों के लिए अनेक प्रकार के प्रबन्ध किए जा सकते हैं और मछलियों को सुरक्षित रखा जा सकता है।

३८. अन्तर्देशीय मछली पालन की समस्याओं का अध्ययन केन्द्रीय अन्तर्देशीय मछली पालन अनुसंधान केन्द्र, बैरकपुर (कलकत्ता) और उसके तीन उपकेन्द्रों में किया जा रहा है। इलाहाबाद में नदियों और झीलों की मछलियों के बारे में, कटक में तालाबों की मछलियों के बारे में और कलकत्ते में नदियों के दहानों की मछलियों के बारे में खोज की जा रही है। मछली पालन और परिवहन की प्रारम्भिक स्थितियों में ही जो अण्डे और आंगुलिक मछलियां नष्ट हो जाती हैं, उनकी मात्रा कम करने की विधियां खोज निकालने के लिए भी अध्ययन किया गया है। मछली पालन के तरीकों में सुधार एवं मानकीकरण करने की दिशा में भी प्रगति हुई है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए जो शोध कार्यक्रम बनाए गए हैं, उनमें नदी के दहानों, खारे पानी, प्राकृतिक एवं कृत्रिम झीलों, तथा बड़ी-बड़ी नदियों में मछली पालने पर, मछली केन्द्रों में जल दूषित होने के प्रभावों पर तथा अनावश्यक घास-पात को बढ़ने से रोकने के प्रश्नों पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाएगा। अनेक राज्यों में स्थानीय समस्याओं का अध्ययन किया जा रहा है और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने विशेष योजनाएं चलाई हैं। १९५४ में नियुक्त की गई एक समिति ने मछली पालन के अनुसंधान कार्य की समीक्षा की और सलाह दी कि केन्द्रीय स्टेशनों के विस्तार कार्यक्रम बनाए जाएं। केन्द्रीय मछली पालन अनुसंधान केन्द्रों, राज्यों के मछली पालन विभागों और विश्वविद्यालयों के मछली पालन अनुसंधान कार्य को स्थायी मछली पालन अनुसंधान समिति की सहायता से समन्वित किया जाता है। एक मछली पालन प्राविधिक केन्द्र स्थापित किया जाएगा, जिसमें मछलियां पकड़ने के जाल और अन्य यन्त्रों के डिजाइन तैयार करने के

बारे में तथा उन्हें किन वस्तुओं से तैयार किया जाए और किस प्रकार सुरक्षित रखा जाए, इस विषय में खोज की जाएगी। इस केन्द्र में मछलियों को ताजी, ठंडी और जमी स्थिति में गोदामों में रखने, मछलियों और अन्य समुद्री उत्पादनों को खराब होने से बचाने की विधि एवं उनके उपयोग के बारे में और बिक्री तथा विस्तार के हेतु उनकी किस्में तथा वर्ग निश्चित करने के सम्बन्ध में भी खोज की जाएगी।

३९. कलकत्ता-स्थित केन्द्रीय अन्तर्देशीय मछली पालन अनुसंधान केन्द्र में मछली पालन विभागों के कर्मचारियों और अनुसंधान कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण की सुविधाएं दी जाती हैं। गहरे समुद्र में मछली पकड़ने के बम्बई-स्थित केन्द्रीय स्टेशन के जहाजों में और कलकत्ते में पश्चिम बंगाल सरकार के जहाजों में शक्ति की सहायता से मछली पकड़ने का प्रशिक्षण दिया जाता है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ये सुविधाएं बढ़ाई जाएंगी। मछुओं को प्रशिक्षित करना उतना ही जरूरी है जितना कि टेकनीशियनों और अनुसंधान कार्यकर्ताओं को। बम्बई और सौराष्ट्र की सरकारों के साथ केन्द्रीय सरकार ने यंत्रीकृत मछली पालन के लिए मछुओं की खातिर एक प्रशिक्षण-केन्द्र बम्बई के निकट खोला है और ऐसे ही अन्य केन्द्र तूतीकोरिन और कोचीन में स्थापित किए जाएंगे। भारत-नार्वे योजना कार्य के अन्तर्गत तिरुवांकुर-कोचीन में यंत्रीकृत मछली पालन की शिक्षा दी जा रही है। राज्य सरकारों के वरिष्ठ अधिकारियों के लिए दो केन्द्रीय अनुसंधान केन्द्रों पर कम समय वाले प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रम की सुविधाएं भी हैं।

४०. पिछले कुछ वर्षों में उपयोगी अनुभव प्राप्त हुए हैं। सुविधाओं की व्यवस्था करने से सम्बन्धित समस्याओं और मछुओं के बीच प्रसार कार्य के संगठन का और निकट से अध्ययन करना जरूरी है, ताकि द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में समुद्रतटवर्ती राज्यों में मछुओं के बीच सहकारी विकास का विस्तृत कार्यक्रम आरम्भ किया जा सके।

अध्याय १५

वन तथा भूमि संरक्षण

१. वन

भारत के वन न केवल विभिन्न विशेष गुणों वाली नाना प्रकार की इमारती लकड़ी के स्रोत हैं, जो कि निर्माण, प्रतिरक्षा, संचार आदि के लिए विस्तृत रूप से उपयोग में आती है, अपितु उन उद्योगों की आवश्यकताओं के लिए भी उपयोगी हैं जिनका प्रमुख कच्चा माल लकड़ी ही है। शहरों के लिए वे ईंधन के स्रोत हैं और देहातियों की लकड़ी सम्बन्धी छोटी-मोटी आवश्यकताओं को भी पूरा करते हैं। चराई की सुविधा, भूसा, लाख आदि भी हमें वनों से प्राप्त होता है। इन सब प्रत्यक्ष लाभों के अलावा वनों का सबसे महत्वपूर्ण काम ढलुवा भूमि में पानी द्वारा मिट्टी की काट को रोकना और समतल भूमि की आर्द्रता कायम रखना तथा बालूकाट को रोकना है। नदी के जल स्रवण क्षेत्र में बाढ़ों को संयमित करने तथा नदियों के निरन्तर एवं सन्तुलित प्रवाह को कायम रखने में वन सहायक सिद्ध होते हैं। जलवायु को सुधारने में भी उनका काफी प्रभाव होता है। इन संरक्षक लाभों का तभी अनुभव किया जा सकता है जब कि वनों का विस्तार पर्याप्त हो। परन्तु बिखरे हुए वृक्षों तथा उनके छोटे-छोटे झुण्डों का भी काफी लाभप्रद प्रभाव होता है। उचित रूप से बनाई गई वृक्ष मेखला और वात-रक्षा पट्टी काफी हद तक कृषि की उपज वृद्धि में सहायक सिद्ध होती हैं। अन्त में, वन नाना प्रकार के जीव-जन्तुओं के लिए प्राकृतिक घर हैं। वनों के विनाश का अर्थ प्राकृतिक जीव जन्तुओं का विनाश है।

२. ये तो कुछ प्रकट तथ्य हैं, परन्तु ये सब इस बात पर जोर देते हैं कि कुल क्षेत्रफल का काफी भाग स्थायी वनों के रूप में रहने देना चाहिए। वन उचित अनुपात में वितरित हों और साथ ही इस बात का ध्यान भी रखा जाए कि उनका अत्यधिक उपयोग, दुरुपयोग व अतिक्रमण न हो। भारत के कुल क्षेत्रफल में से २२ प्रतिशत वनभूमि है। यह असन्तोषजनक नहीं दीखता, परन्तु वनों के रूप में वर्गीकृत क्षेत्रों का इमारती लकड़ी के रूप में मूल्य उनकी उत्पादन क्षमता की तुलना में बहुत गिरा हुआ है। और हमारे देश के वनों की प्रति एकड़ उत्पादन क्षमता भी पश्चिमी देशों के वनों की उत्पादन क्षमता से बहुत कम है। भारत में अधिकतर वन नाममात्र को ही हैं और इनका विभिन्न प्रकार से दुरुपयोग किया जाता है। भारत की वन भूमि उत्तर-पश्चिम में ११ प्रतिशत से लेकर मध्यवर्ती प्रदेश में ४८ प्रतिशत तक के अनुपात में है। इस प्रकार भारतीय वन भूमि असमान रूप से वितरित है। जहां जंगलों की अधिक आवश्यकता है, वहां ये बहुत कम हैं, जैसे कि भारत के सबसे सघन आबादी वाले तथा गहनतम कृषि वाले गंगा के मैदान में। उष्णतर प्रदेशों में कम ऊंचे वन होने के कारण देश के अधिक भाग में उष्णदेशीय प्रकृति के वन पाए जाते हैं। प्रत्येक स्थान के वनों में नाना प्रकार के वृक्ष पाए जाते हैं जिनमें से बहुत कम की व्यापारिक उपयोगिता है। इस प्रकार कीमती, मिले-जुले, तथा झड़ने वाले पत्तों के वृक्षों से परिपूर्ण एक एकड़ वनभूमि की उपयोगी इमारती लकड़ी का उत्पादन भी योरोपीय देशों के मुकाबले

वनों के एक एकड़ क उत्पादन से कम है। लकड़ी काटने तथा उसे वनों से वाहर लाने में होने वाली व्यर्थता को रोकने से तथा अनुसंवान द्वारा निम्न श्रेणी की इमारती लकड़ी के उपयोगों को ढूंढने से इस वारे में कुछ हद तक सुवार किया जा सकता है (वास्तव में कुछ हो भी चुका है)। अमेरिका, रूस आदि प्रगतिशील देशों के कुल क्षेत्रफल में से प्राय: एक तिहाई वनभूमि होती है। इन वातों को तथा विशेप रूप से प्राकृतिक ऊष्णदेशीय वनों की उत्पादन क्षमता को ध्यान में रखते हुए १९५२ के राष्ट्रीय वन नीति प्रस्ताव में यह प्रस्तावित किया गया कि वीरे-धीरे देश के कुल क्षेत्रफल में से वनभूमि को ३३ प्रतिशत तक वढ़ा लेना चाहिए जिसमें से ६० प्रतिशत पर्वतीय प्रदेशों में हो तथा २० प्रतिशत समतल भू-भागों में हो।

३. यह वात स्मरणीय है कि औद्योगीकरण के विकास के लिए उठाए गए प्रत्येक कदम के साथ-साथ वन पदार्थों की मांग वढ़ती जाएगी। अनेक उद्योगों में प्रमुख कच्चे माल के रूप में लकड़ी इस्तेमाल होगी और जिन उद्योगों में ऐसा नहीं होगा, उनमें इमारती लकड़ी न केवल कारखानों के निर्माण में काम आएगी वल्कि उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं को पैक करने के लिए नियमित रूप से इस्तेमाल होगी। शिक्षा सम्वन्वी तथा अन्य कार्यक्रमों के लिए आवश्यक वढ़ते हुए कागज के उत्पादन के लिए कच्चा माल भी इन्हीं वनों से प्राप्त करना है। यह केवल संयोग नहीं कि दुनिया के देश जो सवसे अविक प्रगतिशील हैं उनमें प्रति व्यक्ति के पीछे लकड़ी की खपत सवसे ऊंची है। भारत में प्रति व्यक्ति के पीछे अनचीरी लकड़ी की खपत केवल १·४ घनफुट है, जवकि अमरीका में ५८ घनफुट है। व्रिटेन में प्रति व्यक्ति पीछे ७८ पौंड गूदे की खपत की तुलना में भारत में केवल १·६ पौंड ही है। अमेरिका तथा रूस में प्रति व्यक्ति पीछे क्रमश: १·८ तथा ३·५ हैक्टर वनभूमि है, जवकि भारत में केवल ०·२ हैक्टर ही है। ये आंकड़े उस भारी कमी की ओर संकेत करते हैं जिसको दूर करना रहन-सहन के तुलनात्मक स्तर को प्राप्त करने के लिए परमावश्यक है।

४. वन नीति ऐसी वनानी होगी जिससे एक ओर वन पदार्थों की दीर्घकालिक वृद्धि हो और दूसरी ओर निकटवर्ती भविष्य में इमारती लकड़ी की वढ़ती हुई मांग पूरी हो सके। इन दोनों दिशाओं में यथार्थ दृष्टि से योजना वननी चाहिए। कहीं-कहीं पर पाए जाने वाले कीमती वृक्षों के साथ, ऊष्णदेशीय वनों की मिली-जुली प्रकृति के कारण होने वाली हानियों के वारे में पहले से ही विचार किया जा चुका है। इससे मिली-जुली प्रकृति वाले वनों के प्रवन्व तथा पुनरुत्थान में अनेक कठिनाइयां हैं। सागवान के विपय में वनों के अनेक सघन भागों में वृक्ष काटकर गिराने तथा कृत्रिम पुनरुत्थान के अलावा इन कठिनाइयों को दूर करने का अन्य कोई चारा न था। उद्योगों में काम आने वाली आवश्यक लकड़ी को प्राप्त करने के लिए ऐसा ही कोई हल ढूंढना पड़ेगा। लकड़ी पर निर्भर उद्योगों की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें उचित कीमत पर तथा उचित मात्रा में निरन्तर लकड़ी मिलती रहे। अत: वनों के आगामी प्रवन्व के लिए यह आवश्यक होगा कि औद्योगिक (तथा व्यापारिक) लकड़ी के उत्पादन के लिए कृत्रिम वन उगाने की ओर अविक ध्यान दिया जाए। इसमें पैदा होने वाले खतरों तथा कठिनाइयों को पूरी तरह समझा जा चुका है। इन कठिनाइयों को दूर करने तथा खतरों से वचने के लिए वन वर्द्धनीय अनुसंवान पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए।

५. वनों को विस्तृत करने तथा उनके उत्पादन को वढ़ाने के लिए काफी लम्बी अवधि चाहिए। अत: यह आवश्यक है कि कुछ ऐसे अल्पकालिक उपाय ढूंढे जाएं जो कि उनके

दीर्घकालिक विकास के लिए हानिकारक न हों। घटिया तथा गौण श्रेणी की इमारती लकड़ी को उत्तम किस्म की बनाने के लिए उपाय करने चाहिएं। इन इमारती लकड़ियों को मजबूत तथा टिकाऊ बनाने के लिए, प्लाईवुड बनाने, सुखाने तथा तख्ते बनाने आदि के ढंग इस्तेमाल किए जा सकते हैं। सजावटी इमारती लकड़ी का उपयोग करते हुए उसे अधिक टिकाऊ बनाया जा सकता है। व्यर्थ जाने वाली तथा घटिया लकड़ी से चिपबोर्ड, हार्डबोर्ड बनाकर इमारती लकड़ी की कमी को पूरा किया जा सकता है। इमारती लकड़ी काटने तथा उसे वनों से बाहर लाने के तरीकों में सुधार करने से कीमतों को घटाया जा सकता है और होने वाली व्यर्थता को कम किया जा सकता है।

६. १९५२ के वन नीति प्रस्ताव में वन प्रबन्ध तथा उसके विकास के बारे में मुख्य नियम निर्धारित कर दिए गए हैं और निम्नलिखित बातों पर जोर दिया गया है :

(१) भूमि के उपयोग का एक ऐसा सन्तुलित तथा पूरक ढंग निकाला जाए जिसके अन्तर्गत प्रत्येक किस्म की भूमि का इस प्रकार से उपयोग हो जिससे उत्पादन अधिकाधिक तथा क्षय न्यूनतम हो।

(२) रोकथाम :

(क) उन पर्वतीय प्रदेशों में वनोन्मूलन को रोकना जहां से देश की भूमि को उपजाऊ बनाने वाली सदा प्रवाहित नदियों को निरन्तर पानी मिलता है;

(ख) नदी के वृक्षहीन तटों पर बढ़ते हुए भूमि के कटाव को रोकना जो कि बेकार पड़ी हुई उबड़-खाबड़ जमीन पर खोहें बनाता है और आसपास की उपजाऊ भूमि को भी बंजर बना देता है;

(ग) समुद्र के घाटों पर बालू के तूफानों को रोकना और बालू के टीलों के स्थानान्तरण को रोकना, विशेषकर राजस्थान की मरुभूमि में;

(३) भौतिक तथा जलवायु सम्बन्धी स्थितियों को सुधारने तथा जन साधारण के कल्याण के लिए जहां भी सम्भव हो वृक्ष लगाए जाएं;

(४) चारे, कृषि सम्बन्धी उपकरणों के लिए थोड़ी-बहुत लकड़ी और विशेष रूप से ईंधन की वृद्धि निश्चित करनी चाहिए ताकि गोबर को जलाने की जगह खाद के रूप में इस्तेमाल करके अधिकाधिक अन्न उत्पन्न किया जा सके;

(५) प्रतिरक्षा, संचार तथा उद्योग के लिए आवश्यक इमारती लकड़ी तथा अन्य वन पदार्थों की मांग निरन्तर रूप से पूरी होती रहनी चाहिए; और

(६) उपरोक्त आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रतिवर्ष अधिकाधिक राजस्व प्राप्त करना परमावश्यक है।

इन हिदायतों को कार्यान्वित करने के लिए तथा देश के वन साधनों को उपयोगी तथा प्रभावपूर्ण ढंग से विकसित करने के लिए निम्नलिखित उपाय आवश्यक होंगे :

(क) वन क्षेत्रों का विस्तार करके उन्हें सुधारा जाए;

(ख) निकट भविष्य में इमारती लकड़ी तथा अन्य वन पदार्थों की बढ़ती हुई मांग को पूरा किया जाए; और

(ग) दीर्घकालिक वन साधनों के विकास के लिए योजना बनाई जाए।

पहली पंचवर्षीय योजना में प्रगति

७. पहली पंचवर्षीय योजना में वनों के विकास के लिए ९.६ करोड़ रुपया स्वीकार किया गया था। पहली योजना की अवधि में राज्य सरकारों द्वारा वनरोपण, वन प्रदेशों में यातायात साधन, वन प्रशासन में समुचित प्रबन्ध तथा गांव निर्माण सम्बन्धी अनेक योजनाएं कार्यान्वित की जा चुकी हैं। लगभग ७५,००० एकड़ भूमि को वन उगाकर हरा-भरा बनाया गया। लगभग ३,००० मील से भी अधिक वन प्रदेशों में सड़कें बनाई गईं या उनमें सुधार किया गया। २ करोड़ एकड़ भूमि से भी अधिक वन प्रदेश, जो कि लोगों की व्यक्तिगत सम्पत्ति थी, सरकारी प्रबन्ध में सम्मिलित कर लिया गया और इस विशेष उत्तरदायित्व के लिए प्रशासनिक व्यवस्था को सुदृढ़ किया गया। कार्यकारी योजनाएं बनाने का काम तेजी से होने लगा और नए प्रदेश भी इन योजनाओं के अन्तर्गत सम्मिलित कर लिए गए।

८. केन्द्रीय सरकार ने दियासलाइयां बनाने की लकड़ी के उत्पादन के लिए एक योजना बनाई थी जिसके अन्तर्गत बड़ी संख्या में पेड़ लगाए गए। योजना के अन्तिम वर्षों में राज्यों में प्रतिवर्ष ३,००० एकड़ भूमि से अधिक में ऐसे वृक्ष लगाए गए। केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाई गई मुख्य योजनाओं में वन अनुसंधान, वन शिक्षा तथा वन्य जन्तु सुरक्षा महत्वपूर्ण थीं। वन अनुसंधान की दिशा में जो प्रयत्न किए गए हैं, उनमें भारत में मलाया के गन्ने की खेती, हरे बांस को अधिक टिकाऊ बनाने के उपचार तथा समुद्री कीड़ों-मकोड़ों से लकड़ी की सुरक्षा से सम्बन्धित अनुसंधान महत्वपूर्ण हैं। वन उपयोग तथा वन विज्ञान संबंधी महत्वपूर्ण एवं प्रामाणिक ग्रंथों को नया रूप देने तथा उनको संशोधित करने का काम आरम्भ किया गया। वन शिक्षा की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए देहरादून में अतिरिक्त स्थान रखे गए और अन्य उपकरण जुटाए गए। १९५२ में भारतीय वन्य जीव-जन्तु बोर्ड बनाया गया जिसने जीव-जन्तुओं की सुरक्षा के लिए बड़ा उपयोगी कार्य किया है। दिल्ली में "प्राणि-विज्ञान" सम्बन्धी तथा वनस्पति विज्ञान सम्बन्धी नया पार्क स्थापित करने का बुनयादी काम किया जा चुका है।

दूसरी योजना में वन संबंधी कार्यक्रम

९. प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान में आरम्भ किए गए कार्यों को आवश्यकतानुसार चालू रखने के अतिरिक्त दूसरी योजना के कार्यक्रम में निम्नलिखित उपाय और सुझाव भी शामिल हैं:—

(१) वनरोपण और कम उपजाऊ वन प्रदेशों में सुधार करना तथा वन विस्तार करना;

(२) व्यापारिक और औद्योगिक महत्व वाले पेड़ लगाना;

(३) निकट भविष्य के लिए इमारती लकड़ी तथा अन्य वन पदार्थों की उपज बढ़ाने के लिए उन्नत ढंग अपनाना;

(४) वन्य जीव-जन्तुओं की सुरक्षा करना;

(५) वनों में काम करने वाले कर्मचारियों और श्रमिकों की दशा में सुधार करना;

(६) वन अनुसंधान पर अधिक जोर देना;

(७) अधिक से अधिक टेकनीकल कर्मचारियों का प्रबन्ध करना; तथा

(८) देश भर की वन विकास योजनाओं को कार्यरूप देने में केन्द्रीय सरकार के नेतृत्व और समन्वय की व्यवस्था करना ।

विभिन्न राज्यों ने समान और नियमित आधार पर अपनी स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वन विकास योजनाएं बनाईं । दूसरी पंचवर्षीय योजना में वन विकास के लिए लगभग २७ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है । केन्द्रीय सरकार अनुसंधान, शिक्षा, प्रदर्शन तथा समन्वय का विशेष ध्यान रखेगी और राज्य सरकारें वन विकास सम्बन्धी योजनाओं का संचालन करेंगी ।

१०. इस बात का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि निम्नतर श्रेणी के वनों का बहुत बड़ा भाग राज्य नियंत्रण के अन्तर्गत आ चुका है । प्रायः इन वनभूमियों की सीमा न तो भूमि पर ही निर्धारित की गई है और न नक्शों पर भी इनका कोई चिन्ह है । यदि वनों को भविष्य में अविवेकी ढंग से काटने और उजड़ने से बचाना है तो जितनी जल्दी हो सके वन अधिनियम के अन्तर्गत इन विस्तृत वन क्षेत्रों की सीमा नियत करके उनकी घोषणा कर दी जाए । अतः यह बात ध्यान में रखते हुए कि वनों का प्रबन्ध अधिक अच्छा हो जाए, राज्य सरकारों को इन क्षेत्रों की पैमाइश करानी चाहिए । साथ ही, इन निम्न-स्तर के उपेक्षित वनों का यथाशीघ्र पुनरुत्थान करना आवश्यक है । वृक्षों तथा अन्य वनस्पति का पुनःरोपण शायद अत्यन्त कठिन व महंगा पड़े । निकट भविष्य में ऐसे उत्पादक वनों से कोई विशेष लाभ होने की आशा नहीं है, परन्तु फिर भी उनके संरक्षक गुणों का लाभ उठाने के लिए यथासम्भव पुनःरोपण पर अविलम्ब ध्यान देना आवश्यक है । विचार है कि लगभग ३,८०,००० एकड़ भूमि पर इस ढंग से काम किया जाए । इससे देश में वनभूमि की वृद्धि होगी ।

११. अन्य कामों के उपयोग में आने वाली भूमि को (विशेष रूप से सघन आबादी वाले प्रदेशों में) विकास व विस्तार के लिए प्राप्त करना शायद अत्यधिक कठिन हो, फिर भी कुछ हद तक वनों के विस्तार के उपायों के इस्तेमाल को प्रोत्साहन देना आवश्यक है । सड़कों के किनारों, और नहरों के तटों पर संरक्षक मेखलाओं के रूप में तथा गांव की बेकार पड़ी भूमि पर वृक्ष लगाए जाएंगे । आशा की जाती है कि इस प्रकार के वृक्ष अन्त में उत्पादक सिद्ध होंगे ।

१२. वनों में कार्यान्वित की जाने वाली वर्तमान कार्यकारी योजनाओं के अन्तर्गत विभिन्न वन विभागों द्वारा इमारती लकड़ी सीमित मात्रा में ही उगाई गई है और लकड़ी उगाने के लिए उपयुक्त सभी स्थानों पर काम नहीं किया गया है । विशेष रूप से जब हमें यह ज्ञात है कि इमारती लकड़ी व अन्य वन पदार्थों के लिए देश की मांग वर्तमान उत्पादन से बढ़ चुकी है और साथ ही अनुमान है कि उत्तरोत्तर बढ़ती जाएगी, ऐसे वृक्ष लगाकर वन प्रदेशों को विस्तृत करना लाभप्रद सिद्ध हो सकता है । लगभग ५०,००० एकड़ वन भूमि पर व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण सागवान जैसी लकड़ी के वृक्ष लगाए जाएंगे । दियासलाईयां बनाने के काम आने वाली लकड़ी के वृक्ष पहली पंचवर्षीय योजना की तुलना में अधिक मात्रा में बोए जाएंगे । अगले पांच वर्षों में ५०,००० एकड़ के लगभग भूमि में इस किस्म के पेड़ लगाने का विचार है । इसी तेजी से और पांच साल की अवधि में प्रगति होते रहने पर शायद इस दिशा में हम आत्म निर्भर बन सकते हैं । इसके अतिरिक्त १३,००० एकड़ भूमि में बबूल तथा गोंद उत्पन्न करने वाले पेड़

लगाए जाएंगे, जो कि कागज, चमड़ा रंगने के तथा कृत्रिम रेशम के उद्योगों के लिए मूल्यवान हैं। कागज बनाने में काम आने वाले एक विशेष किस्म के घास के बगान लगाने का भी विचार है।

१३. वन सुधार के लिए उपयुक्त योजनाएं दीर्घकालिक प्रकृति की हैं। अल्पकालिक उपायों में जो कि निकट भविष्य में उत्पादन की उन्नति में सहायता देंगे, इमारती लकड़ी की निकासी के नए ढंग, वनों में यातायात का विकास, चिप बोर्ड, प्लाई वुड आदि के अलावा लकड़ी को सुरक्षित करने व सुखाने की प्रक्रिया का और अधिक प्रयोग भी सम्मिलित होगा। योजना में लकड़ी के लट्ठे बनाने के नए ढंग अपनाने की, विशेषकर वृक्ष काटने व उनकी निकासी के लिए नवीनतम उपकरणों की व्यवस्था भी है। पर्वतीय प्रदेशों में लकड़ी की निकासी के लिए तार से बने हुए रस्सों के द्वारा तथा इसी प्रकार के अन्य सस्ते उपायों से दुर्गम स्थानों के वन पदार्थों की पहले से अधिक प्राप्ति हो सकेगी। पंजाब, हिमाचल प्रदेश, जम्मू व कश्मीर, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा बिहार के कुछ भागों में, मद्रास तथा मैसूर के पहाड़ी वनों में इस प्रकार के उपायों द्वारा विशेष लाभ हो सकता है। नए ढंग से लट्ठे बनाने के साथ-साथ वनों में यातायात पर भी ध्यान देना आवश्यक है। योजना के अन्तर्गत वनों में ७,४०० मील नई सड़कों का निर्माण करने या उनकी मरम्मत की व्यवस्था की गई है। व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण इमारती लकड़ी के बढ़े हुए उत्पादन के साथ-साथ वनों में प्राप्त होने वाली सब किस्म की लकड़ियों का भी पूरी तरह इस्तेमाल होना चाहिए। निस्संदेह भारतीय वनों में निम्नतर श्रेणी की इमारती लकड़ी बहुलता से प्राप्त होती है, जो कि उचित प्रकार से सुखाने और सुरक्षित करने के उपचार के बाद व्यापारिक लकड़ी की मांग को पूरा कर सकती है। इसलिए योजना में केन्द्रीय सरकार द्वारा इमारती लकड़ी के सुखाने या उसे अधिक टिकाऊ बनाने तथा अन्य उपचार करने के तीन या चार कारखाने स्थापित करने की व्यवस्था है और राज्यों में भी इसी प्रकार के छोटे पैमाने पर १० कारखाने खोले जाएंगे, ताकि निम्नतर श्रेणी की इमारती लकड़ी को अधिक उत्तम बनाया जा सके और उसका पूरा उपयोग किया जा सके।

१४. अभी तक वन प्रदेशों के विकास के लिए बनाई गई योजनाओं को कार्यरूप देने में और उनके विकास में सबसे बड़ी कठिनाई यह पेश आती है कि देश में इनसे सम्बन्धित आंकड़ों की जानकारी का अभाव है। वन पदार्थों, विशेषकर इमारती लकड़ी की उपज तथा इसकी वर्तमान तथा भविष्य में होने वाली खपत के रुख का अध्ययन (खाद्य व कृषि संस्थाओं के सहयोग से) करना होगा; इससे भविष्य में उपज की योजना बनाने में सहायता मिलेगी।

१५. भारतीय वन छोटे-मोटे वन पदार्थों से परिपूर्ण हैं। इनमें बांस, बेंत, राल तथा विशेष किस्म के तेल पैदा करने वाले पेड़, जड़ी-बूटियां, घास आदि बहुलता से मिलते हैं। बांस तथा लाख जैसी प्रसिद्ध वस्तुओं की खेती और उनकी खपत सन्तोषजनक है। इसलिए समस्त छोटे-मोटे वन पदार्थों के नियमित तथा पर्याप्त मात्रा में उत्पादन तथा उनके गुणों की सुरक्षा को ध्यान म रखते हुए उन्हें पैदा करने, उनका संग्रह करने तथा बिक्री के ढंगों में सुधार करना सम्भव है। जड़ी-बूटियों की गहन कृषि को सुव्यवस्थित रूप से (बागानों में) यथाशीघ्र बढ़ावा देना चाहिए। दूसरी पंचवर्षीय योजना में २,००० एकड़ भूमि में ऐसी खेती करने का आयोजन है। हरे-भरे मदानों तथा जंगली चरागाहों पर ध्यान दिया जाएगा, और आशा की जाती है कि इस दौरान में ५ लाख एकड़ भूमि पर काम होगा।

१६. वन प्रबन्ध का एक आवश्यक अंग वन्य जीव-जन्तुओं का संरक्षण है, विशेषकर जब कि भारत के वन्य जीव-जन्तु देश के सुरक्षित वनों में अन्तिम शरण ले रहे हैं। उनकी नस्लों को समाप्त होने से बचाना अनिवार्य है। शेर, गैंडा आदि महत्वपूर्ण जानवरों का नाश होता जा रहा है। इनकी रक्षा के लिए दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत, दिल्ली में एक आधुनिक चिड़ियाघर के अलावा १८ राष्ट्रीय पार्क तथा पशु विहार स्थापित करने की व्यवस्था है।

१७. वनों या उनके आस-पास रहने वाले तथा उनमें काम करने वाले कर्मचारियों को असाधारण रूप से कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अतः वन कर्मचारियों तथा श्रमिकों के काम करने की दशा को सुधारने के लिए विशेष ध्यान देना आवश्यक है। इसलिए राज्यों के वन विभाग उनके निवास स्थान, पीने के पानी, दवा-दारू, स्कूलों आदि की सुविधाओं की व्यवस्था पर विशेष ध्यान देंगे। वनों में बढ़े हुए काम के लिए (बम्बई में प्राप्त अनुभव के आधार पर) आदिम जातियों के वन कर्मचारियों तथा वन मजदूरों की सहकारी संस्थाएं अधिकाधिक स्थापित की जा सकती हैं, ताकि आज जो लाभ ठेकेदार उठा रहे हैं, वे वन श्रमिकों को मिलें। किन्तु फिर भी, इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ये सहकारी संस्थाएं ऐसे व्यक्तियों के हाथों न पड़ जाएं जो कि आदिम जाति के श्रमिकों का शोषण करने लगें। इसलिए, सहकारी संस्थाओं के कार्य संचालन में वन विभागों को अधिक सक्रिय व सहानुभूतिपूर्ण ढंग से मार्गदर्शन करना चाहिए।

१८. प्रस्तावित पैमाने पर विकास कार्य करने के लिए आवश्यक है कि वन अनुसंधान पर अत्यधिक जोर दिया जाए। पहली पंचवर्षीय योजना में स्थापित किए गए देहरादून के वन अनुसन्धान संस्थान का दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत और अधिक विस्तार किया जाएगा और इसमें लट्ठे बनाने के तरीकों, लकड़ी की इंजीनियरिंग के अध्ययन के अलावा, पौधों का परिचय, बीज सम्बन्धी अनुसन्धान तथा उद्योगों में लकड़ी के इस्तेमाल सम्बन्धी समस्याओं के बारे में भी पढ़ाया जाएगा। दक्षिण भारत में एक प्रादेशिक अनुसन्धान संस्था स्थापित की जाएगी। कोयमत्तूर में "सदर्न फारेस्ट रेंजर कालेज" के सहयोग से जीव व वन सम्बन्धी समस्याओं की खोज करने के लिए इकाइयां स्थापित की जाएंगी और बंगलौर में मैसूर सरकार की अनुसंधान शाला को केन्द्र के रूप में इस्तेमाल करते हुए वन पदार्थों के अनुसंधान के लिए ३ इकाइयां खोली जाएंगी। राज्य भी प्रादेशिक व स्थानीय, विशेषकर वन सम्बन्धी विषयों की समस्याओं के लिए अनुसन्धान योजनाएं आरंभ करेंगे।

१९. दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान में वन कर्मचारियों की आवश्यकता का अनुमान लगाया जा चुका है। देहरादून वन कालेज से निकलने वाले लगभग १५० वन अफसरों के स्थान पर २५० की आवश्यकता हो रही है। इसलिए यह प्रस्तावित किया गया है कि ४० से बढ़ाकर ८० व्यक्ति दाखिल किए जाएं। देहरादून तथा कोयमत्तूर के कालेजों से निकलने वाले ६०० वन रेंजरों के स्थान पर भविष्य में ७०० चाहिएं। यह प्रस्तावित किया गया है कि कोयमत्तूर में ४० व्यक्ति और अधिक दाखिल किए जाएं। अनुमान है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत प्रस्तावित कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए लगभग २,००० वन कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ेगी, और उनको प्रशिक्षित करने के लिए विभिन्न प्रदेशों में या स्थानीय प्रबन्ध किए जा रहे हैं। अन्य स्थानों से लोगों को भरती करके अनुसंधान करने वाले व्यक्तियों की (वनों के लिए प्रशिक्षितों के अलावा) मांग पूरी की जाएगी।

२०. समस्त देश के वन साधनों के सुयोजित विकास के लिए केन्द्र तथा राज्यों का समन्वय वांछनीय है। भारत के वनों से संबंधित विभिन्न समस्याओं को हल करने के लिए वन विभाग का केन्द्रीय बोर्ड स्वयं जुटा हुआ है और प्रत्येक विषय में पथ-प्रदर्शन करता है। एक योग्य संस्था के संरक्षण में विकास कार्य, कार्यकारी योजना की तैयारी और वन प्रबन्ध का उचित रूप में समन्वित होना आवश्यक है। इसलिए यह आवश्यक है कि सहायता तथा टेकनीकल परामर्श देने के लिए केन्द्र में सुसंगठित संस्था स्थापित की जाए। वन सम्बन्धी आंकड़ों, मण्डी के अध्ययन तथा आंकड़ों सम्बन्धी सूचना, इमारती लकड़ी तथा अन्य वन पदार्थों के वर्गीकरण के काम के लिए इस संस्था को जिम्मेदार होना पड़ेगा ताकि वन विभागों के समस्त काम सुचारु रूप से हो सकें। इसलिए यह प्रस्तावित किया गया है कि वन विकास तथा वन प्रबन्ध में समन्वय लाने के लिए एक वन आयोग बनना चाहिए।

२. भूमि संरक्षण

२१. पानी व वायु के कारण जो भूमि का क्षरण होता है, उससे उपजाऊ भूमि के काफी विस्तृत भाग बेकार हो चुके हैं और यह प्रक्रिया निरन्तर रूप से जारी है। भूमि क्षरण के कारण जो क्षेत्र नष्ट हो चुके हैं या हो रहे हैं, उनमें से बहुत कम क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया गया है। वास्तव म कृषि योग्य भूमि के बहुत बड़े भाग में किसी न किसी भांति के क्षरण होते रहते हैं। ५ करोड़ एकड़ भूमि में फैले हुए मरुस्थल में भूमि क्षरण सतत रूप से जारी है। और इसी से आसपास के क्षेत्रों में इसके बढ़ने का खतरा है। यह अनुमान किया गया है कि पर्वतीय प्रदेशों, चरागाहों, बेकार पड़ी भूमि आदि का पांचवां भाग क्षरण के कारण प्रायः नष्ट हो चुका है। अत्यधिक वन काटने से, चरागाहों का हद से अधिक उपयोग करने से तथा कृषि में अनुचित तरीकों का इस्तेमाल करने से ही मुख्यतया भूमि का क्षरण हुआ है।

२२. पहली पंचवर्षीय योजना के दौरान में भूमि क्षरण से छुटकारा पाने का काम सुव्यवस्थित ढंग से आरम्भ किया गया। २५० वन तथा कृषि अधिकारियों को भूमि सुरक्षा के उपायों को उपयोग में लाने के लिए प्रशिक्षित किया गया। १९५२ में मरुभूमि में वन उगाने के विषय में जोधपुर में एक अनुसंधानशाला खोली गई और प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्षों में ५ प्रादेशिक अनुसन्धान व प्रशिक्षण केन्द्र भी स्थापित किए गए। बम्बई, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मद्रास, पंजाब, सौराष्ट्र, तिरुवांकुर-कोचीन, अजमेर, कच्छ और मणिपुर में ११ मार्गदर्शक (पाइलेट प्रोजेक्ट) योजना कार्यों को चालू किया गया। मद्रास और तिरुवांकुर-कोचीन की ये योजनाएं विकास योजनाओं में परिवर्तित कर दी गई हैं। विशेषज्ञों के तत्वावधान में इन योजना कार्यों तथा कैलेघई और दामोदर घाटी में, पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग में, मच्छ-कुण्ड प्रदेश, उत्तर प्रदेश बुंदेल खण्ड क्षेत्र और यमुना की घाटियों तथा मद्रास के नीलगिरि प्रदेश में भूमि क्षरण की रोकथाम के उपायों का प्रदर्शन किया जा चुका है। अराकू घाटी में एक योजना के अन्तर्गत उत्तलन (टैरेसिंग) तथा समोच्च (कन्टूर) बांध बनाने का तरीका प्रदर्शित करके आदिम जातियों की आर्थिक स्थिति को सुधारने का काम किया जा रहा है। प्रायः प्रदर्शन कार्यक्रमों को आयोजित करने में तथा उन्हें कार्यरूप देने में स्थानीय किसान भाग लेते हैं। ऊपरी टीस्टा नदी की घाटी का निरीक्षण किया गया और रोकथाम के उचित प्रस्ताव पेश किए गए। इस सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि समस्त नदियों के पर्वतीय क्षेत्रों में भूमि संरक्षण के लिए उपाय

करने की सख्त जरूरत है। भूमि संरक्षण के लिए भाखड़ा के जल स्रवण क्षेत्र में १९५१-५२ से वनरोपण में प्रगति हो रही है और ४,३८२ एकड़ भूमि के लिए खन्दकें तथा रोकथाम के लिए बांध बनाए गए हैं। ५,१२४ एकड़ भूमि में वृक्ष लगाए जा रहे हैं। पहली पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत राज्यों में समोच्च (कन्टूर) बांध बनाना, समोच्च खन्दकें बनाना, पानी की निकासी के स्थान को बन्द करना, चबूतरे बनाना, घाटियों और नदियों के बहने के स्थान को नियमित करना आदि भूमि संरक्षण के उपायों को ७,००,००० एकड़ भूमि में कार्यरूप दिया गया जिसमें से दो-तिहाई से अधिक भाग केवल बम्बई प्रदेश में था।

२३. प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान में राजस्थान की मरुभूमि को सीमित रखने की समस्याओं का विस्तृत रूप से अध्ययन किया जा चुका है। जोधपुर में मरुभूमि वनरोपण तथा अनुसंधानशाला स्थापित की गई है। पश्चिमी राजस्थान में लगभग १५० मील लम्बी सड़कों के किनारों पर पेड़ बोए जा चुके हैं। चरागाहों को सुधारने तथा प्रयोग के लिए वनस्पति उगाने के निमित्त १०० वर्गमील भूमि निश्चत कर दी गई है।

दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए कार्यक्रम

२४. जिन क्षेत्रों में भूमि क्षरण सबसे अधिक हुआ है, वहां लगभग ३०,००,००० एकड़ भूमि को दुबारा खेती या अन्य वनस्पति उगाने के योग्य बनाने की योजना है। इन क्षेत्रों के लिए जो कार्यक्रम बनाए गए हैं, उनके द्वारा भूमि क्षरण की सब प्रकार की समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न किया जाएगा—उदाहरणार्थ, कृषि योग्य भूमि की, हवा के जोर से बढ़ने वाले मरुभूमि के तथा समुद्री किनारों के बालू के टीलों की, नदी घाटी योजनाओं की, पर्वतीय प्रदेशों की, नदी तटवर्ती भूमि की बेकार पड़ी भूमि की, तथा समुद्र से क्षरित भूमि की। योजना में भूमि के संरक्षण को कार्यरूप देने के लिए २० करोड़ रुपए की रकम रखी गई है।

२५. कृषि भूमि—वर्षा के पानी के तेज प्रवाह तथा छोटी धाराओं से ढलानों तथा ऊबड़-खाबड़ भूमि में बने हुए खेतों को बहुत हानि पहुंची है। बम्बई के उन प्रदेशों का सर्वेक्षण किया गया जिनमें खाद्य वस्तुओं की कमी प्रायः रहती है। इससे ज्ञात हुआ कि दो-तिहाई से अधिक कृषि योग्य भूमि बुरी तरह से क्षरित हो चुकी है और लगभग एक चौथाई भूमि कृषि उत्पादन के योग्य नहीं रही। मद्रास, मैसूर, हैदराबाद, आन्ध्र, उड़ीसा, मध्य भारत, भोपाल और सौराष्ट्र के कुछ भागों की भी ऐसी ही स्थिति है। यदि भूमि संरक्षण के उपायों को यथा समोच्च कृषि करना, लम्बी क्यारियों में बोना, बांध बनाना, चबूतरे बनाना, उत्तलन, पानी को बाहर निकलने से रोकना आदि, उचित रूप से कार्यरूप दिया जाए तो भूमि को नष्ट होने से रोका जा सकता है और उपज को बढ़ाया जा सकता है। दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान म २० लाख एकड़ कृषि योग्य भूमि पर ऐसे उपाय किए जाएंगे।

२६. मरुभूमि व समुद्री तट में बालू के टीले—पशुओं और मनुष्यों की आबादी बढ़ने के कारण कच्छ और राजस्थान की मरुभूमि के कुछ भागों में वनस्पतियां समाप्त होती जा रही हैं और इसी कारण रेगिस्तान अधिक होता जा रहा है। उत्तर प्रदेश, पंजाब और राजस्थान के कुछ भागों में उपजाऊपन पर इसका प्रभाव पड़ रहा है। इसके अतिरिक्त, वहां पर स्थानीय बालू के टीले हैं जिनकी रोकथाम करने की अत्यन्त आवश्यकता है। ३,५०,००० एकड़ भूमि में हवा के जोर से जगह बदलने वाले बालू के टीलों को रोकने के लिए कुछ उपाय करने आवश्यक हैं, उदाहरणार्थ, वनस्पति विस्तार केन्द्र स्थापित करना, पशु पालन

ऐसे पेड़ लगाना जो शुष्क प्रदेशों में उगाए जा सकें, बाड़े लगाना, चरागाहों में स्थानों को अदल-बदल करके पशुओं को चराना, वनरोपण, गांवों में ईंधन तथा चारे के लिए वृक्ष आदि लगाना।

२७. **नदी घाटियां**—स्थानपरिवर्ती (स्थान बदल-बदलकर) खेती करने से छोटा नागपुर, उड़ीसा, असम तथा नीलगिरि के वनों को हानि पहुंची है जो कि महत्वपूर्ण नदी घाटी योजनाओं के लिए जल स्रवण क्षेत्र हैं। नदियों तथा बांधों में मिट्टी को जमने से रोकने के लिए उनके पहाड़ी हिस्सों के आसपास के स्थानों की भूमि का संरक्षण आवश्यक है। नए पेड़ लगाना तथा जंगलों और बेकार भूमि को आग से बचाना, चरागाहों का प्रबन्ध करना, समोच्च बांध बांधना, समोच्च कृषि करना, लम्बी क्यारियों में बोना, तीव्र धारा के रूप में पानी को बाहर निलकने से रोकना, स्रोतों के किनारों के कटाव की रोकथाम करना, बांध बनाकर वर्षा के पानी को मैदानों में जाने से रोकना, उत्तलन करना आदि उपायों द्वारा दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ३,३०,००० एकड़ भूमि को नष्ट होने से बचाया जाएगा।

२८. **पर्वतीय प्रदेश**—पंजाब से असम तक, नीलगिरि में, पूर्वी तथा पश्चिमी घाटों तथा अन्य पहाड़ी इलाकों की तलहटियों में घनी आबादी तथा पशुओं, विशेषकर भेड़-बकरियों के अत्यधिक चरने के कारण वन धीरे-धीरे नष्ट होते जा रहे हैं। पंजाब, हिमाचल प्रदेश, तथा पेप्सू की शैवालिक पहाड़ियों के गांवों की पंचायती भूमि के वनों पर बहुत समय से कुप्रभाव पड़ रहा है। इन उजाड़ और वियाबान पहाड़ियों से बरसाती पानी के रेलों के साथ-साथ बालू बह-बहकर आता है और मैदानों की हजारों एकड़ उपजाऊ भूमि का सत्यानाश कर देता है। स्थान बदल-बदलकर खेती करने के कारण असम की पहाड़ियों की उपजाऊ भूमि का वृहद भाग उजड़ गया है। नीलगिरि में ढलानों के वनों को काट-काटकर आलू की खेती के लिए स्थान बनाया गया। इससे वन बहुत बुरी तरह उजड़ गए हैं। तिरुवांकुर-कोचीन के कुछ वनों को टैपिओका बोने के लिए काटा गया है। इन कारणों से भूमि क्षरण आरम्भ हो चुका है और यह आशंका है कि बांधों, जल प्रणालियों तथा नदियों के तलों पर भी इसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहेगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान में पहाड़ी प्रदेशों की १,७०,००० एकड़ भूमि पर संरक्षण उपाय किए जाएंगे।

२९. **खड्डों और कन्दराओं वाली भूमि**—यमुना, चम्बल, साबरमती, माहे नदियों तथा इनकी शाखाओं के किनारों की भूमि धीरे-धीरे कटती जा रही है। यह आवश्यक है कि ऐसी भूमि को वनरोपण, रोकने वाले बांध, उत्तलन तथा भूमि संरक्षण के अन्य उपायों से पुनः खेती योग्य बनाना चाहिए। वर्षा का पानी रोकने के लिए बड़े पैमानों पर बांध बनाना आवश्यक है। खड्डों एवं कन्दराओं वाली १,५०,००० एकड़ भूमि के संरक्षण के उपाय किए जाएंगे।

३०. **बंजर भूमि**—इस समय बंजर भूमि के बहुत बड़े भाग में दुरुपयोग के कारण भूमि क्षरण बहुत तेजी से हो रहा है। यह देखा गया है कि इस प्रकार की भूमि में प्रायः वृक्षों की अनावृत जड़ें और झाड़-झंखाड़ पाए जाते हैं। ऐसी भूमि के कुछ भागों पर पेड़ लगाने चाहिएं ताकि उनसे चारा और ईंधन मिल सके और शेष भाग को चरागाहों के साथ सुधारना चाहिए। योजना की अवधि में लगभग १,००,००० एकड़ बंजर भूमि पर भूमि संरक्षण के उपाय किए जाएंगे।

३१. **समुद्र क्षरित भूमि**—उस योजना का उल्लेख भी आवश्यक है जो कि तिरुवांकुर-कोचीन में समुद्री तट के क्षेत्रों की भूमि के संरक्षण में सहायता देगी, यद्यपि यह भूमि संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत नहीं आती। इस राज्य में समुद्री तट के क्षेत्र का कुछ भाग समय-समय पर आने वाली समुद्री बाढ़ों से ग्रसित है, जिसके कारण यहां भूमि क्षरण हो रहा है। अतः प्रस्तावित किया गया है कि बाढ़ों द्वारा ग्रसित प्रदेश में भूमि संरक्षण के उपाय किए जाने चाहिएं। दूसरी योजना के अन्तर्गत लगभग ४५ मील तक समुद्र तट पर काम किया जाएगा। समुद्र के समानान्तर एक समुद्री दीवार बनाने का काम, जिसमें ६६० फुटों के अन्तर पर एक २०० फुट लम्बा जलतोड़ बनेगा, आरम्भ किया जा चुका है।

३२. **भूमि संरक्षण बोर्ड**—पहली पंचवर्षीय योजना की सिफारिश के अनुसार १९५३ में राष्ट्रीय भूमि संरक्षण कार्यक्रम को संगठित करने के लिए एक केन्द्रीय भूमि संरक्षण बोर्ड स्थापित किया गया। लगभग सभी राज्यों में राज्य स्तर पर भूमि संरक्षण बोर्ड स्थापित किए गए। केन्द्रीय भूमि संरक्षण बोर्ड का मुख्य कार्य अनुसंधान व टेकनीकल प्रशिक्षण का प्रबन्ध करना, राज्य में सहकारिता का संगठन करना तथा नदी घाटियों और राज्यों में आरम्भ की गई योजनाओं के लिए टेकनीकल तथा वित्तीय सहायता देना है।

३३. **भूमि संरक्षण कानून**—पहली पंचवर्षीय योजना में इस बात की सिफारिश की गई थी कि भूमि संरक्षण के लिए राज्यों के द्वारा उचित कानून बनाए जाने चाहिएं। ऐसे कानूनों का मुख्य ध्येय (क) विशेष सुधार करने तथा राज्य सरकारों और कृषकों के बीच उसकी लागत का हिस्सा बांटने का अधिकार, (ख) भूमि संरक्षण के कार्य के लिए कृषकों की सहकारी समितियों की स्थापना, तथा (ग) "संरक्षित" निर्धारित किए जा सकने वाले क्षेत्रों के उपयोग पर प्रतिबन्ध लगाने के अधिकार की व्यवस्था करना है। उत्तर प्रदेश, बम्बई, तथा सौराष्ट्र में पहले से ही ऐसे कानून बन चुके हैं। कुछ अन्य राज्यों में कानून बनाने के विषय पर विचार किया जा रहा है। केन्द्रीय भूमि संरक्षण बोर्ड ने विभिन्न प्रदेशों में पहले से बने कानूनों तथा विचाराधीन कानूनों का अध्ययन किया और राज्यों के उपयोग के लिए एक आदर्श विधेयक बनाकर भेजा। इस विधेयक में भूमि सुधार योजनाओं को बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने की व्यवस्था है। इसमें भू सम्पत्ति का विकास और उसके संरक्षण व भूमि क्षरण को रोकने, भूमि को वर्षा या बाढ़ से ग्रसित होने से बचाने, बंजर भूमि को पुनः खेती योग्य बनाने, किसानों को हरजाने की कीमत देने, सरकारी पैसे की वसूली करने आदि की व्यवस्था है।

३४. **भूमि संरक्षण सम्बन्धी अनुसंधान तथा सर्वेक्षण**—भूमि संरक्षण का विकास कार्य जलवायु तथा मिट्टी की विभिन्न दशाओं की खोज पर आधारित होता है। भारत सरकार ने निम्नलिखित स्थानों पर भूमि संरक्षण सम्बन्धी ६ अनुसंधान प्रशिक्षण केन्द्र खोले हैं:—

(१) देहरादून केन्द्र—चण्डीगढ़ में बरसाती नालों सम्बन्धी एक प्रशिक्षण उपकेन्द्र उसके साथ होगा और वह शैवालिक की पहाड़ियों तथा तलहटी के क्षेत्रों में भूमि संरक्षण तथा वनरोपण की समस्याओं के अध्ययन के लिए होगा।

(२) कोटा केन्द्र—आगरा में स्थित उपकेन्द्र उसके साथ होगा और वह यमुना और चम्बल के खड्डों और कन्दराओं में भूमि संरक्षण और भूमि को पुनः खेती योग्य बनाने के लिए होगा।

(३) वसाड केन्द्र (उत्तरी गुजरात)—नदियों के जल स्रवण क्षेत्रों के निचले भागों में गहरे खड्डों वाली भूमि में भूमि संरक्षण के उपायों के लिए होगा।

(४) वेलारी केन्द्र—काली मिट्टी वाले क्षेत्रों में भूमि संरक्षण सम्बन्धी समस्याओं के लिए होगा।

(५) ऊटकमण्ड केन्द्र—नीलगिरि तथा अन्य पर्वतीय प्रदेशों में आलू की खेती के वास्ते भूमि को सुरक्षित रखने के निमित्त लम्बी समतल जमीनें तैयार करने के लिए होगा।

(६) जोधपुर केन्द्र—पशु तथा भेड़-बकरियों के पालन-पोषण के लिए राजस्थान की चरागाहों के सुधार तथा राजस्थान की मरुभूमि में वनरोपण के लिए होगा।

अनुसंधानशालाएं कुछ राज्यों ने भी खोली हैं—बम्बई राज्य ने शोलापुर में, हैदराबाद ने साहिबनगर में, उत्तर प्रदेश ने रहमान खेड़ा में, तथा उड़ीसा ने राजगंगपुर में।

३५. ये अनुसन्धानशालाएं ऐसी प्रभावपूर्ण खोजें कर रही हैं जो कि किसानों द्वारा अपनाए जाने योग्य हों और साथ ही आवश्यक टेकनीकल स्तर की भी हों। जोधपुर स्थित मरुभूमि वनरोपण अनुसंधानशाला में स्वदेशी किस्मों के वनस्पति विज्ञान, शुष्क स्थान पर पैदा होने वाले विदेशी वृक्षों की किस्मों को उगाने के प्रयत्न तथा आर्द्र जलवायु, वर्षा, वायु गति तथा अन्य प्रासंगिक विषयों की खोज करने का काम आरम्भ किया गया है। उचित किस्मों के बीजों को बांटने के लिए बीज भण्डार की भी व्यवस्था है जो मरुभूमि के विस्तार को रोकने के तरीकों, जैसे तहसील के दफ्तरों तथा थानों के इर्द-गिर्द वनस्पतियां लगाना, मुख्य सड़कों तथा वायु वेग के सम्मुख आड़ी जाने वाली रेल की पटरियों के साथ-साथ संरक्षण मेखलाओं के रूप में वृक्ष लगाना तथा विभिन्न किस्म के रेतीले मैदानों पर वृक्षों को लगाने के ढंग का भी प्रदर्शन करता है। दूसरी योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय भूमि संरक्षण बोर्ड द्वारा मरुभूमि को फैलने से रोकने के लिए घास के मैदान और वन लगाने के निमित्त इस अनुसन्धानशाला में कार्रवाइयां विस्तृत की जाएंगी।

३६. भूमि संरक्षण के उपायों की योजना बनाने के लिए प्रादेशिक आधार पर निरीक्षण आवश्यक है। इससे मिट्टी के वर्तमान उपयोग, उसके गुण, क्षरण व जलवायु सम्बन्धी स्थिति आदि की आवश्यक जानकारी प्राप्त होगी। इस सर्वेक्षण के आधार पर उचित कार्यक्रम बनाया जा सकता है। विशेष समस्याओं वाले क्षेत्रों में एक करोड़ एकड़ भूमि के सर्वेक्षण व वर्गीकरण तथा उसके मानचित्र बनाने के लिए दूसरी पंचवर्षीय योजना में ६५ लाख रुपए की व्यवस्था की गई है।

३७. द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान में कार्यान्वित किए जाने वाले कार्यक्रमों में विभिन्न किस्मों के ४,००० विशेषज्ञों की आवश्यकता का अनुमान है। इस समय प्रशिक्षित व्यक्तियों की कमी को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने देहरादून, कोटा, वसाड, वेलारी और ऊटकमण्ड की अनुसंधानशालाओं में प्रशिक्षण केन्द्र खोल दिए हैं। दामोदर घाटी निगम की हजारी बाग स्थित भूमि संरक्षण अनुसंधानशाला में भी प्रशिक्षण सम्बन्धी सुविधाएं उपलब्ध हैं। इन सुविधाओं के अतिरिक्त, उत्तर प्रदेश, बम्बई तथा सौराष्ट्र की राज्य सरकारों ने क्रमशः रहमान खेड़ा, शोलापुर तथा मोरवी में स्वयं अपने प्रशिक्षण केन्द्र खोले हैं। किसानों के लिए भूमि संरक्षण सम्बन्धी उपायों का प्रदर्शन करने के लिए देश के विभिन्न भागों में नमूने के तौर पर अनेक प्रदर्शन केन्द्र खोले जाएंगे।

३८. भूमि संरक्षण के टेकनीकल पहलू के अनुसंधान के साथ ही साथ यह भी आवश्यक है कि इस कार्य में उठने वाली मानवीय समस्याओं व तरीकों और उन संस्थाओं के विकास पर ध्यान दिया जाए जिनके द्वारा गांव वालों को भूमि संरक्षण के उपायों का ज्ञान कराया जाना है और उन्हें इनको कार्यान्वित करने में सहायता दी जा सकती है। अदल-बदल कर खेती करने व पशुओं को चराने पर प्रतिबन्ध लगाने जैसे भूमि क्षरण की रोकथाम के कार्यक्रमों को कार्यरूप देने से देहातों की अर्थ-व्यवस्था तथा रहन-सहन के ढंग पर काफी बड़ा प्रभाव पड़ेगा। अतः लोगों को नई स्थिति के अनुसार अपने-आपको बदलना पड़ेगा। इसलिए भूमि क्षरण की रोकथाम के कार्यक्रमों को कार्यरूप देने के साथ-साथ शिक्षा तथा पुनर्संस्थापन का कार्यक्रम भी कार्यान्वित होना चाहिए। जहां पर सम्बन्धित लोग आदिवासी हों, जैसा कि अदल-बदलकर खेती करने वालों के मामले में है, उनके सामाजिक और आर्थिक संगठन की पूरी जानकारी कर लेनी चाहिए, क्योंकि जब समूहों में उनको बसाया जाएगा तो उनके वर्तमान समूह संगठन और नेतृत्व को इस्तेमाल करना पड़ेगा।

३९. लोगों के पुनस्संस्थापन, शिक्षा और पुनर्वास में सक्रिय सहायता देने के लिए ये समस्त उपाय राष्ट्रीय विस्तार सेवा जैसे माध्यम द्वारा ही अत्युत्तम ढंग से कार्यान्वित किए जा सकते हैं। इसी तरह, जोती जाने वाली भूमि के उपजाऊपन के संरक्षण के उपाय भी विस्तार सेवा द्वारा संगठित करने पड़ेंगे। विस्तार सेवा के काम के लिए भूमि संरक्षण के उपायों का महत्व इस बात से स्पष्ट होता है कि देश के कृषि योग्य क्षेत्र के ५० से ६० प्रतिशत भाग में, जिसमें सिंचाई का प्रबन्ध नहीं होगा, ये उपाय कृषि की उपज बढ़ाने के सर्वाधिक आशा-जनक साधन सिद्ध हो सकते हैं। किसानों की जमीन पर भूमि संरक्षण के कार्य के लिए विस्तार सेवा को मार्गदर्शन करना होगा तथा देखभाल करनी होगी और ऋण के रूप में वित्तीय सहायता देनी होगी। भूमि संरक्षण के ऐसे उपाय, जिनका लाभ पूरे जनसमुदाय को हो, जैसे कि पंचायती भूमि के क्षरण की रोकथाम, गांव के लिए ईंधन और चारे की व्यवस्था आदि, उनके लिए स्थानीय नेतृत्व में सामूहिक प्रयत्न करने पड़ेंगे। कुछ स्थानीय संस्थाओं का विस्तार भी करना पड़ेगा ताकि लोग इन कार्यक्रमों को कार्यरूप देने की जिम्मेदारी स्वयं ले सकें। जैसा कि पहले अध्याय में प्रस्तावित किया गया है, भूमि संरक्षण के उपायों तथा प्रत्येक व्यक्ति द्वारा भूमि के उचित प्रबन्ध की जिम्मेदारी ग्राम पंचायत पर होनी चाहिए। उनकी आवश्यकताओं के अनुसार उनको वित्तीय तथा टेकनीकल सहायता भी मिलनी चाहिए।

अध्याय १६

खेतिहर मजदूर

समस्या के प्रति दृष्टिकोण

पहली पंचवर्षीय योजना में, १९५१ में हुई जनगणना द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर खेतिहर मजदूरों की समस्या के महत्व को स्पष्ट किया गया था और शेष योजना को दृष्टि में रखते हुए इस समस्या के प्रति दृष्टिकोण को संक्षिप्त रूप से बतलाया गया था। उसमें भूमिहीन मजदूरों के हित में सोचे गए कुछ उपायों, तथा मजदूरी की न्यूनतम दर निश्चित करना, उनको घर बनाने के लिए भूमि देना, भूमिहीन मजदूरों के लिए जमीनें देने की योजनाएं बनाना और श्रम सहकारी संस्थाएं खोलना आदि का भी वर्णन किया गया था। पिछले दो या तीन साल के दौरान में भूमिहीन मजदूरों की समस्या और अर्थ-व्यवस्था में उनके स्थान पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। इसके साथ ही पहली पंचवर्षीय योजना में पेश किए गए प्रस्तावों को कार्यान्वित करने में पैदा होने वाली समस्या की यथार्थ कठिनाइयों पर भी पहले से अधिक ध्यान दिया गया है।

२. जब पहली पंचवर्षीय योजना प्रस्तुत की गई थी, तब केवल १९५१ की जनगणना से प्राप्त सूचना ही उपलब्ध थी। इससे पता चलता है कि कुल २९,५०,००,००० देहाती जनसंख्या में से २४,९०,००,००० लोगों का पेशा कृषि था और इसमें से २० प्रतिशत खेतिहर मजदूर और उनके आश्रित थे। खेतीहर मजदूरों की कुल संख्या ४,९०,००,००० थी। देश के पूर्वी तथा दक्षिणी भागों के राज्यों में कुल कृषिजीवी जनसंख्या ११,७०,००,००० है, जिसमें से २,७०,००,००० या ५५ प्रतिशत खेतीहर मजदूर हैं। हाल में की गई १९५०-५१ की कृषि श्रम जांच के परिणामों की रिपोर्टें उपलब्ध हैं। इस जांच ने समस्या पर आम जनगणना से अधिक प्रकाश डाला है। समस्या की जटिलता को निश्चत करने के लिए जो परिभाषाएं अपनाई गईं, वे काफी महत्वपूर्ण हैं। जनगणना के उद्देश्य के लिए कृषक को खेतिहर मजदूर से भिन्न परिभाषा दी गई। इस परिभाषा के अनुसार कृषक वह है जो ऐसे जिम्मेदारी पूर्ण निर्णय करता है जिनसे कृषि कार्य को दिशा मिलती है। मोटे तौर पर सारे खेतिहर मजदूर कृषकों के नौकर हैं। देहातियों को, चाहे वे किसान हैं या कारीगर या मजदूर, सबको एक से अधिक धंधे करके अपनी जीविका अर्जित करनी पड़ती है। एक मनुष्य कृषक होने के साथ मजदूर भी हो सकता है और एक कारीगर को मजदूर का काम भी करना पड़ सकता है। वर्ष के विभिन्न समयों पर मिलने वाले कार्य जो भी उनके सामने आएं वे कर लेते हैं। इस दृष्टि से खेतिहर मजदूर की जो परिभाषा कृषि श्रम जांच द्वारा स्वीकार की गई है वह कठिनाइयों से परे तो नहीं है, परन्तु उससे वास्तविक स्थिति पर बहुत हद तक ठीक प्रकाश पड़ता है। इस परिभाषा के अनुसार खेतिहर मजदूर वह व्यक्ति है जो साल के दौरान में उन दिनों की, जिनमें उसे वास्तव में काम मिला है, कुल संख्या में से आधे से अधिक दिनों में खेतिहर के रूप में काम करता है।

३. कृषि श्रम जांच द्वारा अपनाई गई इस परिभाषा के अनुसार पता चला है कि ग्राम परिवारों में से ३०·४ प्रतिशत लोग कृषि मजदूर थे और उनमें से भी आधे बिना भूमि के थे

और शेष के पास बहुत कम भूमि थी। निम्नलिखित तालिका से पता चलता है कि कुछ राज्यों में विशेष रूप से विहार, उड़ीसा, मद्रास, मैसूर, तिरुवांकुर-कोचीन, हैदराबाद, मध्य भारत तथा मध्य प्रदेश में खेतिहर मजदूरों की समस्या शोचनीय है।

जनगणना के क्षेत्र तथा मुख्य राज्य	आबादी का घनत्व	कुल जनसंख्या से देहाती जनसंख्या का प्रतिशत	ग्रामीण जनसंख्या में खेतिहर मजदूरों का प्रतिशत		
			कुल भूमि	भूमिवाले	भूमिहीन
१	२	३	४	५	६
*सारे भारत में	३१२	८८·७	३०·४	१५·२	१५·२
उत्तरी भारत	५५७	८६·३	१४·३	५·७	८·६
उत्तर प्रदेश	५५७	८६·३	१४·३	५·७	८·६
पूर्वी भारत	३४४	९०·०	३२·७	१९·०	१३·७
असम	१०६	९५·०	१०·७	६·७	४·०
बिहार	५७२	९३·१	३९·९	२५·६	१४·३
उड़ीसा	२४४	९५·९	४३·०	२३·८	१९·२
पश्चिम बंगाल	८०६	७५·०	२३·८	१०·५	१३·३
दक्षिण भारत	४५०	८०·०	५०·१	२७·३	२२·८
मद्रास	४४६	८०·०	५३·०	२८·३	२४·७
मैसूर	३०८	७६·०	४२·०	२७·४	१४·६
तिरुवांकुर-कोचीन	१०१५	८४·०	३९·५	२०·८	१८·७
पश्चिम भारत	२७२	६५.०	२०.४	८.८	११.६
बम्बई	३२३	६९.०	२०.४	९.६	१०.८
सौराष्ट्र	१६३	६६.३	२०.०	२.२	१७.८
मध्यवर्ती भारत	१८१	८०.०	३६.७	१४.६	२२.१
मध्य प्रदेश	१६३	८६.५	४०.१	१४.९	२५.२
मध्य भारत	१७१	८१.६	१९.९	७.५	१२.४
हैदराबाद	२२७	८१.०	४२.१	१९.५	२२.६
उत्तर-पश्चिम भारत	१२३	८०·०	९·०	२·७	७·१
राजस्थान	११७	८३·०	९·३	३·७	५·६
पंजाब	३३८	८१·०	१०·१	१·६	८·५
पेप्सू	३४७	८१·०	१३·२	०·६	१२·६
जम्मू व कश्मीर	५२२	८९·०	३·४	२·७	०·७

*जम्मू और कश्मीर को मिलाकर

४. खेतिहर मजदूरों में से लगभग ८५ प्रतिशत को कटाई-बुवाई, जमीन तैयार करना तथा हल चलाने का काम केवल कभी-कभी मिलता था। समस्त आय साधनों से एक परिवार की औसत वार्षिक आय ४८७ रुपए थी और प्रत्येक व्यक्ति की औसत आय १०४ रुपए थी, जबकि उसी वर्ष राष्ट्रीय आय की औसत २६५ रुपए थी। देश के विभिन्न प्रदेशों की भिन्न-भिन्न स्थितियों के अन्तर्गत रोजगारी के विस्तार में अन्तर था। साल भर में काम मिलने का औसत हिसाब २१८ दिन थे जिसमें से १८९ दिन खेती का काम और २९ दिनों में कृषि के अलावा अन्य काम मिलते थे। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि साल भर में लगभग ७ महीने काम मिलता था। अपने आप किसी अन्य काम में केवल दो मास से भी कुछ कम ही लगा जा सकता था और शेष ३ महीने बेरोजगार ही रहना पड़ता था। खेतिहर मजदूरों में लगभग १५ प्रतिशत को जमींदारों के काम में ही लगना पड़ता था, जो लगभग ३२६ दिन होते थे। इन खेतिहर मजदूरों के मुकाबिले में आकस्मिक काम करने वाले मजदूरों में "काम के अभाव" को ही काम न मिलने का कारण बतलाया जाता था। १६ प्रतिशत खेतिहर मजदूरों को वर्षपर्यन्त मजदूरी बिल्कुल नहीं मिलती थी।

५. कृषि श्रम जांच के परिणामों के अलावा देहाती बेरोजगारी या अर्द्ध रोजगारी के सम्बन्ध में अभी तक कोई अन्य ठीक सामग्री उपलब्ध नहीं है। फिर भी, इस दिशा में किए गए अध्ययन से इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि खेतिहर मजदूर की समस्या बड़ी व्यापक और जटिल है जिसकी उलझनों का प्रभाव केवल देहात की अर्थ-व्यवस्था पर ही नहीं बल्कि आर्थिक एवं सामाजिक विकास प्रक्रिया पर भी पड़ता है, जिसकी १५ से २० साल के दौरान में पूरा होने की आशा की जा सकती है। इन पहलुओं को देखते हुए निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी हैं:—

(१) देहातों में बेरोजगारी तथा अर्द्ध-रोजगारी में कोई अन्तर नहीं है। कृषि श्रम जांच से प्राप्त सामग्री के आधार पर अनुमान किया गया है कि देहातों में कुल २८,००,००० खेतिहर मजदूर बेरोजगार हैं। बहुत-से अन्य तखमीने भी बनाए गए हैं, यद्यपि उनके द्वारा अपनाई गई परिभाषाओं में काफी अन्तर है। परन्तु इस बात को सब स्वीकार करते हैं कि वर्तमान स्थितियों में आजकल के खेती-बारी के तरीकों के इस्तेमाल को जारी रखते हुए भी एक परिवार की जोत की भूमि को एक पूरे परिवार के सब व्यक्तियों का पूरे समय का काम समझा जाए तब भी ६५ से लेकर ७५ प्रतिशत खेतिहर मजदूरों से इतनी ही उपज की जा सकती है। दूसरे शब्दों में, इन कुछ स्वीकृत बातों के आधार पर कृषि में वर्तमान श्रम शक्ति का एक-चौथाई से लेकर एक-तिहाई भाग कृषि की आवश्यकताओं से अधिक है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अन्य देशों की भांति फसल की कटाई के मौके पर मजदूरों की मांग अधिक हो जाती है।

(२) बढ़ती हुई आबादी ने खेतिहर मजदूरों की समस्या को अधिक विकट कर दिया है। हाल ही में हुए एक अध्ययन में विभिन्न जनगणनाओं के द्वारा लोगों के व्यवसायों की तुलना का प्रयत्न किया गया है। बहुत-से कार्य करने के ढंगों और परिभाषाओं जैसे जटिल प्रश्नों को भी हल करना है। इसमें कोई शक नहीं कि उपलब्ध सामग्री से बहुत-सी बातें स्पष्ट होती हैं। १९०१ से १९५१ तक की ५० साल की अवधि में कुल श्रम शक्ति २ करोड़ ५० लाख बढ़ी है, अर्थात ११ करोड़ ७० लाख से बढ़कर १४ करोड़ २० लाख हो गई है। कृषि की

श्रम शक्ति ७ करोड़ ३० लाख से लेकर ६ करोड़ ८० लाख तक पहुंच गई है, जबकि कृषि को छोड़कर अन्य धंधों में श्रम शक्ति उतनी ही है जितनी कि इस शताब्दी के आरम्भ में थी। इस भांति शहरी क्षेत्रों की कृषि श्रम-इतर शक्ति उतने ही अनुपात में बढ़ी है जितनी कि देहाती क्षेत्रों की कम हुई है। इस शताब्दी के आरम्भ में श्रम शक्ति में से ६२.५ प्रतिशत भाग कृषि में लगा था जो १६५१ में बढ़कर लगभग ७० प्रतिशत हो गया। इस तरह, अभी ग्राम झुकाव बढ़ती हुई कृषि निर्भरता की ओर ही है। जनसंख्या में वृद्धि आधुनिक उद्योग व व्यवसाय के विकास और देहाती जीवन के परम्परागत आर्थिक आधार के अधिकाधिक विशृंखल होने के कारण पिछले कुछ दशकों में खेतिहर मजदूरों की समस्या ने दो पहलुओं को उभारा है—सामाजिक व्यवस्था में उनका स्थान और रोजगार के अवसर। अनुसूचित तथा पिछड़े वर्गों के खेतिहर मजदूरों की सामाजिक बाधाएं क्रमशः या तो हट रही हैं या तेजी से कम हो रही हैं, परन्तु पर्याप्त काम-धंधा प्राप्त करने की समस्या अधिक गम्भीर हो गई है। यह स्थिति काफी हद तक कृषकों और खेतिहर मजदूरों के लिए एक-सी है, यद्यपि यह सच है कि खेतिहर मजदूरों में से कइयों का आय व व्यय का स्तर राष्ट्रीय औसत से कहीं कम है।

६. मुख्यतया आर्थिक स्थिति की इन्हीं बुनियादी बातों की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए खेतिहर मजदूरों के पुनर्स्थापन के तरीके सोच निकालने होंगे। निस्संदेह जागीरदारी के अधिकार, भूमि विभाजन में विषमता, मजदूरी की शोषणकारी दरें और सामाजिक बाधाओं को दूर करना अनिवार्य है और इस ओर काफी प्रगति हो रही है। भूमि सुधार, खेती सम्बन्धी पुनर्गठन तथा पिछड़ी हुई जातियों के कल्याण सम्बन्धी अध्यायों में समस्या के इन पहलुओं पर प्रकाश डाला जा चुका है। भविष्य के लिए सोची गई ग्राम विकास की योजनाओं से स्पष्ट है कि गांव के जन-समुदाय में भूमि वाले तथा भूमिहीन कृषकों की विषमता को अवश्य दूर करना होगा और अवसर तथा अधिकारों में समानता लानी होगी। फिर केवल भिन्न-भिन्न कृषि व कृषि-इतर व्यवसायों में लगे हुए लोगों की काम करने की योग्यता में विषमता रह जाएगी। यह भी मानी हुई बात है कि ग्राम विकास योजनाओं को कार्यरूप देते हुए सबसे पहले यह निश्चित कर देना होगा कि कम आय वालों तथा जिनको पूरे अधिकार नहीं मिलते उनको अधिकतम लाभ पहुंचे। कृषि भूमि की सीमा को निश्चित करना तथा भूमि व गांव के अन्य साधनों का, जो सबके लिए लाभकर हैं, विकास करना स्वीकृत नीति है। कुछ हद तक जब भूमि वाले कृषकों का अनुपात बढ़ेगा तो निस्संदेह उनको अपने समाज में स्थान तथा आर्थिक अवसर प्राप्त करने के अधिकार प्राप्त होंगे। इसके साथ ही, कृषि श्रम जांच से प्राप्त आंकड़ों से पता चलता है कि ५० प्रतिशत खेतिहर मजदूरों के पास लगभग ३ एकड़ भूमि प्रति परिवार के हिसाब से है और भूमि वाले और भूमिहीन खेतिहर मजदूर परिवारों के रहन-सहन के स्तर में कोई विशेष अन्तर नहीं है। इससे यह परिणाम निकलता है कि सामाजिक तथा आर्थिक रोजगार परिवर्तन के लिए भूमिहीन खेतिहरों को भूमि देना आवश्यक है। परन्तु इनके रहन-सहन के स्तर को ऊंचा उठाने व पूर्ण रोजगार उपलब्ध करवाने पर इसका प्रभाव सीमित रूप से ही पड़ेगा। अतः समस्या यह है कि :

(क) पशु-पालन, बागबानी आदि के समेत कृषि उत्पादन में भारी वृद्धि की जानी है;

(ख) देहात की अर्थ-व्यवस्था की सीमा के अन्दर-अन्दर विशेषकर ग्रामोद्योगों, छोटे-मोटे उद्योगों तथा कृषि के विकास के द्वारा काम प्राप्त करने के अवसरों का विस्तार किया जाना है;

(ग) भूमि के पुर्नविभाजन, रियायतों तथा शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं के उपायों के द्वारा उनके सामाजिक स्तर को ऊंचा उठाना है तथा उन्हें इस योग्य बनाना है कि उनमें विश्वास, आर्थिक अवसरों से लाभ उठाने की क्षमता तथा नए कामों में हाथ डालने का उत्साह पैदा हो; और

(घ) खेतिहर मजदूरों के रहन-सहन की दशा को सुधारना है।

७. आशा की जाती है कि काम करने की कुल शक्ति १९५१–६१ के बीच १ करोड़ ६० लाख तथा १९६१–७१ तक २ करोड़ ३० लाख बढ़ जाएगी; अर्थात २० वर्ष की अवधि में ४ करोड़ २० लाख या अगली तीन योजनाओं की अवधि में ३ करोड़ ३० लाख बढ़ेगी। यदि प्रथम अध्याय में इंगित गति से अर्थ-व्यवस्था की प्रगति होती रही तो अनुमान है कि बीस साल बाद कृषि में लगे हुए लोगों का प्रतिशत जो इस समय ७० है शायद ६० प्रतिशत के लगभग रह जाएगा। इस बिन्दु पर पहुंचकर खेतिहर मजदूरों की समस्या समस्त राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था के विकास की शैली तथा गति की व्यापक समस्या में मिल जाती है। इस रिपोर्ट में इस विषय पर पहले ही विचार किया जा चुका है।

कार्यक्रम

८. जब एक बार आर्थिक स्थिति का ढांचा बदलना आरम्भ हो जाए और यह प्रक्रिया तीव्रता से बढ़े तो राष्ट्र के सब वर्गों का हित व कल्याण एक-दूसरे पर निर्भर तथा परस्पर सम्बन्धित हो जाता है। दूसरे शब्दों में, कृषि उत्पादन में उन्नति, आर्थिक अवसरों का विस्तार, भूमि का पुर्नविभाजन, खेतिहर मजदूरों के लिए सामाजिक सुविधाओं की व्यवस्था आदि गरीबी की बुनियादी समस्या को दूर करने के संगठित प्रयत्न के विभिन्न पहलू जान पड़ते हैं। पर्याप्त समय के लिए यह आवश्यक है कि खेतिहर मजदूरों के समान जाति के निर्बल वर्गों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए और उनके लाभार्थ विशेष रूप से कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिएं। इस प्रकार अधिक गहन व विभिन्न किस्मों के कृषि उत्पादन के विकास तथा देहाती क्षेत्रों में अधिक विविध व्यवसायों की उपलब्धि से देहात की रोजगारी का आकार बढ़ता चला जाएगा और खेतिहर मजदूरों को अधिक अवसर प्राप्त होंगे। दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान में राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक योजना के क्षेत्रों में जनसमुदाय के निर्बल वर्गों, विशेषकर छोटे-छोटे कृषकों, भूमिहीन असामियों, खेतिहर श्रमिकों तथा कारीगरों को सहायता देने के कार्यक्रम संगठित करने को अधिक प्राथमिकता दी गई। गांव तथा छोटे-मोटे उद्योगों के लिए योजना में २०० करोड़ रुपए की व्यवस्था है। पिछड़ी जातियों के कल्याणार्थ ९० करोड़ रुपए सुरक्षित रखे गए हैं। खेतिहर मजदूरों और जनसमुदाय के अन्य निर्बल वर्गों को शिक्षा तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं के विस्तार कार्यक्रम शक्ति देंगे और उन्हें इस योग्य बना देंगे कि वे मिलने वाले नए अवसरों का पूर्ण लाभ उठा सकें। प्रत्येक क्षेत्र में इस बात का पूरा प्रयत्न होना चाहिए कि योजना के अन्तर्गत उपलब्ध साधनों को उचित अनुपात में खेतिहर मजदूरों तथा अल्पाधिकार प्राप्त वर्गों के कल्याणार्थ लगाया जाए। मुख्य बात तो यह है कि स्थितियों और आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विस्तृत योजनाएं बनाकर इस लक्ष्य को प्राप्त करना

होगा। इसके साथ ही पुनस्संस्थापन योजनाएं, श्रम सहकारी संस्थाओं का निर्माण, निवास स्थानों के लिए भूमि देने, मजदूरी की न्यूनतम दरों को निश्चित करने जैसे उपायों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

९. पहली योजना में भूमिहीन कृषकों के पुनस्संस्थापन के लिए १·५ करोड़ रुपए की व्यवस्था थी। अनेक योजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं, जैसे आन्ध्र तथा मद्रास में नई वस्तियां बसाना, तथा अनेक राज्यों में हरिजनों को बसाने के लिए भूमि बांटना आदि। केन्द्रीय सरकार ने भोपाल में १०,००० एकड़ का एक फार्म खोलने की योजना बनाई है जिसमें भूमिहीन श्रमिक इस विचार से चुने गए हैं कि वे अन्ततः भूमिदारों के रूप में बस जाएंगे। दूसरी पंचवर्षीय योजना में केन्द्रीय सरकार की व्यवस्था के अलावा १४ राज्यों में ५ करोड़ की अनुमानित लागत की योजनाएं बनाई गई हैं जिनके अन्तर्गत भूमिहीन श्रमिकों के बीस हजार परिवारों को १,००,००० एकड़ भूमि पर बसाया जाएगा।

१०. भूमि की उच्चतम सीमा निश्चित करने से पुनस्संस्थापन के लिए कुछ भूमि उपलब्ध होगी। भूमि सुधार और भूमि पुनर्गठन के अध्याय में यह प्रस्तावित किया जा चुका है कि प्रत्येक राज्य में कृषि तथा भूमि की जोत की गणना सम्बन्धित सामग्री का अध्ययन तथा उन क्षेत्रों की, जिनकी गणना होने की सम्भावना है, गणना होने के पश्चात भूमिहीन श्रमिकों को भूमि देकर पुनः बसाने के लिए व्यापक योजना बनाई जानी चाहिए। भूदान में यथासम्भव प्राप्त भूमि को भी अतिरिक्त भूमि पर पुनस्संस्थापन के लिए बनाई गई योजना में मिला लेना चाहिए। उन असामियों को जो कि इस कारण बेदखल होंगी कि मालिक जमीन पर खुद काश्त करना चाहता है, और साथ ही उन लोगों को भी जिनके पास अलाभकर खेत हैं जमीन देने का विचार करना होगा। इस स्थिति में प्राप्त भूमि का कम पड़ना अनिवार्य है। जैसा कि बताया जा चुका है, भूमिहीन मजदूरों के पुनस्संस्थापन को संगठित करने के लिए विशेष कर्मचारियों की सेवाओं की आवश्यकता पड़ेगी। विकास के लिए आवश्यक साधनों की व्यवस्था कृषि, राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास, ग्रामोद्योग तथा अन्य कार्यक्रमों द्वारा करनी होगी जिनका योजना में समावेश है। भूमिहीन खेतिहर मजदूरों के पुनस्संस्थापन की योजनाओं के लिए परामर्श देने के लिए गैर-सरकारी सदस्यों को मिलाकर राष्ट्रीय स्तर पर और राज्यों के स्तर पर बोर्ड स्थापित करने की और समय-समय पर होने वाली प्रगति पर विचार-विमर्श करने की भी सिफारिश की गई है। इन बोर्डों को खेतिहर मजदूरों के पुनस्संस्थापन की समस्याओं के सब पहलुओं पर ध्यान देना चाहिए।

११. दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत लागत का काफी बड़ा भाग छोटे-बड़े निर्माण कार्यों पर खर्च किया जाएगा। इस बात की सिफारिश की गई है कि यथासम्भव मात्रा में ठेकेदारों की जगह श्रम तथा निर्माण सहकारी संस्थाओं का इस्तेमाल होना चाहिए। विस्तार सेवा कर्मचारियों की ऐसी सहकारी संस्थाओं का संगठन करने की विशेष जिम्मेदारी होगी। प्रत्येक विकास खण्ड में एक श्रम सहकारी संघ होना चाहिए जिससे प्रत्येक गांव की सहकारी समितियां सम्बद्ध हों। सामान्य तथा वृहदाकार योजनाओं के बारे में खण्ड या ताल्लुका संघ को प्रामाणिक शर्तों पर काम प्राप्त करने में सहायता मिलनी चाहिए और उधर इन संघों को गांवों से स्थानीय श्रमिकों को जुटाना चाहिए। छोटे-मोटे काम के ठेके श्रम सहकारी समितियों को सीधे मिलने चाहिएं और साथ ही उनके पूरा करने में सहायता मिलनी चाहिए। भूमिहीन मजदूरों की आय तथा देहाती क्षेत्रों में काम प्राप्त करने के

अवसरों को बढ़ाने में श्रम तथा निर्माण सहकारी संस्थाओं के विकास से काफी सहायता मिल सकती है। यदि आवश्यक संगठन किया जाए तो कोई कारण नहीं कि अल्प काल में ही शक्तिशाली सहकारी संघ, जिनके अपने यन्त्र तथा उपकरण आदि यहां तक कि यातायात के साधन भी हों, बनाए न जा सकते हों। प्रारम्भिक स्थिति में टेकनीकल, मार्ग-दर्शन तथा प्रबन्ध में सहायता देने के अलावा आवश्यक उपकरण खरीदने के लिए खण्ड या ताल्लुका श्रम सहकारी संघों को ऋण मिलना चाहिए। इस सम्बन्ध में यह भी बताया जा सकता है कि वनों में सहकारी संस्था के काम करने से जो अनुभव प्राप्त हुआ है वह उत्साहजनक है।

१२. अनेक राज्यों में कृषि मजदूरों के लिए घर बनाने के स्थानों की व्यवस्था के लिए कानून और नियम बना दिए गए हैं। यह गांव के समस्त जनसमुदाय की जिम्मेदारी होनी चाहिए कि भूमिहीन मजदूरों को घर बनाने के लिए स्थान मिले। कुछ मामलों में स्थानीय सामग्री से सस्ते घर बनाने में सहायता मिलने की सम्भावना है। खेतिहर मजदूरों के लिए घर बनाने के स्थान मुफ्त में उपलब्ध होने चाहिएं।

१३. पहली पंचवर्षीय योजना में पंजाब, राजस्थान, अजमेर, कुर्ग, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, कच्छ तथा त्रिपुरा के समस्त प्रदेशों में मजदूरी की न्यूनतम दरें निश्चित कर दी गई हैं। असम, बिहार, बम्बई, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मैसूर तथा विन्ध्य प्रदेश के उन स्थानों पर मजदूरी की न्यूनतम दरें निश्चित कर दी गई हैं जहां पहले बहुत कम थीं। अनेक अन्य राज्यों में मजदूरी की न्यूनतम दरें निश्चित करने से सम्बन्धित कानून अभी लागू नहीं किए गए हैं। यह अनुभव किया जा रहा है कि भूमि पर बढ़ती हुई आबादी का दबाव होने के कारण और मजदूरों की बहुलता के कारण मजदूरी की न्यूनतम दरों के कानूनों को लागू करने में कठिन समस्याएं पैदा होती हैं। फिर भी देहाती क्षेत्रों में मजदूरी की न्यूनतम दरों को निश्चित करने के कानूनों को मजदूरी का स्तर ऊंचा उठाने के लिए जारी करना ही है। अतः यह सिफारिश की जाती है कि सब राज्यों में और समस्त इलाकों में मजदूरी की न्यूनतम दरें निश्चित होनी चाहिएं, और सीमाएं होते हुए भी निश्चित की गई मजदूरी की दरों को लागू रखने का निरन्तर प्रयत्न रहना चाहिए।

१४. थोड़ा-थोड़ा समय देकर नियमित रूप में खेतिहर मजदूरों के लिए उपभोक्ता मूल्य देशनांक बनाने की ओर कदम उठाए जा रहे हैं। इन देशनांकों से समय-समय पर मजदूरी की न्यूनतम दरों को निश्चित करने तथा इनका संशोधन करने में आसानी रहेगी। योजना में फिर से एक बार कृषि श्रम जांच करवाने का भी प्रबन्ध है जिससे खेतिहर मजदूरों की दशा पर पड़े हुए पहली पंचवर्षीय योजना के प्रभाव का मूल्यांकन हो सके।

अध्याय १७

सिंचाई और बिजली

१ सिंचाई

जल साधन

देश की अर्थ-व्यवस्था के लिए जल और भूमि साधनों के संयुक्त विकास का महत्व आधारभूत है, इसलिए योजना के कार्यक्रमों में इसे उच्च प्राथमिकता प्रदान की गई है। जैसा कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में बतलाया गया है, जल साधनों के विकास की योजना राष्ट्रीय स्तर पर बनाई जानी चाहिए।

२. कुछ वर्ष हुए, अन्दाजा लगाया गया था कि भारत के समस्त जल साधन १३५ करोड़ ६० लाख एकड़ फुट के हैं। अब इन साधनों के ठीक-ठीक परिमाण का पता लगाने का कार्य आरम्भ किया जा चुका है और उसे द्वितीय योजना काल में जारी रखा जाएगा। किसी नदी के पानी का सिंचाई के लिए प्रयुक्त हो सकना, जिस प्रदेश में से नदी बहती है उसके धरातल, प्रवाह की विशेषताओं और मिट्टी की किस्म पर निर्भर करता है और ये सब बातें हर नदी में भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। अनुमान है कि हमारे देश के उपलब्ध जल साधनों में से करीब ४५ करोड़ एकड़ फुट का लाभदायक उपयोग किया जा सकता है।

३. इसमें से १९५१ तक लगभग केवल ७ करोड़ ६० लाख एकड़ फुट का उपयोग किया गया था। यह देश की नदियों में प्रवाहित जल का केवल ५.६ प्रतिशत था। प्रथम योजना के समय जो योजना कार्य शुरू किए गए उनके द्वारा अधिक जल का उपयोग होने लगा; १९५६ के अन्त तक यह परिमाण बढ़कर १० प्रतिशत हो गया होगा। देश की प्रधान नदियों के जल के उपयोग की स्थिति लगभग इस प्रकार होने की सम्भावना है :

नदी-वर्ग	अनुमानित औसत प्रवाह	१९५१ तक उपयोग	प्रथम योजना में शामिल योजनाओं द्वारा अतिरिक्त उपयोग (पूर्ण विकास पर)	द्वितीय योजना में शामिल योजनाओं द्वारा अतिरिक्त उपयोग (पूर्ण विकास पर)
		(परिमाण लाख एकड़ फुट में)		
१. सिन्धु	१,६८०	८०	११०	१२
२. गंगा	४,०००	२००	२१५	१४५
३. ब्रह्मपुत्र	३,०००	कुछ नहीं	कुछ नहीं	कुछ नहीं
४. गोदावरी	८४०	१२०	१०	१५
५. महानदी	८४०	६	१०५	२
६. कृष्णा	५००	९०	१५६	२६
७. नर्मदा	३२०	२	कुछ नहीं	१०१
८. ताप्ती	१७०	२	७	३५
९. कावेरी	१२०	८०	१३	६

इसके पश्चात भी बहुत बड़ी मात्रा में जल उपलब्ध रहेगा। इसलिए इन साधनों का उपयोग करने की योजना बनाते रहने की आवश्यकता रहेगी ही।

४. भूमि के गर्भ में से बड़ी मात्रा में पानी मिल सकता है। इन साधनों की कोई सूची तो अभी तक तैयार नहीं की गई है परन्तु परीक्षण के लिए जो नलकूप लगाए गए हैं, उनसे देश के कुछ भागों के भूगर्भस्थ जल के विषय में विश्वसनीय जानकारी अवश्य मिल सकेगी। इस पानी का उपयोग सिंचाई के लिए उन इलाकों में किया जाएगा जिनमें नहरों से सिंचाई करना महंगा पड़ता है अथवा जिनकी जमीन में पानी भर जाता है। ऐसे इलाकों में नलकूपों की सिंचाई नहरी सिंचाई से अच्छी रहती है।

विकास के वर्तमान कार्य

५. सिंचाई का उपयोग भारत में प्राचीन काल से होता आया है। उन्नीसवीं शताब्दी में उत्तर प्रदेश में गंगा और यमुना नदियों से, पंजाब में रावी और सतलुज से, मद्रास में गोदावरी, कृष्णा और कावेरी से और बिहार में सोन नदी से बढ़िया और बड़ी-बड़ी नहरें निकाली गई थीं। विगत कुछ दशकों में पंजाब में सतलुज नदी से, उत्तर प्रदेश में बेतवा और शारदा से, मध्य प्रदेश और उड़ीसा में महानदी से, बम्बई और हैदराबाद में गोदावरी से, आन्ध्र में कृष्णा से और मैसूर और मद्रास में कावेरी नदी से और भी नहरें निकाली गईं। प्रथम योजना काल में कई बड़ी-बड़ी सिंचाई योजनाओं को आरम्भ किया गया, जिनमें से कई तो बहूद्देशीय थीं। कइयों को पूरा करने के लिए बड़े बांध और जलाशय बनाने पड़े, ताकि उनमें वर्षा ऋतु का पानी एकत्र किया जा सके। कइयों में काम अब भी जारी है। वह अधिकतर द्वितीय योजना काल में पूरा हो जाएगा। इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट के प्रथम विवरण में देश के बड़े-बड़े सिंचाई कार्यों का विवरण दिया गया है।

६. १९५४-५५ में देश की भूमि के वर्गीकृत उपयोग का निम्न विवरण तैयार किया गया था :—

	करोड़ एकड़ (लगभग)
समस्त क्षेत्रफल	८१·१
वर्गीकृत भूमि का क्षेत्रफल	७२·२
जंगल	१३·३
खेती के लिए अनुपलब्ध	१२·२
पड़ती के अतिरिक्त अनबोई भूमि	९·५
चालू पड़ती	२·८
चालू पड़ती के अतिरिक्त पड़ती	२·९
बोई हुई भूमि का क्षेत्रफल	३१·५
बोने योग्य भूमि का क्षेत्रफल	४६·७
बोई हुई भूमि	३४·३

परिशिष्ट के विवरण २ में कृषि और सिंचाई के विषय में राज्यों द्वारा दिए गए महत्वपूर्ण आंकड़ों का संग्रह किया गया है।

७. १९५०-५१ में सब मिलाकर ५ करोड़ १५ लाख एकड़ भूमि में सिंचाई होती थी। इसमें से १ करोड़ ७९ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई सरकारी नहरों से, २८ लाख एकड़ की निजी नहरों से, ८८ लाख एकड़ की तालाबों से, १ करोड़ ४७ लाख एकड़ की कुओं से, और ७२ लाख एकड़ की अन्य साधनों से होती थी। यह देश में खेती की समस्त भूमि का १७·५ प्रतिशत भाग था। प्रथम योजना के समय सिंचाई के जो बड़े और मध्यम कार्य आरम्भ किए गए, उनसे १९५६ के अन्त तक और भी कोई ६३ लाख एकड़ भूमि में सिंचाई होने लगी होगी। इनके पूरा हो जाने पर सिंचाई का नया क्षेत्र लगभग २ करोड़ २० लाख एकड़ हो जाएगा। इससे किस राज्य को कितना लाभ पहुंचेगा, इसका विवरण इस प्रकार है :—

राज्य	१९५६ तक सिंचाई का क्षेत्र	नए काम पूरे हो जाने पर सिंचाई का क्षेत्र
	(हजार एकड़)	
आन्ध्र	८९	१,९६०
असम	१५२	२३४
विहार	६८९	२,५७६
बम्बई	३०९	१,५०५
मध्य प्रदेश	१०	२४४
मद्रास	२४०	३९६
उड़ीसा	९०	१,८७५
पंजाब	१,५२०	३,२८०
उत्तर प्रदेश	१,६७४	१,९२०
पश्चिम बंगाल	६३९	२,१४४
हैदराबाद	७२	१,५१७
मध्य भारत	१२०	७०६
मैसूर	३९	३८४
पेप्सू	२०४	१,०११
राजस्थान	१८२	१,७५८
सौराष्ट्र	११६	२७०
तिरुवांकुर-कोचीन	३८	१३८
जम्मू व कश्मीर	३५	१७०
अजमेर	१	१०
हिमाचल प्रदेश	२४	१००
कच्छ	२४	४८
विन्ध्य प्रदेश	—	३७
योग ...	६,२९७	२२,२८३

८. आशा है कि प्रथम योजना में आरम्भ किए गए सिंचाई के छोटे कामों से भी १ करोड़ अतिरिक्त एकड़ भूमि में सिंचाई होने लगेगी। पहले जिन क्षेत्रों की कुओं और तालाबों आदि छोटे

साधनों से सिंचाई होती थी, उनमें से कुछ अब बड़े साधनों द्वारा सींचे जाने लगेंगे और इससे क्षेत्रों में निर्विघ्न सिंचाई होने लगेगी। इस कारण प्रथम योजना में आरम्भ किए गए कार्यों द्वारा हुई अतिरिक्त सिंचाई का परिमाण १ करोड़ ५० लाख एकड़ माना जा सकता है। १९५१ में खेती की समस्त भूमि में सिंचाई वाली भूमि का भाग १६ प्रतिशत था। प्रथम योजना की समाप्ति तक वह २० प्रतिशत हो चुका होगा।

विकास के भावी कार्य

९. सिंचाई:—सिंचाई का अन्तिम लक्ष्य क्या रखा जाए अथवा देश में उपलब्ध साधनों से सब मिलाकर कितनी सिंचाई की जा सकती है, इसका निश्चय करने के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नहीं है। परन्तु मोटा अन्दाजा यह किया गया है कि बहूद्देशीय बड़े और मध्यम सिंचाई कार्यों से कोई ७ करोड़ ५० लाख एकड़ भूमि में सिंचाई की जा सकती है। अन्य साधनों से भी लगभग इतनी ही सिंचाई हो सकती है। इस प्रकार समस्त साधनों से कोई १५ करोड़ एकड़ भूमि में सिंचाई हो सकेगी। सिंचाई आयोग ने सिंचाई की सम्भावनाओं का एक अखिल भारतीय सर्वेक्षण ५० वर्ष से भी पहले किया था। तब से अब तक परिस्थितियों में बहुत परिवर्तन हो गया है। प्रथम तो बांध बनाने के तरीकों में और सिंचाई की इंजीनियरी में बहुत सुधार हो गए हैं। जिन कामों को उस समय असम्भव समझा जाता था वे अब व्यावहारिक बन गए हैं। द्वितीय, हाल के वर्षों में शुष्क खेती करने, समोच्च बांध बनाने और भूमि संरक्षण करने आदि में बहुत उन्नति हो चुकी है। इसलिए अब इन दोनों दृष्टियों से विचार करके सिंचाई की सम्भावनाओं का अन्दाज़ा बदल लेना आवश्यक हो गया है। हमारी सिफारिश यह है कि केन्द्र और राज्यों की सरकारें मिलकर इस बात का सर्वेक्षण सावधानीपूर्वक करें कि सिंचाई की बड़ी और मध्यम योजनाओं से और कुओं तथा तालाबों आदि छोटे साधनों से कुल कितने क्षेत्र में सिंचाई की जा सकती है। इस प्रश्न का भी प्रत्येक प्रदेश में पृथक-पृथक अध्ययन करना चाहिए कि किन स्थितियों में वहां सिंचाई करना लाभप्रद नहीं रहेगा और बिना पानी की खेती करना आवश्यक हो जाएगा। जो-जो अनुसन्धान करने के सुझाव हमने यहां दिए हैं, उनसे उपर्युक्त तीनों दिशाओं में विकास की सम्भावनाओं का ठीक-ठीक ज्ञान हो जाएगा, अर्थात सिंचाई के बड़े और मध्यम कामों से कितनी सिंचाई हो सकती है, कुओं, तालाबों आदि सिंचाई के छोटे-छोटे कामों से सिंचाई का कितना विकास किया जा सकता है, और तीसरे, शुष्क खेती करने, समोच्च बांध बना देने और जमीन में नमी को कायम रखने आदि की क्या सम्भावनाएं हैं? सिंचाई के विकास की भावी योजनाएं बनाने के लिए इन अनुसंधानों का किया जाना आवश्यक है।

१०. यह भी आवश्यक है कि नहरों द्वारा पानी का उपयोग करने की योजनाएं बनाते हुए, जो फसलें बिना पानी की खेती से उत्पन्न की जाएंगी, उनके लिए पानी की आवश्यकताओं का ध्यान रख लिया जाए। यदि नदियों के जल स्रवण क्षेत्रों का सारा पानी नहरों अथवा संग्राहक जलाशयों द्वारा निम्न क्षेत्रों में खींच लिया गया तो आशंका है कि जो क्षेत्र नहरी सिंचाई से लाभ नहीं उठा सकते वे शुष्क खेती की प्रणाली द्वारा भी पानी के लाभ उठाने से वंचित हो जाएंगे। इसलिए संग्राहक जलागार इस प्रकार नहीं बनाने चाहिएं कि वे नदियों के जलस्रवण क्षेत्रों का सारा पानी खींच लें, और ऊपर की जमीनों के जिन क्षेत्रों की स्थिति घाटे की है, उनकी पानी की आवश्यकताओं का ध्यान बिल्कुल न रखा जाए। इसी प्रकार यदि जलागार नदियों के ऊपरी भागों में बनाए जाएं तो निचले भागों में स्थित क्षेत्रों की भी आवश्यकताओं का ध्यान रखना चाहिए।

११. नौ परिवहन:—नदियों का उपयोग सिंचाई, बिजली उत्पादन, जल उपलब्धि और मल-प्रवाह के अतिरिक्त नौ परिवहन के लिए भी किया जा सकता है। यह परिवहन का एक सस्ता साधन है, इसलिए यह संचार और परिवहन की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने में अधिकाधिक उपयोगी और सहायक हो सकता है। अभी तक नौ परिवहन का विकास असम, पश्चिम बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश के ही कुछ भागों तक सीमित है। प्रथम योजना में भी इस दिशा में अधिक प्रगति नहीं हुई है। परन्तु अब विकास की आवश्यकताएं बढ़ती जा रही हैं, इसलिए अब नदियों का उपयोग यातायात के लिए करने पर अधिक ध्यान देना पड़ेगा और द्वितीय योजना में परिवहन के लिए जलमार्गों का आर्थिक विकास करने का अनुसन्धान अधिक पूरी तरह किया जाएगा। नदी घाटी योजनाओं के प्रसंग में भी इस समस्या पर विशेष ध्यान देना पड़ेगा।

१२. भूमि संरक्षण:—प्रथम योजना में भूमि संरक्षण की समस्याओं और उन्हें हल करने के उपायों पर विचार किया गया था। इस समस्या पर उन क्षेत्रों में और भी अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है जिनमें कि बड़े-बड़े जलागार बनाए गए हैं और जहां उनके कारण नदियों और सहायक धाराओं के प्रवाह के रूप और दिशा आदि बहुत बदल गए हैं। यदि नदियों के जल स्रवण क्षेत्रों में भूमि संरक्षण के आवश्यक उपाय न किए गए तो पानी का प्रवाह अपने साथ गाद और कीचड़ आदि लाकर और इन जलागारों और नीचे की प्रणालियों में एकत्र करके इनकी सामर्थ्य को क्षतिग्रस्त कर देगा। जलागारों से नीचे की ओर बांध बन जाने के कारण नदियों के प्रवाह की व्यवस्थाएं भी बदल जाती हैं। इसका प्रभाव उनकी अनेक धाराओं पर भी पड़ता है। इसका परिणाम यह होता है कि नीचे की घाटी में भूमि के कटाव की समस्या गम्भीर रूप धारण कर लेती है। इसलिए नदी घाटी योजनाओं से लाभान्वित होने वाले क्षेत्रों में भूमि संरक्षण के उपायों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए और उन्हें भूमि संरक्षण के कार्यक्रम में विशेष स्थान मिले। इसके साथ ही, नदी घाटी योजनाओं से सम्बद्ध कार्यों की रक्षा के लिए रक्षक बांध बनाने पर ध्यान देना चाहिए और उन्हें प्रत्येक बड़ी नदी घाटी योजना का अंग बना लेना चाहिए।

द्वितीय योजना के कार्यक्रम

१३. भौतिक लाभ:—प्रथम योजना बनाते हुए यह लक्ष्य सामने रखा गया था कि १५ से २० वर्ष में सिंचाई के सरकारी साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र दुगना हो जाएगा। १९५१ में सभी साधनों द्वारा सिंचित प्रदेश लगभग ५ करोड़ १० लाख एकड़ था। प्रथम योजना के समय में १ करोड़ ६३ लाख एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई होने लगी होगी—६३ लाख एकड़ में तो सिंचाई के बड़े और मध्यम कार्यों से और १ करोड़ एकड़ में छोटे-छोटे कार्यों से। द्वितीय योजना में और भी २ करोड़ १० लाख एकड़ जमीन में सिंचाई होने लगेगी—१ करोड़ २० लाख एकड़ में तो बड़े और मध्यम कार्यों के द्वारा और ९० लाख एकड़ में छोटे-छोटे कार्यों द्वारा। इन १ करोड़ २० लाख एकड़ क्षेत्र में से ९० लाख एकड़ क्षेत्र तो पहले से हाथ में लिए हुए कार्यों द्वारा सींचा जाएगा और ३० लाख एकड़ नए कार्यों द्वारा। नए कार्यों का अन्तिम लक्ष्य लगभग १ करोड़ ५० लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई करने का है। आशा है कि ये नए कार्य द्वितीय योजना के पहले ३ वर्षों में तो प्रति वर्ष बीस-बीस लाख एकड़ और अन्तिम दो वर्षों में प्रतिवर्ष तीस-तीस लाख एकड़ भूमि में नई सिंचाई कर सकेंगे।

१४. वित्तीय विनियोग:—प्रथम योजना के समय और उससे ठीक पहले के कुछ वर्षों में देश के सभी भागों में सिंचाई के कामों पर बहुत परिश्रम किया गया था। सिंचाई और बिजली

के जो काम पहले-पहल प्रथम पंचवर्षीय योजना में सम्मिलित किए गए थे, वे लगभग ६७० करोड़ रु० की लागत के थे। इसमें से केवल सिंचाई के कामों की लागत कोई ६२० करोड़ रु० थी। पीछे इनमें सिंचाई के कुछ मध्यम काम कमी वाले क्षेत्रों को स्थायी लाभ पहुंचाने के लिए बढ़ाए गए। वे लगभग ४० करोड़ रु० की लागत के थे। कई कार्यों का क्षेत्र बढ़ा दिया गया और इसलिए उनमें से कइयों के व्यय का अन्दाजा दोबारा लगाया गया। इस प्रकार प्रथम पंचवर्षीय योजना के सिंचाई कार्यों की सारी लागत कोई ७२० करोड़ रु० तक पहुंच गई। इसमें से ८० करोड़ रु० योजना आरम्भ होने से पहले के वर्षों में व्यय हो चुके थे। अन्दाजन ३४० करोड़ रु० प्रथम योजना काल में व्यय हो गए होंगे। शेष राशि द्वितीय और तृतीय योजनाओं की अवधि में व्यय की जाएगी। यह आवश्यक है कि जो काम हाथ में लिये हुए हैं वे शीघ्र पूरे कर लिए जाएं, जिससे कि उन पर जो व्यय हो चुका है उससे उत्पादन होने लग जाए और उनके लाभ यथाशीघ्र मिलने लगें। द्वितीय योजना काल में इन कार्यों पर लगभग २०६ करोड़ रु० व्यय करने पड़ेंगे।

१५. द्वितीय योजना में सिंचाई के जो नए कार्य आरम्भ किए जाएंगे, उनकी लागत लगभग ३८० करोड़ रु० होगी। इसमें से १७२ करोड़ रु० तो द्वितीय योजना के समय ही व्यय हो जाने की सम्भावना है। शेष राशि तृतीय और अगली योजनाओं के समय व्यय की जाएगी। द्वितीय योजना के समय सिंचाई के बड़े और मध्यम कार्यों पर व्यय करने के लिए सब मिलाकर ३८१ करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। ३५ करोड़ रु० की अतिरिक्त राशि की व्यवस्था इसलिए की गई है कि सिन्धु नदी-वर्ग के पानी में से जो भाग भारत को मिलने की आशा है उससे सम्बद्ध तथा कुछ अन्य कार्यों को आरम्भ किया जा सके। इन सबके सम्बन्ध में निर्णय होना अभी शेष है।

१६. द्वितीय योजना में सिंचाई के नए कामों की संख्या १६५ है। इनमें से दस का व्यय लगभग १० और ३० करोड़ रु० के मध्य में, सात का ५ और १० करोड़ रु० के मध्य में और शेष का ५ करोड़ रु० से कम है। इस प्रकार द्वितीय योजना में मध्यम कार्यों की प्रधानता है। द्वितीय योजना में सम्मिलित सिंचाई के नए कार्यों की संख्या, उनके व्यय और पृथक-पृथक लाभों का विवरण नीचे की तालिका में दिया गया है :—

अनुमानित व्यय		कार्यों की संख्या	कुल अनुमानित व्यय (करोड़ रुपए)	कार्य पूरा हो जाने पर सिंचाई के अनुमानित लाभ (लाख एकड़)
१० और ३० करोड़ रु० के बीच में	...	१०	१६१	८४
५ और १० करोड़ रु० के बीच में	...	७	५४	१५
१ और ५ करोड़ रु० के बीच में	...	३५	८५	३४
१ करोड़ रु० से कम	...	१४३	४६	१५
योग	...	१६५	३७६	१४८

द्वितीय योजना के महत्वपूर्ण सिंचाई कार्यों का विवरण इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट के विवरण ३ में दिया गया है।

१७. किसी भी कार्य को योजना में सम्मिलित कर लेने का अर्थ यह नहीं है कि उसका प्रत्येक दृष्टि से अनुसन्धान कर लिया गया है। प्रत्युत वस्तुस्थिति यह है कि कई कार्यों को आरम्भ करने से पहले उनका प्रौद्योगिक दृष्टि से अनुसन्धान और उनकी आर्थिक सम्भावनाओं पर विचार करना पड़ेगा। इन कार्यों के सम्बन्ध में आरम्भिक कार्रवाई, सर्वेक्षण अथवा उनके अनुसंधान की रिपोर्ट पूरी करने अथवा कुछेक मामलों में सड़कें आदि बनाने तक ही सीमित रहेगी। सम्भव है कि विस्तृत अनुसंधान के पश्चात कई कार्यों के प्रौद्योगिक, आर्थिक और वित्तीय रूपों को बहुत बदल देना पड़े और उनके क्षेत्र तक पर पुनर्विचार करना पड़े। जैसा कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में जोर देकर कहा गया था, प्रत्येक कार्य को पूरा करते हुए कुछ निश्चित मंजिलों पर पहुंचकर, उस कार्य के समग्र रूप और उसके विविध अंगों के वित्तीय तथा आर्थिक पहलुओं पर सावधानी से विचार कर लेना चाहिए।

१८. सिंचाई के कार्यों को पूरा करते हुए यह बहुत आवश्यक है कि राज्य सरकारें उनका क्रम निश्चित कर देने पर सूक्ष्मता से ध्यान दें। वित्तीय विचारों के अतिरिक्त इन कार्यों का क्रम अन्य कुछ विचारों के द्वारा भी निर्धारित किया जाएगा, जैसे कि प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की उपलब्धि, कुछ कार्यों का फल शीघ्र निकल आने की आवश्यकता, कुछ कार्यों की तुलना में अन्य कार्यों को पहले पूरा करने की आवश्यकता और एक ही राज्य के विविध स्थानों की आवश्यकताओं में प्रतिस्पर्धा आदि। इस प्रकार योजना में सम्मिलित अनेक बड़े कार्यों को पीछे जाकर पूरा किया जाएगा, पहले नहीं। जिन कुछ कार्यों का अनुसंधान अभी अधूरा पड़ा है उनके अतिरिक्त, आन्ध्र में वंशधारा, बिहार में कन्साई, बम्बई में उकाई, नर्मदा, माही, खड़गवासला, गिरणा और बनास, मध्य प्रदेश में तवा और पश्चिम बंगाल में कंसवाटी योजना कार्य इसी प्रकार के हैं। इनमें से कइयों के क्षेत्र और लाभों को निर्धारित करना शेष है। इन सब पर व्यय २०० करोड़ रु० से ऊपर होगा, परन्तु द्वितीय योजना में इनके लिए लगभग ५० करोड़ रु० रख लिए गए हैं।

१९. विभिन्न राज्यों की योजनाएं तयार करते हुए उनकी सिंचाई की अतिरिक्त आवश्यकताओं और उनमें अब तक हुए विकास को देखने के साथ-साथ यह भी देखा गया है कि प्रस्तावित कार्यों को पूरा करने की उनकी सामर्थ्य कितनी है। द्वितीय योजना में विभिन्न राज्यों में कितना-कितना काम किया जाएगा, यह इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट के विवरण ४ में बतलाया गया है।

२०. सिंचाई के बड़े और छोटे कार्य :—सिंचाई के कार्यक्रम बनाते हुए उन बड़े और छोटे कामों में सन्तुलन रखने की सावधानी बरतनी पड़ती है जो कि अपने कार्य और क्षेत्र की दृष्टि से एक-दूसरे के पूरक हों। हरेक इलाके में वही काम करने चाहिएं जिनके करने की सहूलियतें वहां मौजूद हों। प्रथम पंचवर्षीय योजना में सिंचाई के ७ कार्य ऐसे थे जिनकी लागत ३० करोड़ रु० से ऊपर बैठती थी, ६ ऐसे थे जिनकी लागत १० और ३० करोड़ रु० के बीच बैठती थी, ४ की ५ और १० करोड़ रु० के बीच में, ५० में से प्रत्येक की १ और ५ करोड़ रु० के बीच में और २०० की १ करोड़ रु० से कम बैठती थी। यद्यपि प्रथम योजना के समय ३४० करोड़ रु० व्यय हो गए होंगे, परन्तु १९५६ के अन्त तक अतिरिक्त सिंचाई केवल ६३ लाख एकड़ भूमि में हो पाई होगी। इसकी तुलना में, जिस क्षेत्र में अतिरिक्त सिंचाई की जा सकती है, उसका क्षेत्रफल २ करोड़

२० लाख एकड़ है। प्रथम योजना से बचे हुए जो कार्य द्वितीय योजना में पूरे करने पड़ेंगे, उन पर व्यय २०९ करोड़ रु० करना पड़ेगा और यह राशि द्वितीय योजना में सिंचाई के लिए रखे गए ४१६ करोड़ रु० के समस्त व्यय में से लेनी पड़ेगी। सिंचाई के लाभों की निरन्तरता और वित्तीय तथा आर्थिक आवश्यकता, दोनों दृष्टियों से यह उचित समझा गया कि द्वितीय योजना में सिंचाई कार्यों का चुनाव करते हुए प्राथमिकता मध्यम कार्यों को दी जाए। इसके साथ ही, सिंचाई के छोटे कार्यों को सिंचाई के समस्त कार्यक्रम में प्रमुख स्थान दिया जाता रहेगा।

२१. सिंचाई के बड़े और छोटे, दोनों कार्यों के अपने-अपने लाभ हैं। बड़े कार्यों के लाभ ये हैं कि नदियों का जो पानी बेकार चला जाता, उसका उनमें उपयोग हो जाता है, उनसे बड़े-बड़े क्षेत्रों में सिंचाई हो सकती है, कमी के वर्षों में उनसे सहायता मिलने का निश्चय रहता है और उनकी योजना प्रायः अनेक उद्देश्यों के लिए की जा सकती है। छोटे कार्यों में पूंजी कम लगती है, उनका फल जल्दी निकल आता है और उन्हें स्थानीय साधनों द्वारा ही शीघ्र पूरा किया जा सकता है। परन्तु उनसे सहायता भी सीमित ही मिलती है और उनको कार्य-क्षम अवस्था में रखने का बहुत ध्यान रखना पड़ता है। १९५२ में अधिक अन्न उपजाओ जांच समिति ने लिखा था कि सिंचाई के छोटे कार्य बार-बार बेकार हो जाते हैं। इन कार्यों पर इस समय बड़ी-बड़ी धनराशियां व्यय की जा रही हैं, इसलिए इन्हें सन्तोषजनक अवस्था में चालू रखने के लिए विशेष उपाय करने की आवश्यकता है। उचित तो यह है कि इनको ठीक अवस्था में रखने की जिम्मेदारी वही लोग उठावें जो इनसे लाभ उठाते हैं। जिन कार्यों से देहाती जनता के बड़े भाग को लाभ पहुंचता हो उनको ठीक रखने की जिम्मेदारी स्थानीय जनता को सम्मिलित रूप में उठानी चाहिए। हम सिफारिश करते हैं कि राज्य सरकारों को एक विशेष कर लगाने का अधिकार होना चाहिए। उसकी आमदनी से गांव पंचायतें अलग-अलग अथवा मिलकर, सिंचाई के इन कार्यों की जरूरी मरम्मत और पुर्जे-बदलवाई आदि का काम कर सकती हैं।

२२. **सिंचाई के लिए पानी देने में मितव्ययिता की आवश्यकता** :—प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह बात जोर देकर कही गई थी कि अब तक उपलब्ध पानी का उपयोग करते हुए जितनी सावधानी और मितव्ययिता की जाती थी, उससे अधिक की जाने की आवश्यकता है। उपलब्ध पानी का अधिकतम उपयोग करने में दो प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है—कृषि सम्बन्धी और इंजीनियरी सम्बन्धी। कृषि सम्बन्धी समस्याएं ऐसी होती हैं जैसे कि सिंचाई व्यवस्था में किस फसल को कितना पानी देना पड़ेगा, सिंचाई कितनी बार करनी पड़ेगी, खेती का ढंग क्या है और खादें कैसे दी जाती हैं आदि। इन सबका दिल्ली स्थित भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्था में और राज्यों के अन्य अनुसंधान केन्द्रों में अध्ययन किया जा रहा है। इसे द्वितीय योजना काल में भी जारी रखा जाएगा।

२३. इंजीनियरी सम्बन्धी समस्याओं में मुख्य हैं नहरों, उनकी शाखाओं, रजबहों और अन्य नाले-नालियों आदि में पानी के मर-खप जाने की। यदि इसे कम कर दिया जाए तो इस समय उपलब्ध पानी से ही अधिक बड़े क्षेत्र में सिंचाई की जा सकती है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में सिफारिश की गई थी कि सिंचाई की जल-प्रणालियों में पलस्तर करा देने की सम्भावना पर विचार किया जाए और जहां-जहां आर्थिक दृष्टि से ऐसा करना उचित प्रतीत हो वहां-वहां यह करा देखा जाए। इस दिशा में प्रगति, कुछ राज्यों को छोड़ कर, अन्यत्र अपर्याप्त ही हो पाई है। द्वितीय योजना में इस पर अधिक ध्यान दिया जाएगा। पानी की बचत जल-प्रणालियों में उचित

ताल-मेल रखने से हो सकती है। इस दिशा में और जल-प्रणालियों को ठीक रखने में राष्ट्रीय विस्तार सेवा से भी बहुतेरी सहायता मिल सकती है।

नल कूप

२४. १९५१ से पहले भारत में लगभग २,५०० नल कूप थे और इनमें से कोई २,३०० अकेले उत्तर प्रदेश में थे। इनसे लगभग १० लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती थी। प्रथम योजना में २,६५० नल कूप तो भारत-अमेरिकी प्रौद्योगिक सहयोग कार्यक्रम के अन्तर्गत, ७०० नल कूप अधिक अन्न उपजाओ कार्यक्रम के अन्तर्गत और २,४८० नल कूप राज्यों की विकास योजनाओं के भाग के रूप में लगाने का कार्यक्रम था। १९५५ के अन्त तक विभिन्न राज्यों में लगाए जाने वाले नल कूपों और उनसे हुए लाभों का विवरण इस प्रकार है :—

राज्य	भारत-अमेरिकी प्रौद्योगिक सहयोग कार्यक्रम के अन्तर्गत		अधिक अन्न उपजाओ कार्यक्रम के अन्तर्गत		राज्यों की योजनाओं के अन्तर्गत	
	निर्धारित संख्या	पूरी की हुई संख्या	निर्धारित संख्या	पूरी की हुई संख्या	निर्धारित संख्या	पूरी की हुई संख्या
बिहार ...	३८५	३७८	—	—	४२४	४२४
उत्तर प्रदेश ...	१,२७५	१,०९४	४२०	९३	१,४००	१,१९५
पंजाब ...	५३०	४४५	१५०	—	२५६	२५६
पेप्सू ...	४६०	३६९	१३०	—	—	—
बम्बई ...	—	—	—	—	४००	१९८
योग ...	२,६५०	२,२८६	७००	९३	२,४८०	२,०४३

इन नल कूपों के लग चुकने और इनका विकास हो जाने पर इनसे २० लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई हो सकेगी।

२५. नल कूप लगाने की इंजीनियरी में जो प्रौद्योगिक उन्नति हुई है उससे भूगर्भस्थ पानी के उपयोग की सम्भावनाएं बहुत बढ़ गई हैं। प्रथम योजना काल में ३५० गहरे नल कूप लगाकर भूगर्भस्थ पानी का सिंचाई के लिए उपयोग करने की सम्भावनाएं पता लगाने का एक कार्यक्रम आरम्भ किया गया था। अब तक यह परीक्षण २२ स्थानों पर करके देखा गया है। इसे द्वितीय योजना काल में भी जारी रखा जाएगा।

२६. द्वितीय योजना काल में ३,५८१ नल कूप लगाने का कार्यक्रम है। इन सब नल कूपों पर लगभग २० करोड़ रु० की लागत आएगी। इसे सिंचाई के छोटे कार्यक्रमों के व्यय में सम्मिलित कर लिया गया है, जो कि योजना के कृषि विभाग का एक अंश है। इन नल कूपों से ९,१६,००० एकड़ भूमि में सिंचाई हो सकने की आशा है। राज्यों में इन नल कूपों का वितरण इस प्रकार किया जाएगा :

1534

राज्य		नल कूपों की संख्या	अनुमानित लागत (लाख रु०)	सिंचित क्षेत्र (हजार एकड़)	नल-कूप लगाने के लिए जिन स्थानों पर परीक्षणार्थ बर्मा लगाया जाएगा, उनकी संख्या
आन्ध्र	...	—	—	—	२५
असम	...	५०	३०	१५	१५
बिहार	...	१५०	१०	१५	१
बम्बई	...	३३०	१५०	६६	१५
मध्य प्रदेश व भोपाल	...	६८	७०	३९	३०
मद्रास	...	३००	७५	६	५०
उड़ीसा	...	२५	२०	७	२०
पंजाब	...	४६६	२८०	७७	४६
उत्तर प्रदेश	...	१,५००	१,०५०	४८५	४७
पश्चिम बंगाल	...	१५०	१००	३२	३७
पेप्सू	...	२९२	१५०	१३३	५
राजस्थान	...	५०	३५	१६	५
सौराष्ट्र	...	७०	२५	१४	१०
तिरुवांकुर-कोचीन	...	—	—	—	५
दिल्ली	...	५०	२१·५	८	—
कच्छ	...	—	—	—	१०
पाण्डिचेरी	...	५०	१२·५	३	—
अन्य क्षेत्र	...	—	—	—	१४
योग	...	३,५८१	२,०२९	९१६	३५०

२७. पंजाब, पेप्सू, उत्तर प्रदेश, बिहार और बम्बई में गुजरात के उत्तरी भाग के अतिरिक्त अन्य अधिकतर क्षेत्रों में भूगर्भस्थ पानी की अवस्था का पता लगाने की आवश्यकता है। जमीन में परीक्षणार्थ बर्मा लगाकर देखने का उद्देश्य यही है। विभिन्न राज्यों में नल कूप लगाने के जो कार्यक्रम बना लिए गए हैं उनमें इन अनुसंधानों के परिणाम के अनुसार परिवर्तन करने की आवश्यकता हो सकती है।

२८. नल कूपों द्वारा सिंचाई करने में प्रायः नहरों की अपेक्षा अधिक व्यय बैठता है। योजना आयोग के सुझाव पर राज्यों ने नल कूपों की सिंचाई के आर्थिक पहलू का अध्ययन करना आरम्भ किया है। इसे व्यवस्थित रूप में जारी रखकर इसके परिणामों को प्रकाशित कर देना होगा, क्योंकि जिन प्रदेशों में नहरों द्वारा सिंचाई नहीं हो सकती उनमें नल कूपों द्वारा सिंचाई करने का महत्व बढ़ जाएगा।

२. बिजली

बिजली के स्रोत

२९. देश में पानी से कितनी बिजली उत्पन्न की जा सकती है, इसका प्रारम्भिक अन्दाजा लगाने में प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय कुछ प्रगति हुई थी, परन्तु अभी तक इसका पूरा-पूरा सर्वेक्षण नहीं किया गया। दक्षिण भारत में पूर्व और पश्चिम की ओर वहने वाली नदियों से और मध्य भारत की नदियों से कितनी बिजली पैदा की जा सकती है, इसका केवल मोटी दृष्टि से हिसाब लगाया गया है। इसी प्रकार का काम हिमालय की और उत्तरी भारत की अन्य नदियों पर आरम्भ किया जा चुका है। अन्दाजा लगाया गया है कि विभिन्न स्थानों पर पानी से जो बिजली पैदा की जा सकेगी, उसका परिमाण लगभग ३ करोड़ ५० लाख किलोवाट होगा। इसमें लगभग ४० लाख किलोवाट दक्षिण भारत की पश्चिम की ओर बहने वाली नदियों से, लगभग ७० लाख किलोवाट पूर्व की ओर प्रवाहित होने वाली नदियों से, लगभग ४० लाख किलोवाट मध्य देश की नर्मदा, ताप्ती, महानदी, ब्राह्मणी और वैतरणी जल धाराओं से और लगभग २ करोड़ किलोवाट उत्तरी और उत्तर-पूर्वी प्रदेश के गंगा, ब्रह्मपुत्र और सिन्धु आदि हिमालय से निकलने वाली नदियों से मिलेगी। दक्षिण और मध्यवर्ती प्रदेशों की बिजली का अन्दाजा उपलब्ध जानकारी और धरातल के नक्शों के आधार पर लगाया गया है। हिमालय की नदियों का अन्दाजा केवल मोटा-मोटा किया जा सकता है, क्योंकि इस प्रदेश का निरीक्षण और अध्ययन अभी किया ही जा रहा है। इस विषय का अध्ययन अन्य अनेक दृष्टियों से फिर किये जाने की आवश्यकता है। आशा है कि वह द्वितीय योजना के समय आरम्भ किया जा सकेगा। ये दृष्टियां हैं : विकास का आर्थिक पहलू, निर्माण में लगने वाला समय, बिजली की मांग कितनी होगी और इसी प्रकार की अन्य स्थानीय बातें जिनके कारण काम को सीमित रखना आवश्यक हो सकता है।

३०. पन बिजली के साथ साथ, कोयला जलाकर बिजली उत्पन्न करने वाले तापीय बिजली घर यानी थरमल बिजलीघर, इस देश में काफी समय तक बिजली का महत्वपूर्ण स्रोत बने रहेंगे। अभी तक खानों में उपलब्ध स्टीम कोयले और गैर कोक कोयले (जो कोक बनाने के काम नहीं आता) का ज्ञात परिमाण ४,००० करोड़ टन है। इसके अतिरिक्त लिगनाइट कोयला बहुत बड़ी मात्रा में मिलने की सम्भावना है, इसलिए भविष्य में जहां तक दृष्टि जा सकती है, वहां तक बिजली पैदा करने के लिए कोयला मिलने में कोई कठिनाई नहीं होगी। इस समय जितना कोयला खानों से निकलता है उसका केवल १० प्रतिशत बिजली उत्पन्न करने के काम आता है। भविष्य में कोयले की खुदाई बढ़ती ही जाएगी। इसलिए बिजली के उत्पादन में खर्च होने वाले कोयले का अनुपात १० प्रतिशत से बढ़ने की सम्भावना नहीं है। डीजल तेल से बिजली का उत्पादन इस समय केवल कहीं-कहीं छोटे कारखानों में किया जाता है। आगामी वर्षों में डीजल से बिजली का उत्पादन बड़े परिमाण में होने की सम्भावना नहीं है।

३१. इस प्रकार अगले कुछ दशकों तक बिजली की हमारी सारी आवश्यकता पूरी करने के लिए कोयले और पानी के स्रोत पर्याप्त हैं, फिर भी कुछ प्रदेश ऐसे हैं जिनमें औद्योगिक उन्नति तो शीघ्रता से हो रही है, परन्तु कोयले की खानें वहां से दूर हैं। वहां पानी की शक्ति या तो उपलब्ध ही नहीं होगी या शायद उसका विकास किया जा चुका होगा। इन प्रदेशों में बिजली पैदा करने के लिए ताप के अतिरिक्त अणु शक्ति का उपयोग भी लाभदायक हो सकता है, क्योंकि उसमें

ईंधन का खर्च बहुत कम होगा। अणु शक्ति में पूंजी का व्यय अब भी थरमल विजलीघरों की अपेक्षा कुछ अधिक होता है, परन्तु इस अधिकता को अन्य अनेक तरह किफायत करके कम किया जा सकता है। अणु शक्ति उत्पन्न करने के लिए देश में यूरेनियम और थोरियम के स्रोत पर्याप्त हैं। आशा है कि आगामी कुछ वर्षों में अन्य सूत्रों के अतिरिक्त अणुशक्ति से भी विजली मिलने लगेगी।

विकास के वर्तमान कार्य

३२. प्रथम पंचवर्षीय योजना आरम्भ होने के समय देश में लगे हुए विजलीघरों की क्षमता २३ लाख किलोवाट थी। इसमें से १७ लाख किलोवाट विजली तो उन सरकारी और निजी विजलीघरों में उत्पन्न होती थी जो काम ही विजली देने का करते थे और शेष ६ लाख किलोवाट उन औद्योगिक कारखानों में होती थी जो अपने लिए विजली आप ही पैदा करते थे। प्रथम योजना में नए उत्पादन का लक्ष्य १३ लाख किलोवाट रखा गया था, जिसमें से ११ लाख सरकारी कारखानों को और शेष दो लाख निजी विजली कम्पनियों को उत्पन्न करनी थी। सरकारी कारखाने ८ लाख किलोवाट उत्पन्न करने लगे हैं और निजी कम्पनियां २ लाख। इसके अतिरिक्त, लगभग २ लाख किलोवाट क्षमता के सरकारी कारखानों में काम पूरा हो चुका था और १९५६ की समाप्ति से पूर्व उनमें उत्पादन होने लगने की सम्भावना थी। औद्योगिक कारखानों के लिए विजली के उत्पादन का लक्ष्य कोई निर्धारित नहीं किया गया था। उनमें से कइयों ने अपने महंगे विजलीघर वन्द करके सरकारी विजली संगठनों से विजली लेना शुरू कर दिया है। फिर भी सब मिलाकर प्रथम योजना के समय निजी औद्योगिक कारखानों की विजली उत्पन्न करने की क्षमता १ लाख किलोवाट बढ़ गई थी और मार्च १९५६ तक वह ७ लाख किलोवाट हो चुकी थी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के आरम्भ और अन्त में लगे हुए विजलीघरों की क्षमता और उनसे उत्पन्न हुई विजली का विवरण नीचे की तालिका में दिया गया है :—

——		१९५०-५१	१९५५-५६	प्रथम योजना में वृद्धि का प्रतिशत
(१) कारखानों की क्षमता—लाख किलोवाट में				
जनोपयोगी विजलीघर :				
(क) राजकीय	...	६	१४	१३३
(ख) निजी	...	११	१३	१८
अपनी विजली उत्पन्न करने वाले औद्योगिक कारखाने	...	६	७	१७
योग	...	२३	३४	४८
(२) उत्पन्न विजली— करोड़ किलोवाट आवर में				
जनोपयोगी विजलीघर :				

——	१९५०-५१	१९५५-५६	प्रथम योजना में वृद्धि का प्रतिशत
(क) राजकीय	२१०·४	४५०·०	११४
(ख) निजी	३००·३	४३०·०	४३
अपनी बिजली उत्पन्न करने वाले औद्योगिक कारखाने	१४६·८	२२०·०	५०
योग ..	६५७·५	१,१००·०	६७

३३. प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय बिजली की निम्नलिखित बड़ी-बड़ी योजनाएं पूरी की गई और इन्होंने काम शुरू कर दिया :—

१. नंगल (पंजाब) ... . ४८,००० किलोवाट
२. बोकारो (बिहार) ... ... १,५०,००० किलोवाट
३. चोला (कल्याण, बम्बई) .. .. ५४,००० किलोवाट
४. खापरखेड़ा (मध्य प्रदेश) ... ... ३०,००० किलोवाट
५. मोयार (मद्रास) ... ... ३६,००० किलोवाट
६. मद्रास नगर के संयंत्र का विस्तार (मद्रास) ... ३०,००० किलोवाट
७. मच्छकुंड (आन्ध्र और उड़ीसा) .. ... ३४,००० किलोवाट
८. पथरी (उत्तर प्रदेश) ... ... १३,६०० किलोवाट
९. शारदा (उत्तर प्रदेश) . ... २७,६०० किलोवाट
१०. सेंगुलम (तिरुवांकुर-कोचीन) ... ... ४८,००० किलोवाट
११. जोग (मैसूर) ... ... ७२,००० किलोवाट

इनके अतिरिक्त, कई बड़ी योजनाओं में बहुत प्रगति हो चुकी है, जो द्वितीय पंचवर्षीय योजना के समय पूरी हो जाएंगी। भाखड़ा, हीराकुड, कोयना, चम्बल और रिहन्द इस गणना में आते हैं और इनसे द्वितीय योजना के समय १७ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न होने की क्षमता बढ़ जाने की सम्भावना है। इन चलती हुई योजनाओं की विस्तृत तालिका इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट के विवरण ५ में दी गई है।

३४. देश में "ग्रिड सिस्टम" (दूर-दूर तक के स्थानों के लिए एक केन्द्र बनाकर बिजली वितरित करने की पद्धति) का विस्तार करने के लिए तार लगाने के काम में भी सन्तोषजनक प्रगति हो चुकी है। प्रथम योजना काल में ११ किलोवाट और इससे ऊपर की शक्ति के १९,००० मील लम्बे तार लगाए जा चुके थे। १९५१ की तुलना में यह वृद्धि १०० प्रतिशत थी।

३५. जिन नगरों और ग्रामों में बिजली पहुंच गई है, उनकी संख्या में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। यह निम्नलिखित तालिका से प्रकट होगा :—

आबादी	१९५०-५१*			१९५५-५६
	१९४१ की जनगणना के अनुसार संख्या	मार्च १९५१ तक बिजली लगे गांवों की संख्या	१९५१ की जनगणना के अनुसार समस्त संख्या	मार्च १९५६ तक बिजली लगे हुओं की संख्या
१ लाख से ऊपर ...	४९	४९	७३	७३
५० हजार से १ लाख तक	८८	८८	१११	१११
२० हजार से ५० हजार तक	२७७	२४०	४०१	३६६
१० हजार से २० हजार तक	६०७	२६०	८५६	३५०
५ हजार से १० हजार तक	२,३६७	२५८	३,१०१	१,२००
५ हजार से कम ...	५,५९,०६२	२,७९२	५,५६,५६५	५,३००
	५,६२,४५०	३,६८७	५,६१,१०७	७,४००

१० हजार से कम आबादी की जिन बस्तियों में बिजली पहुंच गई, उनकी संख्या प्रथम योजना के समय दुगने से भी अधिक हो गई। ५,००० से कम आबादी के जिन गांवों को बिजली मिलने लगी, उनकी संख्या इस अवधि में २,७९२ से उठकर ५,३०० तक पहुंच गई।

३६. १९५०-५१ में हमारे देश में प्रति व्यक्ति पीछे बिजली का औसत खर्च १४ यूनिट था। उपर्युक्त बिजली के उत्पादन और वितरण का परिणाम यह हुआ कि १९५५-५६ में यह औसत २५ यूनिट तक पहुंच गया।

३७. प्रथम पंचवर्षीय योजना में सब मिलाकर बिजली की योजनाओं पर खर्च करने के लिए २६० करोड़ रुपए की राशि रखी गई थी। इस राशि में हिसाब लगाकर बिजली का वह खर्च भी शामिल कर लिया गया है जो कि बहूद्देशीय योजनाओं के समस्त व्यय का भाग था। भाखड़ा-नंगल, दामोदर घाटी, हीराकुड, चम्बल, कोयना और रिहन्द आदि जिन बड़ी-बड़ी नदी घाटी योजनाओं में तामीरी काम भारी पैमाने पर करने की जरूरत थी, उनमें शुरू-शुरू में जांच पूरी करने, योजनाओं के क्षेत्र का हिसाब बार-बार सुधारने और संगठन की आवश्यक तैयारी करने आदि में बहुत देर लग गई। इसके अतिरिक्त, विलम्ब का एक कारण यह भी हुआ कि बिजली के उत्पादन और वितरण के सब सामान के लिए हमारा देश विदेशों पर आश्रित था, और विदेशी कारखानों ने यह सामान धीरे-धीरे और देर लगाकर भेजा। इस्पात और सीमेंट आदि मूल आवश्यकता के सामानों की प्राप्ति में भी कुछ कठिनाई का सामना करना पड़ा। इन सब कठिनाइयों के बावजूद प्रथम योजना काल में बिजली उत्पादन तथा वितरण के कार्यक्रमों की प्रगति सन्तोषजनक रही।

*नोट:—१९५१ की जनगणना का परिणाम देर में प्रकाशित हुआ था, इसलिए १९५०-५१ के लिए उपलब्ध बिजली सम्बन्धी आंकड़े १९४१ की जनगणना के अनुसार ग्राम संख्या के आधार पर तैयार किए गए हैं।

विकास के भावी कार्य

३८. बिजली की योजनाएं बनाने का काम एक ऐसी प्रक्रिया है जो निरन्तर चलती रहती है। उन्हें तैयार करते हुए दीर्घकालीन लक्ष्यों पर दृष्टि रखनी पड़ती है। जब प्रथम योजना बनाई गई थी तब लक्ष्य यह माना गया था कि १५ वर्ष पश्चात ७० लाख किलोवाट बिजली की आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु अब तक जो प्रगति हो चुकी है और जिस प्रकार उद्योगों, नगरों और ग्रामों में बिजली की मांग बढ़ती जा रही है, उस सबको देखते हुए उक्त लक्ष्य को ऊंचा उठाना पड़ रहा है। इस समय द्वितीय और तृतीय योजना कालों की आवश्यकताओं का जितना अन्दाजा लगाया जा सकता है, उसके अनुसार योजना का लक्ष्य बिजली देने वाले कारखानों की क्षमता प्रतिवर्ष २० प्रतिशत वृद्धि करते जाने का रखना होगा। इस हिसाब से, हमारा कल्पित लक्ष्य यह रहना चाहिए कि १९६५ तक देश में लगे हुए सब कारखानों की क्षमता बढ़कर १ करोड़ ५० लाख किलोवाट तक पहुंच जाए। स्वभावतः यह लक्ष्य अपरिवर्तनीय नहीं हो सकता। समय-समय पर इसमें परिवर्तन करना पड़ेगा, जिससे कि यह औद्योगिक कार्यक्रमों में किए गए परिवर्तनों, औद्योगिक कारखानों के स्थानों और बिजली की मांग व खपत में हुई वृद्धि के साथ संगत हो जाए।

द्वितीय योजना के कार्यक्रम

३९. बिजली के संयंत्रों की क्षमता और उत्पादन:—द्वितीय योजना में विद्युत् विकास कार्यक्रम के निम्नलिखित तीन लक्ष्य रखे गए हैं :—

(क) वर्तमान विद्युत् संगठनों की साधारण क्रम से बढ़ती जाने वाली मांग को पूरा करना;

(ख) वितरण के क्षेत्रों में यथोचित विस्तार करने के लिए आवश्यक क्षमता का बढ़ाना; और

(ग) द्वितीय योजना के समय जो उद्योग स्थापित किए जाएंगे उनकी आवश्यकता पूरी करना।

४०. मध्यम तथा छोटे उद्योगों के साधारण विकास और व्यापारिक तथा घरेलू व्यय में वृद्धि के कारण अन्दाजा है कि १४ लाख किलोवाट बिजली की अधिक मांग होने लगेगी। इसके अतिरिक्त द्वितीय योजना में औद्योगिक उन्नति के जो नए कार्यक्रम सम्मिलित किए गए हैं उनके कारण भी १३ लाख किलोवाट बिजली की और मांग होने की आशा है। बिजली उत्पादन की कुछ क्षमता फालतू रखने की आवश्यकता और बिजलीघरों के जल-प्रवाह में ऋतु के कारण उतार-चढ़ाव होते रहने का विचार करके अन्दाजा लगाया गया है कि आगामी पांच वर्षों में बिजली का अतिरिक्त उत्पादन ३५ लाख किलोवाट करना पड़ेगा। ज्यों-ज्यों बिजली की खपत का नियमित सर्वेक्षण किया जाने लगेगा और औद्योगिक कार्यक्रमों के विस्तार का निश्चय होता जाएगा, त्यों-त्यों इन अन्दाजों पर पुनर्विचार करते रहना पड़ेगा। तैयार बिजलीघरों की समस्त क्षमता ३५ लाख किलोवाट रखने की आवश्यकता में से २९ लाख किलोवाट तो राजकीय कारखानों से मिलेगी, ३ लाख किलोवाट बिजली देने का व्यवसाय करने वाली कम्पनियों के कारखानों से, और शेष ३ लाख लिगनाइट योजना कार्य से और इस्पात, सीमेंट तथा कागज आदि के उन कारखानों से जिनके बिजली उत्पादन के संयन्त्र अपने ही होंगे। इन सब कार्यक्रमों का परिणाम यह होगा कि देश में लगे हुए बिजली के सब कारखानों की जो सामर्थ्य मार्च १९५६ में ३४ लाख

किलोवाट थी, वह बढ़कर मार्च १९६१ तक ६९ लाख किलोवाट हो जाएगी। १९५५-५६ में लगभग १,१०० करोड़ यूनिट बिजली उत्पन्न होती थी, वह बढ़कर १९६०-६१ में लगभग २,२०० करोड़ यूनिट हो जाने की आशा है। ऊपर बिजली के विकास का जो क्रम दिखाया गया है, उसके अनुसार प्रति व्यक्ति पीछे बिजली की खपत का परिमाण, प्रथम योजना की समाप्ति के समय के २५ यूनिट से बढ़कर, द्वितीय योजना की समाप्ति पर लगभग ५० यूनिट हो जाएगा। उत्पादन की क्षमता और उत्पादित बिजली में वृद्धि करने का जो क्रम सोचा गया है, उसका विवरण इस प्रकार है :—

——	१९५५-५६	१९६०-६१	वृद्धि का द्वितीय योजना में प्रतिशत
(१) स्थापित क्षमता (लाख किलोवाट में)			
जनोपयोगी बिजलीघर :			
(क) राजकीय	१४	४३	२०७
(ख) निजी	१३	१६	२३
अपनी बिजली पैदा करने वाले औद्योगिक कारखाने ...	७	१०	४३
योग ...	३४	६९	१०३
(२) उत्पादित बिजली (करोड़ किलोवाट आवर में)			
जनोपयोगी बिजलीघर :			
(क) राजकीय	४५०	१,३५०	२००
(ख) निजी	४३०	५३०	२३
अपनी बिजली पैदा करने वाले औद्योगिक कारखाने	२२०	३२०	४५
योग ...	१,१००	२,२००	१००

४१. द्वितीय योजना के सरकारी क्षेत्र में, बिजली के संयंत्रों की क्षमता में २९ लाख किलोवाट की वृद्धि करने का जो विचार है, उसमें से २१ लाख किलोवाट तो पनबिजली के संयंत्रों से और ८ लाख किलोवाट तापीय संयंत्रों से उत्पन्न की जाएगी। इस ८ लाख किलोवाट में कुछ भाग डीज़ल के संयंत्रों का भी है। (नए संयंत्रों और पुरानों में वृद्धि को मिलाकर) द्वितीय योजना काल में पानी या भाप से चलने वाले चवालीस उत्पादक संयंत्र लगाने का विचार है। इनकी सूची परिशिष्ट के विवरण ५ में दी गई है। इसमें से २५ पनबिजलीघर और १९ थरमल बिजलीघर होंगे। अधिकतर नई बिजली योजनाओं का परिणाम पांच वर्ष की अवधि में ही दिखलाई पड़ने लगेगा। परन्तु कुछ योजनाओं की जांच और भी की जाने की आवश्यकता है। उन्हें योजना काल के उत्तरार्ध में आरम्भ किया जा सकेगा। उनके लिए वित्तीय व्यवस्था भी इसी हिसाब से की गई है। राज्यों के कार्यक्रमों पर विचार करते हुए यह ध्यान रखा गया है कि

उनमें से अधिकतर के लाभ द्वितीय योजना काल में ही मिलने लगें और जिन क्षेत्रों में उनसे बिजली दी जाए उनकी बढ़ती हुई आवश्यकता उनसे पूरी होती चली जाए। योजना के निजी विभाग में, कलकत्ता, अहमदाबाद और टाटा के बड़े बिजली कारखानों में तो विशेष वृद्धि की ही जाएगी, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और सौराष्ट्र के भी छोटे कारखानों का कुछ विस्तार किया जाएगा। इन सब वृद्धियों का योग लगभग ३ लाख किलोवाट होता है। विद्युत् व्यवसायी कम्पनियों के जिन कारखानों में विशेष वृद्धियां की जाएंगी, उनकी सूची परिशिष्ट के विवरण ५ में दी गई है।

४२. *वित्तीय व्यवस्था*:—प्रथम योजना के समय जो काम आरम्भ कर दिए गए थे, उनमें से कई इस समय निर्माण की विभिन्न अवस्थाओं में हैं। इन्हें द्वितीय योजना की अवधि में पूरा करने के लिए १६० करोड़ रु० की आवश्यकता होगी। जो नई योजनाएं द्वितीय योजना काल में आरम्भ की जाएंगी, उन पर २४५ करोड़ रु० व्यय करने की बात सोची जा रही है। इसके अतिरिक्त, २२ करोड़ रु० उन योजनाओं पर व्यय किया जाएगा, जो आरम्भ तो द्वितीय योजना काल में कर दी जाएंगी, परन्तु जिनसे लाभ तीसरी योजना के समय होने लगेगा। इस समय चल रहे और नए कामों पर होने वाले व्यय का और उनके लाभों का विवरण निम्नलिखित तालिका में दिया गया है :—

—	द्वितीय योजना में होने वाला व्यय करोड़ रु०	द्वितीय योजना के समय होने वाले लाभ (लाख किलोवाट)	तृतीय योजना के समय मिलने वाले लाभ
प्रथम योजना से बचे हुए और द्वितीय योजना में पूरे होने वाले काम	१६०	१७	—
ऐसे नए काम जिनका लाभ द्वितीय योजना के समय ही मिलने लगेगा	२४५	१२	—
ऐसे नए काम जिनका लाभ तृतीय योजना के समय मिलेगा	२२	—	६
योग ...	४२७	२९	६

उपर्युक्त तालिका में तीसरे नम्बर पर जिन कामों का उल्लेख किया गया है, उनका आरम्भ द्वितीय योजना के पिछले भाग में किया जाएगा और उन्हें पूरा करने के लिए तृतीय योजना के समय १४५ करोड़ रु० की आवश्यकता पड़ेगी। इनमें से अधिक महत्वपूर्ण के नाम इस प्रकार हैं: सिलेरू (आन्ध्र), राना प्रतापसागर (राजस्थान), उकाई (बम्बई) और पाम्बा या प्रिंगलकुथु (तिरुवांकुर-कोचीन)। द्वितीय योजना में विभिन्न राज्यों के बिजली कार्यक्रमों का विस्तृत विवरण परिशिष्ट के विवरण ६ में दिया गया है।

४३. ४२७ करोड़ रु० की जिस पूंजीगत परिव्यय की चर्चा पिछले पैराग्राफ में हुई है, उसका विभाजन उत्पादन, वितरण के साधनों और वितरण की व्यवस्था में लगभग इस प्रकार होगा:—

	करोड़ रु०
बिजली उत्पादन	२३५
उत्पादन केन्द्र से वितरण केन्द्र तक पहुंचाने पर	९२
नगरों में वितरण की व्यवस्था	२५
छोटे कस्बों और ग्रामों में वितरण पर	७५
	४२७

४४. पूंजी के व्यय की दृष्टि से द्वितीय योजना में सम्मिलित की गई नई विद्युत उत्पादन योजनाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है:—

१० करोड़ से ऊपर की लागत की योजनाएं	१०
५ और १० करोड़ के बीच की लागत की योजनाएं	४
१ और ५ करोड़ के बीच की लागत की योजनाएं	१८
१ करोड़ से कम लागत की योजनाएं	१२
	४४

४५. निजी बिजली कम्पनियों द्वारा द्वितीय योजना के समय लगभग ४२ करोड़ रु० की पूंजी लगाए जाने की सम्भावना है। इसमें से २९ करोड़ रु० तो वे उत्पादक यन्त्र लगाने पर व्यय करेंगी और शेष राशि वितरण के वर्तमान साधनों और उसकी व्यवस्था का विस्तार करने पर।

४६. **पनबिजली और तापीय बिजली योजनाएं** :—किसी भी स्थान पर पनबिजली या तापीय बिजली की योजना आरम्भ करने का निश्चय यह देखकर किया जाता है कि वहां बिजली की आवश्यकता शीघ्र होगी या विलम्ब से। इस प्रकार, द्वितीय योजना में कुछ स्थानों पर बिजली की आवश्यकता तुरन्त पूरी करने के लिए अनेक मध्यम वर्ग के तापीय बिजलीघर बनाने के कार्यक्रम सम्मिलित कर लिए गए हैं। पानी, भाप और डीज़ल तेल के बिजलीघरों की क्षमता मार्च १९५१ और मार्च १९५६ में क्या थी और मार्च १९६१ में कितनी हो जाने की आशा है, इसका विवरण निम्नलिखित है:—

बिजली घरों की स्थापित क्षमता—(लाख किलोवाट में)

—	मार्च १९५१ में	प्रथम योजना में वृद्धि	मार्च १९५६ में	द्वितीय योजना में वृद्धि	मार्च १९६१ में
पानी ...	५·६	४·०	९·६	२१·०	३०·६
भाप ...	१०·०	५·५	१५·५	११·०	२६·५
डीज़ल ...	१·५	०·६	२·१	०·२	२·३
योग ...	१७·१	१०·१	२७·२	३२·२	५९·४*

*टिप्पणी:—इन अंकों में अपनी बिजली आप तैयार करने वाले कारखानों की क्षमता सम्मिलित नहीं की गई। उनके प्रायः सब बिजलीघर भाप से चलते हैं।

४७. द्वितीय योजना के लिए जो विकास कार्यक्रम तैयार किया गया है, उसमें पनबिजली की क्षमता तापीय बिजली से दुगनी रखने की कल्पना की गई है। आशा है कि पनबिजलीघर बनाने पर जोर अभी और भी कुछ समय तक दिया जाता रहेगा। साथ ही, तापीय बिजली बहुत-कुछ वर्तमान गति से ही बढ़ती रहेगी। उसकी विशेष आवश्यकता दो प्रयोजनों से है : एक तो पन-बिजलीघरों के उत्पादन में ऋतु के कारण होने वाले भारी उतार-चढ़ाव का सामना करने के लिए और दूसरे, जिन प्रदेशों में पानी की ताकत नहीं मिल सकती उनकी आवश्यकता पूरी करने के लिए।

४८. इस समय जनता को बिजली देने वाले बिजलीघरों में डीज़ल तेल के संयंत्रों की क्षमता, समस्त क्षमता का लगभग ८ प्रतिशत है। इसे धीरे-धीरे घटाकर, इसके स्थान पर ग्रिड सिस्टमों (दूर-दूर तक के स्थानों के लिए एक केन्द्र बनाकर बिजली वितरित करने की पद्धति) से बड़ी मात्रा में बिजली दी जाने लगेगी। नवीन क्षमता में कुछ वृद्धि छोटे-छोटे अनेक नए बिजली-घरों से भी होगी, जो कि आरम्भिक कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए अथवा अलग-अलग स्थानों पर खोले जाएंगे।

४९. देश में अणु शक्ति से विद्युत् उत्पादन करने के आर्थिक पहलू का अध्ययन, केन्द्रीय सरकार का अणु शक्ति विभाग कर रहा है। अब तक जितना अध्ययन हुआ है उससे प्रतीत होता है कि विद्युत् उत्पादन के लिए अणु शक्ति का प्रयोग उन स्थानों पर लाभदायक सिद्ध हो सकता है जो कि कोयला खानों से बहुत दूर हैं या जहां जल-शक्ति उपलब्ध नहीं है। यह अत्यन्त आवश्यक है कि अणु शक्ति का विकास करने के क्षेत्र में भारत आगे रहे, और अणु शक्ति विभाग ने इसके लिए विस्तृत कार्यक्रम भी तैयार कर लिया है।

५०. **ग्रिड सिस्टम और बिजली ट्रांसमीशन लाइनें:**—गत दस वर्षों में बिजली का अधिक-तर विस्तार ग्रिड सिस्टमों से हुआ है। इनके द्वारा बिजली तो बहुत विस्तृत क्षेत्रों में दूर-दूर तक पहुंचा दी जाती है, परन्तु उसका उत्पादन केवल कुछ समर्थ और बड़े बिजलीघरों में ही होता है। ये बिजलीघर पनबिजली के हो सकते हैं, तापीय बिजली के भी और दोनों के मिले-जुले भी। ये कैसे हों, यह इस बात पर निर्भर करता है कि इनके प्रदेश में कौन-से साधन उपलब्ध हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान पर बिजली ले जाने की यान्त्रिक विधियों में उन्नति हो जाने के कारण, अब बिजली बहुत बड़ी मात्रा में, बहुत कम व्यय से, ३०० से ४०० मील की दूरी तक ले जाई जा सकती है। इसलिए अब पनबिजली की शक्ति को विभिन्न क्षेत्रों में एकत्र करके, उसका उपयोग दूर-दूर तक बिखरे हुए उद्योगों में किया जा सकता है। इसी प्रकार, कोयला खानों के क्षेत्रों में तापीय बिजली बड़े पैमाने पर अल्प व्यय से—घटिया किस्म के कोयले का प्रयोग करके भी—उत्पन्न करके, उसे ग्रिड सिस्टम के तारों द्वारा सैकड़ों मील तक ले जाया जा सकता है। इससे यह भी सम्भव हो जाएगा कि बड़े-बड़े नगरों और भारी मात्रा में बिजली की खपत करने वाले औद्योगिक केन्द्रों को परस्पर जोड़ने के लिए जो तार डाले जाएं, उन्हीं के द्वारा मार्ग में पड़ने वाले देहातों को भी सस्ती दरों पर बिजली दे दी जाए। इसके अतिरिक्त, ग्रिडों को भी एक-दूसरे के साथ जोड़कर, बिजली के परस्पर आदान-प्रदान, अधिक कुशलता तथा मितव्ययिता, विशेष आवश्यकता के समय के लिए रखी हुई अतिरिक्त क्षमता में कमी कर देने और उपलब्धि अधिक विश्वसनीय हो जाने के लाभ उठाए जा सकते हैं। भारत में इस प्रकार के परस्पर सम्बन्धों के कुछ उदाहरण ये हैं:—(१) मद्रास राज्य में पाइकाड़ा, मेत्तर, पापनाशम और मद्रास नगर के बिजली घर; (२) मद्रास और तिरुवांकुर-कोचीन राज्यों के बीच में दो जुड़ी हुई तार-लाइनें; (३) जोग (मैसूर) और

तुंगभद्रा (आन्ध्र) की विजली व्यवस्थाओं का परस्पर सम्बन्ध; (४) नंगल और दिल्ली के विजलीघरों का परस्पर मेल, इन दोनों को भविष्य में पश्चिमी उत्तर प्रदेश के विजलीघरों के साथ भी जोड़ा जा सकेगा; और (५) दामोदर घाटी निगम (विहार) के पानी और तापीय विजलीघरों का कलकत्ता शहर के विजलीघरों से सम्बन्ध। भविष्य में इस प्रकार के पारस्परिक सम्बन्ध और अधिक संख्या में स्थापित किए जाएंगे और हमारी सिफारिशें तो यह हैं कि विभिन्न राज्यों के ग्रिड सिस्टमों का आयोजन किया ही इस प्रकार जाए कि यथाशक्ति अधिक से अधिक विजलीघरों का परस्पर सम्बन्ध जोड़ा जा सके, और इस प्रकार अन्त में एक अखिल भारतीय ग्रिड की स्थापना कर दी जाए।

५१. द्वितीय योजना में २२० के० वी० से लेकर ११ के० वी० तक की ३५,००० मील लम्बी ट्रांसमीशन और सब-ट्रांसमीशन तारें डालने की योजना बनाई गई है। ये तारें भारी और हल्की दोनों मात्राओं में विजली पहुंचाने का काम करेंगी। इससे इन तारों की लम्बाई प्रथम योजना के समय की लम्बाई से दुगनी हो जाएगी।

छोटे नगरों और देहातों में विजली

५२. भारत में ५८५ मध्यम और बड़े नगर ऐसे हैं जिनमें से प्रत्येक की आवादी २०,००० से अधिक है। इनमें से प्रथम योजना की समाप्ति तक ५५० में विजली पहुंच चुकी थी। अगले वर्ग के, अर्थात् १०,००० से २०,००० तक की आवादी वाले नगरों की संख्या ८५६ है। इनमें से अब तक ३५० में विजली पहुंची है। १०,००० या इससे ऊपर की आवादी के शेष सब नगरों में द्वितीय योजना की समाप्ति तक विजली पहुंचा दी जाएगी। छोटे नगरों का विकास आस-पास के देहातों की उन्नति के लिए भी आवश्यक है।

५३. १०,००० से कम आवादी के नगरों और गांवों में विजली पहुंचाने में अनेक कठिन आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, विशेष करके गांवों में। अधिकतर गांव उत्पादन केन्द्रों से दूर-दूर हैं। अन्दाज़ा लगाया गया है कि यदि देश के सब गांवों में विजली पहुंचाई जाए तो प्रति गांव पीछे विजली वितरण करने की तारें डालने और सब-स्टेशन बनाने का खर्च ही ६० से ७० हज़ार रु० तक बैठेगा, और इस प्रकार सारे देश में वह ३,००० करोड़ रु० से भी ऊपर जा पहुंचेगा। इसलिए देहातों में विजली पहुंचाने का काम क्रमशः ही करना पड़ेगा। द्वितीय योजना में विजली के कार्यक्रमों के लिए जो ४२७ करोड़ रु० की राशि रखी गई है, उसमें से ७५ करोड़ रु० छोटे नगरों और ग्रामों में विजली पहुंचाने पर व्यय किए जाएंगे।

५४. शहरी इलाकों की तुलना में, देहातों में विजली पर 'वोझ का अभाव' रहता है। इस कारण देहातों तक विजली पहुंचाने में, पूंजीगत व्यय और उसका प्रवन्ध करने व उसे ठीक रखने के व्यय बहुत ऊंचे बैठते हैं। इस समस्या को हल करने का एक व्यावहारिक उपाय यह है कि जो गांव विजली वाले शहरों के पड़ोस में पड़ते हैं उन तक उन शहरों से विजली पहुंचा दी जाए। इसी प्रकार जहां कहीं हो सके वहां ग्रिडों के एक स्थान से दूसरे स्थान तक विजली ले जाने वाले तारों से अड़ोस-पड़ोस के गांवों तक विजली पहुंचाने के तार लगा दिए जाएं। इसके अतिरिक्त, विजली के कार्यक्रमों का वित्तीय हिसाव लगाते हुए शहरी और देहाती कार्यक्रमों को मिला दिया जाए, जिससे कि शहरों और कारखानों के ग्राहकों से हुई आमदनी में से जो बचत हो उसका उपयोग देहात के ग्राहकों के लिए विजली की दरें कम कर देने में किया जा सके। इस

नीति की सफलता के लिए शहरों और कारखानों के ग्राहकों के लिए दरों में परिवर्तन कर देना उचित ही है। देहातों में बिजली पहुंचाने के कार्यक्रमों की सफलता का निर्णय करते हुए, लगाई हुई पूंजी पर लाभ मिलने की साधारण कसौटी सदा लागू नहीं की जा सकती। कुछ विशेष मामलों में, जहां कि बिजली लग जाने पर बस्ती को बहुत लाभ पहुंचने की सम्भावना हो, वहां यदि राज्य सरकारों की वित्तीय स्थिति इजाजत दे तो वे ऐसे कार्यक्रमों का भी समर्थन कर सकती हैं, जिनके दस वर्ष की साधारण अवधि में स्वावलम्बी हो जाने की आशा न हो।

५५. १९५४-५५ में बिजली की सुविधाओं का विस्तार करने का एक कार्यक्रम इस उद्देश्य से शुरू किया गया था कि लोगों को रोजगार मिल सके। इस कार्यक्रम का लक्ष्य यह था कि जीविकोपार्जन के अवसर बढ़ाने के लिए इन तीन प्रकार के स्थानों पर अधिक बिजली दी जाए: (१) उन छोटे और मध्यम कस्बों में जिनकी आबादी जल्दी-जल्दी बढ़ रही हो; (२) पहले से बिजली लगे हुए नगरों के उपनगरों में; और (३) सामुदायिक विकास योजना के उन क्षेत्रों में जिनमें चतुर कारीगरों और स्थानीय साधनों या नए विकास कार्यक्रमों के कारण छोटे उद्योगों के बिजली से चलने लगने पर उनमें अधिक लोगों को रोजगार मिलने की सम्भावना हो। इस काम के लिए केन्द्रीय सरकार ने २० करोड़ रु० की राशि अलग रख दी थी ताकि उसमें से राज्य सरकारों को वापसी की बहुत आसान शर्तों पर लम्बी मियाद के ऋण दिए जाएं। इस कार्यक्रम में डीजल तेल से चलने वाले बिजलीघर खोलना और बिजली के वितरण की वर्तमान व्यवस्थाओं का विस्तार करना आदि शामिल हैं। इस समय इसे क्रियान्वित किया जा रहा है और अब से १८ महीनों में इसके पूरा हो जाने की आशा है। इस प्रकार की सहायता का देना, द्वितीय योजना काल में भी जारी रखने का विचार है।

५६. देहाती कार्यक्रमों की सफलता के लिए आवश्यक है कि राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं के और अन्य क्षेत्र कार्यकर्ता जनता का अधिक से अधिक सहयोग प्राप्त करने के संगठित प्रयत्न करें। सामुदायिक विकास सेवाओं के कार्यकर्ताओं को चाहिए कि जिन क्षेत्रों में पम्पों से पानी खींचकर सिंचाई करने या छोटे उद्योगों को बिजली द्वारा चलाने की मांग बढ़ाई जा सकती हो उनमें वे ग्रामीणों की सहायता से बिजली की वर्तमान और भविष्य में सम्भावित आवश्यकताओं का सावधानीपूर्वक सर्वेक्षण करें और ऐसे कार्यक्रम बनावें जिनसे कि ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में बिजली का उपयोग करके अधिकतम लाभ उठाया जा सके। कई जगह लोग व्यय में कुछ हिस्सा बंटा लेने के अतिरिक्त, निर्माण के काम में श्रम द्वारा भी सहायता कर सकेंगे। इसी प्रकार, आसान शर्तों पर मोटर और पम्प आदि खरीदने और चलाने के लिए उपभोक्ताओं की सहकारिता समितियों का संगठन किया जा सकता है। द्वितीय योजना में १०,००० से ऊपर गांवों तक बिजली पहुंचा देने की व्यवस्था रखी गई है, परन्तु सहकारिता के आधार पर घनिष्ठ प्रयत्न के द्वारा वर्तमान वित्तीय साधनों से ही और अधिक फल की प्राप्ति की जा सकती है।

५७. ग्रिड सिस्टम का खासा विस्तार होते जाने पर भी, देहातों तक बिजली के तार अच्छी तरह पहुंचने में अभी बहुत समय लगेगा। जहां कहीं खेती और छोटे उद्योगों में बिजली का उपयोग करने की गुंजाइश हो, वहां डीजल से चलने वाले बिजलीघर लगाकर या यदि स्थान पहाड़ी हो तो छोटे पनबिजलीघर बनाकर स्थानीय योजनाएं शुरू की जा सकती हैं। यहां यह जिक्र कर देना अप्रासंगिक न होगा कि हाल में वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद

ने हवाई पंखों से यन्त्र चलाकर देखने के परीक्षण आरम्भ किए हैं। आशा है कि समुद्र तट के जिन स्थानों में वर्ष के कुछ समय हवा का अच्छा जोर रहता है, उनमें शीघ्र ही काम देने योग्य छोटे बिजलीघर बनाए जा सकेंगे। छोटे पैमाने पर बिजली प्राप्त करने के ये सब कार्यक्रम, यदि लोग सहकारिता के आधार पर काम करें, तो राज्य सरकारों से थोड़ी-बहुत वित्तीय और टेकनीकल सहायता लेकर स्वयं पूरे कर सकते हैं। इन योजनाओं को, इन स्थानों के चौमुखी विकास का भाग मानकर चलाना चाहिए, जिससे इन स्थानों पर उपभोग्य वस्तुओं के उद्योगों का विकास भी साथ-साथ किया जा सके। इन स्थानों पर बिजली के खर्च को देखकर ऐसी व्यवस्था भी की जा सकती है कि बिजलीघरों और बिजली के तारों को केवल कुछ नियत समय तक काम देने के लिए लगाया जाए और फालतू बिजली का प्रबन्ध न रखा जाए, जिससे अधिकतम मितव्ययिता से काम चल सके। जहां अवस्थाएं अनुकूल हों, वहां इस प्रकार परीक्षण के लिए मार्ग-दर्शक योजनाएं शुरू करके देखा जा सकता है।

५८. निम्नलिखित तालिका में यह दिखाया गया है कि आबादी के हिसाब से १९६१ तक कितने नगरों और ग्रामों में बिजली पहुंच जाएगी :—

आबादी	१९५१ की जनगणना के अनुसार कुल संख्या	मार्च १९५६ तक बिजली लगे नगरों-ग्रामों की संख्या	मार्च १९६१ तक बिजली लगे नगरों-ग्रामों की संख्या
१ लाख से अधिक	७३	७३	७३
५० हजार से १ लाख तक	१११	१११	१११
२० हजार से ५० हजार तक ...	४०१	३६६	४०१
१० हजार से २० हजार तक ...	८५६	३५०	८५६
५ हजार से १० हजार तक ...	३,१०१	१,२००	२,६५९
५ हजार से कम	५,५६,५६५	५,३००	१३,९००
योग ...	५,६१,१०७	७,४००	१८,०००

उपर्युक्त तालिका से प्रकट है कि आगामी पांच वर्षों में लगभग १०,६०० जिन अतिरिक्त नगरों और ग्रामों में बिजली लगाने का कार्यक्रम बनाया गया है, उनमें से ८,६०० ऐसे हैं जिनकी आबादी ५,००० से कम है।

बिजली का उपयोग

५९. औद्योगिक उन्नति पर अधिक बल देने का और आधारभूत उद्योगों का बड़े पैमाने पर विकास करने का फल यह होगा कि बिजली का उपयोग करने वाले वर्गों की उपयोग प्रणाली का रूप धीरे-धीरे बदलता जाएगा। यह तो अब भी दिखाई देता है कि उद्योगों में बिजली की

खपत बढ़ती जा रही है। द्वितीय योजना के अन्त तक इसके और भी ज्यादा हो जाने की सम्भावना है। यह बात निम्नलिखित विवरण से प्रकट हो जाएगी :—

—	१९५०		१९५५		१९६०	
	खपत करोड़ किलोवाट आवर में	समस्त खपत का प्रतिशत	खपत करोड़ किलोवाट आवर में	समस्त खपत का प्रतिशत	अनुमानित खपत करोड़ किलोवाट आवर में	समस्त खपत का प्रतिशत
घरेलू	५२·५	१२·७	८०	११·५	१४८·०	९·०
व्यापारिक	३०·९	७·४	५०.	७·१	६८·४	६·०
सड़कों आदि पर रोशनी	६·०	१·५	११	१·६	२५·०	१·५
औद्योगिक	२६०·९	६२·७	४६०	६५·७	१२००·०	७२·०
यातायात	३०·९	७·४	४४	६·३	६५·५	४·०
सिचाई	१६·२	३·९	२६	३·७	६५·५	४·०
शहरों में पानी की टंकियां	१८·२	४·४	२९	४·१	५७.९	३·५
योग ...	४१५·६*	१००·०	७००*	१००·०	१६६०·०*	१००·०

उद्योगों द्वारा बिजली की खपत में उल्लेखनीय वृद्धि होगी। १९५५ में यह खपत ४६० करोड़ यूनिट थी। १९६० में यह बढ़कर १,२०० करोड़ यूनिट हो जाएगी। देहातों में बिजली की मुख्य मांग सिचाई का पानी पम्पों द्वारा उठाने के लिए होती है। देहातों में अधिकाधिक बिजली लगते जाने के साथ-साथ वहां इस काम के लिए बिजली की खपत खासी बढ़ जाएगी। सिचाई के बाद देहातों में बिजली की खपत छोटे उद्योगों में होती है। अन्दाजा है कि समस्त बिजली का ७·५ प्रतिशत देहातों में खपने लगेगा।

३. बाढ़ नियंत्रण

६०. देश के कुछ भागों में बार-बार बाढ़ आकर भारी हानि कर देती है। उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और असम के बड़े-बड़े क्षेत्र सैलाब में डूब जाते हैं और कई शहरों को प्रति वर्ष जमीन के कटाव से नुकसान उठाना पड़ता है। यद्यपि जम्मू व काश्मीर, पंजाब, पेप्सू, उड़ीसा और आन्ध्र में यह आपत्ति बार-बार नहीं आती, परन्तु इन राज्यों के भी कुछ प्रदेशों को कभी-कभी बाढ़ से हानि उठानी पड़ जाती है। दक्षिण के कुछ प्रदेश समुद्र तट की नदियों और समुद्र के पानी में डूब जाते हैं।

६१. कई नदियां कई-कई राज्यों में से गुजरती हैं इसलिए बाढ़ नियन्त्रण की समस्या अनिवार्य रूप से अन्तर्राज्यीय समस्या है। अतः १९५४ में एक केन्द्रीय बाढ़ नियन्त्रण बोर्ड या

*नोट:—इन अंकों से प्रकट होता है कि बिजली देने वाले कारखानों ने कितनी यूनिटें बेचीं। इनमें वह बिजली शामिल नहीं है जो अपनी बिजली पैदा करने वाले कारखानों में उत्पन्न हुई। वे अपनी सारी बिजली आप ही खपा लेते हैं।

संगठन इसलिए किया गया कि वह बाढ़ नियन्त्रण का एक समन्वित कार्यक्रम बनावे और राज्यों द्वारा प्रस्तुत योजनाओं पर विचार करे। इस केन्द्रीय बाढ़ नियन्त्रण बोर्ड की टेकनीकल मामलों में और नदी-प्रवाह क्षेत्रों के लिए एक सम्मिलित योजना तैयार करने में सहायता करने के लिए चार नदी आयोग बनाए गए थे, पहला, गंगा के लिए, दूसरा ब्रह्मपुत्र के लिए, तीसरा उत्तर-पश्चिम की नदियों के लिए, और चौथा मध्य भारत की नदियों के लिए। केन्द्रीय जल और विद्युत् आयोग में भी एक बाढ़ प्रशाखा खोल दी गई है। यह बाढ़ नियन्त्रण की योजनाएं तैयार करने, सम्मिलित योजनाएं बनाने और राज्यों से आए हुए सुझावों की परीक्षा करने में आयोग की सहायता किया करेगी।

६२. प्रथम पंचवर्षीय योजना तैयार करते समय ऐसी कल्पना की गई थी कि बाढ़ नियन्त्रण की योजनाएं बहूद्देशीय नदी योजनाओं का ही अंग रहेंगी, और इसलिए उसमें बाढ़ नियन्त्रण कार्यक्रमों की पृथक व्यवस्था नहीं की गई थी। परन्तु १९५४ में जो बाढ़ें आईं, वे बहुत भयंकर थीं। उन्होंने इस आवश्यकता की ओर ध्यान आकृष्ट कराया कि बाढ़ नियन्त्रण की समस्या का हल एक स्वतन्त्र और समन्वित योजना के रूप में किया जाए, और उसे सिंचाई और बिजली के विकास कार्यक्रमों के साथ न मिलाया जाए। इसलिए प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय पूरा करने के लिए कुछ कार्यों की एक अस्थायी योजना तैयार की गई, और १६.५ करोड़ रु० बाढ़ नियन्त्रण योजनाओं के लिए राज्य सरकारों को सहायतार्थ ऋण के रूप में देने को पृथक रख दिए गए। अनुमान है कि इस राशि में से लगभग ८ करोड़ रु० प्रथम योजना के समय खर्च हो गए होंगे।

६३. स्पष्ट है कि बाढ़ों को पूर्णतया न तो रोका ही जा सकता है, न वैसा करना उचित ही है। बाढ़ के साथ बारीक मिट्टी बहकर आती है और उससे उस भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है जो बाढ़ के पानी में डूब जाती है। परन्तु कुछ वर्षों में जब बाढ़ का वेग असाधारण हो जाता है तब वे भारी विनाश का कारण बन जाती हैं। बाढ़ों के बार-बार आगमन और उनसे होने वाली हानि को रोकने के लिए, उनकी तीव्रता को नियन्त्रित कर देना चाहिए। इसके लिए नियमित कार्यक्रम बनाना आवश्यक है। साधारणतया इन उपायों का अवलम्बन किया जाता है :—

(१) बांध बना देना;
(२) पानी एकत्र करने के लिए जलाशयों का बना देना, विशेषकर सहायक नदियों पर;
(३) निरोधक प्रवाह-स्थल बना देना, जिनमें कि बाढ़ का फालतू पानी कुछ समय के लिए रुका रह जाए;
(४) एक नदी के पानी का प्रवाह दूसरी में मोड़ देना;
(५) नदी के मोड़ काटकर उसका ढलान बढ़ा देना;
(६) नदी के जिन भागों में गाद एकत्र हो जाने के कारण प्रवाह रुक गया हो, उन्हें खोदकर साफ कर देना;
(७) खास-खास इलाकों को कटाव से बचाने के लिए ठोकर और दीवार आदि बना देने के स्थानीय उपाय कर देना; और
(८) वन रोपण और समोच्च बांध बनाना।

६४. कौन-सा उपाय कहां उपयुक्त होगा, इसका निर्णय बहुत-सी बातों पर निर्भर करता है और बिना सब हालात को जाने नहीं किया जा सकता। किसी भी नदी के प्रवाह-स्थल के लिए कोई सन्तुलित योजना बनाना, इंजीनीयरी, आर्थिक और सामाजिक दृष्टियों से, बहुत उलझन भरी समस्या होता है। एक ही प्रकार के कार्यक्रम सब नदियों के लिए उपयुक्त नहीं हो सकते, प्रत्येक नदी के प्रवाह-स्थल के सब हालात देखकर प्रत्येक के लिए पृथक-पृथक कार्यक्रम बनाने पड़ते हैं, और सब दृष्टियों से उपयुक्त योजना बनाने में मुख्य कठिनाई यह होती है कि धरातल, हवा-पानी, भू-गर्भ और जल-प्रवाह के विषय में आधारभूत विवरण उपलब्ध नहीं होता।

६५. आवश्यक जानकारी न मिलने के कारण, बाढ़ नियन्त्रण की योजनाओं के लिए अब तक सब दृष्टियों से उपयोगी कोई योजना नहीं बनाई जा सकी। सर्वेक्षणों का पूरा हो जाना और आवश्यक जानकारी का संग्रह, प्रारम्भिक महत्व के काम हैं। इनके पश्चात ही बाढ़ नियन्त्रण के उपयुक्त कार्यक्रम बनाने में शीघ्रता की जा सकेगी। जब तक ये काम नहीं होते तब तक तत्काल आवश्यकता पूरी करने के लिए केवल ऐसी रक्षक व्यवस्थाएं की जा सकती हैं, जिन्हें अन्त में सब दृष्टियों से उपयोगी योजनाओं का भाग बना लिया जाए।

६६. हाल में, सिंचाई तथा बिजली मन्त्रालय ने बाढ़ नियन्त्रण के कार्यक्रमों की एक रूपरेखा तैयार की है। उसे तीन चरणों में बांटा गया है :—

(१) तात्कालिक:—इसमें खोज और योजनाएं तथा उनके व्यय अनुमान बनाने का काम किया जाएगा। सम्भव है कि कुछ स्थान चुनकर, उनमें दीवारें, ठोकरें और बांध बना दिए जाएं।

(२) अल्पकालिक :—इसमें बांध बनाने और जल-प्रणालियां सुधारने का काम किया जाएगा। इससे जिन स्थानों पर बाढ़ें आती रहती हैं, उनके एक बड़े भाग की रक्षा हो सकेगी।

(३) दीर्घकालिक :—इसमें नदियों और सहायक नदियों पर पानी एकत्र करने के जलाशय बनाए जाएंगे। यह काम बहुद्देशीय-नदी योजनाओं के सिंचाई और बिजली के कार्यक्रमों के साथ किया जाएगा।

६७. द्वितीय योजना में ६० करोड़ रु० तो तात्कालिक और अल्पकालिक कार्यों के लिए रखा गया है और ५ करोड़ रु० सर्वेक्षण और जानकारी एकत्र करने के लिए। भूमि संरक्षण और वनरोपण, बाढ़ नियन्त्रण के महत्वपूर्ण उपाय हैं। बाढ़ नियन्त्रण के किसी भी सुझाव पर विचार करते हुए इन पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए।

६८. बाढ़ नियन्त्रण के कामों के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभ तो अनेक हैं, परन्तु साथ ही यह भी बतला देना आवश्यक है कि कुछ परिस्थितियों में इनका परिणाम उलटा भी निकल सकता है। बाढ़ के साथ बहकर जो मिट्टी आती है वह भूमि की उर्वरा शक्ति को बहुत बढ़ा देती है। बाढ़ नियन्त्रण के कार्यों से उस मिट्टी का फैलना रुक सकता है। बाढ़ नियन्त्रणों के बड़े लाभों में से एक तो यह है कि आर्थिक सुरक्षा बढ़ जाती है और दूसरा यह है कि विकास का कार्य निरन्तर हो सकने का निश्चय हो जाता है। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, बाढ़ से पूर्ण रक्षा करना सम्भव ही नहीं है। इसलिए किसी भी प्रदेश में बाढ़ नियन्त्रण के जो उपाय किए जाएं वे ऐसे होने चाहिएं कि वे स्थानीय परिस्थितियों से संगत हों और उनसे युक्तिसंगत सीमा तक रक्षा हो जाए।

४. खोज, सर्वेक्षण और अनुसंधान

खोज

६९. सिंचाई योजना के अनेक कार्य जिस जानकारी के आधार पर द्वितीय योजना में सम्मिलित किए गए थे, वह उन्हें अपनाने के समय अपूर्ण अथवा अपर्याप्त थी। इसलिए, खोज का कार्य आगे कई दिशाओं में निरन्तर जारी रखने की जरूरत है। इनमें से प्रथम तो जल सम्वन्धी अधिक पूर्ण और समन्वित लेखा रखा जाना चाहिए, और सब महत्वपूर्ण स्थानों पर इस विषय में निरन्तर सूचना एकत्र करते रहने का प्रवन्ध होना चाहिए कि कितने जल का निस्सादन हुआ, उसमें से कितना वह गया और कितना जमीन ने सोख लिया। द्वितीय स्थान का सम्बन्ध यद्यपि उस जानकारी से नहीं है जिसे एकत्र करने की सिफारिश ऊपर की गई है—प्रत्येक प्रदेश के जल-स्रोतों, अर्थात नदियों, झीलों, तालावों और भूगर्भस्थ जल की पूर्ण तथा पर्याप्त विस्तृत सूची वना दी जानी चाहिए। तृतीय, इस वात की निरन्तर खोज करते रहना चाहिए कि किन स्थानों में योजना कार्य आरम्भ किए जा सकते हैं और कौन-से योजना कार्य विशेष रूप से लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं। सिंचाई के योजना कार्यों की खोज करने में समय वहुत लगता है, इसलिए जल-स्रोतों के विकास का कार्य निरन्तर होता रहे, इस वात का निश्चय करने के लिए योजना कार्य और उसके क्षेत्र का स्पष्ट निर्धारण और उसका आधारभूत इंजीनियरी सर्वेक्षण पहले से कर लेना चाहिए। चतुर्थ स्थान इस वात का है कि यह निश्चय कर लेने के पश्चात कि भविष्य में कौन-से योजना कार्यों को अपनाना अभीष्ट होगा, उनका विस्तृत सर्वेक्षण करके उनके ऐसे आधारभूत नक्शे वना लिए जाएं, जो आवश्यकता पड़ने पर सुधारकर काम में लाए जा सकें। कई योजना कार्य ऐसे क्षेत्रों के लिए तैयार किए गए हैं, जिनमें भविष्य में वांध निश्चित रूप से वनाए जाएंगे। इसलिए कम से कम उन क्षेत्रों का ऐसा आधारभूत सर्वेक्षण कर लेना चाहिए जिससे कि यह निर्णय किया जा सके कि वहां वांध किस प्रकार के और किस स्थान पर वनाने पड़ेंगे। इस सर्वेक्षण में वहां धरातलीय नक्शे वनाना और जमीन में वर्मा लगाकर देख लेना आदि भी शामिल होंगे। पहले से किए हुए सर्वेक्षणों द्वारा उपलब्ध आधारभूत जानकारी प्राप्त रहेगी, तो पीछे पूरे नक्शे अपेक्षाकृत कम समय में वनाए जा सकेंगे।

७०. इस प्रकार के सर्वेक्षणों की आवश्यकता पर जोर तो प्रथम योजना में भी दिया गया था, परन्तु उसमें पर्याप्त प्रगति नहीं हुई। अधिकतर राज्यों में सरकारी संगठन प्रायः योजना कार्यों का निर्माण करने में लगे रहे, और कुछ राज्यों में खोज का महत्व भली-भांति समझा ही नहीं गया। जो योजना कार्य द्वितीय योजना में विना पूरी खोज के सम्मिलित कर लिए गए हैं, उनका निर्माण कार्य आरम्भ करने से पहले उनकी खोज का पूरा हो जाना और विस्तृत विवरण का तैयार हो जाना आवश्यक है। कुछ राज्यों में वैकल्पिक योजना कार्य भी तैयार कर लिए जाने की आवश्यकता है, जिससे यदि आवश्यक जान पड़े तो योजना में सम्मिलित योजना कार्यों के स्थान पर उन वैकल्पिक योजना कार्यों को रख दिया जाए। इसलिए इस कार्य का महत्व हम सर्वाधिक मानते हैं। यदि आवश्यक समझा जाए तो राज्यों को चाहिए कि वे सम्वद्ध निर्माण विभागों अथवा विजली विभागों में इस कार्य के लिए विशेष रूप से पृथक कर्मचारी नियुक्त कर दें। राज्यों की योजनाओं में खोज और सर्वेक्षण के लिए ५·९ करोड़ रु० की राशि रखी गई है, ४·४ करोड़ रु० "सिंचाई" खाते में और १·५ करोड़ रु० "विजली" खाते में। खोज का महत्व इस दृष्टि से वहुत अधिक है कि यदि खोज पूरी हो चुकी होगी तो द्वितीय योजना में सम्मिलित योजना कार्य आरम्भ करने में

विलम्ब नहीं होगा, और भविष्य में भी अतिरिक्त योजना कार्यों का चुनाव और आरम्भ बिना विलम्ब किया जा सकेगा।

सर्वेक्षण

७१. **बिजली भार का सर्वेक्षण:**—गत कुछ वर्षों में, पहले की अपेक्षा, बिजली की खपत बहुत जल्दी-जल्दी बढ़ी है। द्वितीय योजना में उसके और भी बढ़ने की सम्भावना है। भाखड़ा-नंगल, हीराकुड और दामोदर घाटी निगम जैसी योजनाओं और आन्ध्र, बम्बई, मद्रास, उत्तर प्रदेश और मैसूर के ग्रिड सिस्टमों द्वारा सेवित क्षेत्रों में बिजली का "भार" पहले की कल्पनाओं से कहीं अधिक बढ़ जाने के लक्षण दीख रहे हैं। बिजली की मांग बढ़ जाने का एक कारण किसी हद तक यह भी हुआ है कि देश के अनेक भागों में बिजली के वितरण पर लगाए हुए प्रतिबन्ध धीरे-धीरे समाप्त कर दिए गए हैं। परन्तु इससे भी बड़ा कारण प्रथम पंच-वर्षीय योजना के समय हुए आर्थिक विकास का प्रभाव है। सम्भावना यह है कि आगामी दस वर्षों में जितनी बिजली खर्च होने का अन्दाजा अब तक लगाया हुआ था उसे बहुत बढ़ाना पड़ जाएगा। इसलिए बिजली के "भार" का तुरन्त ही व्यवस्थित सर्वेक्षण किए जाने की आवश्यकता है। सिंचाई और बिजली मन्त्रालय ने यह सर्वेक्षण देश भर में करवाना आरम्भ किया है। इसके लिए जानकारी का संग्रह चार प्रादेशिक केन्द्रों द्वारा किया जा रहा है, और उसका क्रमबद्ध संकलन केन्द्रीय जल तथा विद्युत् आयोग करेगा। राज्य सरकारों के पास जो जानकारी होगी, उसका उपयोग करके देश के आन्तरिक भागों में काम उनकी ही सहायता से किया जाएगा। प्रथम सर्वेक्षण आगामी तीन वर्षों में पूरा हो जाने की आशा है।

७२. **मिट्टी का सर्वेक्षण:**—किस प्रदेश में कौन-सी फसलें बोई जाती हैं, यह बात बहुत कुछ वहां की मिट्टी और मौसम पर निर्भर करती है। सिंचाई का विस्तार हो जाने पर फसलों की किस्में बदल जाती हैं, क्योंकि सिंचाई की सहायता से विविध और अधिक लाभदायक फसलें बोना सम्भव हो जाता है। परन्तु यह परिवर्तन भी प्रत्येक प्रदेश की मिट्टी की किस्म पर बहुत निर्भर करता है। इसलिए सब राज्यों में मिट्टी का सर्वेक्षण सब दृष्टियों से कर लेने का बड़ा लाभ यह होगा कि पहले से ही यह निश्चय किया जा सकेगा कि किस प्रदेश में कौन-सी फसल बोकर लाभ उठाया जा सकता है। सर्वेक्षण करके मिट्टियों का वर्गीकरण कर लेने का लाभ यह भी है कि कहां किस नाप की नहरें और जलाशय बनाए जाएं, इसका निश्चय किया जा सकता है, क्योंकि सिंचाई के पानी के परिमाण का अन्दाजा यह देखकर लगाया जाता है कि सिंचाई किस फसल की की जाएगी। कभी-कभी इन योजनाओं का चुनाव, इन आधारभूत आवश्यकताओं का विचार किए बिना ही कर दिया जाता है।

७३. **पानी की आवश्यकताएं:**—कहां, कैसा और कितना बड़ा सिंचाई योजना कार्य ठीक रहेगा, इसका निश्चय करने के लिए उस स्थान की सिंचाई की आवश्यकताओं का अन्दाजा साव-धानीपूर्वक कर लेने की आवश्यकता है। जिन प्रदेशों में कुओं अथवा अन्य साधनों द्वारा पहले से सिंचाई होती है उनमें साधारणतया यह जानकारी उपलब्ध रहती है कि समस्त देश की पानी की आवश्यकता कितनी है और उसमें से कितने भाग में पहले से सिंचाई हो रही है। परन्तु यह पानी की समस्त भावी आवश्यकता का अन्दाजा लगाने का केवल एक साधन है। जिस प्रदेश की सिंचाई प्रस्तावित योजना कार्य द्वारा की जानी है, उस पर प्रभाव डालने वाली और भी

अनेक वातें हैं। भविष्य में वहां वोई जाने वाली फसलें, आर्थिक अवस्थाओं में सुधार, योजना कार्य से और अन्य साधनों से सिंचाई करने में व्यय का अन्तर, और इसी प्रकार की अन्य अनेक वातों से पानी की आवश्यकता का परिमाण वदल सकता है। जिन प्रदेशों में पहले से सिंचाई योजना कार्यों द्वारा सिंचाई हो रही है और जिनकी अवस्थाएं समान हैं, उनसे उक्त प्रश्नों का निर्णय करने में मूल्यवान सहायता मिल सकती है। प्रत्येक राज्य के लिए सव वातों का ध्यान रखकर सिंचाई की योजना वनाते हुए ऐसी सव वर्तमान जानकारी का संकलन और सम्पादन कर रखने से बड़ी सहायता मिलेगी, जिससे कि विभिन्न प्रदेशों की सिंचाई और पानी की आवश्यकताओं का अन्दाजा लगाया जा सके। इस प्रकार की जानकारी उन प्रदेशों के विपय में भी एकत्र कर लेनी चाहिए जो कि सिंचाई योजना कार्यों के प्रभाव में न आते हों।

अनुसन्धान

७४. **सिंचाई :**—सिंचाई के कार्यों से सम्वद्ध जल तथा भूमि सम्वन्धी समस्याओं का अध्ययन, पूना के केन्द्रीय अनुसन्धान केन्द्र में और राज्य सरकारों के १२ अन्य अनुसन्धान केन्द्रों में किया जाता है। जल-स्रोतों के विकास का कार्यक्रम वढ़ जाने के साथ-साथ इन केन्द्रों के कार्य-कलाप में भी और वृद्धि हो जाने की सम्भावना है। असम सरकार भी एक नया अनुसन्धान केन्द्र खोलने की वात सोच रही है। विचार यह है कि द्वितीय योजना के समय इन केन्द्रों में इंजीनियरी की प्रयोग सम्वन्धी समस्याओं के अतिरिक्त, मौलिक समस्याओं के अध्ययन पर भी ध्यान दिया जाए। केन्द्रीय सिंचाई और विद्युत् वोर्ड ने अनुसन्धान के लिए इस प्रकार की समस्याओं की एक योजना वनाई है, जैसे कि पानी के वांधों आदि में छेद हो जाना, मिट्टियों के इंजीनियरी सम्वन्धी गुण, सीमेंट में मिलाकर "पुज्जोलोनी" पदार्थों का प्रयोग, कंक्रीट में हवा का घुस जाना, और नल कूपों के प्रदेशों में जमीन के नीचे पानी का वहाव आदि। ये कार्यक्रम उपर्युक्त विभिन्न अनुसन्धान केन्द्रों में पूरे किए जाएंगे और वोर्ड की सहायता से इनमें समन्वय स्थापित किया जाएगा। सिंचाई और कृपि विभागों के अनुसन्धान केन्द्रों को इस प्रकार की समस्याओं का अध्ययन परस्पर सहयोगपूर्वक करना पड़ेगा, जैसे कि कैसी मिट्टी में किस पद्धति से सिंचाई करनी चाहिए, मिट्टी की उर्वरा शक्ति और सिंचाई के पानी के कुशलतापूर्वक उपयोग का एक-दूसरे पर प्रभाव, वढ़ती हुई फसलों का नाजुक समय, उपज की उत्कृष्टता और सिंचाई की विभिन्न पद्धतियों के तुलनात्मक गुण-दोप।

७५. **विजली :**—द्वितीय योजना में और उसके वाद की योजनाओं में विजली के उत्पादन का वहुत विस्तार किया जाने वाला है। इसलिए, उसके उत्पादन, एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने और वितरण से सम्वद्ध समस्याओं के विपय में तुरन्त ही जांच-पड़ताल करना वहुत आवश्यक हो गया है। विजली का सामान वनाने के उद्योग का क्षेत्र भी देश में शीघ्र से शीघ्र वढ़ने की सम्भावना है। उस दिशा में भी अनुसन्धान की वड़ी आवश्यकता है। भारत सरकार द्वारा नियुक्त एक टेकनीकल समिति यह विचार कर रही है कि यह अनुसन्धान किस प्रकार किया जाना चाहिए। निकट भविष्य में जिन समस्याओं का अनुसन्धान करके लाभ उठाया जा सकता है, उनके कुछ उदाहरण ये हैं:—

(१) विजली उद्योग में देशी सामान का उपयोग, विशेपतः "इन्स्यूलेटिंग" (विजली को फैलने से रोकने) के लिए,

(२) बिजली को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए विशेष डिजाइनों के बड़े और ऊंचे स्तम्भों का निर्माण, विकास और उनका परीक्षण (लकड़ी की बल्लियों समेत);

(३) देहातों में बिजली पहुंचाने के लिए उपयोगी सामान और डिजाइनों का निर्माण और विकास;

(४) डी० सी० बिजली को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने की विधियों का विकास;

(५) पानी की तामीरों में छेद हो जाने के कारण;

(६) एक स्थान से दूसरे स्थान पर बिजली ले जाने वाले तारों को आसमान से गिरने वाली बिजली से बचाने की व्यवस्था करना;

(७) इम्पल्स स्थितियों के अंतर्गत कोरोना;

(८) एक स्थान से दूसरे स्थान पर बिजली ले जाने वाले ट्रांसमीशन तारों और बिजली वितरक सब-स्टेशनों के यन्त्रों में सामंजस्य की स्थापना;

(९) पावर बिजली और वितरण ट्रांसफारमरों के भार और ताप की परिस्थितियां; और

(१०) उच्च वोल्टेज स्विचगीयर परीक्षण और नए स्विचगीयर डिजाइनों का विकास।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में बिजली की इंजीनियरी की एक अनुसन्धानशाला भी इस योजना की अवधि में ही खोल देने की व्यवस्था है। इसके साथ ही, बहुत उच्च वोल्टेज के स्विचगीयरों के परीक्षण का एक केन्द्र भी खोला जाएगा।

७६. अन्य कार्यक्रम :—खोज, सर्वेक्षण और अनुसन्धान के अतिरिक्त, सिंचाई और बिजली मन्त्रालय के कार्यक्रमों में ये तीन काम भी सम्मिलित रहेंगे : (१) दिल्ली में एक इंजीनियरिंग संग्रहालय खोला जाएगा, जिसमें जनता के देखने के लिए विभिन्न योजना कार्यों के नमूने रखे रहेंगे; (२) मिट्टी खोदने और उठाने के भारी यन्त्रों का काम सिखाने के लिए प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना; और (३) बिजली को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने तथा उसका वितरण करने वाले तारों को ठीक रखने और चूंकि अन्य वैद्युतिक यन्त्रों के प्रयोग के अनुभवी जानकार अभी तक हमारे देश में नहीं मिलते, इस कारण बिजली की नई 'होट लाइन वर्क' प्रणाली के सम्बन्ध में प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया जाएगा। बिजली और सिंचाई के कार्यों की खोज, सर्वेक्षण और अनुसन्धान करने के लिए द्वितीय योजना में ६ करोड़ रु० रखे गए हैं। इसके अतिरिक्त ५·६ करोड़ रु० राज्यों की अनेक योजनाओं के लिए भी निर्धारित किए गए हैं।

५. योजना और संगठन

७७. संगठित विकास :—विभिन्न राज्यों की विकास योजनाओं से अधिकतम लाभ उठाना हो तो उन सबमें घनिष्ठ सामंजस्य का होना आवश्यक है। एक राज्य के जलाशय से एकत्र पानी से पड़ोस के राज्यों में सिंचाई करके लाभ उठाया जा सकता है। इसी प्रकार, एक राज्य में उपलब्ध बिजली का वितरण अन्य राज्यों में किया जा सकता है। कहीं-कहीं एक नदी की धारा का पानी दूसरी नदी में डालकर सारे प्रदेश को लाभ पहुंचाया जा सकता है। इस कारण खोज, पानी के बंटवारे और व्यय में साझा करने के लिए राज्यों में परस्पर सहयोग का रहना बहुत आवश्यक है। परन्तु व्यय और लाभों के बटवारे

पर राज्यों में बहुधा मतभेद उठ खड़े होते हैं। इस प्रकार के झगड़ों को सुलझाने के लिए सरकार ने संसद के समक्ष दो विधेयक रखे। एक का नाम है नदी बोर्ड विधेयक, १९५५ और दूसरे का नाम है अन्तर्राज्यीय पानी विवाद विधेयक, १९५५। प्रथम विधेयक से भारत सरकार को यह अधिकार प्राप्त हो गया है कि वह कई राज्यों में बहने वाली नदियों और कई राज्यों को लाभ पहुंचाने वाली नदी घाटी योजनाओं के लिए सम्बद्ध राज्यों की सलाह से बोर्ड नियुक्त कर सकती है। इन नदियों की योजनाएं बनाने, उनके व्यय और लाभ का बंटवारा करने और राज्य संगठनों के कार्यों में सामंजस्य रखने का काम ये बोर्ड ही करेंगे। दूसरे विधेयक के अन्तर्गत आवश्यक अधिकारों से सम्पन्न ऐसे न्यायाधिकरण संगठित करने की व्यवस्था है, जो कि नदी घाटी योजनाओं और उनके लाभों के विषय में दो या अधिक राज्यों में विवाद खड़ा हो जाने पर उनका निपटारा किया करेंगे।

७८. **योजनाओं से अधिकतम लाभ की प्राप्तिः**——सिंचाई और बिजली की योजनाओं का और उनकी पूर्ति का क्रम ऐसी सावधानी से बनाना चाहिए कि उन पर जो व्यय किया जाए, उससे अधिकतम लाभ की प्राप्ति होती चली जाए। यदि संगठन और योजनाएं भली प्रकार बनाई जाएं तो किए हुए व्यय से लाभ सदा ही अधिक मिल सकता है।

७९. प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय योजना कार्यों को कार्यान्वित करते हुए इस लक्ष्य को सदा सामने नहीं रखा गया। ऐसी भूलें बार-बार होती रहीं कि जलाशय तो बनकर पूरा हो गया और उसके पानी को ले जाने वाली नहरें खोदी नहीं गईं, नहरें बन गईं परन्तु उनसे सींची जाने वाली जमीन तैयार नहीं हुई, बिजलीघरों में बिजली उत्पन्न होने लगी और उपभोक्ता भी बिजली की मांग करने लगे, परन्तु न तो बिजली सब-स्टेशन में आवश्यक यन्त्र पहुंचाए गए और न बिजली को ले जाने वाली तारें डाली गईं, नल कूप तो खोद लिए गए, परन्तु उन्हें चलाने के लिए बिजली का बन्दोबस्त नहीं किया गया। योजनाएं बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने में इस प्रकार के दोष रह जाने पर पूंजी फंस जाती है और साधनों की बरबादी होने लगती है। ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिए कि द्वितीय योजना में ये भूलें न हों।

८०. प्रयत्न और पूंजी का अधिकतम लाभ उठाना हो तो लाभों की उपलब्धि और उनके उपयोग में समय का व्यवधान नहीं होना चाहिए। परस्पर सम्बद्ध सब कार्रवाइयों में सामंजस्य बड़े ध्यान से रखना चाहिए। किसी भी योजना कार्य को आरम्भ करने से पूर्व, उसकी विस्तृत खोज कर लेनी चाहिए और उसके कार्यों का क्षेत्र स्पष्ट निर्धारित कर लेना चाहिए। योजना कार्य के विवरण, खर्चों के अन्दाजे और वित्तीय भविष्यवाणियां, सब पूरे-पूरे तैयार होने चाहिएं और उनमें परिवर्तन करने की आवश्यकता विशेष कारणों से ही होनी चाहिए। हाल में कई बड़े योजना कार्यों के अन्दाजों में वृद्धि करनी पड़ी थी और उसकी बड़ी प्रतिकूल आलोचना हुई थी। वित्तीय व्यवस्था पहले से कर लेनी चाहिए और यह हिसाब होशियारी से लगाकर कि किस योजना कार्य में कब कितने कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ेगी, उनकी भरती का प्रबन्ध ठीक समय कर रखना चाहिए।

८१. योजना कार्यों को किस क्रम से हिस्सों में बांटकर पूरा करें, उसकी ओर ध्यान खींचना एक और दृष्टि से भी आवश्यक है। ज्योंही जलाशयों में पानी एकत्र हो जाए, त्योंही

उसका उपयोग सिंचाई के लिए होने लगना चाहिए। यह अत्यन्त आवश्यक है। इसका अभिप्राय यह है कि नहरों और खेतों तक जाने वाले रजबहों की खुदाई, जलाशय बनने के साथ-साथ ही हो जानी चाहिए। यह हुई पहली बात। दूसरी बात यह है कि उसके बाद, ज्योंही पानी मिलने लगे, त्योंही किसानों के खेत सिंचाई के लिए तैयार रहने चाहिएं। बिजली के योजना कार्यों पर भी ये दोनों बातें लागू होती हैं। पहली बात का सम्बन्ध बहुत कुछ कार्यों की योजना बनाने और जिस क्रम से उन्हें पूरा किया जाएगा, उसका निश्चय करने से है। दूसरी बात का सम्बन्ध लोगों को पानी और बिजली का उपयोग करने के लिए तैयार रखने के उपायों के साथ है। उन्हें उनका उपयोग वैज्ञानिक ढंग से करना सिखलाना चाहिए, जिससे अधिकतम उत्पादन करने का लक्ष्य पूरा हो सके। कुछ चुने हुए स्थानों पर नमूने के खेतों का प्रदर्शन करना चाहिए, और जिन जमीनों को सिंचाई का लाभ पहुंचने वाला हो, वे पानी मिलने के समय तक सिंचाई के लिए तैयार हो जानी चाहिएं। इस दिशा में राष्ट्रीय विस्तार आन्दोलन से बहुत काम लिया जा सकता है। उसका उपयोग किसानों को यह बतलाने के लिए करना चाहिए कि सिंचाई का पानी जाने से पहले वे अपने खेतों में सब तैयारियां करके रखें। इसी प्रकार, बिजली के योजना कार्यों के क्षेत्रों में इस आन्दोलन के कार्यकर्ताओं को बिजली की खपत का क्षेत्र तैयार करना चाहिए और उसके लगने से पहले ही उसके उपयोग की तैयारियां पूरी रखनी चाहिएं।

८२. जनता का सहयोग:—योजना कार्यों की पूर्ण सफलता के लिए जनता का सहयोग भी बड़ी मात्रा में आवश्यक है। जो कार्य औसत नागरिकों के समीप हो रहा है या जिसका उनके जीवन और सुख-सुविधाओं पर गहरा प्रभाव पड़ने वाला है, उसे वे स्वयं देखकर उसकी पूर्ति में सक्रिय सहायता कर सकते हैं। सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण के कार्यों में जन सहयोग प्राप्त करने का अच्छा अवसर मिल सकता है, और राष्ट्रीय विकास के इस विस्तृत क्षेत्र में स्वयंसेवकों के लिए भी काम करने की बड़ी गुंजाइश है। इस महत्वपूर्ण बात की ओर राज्य सरकारों का ध्यान प्रथम योजना में ही खींच दिया गया था, और सिफारिश की गई थी कि नहरों की खुदाई सरीखे जो काम प्रायः अनसीखे श्रमिकों द्वारा ही सम्पन्न हो सकते हैं वे ठेकेदारों की मार्फत न करवाकर ग्रामीण जनता के सुपुर्द कर देने चाहिएं और प्रत्येक ग्राम या ग्राम-समूह में जो लोग अपने इलाके की नहर खुदाई के काम का जिम्मा लें उनकी सहकारी समितियां संगठित कर देनी चाहिएं। इससे खर्च की बचत होने के अतिरिक्त ये लाभ होते हैं:—

(१) नहरों की खुदाई पर जो बड़ी-बड़ी रकमें खर्च की जाएंगी, उनका लाभ गांवों को ही मिलेगा, क्योंकि वे सहकारिता आन्दोलन के अन्तर्गत आ जाएंगे और कृषि सुधार के लिए उपलब्ध होंगे।

(२) यदि व्यापक क्षेत्र में गांव वाले इतने बड़े-बड़े काम सहकारिता से कर लेंगे तो वे अन्य कार्यों में भी सहकारिता करने लगेंगे, जिससे उनके जीवन का स्तर ऊंचा उठ सकेगा।

(३) नहरों की खुदाई के समय जो संगठन बन जाएगा, वह पीछे नहरों को ठीक रखने, पानी के बंटवारे और पानी के प्रयोग में नियमन करने में भी सहायक हो सकेगा।

परन्तु इस विचार पर अमल बहुत ही थोड़ा हुआ है। गंगापुर, घाटप्रभा, माही और बम्बई के काकड़ापार में श्रमिकों की सहकारी समितियां बनाकर इसका प्रारम्भ मात्र किया जा सका था। पूर्वी उत्तर प्रदेश में गांवों की बस्ती की जमीनें ऊंची करने और असम में डिब्रूगढ़ की रक्षा के लिए बांध बनाने में भी जनता ने कुछ उत्साह प्रकट किया था। केवल कोसी नदी योजना में भारत सेवक समाज की सहायता से जनता द्वारा सन्तोषजनक कार्य होने का समाचार मिला था। शेष सब स्थानों पर परिणाम बहुत निराशाजनक रहा। फिर भी, जन सहयोग के इन उदाहरणों से इस पद्धति की उज्ज्वल सम्भावनाएं प्रकट होती हैं।

८३. द्वितीय योजना में इस जन सहयोग की गुंजाइश और भी अधिक है, क्योंकि उसमें मध्यम योजना कार्यों की बहुत बड़ी संख्या देश के अनेक स्थानों पर पूरी करने की व्यवस्था की गई है। आशा है कि इनकी पूर्ति में आरम्भ से ही जनता का सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाएगा। द्वितीय योजना के इन कार्यों में जनता का अभीष्ट सहयोग प्राप्त करने के लिए एक करोड़ रु० की राशि रखी गई है।

८४. **सुधार उपकर**:—सबसे महत्वपूर्ण परन्तु कठिन प्रश्न द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए पूंजी एकत्र करने का है। इस कारण पूंजी में वृद्धि करने के लिए सब उपाय किए जाने चाहिएं। एक न्यायोचित उपाय यह है कि जो क्षेत्र सिंचाई के योजना कार्यों से लाभान्वित हों उनमें सुधार उपकर लगा दिया जाए। आशा है कि प्रथम योजना के बड़े और मध्यम सिंचाई योजना कार्यों से लगभग ६३ लाख एकड़ जमीन को लाभ पहुंचा होगा और द्वितीय योजना से लगभग १ करोड़ २० लाख एकड़ के सींचे जाने की आशा है। यदि इन सब क्षेत्रों में सुधार उपकर लगा दिया जाए तो उससे पूंजी में लाभदायक वृद्धि हो सकेगी।

८५. सुधार उपकर के सिद्धान्त का समर्थन राष्ट्रीय विकास परिषद ने भी कई बार किया है, और अब यह देश की स्वीकृत नीति का अंग बन चुका है। असम, आन्ध्र, बम्बई, मद्रास, पंजाब, हैदराबाद, मैसूर, पेप्सू, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और उड़ीसा में तो यह उपकर लगाने के कानून बन भी चुके हैं। मध्य प्रदेश, मध्य भारत, त्रिवांकुर-कोचीन, बिहार, पश्चिम बंगाल और सौराष्ट्र में इसके विधेयक तैयार हैं। यद्यपि भाखड़ा-नंगल, काकड़ापार और मयूराक्षी आदि कई योजनाओं से कई राज्यों में सिंचाई होने लगी है, परन्तु सुधार उपकर अभी कहीं वसूल नहीं किया गया है। इसलिए जिन राज्यों में इस उपकर की वसूली के कानून नहीं बने वहां उन्हें बनाकर, उसकी वसूली यथाशीघ्र आरम्भ कर दी जानी चाहिए।

८६. नल कूप भी जमीन की सिंचाई का एक सुरक्षित साधन है। द्वितीय योजना की अवधि में इस साधन द्वारा २० लाख एकड़ से अधिक भूमि में सिंचाई होने की आशा है। इसलिए उचित होगा कि जिन भूमियों को नल कूपों और इसी प्रकार के अन्य सुरक्षित छोटे साधनों द्वारा सिंचाई का लाभ पहुंचे उन्हें भी सुधार उपकर देने वाले क्षेत्रों में सम्मिलित कर लिया जाए।

८७. सुधार उपकर, सिंचित भूमि के मूल्य में हुई वृद्धि के अनुसार लगाया जाना चाहिए और, यह चूंकि एक प्रकार का पूंजी उपकर है, इसलिए इसकी वसूली या तो यकमुश्त रकम में कर लेनी चाहिए या किस्तों में फैलाकर, परन्तु किस्तों की मियाद १५ वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए। राज्य को यह वसूली भूमि के रूप में भी करने का अधिकार होना चाहिए।

इस अधिकार का उपयोग सामाजिक कार्यो, चकबन्दी, विस्थापित लोगों के पुनर्वास और भूमि-हीन श्रमिकों के लिए भूमि प्राप्त करने के प्रयोजन से भी किया जा सकेगा ।

८८. **पानी और बिजली की दरें:**—योजना कार्यो की पूर्ति का व्यय अब पहले से बहुत अधिक बढ़ चुका है। उन्हें ठीक और चालू हालत में रखने का व्यय भी पहले से बढ़ गया है। सिंचाई के द्वारा उत्पादन में बहुत वृद्धि हो जाती है, इसलिए बढ़े हुए उत्पादन का कुछ अंश सिंचाई कार्यों को ठीक तथा चालू रखने के लिए वापस मिल जाना उचित है। आज प्रचलित पानी की दरें (आवियाना) बरसों पहले निश्चित की गई थीं। तब से अब पैदावार की कीमतों में बहुतेरी बढ़ोतरी हो चुकी है इसलिए पानी की दरों में भी वृद्धि करना उचित है और राज्य सरकारों को इसकी सम्भावना पर तुरन्त ही विचार करना चाहिए। तिरुवांकुर-कोचीन, मध्य भारत, राजस्थान, आन्ध्र, पंजाब, उत्तर प्रदेश और बिहार में आवियाना में परिवर्तन किया जा चुका है और उड़ीसा, असम, मद्रास और मैसूर में यह प्रश्न विचाराधीन है। इसी प्रकार का युक्तिसंगत विचार बिजली की दरों को भी सुधारने के लिए करना चाहिए, जिससे कि बिजली के कारखाने स्वावलम्बी हो सकें। इस प्रश्न पर अभी और भी विचार करने की आवश्यकता है। इस पर सब राज्यों में, विशेष-कर उनमें जिनमें अभी तक कोई कार्रवाई नहीं की गई है शीघ्र ही कार्रवाई की जाने की आवश्यकता है ।

८९. **योजना कार्यो का चुनाव:**—अक्तूबर १९५३ में योजना आयोग ने एक टेकनीकल सलाहकार समिति, राज्य सरकारों द्वारा सुझाए हुए योजना कार्यो पर विचार करके, आयोग को यह बतलाने के लिए नियुक्त की थी कि टेकनीकल और वित्तीय दृष्टियों से उनमें किन योजना कार्यो की नींव मजबूत है और किनकी नहीं। इस समिति की सिफारिशों के अनुसार जो योजना कार्य अस्थायी रूप से द्वितीय योजना में सम्मिलित कर लिए गए हैं और जिनके विषय में समिति ने अपना प्रतिवेदन दे दिया है उनकी संख्या इस प्रकार है :—

——	सिंचाई		बिजली	
	योजना कार्यो की संख्या	अनुमानित व्यय करोड़ रुपए में	योजना कार्यो की संख्या	अनुमानित व्यय करोड़ रुपए में
१. द्वितीय योजना में अस्थायी रूप से सम्मिलित योजना कार्यो की समस्त संख्या ...	१९५	३७६	१८१	४२३
२. जिन योजना कार्यो पर प्रतिवेदन मिल गया, उनकी संख्या (इसमें खोज के योजना कार्य शामिल नहीं हैं)	७०	२७७	११७	३८६

समिति ने इस बात की ओर विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट किया है कि न तो योजना कार्यो की खोज सन्तोषजनक रीति से की गई और न उन्हें अन्तिम रूप ही दिया गया। जिन कई

योजना कार्यों को कार्यान्वित करने के लिए कहा गया था और जिन पर समिति ने विचार किया, उसके सम्बन्ध में पता लगा कि उनकी खोज पूरी की ही नहीं गई थी, और उनका पूरा विवरण भी नहीं दिया गया था, जो कि टेकनीकल और वित्तीय परीक्षा के लिए नितान्त आवश्यक था। फिर भी इस प्रकार के कई योजना कार्यों को, प्रादेशिक तथा अन्य कारणों से, अस्थायी रूप से द्वितीय योजना में सम्मिलित कर लिया गया है और आशा है कि भविष्य में इनकी अधिक खोज करके इनके क्षेत्र और व्यय का अन्दाजा लगाया जा सकेगा। जो समिति इन योजना कार्यों की परीक्षा करेगी, उसका गठन योजना आयोग, सिंचाई तथा बिजली और वित्त मंत्रालयों के प्रतिनिधियों तथा सम्बद्ध क्षेत्रों के विशेषज्ञों को मिलाकर किया जाएगा। ये विशेषज्ञ समय-समय पर समिति के कार्य में सहायता करते रहेंगे।

९०. **आधारभूत सामान** :—द्वितीय योजना के सिंचाई, बिजली और बाढ़ नियंत्रण कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए नितान्त आवश्यक जिन आधारभूत सामानों की आवश्यकता पड़ेगी, उनकी सूची आरम्भिक अन्दाजों के अनुसार नीचे दी जा रही है :—

पांच वर्ष की आवश्यकता	सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण	बिजली	पांच वर्षों का योग
इस्पात (लाख टनों में)	१·५	६·०	७·५
सीमेंट (लाख टनों में)	४८·०	१७·०	६५·०
कोयला (लाख टनों में)	५·०	२४५·०	२५०·०

९१. यह सब सामान निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार मिलता रहे, इसके लिए नितान्त आवश्यक है कि योजना कार्यों के अधिकारी और राज्य सरकारें अपनी जरूरतों का अन्दाजा पर्याप्त समय से पहले से लगाकर, उसे समन्वय-कर्ता अधिकारियों के पास भेज दें। केन्द्रीय जल और विद्युत् आयोग भी सब योजना कार्यों की प्रगति के साथ निरन्तर सम्पर्क रखकर समय-समय पर उनकी आवश्यकताओं का अन्दाजा लगाता और आवश्यक सिफारिशें करता रहेगा।

९२. इन आधारभूत सामानों की भारी कमी है, इसलिए कहने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए कि इनके प्रयोग में मितव्ययिता करने के उपायों का ध्यान सदा रखना कितना आवश्यक है। नक्शे बनाने और तामीर के काम इस प्रकार करने चाहिएं कि इन वस्तुओं का अनावश्यक व्यय बिल्कुल न होने पावे। उदाहरणार्थ, (१) इस्पात के बने ढांचों की जगह कंकरीट से, (२) कंकरीट की जगह चिनाई से और (३) चिनाई में सीमेंट की जगह चूने के मसाले से काम निकाला जाए। इसी प्रकार के अन्य उपायों पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। इस्पात और सीमेंट द्वितीय योजना के समय अधिकाधिक मात्रा में विदेशों से मंगाने पड़ेंगे, इसलिए जहां-कहीं सम्भव हो वहां इनका प्रयोग कम करके, इनके स्थान पर लकड़ी आदि स्वदेशी सामान का प्रयोग करना चाहिए।

९३. **बिजली का भारी सामान**:—बिजली के योजना कार्यों में जिन संयंत्रों और मशीनों आदि की आवश्यकता पड़ेगी, उनके लिए हमारे देश को अधिकतर विदेशों पर निर्भर

रहना पड़ेगा। देश में केवल ट्रांसफार्मर, छोटी मोटरें, कंडक्टर, तार और लैम्प (बल्ब) आदि बिजली का हलका सामान बनता है। इनकी भी सारी आवश्यकता स्वदेशी सामान से पूरी नहीं होती। गत दो वर्षों में विदेशों से मंगाए गए बिजली के सामान का मूल्य ३० करोड़ रु० वार्षिक था, इसमें भी बिजली के भारी सामान का मूल्य लगभग २० करोड़ रु० वार्षिक बैठता था। द्वितीय और तृतीय योजनाओं में बिजली के सामान की आवश्यकता बहुत बढ़ जाएगी। इसलिए देश में ही बिजली का सामान बना सकने की सामर्थ्य में वृद्धि करना तात्कालिक आवश्यकता की बात हो गई है। इसलिए निश्चय किया गया है कि पनबिजली के टर्बाइन, आल्टर्नेटर, मोटर ट्रान्सफार्मर और स्विचगीयर आदि बिजली का भारी सामान देश में ही बनाने का एक कारखाना खोल दिया जाए। इसके लिए आरम्भिक कार्य किया जा रहा है। आशा है कि इस कारखाने में १९६१ से माल तैयार होने लगेगा और देश की आवश्यकता का एक भाग यहीं पूरा होने लग जाएगा।

९४. **विदेशी मुद्रा:**—द्वितीय योजना में सिंचाई और बिजली के जो काम करने की बात सोची गई है उनमें से बिजली के कामों के लिए अगले पांच वर्षों में लगभग १५० करोड़ रु० और सिंचाई के कामों के लिए लगभग २० करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु विदेशी मुद्रा का व्यय घटाने की अनिवार्य आवश्यकता है, इसलिए योजना कार्य अधिकारियों को चाहिए कि वे विदेशी मशीनों का प्रयोग जितना टाला जा सके उतना टालने का प्रयत्न करें।

९५. **कार्यकर्ता और रोजगार:**—द्वितीय योजना के निर्माण कार्यों को पूरा करने के लिए टेक्नीकल कार्यकर्ताओं की आरम्भ में ही आवश्यकता पड़ेगी और वह प्रथम योजना की तुलना में ५० प्रतिशत अधिक होगी। उचित रूप से प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता का अनुभव प्रथम योजना काल में भी पग-पग पर हुआ था। १९५४ में सिंचाई और बिजली मंत्रालय ने एक नदी घाटी योजना टेकनीकल कर्मचारी समिति इसलिए नियुक्त की थी कि वह जांच करके बतलावे कि आगामी वर्षों में कितने कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ेगी, कितने मिल सकेंगे और कर्मचारियों को आवश्यक संख्या में प्रशिक्षित करने के लिए क्या व्यवस्था करनी होगी। इस समिति ने बतलाया था कि द्वितीय योजना के आरम्भिक काल में टेकनीकल कर्मचारियों की बहुत कमी रहेगी। इस समिति का विचार क्षेत्र क्योंकि केवल नदी घाटी योजनाओं तक ही सीमित था, इसलिए योजना आयोग ने अधिक विचार के पश्चात्, एक अधिक बड़ी इंजीनियरी कर्मचारी समिति नियुक्त की ताकि वह उद्योगों, रेलों और सड़कों आदि सभी विकास कार्यों के लिए इंजीनियर कर्मचारियों की आवश्यकता का अन्दाजा लगावे। इस समिति का अन्दाजा है कि सिंचाई और बिजली के योजना कार्यों के लिए अतिरिक्त इंजीनियरों और सुपरवाइजरों की आवश्यकता इस प्रकार होगी :—

अधिकारी	नागरिक (सिविल)	बिजली और यान्त्रिक
इंजीनियर ग्रेज्युएट	२,१००	१,६००
सुपरवाइज़र (डिप्लोमा वाले) ...	६,०००	४,०००

योजना के लिए इतने इंजीनियर कर्मचारी प्रशिक्षित करने के लिए सरकार को आवश्यक व्यवस्था करनी पड़ेगी। नए इंजीनियरों को विशिष्ट प्रशिक्षण देने, काम करते हुए इंजीनियरों को अभ्यासार्थ दोबारा प्रशिक्षित करने और काम में लगे हुए आपरेटरों और मिकैनिकों आदि को मौके पर ही सिखाने के लिए सरकार ने सीमित मात्रा में कार्यक्रम आरम्भ भी कर दिए हैं। इस कार्यक्रम को आगे बढ़ाने के लिए, यदि सिंचाई और बिजली के विभाग विभिन्न प्रकार के टेकनीकल कर्मचारियों के विशिष्ट प्रशिक्षणार्थ, कारखानों में ही नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रम आरम्भ कर दें, तो वह बहुत उपयोगी होगा।

९६. अनुमान है कि आगामी पांच वर्षों में सिंचाई और बिजली योजना के निर्माण कार्यों में जितने लोगों को निरन्तर काम मिलेगा उनकी संख्या का अंदाजा इस प्रकार है:—

——		सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण	बिजली	योग
प्रशासन ...	...	८,०००	७,०००	१५,०००
टेकनीकल (निरीक्षण विषयक)	...	१५,०००	१०,०००	२५,०००
कुशल ...	...	३०,०००	३०,०००	६०,०००
अकुशल ...	...	१,८०,०००	१,००,०००	२,८०,०००
योग	...	२,३३,०००	१,४७,०००	३,८०,०००

द्वितीय योजना में सम्मिलित कार्यों के पूरा हो चुकने पर, सब स्तरों पर मिलाकर ५०,००० अतिरिक्त कर्मचारियों को (३५,००० को बिजली में और १५,००० को सिंचाई में) स्थायी काम मिल जाएगा। सिंचाई और बिजली के इन कार्यों के कारण जिन लोगों को परोक्ष रूप से काम मिलेगा, उनकी संख्या इस गणना में शामिल नहीं की गई है।

९७. नदी घाटी योजनाओं के निर्माण कार्यों में मशीनों का प्रयोग करने से पूर्व यह विचार कर लेना चाहिए कि इस देश में कितना विशाल जन-बल पड़ा हुआ है और उसे तुरन्त ही कोई काम देने की कितनी आवश्यकता है। मशीनों का अंधाधुन्ध और सर्वत्र प्रयोग करने से देश के विदेशी मुद्रा कोश पर भी भारी बोझ पड़ता है। आशा है कि राज्य सरकारें और योजना अधिकारी इस समस्या पर अधिकतम ध्यान देंगे और मितव्ययिता तथा शीघ्र फल प्राप्ति की उपेक्षा न करते हुए निर्माण कार्य में मशीनों का न्यूनतम प्रयोग करेंगे।

९८. संगठन:—सिंचाई और बिजली की योजनाओं को पूरा करने का प्राथमिक उत्तरदायित्व राज्य सरकारों का है। कुछ राज्यों में, विशेषत: उनमें जिनमें कि विगत कुछ दशकों से विकास कार्य किए जा रहे हैं, किसी हद तक टेकनीकल और प्रशासनिक कुशलता आ भी गई है। अन्य राज्यों को बड़े-बड़े कार्यक्रम हाथ में लेने से पहले अपने वर्तमान संगठन दृढ़ बनाने पड़ेंगे। जिन राज्यों को आवश्यकता है उनको टेकनीकल सहायता केन्द्रीय जल और बिजली आयोग कर भी रहा है। सिंचाई और बिजली कार्यक्रमों की सफलतापूर्वक क्रियान्विति के लिए यह आवश्यक है कि राज्यों के संगठन और केन्द्रीय जल और बिजली आयोग घनिष्ठ सहयोग से कार्य करें।

९९. नदी घाटी योजनाओं का प्रबन्ध करने और उन्हें कार्यान्वित करने के लिए कैसा संगठन सर्वाधिक उपयुक्त रहेगा, यह प्रश्न बड़े महत्व का है। राज्यों के सिंचाई तथा बिजली विभागों ने कई मामलों में आवश्यकतानुसार कार्य नहीं किया। लक्ष्य यह है कि काम शीघ्र भी हो और मितव्ययिता से भी, इसलिए प्रबन्ध संगठन को इतने पर्याप्त अधिकार होना चाहिए कि वह किसी भी प्रश्न का निर्णय शीघ्रता से कर सके। अब बड़े योजना कार्यों का अधिकतर व्यय केन्द्रीय सरकार से वित्तीय सहायता लेकर पूरा किया जाता है। इसलिए इन योजना कार्यों के कुशलता तथा मितव्ययिता से पूरा होने में केन्द्रीय सरकार की सीधी दिलचस्पी है और इसीलिए यह मान लिया गया है कि नीति का निश्चय करने और योजना कार्यों की पूर्ति का साधारण निरीक्षण करने के लिए केन्द्रीय और सम्बद्ध राज्य सरकारों के प्रतिनिधियों का एक उच्च अधिकारों से सम्पन्न बोर्ड उपयुक्त संगठन का काम दे सकेगा। विगत कुछ वर्षों में, भाखड़ा-नंगल, हीराकुड, रिहन्द, चम्बल, कोयना, कोसी, नागार्जुनसागर और तुंगभद्रा नदी घाटी योजना कार्यों के लिए नियंत्रक बोर्ड बनाए जा चुके हैं। केवल दामोदर घाटी निगम ही ऐसी योजना है जो कई राज्यों में फैली होने के कारण उसके लिए कानून द्वारा एक पृथक निगम संगठित किया गया है। अब तक का अनुभव बतलाता है कि बड़ी-बड़ी नदी घाटी योजनाओं को पूरा करने के लिए उक्त प्रकार के बोर्ड ही सर्वाधिक उपयुक्त संगठन हैं।

१००. अधिकतर राज्य सरकारें अपने बिजली प्रतिष्ठानों का प्रबन्ध अपन सरकारी निर्माण विभागों के द्वारा कर रही हैं। परन्तु मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, बम्बई, दिल्ली और सौराष्ट्र ने बिजली उपलब्धि अधिनियम के अनुसार पृथक राजकीय बिजली बोर्डों का संगठन कर दिया है। आशा है कि निकट भविष्य में अन्य कुछ राज्य भी बिजली बोर्डों का संगठन कर देंगे। इन बोर्डों को स्वशासन के आधे अधिकार प्राप्त होते हैं, इसलिए बिजली की मध्यम तथा छोटी योजनाओं का निर्माण और संचालन करने के लिए ये उपयुक्त हैं परन्तु बड़ी-बड़ी योजनाओं का निर्माण कार्य, ऊपर के पैरे में वर्णित विधि से, विशिष्ट संगठनों के सुपुर्द किया जा सकता है।

१०१. सिंचाई और बिजली के विकास के जो कार्यक्रम देशभर में पूरे किए जाएंगे, वे बहुत बड़े हैं, और देश के पिछड़े हुए भागों पर तुरन्त ही विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, इसलिए सिंचाई और बिजली की महत्वपूर्ण योजनाओं को कार्यान्वित करने और उन्हें आगे बढ़ाने में केन्द्र और राज्य सरकारों को मिलकर अधिक सहयोग से कार्य करना चाहिए। इसीलिए यह नितान्त आवश्यक है कि इंजीनियरों की भरती और प्रशिक्षण सामान्य आधार पर किए जाएं। उनकी योग्यता का स्तर एक-सा हो और वे यह समझें कि हमारी नौकरी सब सरकारों के लिए सामान्य तथा महत्वपूर्ण है। इस सबके लिए इंजीनियरों का एक कुशल और सुसंगठित कर्मचारी वर्ग शीघ्र ही तैयार किए जाने की आवश्यकता है। इस कर्मचारी वर्ग में ही ऐसे इंजीनियरों की एक श्रेणी तैयार हो जाएगी, जिन्हें विशेष कार्यों का अनुभव होगा और जो अवश्यकता पड़ने पर नए योजना कार्यों का काम आरम्भ करने के लिए भेजे जा सकेंगे। राज्य पुनर्गठन आयोग ने भी इंजीनियरों का एक अखिल भारतीय कर्मचारी वर्ग संगठित करने की सिफारिश की थी। योजना आयोग की सिफारिश है कि राज्य सरकारों को केन्द्रीय सरकार के साथ मिलकर इस प्रकार के कर्मचारी वर्ग का संगठन यथाशीघ्र कर लेना चाहिए।

परिशिष्ट

विवरण १

सिंचाई के प्रधान कार्यक्रमों की सूची

(इस अध्याय के पैरा ५ के अनुसार)

कार्यक्रम का नाम	पूर्ति का वर्ष	समस्त पूंजी गत परिव्यय लाख रु० में	सिंचित क्षेत्रफल (हजार एकड़ों में)
(१)	(२)	(३)	(४)
आन्ध्र—			
रोम्पेरू जल-प्रणाली ...	१९५६	१५३	१०
तुंगभद्रा	१९५६	२,५४४	१६७
गोदावरी डेल्टा जल प्रणाली	१८९०	२१०	१,२९९
कृष्णा डेल्टा	१८९८	२२७	१,००२
रल्ला पाड	१९५६	९०	८
बिहार—			
सोन नहरें	१८७५	२९८	६५५
त्रिवेणी नहर विस्तार ...	१९५७	११३	६२
बम्बई—			
नीरा वाएं किनारे की नहर ...	१९०६	१४८	९०
परावरा नहरें	१९२६	१५१	९०
गंगापुर जलाशय ...	१९५७	३३४	४५
नीरा दाएं किनारे की नहरें ...	१९३८	४१२	८९
घाटप्रभा वाएं किनारे की नहरें	१९५७	५४५	१३८
काकड़ापार नहरें (निचली तापी)	१९५७	१,१०१	५६२
मध्य प्रदेश—			
तण्डुला नहरें	१९२५	१२०	१५८
महानदी नहरें	१९२७	१५९	१९९
मद्रास—			
पेरियार जल प्रणाली ...	१८९७	१०८	२०२
कावेरी मेट्टूर	१९३४	६४६	२३२
निचली भवानी	१९५५	९९१	२०७
मालमपुझा	१९५७	५२८	४६
अरण्यार जलाशय ...	१९५७	१०४	३
वालायार जलाशय ...	१९५७	११३	७
उड़ीसा—			
उड़ीसा की नहरें ...	१८९५	३८०	४०
पंजाब—			
पश्चिमी यमुना नहरें ...	१८२०	२०४	१,०१८
ऊपरी वारी दोआव नहर ...	१८७९	—	७८३
सरहिन्द नहर	१८८४	२९७	२,३१२

(१)	(२)	(३)	(४)
पूर्वी नहर	१९२८	११४	१९०
नंगल बांध	१९५४	४०६	—
उत्तर प्रदेश—			
गंगा नहर	१८५६	४८६	१,६२०
आगरा नहर	१८७५	१२९	३४३
निचली गंगा नहर ...	१८८०	४६७	१,२५१
शारदा नहर	१९३०	१,१५७	१,२९७
शारदा नहर का विस्तार ...	१९५५	११०	१७६
शारदा नहर का जलाशय (प्रथम चरण) ...	१९५७	४८०	१७२
माता टीला (प्रथम चरण) ...	१९५६	४८८	२६५
पश्चिम बंगाल—			
दामोदर नहरें	—	१२८	१८४
मयूराक्षी	१९५८	१,६११	६००
हैदराबाद—			
निज़ाम सागर	१९४०	४७२	२७५
गोदावरी (प्रथम चरण) .	१९५७	४४१	६७
मैसूर—			
कृष्णराजसागर नहरें ...	१९३२	२६०	९२
तुंग ऐनिकट	१९५७	२३१	२२
नुगु	१९५७	२४४	२०
तुंगभद्रा	१९५६	१,०२२	९३
राजस्थान—			
जवाई योजना कार्य ...	१९५६	३००	४५
पार्वती योजना कार्य ...	१९५६	८०	१५
मेजा योजना कार्य ...	१९५६	५९	४३
त्रिरुवांकुर-कोचीन—			
कुट्टनाड	१९५६	१०१	२१
पीची	१९५६	२०५	४६
पेरिंचानी	१९५५	६७	६
नेय्यार	१९५६	१४३	३१
जम्मू व कश्मीर—			
सिन्धु घाटी	१९५६	१२४	१८
सौराष्ट्र—			
रंगोला	१९५२	६२	—
ब्राह्मणी	१९५६	१००	२७
मौज	१९५४	८१	१५
आजी	१९५५	८०	६
माच्छू	१९५६	१२५	२२

विवरण २

जोते हुए और (कुल) सींचे हुए क्षेत्र १९५४-५५ की सूची (अस्थायी)

(इस अध्याय के पैरा ६ के अनुसार)

राज्य का नाम	समस्त क्षेत्र	वर्गीकृत क्षेत्र	खेती योग्य क्षेत्र	खेती का क्षेत्र	बोया हुआ क्षेत्र	सिंचाई के साधन	
						सरकारी नहरें	तालाब
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	(८)
आन्ध्र	४०,७११	४०,५७२	२४,५७०	१८,४९५	१६,२०४	२,८०५	१,४९८
असम	५४,४०८	३५,७१४	७,६८५	५,६७०	५,०३१	१८२	(क)
बिहार	४५,०११	४४,७९०	२६,६८५	२४,१०६	१९,८०५	७४८	८०३
बम्बई	७१,२१३	७१,१३९	५२,६९१	४४,३७०	४३,१८६	४७६	१८८
मध्य प्रदेश	८३,३७५	८२,९२४	४५,१२९	३२,३४९	३१,०१७	८७६	७२४
मद्रास	३८,६३२	३८,४५२	२५,९५१	१९,०५१	१६,६३६	१,९३९	२,०४०
उड़ीसा	३८,४८७	३८,४०१	२२,९८४	१६,२०६	१३,८२५	४७१	६८६
पंजाब	२३,९२२	२३,९१९	१५,८४९	१३,९१७	१३,३०७	३,२४५	७
उत्तर प्रदेश	७२,५९७	७४,७७४	५२,८३७	४२,०५७	४१,६५२	४,४२६	१,०३५
पश्चिम बंगाल...	१९,६९३	१९,८४६	१४,६७५	१३,१०५	११,८६०	४२०	८७०
हैदराबाद	५२,५७२	५१,०४५	४०,८३९	३३,९००	२९,४६३	२५४	१,०६८
मध्य-भारत	२९,७८५	२८,२९४	१९,७०७	१२,२५७	१२,०३१	१५९	२५

मसूर	२१,३१६	१६,५८४	१४,६१३	६,१३०	७,६२६	३०६	५६१
पेप्सू	६,४३१	६,३७१	५,८६६	५,१३६	४,६७५	१,६१६	—
राजस्थान	८३,३२७	८३,१६०	५८,६८७	२८,६५२	२५,८०५	८१८	१४०
सौराष्ट्र	१३,६५५	१२,६६६	६,१८७	८,४१७	८,१८७	४७	—
तिरुवांकुर-कोचीन	५,८५२	५,६५८	३,२५७	२,८६५	२,८२१	३४६	११३
जम्मू व कश्मीर	५६,३७६	५,५०७	२,८१३	१,६४३	१,६८१	२००	—
अजमेर	१,५४७	१,५४६	६६७	५७७	३६६	—	१८
भोपाल	४,४०२	४,४०६	२,७१४	१,८२८	१,८०२	४	३
कुर्ग	१,०१५	१,०१२	४३१	२०५	२०४	५	३
दिल्ली	३६६	५६६	२८७	२३०	२३०	४४	६
हिमाचल प्रदेश	६,६८२	२,३१३	१,७५६	७१६	६७६	—	—
कच्छ	१०,८६४	१०,८६४	२,७१६	१,६३४	१,२०६	१४	२
मणिपुर	५,५२२	३४६	३११	२१८	२१८	अनु०	—
त्रिपुरा	२,५८०	२,६३४	६६४	५०३	४७६	—	—
विन्ध्य प्रदेश	१५,१०४	१४,८४८	६,२७८	५,५६६	४,६०२	४	२७
अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह ...	२,०५८	८२	२६	१३	१२	—	—
उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी	अनु०	अनु०	अनु०	अनु०	अनु०	—	—
पांडिचेरी	७३	अनु०	५७	५७	५४	१६	—
योग ...	८,१०,८७६	७,२१,७३६	४,६६,८६८	३,४३,१७६	३,१४,६७०	१६,४३०	६,८१७

विवरण २

जोते हुए और (कुल) सींचे हुए क्षेत्र १९५४-५५ की सूची (अस्थायी)

(इस अध्याय के पैरा ६ के अनुसार)

—	सिंचाई के साधन				६ से ४ तक के कालमों का प्रतिशत	१२ से ६ तक के कालमों का प्रतिशत	१२ से ५ तक के कालमों का प्रतिशत	१२ से ४ तक के कालमों का प्रतिशत
	निजी नहरें	कुएं	अन्य साधन	योग				
	(९)	(१०)	(११)	(१२)	(१३)	(१४)	(१५)	(१६)
आन्ध्र	६३	४२१	१८१	४,९६८	६६·०	३०·६	२६·९	२०·२
असम	७६७	—	७३३	१,६८२	६५·५	३३·४	२९·७	२१·९
बिहार	३०२	४५४*	१,८८९	४,१९६	६६·७	२१·१	१७·४	१४·१
बम्बई	६९	१,५९०*	९३	२,४१६	८१·९	५·६	५·४	४·६
मध्य प्रदेश	(क)	२३९	९७	१,९३६	६८·७	६·२	६·०	४·३
मद्रास	५	१,१८७	१३७	५,३०८	६४·१	३१·९	२७·८	२०·६
उड़ीसा	७६	७०	६३२	१,९३५	६०·१	१३·९	११·९	८·४
पंजाब	१४१	१,८६१*	२४	५,२७८	८३·९	३९·६	३७·९	३३·३
उत्तर प्रदेश	३७	५,९९९*	७३८	१२,२३५	७८·८	२९·४	२९·१	२३·२
पश्चिम बंगाल	९५०	४०	५७०	२,८५०	८०·८	२३·२	२०·९	१८·७
हैदराबाद	८	६३८	५९	२,०२७	७२·१	६·८	६·०	४·९
मध्य भारत	—	३६८	१०	५६२	६१·१	४·७	४·६	२ ९

मैसूर	६	१२३	१४०	१,१३९	५३·२	१४·४	१२·५	७·६
पेप्सू	—	७४३*	२३	२,३८५	७९·९	५१·०	१४·५	४०·६
राजस्थान	७	१,८८१	६८	२,९१४	४३·९	११·३	१०·२	४·९
सौराष्ट्र	—	३९०	३	४४०	८९·१	५·४	५·२	४·७
तिरुवांकुर-कोचीन	६८	२६	३६८	९२१	८६·६	३२·६	३२·१	२८·३
जम्मू व कश्मीर	४२१	—	४९	६७०	५९·९	३९·८	३४·५	२३·८
अजमेर	—	११२	१	१३१	३८·८	३५·८	२२·७	१३·६
भोपाल	(क)	१६	४	२७	६६·४	१·५	१·४	१·०
कुर्ग	(क)	—	१	९	४७·३	४·४	४·४	२·१
दिल्ली	—	४७	—	९७	८०·१	४२·२	४२·२	३३·८
हिमाचल प्रदेश	—	(क)	९५	९५	३८·७	१४·१	१३·२	५·४
कच्छ	—	८३	—	९९	४४·५	८·१	६·१	३·७
मणिपुर	१४५	—	—	१४५	६९·८	—	—	—
त्रिपुरा	—	—	—	—	४८·२	—	—	—
विन्ध्य प्रदेश	—	१९९	२	२०२	४९·०	४·४	३·६	२·२
अंडमान और नीकोबार द्वीपसमूह ...	—	—	—	—	४१·४	—	—	—
उत्तर-पूर्वी सीमान्त ऐजेन्सी ...	—	—	—	—	—	—	—	—
पांडिचेरी	—	—	—	१९	९०·४	३ ५	३·३	३·३
योग	३,०६५	१६,४५७	५,९१७	५४,६८६	६७·५	१७·३	१५·९	११·७

टिप्पणी—राज्यानुसार दी हुई संख्याएं अस्थायी हैं और मणिपुर की संख्याओं का प्रमाणित होना शेष है।

अनु०—अनुपलब्ध

(क) ५०० एकड़ से भी कम क्षेत्र।

*इन संख्याओं में राज्यों के नलकूपों द्वारा सींचा गया प्रदेश भी सम्मिलित है।

खेती योग्य क्षेत्र=वर्गीकृत क्षेत्र–(जंगल+खेती के लिए अनुपलब्ध)

खेती का क्षेत्र=बोया हुआ कुल क्षेत्र+चालू पड़ती जमीन।

विवरण ३

द्वितीय योजना की मुख्य-मुख्य सिंचाई योजनाएं

(इस अध्याय के पैरा १६ के अनुसार)

योजना और राज्य का नाम	समस्त व्यय (लगभग) (लाख रु०)	द्वितीय योजना में सिंचाई पर व्यय (लाख रु०)	प्राप्त लाभ (हजार एकड़ों में)	
			पूरा होने पर	द्वितीय योजना के समय
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)
पहले से चलते हुए कार्यक्रम				
१. भाखड़ा-नंगल (पंजाब-पेप्सू और राजस्थान) ...	१६,०००†	२,८२३	३,६०४	२,३४७
२. दामोदर घाटी (पश्चिम बंगाल और बिहार) ...	८,६००†	६६३	१,१४१	७५०
३. हीराकुड (प्रथम चरण) महानदी के डेल्टा को मिलाकर (उड़ीसा) ...	८,५७०†	२,१६४	१,७८५	१,२८८
४. चम्बल (प्रथम चरण) (राजस्थान और मध्य भारत) ...	४,८०३†	२,१०५	१,१००	४८०
५. तुंगभद्रा (हैदराबाद, आंध्र और मैसूर) ...	६,०००†	५५०	७००	३७०
६. मयूराक्षी (पश्चिम बंगाल) ...	१,६११†	२१२	६००	६००
७. भद्रा (मैसूर) ...	१,७७५†	१,१०२	२२४	१७६
८. कोसी (बिहार) ...	४,५६५	१,७००	१,६००	—
९. नागार्जुनसागर (प्रथम चरण) (आन्ध्र और हैदराबाद) ...	७,५०८	३,४००	१,६१०	—
*१०. तुंगभद्रा (ऊंची सतह की नहर) (आंध्र और मैसूर)	१,८६६	६२०	३८०	२४
११. काकड़ापार नहर (निचली तापती) (बम्बई) ...	१,१०१	३८६	५६२	३०६

†इसमें बिजली के लिए किया हुआ व्यय भी सम्मिलित है।

*ये अंक अभी अन्तिम रूप से नहीं माने गए।

योजना और राज्य का नाम	समस्त व्यय (लगभग) (लाख रु०)	द्वितीय योजना में सिंचाई पर व्यय (लाख रु०)	प्राप्त लाभ (हजार एकड़ों में)	
			पूरा होने पर	द्वितीय योजना के समय
१	२	३	४	५
नई योजनाएं				
*१. उकाई (बम्बई)	६,०००†	६५०	६१४	—
*२. तवा (मध्य प्रदेश)	१,८३९†	७११	५९०	—
३. पूर्णा (हैदराबाद)	७७३†	५००	१५७	६०
*४. वंशधारा (आन्ध्र)	१,२५६	१००	३०६	—
५. नर्मदा (बम्बई)	२,५००	४००	१,१५७	—
*६. बनास (बम्बई)	७३७	३००	१२०	—
७. मूला (बम्बई)	८३९	३५०	२०४	—
८. गिरना (बम्बई)	८०८	५५०	१८४	२०
९. खड़गवासला (बम्बई)	१,१८२	४००	२०४	—
१०. न्यू कट्टालाई (मद्रास)	१४९	१४८	२१	१२
११. सलन्दी (उड़ीसा)	४४५	४२५	३५३	१७२
१२. गुड़गांव नहर (पंजाब)	२३०	१५४	१०६	५०
*१३. कंस बाटी (प० बंगाल)	२,५१४	५००	९५०	—
१४. चन्द्रकेशर (मध्य भारत)	७५	७५	१५	१५
१५. काविनी (मैसूर)	२५०	२५०	३०	६
*१६. बनास (राजस्थान)	४८०	२८०	२५०	१०
१७. भादर (सौराष्ट्र)	४००	१०६	६०	—
१८. वूथायंकेट्टू (तिरुवांकुर-कोचीन)	३४८	३४८	६३	३२
१९. लिद्दर नहर (जम्मू व कश्मीर)	७५	५८	१५	३
*२०. वरणा या कोलार (भोपाल)	४००/५००†	२३०	२५०	—
२१. लक्ष्मनतीर्थ (कुर्ग)	२५	२५	३	३
२२. कसयारी (विन्ध्य प्रदेश)	१६०	२५	४०	—
२३. विदुर (पांडिचेरी और मद्रास)	६१	६१	४	४

*ये अंक अभी अन्तिम रूप से नहीं माने गए।

†इसमें बिजली के लिए किया हुआ व्यय भी सम्मिलित है।

विवरण ४
सिंचाई योजना कार्यों में लगाई हुई पूंजी और उससे प्राप्त लाभों का संक्षिप्त विवरण
(इस अध्याय के पैरा १९ के अनुसार)

राज्य का नाम	समस्त अनुमानित व्यय: प्रथम योजना के कार्यक्रम	समस्त अनुमानित व्यय: प्रथम योजना से द्वितीय में चले आए कार्यक्रम	समस्त अनुमानित व्यय: द्वितीय योजना के नए कार्यक्रम	समस्त अनुमानित व्यय: ३ और ४ कालमों का योग	द्वितीय योजना के वे कार्यक्रम जो आगे चलते रहेंगे और नए कार्यक्रम	द्वितीय योजना के कार्यक्रमों से प्राप्त लाभ (हजार एकड़ों में): प्रथम योजना के कार्यक्रम	द्वितीय योजना के कार्यक्रमों से प्राप्त लाभ (हजार एकड़ों में): द्वितीय योजना के नए कार्यक्रम	द्वितीय योजना के कार्यक्रमों से प्राप्त लाभ (हजार एकड़ों में): ७ और ८ कालमों का योग	मार्च १९६१ के बाद: व्यय लाख रु० में	मार्च १९६१ के बाद: लाभ हजार एकड़ों में
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
	लाख रुपए									
आन्ध्र	९,०८६	६,८७२	१,५१८	८,३९०	३,२३०.९	४७५	२०	४९५	४,१६६	१,७०६
असम	२५१	—	६७	६७	६३.७	८२	—	८२	—	—
बिहार	५,७४७	३,८४०	६,२९०	१०,१३०	३,३५३.५	२८७	३००	५८७	७,०८५	५,२७२
बम्बई	३,८५३	३,७८५	१२,८५१	१६,६३६	६,७९०.०	७८३	३८७	१,१७०.	६,१६२	३,९२९
मध्य प्रदेश	३८३	३५५	१,७६४	२,११९	१,१८७.५	२३४	११०	३४४	६८३	५६४
मद्रास	३,६२०	२,६३९	४६९	३,१०८	१,३६५.२	१५६	३३	१८९	२	१६
उड़ीसा	७,१२७	६,७२०	६७१	७,३९१	२,६५४.३	१,०३८	२०४	१,२४२	१४७	१,००७
पंजाब	८,३८६	८,१०२	७५५	८,८५७	२,९९४.१	१,६५०	२२८	१,८७८	३०२	४८६
उत्तर प्रदेश	४,८२१	१,७६६	४,३७०	६,१३६	२,५८०.०	२४६	७५१	९९७	१,९३०	९६३
पश्चिम बंगाल	५,३०१	५,१२०	२,६४३	७,७६३	१,७७१.०	१,१९६	४८	१,२४४	२,०२९	१,२६९
हैदराबाद	७,३११	७,१११	१,०९०	८,२०१	३,०३१.५	६४०	१४०	७८०	१,९५१	२३

मध्य भारत	२,०७६	१,८६४	६१७	२,५११	१,७९९·७	१७८	१०९	२८७	३९९	५५९
मैसूर	३,०८१	२,८५०	४७८	३,३२८	१,६५३·८	१३८	५०	१८८	४१४	२१२
पेप्सू	२,३६४	२,३३३	४	२,३३७	५९३·०	६३४	—	६३४	—	१७३
राजस्थान	५,३३१	४,३४२	१,३७५	५,७१७	२,४५०·०	८८०	२५५	१,१३५	१,२३७	१,१९५
सौराष्ट्र	१,३८२	८१३	६८४	१,४९७	६१८·६	१००	४१	१४१	२९४	११४
तिरुवांकुर-कोचीन	७६७	५९९	५६४	१,१६३	६१७·४	१००	७५	१७५	—	३१
जम्मू व कश्मीर	५०६	१५८	३०१	४५९	२८२·७	९७	६०	१५७	१००	५६
अजमेर	५०	४२	८३	१२५	६५·३	६	१२	२१	२१	६
भोपाल	१०	—	५६५	५६५	२८०·३	—	१२	१२	२७०	२५०
कुर्ग	—	—	२५	२५	२३·८	—	३	३	—	—
दिल्ली	—	—	१५	१५	१६·६	—	२१	२१	—	—
हिमाचल प्रदेश	८०	—	—	—	—	७६	—	७६	—	—
कच्छ	१४५	१३७	४७	१८४	६२·३	२४	१७	४१	—	६
मणिपुर	—	—	१०	१०	६·५	—	—	—	—	—
त्रिपुरा	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
विन्ध्य प्रदेश	८१	८१	३५५	४३६	२२३·५	२५	६८	६३	१३६	८४
अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
पांडिचेरी	—	—	३३	३३	२२·५	—	२	२	—	—
योग	७१,७६२	५९,५५९	३७,६४४	९७,२०३	३८,०९७·७	६,०४८	२,९४६	११,९९४	२७,३३१	१८,८५४

विवरण ५

द्वितीय योजना के बिजली उत्पादन के मुख्य कार्यक्रम

(इस अध्याय के पैरा ३३ और ४१ के अनुसार)

(१) सरकारी क्षेत्र

कार्यक्रम और राज्य का नाम	समस्त व्यय लाख रु० में	द्वितीय योजना में बिजली के लिए किया हुआ व्यय (लाख रु० में)	प्राप्त लाभ हजार किलोवाट में: पूर्ण हो चुकने पर	प्राप्त लाभ हजार किलोवाट में: द्वितीय योजना के समय में
१	२	३	४	५
जारी योजनाएं				
१. तुंगभद्रा (आन्ध्र, हैदराबाद और मैसूर)	६,०००*	७९५	५४	५४
२. भाखड़ा-नंगल (पंजाब, पेप्सू और राजस्थान)	१६,०००*	२,७६६	५९४	५४६
३. हीराकुड (प्रथम चरण) (उड़ीसा)	८,५७०*	८०३	१२३	१२३
४. दामोदर घाटी निगम (बंगाल और बिहार)	८,६००*	१,०६२	२५४	१००
५. चम्बल, (प्रथम चरण) (मध्य-भारत और राजस्थान)	४,८०३*	१,३३०	६६	६६
६. मच्छकुण्ड (आन्ध्र और उड़ीसा)	२,७३२	६११	८५	५१
७. उम्रू (असम)	१५८	५३	७·५	७·५
८. कोयना (बम्बई)	३,३२२	२,६००	२४०	२४०
९. परियार (मद्रास)	१,०४८	७९८	१०५	१०५
१०. मद्रास, तापीय बिजलीघर का विस्तार (मद्रास)	१,०४३	२७१	६०	३०
११. रिहन्द (उत्तर प्रदेश)	४,५२६	२,६००	२५०	१५०
१२. रामगुण्डम (हैदराबाद)	४०६	५२	३८	३८
१३. तापीय बिजलीघर (राजस्थान)	३१०	२१६	२४	२४
१४. नेर्यामंगलन (तिरुवांकुर-कोचीन)	२९०	२६०	४५	४५
१५. पोरिंगलकुथू (तिरुवांकुर-कोचीन)	३४६	२०	३२	३२

*इस व्यय में सिंचाई के लिए किया गया व्यय भी शामिल है।

१	२	३	४	५
		नई योजनाएं		
१. उकाई (बम्बई)†	६,०००*	—	१६०	—
२. तवा (मध्य प्रदेश)	१,८३६*	—	३०	—
३. पूर्णा (हैदराबाद)	७७३*	२१८	१०	१०
४. चम्बल (द्वितीय चरण) (मध्य भारत और राजस्थान)	१,३५६*	५००	९२	२३
५. सिलेरू (आन्ध्र)	२,४५३	५०	७५	—
६. मच्छकुण्ड का विस्तार (आंध्र और उड़ीसा)	२८०	२५०	१७	१७
७. तुंगभद्रा, नेल्लोर योजना (आन्ध्र और मैसूर)	७७०	७२५	६६	६६
८. उम्त्रू, (द्वितीय चरण) (असम)	१००	१००	५	५
९. चरापूंजी भाप विजलीघर (असम)	७०	६०	५	५
१०. बरौनी भाप बिजलीघर (बिहार)	४८४	४८४	२०	२०
११. दक्षिणी गुजरात बिजली का ग्रिड (द्वितीय चरण) (बम्बई)	४५०	४००	४५	४५
१२. कोरबा तापीय बिजलीघर (मध्य प्रदेश)	१,२३४	१,१७९	९०	९०
१३. दक्षिणी ग्रिड का विस्तार (मध्य प्रदेश)	७७७	७७७	६०	६०
१४. कटनी का बिजलीघर (मध्य प्रदेश)	२७०	२७०	२०	२०
१५. कुण्टा (मद्रास)	३,५४४	२,३००	१८०	१४५
१६. पाइकाड़ा बांध (मद्रास)	३०	३०	३	३
१७. पापनाशम बांध (मद्रास)	४१	४१	४	४
१८. हीराकुड, (द्वितीय चरण) (उड़ीसा)	१,४३२	१,२५०	१०९	१०९
१९. यमुना पन-बिजली योजना (उत्तर प्रदेश)	२,०८३	९९०	२०१	५१

*इस व्यय में सिंचाई के लिए किया हुआ व्यय भी शामिल है।

†ये अंक अभी तक अन्तिम रूप में नहीं माने गए।

१	२	३	४	५
२०. पश्चिमी उत्तर प्रदेश की एक योजना	१,१००	५०	७५	—
२१. हरदुआगंज के भाप-बिजली-घर का विस्तार (उत्तर प्रदेश)	३००	३००	३०	३०
२२. माताटीला नहर योजना (उत्तर प्रदेश)	४५३	३७७	१५	१५
२३. कानपुर के बिजलीघर का विस्तार (उत्तर प्रदेश)	१८६	१८६	१५	१५
२४. जलढाका पन-बिजली योजना (पश्चिम बंगाल)	३५०	१५०	१७	—
२५. कोनार पन-बिजली योजना अथवा उसका कोई विकल्प (दामोदर घाटी निगम, पश्चिम बंगाल और बिहार)	४४९	*...	४०	—
२६. दुर्गापुर का तापीय-बिजलीघर (दामोदर घाटी निगम, पश्चिम बंगाल और बिहार)	१,४८०	१,४८०	१५०	१५०
२७. बोकारो बिजलीघर का विस्तार, दामोदर घाटी निगम (पश्चिम बंगाल और बिहार)	४५६	४५६	५०	५०
२८. तुंगभद्रा का विस्तार (हैदराबाद)	५०	५०	९	९
२९. गंदरबल का बिजलीघर (जम्मू व कश्मीर)	४६	४६	६	६
३०. मोहोरा बिजलीघर (जम्मू व कश्मीर)	८९	८९	६	६
३१. भद्रा (मैसूर)	२४२	८२	३३	३३
३२. शरावती (मैसूर)	२,२९७	१,३००	१४२	—
३३. जोधपुर (राजस्थान)	३०	३०	३	३
३४. राजकोट (सौराष्ट्र)	२०	२०	२	२
३५. पोरबन्दर (सौराष्ट्र)	१५०	१५०	१५	१५
३६. जामनगर (सौराष्ट्र)	९५	९५	१०	१०
३७. मौरवी-वांकानेर (सौराष्ट्र)	६४	६४	४	४

*द्वितीय योजना के समय व्यय करने का प्रश्न विचाराधीन है।

१	२	३	४	५
३८. भावनगर (सौराष्ट्र)	५०	५०	८	८
३९. सुरेन्द्रनगर (सौराष्ट्र)	७२	७२	४	४
४०. वीरावल (सौराष्ट्र)	१००	१००	१०	१०
४१. पन्नियार (तिरुवांकुर-कोचीन)	२६५	२६५	३०	३०
४२. शोलायार (तिरुवांकुर-कोचीन)	४२५	३६१	५४	५४
४३. पाम्बा अथवा पोरिंगलकुथु (तिरुवांकुर-कोचीन)	१,०००	४००	७५	—
४४. बढार और सतना के बिजलीघरों का विस्तार (विन्ध्य प्रदेश)	२६०	२४०	२०	२०

(२) निजी क्षेत्र

संस्थान का नाम	बढ़ाई जाने वाली क्षमता का परिमाण (किलोवाट में)	बिजली उत्पादक संयंत्र की लागत (लाख रु० में)
१	२	३
१. कलकत्ता का बिजली निगम (बंगाल)	५०,०००	४३०
२. अहमदाबाद बिजली कम्पनी लि० (बम्बई)	४५,०००	२९८
३. टाटा के बिजली कारखाने (बम्बई)		
(क) ट्राम्बे तापीय-बिजलीघर	१,००,०००	१,४००
(ख) भिड़ा के पन-बिजलीघरों का विस्तार	६०,०००	५५०
४. शोलापुर (बम्बई)	३,०००	३०
५. जबलपुर बिजली कम्पनी (मध्य प्रदेश)	४,०००	३५
६. आगरा बिजली कम्पनी (उत्तर प्रदेश)	४,०००	२५
७. बनारस बिजली और शक्ति कम्पनी लि० (उत्तर प्रदेश)	४,०००	२५
८. यूनाइटेड प्राविन्सेज इलेक्ट्रिक सप्लाई कम्पनी लि० (उत्तर प्रदेश)	४,०००	२५
९. भावनगर बिजली कम्पनी लि० (सौराष्ट्र)	८,०००	५०
१०. छोटे कार्यक्रम	५,०००	३३
योग	२,८७,०००	२,९११

विवरण ६

बिजली योजनाओं में लगी हुई पूंजी और उससे प्राप्त लाभों का संक्षिप्त विवरण

(इस अध्याय के पैरा ४२ के अनुसार)

राज्य का नाम	समस्त अनुमानित व्यय लाख रु० में: प्रथम योजना में शुरू होकर द्वितीय योजना में आए हुए कार्यक्रम	द्वितीय योजना के नए कार्यक्रम	२ और ३ कालमों का योग	द्वितीय योजना के कार्यक्रमों को आगे जारी रखने का और नए कार्यक्रमों का व्यय लाख रु० में	द्वितीय योजना के समय प्राप्त लाभ—स्थापित क्षमता हजार किलोवाट में: प्रथम योजना के चलते हुए कार्यक्रमों द्वारा	द्वितीय योजना के नए कार्यक्रमों द्वारा	६ और ७ कालमों का योग	पीछे से द्वितीय योजना में आए हुए कार्यक्रम: व्यय लाख रु० में	प्राप्त लाभ हजार किलोवाट में
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
आन्ध्र	३,१६१·०	४,०९१·५	७,२५२·५	२,०९९·५	६४·५	७०·७	१३५·२	२,४७८	७५·०
असम	२००·०	३३६·०	५३६·०	३८०·०	७·५	८·१५	१५·६५	—	—
बिहार	२,४०६·५	२,५२९·०	४,९३५·५	२,७००·०	५२·२५	१२०·०	१७२·२५	३,८३९	१६०·०
बम्बई	३,९७६·०	५,३८९·०	९,३६५·०	४,१००·०	२४८·०	४६·०	२९४·०	५१८	३०·०
मध्य प्रदेश	—	३,०१८·३	३,०१८·३	२,३९३·२	२३·०	१७०·०	१९३·०	१,२४४	३५·०
मद्रास	४,६७३·०	५,८६७·०	१०,५४०·०	५,७५९·८	१३५·०	१५२·०	२८७·०	—	—
उड़ीसा	३,४६८·०	१,८०८·०	५,२७६·०	२,५५२·६	१३८·३	११९·४	२५७·७	—	—
पंजाब	४,६९८·०	५८२·०	५,२८०·०	२,७४३·६	५४६·०	—	५४६·०	३,००७	३२५·०
उत्तर प्रदेश	६,७९९·०	५,१६०·४	११,९५९·४	५,४६२·५	१९०·६	१११·०	३०१·६	२३०	१७·०
पश्चिम बंगाल	१,८३३·०	१,६३३·७	३,४६६·७	१,२९९·०	५४·०	१००·८४	१५४·८४		

हैदराबाद	७१७·६	१,०८२·८	१,८००·७	१,२५८·८	५६·०	१९·०	७५·०	१३६	९·०
मध्य भारत	१,००५·०	८००·४	१,८०५·४	१,१५५·३	३९·५	१८·५	५८·०	२०८	३७·५
मैसूर	७०४·६	२,९५१·९	३,६५६·५	२,१३७·५	७·२	४०·४	४७·६	१,००१	१४२·०
पेप्सू	१,३९८·०	२०७·०	१,६०५·०	८८९·०	—	—	—	—	—
राजस्थान	२,१९३·०	६५४·०	२,८४७·०	१,६००·०	५८·३	२०·७	७९·०	२१८	३७·५
सौराष्ट्र	२१२·०	७५९·२	९७१·२	४७५·०	३·०	५६·५५	५९·५५	१०९	१०·०
तिरुवांकुर-कोचीन	६३८·०	२,६२०·०	३,२५८·०	२,१८५·०	७७·०	८४·०	१६१·०	६००	७५·०
जम्मू व कश्मीर	१८२·०	३२९·२	५११·२	३२९·१	०·३	१५·७५	१६·०५	३०	—
अजमेर	७·५	१०५·०	११२·५	९९·५	—	०·१७	०·१७	—	—
भोपाल	७१·०	१६१·०	२३२·०	१९८·१	—	६·०	६·०	—	—
कुर्ग	—	४३·०	४३·०	३९·०	—	०·३६	०·३६	—	—
दिल्ली	—	४२५·०	४२५·०	४०३·८	—	—	—	—	—
हिमाचल प्रदेश	७१·०	२०९·३	२८०·३	२१३·८	१·०	२·१	३·१	३४	—
कच्छ	९४·०	११७·५	२११·५	१०४·१	६·३	—	६·३	१३	—
मणिपुर	—	१००·०	१००·०	९५·०	—	—	—	—	—
त्रिपुरा	—	४५·०	४५·०	४२·८	—	२·३	२·३	—	—
विन्ध्य प्रदेश	१०२·०	३३०·०	४३२·०	३२८·९	३·८४	२०·०	२३·८४	२०	—
अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	—	२·५	२·५	२·५	—	—	—	—	—
उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी	—	१९·०	१९·०	१९·०	—	०·७९	०·७९	—	—

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
पांडिचेरी	१३·०	४८·३	६१·३	६०·०	—	—	—	१	—
दामोदर घाटी निगम—अतिरिक्त कार्यक्रमों में केन्द्र का भाग	१,८३३·०	८८७·०	२,७२०·०	१,२२०·०	—	—	—	८५६	—
योग	४०,४५६·५	४२,३१२·०	८२,७६८·५	४२,६८७·३	१,७११·५६	१,१८४·७१	२,८६६·३	१४,५४२	६५३

अध्याय १८

खनिज साधनों का विकास

प्रथम योजना में प्रगति

प्रथम योजना में इस बात की व्यवस्था की गई थी कि देश में महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों की निधि का उसके गुण और परिमाण के अनुसार लेखा-जोखा करने के लिए ब्योरेवार और प्रणालीबद्ध जांच-पड़ताल की जाए। यह कार्य भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग, भारतीय खान विभाग और राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं के जिम्मे रखा गया। भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग और भारतीय खान विभाग के विस्तार के लिए १ करोड़ रुपए की रकम भी नियत की गई थी जो बाद में बढ़ाकर २·५ करोड़ कर दी गई, ताकि विस्तार का काम अधिक शीघ्रता से हो सके। योजना म कुछ विशेष सिफारिशें की गई थीं, जिनमें ये बातें शामिल थीं :—

(क) कोयला :

१. धातुकर्मक कोयले के संरक्षण के लिए उपाय करना, उत्पादन का नियमन करना, धुलाई और मिश्रण लागू करना और संरक्षण के लिए ठीक-ठीक चिनाई करना;
२. महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्रों के ब्योरेवार नक्शे बनाना और ठीक चिनाई के योग्य मान की निधि का लेखा-जोखा करना;
३. कोयले के कलरी मान, राख, नमी, और कोक तत्व की मात्रा के अनुसार उसका वैज्ञानिक वर्गीकरण निश्चित करना;
४. फुटकर कोयला क्षेत्रों का उत्पादन बढ़ाना,
५. कोयले की धुलाई, मिश्रण और कार्बनीकरण पर खोज कार्य करना,
६. संरक्षण के लिए ठीक चिनाई, कोयले की धुलाई, मिश्रण और उपकरों के समन्वय आदि के लिए व्यवस्था करना और कोयले सम्बन्धी सभी समस्याओं को समन्वित ढंग से निपटाने के लिए एक व्यवस्था करना, और
७. गोबर को खाद इत्यादि कामों के लिए बचाने के उद्देश्य से सुनायस सापट कोक का प्रयोग घरेलू कामों में बढ़ाना।

(ख) अन्य खनिज पदार्थ :

१. खनिज लोहे, खनिज मैंगनीज, क्रोमाइट, खनिज तांबा, बाक्साइट, जिप्सम और पाइराइट के और अधिक महत्वपूर्ण निक्षेपों का उनके गुण और परिमाण के अनुसार ठीक-ठीक लेखा-जोखा करने के लिए ब्योरेवार जांच करना; और
२. निचली कोटि की खनिज धातुओं, विशेषकर खनिज और मैंगनीज क्रोमाइट को सुधारने की दिशा में जांच करना; और
३. प्रणालीबद्ध तरीकों से खुदाई कराना।

२. ऊपर दी गई सिफारिशों पर नीचे लिखी कार्रवाई की गई है :

(क) कोयला :

१. धातुकर्मक कोयले के संरक्षण के लिए कोयला खान (संरक्षण और सुरक्षा) अधिनियम, १९५२ पास किया गया जो कि इस दिशा में एक निश्चित कदम था। इस अधिनियम के अंतर्गत मिली शक्तियों के आधार पर कच्चा कोयला देने वाले कोयले का उत्पादन १९५२ से सीमित कर दिया गया। शुरू में यह अधिनियम क और ख कोटियों पर ही लागू किया गया लेकिन १९५३ में १ और २ कोटियों के कोक कोयले पर भी लागू किया गया। इस अधिनियम में संरक्षण के लिए ठीक चिनाई और कोयले की धुलाई के बारे में भी अधिकार प्राप्त कर लिए गए।

गत चार वर्षों में कोक कोयले के उत्पादन की निर्धारित सीमाएं और वास्तविक उत्पादन का ब्योरा नीचे दिया जा रहा है :—

(आंकड़े लाख टन में)

वर्ष	चुनी हुई कोटियां		कोटी १ और २	
	निर्धारित सीमा	उत्पादन	निर्धारित सीमा	उत्पादन
१९५२	७९·०	७७·०	—	६४
१९५३	७४·०	७१·७	६४.०(क)	६६
१९५४	७४·०	७२·०	६४.०(क)	६४
१९५५	७२·२	७२·०†	७०	६३†

२. रानीगंज, झरिया और बोकारो के कोयला क्षेत्रों की दुबारा की गई पड़ताल के अनुसार यह पता चला है कि रानीगंज और झरिया क्षेत्रों में काफी अधिक मात्रा में कोयला है। करणपुर कोयला क्षेत्र की दुबारा पड़ताल से, जो अभी हो रही है, कोयले की कई नई जगहों का पता लगा है। कहा जाता है कि झिलीमिल्ली कोयला क्षेत्र में कोक कोयला है। उसकी अच्छी तरह छानबीन हो रही है। बंगाल-बिहार के कोयला क्षेत्रों वाले भूभागों में ठीक चिनाई योग्य कितना माल उपलब्ध है, उसका अध्ययन करने के लिए एक समिति बनाई गई है जो अपनी रिपोर्ट देगी;

३. भारतीय मानक संस्था की एक समिति—ठोस खनिज ईंधन अनुभागी समिति—ने कोयले का भारतीय मानक सामान्य वर्गीकरण मसविदा तैयार किया है जो स्वीकार किए जाने के लिए संस्था के विचाराधीन है;

४. सिंगरेनी की कोयला खानों का उत्पादन बढ़कर १५ लाख टन हो गया है। मध्य भारत की भी कई कोयला खानों में उत्पादन बढ़ाने की गुंजाइश है, लेकिन परिवहन सीमित होने की वजह से उत्पादन बढ़ाया नहीं जा सकता;

५. ईंधन अनुसंधानशाला ने कोयले की धुलाई, मिश्रण और कार्बनीकरण के बारे में प्रयोगशाला में जो अध्ययन कार्य किया है उसके अच्छे परिणाम निकले हैं। यह छानबीन एक मार्गदर्शक संयंत्र की सहायता से जारी रहेगी;

†अनुमानित उत्पादन।

(क) उत्पादन १९५२ की मात्रा पर निर्धारित कर दिया गया था।

६. कोयला खान (संरक्षण और सुरक्षा) अधिनियम, १९५२ केन्द्रीय सरकार को संरक्षण सम्बन्धी उपाय लागू करने का अधिकार देता है। एक कोयला बोर्ड स्थापित किया गया है जिसके लिए कई सलाहकार समितियां हैं तथा अधिनियम के अनुभाग १७ के अधीन नियम जारी किए गए हैं; और

७. ईंधन के रूप में सॉफ्ट कोक का महत्व माना तो गया है, लेकिन परिवहन की कठिनाइयों के कारण इस दिशा में विस्तार सीमित रहा।

३. हालांकि कोयले के उत्पादन का कोई लक्ष्य निर्धारित नहीं किया गया था, फिर भी आशा यह थी कि प्रथम योजना में दिए विकास कार्यक्रमों के फलस्वरूप मांग में जो वृद्धि होगी उसके हिसाब से उत्पादन १९५० के ३ करोड़ २३·१ लाख टन से बढ़कर १९५५-५६ में ३ करोड़ ६० लाख टन हो जाएगा। सिर्फ १९५३ में निर्यात के लिए मांग में कमी हो जाने की वजह से जो भंडार इकट्ठा हो गया था उसी से उत्पादन कुछ गिर गया था। उसको छोड़कर उत्पादन १९५१ से लगातार बढ़ता ही आया है और १९५५ में ३ करोड़ ८२·२ लाख टन हो गया। नीचे १९५० से १९५५ तक कोयले के उत्पादन में वृद्धि, भेजे हुए माल की मात्रा और निर्यात सम्बन्धी आंकड़े दिए जा रहे हैं :—

(आंकड़े लाख टन में)

वर्ष	उत्पादन में वृद्धि	भेजे हुए माल की मात्रा	निर्यात
१९५०	३२३·१	२९८·०	६·५०
१९५१	३४३·०	२९१·०	२७·३१
१९५२	३६३·०	३१०·०	३२·९८
१९५३	३५९·७	३०६·०	१९·८१
१९५४	३६७·७	३१९·४	२०·२२
१९५५	३८२·२	३२९·६	१५·७४

छानबीन

४. भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण और भारतीय खान विभाग का विस्तार आशानुरूप शीघ्र, विशेषकर योजना के प्रथम वर्ष में, न हो सका। कारण यह हुआ कि टेकनीकल कर्मचारियों की भरती और साज-सामान जुटाने में देरी हुई थी। फलस्वरूप जितना काम हो सका वह निर्धारित काम से कम है। लेकिन फिर भी जो भी कर्मचारी और साज-सामान उपलब्ध थे, उनकी सीमाओं को देखते हुए लाभदायक काम तो हुआ ही है। इन दोनों विभागों के विस्तार में खर्च जिस हिसाब से हुआ है वह नीचे दिया जा रहा है :—

(लाख रुपए)

	१९५१-५२		१९५२-५३		१९५३-५४		१९५४-५५		१९५५-५६	
	भा० भू० स०	भा० खान वि०	भा० भू० स०	भा० खान वि०	भा० भू० स०	भा० खान वि०	भा० भू० स०	भा० खान वि०	भा० भू० स०	भा० खान वि०
योजना	८·२०	२·२६	१३·२३	६·९६	१४·३०	८·६४	१८·३०	१०·१५	४५·१३	२८·००
वास्तविक	१·०६	०·२६	४·७३	१·१०	५·३०	३·३६	९·७७	१४·६५	२०·८६	१६·६३

५. भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग ने नियमित रूप से उन्नतिशील खनिज खानों के भूगर्भ सम्बन्धी नक्शे बनाने और ब्योरेवार छानवीन करने के अलावा मध्य प्रदेश की खनिज मैंगनीज की पट्टी पर विशेष ध्यान दिया। इस क्षेत्र के नक्शे की जो बड़े पैमाने पर तैयारी हुई, उससे पता चला कि यहां खनिज मैंगनीज की निधि जितनी पहले आंकी जाती थी उससे कहीं ज्यादा है। इसी प्रकार जवर सीसा जस्ता निक्षेप के बारे में भी जांच हो रही है। भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के भू-भौतिकी अनुभाग का काम काफी बढ़ गया है। विशेष रूप से इन भू-भौतिक जांचों की चर्चा की जा सकती है: (क) कैम्वे के उत्तर-पश्चिम में सम्भावित तेल धारक आगारों के स्थान, (ख) नीचे गहराई में खनिज धातुशालाओं के स्थान के लिए मध्य प्रदेश की खनिज मैंगनीज पट्टी; और (ग) सिंहभूम (बिहार) एवं चित्रदुर्ग (मैसूर) में खनिज सल्फाइड का विस्तार निश्चित करने के लिए सल्फाइट शालाएं। इस भू-भौतिकी जांच के बाद चित्रदुर्ग क्षेत्र में विस्तार से भू-छेदन कार्य (ड्रिलिंग) शुरू किया गया। अमजोर पाइराइट संचय की जो खोज-खुदाई की गई उससे निक्षेप के एक छोटे-से हिस्से में से ही, जिसकी जांच की गई थी, लगभग ७५,००० टन निक्षेप का पता लगा है।

६. भारतीय खान विभाग ने खनिज मैंगनीज, क्रोमाइट और अवरक की अधिकांश प्रमुख चालू खानों का निरीक्षण करके उनके कामों के बारे में महत्वपूर्ण आंकड़े इकट्ठे किए हैं। खुदाई के ऐसे तरीकों को जिनमें बरबादी होती है, ठीक करने के लिए उपाय किए जा रहे हैं। निम्नलिखित खनिज निधियों की सविस्तर जांच हुई है—अंडमान में जिप्सम, आन्ध्र में अस्बेस्टास, शिमला में पाइराइट, पन्ना में हीरे, आंध्र और मैसूर में क्रोमाइट और लद्दाख में गंधक। इसके अलावा यह विभाग भिलाई और राउरकेला इस्पात संयंत्रों के लिए जरूरी कच्चा माल ढूंढने के बारे में जांच पड़ताल कर रहा है।

निचली कोटि की खनिज मैंगनीज को काम के लायक बनाने के बारे में जो प्रारम्भिक जांच हुई थी उससे अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं और अब यह जांच आदि संयंत्र के आधार पर की जाती है। मध्य प्रदेशीय खनिज मैंगनीज सिंडिकेट द्वारा गुरुतर माध्यमी विभाजक संयंत्र का लगाया जाना खनिज मैंगनीज का उपयोग करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा। कम्पनी जल्दी ही एक और धुलाई संयंत्र लगवाने का विचार कर रही है।

७. केन्द्रीय कांच और मृच्छिल्प (सिरेमिक) अनुसन्धानशाला ने भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के सहयोग से चिकनी मिट्टी के कच्चे सामान के विषय में सविस्तर जांच की है। बेकार अवरक की उपयोगिता के सम्बन्ध में भी जांच की गई है, जिसके परिणाम अच्छे रहे हैं।

८. राष्ट्रीय धातुकर्मक प्रयोगशाला के खनिज धातु परिष्कार अनुभाग ने क्रोमाइट, खनिज मैंगनीज और क्यानाइट पर सुधार परीक्षण किए हैं। परिणाम उत्साहवर्धक रहे हैं और नौरजाबाद की कोयला खानों के कोयला धोने से पाइराइट निकालने के बारे में की गई जांच भी सफल रही है। इसके अलावा इस प्रयोगशाला ने देशी रेत को लेकर तमाम परीक्षण इसलिए किए हैं कि भट्ठियों में सांचों द्वारा ढलाई के काम योग्य रेत की उपयोगिता निश्चित की जा सके।

९. पश्चिम बंगाल में पैट्रोलियम की खोज करने के उद्देश्य से भारत सरकार ने स्टैन्डर्ड वैक्यूम आयल कम्पनी लिमिटेड से एक करार किया है। इसके अलावा राजस्थान के

जसलमेर इलाके में तेल की विभागीय खोज १९५५-५६ में शुरू की गई थी और प्राकृतिक साधन और वैज्ञानिक अनुसन्धान मंत्रालय ने एक तेल और प्राकृतिक गैस विभाग स्थापित किया था जो इस दिशा में विस्तृत खोज करने के लिए तेल और प्राकृतिक गैस के एक अलग निदेशालय का रूप ग्रहण कर चुका है।

खनिज उत्पादन

१०. योजना के पहले तीन वर्षों में खनिज उत्पादन मात्रा और मूल्य दोनों दृष्टियों से सामान्य रूप से बढ़ा, लेकिन खनिज मैंगनीज और अबरक के बाजार में एकाएक मन्दी आ जाने की वजह से १९५४ में उसकी मात्रा और मूल्य काफी गिर गए। अधिक महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों के उत्पादन अंक नीचे दिए जा रहे हैं :

		१९५०	१९५१	१९५२	१९५३	१९५४
कोयला	००० टन	३२,३०७	३४,४३२	३६,३०४	३५,९८०	३६,८८०
	लाख रुपया	४,६६८	५,०४८	५,३६२	५,२७६	५,३९०
खनिज लोहा	००० टन	२,९६५	३,६५७	३,९२६	३,८५५	४,३०८
	लाख रुपया	१५४	२१०	२६८	२८१	२८९
खनिज मैंगनीज	००० टन	८८३	१,२९२	१,४६२	१,९०२	१,४१४
	लाख रुपया	८४८	१,७८३	२,२४५	२,९४८	१,९५४
क्रोमाइट	००० टन	१७	१७	३५	६५	४६
	लाख रुपया	६	९	१८	२६	१४
इल्मनाइट	००० टन	२१३	२२४	२२५	२१५	२४१
	लाख रुपया	३३	४०	३७	९२	८०
बाक्साइट	००० टन	६४	६७	६४	७१	७५
	लाख रुपया	८	८	८	८	८
क्यानाइट	००० टन	३५	४३	२७	१५	४२
	लाख रुपया	३३	५९	६३	२४	८८
सलीमेनाइट	००० टन	१	४	५	५	३
	लाख रुपया	०·८	२	४	५	१
मैग्नेसाइट	००० टन	५३	११७	८९	९३	७१
	लाख रुपया	११	१९	१६	१८	१५
जिप्सम	००० टन	२०६	२०४	४११	५८६	६१२
	लाख रुपया	१४	१३	३१	३९	४२
खनिज तांबा	००० टन	३६०	३६९	३२५	२३८	३४३
	लाख रुपया	१२०	१९४	१६३	११४	१८७
सारकृत सीसा	००० टन	—	२	२	३	३
उत्पादित सीसा धातु	००० टन	—	०·९	१.१	२	२
	लाख रुपया	—	१५	१७	१८	२३
सारकृत जस्ता	००० टन	—	२	४	४	४
समस्त खनिजों का मूल्य	लाख रुपयों में	८,३४१	१०,५५५	१०,८०४	११,२७८	१०,२५२

दूसरी योजना के कार्यक्रम

११. दूसरी पंचवर्षीय योजना में जो औद्योगिक विकास पर जोर दिया गया है उसके परिणामस्वरूप खनिज विकास के कार्यक्रमों पर विशेष रूप से ध्यान देना पड़ेगा। इस्पात इन्गौट की मात्रा ६० लाख टन बढ़ा देने के लिए आवश्यक होगा कि खनिज लोहे, कोयले, चूना पत्थर और डालोमाइट तथा ऊष्मसह पदार्थों का उत्पादन बड़े पैमाने पर बढ़ाया जाए। अल्यूमिनियम उद्योग के विकास से बाक्साइट की और सीमेंट उद्योग के विकास से चूना पत्थर, जिप्सम और चिकनी मिट्टी की मांग बढ़ेगी। हालांकि आने वाले वर्षों में जो औद्योगिक विकास होना है उसके प्रसंग में खनिज प्रदेशों का सर्वेक्षण किया जा चुका है और मुख्य-मुख्य खनिज क्षेत्र निर्धारित हो गए हैं, फिर भी देश की खनिज सम्पत्ति कैसी और कितनी है—इस बारे में और सविस्तर जानकारी पा लेना जरूरी है। इसके लिए नियमानुसार नक्शे बनाना और जहां आवश्यक हों, वहां बड़े पैमाने पर नक्शे बनाना, खनिज खोज के लिए भू-भौतिक और भू-रसायनिक तरीकों का और ज्यादा अपनाना तथा पड़ताल के लिए कुछ भू-छेदन कार्य करना आवश्यक होगा।

कोयला

१२. कोयले पर हमारा ध्यान सबसे पहले जाना चाहिए क्योंकि एक तो यह मूलतः अनेक उद्योगों के लिए ईंधन के रूप में आवश्यक है और दूसरे, लोहा और इस्पात कोयले के कार्बनीकरण जैसे उद्योगों के लिए कच्चे माल के रूप में जरूरी है।

१३. १९५५ में कोयले का उत्पादन ३ करोड़ ८० लाख टन तक पहुंच गया था। उसके वर्तमान उत्पादन का अधिकांश भाग निजी क्षेत्र की खानों से ही आता है, सार्वजनिक क्षेत्र से तो सिर्फ ४५ लाख टन ही है। दूसरी योजना में रखे गए औद्योगिक लक्ष्यों और तापीय बिजली शक्ति उत्पादन के कार्यक्रमों तथा रेलवे के विकास के आधार पर दूसरी योजना के अंत तक कोयले की मांग ६ करोड़ टन हो जाएगी।

इसका मतलब यह हुआ कि १९५५ में जो उत्पादन था उस पर २ करोड़ २० लाख टन की और १९५४ के उत्पादन पर २ करोड़ ३० लाख टन की वृद्धि की जाए और इसके लिए विशेष रूप से प्रयत्न भी करने पड़ेंगे। आजकल जितनी खानों में काम हो रहा है, उनमें कुछ वृद्धि अवश्य की जा सकती है लेकिन इतनी वृद्धि के लिए कई नए कोयला क्षेत्रों में काम शुरू करना पड़ेगा।

१४. १९४८ के औद्योगिक नीति प्रस्ताव में उल्लिखित था कि कोयले के सम्बन्ध में जो भी नए क्षेत्र खोले जाएंगे वे सभी सार्वजनिक क्षेत्र के अंतर्गत होंगे, लेकिन जहां सरकार राष्ट्रीय हित को देखते हुए निजी क्षेत्र का सहयोग पाना चाहे वहां ऐसा न होगा। इस नीति के अनुसार पिछले सालों में कुछ छूटें दे दी गई थीं, लेकिन तय हुआ है कि भविष्य में कोयले के नए क्षेत्रों को सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत रखने की नीति पर सख्ती से अमल होगा और दूसरी योजना की बढ़ी हुई मांगों को पूरा करने के वास्ते कोयले का अतिरिक्त उत्पादन अधिक से अधिक मात्रा में सार्वजनिक क्षेत्र में ही होगा। इसी के अनुसार फिलहाल यह तय पाया गया है कि १९६०-६१ में जो २ करोड़ २० लाख टन कोयले की मांग में वृद्धि होगी, उसका १ करोड़ २० लाख टन सार्वजनिक क्षेत्र से आएगा। यह चाहे वर्तमान कोयला क्षेत्रों से हो चाहे नए खोले गए कोयला क्षेत्रों से, और बाकी निजी क्षेत्र के वर्तमान और उनके सन्निकट कोयला क्षेत्रों से निकाला जाएगा। उत्पादन बढ़ाने के लिए कोयले की नई खानें सार्वजनिक क्षेत्र में ही चालू की जाएंगी। सार्वजनिक क्षेत्र में अतिरिक्त उत्पादन कुछ इस प्रकार होगा : वर्तमान खानों से २० लाख टन जिसमें

५ लाख टन मुख्यतया बोकारो की मौजूदा खानों से ही होगा, सिंगरेनी की खानों से १५ लाख टन और प्रस्ताव है कि कोरवा कोयला क्षेत्रों का विकास करके ४० लाख टन प्राप्त किया जाए। बाकी ६० लाख टन किन क्षेत्रों से आएगा, इसके बारे में भी मोटे तौर पर निर्णय कर लिया गया है, लेकिन किस क्षेत्र से कितना रखा जाए, इसके ब्योरे तय किए जा रहे हैं। इसमें सबसे अधिक विचार इस बात का रखा गया है कि दूरस्थ क्षेत्रों में ही नई खानों का विकास हो। राजकीय क्षेत्र में १ करोड़ २० लाख टन अतिरिक्त कोयला निकालने के लिए कुल खर्च अनुमानतः ६० करोड़ रु० आएगा जिसमें १२ करोड़ आवास के लिए भी शामिल है। फिलहाल इसके लिए ४० करोड़ रुपया रखा गया है।

सार्वजनिक क्षेत्र में कोयले का उत्पादन करना आवश्यक होगा ही, इसलिए सरकार ने कोयला उत्पादन तथा विकास कमिश्नर के अधीन एक संगठन स्थापित किया है जो राज्यों की वर्तमान खानों और योजना काल में खोली जाने वाली नई खानों का प्रमुख प्रबंधक अधिकारी होगा। कोयले का नियंत्रण, जो कोयला खान नियंत्रण आदेश के अंतर्गत वितरण, मूल्य इत्यादि के बारे में होगा, और निजी उद्योग का नियंत्रण कोयला नियंत्रक नामक एक अलग अधिकारी के हाथ में रहेगा।

राज्यों की कोयला खानों का प्रशासन अभी तो विभाग के हाथ में है, लेकिन प्रस्ताव है कि इन खानों और योजना काल में खोली गई नई खानों का स्वामित्व और उनका प्रबन्ध करने के लिए एक कम्पनी बना दी जाए।

कोयले के उत्पादन में वृद्धि के लिए आवश्यक टेकनीकल कर्मचारियों के प्रशिक्षण के सिलसिले में पहले कदम के रूप में चार प्रशिक्षण केन्द्र करगली, गिरडीह, तलचर और कुरसिया में खोले जाएंगे जो माध्यमिक और निचली श्रेणी के टेकनीकल कर्मचारियों जैसे पर्यवेक्षक, ओवरसियर, विद्युत और मशीनी अधीनस्थ कर्मचारी इत्यादि प्रशिक्षित करेंगे। योजना काल में टेकनीकल कर्मचारियों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए और भी केन्द्र खोले जाएंगे।

१५. कोयले की ढुलाई रेलवे के ऊपर बड़ा भारी भार है, क्योंकि कोयले की मांग तो देश भर में होती है परन्तु यह कोयला पश्चिम बंगाल और बिहार राज्यों में ही निकाला जाता है। कोयला भेजने में रेलवे में वैज्ञानिकन तो हुआ है, लेकिन मांग में इतनी अधिक वृद्धि को देखते हुए उत्पादन में भी वैज्ञानिकन की आवश्यकता है। भिन्न-भिन्न राज्यों में कोयला खानों के विकास के लिए कोयला उत्पादन के कार्यक्रम बनाए गए हैं। नीचे दिए गए विवरण में दूसरी योजना के अन्त में कोयले के उत्पादन का सम्भावित वितरण १९५४ के वितरण के साथ दिया जा रहा है:—

(आंकड़े लाख टन में)

	१९५४ में उत्पादन	१९६०-६१ में उत्पादन	वृद्धि
असम	५·०	५·०	—
पश्चिम बंगाल			
दार्जिलिंग	०·३	०·३	—
रानीगंज	१२२·२	१८१·६	५९·४

विहार			
झरिया	१३१·९	१६६·९	३५·०
करनपुर	१४·४	६०·०	४५·६
वोकारो	२३·८	२८·८	५·०
गिरडीह	२·६	२·६	—
विहार के अन्य छोटे क्षेत्र	१·४	१·४	—
मध्य प्रदेश			
छिंदवाड़ा और चंडा	२२·५	२२·५	—
कोरवा	—	४०·०	४०·०
सस्ती	०·७	०·७	—
मध्य भारत की कोयला खानें	२३·१	५३·१	३०·०
उड़ीसा	५·२	५·२	—
हैदरावाद			
सिंगरेनी	१४·३	२९·३	१५·०
राजस्थान			
वीकानेर	०·३	०·३	—
योग	३६७·७	५९७·७	२३०

१६. ६ करोड़ टन के लक्ष्य में लोहा और इस्पात उद्योग तथा अन्य आवश्यक उपभोक्ताओं के लिए कच्चा कोयला देने वाले कोयले की जरूरत भी शामिल है। इस प्रकार के कोयले का उत्पादन १ करोड़ ४० लाख टन निर्धारित कर दिया गया है और वास्तविक उत्पादन इससे कुछ ही कम है। इसके विपरीत आवश्यक उपभोक्ताओं की मांग सिर्फ करीब ३५ लाख टन है। वाकी कोयला रेलवे और उद्योगों के काम आता है। थोड़े कोयले का निर्यात भी होता है। दूसरी योजना में इस्पात उत्पादन में वृद्धि के लिए ९७·३ लाख टन कोक कोयले की जरूरत होगी, जबकि अन्य आवश्यक उपभोक्ताओं की मांग का अनुमान १६·८ लाख टन है। इस प्रकार १ करोड़ १४·१ लाख टन धुला हुआ साफ या करीब १ करोड़ ६५ लाख टन कच्चा कोयला कुल मात्रा में जरूरी होगा, जबकि वर्तमान उत्पादन लगभग १ करोड़ २५ लाख टन है। १९६०-६१ तक आवश्यक उपभोक्ताओं की मांग काफी बढ़ जाएगी। उसको पूरा करने के लिए इस प्रकार के कोयले का उत्पादन धीरे-धीरे बढ़ाना होगा और सीमित निधियों के संरक्षण के उद्देश्य से धीरे-धीरे इस बात के लिए भी उपाय करने पड़ेंगे कि रेलवे जैसे अनावश्यक उपभोक्ताओं के लिए कोक कोयले की जगह उपयुक्त गैर-कोक कोयला दिया जाए। रेलवे ने इस उद्देश्य से एक कार्यक्रम का सुझाव दिया है।

१७. संरक्षण की दृष्टि से और इस्पात उद्योग को एक समान कोटि का कोयला देने की आवश्यकता को भी देखते हुए धातुकर्मक कोयले की धुलाई जरूरी हो जाती है। सरकार ने कोयला धुलाईखाना समिति बनाई थी। उसने भारतीय कोयले के धोने और धुलाईखाने

स्थापित करने के सवाल पर विचार किया था। इस समिति की रिपोर्ट और उस पर कोयला बोर्ड की सिफारिशों के आधार पर केन्द्रीय सरकार ने ये निर्णय किए हैं :—

(१) सामान्य रूप से कोती-कोती तक के धातुकर्मक कोयले की धुलाई हो;

(२) मौजूदा और प्रस्तावित इस्पात संयंत्रों की जरूरतों को पूरा करने के लिए निजी कोयला खानों को धुलाईखाने स्थापित करने का विकल्प दे दिया जाए। अगर निजी कोयला खानों द्वारा स्थापित धुलाईखानों से अपेक्षित परिमाण में धुला कोयला नहीं मिल पाता, तो सरकार स्वयं सब जरूरतों के हिसाब से धुलाईखाने स्थापित करेगी; और

(३) धुलाई की औसत लागत कोयला खानों की कीमतों में परिवर्तन करके या धुले कोयले के लिए तय कीमत द्वारा, या उचित उत्पादन द्वारा जैसा भी उपयुक्त अवस्था पर ठीक समझा जाए, पूरी कर दी जाएगी।

जमदोबा, पश्चिमी बोकारो और लोडना कोयला खानों के निजी क्षेत्र में तीन धुलाईखाने पहले से ही काम कर रहे हैं। ये कोयला खानें टाटा लोहा और इस्पात कम्पनी और भारतीय लोहा और इस्पात कम्पनी को धुला कोयला प्रदान कर रही हैं। बोकारो/करगली में प्रति वर्ष २२ लाख टन कोयले की धुलाई करने की क्षमता वाला एक धुलाई संयंत्र लगाने का निर्णय किया जा चुका है। इस धुलाईखाने से धुला कोयला राउरकेला और भिलाई संयंत्रों को दिया जाएगा। एक जापानी फर्म को इस धुलाई संयंत्र के बनाने और लगाने के लिए आर्डर दिया जा चुका है। दूसरा धुलाईखाना दुर्गापुर में बनाने का प्रस्ताव है। इस्पात संयंत्रों की जरूरतों को पूरा करने के लिए और धुलाईखाने खोलने के प्रस्तावों पर अभी विचार किया जा रहा है। योजना में कोयले के धुलाईखाने खोलने के लिए ६ करोड़ की रकम रखी गई है।

१८. जैसा कि पहले संकेत किया जा चुका है, परिवहन की सीमाओं की वजह से घरेलू कामों में कच्चे कोक का उपभोग ज्यादा नहीं बढ़ा है। १९५० में इसका उपभोग ११ लाख टन था, जो १९५५ में बढ़कर लगभग १६ लाख टन हो गया, हालांकि १९५५ में अतिरिक्त उपभोग के लिए १० लाख टन का लक्ष्य रखा गया था। दूसरी योजना के अन्त में होने वाली कोयले की जरूरतों का अनुमान करने में यह मान लिया गया था कि राज्य के अथवा 'ज़ेड' श्रेणी के उपभोक्ताओं के लिए ३५ लाख टन कोयले की जरूरत होगी, जिसका अधिकांश कच्चा कोक तैयार करने के लिए होगा। इस समय अधिकांश कच्चा कोक झरिया की कोयला खानों में निचली कोटि के धातुकर्मक कोयले से तैयार किया जाता है और खोज कार्य से यह पता लगा है कि यह कोयला धातुकर्मक कार्यों के लिए सुधारा जा सकता है। लेकिन जब तक गैर-कोक कोयले के लिए आधुनिक ढंग के बड़े पैमाने के निम्नतापीय कार्बनीकरण यूनिट स्थापित नहीं हो जाते, कच्चे कोक के लिए उत्पादन में जो वृद्धि निर्दिष्ट है उसे मौजूदा तरीके से ही पूरा करना पड़ेगा। इसमें धातुकर्मक कोयले को लेकर विकेन्द्रित रूप में उत्पादन किया जा रहा है, हालांकि इससे बचा जा सकता है।

दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य के सम्बन्ध में प्रस्ताव यह है कि ७,१४,००० टन कोयले के चूरे की छोटी-छोटी ईंटें बनाने के लिए एक संयंत्र लगाया जाए। इन ईंटों के कार्बनीकरण से ३,८०,००० टन अर्द्धकोक प्राप्त होगा।

साफ्ट कोक के महत्व के विचार से योजना को संशोधित करते समय अथवा तीसरी योजना में इस उद्योग को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

छानबीन के कार्यक्रम

१९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विभिन्न उद्योगों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए कुछ अधिक महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों के उत्पादन के लक्ष्य नीचे दिये गए हैं। इन लक्ष्यों में देश की अपनी जरूरतों के साथ कहीं-कहीं निर्यात की आवश्यकताओं का भी समावेश है।

खनिज	मात्रा	उत्पादन			निर्यात	
		१९५०	१९५४	१९६०-६१	१९५४-५५	१९६०-६१ के लिए लक्ष्य
१	२	३	४	५	६	७
खनिज लोहा	लाख टन	२९·७	४३·१	१२५	९	२०
खनिज मैंगनीज	,,	८·८	१४·१	२०	९·४	१५
चूना पत्थर	,,	अप्राप्य	अप्राप्य	२३३†	—	—
जिप्सम	,,	२·१	६	१९·७†	—	—
बाक्साइट	हजार टन	६४	७५	१७५	२	—

२०. दूसरी योजना में खनिज सम्पत्ति की जांच और सर्वेक्षण को और अधिक परिश्रम के साथ आगे बढ़ाना होगा। सरकारी क्षेत्र में कोयले के उत्पादन में जो वृद्धि बड़े पैमाने पर होनी है वह नए क्षेत्रों से ही होनी है और उसके लिए चुने हुए कोयला क्षेत्रों में व्यापक कोयला खोज पर शीघ्र ही ध्यान देने की आवश्यकता है। इसी प्रकार चूंकि राज्यों का हिस्सा लोहा और इस्पात जैसे मूल उद्योगों में बढ़ता ही जा रहा है, इससे कच्चे खनिज माल जैसे खनिज लोहा, खनिज मैंगनीज, चूना पत्थर और ऊष्मसह खनिजों के निक्षेप की ब्योरेवार जांच करनी आवश्यक होगी। इसका अर्थ यह है कि भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग और भारतीय खान विभाग का काफी विस्तार किया जाए और इस काम के लिए उपयुक्त साज-सामान में भी वृद्धि की जाए। दूसरी पंचवर्षीय योजना की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए अन्तरिम प्रस्तावों को १९५५ के पूर्वार्द्ध में स्वीकार कर लिया गया था। विस्तार सम्बन्धी अन्य प्रस्तावों पर अभी विचार किया जा रहा है। फिलहाल अनुमान से ५ करोड़ रुपया भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के लिए और १ करोड़ रुपया खान विभाग के लिए जरूरी होगा।

२१. भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के प्रस्तावों में ये बातें हैं :

(१) भूगर्भ सम्बन्धी नक्शे बनाने के लिए सुविधाओं में विस्तार किया जाए ताकि नक्शों के अन्तर्गत मूल क्षेत्र को शीघ्र ही बढ़ाया जा सके। (खनिज पदार्थों का

†ये आंकड़े इन खनिजों का उपभोग करने वाले उद्योगों की निर्धारित क्षमता पर आधारित हैं। इनमें ऐसे फुटकर उपभोक्ताओं की जरूरतें शामिल नहीं हैं जिनके आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

आकलन और विकास पूर्ण और सही नक्शे होने पर ही निर्भर करता है; इसलिए उसके अन्तर्गत क्षेत्र को यथाशीघ्र बढ़ाने की जरूरत है। अब तक १ इंच १ मील के पैमाने के हिसाब से देश के सिर्फ पांचवें हिस्से का ही नक्शा बनाया जा सका है।)

(२) आर्थिक भू गर्भ, भूभौतिकी, इंजीनियरी और भूगर्भस्थ जल प्रभागों का विस्तार और उनका संवर्धन किया जाए। भूगर्भ और भूभौतिकी ढंगों से महत्वपूर्ण खनिजों की सविस्तर जांच के अलावा यह विभाग नदियों के मैदानों में विधिपूर्वक जलगति विज्ञान सम्बन्धी परिस्थितियों का भी अध्ययन करेगा। प्रस्ताव है कि शुरुआत गंगा और गोदावरी-कृष्णा नदियों के मैदानों से की जाए। देश की जल सम्पत्ति का लाभ उठाने के लिए जलगति विज्ञान सम्बन्धी इस प्रकार की व्योरेवार जानकारी आवश्यक है।

(३) अच्छी तरह साज सामान से युक्त भू-छेदन प्रभाग का संगठन किया जाए जिससे खनिज पदार्थों की जांच का काम अब तक जितना संभव था उससे एक अवस्था और आगे बढ़ाया जा सके। क्षेत्रीय आधार पर निक्षेपों का अध्ययन करने के अलावा जमीन के अन्दर गहराई में भी उनके बारे में जांच की जाएगी ताकि निधि का गुण और परिमाण दोनों दृष्टियों से अधिक सही लेखा-जोखा हो सके।

जहां तक भारतीय खान विभाग का सवाल है, अनुसन्धान, खनिज खोज, खान खुदाई और भू-छेदन प्रभागों को मजबूत करने की जरूरत है ताकि यह विभाग चुने हुए क्षेत्रों में व्यापक अन्वेपण के अतिरिक्त उनमें कुछ को खुदाई के लिए उपयुक्त सिद्ध करने के लिए उनकी आरम्भिक खुदाई का काम कर सके।

२२. भूगर्भ सर्वेक्षण और खान विभाग के कार्यक्रमों के अन्तर्गत क्षेत्र प्रधान और श्रम प्रधान दोनों प्रकार की जांचें आती हैं। इनमें जो मदें शामिल हैं जिनमें से प्रमुख यहां दी जा रही हैं :—

कोयला—कोरबा, दक्षिणी करनपुरा, रानीगंज, चिरमिरी, रामगढ़, झिलीमिल्ली, और उत्तरी करनपुरा (राजकीय क्षेत्र में कोयले के उत्पादन के सम्बन्ध में) और कोटा, सिंगरौली, उमरिया, सोहागपुर, कनहन और पेंच घाटियां, हैदराबाद, तलचर, गोदावरी घाटी और असम की कोयला खानों (गुण और परिमाण के आकलन के लिए) के भू-छेदन कार्य के साथ सविस्तर भूगर्भ जांचें।

तांबा—खेत्री, दरिवो (राजस्थान) के तांबे के निक्षेपों के व्योरेवार नक्शे बनाना तथा अन्वेपण और आन्ध्र के कुर्नूल जिले में गनी की पुरानी खानों की व्योरेवार पड़ताल।

मैंगनीज—मध्य प्रदेश की खनिज मैंगनीज पट्टी में भू-छेदन कार्य और उसके साथ ही व्योरेवार नक्शे बनाने का काम जारी रखना।

क्रोमाइट—दक्षिणी मैसूर के क्रोमाइट क्षेत्रों और उड़ीसा में नौसाई के क्रोमाइट निक्षेपों की व्योरेवार जांच।

जिप्सम—नागपुर (जोधपुर) और बीकानेर (राजस्थान) में जिप्सम निक्षेपों की भू-छेदन द्वारा व्योरेवार पड़ताल।

सीसा-जस्ता—जवार (राजस्थान) के सीसा-जस्ता निक्षेप की भू-छेदन द्वारा पड़ताल।

टीन—विहार क ज्ञात स्थानों की ब्योरेवार पड़ताल।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में यह प्रस्ताव है कि ये संगठन अन्य कई जांच-पड़तालों का काम शुरू करेंगे। इनमें कई अधात्वीय खनिज निक्षेपों, जैसे चूना पत्थर, डालोमाइट, संगमरमर, कांच, रेत, ग्रेफाइट, गेरू, चिकनी मिट्टी, फुलर मिट्टी, साबुन, पत्थर, जिप्सम इत्यादि की ब्योरेवार परीक्षा भी शामिल होगी। ये निक्षेप सारे भारत में हैं और इनके लिए जो पड़तालें की जाएंगी, वे कुछ अंशों में प्रादेशिक स्तर पर और कुछ अंशों में एक-एक निक्षेप को लेकर होंगी।

ऊपर दिए गए कार्यक्रम के अतिरिक्त, जिसे केन्द्र कार्यान्वित करेगा, योजना में खनिज विकास योजनाओं के लिए २ करोड़ रुपए की व्यवस्था है जिसे राज्य सरकारें कार्यान्वित करेंगी। राज्यों द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली योजनाओं में से प्रमुख हैदराबाद की हट्टी सोना खानों का विकास है, जिसके लिए फिलहाल ५० लाख रु० की रकम रखी गई है।

२३. देश के औद्योगिक विकास में खनिजों के महत्वपूर्ण योग को देखते हुए ऐसा विचार है कि राज्य ही उनकी खुदाई का काम करेगा। जिन खनिज पदार्थों का विकास भविष्य में केवल सार्वजनिक क्षेत्र में ही होगा, वे हैं कोयला और खनिज तेल। लेकिन औद्योगिक नीति सम्बन्धी नए प्रस्ताव के अनुसार कई और महत्वपूर्ण खनिज सूची (देखो अध्याय २ का परिशिष्ट) में जोड़े जा रहे हैं। इस नीति के परिणामस्वरूप योजना काल में सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत हीरे की खुदाई और तांबे की एक खान चालू करने की योजनाएं प्राकृतिक साधन और वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय में बनाई जा रही हैं। इन योजनाओं के लिए आवश्यक वित्त के विषय में उचित व्यवस्था करने पर विचार किया जाएगा।

२४. देश के तेल साधनों का अन्वेषण और उनके विकास का काम भी दूसरी पंचवर्षीय योजना में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। सरकार ने जैसलमेर इलाके में जो खोज का काम पहले शुरू किया था वह जारी रहेगा और उसमें जमीन का भूगर्भीय सर्वेक्षण, भूभौतिकी पड़तालें और अन्वेषक भू-छेदन कार्य के साथ ही वातचुम्बकीय सर्वेक्षण भी शामिल होगा। इसके अलावा एकत्र किए गए प्रारम्भिक आंकड़ों के आधार पर ज्वालामुखी और कैम्बे में तेल मिलने की सम्भावनाएं हैं। इसलिए कैम्बे में उल्लेख्य भू-छेदन और ज्वालामुखी में परीक्षार्थ भू-छेदन का काम किया जाएगा। जैसलमेर के वातचुम्बकीय सर्वेक्षण के लिए इस काम के अति विशिष्ट होने तथा देश में सुविधाएं न होने के कारण, कोलम्बो योजना के अन्तर्गत कैनेडा से सहायता ली गई थी। सर्वेक्षण का काम पूरा हो चुका है और वातचुम्बकीय आंकड़ों के आधार पर जमीन की पड़ताल और अच्छी तरह की जाएगी। कैनेडा और अधिक क्षेत्रों के वातचुम्बकीय सर्वेक्षण के लिए सहायता देने को तैयार हो गया है और इस सहायता का उपयोग पंजाब, उत्तर प्रदेश और विहार के कुछ हिस्सों के सर्वेक्षण में किया जाएगा।

२५. दूसरी योजना में तेल की खोज के बढ़े हुए कार्यक्रम को देखकर पैट्रोलियम की खोज के सम्बन्ध में कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के लिए भी उपाय किए गए हैं। योजना के अनुसार तेल की खोज के लिए अपेक्षित भिन्न-भिन्न श्रेणियों के कर्मचारियों को विदेशों में तथा देश में बाहर से बुलाए गए टेकनीकल परामर्शदाताओं और विशेषज्ञों की सहायता

से प्रशिक्षण देने का कार्यक्रम भी है। खान और व्यावहारिक भूगर्भशास्त्र विद्यालय भारत में तेल टेकनोलोजी और भू-छेदन का विशेष पाठ्यक्रम चालू करने के बारे में अभी विचार किया जा रहा है।

२६. फिलहाल तेल की खोज के लिए ११·५ करोड़ रुपया रखा गया है जो जैसलमेर में अब तक आयोजित कार्यचालन, कैम्बे और ज्वालामुखी में भू-छेदन कार्य तथा टेकनीकल प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए है। तेल की खोज के लिए और भी प्रस्ताव तैयार किए जा रहे हैं और समय-समय पर कार्यक्रमों के अनुमोदन के साथ ही अतिरिक्त धन भी दिया जाएगा।

सरकार खुद तो तेल की खोज करेगी ही, साथ ही वह स्टैण्डर्ड वैक्यूम आयल कम्पनी के साथ पश्चिम बंगाल के मैदान में भी तेल खोजने का कार्य करेगी। इसके अलावा इस प्रस्ताव पर भी विचार हो रहा है कि असम आयल कम्पनी के साझे में असम क्षेत्र में मिलकर तेल खोजने का काम किया जाए। कम्पनी इस बात पर राजी हो गई है कि वह सरकार के साथ काम करेगी और इस सिलसिले में नाहरकटिया के आसपास, जहां १९५३ में तेल निकाला गया था, कुछ इलाकों के लिए खोज लाइसेन्स कम्पनी को दे दिए गए हैं। निजी फर्मों के साथ मिलकर काम करने में सरकार की लागत क्या होगी, यह अभी निश्चित नहीं किया जा सका है। उचित मौके पर इसके लिए धन की व्यवस्था की जाएगी।

भारतीय सर्वेक्षण विभाग

२७. यद्यपि भारतीय सर्वेक्षण विभाग का काम अनेक क्षेत्रों में फैला हुआ है, तथापि खनिज सम्पत्ति के विकास में भी उसका बहुत महत्व है। खनिजों, खनिज तेलों और इंजीनियरी के तलजल तथा भूगर्भ पक्षों आदि सब की भूगर्भीय और भूभौतिकी पड़ताल करने के लिए नक्शे जरूरी होते हैं। उनकी जरूरत वन सम्पत्ति, रेलों और सड़कों, सिंचाई, बिजली के योजना कार्यों के विकास जैसे कामों के लिए भी पड़ती है। भारतीय सर्वेक्षण विभाग भारत सरकार का बहुत पुराना विभाग है, पर पिछले महायुद्ध के समय में उसका कार्य बहुत अस्त-व्यस्त हो गया था। इसी के फलस्वरूप तमाम काम बाकी पड़ा हुआ है। युद्धोत्तर वर्षों में इसी संगठन पर कई अतिरिक्त कामों का बोझ पड़ा। इस स्थिति में उसके विस्तार और मशीनीकरण के एक कार्यक्रम को १९५३ में स्वीकार किया गया। मशीनीकरण का कार्यक्रम तो पूरा होने वाला है। दूसरी योजना काल में आने वाले काम के भार को ध्यान में रखते हुए १ करोड़ ४० लाख लागत की विस्तार और मशीनीकरण की एक योजना अनुमोदित की गई। भारतीय सर्वेक्षण विभाग की ज्यामिति तथा अन्वेषण शाखा के पुनर्गठन की भी व्यवस्था है। यह शाखा समतलन और त्रिकोण मापन कार्य और चुम्बकीय सूचना संग्रह कार्य करती है और वेलीय (टाइडल) तथा भूम्याकर्षण (ग्रेविटी) सर्वेक्षण भी करती रहती है।

अध्याय १९

औद्योगिक विकास का कार्यक्रम

प्रथम योजना में प्रगति

अगर औद्योगिक उत्पादन के देशनांकों को ही देखा जाए तो प्रथम योजना के दौरान में उद्योग की जो उन्नति हुई है वह सन्तोषप्रद प्रतीत होती है, लेकिन प्रथम योजना बनाते समय रखे गए विभिन्न उद्योगों के ध्येयों, प्राथमिकताओं और क्षमता व उत्पादन के स्तरों की पृष्ठ-भूमि में वह उन्नति समान रूप से सन्तोषप्रद नहीं मालूम होगी। १९५५-५६ के अन्त में हमारे सामने आने वाले रूप का विवरण नीचे दिया जा रहा है।

सार्वजनिक क्षेत्र में प्रगति

२. सिन्दरी खाद कारखाना, चित्तरंजन इंजन कारखाना, भारतीय टेलीफोन उद्योग, इंटीगरल कोच फैक्टरी, केबल फैक्टरी और पेनीसिलीन फैक्टरी के उत्पादन और उनकी क्षमता वृद्धि के बारे में कहा जा सकता है कि प्रगति सन्तोषप्रद है। इसके अलावा कुछ केन्द्रीय और राज्यीय योजनाओं की प्रगति कुछ पिछड़ गई है। उनके पूरे होने में और उत्पादन शुरू करने में भी अनुमानित समय से ज्यादा समय लगा है। यह बात मशीनी औजार कारखाना, उ० प्र० सीमेन्ट कारखाना, नेपा कारखाना और बिहार सुपरफास्फेट कारखाने के बारे में लागू होती है। लोहे और इस्पात के लिए एक नया संयंत्र केन्द्रीय सरकार द्वारा लगाया जाना था जिसके द्वारा १९५५-५६ तक ३,५०,००० टन कच्चा लोहा मिलने की आशा थी। इसके अतिरिक्त लोहा और इस्पात कारखाने का विस्तार करके ६०,००० टन और अधिक तैयार इस्पात पाने की उम्मीद थी। प्रथम योजना के अन्त तक इन लक्ष्यों की पूर्ति नहीं हो सकी। परन्तु प्रथम योजना की अवधि में ही १० लाख टन इस्पात तैयार करने वाले तीन इस्पात कारखानों के प्रारम्भिक काम पूरे हो चुके हैं और अगले वर्षों में होने वाली लोहा और इस्पात उद्योग की उन्नति की नींव डाली जा चुकी है। योजना के अन्तिम वर्षों में एक भारी विद्युत्संयंत्र स्थापित करने के सुझाव को कार्यान्वित करने का भी प्रयत्न किया गया और अधिकांश समय उसकी जरूरतों का अनुमान लगाने तथा सरकारी और निजी क्षेत्रों के लिए उत्पादन के क्षेत्र निर्धारित करने में ही लग गया, इसलिए योजना काल में इस योजना कार्य पर कोई उल्लेख-नीय खर्च नहीं किया गया। फिर भी बहुत-सा प्रारम्भिक काम हो चुका है और इस योजना कार्य के कार्यान्वित होने के लिए एसोशियेटेड एलेक्ट्रिकल इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड से करार भी किया जा चुका है।

३. सार्वजनिक क्षेत्र में औद्योगिक योजना कार्यों पर ९४ करोड़ रुपया खर्च करने का विचार था परन्तु लगता ह कि अब इस क्षेत्र म ५७ करोड़ रु० व्यय होगा। शुरू-शुरू में रखे गए उत्पादन के लक्ष्यों और १९५५-५६ के लिए अनुमानित उत्पादन के आंकड़े नीचे दिए जा रहे हैं :—

		१९५५-५६	
		प्रथम योजना के अन्तर्गत लक्ष्य	वर्तमान अनुमान के अनुसार सम्भावित उत्पादन
(क) कच्चा लोहा (क्षमता)	टन	३,५०,०००	कुछ नहीं
(ख) तैयार इस्पात (क्षमता)	टन	१,००,०००	३५,०००
(ग) इंजन	संख्या	९२	१२५
(घ) रेलगाड़ी के जोड़हीन डिब्बे	संख्या	५०	२०
(च) समुद्री जहाज	जी० आर० टी०	२०,०००	१३,०००
(छ) डी० डी० टी०	टन	७००	२८४
(ज) पेनीसिलीन	लाख मेगा यूनिट	४८	६६
(झ) रासायनिक खाद			
(१) अमोनियम सल्फेट	टन	३,१५,०००	३,२६,०००*
(२) सुपरफास्फेट (विहार सरकार का कारखाना)	टन	१६,५००	कुछ नहीं
(ट) अखबारी कागज	टन	३०,०००	४,२००
(ठ) केबल	मील	४७०	५२५
(ड) टेलीफोन	संख्या	२५,००० (५०,०००)†	५०,०००
(ढ) एक्सचेंज लाइनें	संख्या	२०,००० (३५,०००)†	३५,०००
(त) सीमेंट (उत्तर प्रदेश सरकार का सीमेंट कारखाना)	टन	२,००,०००	१,८०,०००
(थ) मशीनी औजार	खरादें	१,६०० (२००)†	१२

लोहे और इस्पात के योजना कार्यों पर अमल किए जाने में जो देरी हुई उससे बचना मुश्किल ही था, क्योंकि एक तो वे जटिल थे, दूसरे उनके लिए बहुत अधिक धन की जरूरत थी और टेकनीकल तथा वित्तीय सहायता के लिए विदेशों से बातचीत की जा रही थी।

निजी क्षेत्र में विनियोग

४. यह समझा गया था कि पहली योजना के दौरान में निजी क्षेत्र के विस्तार सम्बन्धी कार्यक्रमों के लिए २३३ करोड़ रुपए लगाने पड़ेंगे। बहुत-से ऐसे उद्योग जिनका पिछला ह्रास

*सिन्दरी में हाल ही में खोला गया कोक भट्ठी कारखाना, जो खाद कारखाने का एक अभिन्न भाग है। इसमें २,००,००० टन कोक अमोनिया सिंथेसिस और कोयला कार्बनीकरण के उप-उत्पादों का उत्पादन किया जाएगा।

†संशोधित अनुमान।

बहुत बड़ी मात्रा में पूरा किया जाना था, उनके संयंत्रों और मशीनों को बदलने और आधुनिक बनाने में अनुमान किया गया था कि २३० करोड़ रुपए का खर्च आएगा, जिसमें से लगभग ८० करोड़ रुपया इस बात के लिए था कि वह आरम्भिक वर्षों की अपेक्षा योजना की अवधि में संयंत्रों और मशीनों आदि की बढ़ी हुई कीमत के कारण खर्च होगा। इस प्रकार इस योजना में नए योजना कार्यों, मशीनों की अदला-बदली और उनको आधुनिक बनाने में कुल खर्च ४६३ करोड़ रखा गया था। इसके विपरीत, अब अनुमान किया जाता है कि योजना की अवधि में निजी क्षेत्र की नियत पूंजी में कुल ३४० करोड़ रुपया लगा हुआ था। सबसे अधिक धन इनमें लगा रहा : सूती वस्त्र (८० करोड़ रु०), पैट्रोलियम सफाई (४५ करोड़ रु०), लोहा और इस्पात (४६ करोड़ रु०), भारी और हलके इंजीनियरी उद्योग (२५ करोड़ रु०), रसायन, खादें, औषधियां, रंगाई सामान और प्लास्टिक (१५ करोड़ रु०), सीमेंट और ऊष्मसह ईंटें (१८ करोड़ रु०), कागज और गत्ता (११ करोड़ रु०), चीनी (१५ करोड़ रु०), विद्युत शक्ति जनन (३२ करोड़ रु०), जूट के वस्त्र (१५ करोड़ रु०), रेयन और स्टैपल तन्तु (८ करोड़ रु०) और अन्य (२७ करोड़ रु०)। अब तक प्राप्त सामग्री के अनुसार नए यूनिटों और विस्तार पर १९५१-५३ में ५३ करोड़ रु०, १९५३-५४ में ४४ करोड़ रु०, १९५४-५५ में ५० करोड़ रु० और १९५५-५६ में ८५ करोड़ रु० लगाया गया था। १९५५-५६ के विनियोग अनुमानों में इस्पात कार्यक्रमों के लिए २२ करोड़, ट्राम्वे और बिजली की अन्य योजनाओं के लिए ११ करोड़, सूती वस्त्र उद्योग के लिए ७ करोड़, सीमेंट और ऊष्मसह ईंटों के लिए ५·५ करोड़ तथा चीनी योजना कार्यों के लिए ५ करोड़ प्रत्याशित खर्चे भी शामिल हैं।

५. कुछ उद्योगों में विनियोग की कमी पड़ जाने के मुख्य कारण ये थे : (क) योजना के पहले दो वर्षों में कुछ अनुपयुक्त परिस्थितियों का पैदा हो जाना; (ख) विशाखापत्तनम के काल्टेक्स तेल-शोधन कारखाने के संयंत्र के आकार और निर्माण तिथि में परिवर्तन होना; (ग) योजना में निर्धारित एफ० ए० सी० टी०, एल्यूमीनियम, जिप्सम-सल्फर और रासायनिक गूदे सम्बन्धी योजनाओं के सम्बन्ध में देरी होना। मोटे तौर पर निजी क्षेत्र में रुपया लगाने में यह देरी उन्हीं उद्योगों में हुई है जिनके लिए अधिक पूंजी की जरूरत थी और लाभ अपेक्षाकृत कम था। राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम की स्थापना अभी १९५४-५५ में ही हुई। १९५४ में तत्सम्बन्धी विधान के दुहराए जाने के पहले तक, भारत का औद्योगिक वित्त निगम ५० लाख रु० से अधिक कर्ज उद्योगों को नहीं दे सकता था। फिर भी नई यूनिटों में और विस्तार में लगी हुई पूंजी २३३ करोड़ रु० के करीब है और सूती वस्त्र और बिजली उत्पादन जैसे क्षेत्र में अनुमान से भी अधिक रुपया लगाया जा चुका है।

६. मशीनों को बदलने और उनको आधुनिक बनाने के कार्यक्रमों में चीनी उद्योग को छोड़कर प्रगति सन्तोषप्रद रही है, लेकिन उसे आवश्यकताओं के अनुरूप किसी भी तरह नहीं कहा जा सकता। पुराने उद्योगों के लिए भी अगर वे चाहें कि अगले कुछ सालों में प्रतियोगिता में ठहर जाएं तो तमाम मशीनें बदलनी पड़ेंगी। वाणिज्य और उद्योग मन्त्रालय ने हाल ही में जो पड़ताल की उसके अनुसार यह पता चला है कि इंजीनियरी प्रतिष्ठानों में मशीनी औजारों की बदली कितनी मात्रा में होना बाकी है। चीनी, सूती वस्त्र और जूट उद्योगों के टेकनीकल साज-सामान की भी हाल में की गई पड़ताल से मालूम हुआ है कि इनमें भी यह बदली बहुत अधिक मात्रा में होनी चाहिए।

विभिन्न उद्योगों में उत्पादन का स्तर

७. योजना में इस बात पर बल दिया गया था कि मौजूदा सामर्थ्य का परिश्रम के साथ उपयोग करके उत्पादन के स्तर को बढ़ाया जाए। यह लक्ष्य मोटे तौर पर पूरा हो चुका है और सूती वस्त्र (मिल क्षेत्र), चीनी और वनस्पति तेलों के उत्पादन लक्ष्यों तक पहुंच चुके हैं। सीमेंट, कागज, सोडा ऐश, कास्टिक सोडा और अन्य रसायन, रेयन, साइकिल और कुछ अन्य उद्योगों में अप्रयुक्त सामर्थ्य तथा उत्पादन बढ़ाने के लिए जो विस्तार किया गया था, उसकी सहायता से उत्पादन लगभग निर्धारित लक्ष्यों तक बढ़ गया है। इसके विपरीत निजी क्षेत्र में विनियोग कार्यक्रम पूरा न हो पाने के कारण अल्यूमीनियम और नाइट्रोजनीय खादों के उत्पादन लक्ष्यों से पीछे रह गए हैं। उद्योगों का एक समूह तो ऐसा था जिनका उत्पादन घरेलू कामों में काफी मांग न होने के कारण कम हो गया। उन्हीं के अन्तर्गत कुछ हलके इंजीनियरी उद्योग, जैसे डीज़ल इंजन और पम्प, रेडियो, बैटरियां, बिजली के लैम्प और लालटेनें आती हैं। कुछ उद्योगों का उत्पादन इसलिए कम रहा कि उनकी (जूट की वस्तुएं) निर्यात मांग घट गई या देशीय उद्योग जो निर्यात सम्बन्धी चीजें (चाय बक्सों की प्लाईवुड) देते हैं उनकी मांग कम रही। सुपर-फास्फेट का उत्पादन आयोजित स्तर से लगभग ५० प्रतिशत बढ़ गया। व्यापक रूप से कहा जा सकता है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के परिणाम सन्तोषप्रद रहे हैं। इस सफलता के मुख्य कारण हैं, कृषि कार्यक्रमों का सफल होना, कच्चा माल पाने में सुधार, और समय-समय पर नवजात उद्योगों का संरक्षण, आयात और निर्यात शुल्क में संशोधन इत्यादि के अवसर पर आवश्यकतानुसार राज्य द्वारा की गई उचित वित्तीय और अन्य बातों की सहायता।

८. भिन्न-भिन्न खनिजों और कृषि के कच्चे माल के उपयोग सम्बन्धी पहले रखे गए अनुमान की तुलना से यह आशा है कि योजना के आखिरी साल में प्रकृत (क्रूड) पेट्रोलियम की असल जरूरत काफी ज्यादा हो जाएगी क्योंकि पेट्रोलियम साफ करने के कारखानों ने अपने काम अनुमानित समय से पहले प्रारम्भ कर दिए थे। जहां तक संघात (राक) फास्फेट, जूट, खनिज लोहा, और कांच रेत (ग्लास सैंड) का सम्बन्ध है, चूंकि उपभोक्ता उद्योगों में इनका उत्पादन कम रहा है इसलिए इनकी खपत भी जितना अनुमान किया गया था उससे कम ही रहेगी।

औद्योगिक संयंत्र, मशीनें और पूंजीगत सामान

९. प्रथम योजना के दौरान में औद्योगिक संयंत्र और मशीनों के निर्माण तथा पूंजी माल के उत्पादन की दिशा में जो अनुभव और जानकारी प्राप्त हुई है वह बहुमूल्य है। भारतीय उद्योग ने एक नई फुंकवा भट्ठी और एक सम्पर्क सल्फ्यूरिक अम्ल संयंत्र का पूरा-पूरा डिजाइन तैयार करके उसका निर्माण किया है। औद्योगिक मशीनों के निर्माण में प्रगति के विषय में अनुमान किया गया है कि भारत में वस्त्र उद्योग की मशीनों की भिन्न-भिन्न वस्तुओं के उत्पादन की कीमत १९४९-५० के ४ करोड़ रुपये से बढ़कर १९५१-५६ में लगभग ११ करोड़ रुपये हो गई है। सीमेंट सम्बन्धी मशीनों आदि के निर्माण की दिशा में उद्योग के लिए आवश्यक कुछ चीजों के उत्पादन की शुरुआत हो गई है। जूट मिल की मशीनों के लिए एक इंजीनियरी कारखाने ने हाल ही में कातने की मशीन का विकास किया है। बिजली के सामान में दो जरूरी मदों, जैसे बिजली की मोटरों और ट्रान्सफार्मरों के उत्पादन का मूल्य १९५०-५१ के १ करोड़ ५० लाख

रुपए से बढ़कर १९५५-५६ में ४ करोड़ ५० लाख रुपए हो गया है। पहली योजना के शुरू में प्रायः नगण्य संख्या से बढ़कर निजी क्षेत्र में इंजनों का उत्पादन १९५५-५६ में ५० तक हो जाएगा, जिसका मूल्य लगभग ३ करोड़ रुपए होगा। देशी मशीनी औजार उद्योगों का उत्पादन १९५०-५१ के ४० लाख के मूल्य से बढ़कर लगभग १ करोड़ का हो जाएगा। नए प्रकार के मशीनी औजार भी निकाले गए हैं। पूंजीगत सामान क्षेत्र के लिए कह सकते हैं कि वह अपने विकास की आरम्भिक अवस्था से गुजर चुका है और उसे इतना अनुभव हो चुका है कि दूसरी योजना में काफी काम करे। इस उद्देश्य से कुछ फर्मों ने योजनाएं बनाई हैं जिससे वे संयंत्र और मशीनों आदि जैसी अपेक्षाकृत अधिक जटिल चीजों का विकास विदेशी फर्मों के टेकनीकल सहयोग से कर सकें।

उद्योगों का नियमन

१०. योजना में जो लक्ष्य रखे गए थे उनके अनुरूप उद्योगों का विकास करने के लिए उद्योग (विकास और नियमन) अधिनियम, १९५१ ने दो प्रमुख अधिकार दिए हैं; एक है अलग-अलग उद्योगों को लाइसेंस देने का और दूसरा है उनके लिए विकास परिषदों का संगठन करने का। १९५३ में इसकी अनुसूची में अधिक उद्योगों को शामिल करने की दृष्टि से इस अधिनियम का संशोधन भी किया गया था। इस अधिनियम के उपबन्धों के अनुसार जो लाइसेंस देने वाली समिति बनाई जाती है वह अनुसूचित उद्योगों की नई यूनिटों और विस्तार सम्बन्धी आवेदनपत्रों की जांच करने के काम में वाणिज्य और उद्योग मन्त्रालय के सलाहकारी निकाय के रूप में काम करती है। अनुमोदित योजना कार्यों पर जो काम किया गया है, उसकी समीक्षा से यह निष्कर्ष निकला है कि 'प्रभावकारी उपायों' की—जो कि लाइसेंसग्राही को पेशगी बताए समय के भीतर करने चाहिएं—कोई अच्छी परिभाषा की जानी चाहिए।

११. १९५२ से अब तक इन १० उद्योगों के लिए विकास परिषदें स्थापित हुई हैं: भारी रसायन (अम्ल और खादें), भारी रसायन (क्षार), अन्तर्दाही इंजन और पम्प, साइकिल, चीनी, भारी विद्युत उद्योग, हलके विद्युत उद्योग, औषध द्रव्य और औषधियां, कृत्रिम रेशम और ऊनी सामान। इन परिषदों को दूसरी पंचवर्षीय योजना के विकास कार्यक्रम की तैयारी में भी लगाया गया है।

दूसरी योजना के कार्यक्रम

१२. प्रथम योजना को निश्चित रूप से देश में बड़े पैमाने पर औद्योगिक विकास की तैयारी का समय समझा गया था। भारी उद्योगों की स्थापना के लिए तमाम प्रारम्भिक काम की, तथा बाजारों, कच्चे सामान और ईंधन की प्राप्ति, तरीकों का चुनाव, उत्पादन की लागत तथा भिन्न-भिन्न अवस्थाओं पर उद्योगों को चलाने के लिए आवश्यक टेकनीकल और प्रबन्ध सम्बन्धी अनुभव जुटाना इत्यादि बातों से सम्बन्धित सवालों के विस्तारपूर्वक अध्ययन की आवश्यकता होती है। बहुत-से औद्योगिक योजना कार्यों के विकास के लिए विदेशी टेकनीकल सहायता की जरूरत पड़ती है। अन्त में इन सभी आरम्भिक सवालों पर विचार करते समय इस बात का निश्चय करना जरूरी होता है कि इन योजना कार्यों के लिए इतने अधिक धन का प्रबन्ध कैसे होगा। जहां तक दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बड़े-बड़े योजना कार्यों का सवाल है, उनके बारे में जितने भी आरम्भिक काम सार्वजनिक और निजी क्षेत्र में समझे जा सकते थे पूरे किए जा चुके हैं। इस प्रकार अब आशा है कि अगले पांच वर्षों में औद्योगिक क्षेत्र में काफी प्रगति होगी।

औद्योगीकरण के प्रसंग में विचारार्थ महत्वपूर्ण प्रश्न ये हैं : (१) सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के लिए नियमों का विशेष रूप से उल्लेख करते हुए औद्योगिक नीति, और (२) औद्योगिक प्राथमिकताएं ।

औद्योगिक नीति

१३. आठ साल पहले ६ अप्रैल, १९४८ के प्रस्ताव में भारत सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति घोषित की थी। उसके पश्चात् कुछ आधारभूत अधिकारों की गारंटी देते हुए तथा राज्य नीति के निदेशात्मक सिद्धान्त निर्धारित करते हुए भारत का संविधान लागू हुआ और संसद ने लक्ष्य के रूप में समाज के समाजवादी रूप को स्वीकार किया है। इन बातों के घटित हो जाने से आवश्यकता इस बात की उठी है कि संविधान में निहित सिद्धान्तों तथा समाजवाद के लक्ष्यों के अनुरूप नई औद्योगिक नीति की घोषणा की जाए। इसका अर्थ यह होता है कि अब राज्य को देश के भावी औद्योगिक विकास के लिए पहले से अधिक क्षेत्र पर अपनी सीधी जिम्मेदारी माननी चाहिए। लेकिन कुछ ऐसे सीमित करने वाले तत्व भी हैं जिनकी वजह से जिन क्षेत्रों में राज्य की पूरी जिम्मेदारी होगी अथवा उसका प्रमुख योग होगा, उसका स्पष्ट कर देना इस अवस्था में जरूरी हो गया है। इस प्रकार सभी संगत बातों पर विचार करके भारत सरकार ने ३० अप्रैल, १९५६ को नई नीति की घोषणा की है। यह नीति औद्योगीकरण और विशेषकर भारी उद्योगों और मशीन निर्माण उद्योगों को गति देने, सरकारी क्षेत्र को बढ़ाने और एक बड़ा सहकारी क्षेत्र तैयार करने के काम में सहायक होगी। इस संशोधित नीति के अनुसार अनुसूची 'क' में दिए हुए उद्योगों के लिए राज्य पूरी तरह जिम्मेदार होंगे और अनुसूची 'ख' में वे उद्योग हैं जो क्रमिक रूप से राज्याधीन होंगे, लेकिन इनमें निजी उद्योग से भी आशा की जाएगी कि वह राज्य के प्रयत्नों से सहयोग करे। लेकिन जो उद्योग इन अनुसूचियों से बाहर हैं उनका भविष्य आम तौर पर निजी क्षेत्र के प्रयत्नों और उद्यम पर ही निर्भर करेगा। हालांकि ये विभाजन रेखाएं खींच दी गई हैं, लेकिन अगर राज्य चाहे तो किसी भी प्रकार के उद्योग का उत्पादन कार्य स्वयं कर सकता है। संशोधित नीति के अन्तर्गत इन सभी तथा अन्य और पहलुओं पर अध्याय २ में काफी विस्तार से चर्चा की गई है। अन्य अनुसूचियों के साथ नीति का विवरण भी अध्याय २ के परिशिष्ट में दिया हुआ है।

औद्योगिक प्राथमिकताएं

१४. नीति सम्बन्धी जो ढांचा ऊपर दिया गया है, उसके अनुसार औद्योगिक सामर्थ्य के विस्तार का अगला कदम इन प्राथमिकताओं को रखते हुए उठाना होगा :

(१) लोहा, इस्पात और नाइट्रोजनीय खादों के साथ भारी रसायनों के उत्पादन में वृद्धि, भारी इंजीनियरी तथा मशीन निर्माण उद्योगों का विकास;

(२) विकास सम्बन्धी अन्य वस्तुओं तथा उत्पादन माल जैसे अल्यूमिनियम, सीमेंट रासायनिक गूदा, रंगाई सामान और फास्फेटी खादें तथा आवश्यक औषध द्रव्यों की सामर्थ्य का विस्तार;

(३) उन महत्वपूर्ण राष्ट्रीय उद्योगों का आधुनिकीकरण और उनको उन साज-सामान से युक्त करना जो पहले से स्थापित हैं, जैसे जूट, सूती वस्त्र और चीनी;

(४) उद्योगों में वर्तमान स्थापित सामर्थ्य का और अधिक उपयोग जहां उनकी सामर्थ्य और उनके उत्पादन में अधिक अन्तर हो; और

(५) उत्पादन के सामान्य कार्यक्रमों की जरूरतों और उद्योग के विकेन्द्रीकृत क्षेत्र के उत्पादन लक्ष्यों का ध्यान रखते हुए उपभोग वस्तुओं की सामर्थ्य का विस्तार।

इन प्राथमिकताओं के निर्धारण में जो बातें हैं वे और विस्तार से नीचे दी जा रही हैं।

१५. लोहा और इस्पात उद्योग को प्रत्यक्ष ही सबसे अधिक प्राथमिकता दी गई है क्योंकि दूसरे औद्योगिक उत्पादनों की अपेक्षा इनके उत्पादन के स्तर से ही देश की आर्थिक प्रगति का रूप निश्चित होता है। भारत में ऐसी परिस्थितियां हैं कि अधिकांश दूसरे देशों की तुलना में यहां कम लागत पर ही लोहे और इस्पात का उत्पादन उन्हीं स्तरों तक हो सकता है।

१६. भारी इंजीनियरी उद्योग लोहे और इस्पात कारखानों पर स्वाभाविक रूप से आश्रित होते हैं। इन चीजों को जो उच्च प्राथमिकता दी गई है वह इसलिए कि वे देश के भीतर ही अनेक प्रकार की औद्योगिक मशीनें आदि और पूंजीगत सामान, जैसे रेल के इंजन तथा विद्युत जनन के लिए विद्युत संयंत्र जुटा सकेंगे। अगर उनका निर्माण यहां न हो तो देश की विकासशील अर्थ-व्यवस्था के लिए उनको विदेशों से मंगाना ही पड़ेगा जिसमें कठिनाइयां तो हैं ही, साथ ही कोई बात निश्चित भी नहीं रहती। इस्पात तैयार करने के लिए संयंत्र के तमाम पुर्जों और अन्य मदों के उत्पादन के लिए सुविधाएं देने के लिए अनेक संस्थानों में निर्माण के तमाम तरह के सुभीते जुटाने ही पड़ेंगे। दूसरे शब्दों में, इस्पात, संयंत्र, खाद फैक्टरियां इत्यादि बनाने जैसे काम उठाने के लिए देश के भारी इंजीनियरी उद्योगों और कारखानों को सामान्य रूप से सुदृढ़ बनाना पड़ेगा। इसी प्रसंग में कुछ बुनियादी सहूलियतों, जैसे भारी फाउन्ड्रियों, भट्ठियों और संरचना कारखानों की स्थापना भी अत्यन्त आवश्यक है। इसीलिए ऐसा प्रस्ताव है कि इन सुभीतों के जुटाने का काम, जो कि देश में भारी औद्योगिक मशीनों के निर्माण कार्यों के लिए आवश्यक है, जल्दी से जल्दी किया जाए। इसको इस्पात उद्योग के विस्तार के बाद ही स्थान दिया गया है।

भारी औद्योगिक मशीनों के उत्पादन के लिए आवश्यक एक महत्वपूर्ण बात यह है कि भारी उद्योगों के लिए आवश्यक साजसामान और संयंत्रों के डिजाइन बनाने के लिए संगठनों की स्थापना की जाए। खाद उद्योग के लिए संगठन की स्थापना के लिए शुरुआत कर दी गई है। इन सुभीतों को आम तौर पर जुटाने के लिए जो भी दूसरी कार्रवाइयां की जाएं, उनके अलावा यह जरूरी है कि भारतीय कर्मचारियों को सरकारी क्षेत्र के योजना कार्यों से सम्बन्धित विकास कार्य के सभी पहलुओं से अवगत होना चाहिए, ताकि जितनी भी जल्दी हो सके देश में डिजाइन बनाने और निर्माण का काम शुरू किया जा सके।

१७. नाइट्रोजनीय खादों के उत्पादन की सामर्थ्य की विस्तार को प्राथमिकता इसलिए दी गई है कि कृषि के कार्यक्रमों के लिए खाद की मांग बढ़ती ही जा रही है और ये कृषि कार्यक्रम देश के आर्थिक विकास के लिए बुनियादी महत्व रखते हैं।

१८. विकास सम्बन्धी वस्तुओं में लोहे और इस्पात के बाद सीमेंट का नम्बर आता है, इसलिये इसको भी प्राथमिकता दी गई है।

१९. जूट और सूती वस्त्र मिलों को आधुनिक बनाने तथा उन्हें और भी साजसमान से युक्त करने के काम में कुछ प्रगति प्रथम योजना में हो चुकी है। लेकिन इनमें मशीनों आदि की

बदलाई की दिशा में बहुत कुछ किया जाने को है। देश की अर्थ-व्यवस्था तथा विदेशी मुद्रा कमाने की दृष्टि से इन दोनों उद्योगों का महत्व किसी प्रकार घटाया नहीं जा सकता। इन दोनों उद्योगों में भारत में हाल ही में जो विकास हुआ है और विदेशों में जो प्रगति हुई है, इन दोनों दृष्टियों से प्रतियोगिता के होते हुए जो निर्यात का बाजार दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है, उसे बनाए रखना बहुत ही मुश्किल हो जाएगा, अगर नवीकरण के कार्यक्रमों को मेहनत के साथ लागू न किया गया। इन परिस्थितियों में जूट और सूती वस्त्र उद्योगों को आधुनिक बनाने के कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता दी गई है।

२०. कुछ प्रमुख उद्योगों में स्थापित सामर्थ्य के उपयोग के स्तर के विषय में पहले ही संकेत किया जा चुका है। आयोजित विकास का यह एक बुनियादी सिद्धांत है कि ऐसे पूंजीगत साधनों की, जो प्रतियोगिता की मांग के अनुपात में कम हों, रक्षा की जाए और उस सामर्थ्य का जो कि सक्रिय नहीं है उपयोग करके उत्पादन अधिक से अधिक बढ़ाया जाए। इस तत्व को जितनी सम्भव हो महत्ता दी ही जानी चाहिए, परन्तु उपलब्ध सामर्थ्य का लेखा-जोखा करने के लिए जिन टेक्नोलोजीकल और आर्थिक सवालों से उलझना पड़ता हो, उनको अलग-अलग उद्योगों के प्रसंग में ध्यानपूर्वक देख लेना चाहिए।

२१. जहां भी संगत तत्वों, जैसे घरेलू मांग, निर्यात की सम्भावनाएं, कच्चे माल की प्राप्ति इत्यादि को देखते हुए उपभोग वस्तुओं की सामर्थ्य विस्तार की आवश्यकता अथवा गुंजाइश हो, वहां आवश्यक विकास कार्यों के लिए अनुमति ही नहीं बल्कि उनको बढ़ावा भी दिया जाना चाहिए। लेकिन रोजगार के ज्यादा से ज्यादा मौके प्रदान करने के हित में यह भी जरूरी है कि अनेक बड़े पैमाने के उपयोगी माल उद्योगों की सामर्थ्य के विस्तार को सामान्य उत्पादन कार्यक्रमों तथा उद्योग के विकेन्द्रित क्षेत्र के लिए निर्धारित लक्ष्यों के प्रकाश में निश्चित किया जाए।

सार्वजनिक क्षेत्र के कार्यक्रम

२२. लोहा और इस्पात—जिस प्रकार लोहे और इस्पात को प्राथमिकता दी गई है, उसी प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र में दूसरी पंचवर्षीय योजना में १० लाख टन इन्गाट वाले तीन इस्पात संयंत्र बनाने को कहा गया है और इनमें से एक में ३,५०,००० टन फाउन्ड्री श्रेणी का कच्चा लोहा तैयार करने की सुविधाएं होंगी।

राउरकेला में जो संयंत्र लगाया जाएगा, उसमें १९५६–६१ की अवधि म लगभग १२८ करोड़ रुपए* लागत आएगी और ७,२०,००० टन ठंडा और गर्म बेल्लित चपटा इस्पाती सामान तैयार किया जाएगा। यह एल० डी० प्रक्रम (इस्पात के उत्पादन में आक्सीजन देना) के योग्य बनाया जा रहा है और इसमें प्रकृत बेनजोल, कोलतार और अमोनिया निकालने का सामान भी होगा। प्रस्ताव यह है कि राउरकेला में कोक-भट्ठी गैसों में से हाइड्रोजन और द्रव-वायु संयंत्र की नाइट्रोजन को नाइट्रो-चूने की मसाले की खादें बनाने के काम लाया जाएगा। इस काम में एल० डी० तरीका ग्रहण करने से जो कोक-भट्ठी गैस उपलब्ध होने की आशा है, उसका फायदा उठाया जाएगा।

दूसरा संयंत्र मध्यप्रदेश में भिलाई में होगा जिस पर लगभग ११० करोड़ रुपए* लागत आएगी। उससे आशा है कि ७,७०,००० टन विक्रय योग्य इस्पात, भारी और मध्यम उत्पादित

*संयंत्र की अनुमानित लागत मात्र।

वस्तुएं मिल सकेंगी, जिनमें अनुवेल्लन (रि-रोलिंग) उद्योग के लिए १,४०,००० टन गढ़े पिंडक (विलेट) भी शामिल हैं।

तीसरा संयंत्र दुर्गापुर (पश्चिम बंगाल) में स्थापित होगा। आशा है उस पर ११५ करोड़ रुपए* लागत आएगी। इसमें इतने सामान का प्रबन्ध होगा कि साल में ७,९०,००० टन हलके और मध्यम इस्पात के अनुखण्ड और गढ़े पिण्डक (विलेट) तैयार हो सकेंगे।

२३. इस्पात संयंत्रों के भिन्न-भिन्न अनुभागों की सामर्थ्य इस प्रकार है :—

इस्पात कारखाने	कोयला कार्बनीकरण		कच्चा लोहा	इस्पात इन्गाट	तैयार इस्पात	बिक्री के लिए अतिरिक्त कच्चा लोहा	विद्युत कारखाने (किलोवाट में)
	कार्बनीकृत कोयला	उत्पादित कोक					
१	२	३	४	५	६	७	८
			लाख टनों में				
राउरकेला	१६·००	१०·४५	९·४५	१०	७·२०	०·३०	७५,०००
भिलाई	१६·५०	११·४५	११·१०	१०	७·७०	३·००	२४,०००
दुर्गापुर	१८·२५	१३·१४	१२·७५	१०	७·९०	३·५०	१५,०००

२४. तलडीह और वल्ली राझर के खनिज लोहे का विकास राउरकेला और भिलाई योजना कार्यों का ही एक निजी अंग समझा जाता है। दुर्गापुर इस्पात संयंत्र के लिए खनिज लोहा पाने के बारे में सुझाव है कि निजी उद्यम की साझीदारी में गुआ के निक्षेप की खुदाई कराई जाए। मैसूर के लोहा और इस्पात कारखाने की ही तरह भिलाई इस्पात संयंत्र में भी एक ऐसे सामूहिक संयंत्र की स्थापना की व्यवस्था है जो महीन खनिज लोहे का उपयोग कच्चे लोहे के उत्पादन में कर लेगा। इसी तरह का दूसरा संयंत्र राउरकेला में भी खोले जाने की सम्भावना है, पर यह बात तलडीह के खनिज लोहे पर निर्भर करती है।

२५. इन इस्पात संयंत्रों को कोयला पहुंचाने के लिए प्रस्ताव यह है कि दुर्गापुर में कोयले का एक धुलाई कारखाना स्थापित किया जाए जिसकी प्रति घण्टा सामर्थ्य ३६० टन हो। इससे कोयले का राख वाला हिस्सा घटकर १५ प्रतिशत रह जाएगा। राउरकेला और भिलाई म उपयोग म आने वाले कोयले की धुलाई के लिए दूसरा धुलाई कारखाना बोकारो में स्थापित किया जाएगा। इस्पात संयंत्र के लिए आवश्यक राख वाले धातुकर्मक कोयले की जरूरतों को पूरा करने के लिए इसी प्रकार के अन्य धुलाई कारखाने निजी क्षेत्र म खोलने के लिए विचार किया जा रहा है।

२६. हर इस्पात संयंत्र की फुकवां भट्ठी की दैनिक क्षमता १,००० टन कच्चा लोहा होगी। प्रस्ताव है कि इनमें से कुछ में उत्पादन बढ़ाने के लिए ऊपरी दबाव तथा संयंत्र के डिजाइन म अन्य नई विशेषताओं का उपयोग किया जाए। इस्पात के उत्पादन की योजना कुछ ऐसी है कि कच्चे लोहे के साथ संयंत्र में जो खुरचन निकले उसका भी उपयोग हो जाए।

*संयंत्र की अनुमानित लागत मात्र।

राउरकेला के इस्पात कारखाने के परिवर्तकों में आक्सीजन फुकाई पद्धति का प्रयोग किया जाएगा जिससे इनकी वार्षिक क्षमता ७,५०,००० टन होगी।

राउरकेला में एल० डी० पद्धति भी अपनाने का निर्णय किया गया है, पर इसके पहले इन दिनों जर्मनी, कैनेडा, और अमेरिका में जो संयंत्र इस पद्धति से काम कर रहे हैं, उनका अच्छी प्रकार अध्ययन कर लिया गया है।

२७. सरकारी क्षेत्र में इन तीनों संयंत्रों की बनावट आदि की योजनाओं में उनके आगामी विकास की सम्भावना को भी ध्यान में रखा गया है। इस प्रकार, भिलाई संयंत्र में २५ लाख टन इस्पात प्रति वर्ष तक के विस्तार की और राउरकेला और दुर्गापुर संयंत्रों में से हर एक में लगभग १२·५ लाख टन के विस्तार की व्यवस्था है। इस्पात उत्पादन के कार्यक्रम में भिलाई और दुर्गापुर के इस्पात संयंत्रों के लिए लगभग १,४०,००० टन गढ़े सिल्लों और इस्पात अर्द्धक रखे गए हैं। इनसे अनु-उत्पादकों और अनुवेल्लकों के लिए आवश्यक कच्चे माल की भी व्यवस्था कर दी गई है।

२८. सामर्थ्य के अनुसार अधिकतम उत्पादन के लिए जितना खनिज सम्बन्धी कच्चा माल लगेगा, उसका अनुमान नीचे दिया जा रहा है :—

(लाख टन)

	राउरकेला	भिलाई	दुर्गापुर
कोयला	१६·००	१७·६०	१८·३०
खनिज लोहा	१७·००	१६·४०	१६·४०
खनिज मैंगनीज	१·१२	०·३३	०·६४
चूना पत्थर	५·२३	५·५१	६·१७
डोलोमाइट	०·२८	३·०६	०·४२

२९. इसकी भी व्यवस्था कर दी गई है कि मैसूर लोहा और इस्पात कारखाने का इस्पात उत्पादन १९६०-६१ तक बढ़कर १ लाख टन हो जाए। अनुमान है कि जब ये योजना कार्य पूरे हो जाएंगे तो सरकारी क्षेत्र में आज जो इस्पात का उत्पादन १ करोड़ रुपए मूल्य का ही होता है तब तक बढ़कर १२० करोड़ रु० का हो जाएगा। इसके अलावा लगभग ३ लाख टन इस्पात निर्यात के लिए भी बच रहेगा। दूसरी योजना में केन्द्रीय सरकार के तीनों इस्पात योजना कार्यों और मैसूर लोहा इस्पात कारखाने के विस्तार के लिए क्रमशः ३५० करोड़ रुपए और ६ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। योजना के आखीर तक इन संयंत्रों से संबंधित नगरों के निर्माण के लिए भी कुछ और धन की आवश्यकता पड़ेगी। इन मदों के लिए कुल विदेशी सहायता ७५ करोड़ रुपए मिल रही है जो पूंजी में संयंत्र और मशीनों के लिए समय-समय पर दी जाने वाली रकम और कर्ज के अन्य रूपों में होगी। सार्वजनिक क्षेत्र में जो संयंत्र हैं, आशा है कि उनसे १९६०-६१ में कुल मिलाकर लगभग २० लाख टन तैयार इस्पात मिलेगा।

३०. भारी फाउंड्रियों, भट्ठियों और संरचना कारखानों तथा औद्योगिक मशीनों के निर्माण की सुविधाएं :—चित्तरंजन रेल इंजन कारखाने ने इंजन उत्पादन की सामर्थ्य १२० से बढ़ाकर ३०० करने की योजना बनाई है। उसके विकास कार्यक्रम में एक भारी इस्पात फाउंड्री की स्थापना भी शामिल है, ताकि रेलवे के लिए आवश्यक ढली हुई भारी चीजें देश के

भीतर ही मिल जाया करें। इसी प्रकार राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम ने दी गई रकम में से १५ करोड़ भारी रुपए फाउंड्रियों, भट्ठी कारखानों और भारी संरचना कारखानों के लिए निकालकर अलग रख दिए हैं। यह पहले ही बताया जा चुका है कि दूसरी योजना के अधीन मशीन निर्माण के कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए ये विकास कार्य बहुत ही आवश्यक हैं।

३१. दूसरी योजना के सार्वजनिक क्षेत्र में भारी मशीनों आदि के ये उद्योग शामिल हैं :

	१९५६-६१ के लिए व्यवस्था
बिजली के साज-सामान का निर्माण	२० करोड़ रु० (२५ करोड़ रु० पूरे होने के लिए)
हिन्दुस्तान मशीन टूल्स का विस्तार	२ करोड़ रु०
औद्योगिक मशीनों और मशीनी औजारों का निर्माण	१० करोड़ रु०

इनके अलावा गवर्नमेंट इलेक्ट्रिक फैक्टरी, बंगलौर के विस्तार के लिए १·२ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इस समूह के अन्तर्गत जो अन्य उद्योग आते हैं, उनमें हवाई इंजन योजना कार्य और इलेक्ट्रानिक और बेतार के सामान के योजना कार्य का उल्लेख किया जा सकता है।

३२. बिजली का भारी विद्युत सामान निर्माण करने की योजना के विकास के लिए ब्रिटेन की एसोशिएटेड इलेक्ट्रिकल इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड के साथ एक परामर्श करार हो चुका है। निश्चय हुआ है कि संयंत्र भोपाल में लगाया जाए। इस योजना कार्य के पूरे होने में सात या आठ साल लगेंगे और अनुमान है कि लगभग २५ करोड़ रुपया खर्च आएगा। संयंत्र के कुछ हिस्से १९६० तक उत्पादन शुरू कर देंगे। भारी ट्रान्सफार्मर, औद्योगिक मोटर और स्विच गियर दूसरी योजना के अन्त तक तैयार होने लगेंगे और हाइड्रालिक टरबाइन जैनरेटर तथा डीज़ल सेटों के जैनरेटर जैसे अन्य बुनियादी सामान का उत्पादन तीसरी योजना के आरंभिक वर्षों में शुरू होगा।

३३. हिन्दुस्तान मशीन टूल्स लिमिटेड के विकास और विस्तार के कार्यक्रम का उद्देश्य बड़ी संख्या में और अधिक प्रकार की नापों तथा किस्मों के मशीनी औजार तैयार करना है। इस कार्यक्रम के अधीन ८½" वाली अधिक गति की खरादों का उत्पादन ४०० तक बढ़ा दिया जाएगा और इससे भी बड़े नाप की खरादों और पिसाई मशीनों तथा भू-छेदन मशीनों के निर्माण का काम भी शुरू किया जाएगा। हिन्दुस्तान मशीन टूल्स की दूसरी योजना के लिए २ करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। सरकार ने अभी एक समिति बनाई है जो इस विकास कार्यक्रम का अध्ययन मशीनी औजार उद्योग के समस्त विकास के एक हिस्से के रूप में कर रही है। इस समिति की सिफारिशों को अभी अन्तिम रूप नहीं दिया गया है।

३४. राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम भारी औद्योगिक मशीनों के विकास को विशेष रूप से बढ़ावा देगा। भारी फाउंड्रियों, भट्ठियों और संरचना कारखानों में जो विकास सम्भव होगा, ऐसा सोचा जाता है कि उसके आधार पर औद्योगिक मशीनों के उत्पादन में दूसरी योजना के दौरान में सन्तोषप्रद प्रगति होगी।

३५. दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य:—दक्षिण भारत में कोयले के निक्षेप में कमी होने की वजह से नैवेली के बहुमुखी दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य के विकास पर ज्यादा से ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है। फिलहाल रखे गए अनुमानों के आधार पर इस योजना कार्य

में कुल ६८·८ करोड़ रुपए लगाए जाएंगे। इस विकास कार्यक्रम में हर साल ३५ लाख टन लिगनाइट निकालना भी शामिल है। यह लिगनाइट इन कामों में आएगा :

(क) २,११,००० कि० वा० सामर्थ्य के स्टेशन में बिजली पैदा करना,

(ख) लगभग ७,००,००० टन कच्चा कोयला चूर्ण ढोकों की वार्षिक सामर्थ्य वाले कार्बनीकरण संयंत्र द्वारा कार्बनीकृत कोयला चूर्ण ढोकों का उत्पादन (कार्बनीकृत कोयला चूर्ण ढोकों की सामर्थ्य ३,८०,००० टन वार्षिक होगी), और

(ग) यूरिया और सल्फेट नाइट्रेट के रूप में ७०,००० टन स्थिर नाइट्रोजन का उत्पादन।

इस योजना कार्य के लिए योजना में ५२ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इस बहुमुखी योजना कार्य के भिन्न-भिन्न हिस्सों के पूरे होने के बारे में निश्चित कार्यक्रम तो तभी बनाया जा सकेगा जब जल पम्प करने के परीक्षण, जो इन दिनों किए जा रहे हैं, पूरे हो जाएंगे। इसके लिए अगर और साधनों की आवश्यकता होगी तो उनकी व्यवस्था इस योजना कार्य को कार्यरूप देने की प्रगति की वार्षिक समीक्षा के आधार पर की जाएगी।

३६. खाद उत्पादन :—अनुमान है कि स्थिर नाइट्रोजन के रूप में नाइट्रोजनीय खादों का उपयोग १९६०-६१ तक ३,७०,००० टन हो जाएगा। इस समय वार्षिक सामर्थ्य ८५,००० टन है। इस प्रकार वर्तमान सामर्थ्य और प्रत्याशित आवश्यकताओं के बीच काफी अन्तर है। प्रथम योजना में ही खाद उत्पादन को ४७,००० टन स्थिर नाइट्रोजन (यूरिया और नाइट्रेट सल्फेट के रूप में) बढ़ाने के लिए प्रयत्न किए गए थे। इसके लिए सिन्दरी खाद कारखाने को उसकी कोक-भट्ठी की गैस के उपयोग द्वारा विस्तृत किया गया था। दूसरी योजना में प्रस्ताव यह है कि खाद उत्पादन समिति की सिफारिशों के आधार पर दक्षिण अर्कांट लिगनाइट योजना कार्य के अन्तर्गत स्थापित यूनिट के अलावा दो और खाद फैक्टरियां स्थापित की जाएं। इनमें से एक संयंत्र नंगल (पंजाब) में होगा जो ७०,००० टन स्थिर नाइट्रोजन से मिश्रित अमोनियम नाइट्रेट तैयार करेगा। इस संयंत्र में भारी जल तैयार करने का प्रबन्ध भी किया जाएगा। इसमें १,६०,००० किलोवाट बिजली खर्च होगी। तीसरा कारखाना राउरकेला में बनेगा जो प्रतिवर्ष ८०,००० टन स्थिर नाइट्रोजन के बराबर नाइट्रो-चूना पत्थर का उत्पादन करने के लिए होगा। इस योजना कार्य के लिए फिलहाल ८ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इसके लिए उपयुक्त समय पर पूरक व्यवस्था भी करनी पड़ेगी।

३७. भारी इंजीनियरी उद्योग :—योजना में हिन्दुस्तान शिपयार्ड और चित्तरंजन लोकोमोटिव फैक्टरी को और अधिक विस्तृत करने की व्यवस्था रखी गई है। इन विस्तार कार्यों का परिणाम यह होगा कि विशाखापत्तनम में पहले पुराने प्रकार के जलयानों की उत्पादन दर ६ या नए प्रकार के जलयानों की उत्पादन दर ४ तक हो जाएगी। चित्तरंजन लोकोमोटिव फैक्टरी के बारे में पहले ही कहा जा चुका है कि रेल के इंजनों का उत्पादन दूसरी योजना के अन्त तक ३०० प्रतिवर्ष हो जाएगा। जलयान निर्माण उद्योग के विकास कार्यक्रम में यह भी अन्तर्निहित है कि विशाखापत्तनम में एक शुष्क गोदी बनाई जाए और एक दूसरे जलयान क्षेत्र के निर्माण के प्रारम्भिक कार्य, जैसे जगह का चुनाव और प्रशिक्षण सुविधाओं की व्यवस्था आदि के लिए ७५ लाख रु० की भी उसमें व्यवस्था है। भारी समुद्रीय डीज़ल

इंजन बनाने के बारे में भी विचार किया जा रहा है जिसके लिए आर्थिक व्यवस्था उचित मौके पर की जाएगी ।

एक अवस्थागत निर्माण कार्यक्रम के अनुसार १९५९ के बाद से ३५० डिब्बे तैयार करने के आधार पर पेराम्बूर की इंटैगरल कोच फैक्टरी में जो बाकी काम होगा वह दूसरी योजना के आखीर तक पूरा कर लिया जाएगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में रेल योजना के अन्तर्गत छोटी लाइन के डिब्बे तैयार करने का कारखना स्थापित करने के लिए ८·५ करोड़ रुपए की और फालतू पुर्जे बनाने के निमित्त दो इंजीनियरी कारखानों के लिए ७·० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है ।

३८. सरकारी क्षेत्र के हलके और मध्यम उद्योगों में मौजूदा डी० डी० टी० और कीटाणुनाशक फैक्टरियों के विस्तार और तिरुवांकुर-कोचीन में एक नई डी० डी० टी० फैक्टरी की स्थापना के लिए योजना में व्यवस्था है । हिन्दुस्तान एंटीबायोटिक्स लिमिटेड के विस्तार कार्यक्रम में पेनीसिलीन की उत्पादन सामर्थ्य बढ़ाने के लिए स्ट्रेप्टोमाइसीन जैसी कीटनाशक ओषधियों का उत्पादन बढ़ाने की योजनाएं भी शामिल हैं। आरम्भिक कच्चे पदार्थों से बुनियादी दवाएं तैयार करने के सवाल पर भी विचार किया जा रहा है । इसी प्रकार हिन्दुस्तान केबल्स लिमिटेड, नेशनल इंस्ट्रूमेंट्स फैक्टरी और इंडियन टेलीफोन इंडस्ट्रीज का भी विस्तार किया जाएगा । दूसरी पंचवर्षीय योजना में जमानती कागज की एक मिल की स्थापना भी शामिल है जिससे हम लोग देश भर के लिए जमानती और बांड कागज का उत्पादन यहीं कर सकें। दूसरी योजना के शुरू के सालों में रजत शोधशाला का भी उत्पादन शुरू हो जाएगा । यह शोधशाला अभी तैयार की जा रही है ।

३९. राज्य सरकारों के औद्योगिक योजना कार्यों में मैसूर लोहा और इस्पात कारखाने के विस्तार कार्यक्रम का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है । एक अन्य महत्वपूर्ण योजना के अन्तर्गत दुर्गापुर में पश्चिम बंगाल सरकार फाउंड्री-कोक, कोयला कार्बनीकरण के उप-उत्पादन और बेकार गैसों के आधार पर बिजली पैदा करने का आयोजन करेगी। राज्यों में जिन मध्यम आकार वाले उद्योगों का विकास होना है उनमें मैसूर और बिहार राज्यों में पोर्सिलेन के विद्युत इन्सुलेटरों का निर्माण, हैदराबाद में प्राग औज़ार फैक्टरी का पुनर्गठन, साथ ही वायु दाबकों के निर्माण, आन्ध्र की कागज मिल का विस्तार और उत्तर प्रदेश सीमेंट फैक्टरी और बिहार सुपरफास्फेट फैक्टरी की सामर्थ्य में वृद्धि का उल्लेख विशेष रूप से किया जा सकता है। दूसरी योजना के अन्तर्गत केन्द्र और राज्य सरकारों के औद्योगिक योजना कार्यों का ब्योरा परिशिष्ट १ में दे दिया गया है।

४०. भारी रासायनिक तथा उप-उत्पाद विधायन योजना कार्यः—इस्पात संयंत्रों को कोक भट्ठी गैसों से अमोनिया निकालने के लिए सल्फ्यूरिक अम्ल की बहुत अधिक मात्रा में जरूरत होगी। दुर्गापुर और भिलाई इस्पात संयंत्रों से कुल मिलाकर लगभग ३५,००० टन अमोनियम सल्फेट प्रति वर्ष निकलेगा । अमोनियम सल्फेट के उत्पादन तथा कारखाने की और दूसरी मांगों के लिए आवश्यक सल्फ्यूरिक अम्ल की जरूरतों को पूरा करने के उद्देश्य से दो सम्पर्क सल्फ्यूरिक अम्ल संयंत्रों के लगाए जाने का प्रस्ताव है, जिनकी दैनिक सामर्थ्य ५० टन होगी। ऐसा प्रस्ताव है कि राउरकेला इस्पात संयंत्र में उप-उत्पाद अमोनिया को द्रव अमोनिया के रूप में निकाला जाए । इस फैक्टरी में इस्पात मार्जक क्रियाओं में जो सल्फ्यूरिक अम्ल लगेगा उसको बाहरी साधनों से प्राप्त किया जाएगा। इसके लिए सल्फ्यूरिक अम्ल संयंत्र लगाने

का कोई विचार नहीं है। पश्चिम बंगाल सरकार के दुर्गापुर कोक चूल्हा संयंत्र में उप-उत्पादों के निकालने का जो प्रस्ताव है, उसी में ३,३०० टन सल्फ्यूरिक अम्ल और १,५०० टन अमोनिया के वार्षिक उत्पादन की भी व्यवस्था है।

४१. औषधियों, प्लास्टिक और रंगाई पदार्थ के उद्योगों का विकास अभी तक रुका रहा है। इसके दो कारण थे : एक तो दामों का अधिक होना और दूसरे, बेनज़ीन, टोलीन, जाइलीन, नेफ्थालीन, फिनाइल और ऐन्थासीन जैसे प्रारम्भिक आरगेनिक रसायनों का कम मात्रा में मिलना। जैसा कि इस अध्याय में आगे बताया गया है, दूसरी पंचवर्षीय योजना में इन क्षेत्रों में विस्तृत रूप से विकास की व्यवस्था की गई है। इस बात को पक्का करने के लिए कि इन उद्योगों के लिए कच्चा माल देश के भीतर ही मिल जाया करेगा, यह व्यवस्था की गई है कि इस्पात संयंत्रों, दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य और दुर्गापुर कोक-भट्ठी योजना कार्य की कोक-भट्ठी गैसों से प्रकृत बेनज़ोल निकाला जा सके। भिलाई और दुर्गापुर में बेनज़ीन, टोलीन, जाइलीन और अन्य जलीय कार्बन तत्वों के उत्पादन के लिए प्रकृत बेनज़ीन को तोड़ने की व्यवस्था रखी गई है। भिलाई में और दुर्गापुर कोक-भट्ठी योजना कार्य में कोलतार के आसवन के लिए संयंत्र लगाए जाने की भी व्यवस्था की गई है। इसी प्रकार के कार्य राउरकेला में भी किए जाने पर विचार किया जा रहा है। कार्बनीकरण संयंत्रों के उप-उत्पादों के द्वारा इस प्रकार रासायनिक कच्चा सामान प्राप्त करने की इन योजनाओं से इतना जरूर होगा कि कुछ रासायनिक और फलित उद्योगों के शीघ्र विकास के लिए पक्की नींव मिल जाएगी। अब तक अन्तिम रूप दी गई योजनाओं के आधार पर सार्वजनिक क्षेत्र में कोलतार का आसवन ६२,५०० टन प्रतिवर्ष हो जाएगा। लगभग ५० लाख गैलन बेनजीन और १४ लाख गैलन टोलीन के उत्पादन की सुविधाओं के अलावा क्रमशः १,८०० तथा ३,४०० टन फिनोल और नैफ्थालीन प्रतिवर्ष की सामर्थ्य भी उसी प्रकार पैदा कर ली जाएगी। इन संयंत्रों के लिए लगने वाले धन की व्यवस्था उन प्रमुख योजना कार्यों के साथ की गई है जिनसे ये सम्बद्ध हैं।

टेक्नीकल जनशक्ति की समस्या

४२. दूसरी योजना के अन्तर्गत सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में जो औद्योगिक विकास की प्रगति और तैयार उत्पादों और विषयनों में जो विभिन्नता रखी गई है उसके लिए आम तौर से देश में इस समय जितने भी प्रशिक्षित टेक्नीकल आदमी मिल सकते हैं उनसे कहीं अधिक मात्रा में भिन्न-भिन्न स्तरों पर उनकी आवश्यकता होगी। अभी-अभी तीनों इस्पात संयंत्रों की आवश्यकताओं का जो लेखा-जोखा तैयार किया गया है, उसके अनुसार उत्पादन शुरू होने पर फोरमैन श्रेणी से नीचे के लगभग १५,००० दक्ष कामगारों और फोरमैन श्रेणी से ऊपर के लगभग २,१९९ टेक्नीशियनों की जरूरत होगी। इन टेक्नीशियनों में से ज्यादातर अनुभवप्राप्त आदमी होने चाहिएं। इस समस्या को सुलझाने के लिए जर्मनी, सोवियत रूस, ब्रिटेन और आस्ट्रेलिया में चुने हुए कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिलाने के लिए कार्रवाई की जा रही है। अन्य श्रेणी के कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने की योजना बनाने के लिए लोहा और इस्पात मंत्रालय ने एक समिति बनाई है जो वर्तमान सुविधाओं की जांच-पड़ताल करेगी और उपयुक्त उपायों की सिफारिश करेगी।

भारी विद्युत संयंत्र योजना कार्य ही ऐसी दूसरी योजना है कि उपलब्ध टेक्नीकल आदमियों की एक बड़ी संख्या उसी में खप जाएगी। टेक्नीकल सलाहकारों की रिपोर्ट में भिन्न-भिन्न श्रेणियों के लिए आवश्यकताओं के ये अनुमान दिए गए हैं : प्रशासकीय ७३५, सुपर-

वाइजर या प्रशिक्षित टेक्नीकल ७१५, दक्ष टेक्नीकल ४,५५० और अर्ध दक्ष तथा अदक्ष ६,२०० । इस रिपोर्ट में कुछ और बातें भी शामिल हैं, जैसे वर्तमान कारखानों में प्रशिक्षण के लिए प्राप्त सुविधाओं के आधार पर भारतीय कर्मचारियों के प्रशिक्षण की योजना बनाना तथा एक प्रशिक्षण केन्द्र खोलने के विषय में सलाह देना ।

सिन्दरी खाद कारखाने में प्रशिक्षण की सुविधाओं का प्रबन्ध कर देने से सरकारी क्षेत्र में खाद कारखानों के लिए प्रशिक्षित आदमियों की आवश्यकताएं कुछ हद तक पूरी हो जाएंगी।

मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि टेक्नीकल प्रशिक्षण-प्राप्त आदमियों की आवश्यकता बहुत अधिक महत्व की है और इसीलिए सार्वजनिक क्षेत्र में योजना कार्यों में टेक्नीकल सहयोग के लिए विदेशों से जो करार हुए हैं उनमें कर्मचारियों के प्रशिक्षण के सम्बन्ध में विशेष रूप से व्यवस्था की गई है । इंजीनियरी कर्मचारी समिति ने इस विषय पर व्यापक दृष्टिकोण से विचार किया है ।

४३. केन्द्रीय सरकार के औद्योगिक योजना कार्यों पर (राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के लिए निर्धारित धन को छोड़कर) दूसरी योजना की अवधि में नया विनियोग ५०२ करोड़ रुपये का होगा (देखिये परिशिष्ट १) । राज्यों में औद्योगिक योजना कार्यों के लिए ३२ करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है । इसमें भिन्न-भिन्न राज्यों में सहकारी चीनी कारखानों की स्थापना के लिए ५ करोड़ रुपये की सहायता भी शामिल है । इसमें असम और पांडीचेरी जैसे क्षेत्रों के कुछ उद्योगों के विकास के लिए सहायता की भी व्यवस्था की गई है ।

राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम

४४. उद्योगों को सीधे सहायता देने और इंडियन एक्स्प्लोसिव्ज लिमिटेड की पूंजी में साझा करने के लिए जिनके लिए भारत सरकार वायदा कर चुकी है, तथा राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के कार्यों के लिए वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय की योजना* में ६० से ६५ करोड़ रुपये तक की व्यवस्था की गई है। रा० औ० वि० निगम के कार्यकलापों के लिए ५५ करोड़ रुपये की व्यवस्था है । इस राशि का एक भाग (फिलहाल लगभग २०–२५ करोड़ रुपये) सूती और जूट वस्त्र उद्योगों को आधुनिक बनाने में सहायता देने के लिए है। इन उद्योगों को जिन कारणों से प्राथमिकता दी गई है वे पहले बताए जा चुके हैं। रा० औ० वि० निगम के लिए दी गई राशि का शेष भाग, लगभग ३५ करोड़, नए बुनियादी और भारी उद्योगों को चलाने के लिए होगा। रा० औ० वि० निगम ने जिन योजना कार्यों की जांच-पड़ताल की है उनमें फाउन्ड्री और भट्ठी के कारखाने, तामीरी ढांचे, ऊष्मसह ईंटें, रेयन के लिए रासायनिक लुगदी, अखबारी कागज इत्यादि, तथा रंगाई पदार्थों और दवाओं के लिए माध्यम, कार्बन ब्लैक इत्यादि शामिल हैं। आशा है कि इन योजना कार्यों के अलावा रा० औ० वि० निगम अल्यूमीनियम उद्योग और मिट्टी हटाने और खान खोदने इत्यादि के लिए भारी सामान के निर्माण और लौह और अलौह उद्योगों के लिए आवश्यक बेल्लन और बेल्लन मिल के साज-सामान के लिए एक नई यूनिट स्थापित करने की दिशा में प्रयत्न करेगा। वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय ने हाल ही में एक समिति नियुक्त की है जो दूसरी योजना में अल्यूमीनियम उद्योग के लिए निर्धारित ३०,००० टन की सामर्थ्य के लक्ष्य को पूरा करने के लिए एक नए अल्यूमीनियम प्रद्रावक

*वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय की योजनाओं के लिए कुल ७० करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इसमें से ५ से १० करोड़ रुपए उन योजनाओं के लिए हैं जो निर्माण उद्योगों के बाहर हैं

(स्मेल्टर) स्थापित करने के लिए उपयुक्त स्थान के बारे में सलाह देगी। भारी फाउन्ड्रियों, भट्ठियों और संरचना कारखानों के योजना कार्यों के लिए रिपोर्ट तैयार करने की तैयारी की जा रही है। आशा है कि इन योजना कार्यों के सम्बन्ध में डिजाइनों और विकास कार्य की सुविधाओं का इंतजाम किया जाएगा।

ऊपर बताए गए कार्यक्रम पर अमल करने के लिए रा० औ० वि० निगम को जितना धन दिया गया है, हो सकता है उससे ज्यादा की जरूरत पड़े। वास्तव में आवश्यक धन और इस समय प्रस्तावित निधि में अन्तर दो बातों से पड़ेगा : एक तो धन देने का अपनाया हुआ तरीका और दूसरे विभिन्न योजना कार्यों में लगी हुई पूरी पूंजी में सरकार का भाग। अगर वित्तीय साधनों की कमी की वजह से रा० औ० वि० निगम के योजना कार्यों को कार्य रूप देने में प्राथमिकता निर्धारित करने का सवाल आता है, तो सर्वोच्च प्राथमिकता उन योजनाओं को देनी पड़ेगी जिनका सम्बन्ध भारी मशीनों आदि अथवा तत्सम्बन्धी मशीनों आदि के निर्माण से इस दृष्टि से हो कि तीसरी योजना के लिए आवश्यक भारी मशीनें आदि देश के भीतर ही तैयार करने के लिए परिस्थितियां पैदा की जा सकेंगी।

विनियोग पूंजी और वित्तीय साधन

४५. रा० औ० वि० निगम और निजी क्षेत्र (खान खोदना, बिजली उत्पादन और वितरण, बागान और छोटे पैमाने के उद्योगों के अलावा) के अन्तर्गत दूसरी योजना में निर्धारित समूचे विकास के कार्यक्रम पर कुल ७२० करोड़ रुपए की पूंजी लगेगी जिसमें से ५७० करोड़ रुपए नए विनियोगों पर और १५० करोड़ रुपए मशीनों की बदलाई तथा आधुनिकीकरण के लिए होंगे। जैसे कि पहले कहा जा चुका है, फिलहाल रा० औ० वि० निगम के लिए ५५ करोड़ रु० की व्यवस्था की जा रही है। इस आधार पर कार्यक्रम की पूर्ति के लिए लगभग ६६५ करोड़ रुपए की पूंजी की और आवश्यकता पड़ेगी। इन अवश्यकताओं के बावजूद निजी क्षेत्र के लिए जितना भी धन मिल सकने का इस समय अनुमान लगाया गया है वह ६२० करोड़ रु० बैठता है। नीचे की तालिका में विभिन्न स्रोतों से प्रत्याशित और १९५१-५६ की अवधि के लिए अनुमानित रकमें दी गई हैं :

(करोड़ रुपए)

	१९५१-५६	१९५६-६१
१. औद्योगिक वित्त निगम, और राज्य वित्त निगम और औद्योगिक ऋण तथा विनियोग निगम से ऋण	१८	४०
२. प्रत्यक्ष ऋण, समीकरण निधि से अप्रत्यक्ष ऋण, तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्यांश—और निजी प्रतिष्ठानों की शेयर पूंजी में राज्य सरकारों का अंशदान तथा ऋण	२६	२०
३. संभरणकर्ताओं के प्रत्ययों सहित विदेशी पूंजी	४२ से ४५	१००
४. नई मदें	४०	८०
५. विनियोग के लिए उपलब्ध आंतरिक सम्पत्ति (नई यूनिटों में तथा बदलाई के लिए)	१५०	३००
६. प्रबन्ध एजेन्टों से पेशगी ई० पी० टी० प्रत्यर्पण इत्यादि जैसे अन्य स्रोत	६१ से ६४	८०
	३४०	६२०

नोट—ऊपर दी हुई तालिका की १ और २ मदों में दिखाई गई रकमें योजना में सरकारी क्षेत्र के उद्योग और खनिज शीर्षक के अंतर्गत भी दी गई हैं।

यह नहीं कहा जा सकता कि ऊपर दिए गए अनुमान एकदम सही ही होंगे, क्योंकि ये कई ऐसी बातों पर निर्भर हैं जिनका अभी से कुछ अंदाजा लगा सकना कठिन है।

४६. अनुबन्ध २ में दिए गए विकास कार्यक्रमों में दूसरी पंचवर्षीय योजना के १९६०-६१ तक पूरे किए जाने वाले लक्ष्य बताए गए हैं। इन लक्ष्यों को निश्चित करते समय इन बातों को ध्यान में रखा गया था :—

(क) २२ उद्योगों के कार्यक्रमों और नीतियों पर विचार करने के लिए १९५५ में योजना आयोग द्वारा आयोजित सभाओं में भिन्न-भिन्न लोगों द्वारा प्रगट किए गए मत;

(ख) वाणिज्य और उद्योग तथा खाद्य और कृषि मंत्रालयों के अधीन काम करने वाली विकास परिषदों की सिफारिशों और वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय द्वारा की गई सिफारिशें;

(ग) प्रथम पंचवर्षीय योजना में वित्त विनियोग की वास्तविक दर; और

(घ) भिन्न-भिन्न उद्योगों के सामर्थ्य सम्बन्धी प्रस्ताव जिनका सरकार ने पहली योजना के अन्त में अनुमोदन किया था।

इनमें से कुछ लक्ष्यों को बिल्कुल सही या अंतिम नहीं मान लेना चाहिए। वे अगले पांच वर्षों में होने वाली मांगों के वर्तमान अनुमानों के आधार पर विकास के उस स्तर की ओर संकेत करते हैं जो वांछनीय हैं। वे स्थिर या अचल नहीं हैं। इससे भी कम संभावना यह है कि उनको भिन्न उद्योगों के विकास का एक स्थिर बिन्दु मान लिया जाए। अगर मांग में वृद्धि हो जाए तो औद्योगिक विकास भी काफी सुभीते के साथ और ऊंचे स्तर तक हो सकता है। लेकिन शर्त यह है कि बिजली और रेल परिवहन जैसी सुविधाएं मिलती जाएं। इसलिए इन पांच वर्षों में लक्ष्यों की हमेशा जांच करते रहना होगा।

नीचे के पैरों में विकास कार्यक्रम की मुख्य-मुख्य बातों की रूपरेखा दी जा रही है।

निजी क्षेत्र में विकास के रूप

४७. सार्वजनिक क्षेत्र की तरह निजी क्षेत्र के औद्योगिक योजना कार्यों में लोहा और इस्पात भी एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस क्षेत्र में ११५ करोड़ रु० लगाने के लिए रखे गए हैं। पहली योजना में निजी क्षेत्र के अधीन लोहा और इस्पात के विस्तार में तथा दूसरी योजना में किए गए विस्तारों में जो पूंजी लगी है या लगाई जाएगी उसके फल १९५८ के मध्य से उस समय से मिलने प्रारम्भ हो जाएंगे जब कि टाटा आयरन एंड स्टील कम्पनी (टिस्को) और इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी (इस्को) की संयुक्त सामर्थ्य वर्तमान १२·५ लाख टन से बढ़कर २३ लाख टन हो जाएगी। आशा है कि माध्यमिक उत्पादकों में दो नई कम्पनियां मैसर्स कलिंग ट्यूब्स लिमिटेड और इंडियन ट्यूब कम्पनी ई० आर० डब्ल्यू ट्यूबों और बिना जोड़ की ट्यूबों के साथ ही साथ ट्यूबों और पाइपों के उत्पादन को बढ़ाएंगी।

४८. जहां तक इन इस्पात विस्तार कार्यक्रमों के लिए धन का सवाल है, १९५५ में देशी उत्पादकों के लिए मूल्य एक समान रखने के उद्देश्य से जो निर्णय किया गया है उसमें आशा है कि विकास कार्यों के लिए प्राप्य धन में वृद्धि हो जाएगी। इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी लगभग १३·५ करोड़ रुपए तक का कर्ज अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से लेगी। अब तक उसमें से अनुमानतः १ करोड़ रुपया काम में लाया जा चुका है। टिस्को के विस्तार कार्यक्रम के लिए

आशा है कि विदेशी बैंकिंग संगठनों से कर्ज मिल जाएगा। ये दोनों इस्पात कम्पनियां अपने लिए आवश्यक धन का एक भाग घरेलू सामान की बिक्री से प्राप्त करेंगी। इनके अलावा इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी को भारत सरकार द्वारा स्वीकृत ७.९ करोड़ रुपए के कर्ज का बचा हुआ भाग भी मिल जाएगा। इस स्थिति में भारत सरकार ने कम्पनी के संचालकों के बोर्ड में अपना प्रतिनिधित्व रखने का प्रबन्ध किया है।

४९. दूसरी योजना की अवधि में जिन धातुकर्मी उद्योगों का पर्याप्त मात्रा में विस्तार होना है, उनमें से अल्यूमीनियम और लौह मैंगनीज विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आशा है कि अल्यूमीनियम की मांग और चीजों के साथ विद्युत संचारण के लिए ए० सी० एस० आर० केबलों के अत्यधिक प्रयोग के कारण बढ़ जाएगी। इसलिए ३०,००० टन सामर्थ्य का लक्ष्य रखा गया है। जहां तक लौह मैंगनीज का सवाल है, अनुमान है कि घरेलू उपभोग और निर्यात के क्षेत्र में इसकी काफी मांग बढ़ जाएगी। इसलिए इसके उत्पादन के लिए १,६०,००० टन का लक्ष्य रखा गया है।

५०. *सीमेंट और ऊष्मसह ईंटें*:—अगले पांच वर्षों में भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में काम की अधिकता से सीमेंट की मांग काफी बढ़ेगी। इसलिए आशा है कि इसका भी काफी विकास होगा। प्रस्ताव यह है कि सामर्थ्य का विस्तार १ करोड़ ६० लाख टन* और उत्पादन १ करोड़ ३० लाख टन* तक कर दिया जाए।

उष्मसह ईंटों के उद्योग का विकास कार्यक्रम, लोहा और इस्पात उद्योग के विकास से मुख्य रूप से सम्बन्धित है और इसके लिए १९६०-६१ तक जो ८ लाख टन का उत्पादन लक्ष्य रखा गया है, उसके भीतर ही आवश्यक समानुपात से सिलिका, आग माटी, (फायर क्ले) मैगनेसाइट और क्रोमाइट उष्मसह ईंटों का निर्माण भी होगा। इस उद्योग के लिए सामर्थ्य लक्ष्य १० लाख टन रखा गया है।

५१. लोहा और इस्पात उद्योग के विस्तार से यह स्वाभाविक ही है कि भारी और हलके इंजीनियरी उद्योगों का भी पर्याप्त मात्रा में विस्तार हो। भारत में इंजीनियरी उद्योगों के उत्पादों की जरूरतें अब भी बाहर से आयात द्वारा पूरी की जा रही हैं। ये उत्पाद दूसरी योजना में काफी मात्रा में आवश्यक होंगे, अतः विकास कार्यक्रम में इन उद्योगों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। जिन मदों के लिए ऊंचे पैमाने पर उत्पादन रखा गया है उनमें इस्पात का निर्माण, आटोमोबाइल, रेल डिब्बे आदि सामान, ढली चीजें, गढ़ी चीजें, औद्योगिक मशीनें आदि, साइकिलें, सिलाई मशीनें, मोटर और ट्रान्सफार्मर आदि मुख्य हैं। योजना ऐसी है कि इनमें कुछ उद्योग एक दशक के भीतर और अन्य कुछ कम समय में आत्म-निर्भर हो जाएंगे। पहले इस बात का संकेत किया ही जा चुका है कि इन क्षेत्रों में अगले वर्षों में बड़े पैमाने पर विस्तार करने के लिए जिस मूलभूत अनुभव की जरूरत होगी वह प्रथम योजना में प्राप्त हो ही चुका है।

५२. रेल डिब्बे आदि के कार्यक्रम के अन्तर्गत टाटा लोकोमोटिव एंड इंजीनियरिंग कम्पनी में रेल इंजनों के निर्माण में विस्तार करने की व्यवस्था की गई है। आशा है कि रेल इंजनों के वर्तमान उत्पादन को दुगना करके १०० कर देने के लिए १ करोड़ रुपए की राशि दी जाएगी। कम्पनी को भारी इस्पात की भारी चीजें ढालने की एक फाउन्ड्री स्थापित करने में

*इसमें सार्वजनिक क्षेत्र के ५ लाख टन भी शामिल हैं।

इस कार्यक्रम को तथा प्रतिवर्ष ६,००० डीज़ल गाड़ियां बनाने के प्रस्ताव को भी काफी सहायता मिलेगी। आटोमोबाइल उद्योग के विकास कार्यक्रम में ट्रकों के उत्पादन पर भी विशेष रूप से जोर दिया गया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य यह है कि इन गाड़ियों में लगी हुई भारतीय वस्तुओं की मात्रा बढ़ाकर ८० प्रतिशत कर दी जाए। इस कार्यक्रम में ये चीजें शामिल हैं :—

	१९६०-६१ के लक्ष्य
कारें	१२,०००
ट्रक	४०,०००
जीप और स्टेशन वैगन	५,०००
	५७,०००

५३. औद्योगिक मशीनें आदि :— निजी क्षेत्र की योजना में औद्योगिक मशीनों आदि के उत्पादन के विस्तार की भी व्यवस्था की गई है। दूसरी योजना की अवधि में जितना धन लगाए जाने की और कुछ विशेष दिशाओं में उत्पादन बढ़ने वाले जिस स्तर की आशा की गई है, वह नीचे दिया जा रहा है :—

	विनियोग (१९५६–६१) करोड़ रु०	उत्पादन का मूल्य (करोड़ रु०)	
		१९५५-५६	१९६०-६१
सूती कपड़ा उद्योग की मशीनें	४·५	४·०	१७·०
जूट उद्योग की मशीनें	१·३	०·०६ (१९५४)	२·५
चीनी उद्योग की मशीनें	२·०	०·२८ (१९५४)	२·५
कागज उद्योग की मशीनें	१·३	नगण्य	४·०
सीमेंट उद्योग की मशीनें	१·०	०·५६ (१९५४)	२·०
बिजली के मोटर २०० हार्स पावर और उससे कम ('००० हा० पा०)	......	२४०	६००
बिजली ट्रांसफार्मर ('००० के० वी० ए०—३३ के० वी० से कम)	......	५४०	१,३६०*

जिन दूसरी दिशाओं में प्रगति होनी है वे हैं : चाय की मशीनों, डेरी का सामान, कृषि की मशीनों जैसे ट्रैक्टरों इत्यादि के ट्रेलर और डीजल चालित सड़क कूटने के इंजनों सहित सड़क बनाने की मशीनों आदि का निर्माण। इस बात का भी प्रबन्ध किया गया है कि पहले से जो कारखाने बने हुए हैं उनमें अधिक रफ्तार वाले इंजनों, जैसे भारी डीजल इंजनों और विद्युत

*इसमें सार्वजनिक क्षेत्र के संयंत्रों का उत्पादन भी सम्मिलित है।

चालित उपरिवाही और जहाजघाट के क्रेनों का निर्माण किया जाए। इन उद्योगों में से अधिकांश के लिए विदेशी सहायता की आवश्यकता है, और उसके लिए उचित प्रबन्ध किया जा रहा है।

५४. रासायनिक उद्योग के विकास की दिशा में निजी क्षेत्र के कार्यक्रम में सोडा ऐश, कास्टिक सोडा, फास्फेटीय खादें, औद्योगिक विस्फोटक, रंगाई पदार्थ और अन्तर्वर्ती उत्पाद महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इसमें जहां भी आवश्यक है परिमाण की दृष्टि से विस्तार और श्रेणी के अनुसार उत्पादन में विभिन्नता लाना, ये दोनों बातें शामिल हैं। रंगाई पदार्थ अन्तर्वर्तियों का उत्पादन प्रयोग के तौर पर रख लिया गया है। उसमें क्लोरो-बेंजीन समूह, नाइट्रो-बेंजीन समूह, टोलीन समूह, नैफ्यालीन समूह और ऐन्थ्राक्विनोन समूह आते हैं। सोडा ऐश और कास्टिक सोडा के उत्पादन में तिगुनी या चौगुनी वृद्धि की योजना बनाई गई है। सल्फ्यूरिक अम्ल के उत्पादन का विस्तार भी मुख्य रूप से लोहा और इस्पात, खानों, रेयन और स्टैपल तन्तु उद्योगों से सम्बन्धित है। रबड़ के सामान के उद्योग के लिए अत्यन्त आवश्यक कच्चे माल कार्बन ब्लैक के निर्माण का भी विकास राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम की ओर से ही होगा। इस बुनियादी रसायन के घरेलू कामों के लिए उपलब्ध हो जाने से औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था के एक महत्वपूर्ण पक्ष को बड़ा बल मिल जाएगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस चीज के उत्पादन की सामर्थ्य ६,००० टन रखी गई है।

५५. खनिज तेल:—विशाखापत्तनम में काल्टेक्स रिफाइनरी १९५७ तक बनकर तैयार हो जाएगी। उस पर सारा खर्च अनुमान से १२·५ करोड़ आएगा, जिसमें से २·५ करोड़ पहली पंचवर्षीय योजना में ही लग चुका है। पेट्रोलियम साफ करने के इन तीन कारखानों के लिए जो विधियां और प्रकृत पदार्थ चुने गए हैं, उनमें देश की औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था के लिए पर्याप्त महत्व रखने वाले लुब्रीकेटिंग तेलों और पेट्रोलियम कोक के उत्पादन की व्यवस्था नहीं है। इस उद्योग के सम्बन्ध में और अधिक विकास की योजना बनाते समय खनिज तेल उद्योग के ढांचे में जो कमी रह गई है, उसे पूरा करना होगा।

५६. बिजली और औद्योगिक अल्कोहल:—चीनी उद्योग के विकास से, जिसका कि आगे उल्लेख होगा, सीरे के उत्पादन की मात्रा भी बढ़ेगी। इसको अच्छे ढंग से खपाने के लिए बिजली पैदा करने और औद्योगिक अल्कोहल की सामर्थ्य (१९५५-५६ के २ करोड़ ७० लाख गैलन से बढ़कर ३ करोड़ ६० लाख गैलन) भी काफी मात्रा में बढ़ाने का प्रस्ताव है। अल्कोहल का बड़े पैमाने पर औद्योगिक उपभोग बढ़ाने के लिए योजनाएं बनाई जा रही हैं। यह अल्कोहल डी० डी० टी० के उत्पादन के विस्तार, पोलीविनिल क्लोराइड और बूटाडीन के निर्माण को स्थायित्व देने जैसी दिशाओं में ही बड़े पैमाने पर खप सकेगा। इस सम्बन्ध में रा० औ० वि० निगम संश्लेषणात्मक (सिंथेटिक) रबड़ के निर्माण की एक योजना पर विचार कर रहा है।

५७. प्लास्टिक और सिंथेटिक सामान बनाने का चूर्ण:—प्रथम योजना में तैयार प्लास्टिक का सामान बनाने वालों की बढ़ती हुई जरूरतों को पूरा करने के लिए फेनोल फार्मेल्डिहाइड सिंथेटिक सामान बनाने का चूर्ण बनाने की दिशा में कुछ प्रगति हुई थी। अन्य सिंथेटिक सामान चूर्णों (जैसे पोलीविनिल क्लोराइड, सेल्यूलोज एसीटेट और पोलीस्टिरीन और पोलीइथीलीन) की भी मांग थी, लेकिन अभी उनका उत्पादन होना शुरू नहीं हुआ। दूसरी योजना में इस क्षेत्र में काफी प्रगति की जाएगी। आशा है कि आयात होने वाले मोनोमर के आधार पर पोलीस्तिरीन का उत्पादन १९५६-५७ में शुरू कर दिया जाएगा। थोड़े दिन पहले ही सेल्यूलोज एसीटेट, पोलिइथीलीन, पोलीविनील क्लोराइड और यूरिया फार्मेल्डिहाइड तैयार करने के बारे में कई योजनाएं

स्वीकृत की गई हैं और इस विश्वास पर कि इनको कार्यान्वित किया जाएगा, सिंथेटिक सामान बनाने के चूर्णों के उत्पादन की सामर्थ्य १९५५-५६ के १,१८० टन से बढ़कर ११,४०० टन वार्षिक हो जाएगी। पोलीविनील क्लोराइड का निर्माण कैल्शियम कार्बाइड से निकले हुए एसीटिलीन पर निर्भर करता है, और इस बुनियादी रसायन के लिए जो कुल लक्ष्य रखा गया है उससे प्लास्टिक उद्योग की आवश्यकताएं पूरी हो जाएंगी।

५८. उपभोग वस्तुएं:—उपभोग वस्तुओं में कागज और गत्ते का उत्पादन लगभग १०० प्रतिशत बढ़ जाएगा। चीनी का उत्पादन १९५५-५६ के १६·७ लाख टन से बढ़कर १९६०-६१ में २२·५ लाख टन हो जाने की आशा है। उत्पादन की इस वृद्धि में सहकारी चीनी मिलों का भाग अनुमान से ३,५०,००० टन वार्षिक होगा। इस उत्पादन लक्ष्य की पूर्ति के लिए २५ लाख टन की सामर्थ्य रखी जाने की योजना है। वनस्पति तेलों का उत्पादन १८ लाख टन से बढ़कर २१ लाख टन हो जाएगा। विकास कार्यक्रम में विनौले के तेल और घोलक निस्सरण विधायन द्वारा खली से तेल निकाले जाने पर जोर दिया गया है। १९६०-६१ में कपड़े और सूत के उत्पादन लक्ष्य क्रम से ८५० करोड़ गज और १६५ करोड़ पौंड रखे गए हैं। इस उत्पादन का कितना हिस्सा मिलों और विकेन्द्रित क्षेत्र (कपड़े के लिए हथकरघे और विद्युत करघे और सूत के लिए अम्बर चरखा) के लिए रखा जाए, इसका अभी निश्चय नहीं किया गया। वास्तव में जितने भी तकुवे पहले से लगे हुए हैं और जितनों को लाइसेंस दिए गए हैं वे १६५ करोड़ पौंड सूत तैयार करने के लिए काफी होंगे।

५९. औषधियां:—उपभोग वस्तुओं के क्षेत्र में औषध उद्योग की विशेष रूप से चर्चा की जानी चाहिए। जहां तक सिंथेटिक औषधियां, जैसे सैकरीन, क्लोरामीन-टी, एसिटिल सैलीसिलिक अम्ल और शुल्वनी, (सल्फा) औषधियों का सम्बन्ध है, उत्पादन बढ़ाने की दिशा में प्रयत्न किया ही जाएगा। साथ ही उपान्तिम (पेनअल्टिमेट) उत्पादों पर आधारित वर्तमान क्रियाओं के स्थान पर बुनियादी प्राथमिक आरगैनिक रसायन रसायनों और माध्यम उत्पादों के आधार पर विकास कार्य भी किया जाएगा। रंगाई पदार्थ माध्यमों के निर्माण को विकसित करने के लिए जो प्रयत्न किए गए हैं, उनसे भी इस उद्योग को काफी लाभ पहुंचने की आशा है, क्योंकि इससे उसे कई तरह का कच्चा माल मिल जाएगा। विटामिनों की दिशा में देशी कच्चे माल जैसे निम्बुघास तेल से विटामिन ए के उत्पादन की सम्भावना पर अभी परीक्षा की जा रही है। जहां तक कीटाणुनाशकों का सवाल है, सार्वजनिक क्षेत्र में आयोजित विकास के अलावा निजी क्षेत्र में पेनीसिलीन का उत्पादन सुदृढ़ करने की दिशा में जो प्रयत्न किए गए हैं उसके भी अच्छे परिणाम होंगे। इसके अलावा आशा है कि इस क्षेत्र की वर्तमान इकाइयों से आज मुख्य रूप से जिन क्रियाओं को वास्तविक निर्माण का रूप दिया जा रहा है, उस दिशा में वे काफी प्रगति करेंगी। औषध उद्योग के अन्तर्गत अनेक उत्पाद आते हैं। लेकिन विकास के लक्ष्यों में कुछ अधिक आवश्यक उत्पादन भी शामिल हैं। आशा है कि औषध उद्योग में निजी क्षेत्र से लगभग ३ करोड़ रुपया लगाया जाएगा।

दूसरी योजना में औद्योगिक प्रगति का मूल्यांकन

६०. सामर्थ्य और उत्पादन के विकास के स्तर:—सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के जिन कतिपय प्रमुख लक्ष्यों का विवरण नीचे दिया जा रहा है, उनसे यह पता चलता है कि दूसरी योजना के लिए अत्यधिक श्रम की आवश्यकता होगी और उद्योग की दिशा में बहुमुखी प्रयत्न करना होगा।

कुछ प्रमुख उद्योगों के राष्ट्रीय लक्ष्य

उद्योग	इकाई	१९५५-५६ क्षमता (अनुमानित)	१९५५-५६ उत्पादन (अनुमानित)	१९६०-६१ (लक्ष्य) क्षमता	१९६०-६१ (लक्ष्य) उत्पादन
१. लोहा और इस्पात—					
(क) तैयार इस्पात (मुख्य उत्पादक)	'००० टन	१,३००	१,३००	४,६८०	४,३००
(ख) ढलाई कारखानों के लिए कच्चा लोहा	'००० टन	३८०	३८०	९८०	७५०
२. तामीरी ढांचा सामान	टन	२,२६,०००	१,८०,०००	५,००,०००	५,००,०००
३. भारी ढलाई व फोर्जिग दूकानें—					
(क) इस्पात ढलाई-खाने	टन	...	...	१५,०००	१५,०००
(ख) फोर्जिग दूकानें	टन	...	..	१२,०००	१२,०००
(ग) लौह सांचों के ढलाईखाने	टन	...	...	१०,०००	१०,०००
४. फेरो मैंगनीज	टन	२८,०००	अप्राप्य	१,७१,८००	१,६०,०००
५. अल्यूमीनियम	टन	७,५००	७,५००	३०,०००	२५,०००
६. इंजन	संख्या	१७०	१७५	४००	४००
७. बाइल	संख्या	३८,०००	२५,०००	३८,०००	५७,०००
८. भारी रसायन—					
(क) सल्फ्यूरिक	'००० टन	२४२	१७०	५००	४७०
(ख) सोडा ऐश	टन	९०,०००	८०,०००	२,५३,०००	२,३०,०००*
(ग) कास्टिक सोडा	टन	४४,३००	३६,०००	१,५०,४००	१,३५,४००*
९. खाद —					
(क) नाइट्रोजन (निश्चित नाइट्रोजन)	टन	८५,०००	७७,०००	३,८२,०००	२,९०,०००
(ख) फास्फेटिक	टन	३५,०००	२०,०००	१,२०,०००	१,२०,०००
१०. जहाज निर्माण	जी-आर-टी	...	५०,००० (५१-५६)	...	९०,००० (५६-६१)
११. सीमेंट	'००० टन	४,९३०	४,२८०	१६,०००	१३,०००
१२. उष्मसह ईंटें	टन	४,४४,०००	२,८०,०००	१०,००,०००	८,००,०००
१३. पेट्रोलियम की सफाई	लाख टन	३६·२५	३६	४३·१	४३

*इनसे सकल उत्पादन का बोध होता है। चूंकि कुछ उत्पादन का उपयोग कारखानों में ही अन्य उत्पादन के लिए होगा, इसलिए बिक्री के लिए १,८५,००० टन सोडा ऐश और १,०६,६०० टन कास्टिक सोडा उपलब्ध होगा।

उद्योग	इकाई	१९५५-५६ क्षमता (अनुमानित)	१९५५-५६ उत्पादन (अनुमानित)	१९६०-६१ (लक्ष्य) क्षमता	१९६०-६१ (लक्ष्य) उत्पादन
१४. कागज और गत्ता	'००० टन	२१०	२००	४५०	३५०
१५. अखबारी कागज	टन	३०,०००	४,२००	६०,०००	६०,०००
१६. रेयन—					
(क) रेयन फिलामेंट	लाख पौंड	२२०	१५०	६८०	६८०
(ख) स्टैपल तन्तु	लाख पौंड	१६०	१३२	३२०	३२०
(ग) रासायनिक गूदा	'००० टन	...	...	३०·०	३०·०
१७. डीजल इंजन (५० हा० पा० से कम)	हा०पा०	२,००,०००	१,००,०००	२,२०,०००	२,०५,०००
१८. बाइसिकिलें	००० संख्या	७६०	५५०	८९५	१,०००*
१९. बिजली के मोटर (२०० हा० पा० से कम)	हा०पा०	२,९२,०००	२,४०,०००	६,००,०००	६,००,०००
२०. ए-सी-एस-आर कंडक्टर्स	टन	१५,३७०	९,०००	२०,४००	१८,०००

६१. संयंत्र सामर्थ्य और उत्पादन की लागत :—चूंकि १९५० से संयंत्रों और मशीनों आदि के दाम बहुत ऊंचे रहे हैं, इसलिए भिन्न-भिन्न उद्योगों के उत्पादन की लागत उचित रूप से घटाने का एक मात्र यही ढंग हो सकता है कि उत्पादन खर्च को और विस्तृत उत्पादन पर फैला दिया जाए। दूसरे शब्दों में, संयंत्र सामर्थ्य का आयोजन अब की अपेक्षा अधिक बड़े पैमाने पर करना पड़ेगा। भिन्न-भिन्न उद्योगों के लिए जिन यूनिटों के स्थापित किए जाने के प्रस्ताव हैं, उनके ब्योरेवार अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वे इतने अधिक होंगे कि पूंजीकरण की जो अधिक लागत हो वह बंट जाए। इस्पात संयंत्रों की फुंकवा भट्ठियों और कोक भट्ठियों के आकार १,००० टन और उससे ऊपर की दैनिक सामर्थ्य वाले हैं। नए सल्फ्यूरिक अम्ल संयंत्रों की दैनिक सामर्थ्य २५ टन और उससे ऊपर की होगी। एक नए संयंत्र की दैनिक सामर्थ्य १५० टन होगी, जबकि अब तक जितने भी संयंत्र लगाए गए हैं उनमें से अधिकांश की दैनिक सामर्थ्य १० टन ही रही है और किसी भी संयंत्र की दैनिक सामर्थ्य ७५ टन से अधिक नहीं रही है। इसी प्रकार भारी रसायन (क्षार) विकास परिषद ने सिफारिश की है कि इलेक्ट्रोलिटिक कास्टिक सोडे के छोटे से छोटे आकार के ऐसे संयंत्र लगाए जाएं जिनकी दैनिक सामर्थ्य २० टन हो। आशा है कि कागज मिलों के लिए दूसरी योजना के अन्त तक उनकी सामर्थ्य कम से कम २५ से ५० टन प्रतिदिन की हो जाएगी। सीमेंट संयंत्रों की कम से कम सामर्थ्य सामान्य रूप से २ लाख टन वार्षिक होगी। इस उद्योग में वितरण के खर्च में किफायत इस तरह की जाएगी कि जहां भी संभव हो माल को बड़ी मात्रा में लाने-ले जाने की नीति ग्रहण की जाए। इस काम को और अधिक आसान बनाने के लिए रेल योजना में उन टैंक डिब्बों की संख्या विशेषकर उस प्रकार के

*आशा है कि विकेन्द्रित क्षेत्र में २,५०,००० बाइसिकिलों का उत्पादन होगा और इस प्रकार कुल मिलाकर १२,५०,००० बाइसिकिलों का उत्पादन होगा।

डिब्बों की जो क्लोरीन और अमोनिया के परिवहन के लिए आवश्यक हैं, बढ़ाने की व्यवस्था की गई है।

६२. टेकनोलोजिकल प्रगति:—नए लगाए जाने वाले प्रस्तावित संयंत्रों में नवीनतर टेक्नीकों के प्रयोग किए जाने की दिशा में काफी प्रगति होगी। इस्पात विस्तार कार्यक्रमों के अधीन जिन नई टेक्नीकों और डिजाइनों के प्रस्ताव हैं, उनकी चर्चा पहले की जा चुकी है। दुर्गापुर कोक भट्ठी संयंत्र में कोक भट्ठी गैसों से गंधक का निकाला जाना, सिन्द्री कारखाने में प्रयुक्त सल्फ्यूरिक अम्ल के स्थान पर बचे हुए मार्जक (पिकलिंग) द्रव का प्रयोग करके कोक भट्ठी गैसों से अमोनियम सल्फेट, और अन्य उप-उत्पादों का निकाला जाना, ये दोनों उप-उत्पाद निष्कासन क्रियाओं के क्षेत्र में आधुनिक टेक्नीकों का विकास ही सिद्ध होंगे। पिम्परी में कीटाणुनाशक औषधियों के उत्पादन में फर्मेंटेशन टेक्नीकों का उपयोग भी काफी अधिक किया जाएगा।

६३. दाशमिक प्रणाली और विधायनों तथा उत्पादों का मानकीकरण :—सरकार ने जो क्रमिक रूप से दाशमिक प्रणाली अपनाने का निश्चय किया है, उनके अनुसार वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय में एक स्थायी समिति बनाकर कारंवाई शुरू कर दी गई है। अगर सम्भव हुआ तो इन नए संयंत्रों में ही दाशमिक प्रणाली का प्रयोग किया जाएगा।

विधायनों और उत्पादों के मानकीकरण के क्षेत्र में यह समझा जाता है कि भारतीय मानक संस्था ने १९५४ में प्रथम योजना के अन्तर्गत इस्पात मितव्यय का जो कार्यक्रम शुरू किया था वह समाप्त हो जाएगा, जिसके फलस्वरूप इस्पात का उपभोग पर्याप्त मात्रा में वैज्ञानिक ढंग से होने लगेगा। दूसरी योजना में घरेलू कामों के लिए इस्पात की बहुत-सी चीजों का उत्पादन बड़े पैमाने पर होने लगेगा, इसलिए इस क्षेत्र में मानकीकरण से देश और विदेश दोनों के बाजारों में संभरणकर्ताओं और खरीदारों के बीच अधिक सूझबूझ और विश्वास उत्पन्न होगा। दूसरी योजना में भारतीय मानक संस्था के लिए ६०·६ लाख रुपए की व्यवस्था की गई है। उत्पादनों के परीक्षण के लिए काफी सुविधाएं होने पर ही मानकों को अमल में लाने में सफलता मिलेगी। पूंजीगत माल और उपभोग वस्तुओं का जहां तक सवाल है, इन सुविधाओं की बदौलत उनके काम सम्बन्धी मूल्यांकन विवरण भी तैयार होंगे। दूसरी योजना में सरकारी परीक्षणशाला (टेस्ट हाउस) के विकास से इस दिशा में और अधिक सुविधाएं हो जाएंगी। एक शोध केन्द्र खोलने के प्रस्ताव पर भी विचार किया जा रहा है। यह केन्द्र भारी विद्युत संयंत्र और सामान के परीक्षण और विकास के सम्बन्ध में सुविधाएं प्रदान करेगा।

कच्चे माल का विकास

६४. दूसरी योजना की अवधि में संगठित उद्योगों के क्षेत्र में प्राथमिक खनिज और कृषि सम्बन्धी कच्चे माल की खपत काफी बढ़ जाएगी। देश में उपलब्ध खनिजों की स्थिति का विवरण खनिजों के विकास सम्बन्धी अध्याय में दिया गया है।

आयात किए गए कुछ खनिजों, जैसे पेट्रोलियम, गंधक और राक फास्फेट की खपत इस प्रकार होगी :—

	१९५५-५६	१९६०-६१
राक फास्फेट (हजार टनों में)	५५	४००
गंधक (हजार टनों में)	७५	२१०
प्रकृत पेट्रोलियम (लाख टनों में)	३२·२*	३९*

*केवल आयात।

६५. औद्योगिक कार्यक्रम भी कृषि सम्बन्धी कच्चे माल, जैसे कच्चा जूट, रुई, ईख, तिलहन, लकड़ी, बांस और सवाई घास पर काफी मात्रा में निर्भर करेंगे। रासायनिक गूदे और अखबारी कागज के उत्पादन के लिए रखे गए लक्ष्यों के अनुसार लकड़ी की मांग बढ़ेगी, परन्तु दियासलाई और प्लाईवुड के अधिक उत्पादन के लिए लकड़ी की जितनी मांग बढ़ेगी वह अपेक्षाकृत कम होगी। तेलों के उत्पादन लक्ष्यों के अनुसार लगभग ३,००,००० टन बिनौला और ८,००,००० टन खली की जरूरत पड़ेगी, जबकि इनकी वर्तमान खपत का अनुमान क्रमश: १,००,००० और ६०,००० टन है। कागज उद्योग और अखबारी कागज के उत्पादन के विस्तार के कारण बांस और सवाई घास की भी जरूरत पड़ेगी। इस समय यह ठीक-ठीक कहना कि बांस की जरूरत कितनी होगी मुश्किल है क्योंकि सवाई घास, फोक और कुछ अर्ध कठोर काष्ठ जैसे पदार्थ मिल ही सकते हैं। कृषि और खाद्य मंत्रालय द्वारा नियुक्त एक समिति इस बात की खोज-बीन कर रही है कि दूसरी योजना की अवधि में कोशाश्विक (सेल्यूलौसिक) कच्चे पदार्थ कितनी मात्रा में उपलब्ध हो सकेंगे। कपास और ईख की मांगों का अनुमान इस प्रकार है :—

	१९५५-५६	१९६०-६१
कपास (लाख गांठ)	५०	५६
गन्ना (लाख टन)	१६७	२२५

६६. निर्यात लक्ष्य :—कुछ क्षेत्रों में उत्पादन लक्ष्य विदेशी विनिमय मुद्रा कमाने और निर्यात बढ़ाने की दृष्टि से नियत किए गए हैं। इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए निर्मित माल का मानकीकरण, आयात शुल्कों में कटौती द्वारा निर्यातवर्धक नीति का अपनाना और मुख्य उद्योगों के लिए निर्यातवर्धक परिषदों की स्थापना जैसे काम किए जा चुके हैं। वस्तु-स्थिति को देखते हुए निर्यात के सम्बन्ध में पक्की और लम्बे अर्से के लिए कोई नीति निश्चित कर सकना कठिन है और परिस्थितियों के अनुरूप ही नीतियां और तरीके अपनाने होंगे। १९६०-६१ के लिए मुख्य निर्यात लक्ष्य ये हैं—

सूती कपड़ा	१०,००० से ११,००० लाख गज
जूट उत्पादन	९,००,००० टन
नकली रेशम का कपड़ा	१ करोड़ गज
बिक्री योग्य इस्पात	२,००,००० से ३,००,००० टन
फेरो मैंगनीज़	१,००,००० टन
बाइसिकिलें (संख्या)	१,५०,०००
बाइसिकिलों के अतिरिक्त इंजीनियरी सामान	मूल्य—३ से ५·० करोड़ रुपए
टाइटेनियम डाई-आक्साइड	१,००० से १,२०० टन
कोक	३०,००० टन
नमक	३,००,००० टन
वनस्पति तेल	२,१४,००० टन
स्टार्च	१०,००० टन
वनस्पति	२०,००० से २५,००० टन

६७. विभिन्न क्षेत्रों में विस्तार :—बुनियादी उद्योगों में प्रगति औद्योगिक विकास का मुख्य संकेत है। पहली योजना में सिन्दरी खाद कारखाना, चित्तरंजन रेल इंजन कारखाना, टाटा लोको इंजन और इंजीनियरी कारखाना, पेट्रोलियम शोधशालाएं और वस्त्र उद्योग संबंधी मशीनों के

कारखानों की स्थापना के माध्यम से इस दिशा में कुछ प्रगति की जा चुकी है। दूसरी योजना में उद्योगों पर और अधिक जोर दिया गया है, इसलिए आशा है कि अगले पांच वर्षों में उन्नति और तेजी के साथ होगी। लोहा और इस्पात, मशीन निर्माण और अन्य बुनियादी उद्योगों के विकसित हो जाने से अर्थ-व्यवस्था और पक्की हो जाएगी। मोटे तौर पर इन पांच वर्षों में पूंजी और उत्पादक माल के क्षेत्रों में उन्नति होगी, जो कि इन क्षेत्रों में अब तक जितना धन लगाया गया है उसकी अपेक्षा काफी अधिक होगी। नीचे जो विवरण दिया जा रहा है, उससे इस बात का संकेत मिलेगा कि इन पांच वर्षों में औद्योगिक उन्नति का स्वरूप क्या होगा :—

१९५६–६१ के बीच बड़े पैमाने के उद्योगों में लगे हुए प्रत्याशित धन का विभाजन

	करोड़ रु०		
	सार्वजनिक क्षेत्र, रा० औ० वि० निगम के नए विनियोगों सहित	निजी क्षेत्र	योग
उत्पादक माल	४६३	२६६	७५९
औद्योगिक मशीनें और पूंजी माल	८४	७२	१५६
उपभोग वस्तुएं	१२	१६७	१७९
	५५९	५३५*	१,०९४

अनुमान है कि दूसरी योजना के अन्त तक औद्योगिक उत्पादन का देशनांक (१९५१–१००) १९५५-५६ के १३० बढ़कर १९४ हो जाएगा। क्षेत्रानुसार उत्पादन के विस्तार पर विचार करने पर १९६०-६१ तक यह आशा की जाती है कि उत्पादक माल का उत्पादन देशनांक जो १९५५-५६ में १३२ था, ७३ प्रतिशत बढ़ जाएगा। इसकी तुलना में फैक्टरियों में तैयार होने वाली उपभोग वस्तुओं के क्षेत्र में जो १९५५-५६ में १२८ था १८ प्रतिशत की वृद्धि होगी।

९८. उद्योगों का इलाकेवार विकास :—देश के भिन्न-भिन्न इलाकों के औद्योगिक विकास के बीच एक के बाद एक योजनाओं द्वारा पर्याप्त मात्रा में संतुलन लाना आवश्यक होगा। दूसरी योजना में इस दिशा में शुरुआत हो जाएगी। इसमें जो प्रमुख योजना कार्य शामिल हैं, वे उड़ीसा और मध्य प्रदेश के अपेक्षाकृत कम समुन्नत क्षेत्रों में खोले जाएंगे। उद्योग विस्तार को अधिक से अधिक क्षेत्रों में पहुंचाने के लिए दीर्घकालीन महत्व वाले प्रयत्न शामिल किए गए हैं, यथा छोटे घुरे वाली फुकवां भट्ठियों में कच्चे लोहे के उत्पादन की मार्गदर्शक योजना, जो यदि सफल हो गई तो उससे देश के विभिन्न भागों में पाए जाने वाले निम्न श्रेणी के कोयले के आधार पर लोहा और इस्पात उद्योग का विकास किया जा सकता है। नए क्षेत्रों में किए गए खनिज निक्षेप के सर्वेक्षणों से भी ऐसे ही परिणाम होंगे। दूसरी योजना में यह भी स्पष्ट है कि राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं और निजी संस्थाओं में नए सामान और विधायनों में तथा स्थानापन्न वस्तुओं के विकास के लिए खोज कार्य पर और अधिक परिश्रम किया जाए, हालांकि इन दिनों भिन्न-भिन्न इलाकों में पाई जाने वाली असंतुलित वृद्धि की समस्या का कोई हल दूसरी योजना में नहीं है। फिर भी यह समस्या विचाराधीन है और खोज कार्य, खनिज सर्वेक्षण और उत्पादन के विकेन्द्रीकरण पर विशेष-कर कृषि विधायनों के सम्बन्ध में जोर देकर विकास की सही प्रवृत्तियां उत्पन्न की जा रही हैं।

*कुछ योजनाओं के संबंध में जिनमें कि राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के साधन लगे हैं, अभी यह निर्णय होना है कि वे सार्वजनिक क्षेत्र में होंगे या निजी क्षेत्र में।

परिशिष्ट १

द्वितीय पंचवर्षीय योजना

(क) सार्वजनिक क्षेत्र के औद्योगिक योजना कार्य (केन्द्रीय सरकार के रा० औ० वि० निगम की योजनाओं के अतिरिक्त)

क्रम संख्या	योजना का नाम	उत्तरदायी मंत्रालय	मार्च १९५६ के अन्त में: विनियोग (करोड़ रु० में)	मार्च १९५६ के अन्त में: सामर्थ्य (१९५५-५६)	मार्च १९५६ के अन्त में: अनुमानित उत्पादन (१९५५-५६)	द्वितीय पंचवर्षीय योजना (१९६०-६१): विनियोग (करोड़ रु० में)	द्वितीय पंचवर्षीय योजना (१९६०-६१): सामर्थ्य (१९६०-६१)	द्वितीय पंचवर्षीय योजना (१९६०-६१): अनुमानित उत्पादन (१९६०-६१)
१	२	३	४	५	६	७	८	९
१.	तीन इस्पात संयंत्र (राउरकेला, भिलाई और दुर्गापुर)	लोहा और इस्पात	७.७५	—	—	३५०	फाउंड्रियों के लिए तैयार इस्पात २३ लाख टन और कच्चा लोहा ६,८०,००० टन	फाउंड्रियों के लिए २० लाख टन इस्पात और ४,५०,००० टन कच्चा लोहा
२.	दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य	उत्पादन	०.५	—	—	५२.० (अ)	३५ लाख टन लिगनाइट ७,१४,००० टन लिगनाइट चूर्ण ढोके और २,११,००० कि० वा० बिजली, ७०,००० टन नाइट्रोजन	३५ लाख टन लिगनाइट ७,१४,००० टन लिगनाइट चूर्ण ढोके और २११,००० कि० वा० बिजली, २०,००० टन नाइट्रोजन (ब)

३.	सिन्दरी खाद कारखाना	उत्पादन	२८	७०,००० टन नाइट्रोजन	६६,००० टन नाइट्रोजन	७	१,१७,००० टन नाइट्रोजन	१,१७,००० टन नाइट्रोजन
४.	नंगल खाद और भारी पानी कारखाना	उत्पादन	—	—	—	२२	७०,००० टन नाइट्रोजन	४०,००० टन नाइट्रोजन (स)
५.	हिन्दुस्तान जहाज कारखाना	उत्पादन	६.० (१९५१-५६)	—	५०,००० जी० आर० टी० (१९५१-५६)	९.८	—	७५,०००-९०,००० जी० आर० टी० (१९५६-६१)
६.	राउरकेला खाद कारखाना	उत्पादन	—	—	—	८	८०,००० टन नाइट्रोजन	७०,००० टन नाइट्रोजन (द)
७.]	भारी विद्युत् संयंत्र	उत्पादन	०.२	—	—	२०.० (य)	मदें अगले पृष्ठ पर दी हैं	उत्पादन १९६० में शुरू होगा
८.	हिन्दुस्तान मशीनी औजार	उत्पादन	४.४	अनुपलब्ध	०.२५ करोड़ की खरादें और पुर्जे	२.०	४०० खरादें, घिसाई और भू-छेदन मशीनें	१.५ करोड़ रु० का साज-सामान
९.	डी० डी० टी० कारखाने	उत्पादन	०.५	७०० टन	२८४ टन	१.०	२,८०० टन	२,५०० टन
१०.	हिन्दुस्तान एंटी-बायोटिक्स	उत्पादन	२.१	४८ लाख मेगा यूनिट	६६.३ लाख मेगा यूनिट	१.०	२ करोड़ ४० लाख मेगा यूनिट और १५,००० से २०,००० कि० ग्रा० स्ट्रेप्टोमाइसीन	२ करोड़ ४० लाख मेगा यूनिट और १५,००० कि० ग्रा० स्ट्रेप्टोमाइसीन

१	२	३	४	५	६	७	८	९
११.	हिन्दुस्तान केबल्स	उत्पादन	१.६	४७० मील लम्बे केबल (एक शिफ्ट)	५२५ मील लम्बे केबल	०.५	१,००० मील लम्बे केबल और ३०० मील कोएक्सियल केबल	१,००० मील लम्बे केबल और ३०० मील लम्बे कोएक्सियल केबल
१२.	राष्ट्रीय औजार फैक्टरी (चश्मे के शीशों की योजना भी शामिल है)	उत्पादन	०.६	४० लाख रु० मूल्य के औजार	१४.२ लाख रु० मूल्य के औजार	०.६५	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
१३.	नमक विकास	उत्पादन	०.३	—	८४६ लाख मन (सार्वजनिक और निजी क्षेत्र)	२.०	—	१० करोड़ मन (सार्वजनिक और निजी क्षेत्र)
१४.	चित्तरंजन रेल इंजन कारखाना	रेल	१४.६	१२० रेल इंजन	१२५ रेल इंजन	५.०	३०० रेल इंजन	३०० रेल इंजन
१५.	इंटेग्रल डिब्बा फैक्टरी	रेल	५.२	—	२० डिब्बे		३५० डिब्बे	३५० डिब्बे
१६.	नई एम० जी० डिब्बा फैक्टरी	रेल	कुछ नहीं	—	कुछ नहीं	१०.०	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
१७.	फालतू पुर्जों के इंजीनियरी कारखाने	रेल	कुछ नहीं	—	कुछ नहीं	७.०	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
	भारतीय टेलीफोन उद्योग	संचार	४.१ (फ)	—	५०,००० टेलीफोन और ३५,००० संचार लाइनें।	०.५	—	६०,००० टेलीफोन और ४०,००० संचार लाइनें,

						०.७५	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
						२.५	१,५०० टन	१,५०० टन
१९.	टेलीप्रिंटर फैक्टरी	संचार	—	—	—			
२०.	नगानती कागज मिल	वित्त	—	—	—			
		योग	७५.८		योग	५०१.७		

(अ) योजना कार्य की समाप्ति पर कुल लागत अनुमान से ६८.८५ करोड़ रु० आएगी ।

(ब) आशा है कि पूरा उत्पादन दिसम्बर १९६० से शुरू होगा ।

(स) आशा है कि पूरा उत्पादन १९५९ के अन्त तक होने लगेगा ।

(द) आशा है कि पूरा उत्पादन १९५९ के अन्त तक होने लगेगा । योजना कार्य की कुल लागत अनुमान से १६.० करोड़ रु० होगी और इस समय जो धन रखा गया है उचित मौके पर उस पर पुनर्विचार किया जाएगा ।

(य) योजना कार्य की समाप्ति पर कुल लागत अनुमान से २५ करोड़ रु० आएगी ।

(फ) इसमें मैसूर सरकार द्वारा विनियोजित ३१ लाख रु० शामिल नहीं है ।

प्रस्तावित भारी विद्युत् सामान फैक्टरी में तैयार की जाने वाली मदों की सूची

१. हाइड्रालिक टर्बाइन और जैनरेटर	१,७५,००० कि० वा० प्रतिवर्ष
२. डीजल सेटों के जैनरेटर	३५,००० कि० वा० प्रतिवर्ष
३. ट्रांसफार्मर ३३ कि० वा० और बड़े	५,००,००० के० वी० ए० प्रतिवर्ष
४. धारा और विभव ट्रांसफार्मर	उपयुक्त संख्या
५. स्थैतिक धारा नियंत्रक (स्टेटिक कैपेसिटर्स)	५४,००० के० वी० ए० प्रतिवर्ष
६. ए० सी० सर्किट ब्रेकर्स	११ के० वी० और अधिक
७. डी० सी० सर्किट ब्रेकर्स	उपयुक्त संख्या
८. स्विच बोर्ड और नियन्त्रण डेस्क	" "

९. डी० सी० मशीनें	
जैनरेटर और एक्साइटर	७,००० कि० वा० प्रतिवर्ष
वैल्डिंग जैनरेटर मोटर	वांछित यूनिटों की संख्या
१०. ट्रैक्शन मोटर, उपकरण और सामान	२,००० प्रतिवर्ष
११. ए० सी० औद्योगिक मोटर, २०० हा० पा० तथा अधिक की रेटिंग	७५,०००० प्रतिवर्ष
१२. औद्योगिक मोटर नियन्त्रण	५०,००० प्रतिवर्ष
	राज्य फैक्टरी के लिए मोटर रेटिंगके सीमा क्षेत्र के भीतर ही

(ख) सार्वजनिक क्षेत्र के औद्योगिक योजना कार्य (राज्य सरकारों की प्रमुख योजनाएं)

राज्य	योजना कार्य
मैसूर	१. मैसूर लोहा और इस्पात कारखाने का विस्तार
	२. सरकारी पोर्सिलेन फैक्टरी का विस्तार
	३. मैसूर औजार फैक्टरी का विस्तार
	४. सरकारी बिजली फैक्टरी का विस्तार
	५. सरकारी साबुन फैक्टरी का विस्तार
	६. केन्द्रीय औद्योगिक कारखाना
पश्चिम बंगाल	दुर्गापुर कोक भट्ठी कारखाना
असम	१. कपड़ा मिल
	२. कता रेशम मिल
	३. चीनी मिल

३	४
उत्तर प्रदेश	१. उ० प्र० गवर्नमेंट सीमेंट फैक्टरी का विस्तार २. उ० प्र० गवर्नमेंट प्रिसीजन इन्स्ट्रूमेंट फैक्टरी का विस्तार
बिहार	१. बिहार सुपरफास्फेट फैक्टरी २. कता रेशम मिल का विस्तार ३. पोर्सिलेन फैक्टरी
हैदराबाद	१. प्राग औजार फैक्टरी का विस्तार २. हैदराबाद चमड़ा कारखाना
तिरुवांकुर-कोचीन	१. तिरुवांकुर रबड़ कारखाने का विस्तार २. चीनी मिट्टी योजना का विस्तार ३. तिरुवांकुर खनिज का विस्तार ४. सस्ता बालुई ईंट फैक्टरी
आन्ध्र	१. श्री वेंकटेश्वर बोर्ड मिल का विस्तार २. आन्ध्र कागज मिल का विस्तार ३. मृच्छिल्प (सिरमिक) फैक्टरी का विस्तार
मध्य भारत	१. सूत कताई मिल २. डिस्टिलरी ३. पोलक निस्सरण फैक्टरी ४. ग्वालियर चमड़ा और चमड़ा कमाई फैक्टरी ५. ग्वालियर पोटरीज का विकास

राज्य	योजना कार्य
जम्मू और कश्मीर	१. रेशम कताई संयंत्र २. सरकारी ऊन फैक्टरी का विस्तार ३. सरकारी औषध फैक्टरी का विस्तार ४. रेशम बुनाई संयंत्र का विस्तार
कुर्ग	१. चन्दन तेल फैक्टरी २. काष्ठ जल-संशोषणालय (टिम्बर सीजनिंग किल्न) ३. काष्ठ क्रव्यप संयंत्र (क्रेसोटिंग प्लांट)
पांडिचेरी	१. चीनी मिल २. कताई मिल

इसके अलावा राज्यों की योजनाओं में सहकारी चीनी फैक्टरियों, राज्य वित्त निगम, खनिज योजनाओं की स्थापना तथा औद्योगिक योजनाओं की सहायता के लिए भी व्यवस्था की गई है। द्वितीय योजना में इन योजनाओं के लिए कुल ३२ करोड़ रुपए की व्यवस्था है जिसमें से २३ करोड़ रुपए राज्यों की योजनाओं में और ९ करोड़ रुपए केन्द्रीय योजना में दिखाए गए हैं।

परिशिष्ट २

दूसरी योजना के अन्तर्गत निजी क्षेत्र और राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के अधीन औद्योगिक विकास

उद्योग	यूनिट	३१ मार्च १९५६ को वार्षिक सामर्थ्य का अनुमान	१९५५-५६ में अनुमानित उत्पादन	१९६०-६१ की अनुमानित जरूरतें	१९६०-६१ के लक्ष्य: वार्षिक सामर्थ्य	१९६०-६१ के लक्ष्य: उत्पादन	१९५६-६१ में नियत पूंजी विनियोग करोड़ रु० में	विशेष कथन
१	२	३	४	५	६	७	८	९
१. लोहा और इस्पात	लाख टन	१२.५	१२.५	४५.०	२३.०	२३.०	११५	
(अ) निजी क्षेत्र में प्रमुख उत्पादकों द्वारा विक्रय इस्पात	टन	३,८०,०००	३,८०,०००	७,५०,०००	—	३,००,०००	—	
(ब) फाउंड्रियों के लिए कच्चा लोहा	टन	७,२६,०००	१,८०,०००	५,००,०००	५,००,०००	५,००,०००	२०	रा० औ० वि० निगम भी भारी इस्पाती सामान की सामर्थ्य का विकास करेगा।
२. इस्पाती ढांचा तथा सामान का निर्माण (क)							१२	
३. भारी फाउंड्री तथा गढ़ाई कारखाने								

(क) इसमें रेलवे निर्माणियों की सामर्थ्य और उत्पादन भी सम्मिलित है।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
(अ) स्वतन्त्र इस्पात फाउंड्रियां	टन	—	—	१६,०००	१५,०००	१५,०००	—	रा० औ० वि० निगम निजी क्षेत्र में विकसित करेगा ।
(ब) गढ़ाई कारखाने	टन	—	—	१२,०००	१२,०००	१२,०००		
(स) ढलवां लोहे की फाउंड्रियां	टन	—	—	१०,०००	१०,०००	१०,०००		
४. फैरो मैंगनीज	टन	२८,०००	अनुपलब्ध	१,६०,०००	१,७१,८००	१,६०,०००	६.५	
५. अलूमीनियम	टन	७,५००	७,५००	३०,०००	३०,०००	२५,०००(स)	२२.०	नई सामर्थ्य के कुछ भाग का विकास रा० औ० वि० निगम करेगा ।
६. गाड़ियां, मोटर साइकिलें और सहायक उद्योग							१३.०	
(अ) गाड़ियां	संख्या	२८,०००	२५,०००	५७,०००	३८,०००	५७,०००		८० प्रतिशत भारतीय पुर्जे ।
(ब) मोटर साइकिलें और स्कूटर	संख्या	११,०००	१,०००	११,०००	११,०००	११,०००		
७. रेल के डिब्बे आदि और अन्य साज-सामान रेल इंजन	संख्या	५०	५०	—	१००	१००	५.०	

८. औद्योगिक मशीनें आदि (ग)					
(अ) सूती कपड़ा	मूल्य (करोड़ रु० में)	४.०	१७.०(च)	४.५	(न) अस्थायी
(ब) जूट वस्त्र	"	०.०६ (१९५४)	२.५	१.३	
(स) सीमेंट	"	०.५६ (१९५४)	२.०	१.०	
(द) चीनी	"	०.२८ (१९५४)	२.५	२.०	
(य) कागज	"	नगण्य	४.०	१.३	
(फ) छपाई	"	नगण्य	२.०	१.५	
(ज) अन्य (मशीन औजार सहित भारी मशीनें आदि)				१०.०	

(ग) उत्पादन क्रम इस आधार पर कि हीराकुड में प्रतिदिन १०,००० टन क्षमता की या नई १०,००० टन क्षमता की एक यूनिट का उत्पादन १९६० के मध्य से प्रारम्भ होगा और १९६०-६१ में यह यूनिट केवल ६ माह के लिए पूर्ण क्षमता के अनुसार काम करेगी।

(ग) भारी मशीनों की कुछ वस्तुओं का निर्माण राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के अंतर्गत करने का विचार है।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
९. औद्योगिक बेयरिंग—बाल और रोलर बेयरिंग	संख्या	६,००,०००	८,६०,०००	२४,००,०००	६,००,०००	२१,००,०००	०.५	
१०. अम्ल—सलफ्यूरिक एसिड	टन	२,४२,०००	१,७०,०००	४,७०,०००	५,००,००० (छ)	४,७०,००० (छ)	२.५	
११. क्षार								
(अ) सोडा ऐश	टन	६०,०००	८०,०००	२,३०,०००	२,५३,०००	२,३०,०००	७.५	
(ब) कास्टिक सोडा	टन	४४,३००	३६,०००	१,६८,८०००	१,५०,४००	१,३५,४००	९.०	
१२. खाद							५.०	
(अ) नाइट्रोजनीय (स्थिर नाइट्रोजन)	टन	१५,०००	१,०००	३,७०,०००	३८,०००	३६,०००		
(ब) फास्फेटीय जैसे पी$_2$ ओ$_5$	टन	३५,०००	२०,०००	१,२०,०००	१,२०,०००	१,२०,०००(ज)		
१३. विविध भारी रसायन							८.५(झ)	(झ) संपूर्ण उद्योग शामिल हैं।
(अ) कैल्शियम कार्बाइड	टन	५,०००	३,०००	२४,०००	२७,८००	२४,०००		

(छ) इसमें सार्वजनिक क्षेत्र के संयंत्र सम्मिलित हैं जैसे कि बिहार सुपरफास्फेट फैक्टरी का सलफ्यूरिक अम्ल संयंत्र और इस्पात कारखाने के सहायक संयंत्र और दुर्गापुर का कोक भट्ठी योजना कार्य।

(ज) बिहार सरकार के सुपरफास्फेट कारखाने से

(ञ) पोटेशियम क्लोरेट	टन	२,३००	१,५००	३,८००	४,२००	३,८००		
(ग) औद्योगिक विस्फोटक पदार्थ	टन	कुछ नहीं	कुछ नहीं	५,०००	५,०००	५,०००		
(द) कार्बन डाइ-सल्फाइड	टन	४,७००	३,०००	१४,०००	१४,०००	१४,००० (ट)		(ट) रेयन और स्टेपल तंतु उद्योग में विनियोग शामिल है।
(ग) कार्बन ब्लैक	टन	८००	२००	१२,०००	९,७००	८,०००	—	रा० प्रौ० वि० निगम द्वारा उन्नत किया जाएगा।
१४. बेन्जोल निकालना और सफाई								
(अ) प्रकृत बेन्जोल (ठ)	लाख गैलन	२४	१०	—	१५०	१६०	१.०	(ठ) सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों की यूनिटों की संयुक्त सामग्री।
(ब) कोलतार प्रासवन (तार भासवित)	टन	७५,०००	—	—	१,७५,००० (उ)	१,७५,००० (उ)		(उ) मासिक रूप से रा० प्रौ० नि० निगम के अधीन और आंशिक रूप से सार्वजनिक भाग में।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
१५. रंगाई पदार्थ और माध्यम रंगाई पदार्थ ।	लाख पौंड	६६	४०	३२०	२७०	२२०	८.७	आंशिक रूप से रा० औ० वि० निगम के अधीन ।
१६. पेट्रोलियम शोध	लाख टन साफ करके	३६.२५	३६	—	४३.१	४३	१०.०	
१७. कागज और गत्ता	टन	२,१०,०००	२,००,०००	३,५०,०००	४,५०,०००	३,५०,०००	४४.०	विकास के लिए दो फैक्टरियां, जिनमें से आशा है कि एक पूरा उत्पादन देने लगेगी और दूसरी लगभग आधी तैयार हो जाएगी ।
१८. अखबारी कागज	टन	कुछ नहीं	कुछ नहीं	१,२०,०००	३०,०००	३०,०००	६.०	
१९. रेयन और स्टेपल तंतु							२४.०	आंशिक रूप से रा० औ० वि० निगम के अधीन ।
(अ) लसलसा रेशा और एसीटेट रेशा	लाख पौंड	२२०	१५०	८००	६८०	८८०		

(व) स्टैपल तंतु	लाख पौंड	१६०	१३२	३५० से ४००	३२०	३२०	८.०	आंशिक रूप से रा० प्रौ० वि० निगम के अधीन
(स) रासायनिक गूदा	टन	कुछ नहीं	कुछ नहीं	३०,०००	३०,०००	३०,०००		
२०. सीमेंट	लाख टन	४६(ढ)	४३(ण)	१३०	१६०(त)	१३०(ण)	८०.०	(ढ) सरकारी क्षेत्र में ३,००,००० टन (ण) सरकारी क्षेत्र में ५,००,००० टन कुल उत्पादन (त) १.५ नई यूनिट प्रसम में बनेगी।
२१. ऊष्मसह ईंटें	टन	४,४४,०००	२,८०,०००	८,००,०००	१०,००,०००	८,००,०००	६.०	
२२. जूट की चीजें	टन	१२,००,०००	१०,४०,०००	११,००,०००	१२,००,०००	११,००,०००	४.०	
२३. रबड़ की चीजें								
(अ) गाड़ियों के टायर	संख्या हजार में	६५०	६१०	१,४२०	१,४५०	१,४२०	३०.०	
(ब) साइकिल टायर	,,	६,०००	५,७५०	११,८००	११,८००	११,८००		
२४. सूती कपड़ा								
(य) सूत	लाख पौंड	१७,५०० (य)	१६,३०० (१९५५)	१६,५००		१६,५००		(य) जैसा जनवरी १९५५ में था।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
(ब) मिल का कपड़ा	लाख गज	४६,२०० (थ)	५१,००० (१९५५)	५०,००० अथवा ५५,००० (द)		५०,००० अथवा ५५,०००		(द) सब किस्मों की जरूरतें जिसमें ८५० करोड़ गज निर्यात के लिए भी शामिल है।
२५. चीनी	हजार टन	१,७४०	१,६७०	२,२५०	२,५००	२,२५०	५०.०	
२६. औषधियां								
(अ) पैनीसिलीन	लाख मैगा यूनिट	१५०	६६	४००	४०० (ध)	४०० (ध)	३.०	(ध) ये संख्याएं सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों की संयुक्त सामर्थ्य और उत्पादन प्रकट करती हैं।
(ब) स्ट्रेप्टोमाइसीन	कि० ग्रा०	—	—	१८,०००	१८,००० (ध)	१८,००० (ध)		
(स) सल्फा औषधियां	,,	४,५०,०००	अनुपलब्ध	४,५०,०००	४,५०,०००	४,५०,०००		
(द) पी०ए०एस०	,,	३६,३२०	अनुपलब्ध	१,१३,३००	१,१३,३००	१,१३,३००		
(य) बैन्जीन हक्सालोराइड	टन	२,०००	अनुपलब्ध	२,५००	२,५००	२,५००		
२७. ऊनी कपड़ा								
(अ) ऊनी टाग	लाख पौंड	कुछ नहीं	कुछ नहीं	१८०	६०	६०	२.३५	

(ब) ऊनी और वर्स्टेड धागा	लाख पौंड	३८०	२१६	२७०	४५०	२७०		(न) २८ से ४२ तक की मदों के अधीन समस्त समूह के लिए अनुमानित विनियोग।
(स) ऊनी कपड़ा	लाख गज	४८०	१४६	२००	५००	२००	१५.० (न)	
२८. बाइसिकलें	संख्या (हजार में)	७६०	५५०	१,२५०	८६५	१,२५०		
२९. डीजल इंजन	हा० पा०	२,००,०००	१,००,०००	२,०५,०००	२,२०,०००	२,०५,०००		
३०. विद्युत चालित पम्प	संख्या	६७,४६२	४०,०००	८६,०००	८६,०००	८६,०००		
३१. सिलाई मशीनें	संख्या	४६,५००	१,१०,०००	३,००,०००	८५,२००	२,२०,०००	(प)	(प) संगठित क्षेत्र द्वारा
३२. लालटेनें	संख्या (लाख में)	५५	५६	६०	५५	६०		
३३. ट्रांसफार्मर (३३ के० वी० और कम)	के०वी०ए०	६,७५,००० (फ)	५,४०,००० (फ)	१३,६०,०००	१३,१०,०००	१३,६०,०००	(ब)	(फ) बंगलौर की सरकारी विद्युत फैक्टरी को मिला कर।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
३४. बिजली के मोटर (२०० हा० पा० और कम)	हा० पा०	२,६२,०००	२,४०,०००	६,००,०००	६,००,०००	६,००,०००		(ब) सरकारी क्षेत्र का उत्पादन मिलाकर
३५. शुष्क बैटरियां	संख्या (लाख में)	२,२५०	१,६६०	२,२५०	२,२५०	२,२५०		
३६. स्टोरेज बैटरियां	संख्या	३,०७,५००	२,२५,०००	४,२५,०००	३,५०,०००	३,५०,००० (भ)		(भ) विकेन्द्रित क्षेत्र से ७५,००० अतिरिक्त
३७. बिजली के लैम्प जी० एल० एस०	संख्या (लाख में)	३१०	२७०	५००	५००	५००		
३८. रेडियो रिसीवर	संख्या	१,६२,०००	८०,०००	२,००,०००	१,६२,०००	२,००,०००		
३९. केबल और तार ए० सी० एस० आर० संचालक	टन	१५,३७०	६,०००	१८,०००	२०,४००	१८,०००		
४०. बिजली के पंखे	संख्या	३,७७,७००	२,७५,०००	६,००,०००	६,००,०००	६,००,०००		
४१. लेपित घर्षक	रिम	१,५०,०००	८०,०००	१,५०,०००	२,५५,०००	१,५०,०००		
४२. ग्राइंडिंग पहिए	टन	१,५२०	८५०	१,५००	२,११०	१,५००		

४३. कांच और कांच का सामान (चूड़ियों के अलावा)	टन	२,६१,०००	२५,०००	२,००,०००	३,३४,०००	२,००,०००	
४४. प्लास्टिक : सिंथेटिक मोल्डिंग चूर्ण	टन	१,१८०	७२५	११,६००	११,४००	१०,६००	४.०
४५. पावर अल्कोहल और औद्योगिक अल्कोहल	लाख गैलन	२७०	१८०	३००	३६०	१८० पावर अल्कोहल १२० औद्योगिक अल्कोहल	१.०
४६. रोगन और वार्निश							
(क) तैलीय रोगन वार्निश और इनेमल	टन	६५,०००	३६,०००	६०,०००	६५,०००	६०,०००	
(ख) नाइट्रोसेलुलोस लैकर	गैलन	८,००,०००	३,००,०००	५,००,०००	८,००,०००	५,००,०००	
४७. प्लाईवुड	लाख वर्ग फुट	१,५०६	१,२००	१,००० (केवल चाय पेटियां)	१,६७५	१,५०० (व्यापारिक प्लाईवुड को मिलाकर)	१.०

१	२	३	४	५	६	७	८	९
४८. स्टार्च और ग्लूकोज								
(अ) स्टार्च	टन	७७,६००	४७,०००	१,०००	१,००,०००	१,००,०००		
(ब) ग्लूकोज द्रव	टन	६,१००	१,०५०	५,०००	१३,०००	५,०००		
(स) ग्लूकोज चूर्ण	टन	२,६००	नगण्य	२,८००	७,७००	२,८००		
४९. वनस्पति तेल							५.०	
(अ) खली से घोलक निस्सरण	टन	८२,५०० (म)	५,०००	—	८,००,००० (म)	६४,०००		(म) जितनी खली तैयार हुई
(ब) बिनौले का तेल	टन	अनुपलब्ध	१०,०००	—	३०,०००	३०,०००		
सब साधनों का जोड़	लाख टन	अनुपलब्ध	१८	२१	—	२१		
५०. वनस्पति	टन	४,४५,०००	२,७०,०००	४,००,०००	४,४५,०००	४,००,०००		*विकेन्द्रित क्षेत्र को मिलाकर
*५१. साबुन	टन	३,४०,०००	२,००,०००	३,००,०००	३,५७,०००	३,००,०००		

५२. दियासलाई	लाख ग्रुस बक्से	३५३	३२०	३५०	३५३	३५० (य)		(य) विकेन्द्रित क्षेत्र को मिलाकर
५३. चमड़े की कमाई और जूते (सिर्फ संगठित क्षेत्र)								(र) चमड़े के जूतों की कुल आवश्यकता
(अ) जूते (पश्चिमी ढंग के)	लाख जोड़े	५९·७	३२	१,०२० (र)	५९·७	५९·७		
(ब) जूते (भारतीय ढंग के)	लाख जोड़े	—	२३	—	—	२३		(ल) सरकारी क्षेत्र के उत्पादन को मिलाकर
५४. नमक	हजार मन	—	८५,००० (र)	१,००,०००	—	१,००,००० (ल)		
५५. बिस्कुट और मिठाई								
(अ) बिस्कुट	टन	४०,०००	११,५००	१५,०००	४०,०००	१५,०००		
(ब) मिठाई	टन	४०,०००	८,०००	१०,०००	४०,०००	१०,०००		
५६. विविध उद्योग							११.५२	
						योग	२१०.१[illegible]	

अध्याय २०

ग्रामोद्योग और लघु उद्योग

ग्राम और लघु उद्योग अपने विभिन्न पहलुओं में आर्थिक व्यवस्था और राष्ट्रीय आयोजन की व्यवस्था के अभिन्न तथा निरन्तर रहने वाले अंग हैं। देहाती क्षेत्रों में लघु उद्योगों के विस्तार का पहला उद्देश्य है रोजगार के अवसर, आमदनी और रहन-सहन का स्तर बढ़ाना तथा ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को संतुलित एवं संगठित रूप देना। इस दृष्टि से पीढ़ियों से चले आते हुए उद्योगों पर अवश्य ही तुरन्त ध्यान देना पड़ेगा। ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में परिवर्तन होने के साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में टेकनीकल परिवर्तन भी होंगे और उसी के साथ देहातों में औद्योगीकरण का स्वरूप भी बदलेगा। तब वह आरम्भिक जरूरतों को पूरा करने वाले शिल्पों के स्तर से उठकर लघु उद्योगों के स्तर तक पहुंचेगा। लघु उद्योग दिन पर दिन उन्नतिशील टेकनीकों और अपेक्षाकृत अधिक समुन्नत प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति पर ही आधारित होंगे। ये विकास दीर्घकाल में करने होंगे और इसी बीच ग्राम अर्थ-व्यवस्था की वृद्धि और स्थायित्व के लिए यह भी आवश्यक होगा कि गांव के मौजूदा उद्योगों को कानून और संगठन बनाकर सहारा तथा सहायता दी जाए। इस प्रकार ग्रामीण और लघु उद्योगों के क्षेत्र को अर्थ-व्यवस्था के स्थायी अंग के रूप में न समझकर एक प्रगतिशील और सुयोग्य विकेन्द्रित क्षेत्र के रूप में लेना चाहिए, जिसका एक ओर कृषि से और दूसरी ओर बड़े पैमाने के उद्योग से घनिष्ठ सम्बन्ध है। ग्रामीण और औद्योगिक विकास कार्यक्रमों में ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों को जिन कारणों से प्राथमिकता दी गई है वे प्रथम पंचवर्षीय योजना में विस्तार से दिए गए हैं। पिछले तीन वर्षों में जो विशेष प्रकार के संगठन बने हैं, उन्होंने अधिक ऊंचे स्तर पर कार्यक्रमों के लिए जमीन तैयार कर दी है।

प्रथम योजना में प्रगति

२. प्रथम योजना की अवधि में दो महत्वपूर्ण कार्य किए गए। एक तो केन्द्रीय सरकार ने ग्राम और लघु उद्योगों के लिए पर्याप्त धन निकालकर रखा, और दूसरे, हथकरघा उद्योगों, खादी और ग्रामोद्योगों, दस्तकारियों, छोटे पैमाने के उद्योगों, रेशम के कीड़े पालने तथा नारियल जटा उद्योगों की समस्याओं को हल करने के उद्देश्य से अखिल भारतीय बोर्डों का एक जाल-सा बिछा दिया। केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा इस ओर दिए गए ध्यान और अखिल भारतीय बोर्डों के कार्यों का परिणाम यह हुआ है कि बहुत-से उद्योगों में उत्पादन और रोजगार दोनों की वृद्धि हुई है। योजना की शुरुआत में हथकरघा उद्योग की जो खराब हालत थी, अब उसे काफी सहारा मिल गया है। हथकरघा कपड़े का उत्पादन १९५०-५१ में ७४ करोड़ २० लाख गज से बढ़कर १९५४-५५ में १३५ करोड़ ४० लाख गज हो गया है और आशा है कि १९५५-५६ तक १४५ करोड़ गज हो जाएगा। खादी बोर्डों से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर स्पष्ट है कि खादी का मूल्य १९५०-५१ के १·३ करोड़ से बढ़कर १९५५-५६ में ५ करोड़ हो गया, वह भी तब जब कि उसका कुल उत्पादन ३ करोड़ ४० लाख वर्ग गज था। बाकी कई उद्योगों में आरम्भिक खर्च काफी मात्रा में खोज कार्य, हाट-व्यवस्था, संगठन इत्यादि पर किया जा चुका है। चार लघु उद्योग सेवा संस्थाओं

और उनके साथ ही जो कई शाखाएं स्थापित की गई हैं, उनसे भी भविष्य में अच्छी टेकनीकल सेवा, सलाह और सहायता मिलने की आशा है। अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड ने ग्रामोद्योगों के लिए एक टेकनोलोजिकल संस्था तथा कामगारों के प्रशिक्षण के लिए केन्द्रीय और प्रादेशिक संस्थाओं की स्थापना की है। अखिल भारतीय दस्तकारी बोर्ड ने नए डिज़ाइनों, नमूनों और विकसित विधायनों आदि पर खोज कार्य में सहायता दी है और हस्तशिल्प की वस्तुओं की हाट-व्यवस्था का सर्वेक्षण और देश तथा विदेश दोनों में इन चीजों की प्रदर्शनियां संगठित की हैं। नारियल जटा बोर्ड ने रेशे इकट्ठे करने और धागे के उत्पादन और संभरण को सहकारी संस्था स्थापित करके काफी बढ़ावा दिया है। बारह राज्य वित्त निगम बना दिए गए हैं और उद्योगों को राजकीय सहायता अधिनियम के शासन सम्बन्धी क्रियान्वयन और प्रक्रियाओं को और ढीला कर दिया गया है।

३. इस दिशा में एक और प्रयत्न यह हुआ है कि सरकार ने स्टोर क्रय समिति की इस सिफारिश को सिद्धान्त रूप में मान लिया है कि कुछ श्रेणी की चीजों की खरीद सिर्फ ग्राम और लघु उद्योगों से ही की जाए तथा बड़े पैमाने के उद्योगों के उत्पादनों और इनके मूल्यों के बीच जो फर्क हो, कुछ हद तक उसे बाधा न माना जाए। संभरण और निपटान महानिदेशालय ने कुटीर तथा छोटे पैमाने के उद्योगों से जहां १९५२-५३ में ६६ लाख की खरीद की थी, वहां १९५४-५५ में १ करोड़ ५ लाख की खरीद की है। पहली योजना में हथकरघे, दस्तकारी तथा ग्रामोद्योगों की अनेक बड़ी दुकानें तथा बिक्री केन्द्र खोले गए हैं। छोटे पैमाने की चीजों की बिक्री को राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम की स्थापना से भी काफी सहायता मिलेगी। इस निगम का मुख्य काम होगा सरकारी क्रयादेशों के लिए उत्पादन का प्रबन्ध करना, छोटी यूनिटों में हिस्सों और पुर्जों के निर्माण को सहायता देना, ताकि उन्हीं चीजों की बड़ी यूनिटों के उत्पादन के साथ उनका मेल बैठ जाए, और किस्तों पर मूल्य चुकाने की पद्धति से मशीनों की खरीदारी करना।

४. प्रथम पंचवर्षीय योजना में छोटे पैमाने और बड़े पैमाने के उद्योगों से सम्बन्धित साधारण उत्पादन कार्यक्रमों के सिद्धान्तों की सिफारिश की गई है। इस साधारण उत्पादन कार्यक्रम के सम्भावित तत्व ये हैं : उत्पादन के क्षेत्रों को निश्चित कर देना, बड़े पैमाने के उद्योग में सामर्थ्य का विस्तार न करना, बड़े पैमाने के उद्योगों के उत्पादनों पर उपकर या उत्पादन शुल्क लगाना और छोटी यूनिटों के लिए कच्चे माल, साज-सामान, और टेकनीकल और वित्तीय सहायता के लिए निश्चित उपाय करना। इनमें से एक या कई बातों के आधार पर अनेक छोटे उद्योगों को बढ़ावा और सहायता देना स्वीकार किया गया है। कुछ प्रकार के कपड़ों का उत्पादन हथकरघा उद्योग के लिए सुरक्षित कर दिया गया है और बड़ी मिलों के उत्पादन पर उत्पादन शुल्क लगाया गया है, जिससे हथकरघा और खादी उद्योगों को वित्तीय सहाया देने के लिए एक निधि इकट्ठी हो जाए। चमड़े के जूते बनाने और चमड़ा कमाई उद्योग की वर्तमान बड़ी यूनिटों के विस्तार अथवा नवीन बड़ी यूनिटों की स्थापना के लिए जो भी आवेदन पत्र आते हैं उनकी जांच कुटीर और छोटे पैमाने के क्षेत्र पर पड़ने वाले सम्भावित प्रभाव के आधार पर की जाती है। बड़े पैमाने पर जूते बनाने के उद्योग पर भी उत्पादन शुल्क लगाया गया है। दियासलाई उद्योग में 'डी' दर्जे की फैक्टरियों की एक नई श्रेणी बनाई गई है, और इन फैक्टरियों को उत्पादन शुल्क पर मिलने वाली कटौती भी बढ़ा दी गई है। कपड़े की छपाई करने वाली मिलों के लिए यह सीमा निर्धारित की गई है कि १९४९-५४ के बीच जिस वर्ष सबसे अच्छा उत्पादन हुआ हो, उससे अधिक उत्पादन न किया जाए, और सिले कपड़े तैयार करने वाली बड़ी यूनिटों की सामर्थ्य बढ़ाने

पर भी नियंत्रण लगा दिया गया है। कपड़ा धोने वाले साबुन के उद्योग पर भी उत्पादन शुल्क लगाया गया है जो परिस्थितियों के अनुसार घट-बढ़ सकता है और साबुन बनाने में प्रयुक्त नीम तथा अन्य अखाद्य तेलों के उद्योगों को आर्थिक सहायता दी गई है। कई अन्य उद्योगों की छोटी यूनिटों के उत्पादन में विस्तार की भी व्यवस्था रखी गई है। इन उद्योगों में कुछ प्रकार के खेती के औजार, फर्नीचर, खेल-कूद का सामान, स्लेटें, पेंसिलें, बीड़ियां, लिखने की स्याही, खड़िया, रंगीन पेंसिलें और मोमबत्तियां बनाना शामिल है।

५. पहली पंचवर्षीय योजना में औद्योगिक सहकारी संस्थाएं बनाने के महत्व पर दो दृष्टियों से जोर दिया गया था : वे एक तो ग्रामोद्योगों का विकास करेंगी, और दूसरे, गांव के कारीगरों को वित्तीय सहायता देने का एक आवश्यक माध्यम सिद्ध होंगी। भिन्न-भिन्न उद्योगों के बीच और भिन्न-भिन्न प्रदेशों के बीच उन्नति एक समान नहीं रही है, फिर भी हथकरघा उद्योग में, जैसे कि पहले कहा जा चुका है, उत्साहजनक प्रगति हुई है।

दूसरी योजना के उद्देश्य और बुनियादी नीतियां

६. ग्राम और लघु उद्योग समिति :—पहली योजना की अपेक्षा दूसरी योजना के अन्तर्गत ग्राम और लघु उद्योगों का कार्यक्रम काफी बड़ा है। दूसरी योजना के कार्यक्रमों और उनके क्रियान्वयन सम्बन्धी समस्याओं पर हाल ही में एक समिति—ग्राम और लघु उद्योग (दूसरी पंचवर्षीय योजना) समिति—ने विचार किया है। इस समिति को साधारणतया कर्वे समिति कहा जाता है। इसे योजना आयोग ने जून १९५५ में नियुक्त किया था। इस समिति के लिए प्रस्ताव करते समय इन तीन प्रमुख उद्देश्यों को ध्यान में रखा गया :—

(१) दूसरी योजना की अवधि में इस प्रकार की और अधिक टेकनोलौजिकल बेरोजगारी से बचना, जो विशेषकर परम्परागत ग्रामीण उद्योगों में होती है;

(२) योजना की अवधि में जहां तक सम्भव हो सके, भिन्न-भिन्न ग्राम और लघु उद्योगों के द्वारा रोजगार की वृद्धि करना; और

(३) आवश्यक रूप से विकेन्द्रित समाज के ढांचे के लिए एक आधार तैयार करना और यथाशीघ्र आर्थिक विकास करना।

समिति ने फिर भी यह कहा है कि परम्परागत ग्रामोद्योगों में भी इस समय जितना सम्भव हो, टेकनीकल दृष्टि से सुधार किया जाना चाहिए और भविष्य में अधिक अच्छी टेकनीकों को अपनाने के बारे में एक नियमित किन्तु क्रमिक कार्यक्रम होना चाहिए। इसके साथ ही नई पूंजी समुन्नत साज-सामान पर लगाई जानी चाहिए। यहां समुन्नत का अर्थ मौजूदा साज-सामान को बढ़ाने या उसको ठीक-ठाक करने से है।

७. यह आवश्यक नहीं है कि विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था की धारणा किसी निश्चित टेकनीक या चालन-प्रणाली से सम्बन्ध रखती ही हो। इसका अर्थ यही है कि टेकनीकल सुधार उसी ढंग से और उसी सीमा तक किए जाएंगे जितने कि देश भर में बिखरी या फैली हुई अपेक्षाकृत छोटी यूनिटों के लिए आर्थिक कार्यों की दृष्टि से सम्भव हो सकेंगे। इस दृष्टि से गांव के लोग समुन्नत उद्योग के रूप में जो कुछ ग्रहण कर सकते हों, उसका संगठन गांव के ही आधार पर किया जाना चाहिए। इस समिति का कहना था कि ग्रामोद्योगों का क्रमिक विस्तार और आधुनिकीकरण करने का

सबसे अच्छा ढंग यही है कि देश भर में गांवों और छोटे-छोटे कस्बों में आवश्यक सेवाएं स्थापित करने के साथ-साथ छोटी औद्योगिक यूनिटें भी स्थापित की जाएं। अगर बड़े-बड़े नगरों की सीमा पर औद्योगिक विस्तार किया जाए तो यह मुश्किल से कहा जा सकता है कि इनसे उद्योग विकेन्द्रित हो सकेगा। इसलिए औद्योगिक क्रिया-कलाप के ऐसे स्वरूप की आवश्यकता है जिसमें गांवों का एक समूह अपने औद्योगिक और शहरी केन्द्र पर सहज रूप से इस प्रकार आधारित हो कि उसे एक यूनिट की संज्ञा दी जा सके अथवा, समिति के शब्दों में, यों कहा जा सके कि 'यह प्रगतिशील ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था पर व्यापक रूप से आधारित एक पिरामिड' बन गया है। इस समूह का हर एक गांव अपने प्राकृतिक औद्योगिक और नागरिक केन्द्र पर ही निर्भर करेगा। छोटी यूनिटों के लिए, गांव के सामुदायिक कार्य केन्द्रों की ही भांति, संगठित सहकारी कामों के द्वारा जिस पैमाने पर उन्हें काम करना है तथा जैसा उनका संगठन होना है उसके सम्बन्ध में निश्चय हो जाना चाहिए।

८. ३० अप्रैल, १९५६ के औद्योगिक नीति प्रस्ताव में कुटीर और ग्राम तथा लघु उद्योगों की सहायता की चर्चा की गई है जिसका पालन राज्य या तो बड़े उद्योगों पर उत्पादन नियमण तथा पार्थक्य शुल्क लगाकर कर रहा है या लघु उद्योगों को सीधी आर्थिक सहायता देकर। कहा यह जाता है कि बीच-बीच में जब कभी जरूरत पड़ेगी ये कार्रवाइयां तो की ही जाएंगी परन्तु राज्य की नीति का उद्देश्य यह देखना होगा कि विकेन्द्रित क्षेत्र में आत्म-निर्भर होने की काफी सामर्थ्य आए और उसका विकास भी बड़े पैमाने के उद्योगों के साथ ही हो। इसलिए राज्य अपना सारा ध्यान उन्हीं बातों पर लगा देगा जिनसे छोटे पैमाने के उद्योगों की प्रतियोगी शक्ति बढ़े। इसके लिए यह आवश्यक है कि उत्पादन की टेकनीक में हमेशा सुधार लाया जाए तथा उसको आधुनिक बनाया जाए, परन्तु इस परिवर्तन का नियमन कुछ इस प्रकार हो कि टेकनोलोजिकल लोग बेरोजगार न हो जाएं। टेकनीक और वित्तीय सहायता का अभाव, काम करने के लिए उपयुक्त स्थान का न होना, और मरम्मत और रख-रखाव की सुविधाओं का काफी न होना, छोटे पैमाने के उत्पादकों के रास्ते में यही बड़ी बाधाएं हैं। इस सम्बन्ध में प्रस्ताव में कहा गया है कि औद्योगिक बस्तियों और ग्रामीण सामुदायिक कार्य केन्द्रों की स्थापना द्वारा इन कमियों को पूरा करने की दिशा में प्रयत्न शुरू हो गए हैं। गांवों में बिजली पहुचाना और कामगारों की सामर्थ्य के भीतर दरों पर उनको बिजली देना, इसी से काफी मदद मिलेगी। प्रस्ताव में औद्योगिक सहकारी संस्थाओं की स्थापना पर जोर दिया गया है, क्योंकि इनसे छोटे पैमाने के उद्योगों के अनेक कार्यों को बहुत सहायता मिलती है। इस प्रकार की संस्थाओं को हर प्रकार से बढ़ावा दिया जाना चाहिए तथा राज्य को कुटीर, ग्राम और छोटे पैमाने के उद्योगों के विकास का हरदम खयाल रखना चाहिए।

९. सामान्य उत्पादन कार्यक्रम:—प्रथम पंचवर्षीय योजना में 'सामान्य उत्पादन कार्यक्रम', शब्द इस बात का बोध कराने के लिए जोड़ दिए गए थे कि उद्योग को विभिन्न शाखाओं के विकास कार्यक्रम तैयार करते हुए यह विचार करने की आवश्यकता है कि छोटी और बड़ी यूनिटें समाज की कुल आवश्यकताओं को कहां तक पूरा करने में योग दे सकती हैं तथा छोटे पैमानों के उद्योगों को उनके लिए नियत लक्ष्य पूरा करने योग्य बनाने के लिए जो उपाय किए जाने चाहिए उन पर विचार करने की आवश्कता है। ये उपाय मुख्य रूप से दो वर्गों में बांटे जा सकते हैं:—

(१) वे उपाय जिनका मन्तव्य छोटी यूनिटों को कुछ तरजीह दिलाना तथा बाजार तैयार करना है; तथा

(२) वे उपाय जिनसे कच्चे माल, टेकनीकल मार्गदर्शन, वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण, खोज कार्य, बाजार का संगठन इत्यादि के द्वारा निश्चित सहायता मिल सकती है।

पहली योजना में यह व्यवस्था की गई थी कि सामान्य उत्पादन कार्यक्रम को आगे बढ़ाने के लिए इन तीन उपायों में से एक या अधिक की आवश्यकता पड़ेगी :

(१) उत्पादन के क्षेत्र की सीमा निर्धारित कर देना अथवा उस क्षेत्र को केवल उसी के लिए सुरक्षित कर देना;

(२) बड़े पैमाने के उद्योगों की सामर्थ्य में विस्तार न करना; और

(३) बड़े पैमाने के उद्योगों पर उपकर लगाना।

ये प्रस्ताव परम्परागत ग्रामोद्योगों के लिए, जिनका भविष्य व्यापक नीतियों के संचालन की रीति पर ही निर्भर करता है, बड़े महत्व के हैं। उत्पादन के क्षेत्र की सीमा निर्धारित कर देना अथवा उस क्षेत्र को केवल उसी के लिए सुरक्षित कर देना छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए विशेष रूप से सहायक हो सकता है। पहली योजना में इन यूनिटों का वर्गीकरण निम्नलिखित तीन श्रेणियों में कर दिया गया था :

(१) वे यूनिटें जिनमें छोटे पैमाने पर उत्पादन करने के कुछ फायदे हैं और जिन पर बड़े पैमाने के उद्योगों का काफी असर नहीं पड़ता;

(२) वे यूनिटें जिनमें छोटे पैमाने के उद्योगों का सम्बन्ध ऐसे पुर्जों के बनाने अथवा उत्पादन की ऐसी अवस्थाओं से होता है जिनमें प्रमुख योग बड़े पैमाने के उद्योगों का ही है; और

(३) वे यूनिटें जिनमें छोटे पैमाने के उद्योग को तत्सम्बन्धी बड़े पैमाने के उद्योग के साथ प्रतियोगिता करनी पड़ती है।

आधुनिक उद्योग में टेकनीकल सम्भावनाओं की सीमाओं के भीतर ही विकेन्द्रित क्षेत्र को बल देने के लिए यह जरूरी है कि जो छोटी यूनिटें या तो बड़े उद्योगों से होड़ ले रही हों अथवा जो उत्पादन की अवस्था विशेष या सहायक पुर्जों के निर्माण की दृष्टि से बड़े उद्योगों के साथ मिला दी जानी चाहिएं, उनके लिए क्षेत्र निर्धारण काफी सहायक साबित होगा। यह चीज उपयुक्त क्षेत्रों में पैदा की ही जानी चाहिए, चाहे बड़ी यूनिट सरकारी क्षेत्र में हो या निजी क्षेत्र में।

१०. बड़े पैमाने के उद्योगों का विस्तार न किए जाने के प्रस्ताव पर दो दृष्टिकोणों से विचार किया जा सकता है। पहला यह कि इस उपाय द्वारा छोटी यूनिटों के लिए बाजार कहां तक बढ़ सकेगा। कभी-कभी ऐसा होता है कि संगठन की कमी या कुछ और कारणों से उपलब्ध बाजार का भी पूरा-पूरा फायदा नहीं उठाया जाता। दूसरा पहलू यह है कि अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत किसी वस्तु के कितने उत्पादन की आवश्यकता होगी, इस सम्बन्ध में विकास की ऐसी अवधि में जिसमें कि सार्वजनिक और निजी पूंजी काफी मात्रा में लगेगी, भावी मांग का स्वरूप बड़ा महत्वपूर्ण है। बड़े पैमाने के उद्योगों की सामर्थ्य सीमित की जाए अथवा नहीं, या किस सीमा तक की जाए, इस बात का निर्णय दो बातों से होगा। एक तो यह है कि माल की कमी न होने पाए, और दूसरे, अधिक उपलब्ध बाजार का फायदा उठाने के लिए एक हद तक छोटी यूनिटों में उत्पादन का संगठन करने की आवश्यकता है। इन दोनों बातों को ध्यान में रखते हुए जनता के लाभ के साथ संतुलन बैठाकर ही इस विषय में निर्णय किया जा सकता है। इस नीति को लागू करने के लिए समय-समय पर बदलती

हुई अर्थ-व्यवस्था के प्रकाश में उसकी समीक्षा करते रहने की आवश्यकता है। इसलिए यह आवश्यक है कि उद्योग (विकास और नियमन) अधिनियम की अनुसूची में दिए गए उद्योगों पर लागू होने वाली उद्योग लाइसेंसिंग व्यवस्था धान की कुटाई जैसे कृषि कार्यों पर भी लागू कर दी जाए। इसके लिए उपयुक्त कानून भी बनाया जाना चाहिए।

११. जैसा कि ग्राम और लघु उद्योग समिति ने संकेत दिया है, बड़े उद्योगों के उत्पादन पर उपकर या उत्पादन शुल्क लगाने के उद्देश्य ये हैं कि एक तो किसी उत्पादन विशेष के उपभोक्ताओं से धन इकट्ठा किया जाए; दूसरे, बड़ी यूनिटों की सामर्थ्य या उत्पादन पर कोई एक सीमा लगाने के फलस्वरूप जो उन्हें अतिरिक्त लाभ होना हो उसका एक हिस्सा हस्तगत किया जाए; और तीसरे, छोटी यूनिटों के हित में मामूली मूल्य अन्तर को नजरअन्दाज करने की व्यवस्था की जाए। उपयुक्त स्थितियों में उपकर या उत्पादन शुल्क लगाना एक सर्वमान्य वित्तीय उपाय है, लेकिन हर उद्योग पर उसकी परिस्थितियों को देखकर विचार करना पड़ेगा। कभी-कभी राज-सहायता देने का प्रस्ताव भी रखा जाता है, लेकिन इससे दूसरे प्रकार के प्रश्न उठ खड़े होते हैं। ग्राम और लघु उद्योग समिति ने सामान्य रूप से उत्पादन पर राज-सहायता या बिक्री पर कटौती देने की शुरुआत करने के लिए नए उपायों का समर्थन नहीं किया। उसका खयाल था कि किसी भी उद्योग की रक्षण योजनाओं की लागत आसानी से कूती जाने योग्य होनी चाहिए और किसी साधारण आर्थिक उद्योग की रक्षण योजनाओं का निर्माण कुछ इस प्रकार होना चाहिए कि उन्हें उचित समय के भीतर बन्द भी किया जा सके। समिति ने कुछ सीमित अपवाद भी बताए हैं, जैसे हाथ से धान कूटने के उन्नत सामान के लिए कुछ राज-सहायता। ग्राम और लघु उद्योग समिति ने जितने भी ग्रामोद्योगों को लिया है, उन सबमें उत्पादन पर राज-सहायता कुल मिलाकर लगभग ८ करोड़ रुपए आंकी गई है। हथकरघा और परम्परागत खादी की बिक्री पर कटौती में अनुमान से क्रमशः २० करोड़ और ७ करोड़ का खर्च आएगा।

१२. ऊपर सामान्य उत्पादन कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए जिन उपायों की चर्चा की गई है, वे ग्रामीण और लघु उद्योगों के विकास के लिए किए जाने वाले उपायों का एक छोटा-सा भाग हैं। वास्तव में उनका मन्तव्य यह है कि ग्राम और लघु उद्योग क्षेत्र को अपने आप विकसित होने के लिए आवश्यक सामर्थ्य प्राप्त करने का अवसर और समय दिया जाए। जहां भी सम्भव हो सके राज्य के साझे वाले सहकारी संगठनों के द्वारा सामान्य बाजार का प्रबन्ध करके उनकी सहायता की जानी चाहिए। संगठन और सहायता के उपायों को सफल बनाने के लिए अविलम्ब ध्यान दिया जाना चाहिए।

१३. **औद्योगिक सहकारी संगठन और संस्थाएं:**—यह तो बड़ी सामान्य-सी बात है कि ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों में सहकारी संस्थाओं का अधिकतम विकास किया जाना चाहिए। जुलाहों की सहकारी संस्थाएं बनाने के काम को बढ़ावा देने में हथकरघा बोर्ड को जो अनुभव प्राप्त हुआ उसके आधार पर पता चलता है कि लघु उद्योग में सहयोग वृद्धि की कुछ परिस्थितियां पाई जाती हैं। सहकारी संस्थाओं में शामिल हथकरघों की संख्या १९५०-५१ के ६,२६,११९ से बढ़कर १९५३-५४ में ७,८८,९९४ और १९५४-५५ में ८,७८,९८४ हो गई और आशा थी कि योजना के अन्त तक १० लाख हो जाएगी। सहकारी संस्थाएं बनाने के लिए हथकरघा बोर्ड ने जुलाहों को हिस्सा पूंजी और कार्यचालन पूंजी में सहायता दी है। हिस्सों के मूल्य का ७५ से ८७॥ प्रतिशत तक भाग सरकार कर्ज के रूप में देती है और शेष जुलाहा स्वयं जुटाता है। कार्य-

चालन चालू पूंजी २०० रुपए प्रति सूती कपड़े के लिए और ५०० रुपए प्रति रेशमी कपड़े के करघे के लिए दी जाएगी। इन जुलाहों के सहकारी संगठनों के संघों से एजेंसियां बनाई जाती हैं। जो कच्चा माल पहुंचाने, टेकनीकल सलाह देने, सहकारी स्रोतों से कर्ज का प्रबन्ध करने और हाट-व्यवस्था की अच्छी सुविधा जुटाने आदि का काम करती हैं। नारियल जटा उद्योग के लिए १२० प्राथमिक नारियल जटा हाट-व्यवस्था संस्थाएं, २२ छाल सहकारी संस्थाएं और २ नारियल जटा हाट-व्यवस्था सहकारी संस्थाएं बनाई गई हैं। कुछ राज्यों में, जैसे बम्बई, उत्तर प्रदेश और पंजाब में कर्मचारियों और चमड़े का सामान बनाने वालों तथा मद्रास में ताड़ खजूर का गुड़ बनाने वालों में श्रेणी विशेष के कारीगरों में वृद्धि हुई है।

१४. औद्योगिक सहकारी संस्थाएं स्थापित करने, उनको बनाए रखने और उनके विकास के लिए एक साथ कई बातों की आवश्यकता होती है। लगभग सब ग्राम और लघु उद्योगों में संभरण और हाट-व्यवस्था की सहकारी संस्थाओं को अपना-अपना क्षेत्र मिल जाता है। उत्पादक सहकारी संस्थाओं के लिए अवश्य ही कुछ क्षेत्रों में काफी अधिक सम्भावनाएं हैं। संभरण और हाट-व्यवस्था की सहकारी संस्थाएं स्वयं ही छोटी यूनिटों की सहायता करने और गुण नियंत्रण, भावी मांग के लिए स्टाक रखने तथा कर्ज देने आदि के साथ-साथ टेकनीकों में क्रमिक रूप से विकास करने के लिए एक महत्वपूर्ण साधन हैं। दो में से अगर किसी भी प्रकार की सहकारी संस्थाओं की स्थापना हो जाए तो लघु उद्योग सरकार और संस्थाओं से मिलने वाली वित्तीय सहायता और टेकनीकल सेवा संस्थाओं, प्रशिक्षण केन्द्रों तथा चल टेकनीकल सेवाओं से मिलने वाले मार्ग-दर्शन का और भी अच्छी तरह उपयोग कर सकेंगे। छोटे पैमाने के उद्योगों के और विशेषकर उनके लिए जिनका संचालन छोटे-छोटे उद्यमकर्ताओं के हाथ में हैं, संगठन का सामान्य रूप यही हो सकता है कि ये या तो कच्चे माल की खरीद या तैयार माल की बिक्री अथवा दोनों के लिए व्यापार संघ बना लें। यह सम्भव है कि इस तरह के संघों के सदस्य ही किसी विशेष उद्देश्य के लिए एक निश्चित समय तक काम करने के बाद सहकारी संस्थाओं के रूप में बंध जाना पसन्द कर लें। इस प्रकार ये व्यापार संघ एक प्रकार के स्वतन्त्र संगठन भी हो सकते हैं और सहकारी संस्थाओं की स्थापना की दिशा में एक प्रयत्न भी। विविध ग्राम और लघु उद्योगों की सहकारी संस्थाओं के संगठन के लिए यह आवश्यक होगा कि योजना की अवधि में लक्ष्यों की पूर्ति कर ली जाए।

१५. संभरण और हाट-व्यवस्था सहकारी संस्थाओं तथा सहकारी उत्पादक संस्थाओं के संगठन के लिए यह आवश्यक है कि राज्यों के उद्योग विभाग ऐसे विकास संगठन कार्यक्रम बनाएं जिनकी पहुंच प्रमुख नागरिक केन्द्रों और ग्राम समूहों के कारीगरों तक हो सके। ऐसे देहाती इलाकों के लिए इन विकास संगठनों की विशेष आवश्यकता है, जहां कारीगरों की सहकारी संस्था बनाने की उपयुक्त परिस्थितियां हों। इसके लिए सामुदायिक उत्पादन और सामुदायिक मांग में घनिष्ठ सम्बन्ध होना ही चाहिए। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत चुने हुए २५ मार्गदर्शक क्षेत्रों में इस दिशा में शुरुआत कर दी गई है।

१६. अगर ग्राम और लघु उद्योग समिति के मतानुसार हाट-व्यवस्था निश्चित करने की योजना को आज़माना हो, तो संभरण और हाट-व्यवस्था के लिए सहकारी औद्योगिक संस्थाएं आवश्यक होंगी। इस योजना का मुख्य उद्देश्य यह है कि पूर्व निश्चित भाव पर अथवा कच्चे माल और तैयार उत्पादन के दामों के बीच कारीगर की मजदूरी के लिए काफी भाग छोड़ चुने हुए उत्पादनों या किस्मों के सम्पूर्ण माल को खरीद कर उत्पादन बढ़ाने की प्रेरणा दी जाए। समिति ने यह सुझाव दिया था कि यह योजना पहले, प्रयोग के रूप में, हथकरघा कपड़े के कुछ चुने हुए केन्द्रों और कुछ चुनी हुई किस्मों के लिए लागू की जाए। इसकी कार्यप्रणाली इस प्रकार होगी कि

किसी वस्तु विशेष की समस्त मांग के अनुमानों को देश के भिन्न-भिन्न प्रदेशों और केन्द्रों के उत्पादन की आवश्यकताओं के अनुसार विभाजित कर दिया जाए और उसी आधार पर उत्पादकों को कच्चा माल देने और उनका सारा उत्पादन लेने का प्रबन्ध कर दिया जाए। ये सहकारी संस्थाएं भी राज्य की ओर से तैयार उत्पादनों को खरीद लेंगी और इस प्रकार खरीदा हुआ माल बिक्री के समय तक स्टाक में रखा जाएगा। राज्य ही उनके मूल्य और बिक्री के नियम तय करेगा और इन सहकारी संस्थाओं को यदि कोई हानि होती है तो वह भी पूरी कर दी जाएगी पर यह तभी होगा जब कि यह हानि व्यापार में सामान्य रूप से होने वाली हानि से ज्यादा हो। चाहे इस योजना को किसी ग्राम या लघु उद्योग के उत्पादन के सम्बन्ध में प्रयोग के रूप में ही लागू करना हो, फिर भी इसके ब्योरे तैयार करने पड़ेंगे और कुछ विशेष परिस्थितियों में कतिपय उद्योगों के लिए वर्तमान नियत कटौती वाली प्रणाली पर यह कुछ न कुछ सुधार ही सिद्ध होगी। यह वांछनीय है कि एक या दो ऐसे क्षेत्रों के चुने हुए केन्द्रों में इस योजना को चलाकर अनुभव प्राप्त किया जाए, जिससे संभाव्य नुकसान वर्तमान कटौती पर आने वाले खर्च से बहुत ज्यादा न हो सके।

१७. औद्योगिक सहकारी संस्थाओं के माध्यम से कच्चे माल की खरीदारी और तैयार उत्पादनों की बिक्री से जो अनेक क्रियाएं सम्बन्धित हैं उनकी व्यवस्था के लिए स्टाक रखने के उपयुक्त प्रबन्धों के साथ-साथ बड़े पैमाने पर संगठन करने की भी आवश्यकता है। कृषि उत्पादों के सम्बन्ध में सहकारी हाट-व्यवस्था और माल संग्रहण की एक योजना तैयार की जा चुकी है और इसके लिए आवश्यक कार्यतन्त्र की स्थापना के लिए विधान तैयार किया जा रहा है। कृषि उत्पादकों और औद्योगिक सहकारी संस्थाओं को एक ही योजना के अधीन लाने के काम में कुछ अधिक कठिनाइयां हो सकती हैं, लेकिन फिर भी उसमें पारस्परिक सहायता के लिए जगह रहेगी ही। कृषि उत्पादनों के संग्रह और गोदामों के लिए संगठित की गई सुविधाओं का ग्रामीण और लघु उद्योगों के उत्पादनों के लिए उपयोग कर लेना कुछ हद तक संभव हो सकता है।

१८. छोटी यूनिटों की आवश्यकताओं का ध्यान रखकर माल खरीदने के लिए ग्रहण की गई नीति का विकेन्द्रित क्षेत्र के कार्यक्रमों के पूरे होने में काफी अधिक हाथ होगा। जहां भी आवश्यक हो, खरीद की प्रक्रियाओं को बदलना आवश्यक होगा, जिससे कि सरकारी खरीद के आधार पर छोटी यूनिटों के लिए सुअवसरों की प्राप्ति निश्चित हो सके और वे अपनी सक्षम सामर्थ्य का उपयोग कर सकें।

१९. हाट-व्यवस्था खोज कार्य के आधार पर ही विभिन्न उद्योगों के उत्पादन कार्यक्रमों की रूपरेखा बनाने और उनके नवीकरण के सम्बन्ध में ज्ञान और सूचना प्राप्त हो सकेगी। यह खोज कार्य या तो तदर्थ संगठित जांच-पड़तालों के द्वारा सम्पन्न हो सकता है अथवा उसे खोज कार्य अथवा हाट-व्यवस्था की योजनाओं के साथ जोड़ा जा सकता है। इन दोनों हालतों में उद्देश्य यही होगा कि उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं और रुचियों, प्रतियोगी उत्पादनों और व्यवस्थाओं के प्रति उपभोक्ताओं के रवैये, मूल्यों में परिवर्तन और मांग पर उसके असर इत्यादि का भली प्रकार अध्ययन किया जाए। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें अभी बहुत अधिक कार्य नहीं किया गया है। प्रस्ताव यह है कि ग्राम और लघु उद्योगों के अधिक महत्वपूर्ण उत्पादनों की हाट-व्यवस्था के सम्बन्ध में ये अध्ययन किए जाएं और प्राप्य परिणामों के आधार पर हाट-व्यवस्था सम्बन्धी अध्ययनों की गुंजाइश धीरे-धीरे बढ़ाई जाए।

२०. छोटे कस्बों और गांवों में बिजली के विस्तार के साथ काफी संख्या में लघु उद्योग विद्युत चालित हो जाएंगे और समुन्नत टेकनीकों का अपनाना भी आसान हो जाएगा। सिंचाई

और बिजली के अध्याय में छोटे कस्बों और गांवों में बिजली के विस्तार के पहलुओं पर थोड़े विस्तार के साथ विचार किया गया है। दूसरी योजना की अवधि में १०,००० से कम आबादी वाली जितनी जगहों में बिजली पहुंचेगी, उनकी संख्या ६,५०० से बढ़कर १६,५५६ हो जाएगी। पहले-पहल ऐसे गांवों में बिजली ले जाने का काम अत्यधिक आसानी से किया जा सकेगा जो या तो नागरिक क्षेत्रों के नजदीक बसे हैं या ट्रांसमिशन केन्द्र की ऐसी लाइनों के रास्ते पर हैं जहां से छोटी-छोटी लाइनें निकाली जा सकती हैं। सिफारिश यह है कि नागरिक और देहाती क्षेत्रों में बिजली ले जाने की योजनाएं कुछ इस प्रकार मिले-जुले ढंग से लागू की जाएं कि नागरिक और औद्योगिक उपभोक्ताओं से वसूल किए गए राजस्व का बचा हुआ भाग देहाती उपभोक्ताओं के लिए दरें घटाने के काम में लाया जा सके। इस बात पर भी जोर दिया गया है कि विद्युत विस्तार के वर्तमान कार्यक्रम के द्वारा अगर इस योजना का देहाती क्षेत्रों में संगठित और सहकारी ढंग से उपयोग किया जाए तो अभी जितने गांवों में बिजली पहुंचाने का प्रस्ताव है उससे कहीं अधिक गांवों में बिजली पहुंचाई जा सकती है। इसके अलावा यह सुझाव है कि जहां कहीं बिजली का उपयोग कृषि और छोटे उद्योगों के लिए किया जा सकता हो वहां डीज़ल चालित बिजलीघरों या पनबिजलीघरों के रूप में स्थानीय योजनाएं शुरू की जा सकती हैं। वायुशक्ति के विकास के लिए काम करने वाली कुछ छोटी यूनिटें बनाई जाने की भी आशा है।

२१. **कारीगरों के लिए मकानों की व्यवस्था:**—अक्सर कारीगर का घर ही उसके काम करने की जगह होती है। इसलिए उसके घर की स्थिति में सुधार करना भी विकेन्द्रित क्षेत्र के कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग होना चाहिए। जहां तक सम्भव हुआ है हर उद्योग के लिए निश्चित रकम में ही इसकी भी व्यवस्था कर दी गई है, परन्तु कुटीर, ग्राम और लघु उद्योगों में लगे सारे कारीगरों की जरूरतों को देखते हुए पूरक अनुदानों की आवश्यकता पड़ेगी ही। इसलिए गांवों के लिए मकान निर्माण करने के कार्यक्रम में गांव के कारीगरों की जरूरतों पर विशेष रूप से ध्यान रखना पड़ेगा।

२२. **ऋण और वित्त**—ग्रामोद्योग और लघु उद्योगों के विकास कार्यक्रम में वित्त सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संतोषप्रद प्रबन्ध करना बड़ा महत्व रखता है। वित्त की जरूरत कच्चे माल की खरीद और संग्रह, तथा तैयार माल के संग्रह के लिए तो पड़ती ही है, उसकी जरूरत कारीगरों को सहकारी संस्थाओं की हिस्सा पूंजी अदा करने, औजारों और सामान की खरीद और जमीन, घर, मशीनों तथा अन्य सामान में रुपए लगाने में उनकी सहायता करने के लिए भी पड़ती है। छोटे पैमाने के उद्योगों (जिनमें से कई छोटे-छोटे उद्यमकर्ताओं के हाथ में है) की हिस्सा पूंजी के लिए कर्जों की उतनी जरूरत तो नहीं पड़ेगी जितनी कि ग्रामोद्योगों में, जहां सहकारी संगठन का अत्यधिक महत्व है। सब ग्राम और लघु उद्योगों के लिए कार्यकारी पूंजी तथा मध्यकालीन और दीर्घकालीन वित्त की आवश्यकता होती है, हालांकि जिन उद्योगों में अच्छी टेकनीकों और अच्छे साज-सामान का प्रयोग होता है, और जिन्हें विशेषरूप से बनी हुई इमारतें चाहिएं, उन्हें दीर्घकालीन वित्त की आवश्यकता अपेक्षाकृत अधिक पड़ेगी।

२३. इस समय वित्त जुटाने के लिए जो प्रबन्ध हैं, वे संतोषप्रद नहीं कहे जा सकते। उसका कुछ भाग राज्य सरकारें उद्योगों को राजकीय सहायता अधिनियम के अधीन देती हैं। राज्य वित्त निगमों की ओर से भी एक सीमित हद तक औसत और लम्बे समय के लिए धन दिया जाने लगा है। बैंकिंग स्रोतों से सहकारी संस्थाओं को कुछ कार्यकारी पूंजी प्राप्त हो जाती है। ग्राम और लघु उद्योगों के लिए बनाई गई वित्त सम्बन्धी किसी भी सुगठित योजना में भारतीय रिज़र्व बैंक और स्टेट बैंक का बहुत बड़ा भाग होगा। उद्योगों को राजकीय सहायता अधिनियम के अधीन दी

जाने वाली सहायता थोड़ी और बढ़ा दी गई है और स्थानीय अधिकारियों को मंजूरी के और अधिक अधिकार दिए जा रहे हैं, लेकिन इस साधन से भी थोड़ा ही धन मिलता है। इसमें संदेह नहीं है कि अगर ग्राम और लघु उद्योगों की कर्ज सम्बन्धी आवश्यकताएं काफी मात्रा में पूरी की जाती हैं तो सामान्य बैंकिंग और संस्थागत एजेंसियों का अब की अपेक्षा और अधिक उपयोग करना पड़ेगा। इस दिशा में रिज़र्व बैंक, स्टेट बैंक, राजकीय वित्त निगमों और केन्द्रीय सहकारी बैंकों के बीच सहयोग पर आधारित एक समन्वित नीति की आवश्यकता है। चुने हुए केन्द्रों के छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए प्राप्य कर्ज सम्बन्धी सुविधाओं की वृद्धि और समन्वय सम्बन्धी आदर्श योजनाएं इसी दिशा में शुरू की गई हैं। ये योजनाएं भारतीय स्टेट बैंक के अधीन चलेंगी और उनका पर्यवेक्षण तथा नियंत्रण स्थानीय समन्वय समितियों के हाथ में होगा। तैयार की गई समन्वय योजनाएं, राज्य सरकारों की सहकारी ऋणदाता एजेंसिया, राजकीय वित्त निगम और भारतीय स्टेट बैंक, सब साथ मिलकर काम करेंगे। हर एजेंसी ऋणदान सम्बन्धी विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी और साथ ही उनके काम का एक-दूसरे से टकराव भी न हो पाएगा। इन आदर्श योजनाओं द्वारा प्राप्त अनुभव के आधार पर ग्रामीण और लघु उद्योगों के हर समूह के लिए उसकी विशेष आवश्यकताओं के संदर्भ में इसी प्रकार की सुगठित योजनाएं तैयार की जाएंगी, जैसे कुछ क्षेत्रों में हथकरघा जुलाहों की सहकारी संस्थाओं की तरह हिस्सा पूंजी के लिए वित्त व्यवस्था को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। ग्राम ऋण व्यवस्था सर्वेक्षण समिति ने अपनी रिपोर्ट में इस बात पर जोर दिया है कि भारतीय रिज़र्व बैंक को औद्योगिक सहकारी संस्थाओं के लिए अल्पकालीन ऋणों की व्यवस्था करने में सक्रिय भाग लेना चाहिए। इसके लिए आवश्यक विधान भी तैयार हो चुका है।

ग्राम और लघु उद्योगों पर व्यय

२४. नीचे की तालिका में प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में ग्राम और लघु उद्योगो के विकास में किया गया खर्च दिखाया जा रहा है :—

प्रथम योजना में ग्राम और लघु उद्योगों पर व्यय

		(करोड़ रु०)	
	१९५१-५५	१९५५-५६ (बजट)	१९५१-५६
(१)	(२)	(३)	(४)
हथकरघा	६·५	४·६	११·१
खादी	४·६	३·५	८·४
ग्रामोद्योग	१·१	३·०	४·१
लघु उद्योग	२·०	३·२	५·२
दस्तकारी	०·४	०·६	१·०
सिल्क और रेशम कीट उद्योग	०·८	०·५	१·३
नारियल जटा	...	०·१	०·१
योग	१५·७	१५·५	३१·२

२५. विभिन्न बोर्डों और राज्य सरकारों ने दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि के लिए योजनाओं के जो मसौदे तैयार किए, उन पर ग्राम और लघु उद्योग समिति ने विचार किया। इस समिति को उद्योगों ने, और जहां भी सम्भव हुआ, राज्यों ने इस दृष्टि से प्रस्ताव तैयार करने का काम सौंपा कि ग्राम और लघु उद्योगों के विकास के लिए दूसरी योजना की अवधि में प्राप्त हो सकने वाले साधनों का उपयोग कैसे किया जाए। समिति ने लगभग २६० करोड़ रुपए की कुल लागत के कार्यक्रमों की सिफारिश की है, जिनमें चालू पूंजी की भी व्यवस्था है जो अनुमान से लगभग ६५ करोड़ रुपए होगी। सूत, रेशम और ऊन सहित हथकरघा उद्योगों के लिए ८८ करोड़ रुपए, ऊन की कताई और खादी की बुनाई के लिए २·२ करोड़ रुपए, विकेन्द्रित सूती कताई और खादी के लिए २३ करोड़ रुपए, विभिन्न ग्रामीण उद्योगों के लिए ४७·४ करोड़ रुपए, दस्तकारियों के लिए ११ करोड़ रुपए, लघु उद्योगों के लिए ६५ करोड़ रुपए, रेशम कीट उद्योग के लिए ६ करोड़ रुपए, नारियल जटा की कताई और बुनाई के लिए २ करोड़ रुपए और सामान्य योजनाओं के लिए १५ करोड़ रुपए की व्यवस्था करने के भी प्रस्ताव हैं। जैसे कि नीचे बताया गया है, योजना में चालू पूंजी की आवश्यकताओं के अलावा २०० करोड़ रुपए के व्यय की व्यवस्था है। इस लागत को भिन्न-भिन्न उद्योगों पर प्रयोग के रूप में जिस प्रकार वितरित किए जाने की योजना है वह इस प्रकार है:—

ग्राम और लघु उद्योगों पर व्यय का वितरण

(करोड़ रु०)

उद्योग	व्यय
१. हथकरघा	
सूती बुनाई	५६
सिल्क बुनाई	१·५
ऊन बुनाई	२·०
	५९·५
२. खादी	
ऊन कताई और बुनाई	१·९
विकेन्द्रित सूत कताई और खादी	१४·८
	१६·७
३. ग्रामोद्योग	
धान की कुटाई (हाथ से)	५·०
वनस्पति तेल (घानी का)	६·७
चमड़े के जूते और चमड़ा कमाई (गांव में)	५·०
गुड़ और खांडसारी	७·०
दियासलाई (घरेलू उद्योग में)	१·१
अन्य ग्रामोद्योग	१४·०
	३८·८

४. दस्तकारी	६·०
५. लघु उद्योग	५५·०
६. अन्य उद्योग	
रेशम कीट उद्योग	५·०
नारियल जटा कताई और बुनाई .	१·०
७. सामान्य योजनाएं	१५·०
योग	२००·०

इस २०० करोड़ की रकम में अम्बर चरखे के कार्यक्रम के लिए कोई व्यवस्था विशेष रूप से नहीं की गई है। इस पर आगे विचार तब किया जाएगा जब किए जाने वाले परीक्षणों के परिणाम ज्ञात हो जाएंगे। सरकार अनेक ग्राम और लघु उद्योगों के विकास के लिए चालू पूंजी की व्यवस्था योजना की अवधि के शुरू में ही करेगी, अर्थात जब तक चालू पूंजी के सामान्य रूप से बैंकों अथवा संस्थाओं के माध्यम से मिलने का पूरा प्रबन्ध न हो जाएगा। चालू पूंजी की यह व्यवस्था योजना द्वारा की गई २०० करोड़ रुपए की व्यवस्था के अतिरिक्त होगी। विभिन्न ग्राम और लघु उद्योगों के विकास से सम्बन्धित बोर्ड और राज्य सरकारें चालू पूंजी के बारे में अपनी आवश्यकताओं का अनुमान योजना के पहले दो या तीन वर्षों में ही कर लेंगी, और इन उद्योगों के लिए ब्योरेवार कार्यक्रम बनाते समय उनका उल्लेख अलग-अलग किया जाएगा। अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड को पूरी योजना के लिए चालू पूंजी अनुमान से लगभग २८·५ करोड़ रुपए होगी जिसमें से ७ करोड़ रुपया खादी के लिए और शेष ग्रामोद्योगों के लिए है। यह कहा गया है कि आवश्यक चालू पूंजी का अधिकांश सहकारी संस्थाओं तथा अन्य बैंकिंग एजेंसियों से जल्दी प्राप्त होगा।

२६. योजना में २०० करोड़ रुपए के व्यय की जो व्यवस्था है, उसमें उन योजनाओं की लागत शामिल होगी जिन्हें केन्द्र स्वयं पूरा करेगा। इसके अतिरिक्त राज्यों की वे योजनाएं भी जिनमें केन्द्र सहायता देगा, केन्द्र द्वारा सहायता प्राप्त योजनाएं जिनमें राज्यों का योग होगा और वह व्यय भी इस रकम में शामिल होगा जो राज्य इन योजनाओं पर अपने साधनों से खर्च करेगा जिनको केन्द्रीय सहायता प्राप्त न होगी। इस व्यवस्था के अलावा विस्थापित लोगों के पुनर्वास कार्यक्रम में कुटीर और माध्यमिक उद्योगों और औद्योगिक कर्जों के लिए ११ करोड़ रुपए तथा व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण के लिए ७ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। पिछड़े वर्गों के हित के कार्यक्रमों में भी व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण के लिए तथा चुने हुए ग्राम और लघु उद्योगों के लिए भी कुछ व्यवस्था है। सामुदायिक विकास खण्डों के कार्यक्रम बजट में भी गांव की कलाओं और दस्तकारियों के लिए लगभग ४ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

२७. ग्राम और लघु उद्योगों के कार्यक्रम के एक भाग पर प्रत्यक्ष रूप से केन्द्रीय मंत्रालय अथवा उन्हीं के अधीन काम करते हुए अखिल भारतीय बोर्ड अमल करेंगे। शेष कार्यक्रम पर राज्य सरकारें मंत्रालयों और बोर्डों की सलाह के अनुसार अमल करेंगी। नीचे दी गई व्यय राशियां केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली योजनाओं की लागत बताती हैं :—

द्वितीय योजना में ग्राम और लघु उद्योगों पर व्यय

(करोड़ रु०)

उद्योग (१)	केन्द्र (२)	राज्य (३)
हथकरघा	१·५	५८·०
खादी और ग्रामोद्योग	४·०	५१·५
दस्तकारियां	३·०	६·०
लघु उद्योग	१०·०	४५·०
रेशम कीट पालन	०·२	४·८
नारियल जटा कताई और बुनाई	०·३	०·७
सामान्य योजनाएं	६·०	९·०
योग	२५·०	१७५·०

इनमें से अधिकांश योजनाओं पर राज्य सरकारें अमल करेंगी। खादी तथा ग्रामोद्योगों की योजनाओं पर राज्य बोर्ड और राज्यों में काम करने वाली रजिस्टरशुदा संस्थाएं अमल करेंगी। केन्द्रीय सरकार प्रायः जिन योजनाओं पर अमल करेगी वे वही होंगी जो एक तो अखिल भारतीय हों और दूसरे जिनका सबसे अच्छा संचालन केन्द्र द्वारा ही सम्भव है। ऐसी योजनाओं का सम्बन्ध केन्द्रीय संगठनों की व्यवस्था, प्रचार, प्रशिक्षण और खोज कार्य, प्रदर्शनियां और मेले, मशीनों आदि का किस्तों की प्रणाली से खरीदना और राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम जैसी विशेष संस्थाओं के काम आदि के पहलुओं से है। इन योजनाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन इसी अध्याय में आगे दिया गया है।

२८. राज्यों की संशोधित योजनाओं में ग्राम और लघु उद्योगों के लिए लगभग १२० करोड़ रुपए की कुल रकम व्यय के लिए निश्चित की गई है। एक समय के बाद इन रकमों को भी इस दृष्टि से दुहराया जाएगा कि ग्राम और लघु उद्योग समिति की रिपोर्ट में दिए गए वितरण के साथ इनका मेल अधिक से अधिक बैठ जाए। केन्द्रीय मंत्रालयों और अखिल भारतीय बोर्डों ने भी उद्योगों के लिए प्रस्तावित रकमों का राज्यों के बीच अस्थायी तौर पर वितरण कर दिया है। राज्यों की रकमों को दुहराने के सम्बन्ध में विचार करते समय इनका ध्यान रखा जाएगा। जिन 'सामान्य योजनाओं' के लिए १५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है, उनका सम्बन्ध एक से अधिक उद्योगों अथवा उद्योगों के समूहों से है—जैसे उत्पादन एवं प्रशिक्षण केन्द्र, अनुसंधान संस्थाएं, एम्पोरियम और विक्रय केन्द्र। १५ करोड़ रुपए की व्यवस्था में से ६ करोड़ रुपए की रकम अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड की सामान्य योजनाओं के लिए अलग कर दी गई है, जिनमें भूमि के श्रम प्रधान विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम और टेकनीकल खोज कार्य भी शामिल हैं। राज्यीय उद्योग विभागों में श्रमिकों की भरती के लिए भी ३ करोड़ रुपए की रकम रखी गई है। बाकी बचे हुए ६ करोड़ में से खोज कार्य, प्रशिक्षण, एम्पोरियम, इत्यादि ऐसी योजनाओं पर व्यय किया जाएगा जिनमें से अधिकांश पर राज्य सरकारों को काम करना होगा। ग्राम और लघु उद्योग कार्यक्रमों को कार्यरूप देने की सामान्य क्रिया यह है कि राज्य के प्रस्तावों पर केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुमोदन मिलने के पहले तत्सम्बन्धी अखिल भारतीय बोर्ड विचार करें।

खादी और ग्रामोद्योगों से सम्बन्ध रखने वाली योजनाएं प्रथम श्रेणी के अन्तर्गत आती हैं क्योंकि इन योजनाओं के प्रस्ताव प्रायः पहले-पहल अखिल भारतीय और राज्य खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्डों से आए हैं और इन योजनाओं पर कार्य उन्हीं की रजिस्टर्ड अथवा मान्यता-प्राप्त संस्थाओं और संघों द्वारा मुख्य रूप में होता है। पिछले तीन या चार सालों में वित्तीय सहायता का जो स्वरूप निर्धारित किया गया है, उसमें दूसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रमों के सम्बन्ध में संशोधन करने की आवश्यकता है।

विकास कार्यक्रम

हथकरघा उद्योग :

२९. उद्योग की भिन्न-भिन्न शाखाओं—मिल, बिजली करघा, हथकरघा और खादी—के उत्पादन कार्यक्रम दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि के लिए अभी निश्चित नहीं किए गए क्योंकि कई पहलुओं पर अब भी विचार किया जा रहा है। लेकिन यह निश्चित है कि दूसरी योजना की अवधि में हथकरघा उद्योग को पिछले एक या दो वर्षों की बनिस्बत बहुत बड़ी मात्रा में उत्पादन बढ़ाना होगा।

ग्राम और लघु उद्योग समिति के अनुमानों के अनुसार दूसरी योजना के अन्त तक हथ-करघों द्वारा बनाए हुए अतिरिक्त कपड़े का उत्पादन १७० करोड़ गज तक हो जाएगा। प्रस्तावित उत्पादन वृद्धि को पूरा करने के लिए संगठन सम्बन्धी काफी कार्य की आवश्यकता होगी। इसका मतलब यह होगा कि जो हथकरघे बेकार पड़े हैं उनको साल में ज्यादा दिनों तक काम में लाया जाए और प्रति करघा उत्पादन बढ़ाया जाए। हथकरघा उद्योग के विकास कार्यक्रम में मुख्य रूप से ऐसे हथकरघों की सहायता के लिए व्यवस्था की गई है जो सहकारी क्षेत्र के अन्तर्गत आ जाते हैं। सहकारी संस्थाओं में कार्य करने वाले जुलाहों को स्वतः काम करने वाले जुलाहों की अपेक्षा काफी सहायता दी जा सकती है। प्रस्ताव यह है कि सहकारी क्षेत्र के हथकरघों की संख्या १० लाख से बढ़ाकर १४.५ लाख कर दी जाए। यह भी प्रस्ताव है कि टेकनीकल और दूसरे प्रकार के सुधार लागू करके उत्पादन प्रति यूनिट ४ गज से बढ़ाकर ६ से ८ गज प्रति दिन कर दिया जाए। इस प्रकार साल के लगभग ३०० दिनों का औसत प्रति दिन ६ गज पूरा कर लिया जाएगा। जुलाहों को सहकारी संस्थाओं के सदस्य बनने में सहायता देने के लिए कर्जे दिए जाएंगे और उनके लिए चालू पूंजी का भी प्रबन्ध किया जाएगा।

विकेन्द्रित कताई और खादी :

३०. अगर हथकरघों के लिए आवश्यक कोटि वाला सूत विकेन्द्रित आधार पर गांवों में ही तैयार कर लिया जा सके तो गांवों में रोजगार की गुंजाइश काफी बढ़ जाएगी। विस्तृत पैमाने पर विकेन्द्रित कताई करने का प्रमुख उद्देश्य यही है कि उसके द्वारा हथकरघों की आवश्यकताएं पूरी की जा सकें जिन्हें कि मिल के सूत पर निर्भर रहना पड़ता है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर टेकनीकल तौर पर मजबूत और कम लागत वाले चरखों के निर्माण के लिए कई सालों तक लगातार प्रयत्न किया गया ताकि हथकरघों से उपयुक्त सूत काफी मात्रा में तैयार किया जा सके। आजकल अम्बर चरखे पर टेकनीकल दृष्टि से परीक्षण किए जा रहे हैं। अम्बर चरखा एक तीन यूनिट वाला कताई सेट है, जिसमें धुनाई मशीन, निवाई मशीन और चार तकुवों वाला कताई पहिया होता है और सबकी लागत लगभग १०० रुपए होती है। खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड ने अभी एक प्रारम्भिक योजना बनाई है जिसमें प्रशिक्षण केन्द्र, उत्पादन केन्द्र और अम्बर चरखा निर्माण केन्द्र शामिल हैं। इस प्रारम्भिक योजना को परीक्षण

रूप अब मिलने ही वाला है। इसमें ६,००० तकुवे देश भर में फैले १०० से भी अधिक केन्द्रों में होंगे। परीक्षण और प्रयोग के कार्यक्रम के विस्तार के लिए १०,००० अतिरिक्त कताई सेट स्वीकृत किए गए हैं। कताई सेट के आर्थिक और टेकनीकल पहलुओं पर, जिनमें उत्पादकता, उत्पादन लागत, आवश्यक सहायता और हथकरघों के लिए सूत की स्वीकृति शामिल हैं, एक समिति विचार कर रही है जिसकी रिपोर्ट जल्दी ही निकलने वाली है।

आजकल एक तकुवे वाले अनेक प्रकार के चरखों पर कुछ हाथ का कता सूत तैयार किया जा रहा है। निस्संदेह सामान्य रूप से खादी विस्तार कार्यक्रम के अनुसार इस सूत की जगह अम्बर चरखे से कता हुआ सूत चलने लगेगा। देश में बढ़ती हुई कपड़े की मांग को विकेन्द्रित रूप से पूरा करने के लिए अम्बर चरखा और कई तकुवे वाले चरखों के प्रयोग के बड़े कार्यक्रम पर तब विचार किया जाएगा जब ऊपर कहे गए परीक्षण और जांच-पड़ताल के काम खत्म हो जाएंगे। इस बड़े कार्यक्रम को ध्यान में रखकर खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड ने ५ साल में २५ लाख कई तकुवे वाले चरखों का निर्माण और प्रचार करने के लिए परीक्षार्थ एक कार्यक्रम बनाया है जिसमें लगभग ५० लाख आदमियों को पूर्णकालिक और अंशकालिक रोजगार मिलेगा।

३१. **खादी (सूती और ऊनी)**—सूती खादी जो अभी तक परम्परागत चरखों के सूत से तैयार की जाती थी, अब भविष्य में अम्बर चरखे के सूत से बहुत अधिक मात्रा में तैयार हुआ करेगी। गांव और स्थानीय क्षेत्र की खपत के लिए परम्परागत खादी का उत्पादन चालू रहेगा। खादी कार्यक्रम पर और पहले पैरे में बताए गए तत्सम्बन्धी अन्य पहलुओं पर साथ ही साथ विचार करके उनको अन्तिम रूप दिया जाएगा। परम्परागत खादी का उत्पादन ३ करोड़ ४० लाख गज (जिसमें ५० लाख गज आत्मनिर्भरता के आधार पर उत्पादित खादी भी शामिल हैं) से बढ़ाकर दूसरी योजना की अवधि में ६ करोड़ गज कर दिया जाएगा (इसमें २ करोड़ गज आत्मनिर्भरता के आधार पर उत्पादित भी शामिल हैं)। इसमें चालू पूंजी सहित २१ करोड़ रुपए खर्च आएगा, लेकिन हो सकता है कि अम्बर खादी कार्यक्रम के साथ इसका समन्वय स्थापित करने के लिए इस कार्यक्रम में संशोधन करना पड़े।

३२. ऊनी खादी के (हाथ से कते हुए ऊनी धागे द्वारा) विकास कार्यक्रम का उद्देश्य इन उत्पादनों में वृद्धि करना है : कम्बल का कपड़ा १९५६-५७ के २,५०,००० गज से १९६०-६१ में १० लाख गज, स्टैंडर्ड से नीचा कपड़ा ५ लाख गज से १० लाख गज और दूसरी किस्मों का कपड़ा १,२५,००० गज से १५ लाख गज कर देने का लक्ष्य है। इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए प्रमुख ऊन उत्पादक क्षेत्रों में उत्पादन केन्द्रों का संगठन किया जाएगा, फिनिशिंग और रंगाई संयंत्रों की स्थापना की जाएगी और समुन्नत चरखों और करघों के प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाएंगे।

ग्रामोद्योग :

३३. दूसरी योजना में इन प्रमुख ग्रामोद्योगों का विकास किया जाएगा—हाथ द्वारा धान की कुटाई, वनस्पति तेल, चमड़े के जूते और चमड़ा कमाई, गुड़ और खांडसारी और कुटीर दियासलाइयां। हाथ के बने कागज, ताड़-खजूर का गुड़, साबुन, मधुमक्खी पालन और मिट्टी के बर्तन जैसे उद्योगों की विकास योजनाएं बड़े पैमाने पर लागू की जाएंगी और गांवों में मिट्टी के बर्तन, रेशे और बांस इत्यादि के लिए विकास कार्य भी आरम्भ किए जाएंगे।

३४. **हाथ द्वारा धान की कुटाई**—इस उद्योग की विकास सम्बन्धी समस्याओं पर हाल ही में धान कुटाई समिति ने विचार किया है। ग्राम और लघु उद्योग समिति ने भी इस उद्योग के कार्यक्रम

के सम्बन्ध में सिफारिशें की हैं। इन सबको ध्यान में रखकर यह प्रस्ताव है कि विद्युत चालित सभी धान की चक्कियों पर लाइसेंस लगा दिया जाना चाहिए और जहां विशेष स्थितियों में सार्वजनिक हित के लिए परम आवश्यक न हो वहां न तो नए मिल खोलने की और न वर्तमान मिलों की सामर्थ्य में ही विस्तार करने की आज्ञा देनी चाहिए। ओखलियों को समाप्त करने के सवाल पर बाद में रोजगार की स्थिति को देखते हुए विचार किया जा सकता है। सिफारिश है कि हाथ से कुटे हुए धान पर ६ आना प्रति मन की औसत दर से दी जाने वाली राजसहायता जारी रखी जाए और हाथ-कुटाई केन्द्रों में कुटे हुए और खादी बोर्ड द्वारा प्रमाणित चावल पर बिक्री कर न लगाया जाए। चक्की-धनकी, समुन्नत (अमम) धनकियों, और ओनार्ट यंत्रों के निर्माण और वितरण की योजनाओं पर अमल किए जाने से एक तो टेकनीकल कार्यक्षमता का स्तर बढ़ेगा और दूसरे हाथ से कुटे हुए सामान का उत्पादन अधिक होगा। नागरिक क्षेत्रों को हाथ से कुटा हुआ चावल नियमित रूप से पहुंचाने के लिए हाट-व्यवस्था केन्द्र स्थापित करने होंगे और हाथ से कुटे हुए चावल के उपभोग को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रयत्न करने पड़ेंगे।

३५. वनस्पति तेल (घानी)—इस उद्योग से सम्बन्धित समस्याओं पर एक विशेष समिति ने अभी हाल में विचार किया है। उसकी सिफारिशें जल्दी ही मिल जाएंगी। वनस्पति तेल (घानी) का विकास कुछ अंश में तो इस बात की सम्भावना पर निर्भर करता है कि खाद्य तिलहनों के अधिकतर भाग को घानी के लिए दिया जाए और तेल मिलों से ज्यादातर बिनौलों का उपयोग करने को कहा जाए। कर्वे समिति ने यह प्रस्ताव किया है कि तिल्ली, काला तिल, और कर्डी की मिलों द्वारा पिटाई को प्रोत्साहित न करने और जहां आवश्यक हो प्रादेशिक आधार पर इस पर नियंत्रण लगाने के लिए कदम उठाए जाएं। चूंकि घानीवालों को सहकारी संस्थाओं में संगठित होने पर भी तिलहन पाने में बड़ी कठिनाइयां होती हैं, इसलिए उनके लिए मौसम पर काफी तिलहन का प्रबन्ध करने के लिए हाट-व्यवस्था सम्बन्धी व्यवस्था करना जरूरी हो जाता है। यह भी प्रस्ताव है कि सिर्फ उन क्षेत्रों को छोड़कर जहां तिलहन की पिराई और किसी प्रकार नहीं हो सकती, वहां नई मिलें खोलने की भी आज्ञा नहीं दी जानी चाहिए और वर्तमान मिलों पर जो उपकर द्वारा निधि एकत्र हो उसका उपयोग टेकनीकल सामान और हाट-व्यवस्था संबंधी सुविधाएं बढ़ाने के लिए किया जाना चाहिए। यह भी प्रस्ताव है कि गांव के तेलियों को बिना ब्याज के कर्ज दिए जाने चाहिएं ताकि वे सहकारी संस्थाओं के हिस्सेदार बन सकें। कहा जाता है कि गांवों में तेल उद्योग के क्षेत्र में विद्युत चालित सामान के प्रयोग करने के लिए परिस्थितियां अनुकूल हैं, लेकिन शर्त यह है कि इनका चलन विकेन्द्रित आधार पर सिर्फ उन्हीं लोगों के हाथ में रहे जो स्वयं इस सामान को चला सकें और साथ ही इन्हें इस्तेमाल करने से बेकारी न फैले। दूसरी योजना की अवधि में खादी बोर्ड के कार्यक्रम की मुख्य बातें ये हैं : वर्तमान घानियों को सुधारना, ५०,००० घानियों की जगह नई सुधरी हुई घानियां या वर्धा घानियां लगाना और देश भर में ऐसे ४०० उत्पादन एवं प्रदर्शन केन्द्र खोलना जिनमें हर एक में दो घानियां और एक छन्ना प्रेस हो। भारतीय केन्द्रीय तिलहन समिति ने जो ग्रामीण तिलहन उद्योग के विकास में भी सहायता करती आ रही है, प्रस्ताव रखा है कि वह जो प्रदर्शन यूनिटें सामुदायिक योजना क्षेत्रों में स्थापित कर रही है तथा चला रही है, उनमें वर्धा घानियों की संख्या बढ़ा दी जाए।

३६. कुटीर उद्योग के चमड़े के जूते—चमड़े के जूतों के उद्योग के अंतर्गत देश भर में फैली हुई यूनिटें, तथा कुछ शहरों जैसे कलकत्ता, आगरा और बम्बई में संगठित कुटीर यूनिटें आती हैं। प्रस्ताव यह है कि बड़ी यूनिटों की सामर्थ्य बढ़ाने की आज्ञा न देने की नीति को दूसरी योजना के

समय में भी लागू रखा जाए ताकि इस सामान की बढ़ी हुई मांग लघु और कुटीर यूनिट से पूरी हो सके। बड़ी-बड़ी फैक्टरियों को उत्पादक चमड़े का ज्यादा से ज्यादा सामान बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। यह भी प्रस्ताव है कि सरकार कामगारों को कर्ज के रूप में वित्तीय सहायता दे ताकि वे सहकारी संस्थाओं में हिस्सेदार बन सकें, समुन्नत सामान ले सकें और अपने काम के लिए पूंजी पा सकें। खादी बोर्ड के कार्यक्रम का उद्देश्य ३५,००० मोचियों की इस प्रकार सहायता करना है कि उनको कच्चा माल नियमित रूप से मिलता रहे तथा उनका तैयार सामान उचित मूल्य पर खरीदा जाता रहे।

३७. गांव में चमड़ा कमाई उद्योग—कलकत्ते के छोटे पैमाने के क्रोम चर्म कारखानों तथा मद्रास के वनस्पति चर्म कारखानों के चर्मकर्मियों की अपेक्षा गांवों के चर्मकर्मियों की स्थिति निम्न है। प्रस्ताव है कि योजना की अवधि में चमड़े के बड़े कारखानों की सामर्थ्य में विस्तार न होने दिया जाए ताकि आगे जो मांग में वृद्धि होगी उसके अधिकांश की पूर्ति छोटी-छोटी चमड़ा कमाई यूनिटों और चमड़ा कारखानों द्वारा ही हो। इस क्षेत्र में विकास कार्यक्रम का उद्देश्य मुख्य रूप से यह होगा कि छोटे-छोटे चर्मकर्मियों को सज्जित केन्द्रों में समुन्नत रंगाई, फिनिशिंग इत्यादि की सुविधाएं देकर उनकी टेकनीकल कार्यक्षमता को, जिसका स्तर इस समय बहुत ही कम है, बढ़ाया जाए। ये केन्द्र विभिन्न इलाकों में कार्य करेंगे। संगठन का सामान्य स्वरूप कुछ इस प्रकार होगा कि ग्रामीण और नागरिक क्षेत्रों के वर्तमान निकोई (चमड़ा उतारने के) केन्द्रों और छोटे-छोटे चमड़े के कारखानों के अलावा हर क्षेत्र में एक या दो केन्द्रीय चमड़े के कारखाने रखे जाएं ताकि छोटी यूनिटों को वहां से चमड़े को फिनिशिंग की तथा अन्य सुविधाएं प्राप्त हो सकें। छोटे-छोटे चर्मकर्मी इन सुविधाओं का फायदा उठाएं, इसके लिए प्रस्ताव है कि उन्हें सहकारी संस्थाओं में संगठित किया जाए। दूसरी योजना के लिए खादी बोर्ड के कार्यक्रम में अनेक मृत पशुगृह, चर्मकर्म केन्द्र, सरेस निर्माण केन्द्र और प्रशिक्षण एवं उत्पादन तथा प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था है। उसमें यह भी प्रबन्ध है कि चर्मकर्मियों को अपने घरों में सुधार करने के लिए कर्ज दिए जाएं।

३८. गुड़ और खांडसारी उद्योग—गुड़ और खांडसारी उद्योग के विकास कार्यक्रम का प्रथम उद्देश्य यह होगा कि अच्छा सामान और अच्छे विधायनों के चलन द्वारा टेकनीकल कार्यक्षमता का स्तर ऊंचा किया जाए। खांडसारी बनाने के वर्तमान ढंग से कुछ भाग बेकार भी जाता है, इसलिए इस टेकनीक को सुधारने की दिशा में खोज कार्य किया जाएगा। खांडसारी बनाने में वैक्यूम कड़ाही प्रणाली के विकेन्द्रित आधार पर ग्रहण किए जाने की संभावना पर विचार किया जाएगा। गुड़ उद्योग के लिए उसके टेकनीकल पक्ष पर भी ध्यान दिया जाएगा। उसमें विद्युत चालित चरखियां, अच्छी कड़ाहियां और भट्ठियां चालू की जाएंगी और गुड़ उत्पादकों की सहकारी संस्थाएं बनाई जाएंगी ताकि गुड़ के ज्यादा दिनों अच्छा बने रहने की शक्ति, उचित संग्रह, ठीक से पैकिंग, और गुण के मानकीकरण आदि से सम्बन्धित समस्याओं को हल किया जा सके।

३९. कुटीर दियासलाई उद्योग—कुछ समय से 'ए' श्रेणी की बड़ी दियासलाई की फैक्टरियों का विस्तार नहीं होने दिया गया है। इसलिए दूसरी योजना की अवधि में बढ़ती हुई मांग की पूर्ति अपेक्षाकृत 'बी', 'सी' और 'डी' श्रेणी की छोटी फैक्टरियों के उत्पादन से ही होगी। खादी बोर्ड के कार्यक्रम में 'डी' श्रेणी की प्रतिदिन १५ ग्रुस उत्पादन वाली १,००० फैक्टरियां स्थापित करने की व्यवस्था है।

४०. अन्य ग्रामोद्योग—अन्य ग्रामोद्योगों में से मधुमक्खी पालन, ताड़-खजूर गुड़, कागज, साबुन और मिट्टी के बर्तनों के लिए खादी बोर्ड ने विकास कार्यक्रम बनाए हैं।

अनेक गांवों में मधुमक्खी पालन को सहायता दी जाएगी तथा मधुमक्खी पालकों और क्षेत्र कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया जाएगा। आदर्श मधुमक्खी केन्द्रों की संख्या भी बढ़ाई जाएगी।

ताड़-खजूर के गुड़ के विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत यह व्यवस्था है कि पेड़ों से नीरा चुआने वालों की योग्यताओं के उपयुक्त विभिन्न प्रकार की उत्पादन इकाइयां स्थापित की जाएं। इसके अलावा भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के चुआने वालों को सहायता भी दी जाएगी। इस कार्यक्रम की एक महत्वपूर्ण बात यह है कि सहकारी संस्थाओं और सहकारी संस्थाओं के संघों को ताड़-खजूर गुड़, ताड़-खजूर पत्ते और अन्य तत्सम्बन्धी उत्पादों के निर्माण जैसी उत्पादन की नई दिशाएं प्रारम्भ करने में सहायता दी जाए। आशा है कि अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड के संशोधित कार्यक्रम के अनुसार विकास व्यय १९५६-५७ के ५९ लाख से बढ़कर १९६०-६१ तक ८६ लाख हो जाएगा। सारी योजना पर कुल ५ करोड़ रुपया खर्च होगा।

प्रस्ताव है कि हाथ से बने कागज का उत्पादन १९६०-६१ तक बढ़ाकर ४,४०० टन कर दिया जाए। इसके लिए ८० फैक्टरी यूनिटें, ४०० कुटीर यूनिटें और ४०० स्कूल यूनिटें स्थापित की जाएंगी। अखाद्य तेलों द्वारा साबुन का उत्पादन बढ़ाने के लिए तीन प्रकार के अलग-अलग केन्द्र—तेल उत्पादन केन्द्र, तेल एवं साबुन उत्पादन केन्द्र और मिश्रित उत्पादन यूनिट गहन क्षेत्रों में खोले जाएंगे।

मिट्टी के बर्तन बनाने के उद्योग की सहायता के लिए अधिक अच्छे चाकों की व्यवस्था की जाएगी, नालियों और खपरैलों इत्यादि के अच्छे सांचे तैयार किए जाएंगे और अच्छी भट्ठियों की व्यवस्था की जाएगी। अन्य परम्परागत उद्योगों, जैसे रस्सी बटाई और टोकरी बुनाई को भी सहायता दी जाएगी।

४१. **खादी और ग्रामोद्योगों के लिए गहन क्षेत्र तथा हाट-व्यवस्था योजनाएं**— अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड की सामान्य योजनाओं में गहन क्षेत्र योजना उल्लेखनीय है। इस योजना का उद्देश्य है ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के अभिन्न भाग के रूप में ग्रामोद्योगों का विकास करने की दृष्टि से चुने हुए २०,००० से ३०,००० तक की आबादी वाले समीपस्थ क्षेत्रों का सुगठित रूप से आर्थिक विकास करना। बोर्ड के संशोधित कार्यक्रम के अनुसार दूसरी योजना के अन्त तक कुल २·७७ करोड़ रुपए के खर्च से इन गहन क्षेत्रों की संख्या १९५५-५६ में ३५ से बढ़ाकर २०० कर दी जाएगी। खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड का यह भी प्रस्ताव है कि गांव के कारीगरों को कच्चा माल, उत्पादन के औजार और तैयार माल की बिक्री की सुविधाएं दिलाने में सहायता करने के उद्देश्य से व्यापक हाट-व्यवस्था संगठन बनाए जाएं। एक विस्तृत संगठन बनाने का भी प्रस्ताव है जिसमें प्रादेशिक हाट-व्यवस्था केन्द्र, प्रादेशिक हाट-व्यवस्था केन्द्रों के अधीन काम करने वाले विशेष केन्द्र और उपकेन्द्रों के अधीन काम करने वाली फुटकर बिक्री की दुकानें शामिल होंगी। यह भी प्रस्ताव है कि बोर्ड के केन्द्रीय दफ्तर से सम्बद्ध एक केन्द्रीय हाट-व्यवस्था सम्बन्ध सूचना केन्द्र खोला जाए जिसका काम प्रादेशिक हाट-व्यवस्था केन्द्रों के कामों में समन्वय स्थापित करना और कच्चे माल तथा उत्पादन के औजार आदि की पहले से खरीदारी करने के बारे में सलाह देना होगा।

दस्तकारियां :

४२. दस्तकारी की चीजें अपने कलात्मक डिजाइनों के कारण ही उपभोक्ताओं का मन आकर्षित करती हैं। यह शिल्प हमको अपने पूर्वजों से प्राप्त हुआ है और इसके विकास के लिए हाल में किए गए प्रयत्नों को अच्छी सफलता मिली है। दूसरी योजना की अवधि में डिजाइनों की उन्नति करने तथा प्रादेशिक डिजाइन केन्द्र स्थापति करने की दिशा में योजनाएं शुरू की जाएंगी। इसके अलावा कला स्कूलों को डिजाइनों विषयक विकास अनुभाग खोलने में सहायता दी जाएगी तथा काम करने वाले कारीगरों को समुन्नत शिल्प डिजाइन कार्य में प्रशिक्षण देने के लिए वजीफे दिए जाएंगे। कारीगरों को अच्छा सामान दिया जाएगा ताकि वे अच्छी-अच्छी टेकनीकों का उपयोग कर सकें। देश में उनकी बिक्री बढ़ाने के उद्देश्य से अनेक केन्द्रों में नए एम्पोरियम और बिक्री केन्द्र तथा शिल्प संग्रहालय खोले जाएंगे। देहाती बाजारों और मेलों में बिक्री के लिए गाड़ियां रखी जाएंगी, पर्यटकों के आकर्षण स्थलों में स्टेशनों तथा हवाई अड्डों इत्यादि पर बिक्री की दुकानों और शो केसों की व्यवस्था की जाएगी। दस्तकारियों की चीजों की बिक्री के लिए सहकारी संगठन स्थापित करने की ओर ध्यान दिया जा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों और औद्योगिक मेलों आदि में भाग लेकर प्रचार इत्यादि द्वारा विदेशों में भी बाजार बनाए जा रहे हैं।

परम्परागत और नए शिल्पों के विकास के लिए दस्तकारी बोर्ड की सलाह से राज्यों को सहायता दी गई है। अनेक दस्तकारियों, यथा कलात्मक धातुकृतियां, खिलौने, ताल-पत्र और रेशे, पत्थर और संगमरमर पर पच्चीकारी, लेकर का काम, फीते और कशीदाकारी, बांस की चीजें, दरियां, चमड़े का बढ़िया सामान, चमकदार मिट्टी की चीजें आदि के लिए राज्यों में प्रशिक्षण अथवा प्रशिक्षण एवं उत्पादन केन्द्र खोले जाएंगे। विशिष्ट दस्तकारियों के विकास के लिए भी कई योजनाएं हैं। इनके अंतर्गत उत्तर प्रदेश की सींग, सोने-चांदी के सामान, हाथीदांत, बिदरी, लकड़ी के खिलौने, बेंत और बांस की चीजें, पश्चिम बंगाल की कलात्मक मिट्टी के बर्तन, माल्दा शिल्प और चटाइयां हैदराबाद की लाख की चूड़ियां, हिमरू, दरियां और ऊनी फर्श, चांदी की फिगरी, रंगीन पत्थर और सलीमशाही तथा अप्पाशाही जूते, मध्य भारत के चमड़े के खिलौने, घास की चटाइयां, कीमखाब के काम, पीतल के नक्काशीदार बर्तन और पेपियर मैशी के काम और दूसरे राज्यों की अन्य स्थानीय दस्तकारियां आती हैं।

छोटे पैमाने के उद्योग :

४३. इस श्रेणी के अन्तर्गत विविध प्रकार के उद्योग आ जाते हैं किन्तु उनकी सामान्य विशेषताएं हैं उनकी नागरिक अथवा अर्ध-नागरिक स्थिति और मशीनों, बिजली तथा आधुनिक टेकनीकों का प्रयोग। ये उद्योग छोटे-छोटे उद्यमकर्ताओं या आत्मनिर्भर कामगारों और कहीं-कहीं सहकारी संस्थाओं द्वारा चलाए जा रहे हैं। इस क्षेत्र की कुछ यूनिटें, उदाहरणार्थ साइकिल के पुर्जे या सिलाई मशीनों के पुर्जे बनाने वाले बड़े-बड़े उद्योगों के सहायक हो सकते हैं, लेकिन वे उनसे नियमानुसार सुव्यवस्थित प्रणाली से जुड़े हुए नहीं हैं; वे तो उनकी सामयिक आवश्यकताओं के आर्डरों की सप्लाई भर करते हैं। कामकाज के लिए रखी गई परिभाषा के आधार पर लघु उद्योग बोर्ड ने 'छोटे पैमाने के उद्योगों' के अन्तर्गत उन सभी यूनिटों को रख दिया है जिन पर ५ लाख से कम पूंजी लगी हुई है और बिजली का प्रयोग करने पर जिसमें ५० से कम आदमी काम करते हैं। इस क्षेत्र में विकास के लिए मुख्य आवश्यकताएं हैं समुन्नत औजारों, मशीनों और नई टेकनीकों को अपनाने के सम्बन्ध में प्रशिक्षण और टेकनीकल सलाह देना, उचित दरों पर कच्चा सामान और बिजली देना, उचित शर्तों पर पर्याप्त वित्त देना, मशीनों के आयात और उनकी खरीद के

लिए सुविधाएं देना और उत्पादनों की बिक्री में सहायता देना। लघु उद्योगों का बड़े उद्योगों के सहायकों के रूप में जितना विकास किया जाता है उतनी ही हाट-व्यवस्था की समस्याएं आसान हो जाती हैं। उद्योग के दो क्षेत्रों के बीच इस प्रकार के समन्वय के लिए यह आवश्यक है कि (क) बड़ी यूनिटों के उत्पादन कार्यक्रमों की योजना बनाते समय चीजों या पुर्जों की खरीद की व्यवस्था विशेष रूप से हो; और (ख) लघु उद्योगों का स्तर इतना हो जाए कि वे वांछित मानक और विवरणों के अनुसार उत्पादनों की सप्लाई बनाए रख सकें। किसी बड़े उद्योग की स्थापना के लिए लाइसेंस देते समय या उसका विस्तार करते समय उचित शर्तें और आरक्षण लगाने की प्रथा हाल ही में शुरू की गई है ताकि तत्सम्बन्धी लघु उद्योगों के उत्पादनों के लिए गुंजाइश हो सके।

४४. लघु उद्योग सेवा संस्थान—केन्द्रीय सरकार १० करोड़ रुपए की लागत से जो कार्यक्रम स्वयं शुरू करेगी उसके अन्तर्गत लघु उद्योग सेवा संस्थानों द्वारा टेकनीकल सेवाओं का और अधिक विस्तार तथा एक औद्योगिक विकास सेवा की स्थापना, मशीनें आदि किस्तों पर खरीदने की एक योजना, एक हाट-व्यवस्था सेवा की स्थापना और चुने हुए केन्द्रों तथा उद्योगों में आदर्श योजना की शुरुआत आदि कार्य आते हैं। प्रस्ताव यह है कि लघु उद्योग सेवा संस्थानों की संख्या ४ से बढ़ाकर २० कर दी जाए ताकि हर राज्य के हिस्से में कम से कम एक संस्थान आ जाए। ये संस्थान समुन्नत प्रकार की मशीनों, साज-सामान और विधायनों, कच्चे माल के प्रयोग और लागत घटाने के तरीकों के बारे में की गई सामान्य पूछ-ताछ पर टेकनीकल सलाह ही नहीं देंगे बल्कि उनके टेकनीकल कर्मचारी छोटी यूनिटों से सम्पर्क स्थापित करके उनकी समस्याओं पर सलाह देंगे और इस प्रकार एक उपयोगी विकास सेवा की व्यवस्था हो जाएगी। ये संस्थान अपने निजी कारखानों के संस्थानों के बाहर स्थापित केन्द्रों के आदर्श कारखानों और ट्रकों पर लगे हुए चलने-फिरने वाले कारखानों के द्वारा समुन्नत टेकनीकल सेवाओं और मशीनों के प्रयोग के सम्बन्ध में प्रदर्शन किया करेंगे। इसके अलावा वे उद्योगपतियों को छोटी-छोटी मशीनें और साज-सामान किस्तों पर खरीदने की प्रणाली पर देने के लिए राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम की ओर से भी काम करेंगे। वे छोटे उद्योगों को वर्तमान और भावी बाजार के तथा अपने उत्पादन को ऐसे बाजार के अनुरूप बनाने के बारे में सलाह और सूचना देकर उनके लिए हाट-व्यवस्था भी करेंगे। मशीन और साज-सामान की किस्त-खरीद और हाट-व्यवस्था की योजनाएं औद्योगिक विकास सेवा के स्वाभाविक अंग हैं। इस समय सामान्य कामों की मशीनों की किस्त-खरीद की शर्तें प्रारम्भिक अदायगी के रूप में सामान्य मशीनों के लिए २० प्रतिशत और विशिष्ट मशीनों के लिए ४० प्रतिशत और ब्याज की दर ४½ प्रतिशत है, लेकिन आवश्यकतानुसार ये शर्तें घट-बढ़ भी सकती हैं।

हाट-व्यवस्था सेवा तीन दिशाओं में शुरू की जाएगी। प्रथम कुछ चीजों के लिए, जैसे आगरे के जूतों, अलीगढ़ के तालों के लिए तत्सम्बन्धी केन्द्रों में थोक बिक्री केन्द्र खोले जाएंगे और राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम इस सामान को निश्चित मानकों के आधार पर खरीदेगा और आस-पास के फुटकर विक्रेताओं को बेचेगा। दूर के क्षेत्रों तथा चुनी हुई फुटकर बिक्री की दुकानों में बिक्री के लिए चलती-फिरती बिक्री गाड़ियों की व्यवस्था की जाएगी जिनमें यह सामान बाजार भाव पर बेचा जाएगा। दूसरे, राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम संभरण और निपटान महानिदेशक से यह तय करेगा कि इन लघु उद्योगों से सामान आदि की खरीद की जाए। तीसरे, लघु

उद्योग सेवा संस्थान अपने एक पूर्णकालिक अफसर द्वारा बड़ी यूनिटों से ऐसी चीजों के आर्डर पाने की संभावना पर खोज-बीन करवाएंगे जिन्हें लघु उद्योग तैयार कर सकते हैं।

जैसे-जैसे हाट-व्यवस्था सेवा और मशीनों आदि की किस्त-खरीद प्रणाली का बड़े पैमाने पर विस्तार होता जाएगा, वैसे-वैसे राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम के सहायक निगमों की स्थापना आवश्यक होती जाएगी। प्रस्ताव है कि बम्बई, कलकत्ता, मद्रास और दिल्ली में चार ऐसे निगम स्थापित किए जाएं। हो सकता है कि ये निगम ऐसे छोटे उद्योगों के उपयोग के लिए आवश्यक लोहा-इस्पात तथा दूसरा कच्चा माल इकट्ठा करें और सप्लाई करें जिनको सरकार बड़ी यूनिटों के सहायक तथा अन्य ऐसे ही विकास कार्यों के लिए बढ़ावा देना चाहती है। केन्द्रीय सरकार के टेकनीकल सेवा कार्यक्रम के एक भाग के रूप में जूते, शल्य चिकित्सा सम्बन्धी औजार, ताले, सर्वेक्षण और ड्राइंग के औजार और इलेक्ट्रोप्लेटिंग और गाल्वनाइज़िंग जैसे कुछ चुने हुए उद्योगों के लिए विदेशी विशेषज्ञों की सेवाएं प्राप्त की गई हैं।

४५. **औद्योगिक बस्तियां**—दूसरी पंचवर्षीय योजना में काम करने के अनुरूप स्थितियां पैदा करने, उत्पादन के स्तर एक-से बनाए रखने और माल तथा साज-सामान का किफायतशारी से उपयोग करने की दृष्टि से औद्योगिक बस्तियां स्थापित करने के लिए १० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। मुख्य उद्देश्य यह है कि लघु उद्योग की कई यूनिटें सामान्य सेवाओं और अन्य सुविधाओं, जैसे अच्छा स्थान, बिजली, पानी, गैस, भाप, कम्प्रेस्ड हवा, रेल साईडिंग और वाच एण्ड वार्ड इत्यादि के फायदे उठा सकें। कुछ यूनिटें एक-दूसरे के नजदीक स्थित होने की वजह से दूसरों की सेवाओं और माल का लाभ अधिक आसानी से उठा सकेंगी। इस प्रकार वे अन्योन्याश्रित और पूरक बन सकेंगी। दो प्रकार की औद्योगिक बस्तियां स्थापित किए जाने की आशा है: एक तो बड़ी बस्तियां जिन पर लागत ४० से ५० लाख रुपए तक और दूसरे, छोटी बस्तियां जिन पर २० से २५ लाख रुपए तक आएगी। प्रस्ताव यह है कि इनके निर्माण और प्रबन्ध की सारी जिम्मेदारी राज्य सरकारों पर हो और केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों को इन बस्तियों की पूरी लागत कर्ज के रूप में दे। राज्य सरकारें इनका संचालन निगमों अथवा ऐसी एजेंसियों द्वारा करेंगी जिन्हें वे स्थापित करना चाहें। इन बस्तियों की जमीनें औद्योगिक यूनिटों को सीधे बेच दी जाएंगी या किस्त-खरीद शर्तों पर दे दी जाएंगी। कहीं-कहीं इमारतें बनाकर अथवा किराया चुकाते-चुकाते मल्कियत प्राप्त करने के आधार पर दे दी जाएंगी अथवा अगर जरूरी हुआ तो सीधे बेच दी जाएंगी। राजकोट, दिल्ली, मद्रास, पश्चिम बंगाल, मैसूर, तिरुवांकुर-कोचीन और उत्तर प्रदेश के लिए १० ऐसी बड़ी औद्योगिक बस्तियां बनाने की स्वीकृति दी जा चुकी हैं। लघु उद्योग बस्तियों के लिए फिलहाल आठ क्षेत्र चुने गए हैं।

ग्राम और लघु उद्योग समिति ने यह मत प्रकट किया था कि औद्योगिक बस्तियां कुछ ऐसे स्थानों पर होनी चाहिएं जहां कि वे नागरिक केन्द्रों में और अधिक आबादी बढ़ाने में योग न दें। इन बस्तियों, विशेषकर छोटी बस्तियों के स्थानों का निर्णय करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि उनका विकास निश्चित रूप से अपेक्षाकृत छोटे कस्बों के निकट ही हो।

४६. **राज्यीय योजनाओं के अन्तर्गत छोटी योजनाएं**—केन्द्र की टेकनीकल सेवा योजनाएं और औद्योगिक बस्तियों की योजनाएं छोटे पैमाने के उद्योगों की विकास गति और उनकी दिशा पर प्रभाव अवश्य डालेंगी, परन्तु इन उद्योगों के विकास का स्वरूप राज्यों में बनाई

जाने वाली और चलाई जाने वाली विभिन्न योजनाओं की गति से निर्धारित होगा। राज्यों की योजनाएं मोटे तौर पर चार प्रकार की हैं, जैसे—

(क) टेकनीकल सेवा और खोज योजनाएं, उदाहरणार्थ प्रशिक्षण एवं उत्पादन या प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन केन्द्र और पोलीटेकनीक विद्यालय;

(ख) विभागों द्वारा शुरू की हुई प्रारम्भिक योजनाएं, जिन्हें औद्योगिक सहकारी संस्थाओं या निजी उद्यमों में बदल दिया जाएगा;

(ग) वाणिज्य से सम्बन्धित उत्पादन योजनाएं और उद्योगों को राजकीय सहायता अधिनियम के आधीन निजी कम्पनियों को कर्जे; और

(घ) बिजली देने की योजना।

४७. राज्यों के प्रशिक्षण और टेकनीकल सेवा के कार्यक्रम, केन्द्र के उस कार्यक्रम के परिपूरक होंगे जिसको लघु उद्योग सेवा संस्थान पूरा करेंगे। इस मामले तथा विकास के अन्य क्रिया-कलाप में और लघु उद्योग सेवा संस्थानों और राज्यों के उद्योग विभागों के बीच समन्वय स्थापित करने की आवश्यकता मानी जा चुकी है और उन दोनों कार्यों के विशिष्ट क्षेत्र तथा अपने कार्यों में समन्वय लाने की रीति निर्धारित करने के लिए भी प्रयत्न किए जा रहे हैं। ये संस्थान मूलतः टेकनीकल सेवा एजेंसियों के रूप में काम करेंगे और राज्यों के उद्योग विभाग उद्योग शुरू करने, उद्योगों के लिए वित्तीय तथा अन्य प्रकार की आवश्यक सहायता प्राप्त करने, औद्योगिक सहकारी संस्थाओं का संगठन करने इत्यादि से सम्बन्ध रखने वाले मामलों को निपटाएंगे। केन्द्रीय सरकार की प्रारम्भिक योजनाओं, जैसे नमूने के कारखाने, टेकनीकल विशेषज्ञों की सेवाओं का प्रबन्ध करना और भिन्न-भिन्न प्रदेशों के लिए उपयुक्त उद्योगों की सूचियां तैयार करना आदि मामलों में सलाह-मशविरा किया जाएगा। लघु उद्योग विकास आयुक्त के दफ्तर ने कुछ उद्योगों के लिए नमूने की योजनाएं तैयार की हैं।

४८. भिन्न-भिन्न लघु उद्योगों की विकास योजनाएं बनाने का प्रस्ताव करने के पहले मांग, कच्चे माल की प्राप्ति, सम्बन्धित परिस्थितियों तथा अन्य बातों पर ध्यानपूर्वक विचार करना होगा। भिन्न-भिन्न प्रदेशों के लिए उन उद्योगों का चुनना लाभप्रद होगा जिनके लिए वहां उपयुक्त परिस्थितियां विद्यमान हों, और इसीलिए इनको विशेष रूप से बढ़ावा तथा सहायता दी जानी चाहिए। चुने हुए उद्योगों की सूचियों से विभागीय योजनाएं बनाने और गैर-सरकारी लोगों से कर्जे तथा अन्य सहायता पाने के लिए आई अर्जियों पर विचार करने में काफी सहायता मिल सकती है। इन योजनाओं के बनाने के लिए और बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार उनमें संशोधन करने के लिए सर्वेक्षणों की और साथ ही परिश्रम के साथ हर चीज का अन्वेषणात्मक अध्ययन करने की आवश्यकता है। लघु उद्योग बोर्ड ने जांच-पड़ताल का कार्यक्रम पहले से ही शुरू कर दिया है और एक दल ने उत्तरी क्षेत्र के चार उद्योगों, अर्थात खेल-कूद का सामान, सिलाई मशीनें और पुर्जे साइकिलें और पुर्जे, चमड़े के जूते, और एक अखिल भारतीय उद्योग, अर्थात उत्तरी क्षेत्र के लिए स्वचल बैटरियों पर अपनी रिपोर्ट पूरी कर ली है। इस प्रकार के दल पूर्वी, दक्षिणी तथा पश्चिमी क्षेत्रों के लिए भी काम कर रहे हैं। इन अध्ययनों के पूरे होने तक राज्य के उद्योग विभाग अपने चुनाव और सूझ के आधार पर स्वयं ही उद्योगों की सूचियां फिलहाल बना सकते हैं ताकि इस क्षेत्र में विकास के लिए निश्चित मात्रा में दिशा-संकेत तथा मार्ग-दर्शन किया जा सके।

रेशम कीट पालन :

४९. रेशम कीट पालन उद्योग में रोजगार प्रदान करने की बहुत सम्भावनाएं हैं और इससे देहात के बहुत-से कुटुम्बों को पूरक काम-धंधा मिलता है। चूंकि रेशमी कपड़ा उद्योग को अन्य वस्त्र उद्योगों से होड़ लेनी है, इसलिए इस उद्योग में विस्तार तथा स्थायित्व तभी आ सकेगा जब उसकी किस्म में उन्नति हो तथा लागत कम हो। शहतूती रेशम और गैर-शहतूती रेशम दोनों के सुधार और विकास की योजनाएं पहली योजना की अवधि में हो चल रही हैं। लेकिन दूसरी योजना में हर दिशा में व्यापक प्रयत्न किए जाएंगे। इस कार्यक्रम का अधिकांश राज्यों में कार्यान्वित होगा, केन्द्रीय योजनाएं समन्वय और अखिल भारतीय अनुसंधान केन्द्रों तक सीमित रहेंगी। शहतूती रेशम के सम्बन्ध में विकास कार्यक्रम में एक महत्वपूर्ण बात यह है कि बरसाती और सिंचाई वाले दोनों प्रकार के इलाकों में शहतूत के वर्तमान पेड़ों में कलमें बांधकर काफी मात्रा में पत्ती पैदा करके, अधिक पत्तियां देने वाले शहतूतों की नई-नई किस्में पैदा करके और खेती के तरीकों, खाद आदि में सुधार करके शहतूत की पत्तियों की लागत घटाई जाएगी। शहतूत और कोओं में सुधार लाने में इन तथा अन्य उपायों के साथ-साथ रेशम लिपटाई के आधुनिकीकरण, देशी चरखों के साथ अच्छी चिलमचियां लगाने और लिपटाई यंत्रों (फिलेचर्स) को भी समुन्नत किया जाएगा, देहाती चरखों की जगह समुन्नत चिलमचियों का चलन कराया जाएगा और चिलमचियों को अनेक तारों वाली चिलमचियों में बदलने और केन्द्रीय तापन प्रणाली और प्रशीतक कोष्ठों का चलन करने इत्यादि के लिए भी उपाय किए जाएंगे। बटे रेशम उद्योग में निकलने वाले उप-उत्पादनों का उपयोग किया जाना लिपटाई उद्योग के हित में बड़ा आवश्यक है। बटे रेशम उद्योग को फिर से जमाने और उसके विकास के लिए भी प्रयत्न किए जाएंगे। पहली और दूसरी अवस्थाओं के कीड़ों को साथ-साथ जुटाने के लिए प्रयोग के रूप में सहकारी संस्थाएं स्थापित की जाएंगी और कोओं का परीक्षण और उनका श्रेणी-विभाजन किया जाएगा, साथ ही वास्तविक उपज के आधार पर कोओं के दाम अदा करने की रीति चलाई जाएगी। कलकत्ता, बंगलौर और बरहामपुर स्टेशन के अनुकूलन गृहों पर अधिक काम किया जाएगा। राज्यों के रेशम कीट पालन विभागों के कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए दो प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किए जाएंगे।

जहां तक गैर-शहतूती रेशम का सवाल है, विकास कार्यक्रम में बागान और एंडी, मूंगा और टसर के मूल बीज के कोओं के उत्पादन में सुधार की व्यवस्था की गई है। शहतूती रेशम उद्योग की ही भांति बीज की सप्लाई का संगठन, कताई और लिपटाई क्रिया में सुधार, हाट-व्यवस्था, प्रशिक्षण और खोज कार्य आदि भी किए जाएंगे।

नारियल जटा उद्योग :

५०. इस उद्योग की दो मुख्य शाखाएं हैं : छिलके से सूत तैयार करना और नारियल के सूत से चटाइयां, मैटिंग, दरियां और कम्बल जैसी चीजें बनाना। दूसरी योजना के विकास कार्यक्रम का उद्देश्य मुख्य रूप से इस उद्योग की एक प्रमुख समस्या, अर्थात सहकारी संस्थाएं बनाकर उत्पादकों की स्थिति सुधारने की समस्या को हल करना होगा। छिलकों को इकट्ठा करने और उनको प्राथमिक सहकारी संस्थाओं को बांट देने के लिए ठोंडू (छिलका) सहकारी संस्थाओं का संगठन किया जाएगा। छिलके भिगोने के लिए, और भिगोए हुए छिलकों को नारियल का सूत तैयार करने के लिए, सदस्यों में वितरण के लिए तथा सूत के संग्रह के लिए प्राथमिक सहकारी

संस्थाओं का संगठन किया जाएगा। प्राथमिक संस्थाओं से आए हुए सूत की बिक्री के लिए नारियल जटा हाट-व्यवस्था संस्थाएं भी बनाई जाएंगी। पहली योजना में सहकारी संगठन की दिशा में अच्छी शुरुआत हो चुकी है और दूसरी योजना के लिए काफी बड़ा कार्यक्रम बनाया गया है। प्राथमिक संस्थाओं का पर्यवेक्षण करने और उन पर नियंत्रण रखने के लिए संघों की स्थापना की जाएगी। सहकारी संस्थाओं को उनके स्थापन व्यय के लिए अनुदान और कार्यचालन पूंजी सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कर्ज दिए जाएंगे।

नारियल जटा के सामान के निर्माण संबंधी विकास कार्यक्रम का मुख्य काम है कुछ छोटी फैक्टरियों और अलग-अलग निर्माताओं की चटाई और मैटिंग सहकारी संस्थाएं बनाना तथा केन्द्रीय नारियल जटा उत्पादन हाट-व्यवस्था संस्थाओं की स्थापना करना। नारियल जटा की मशीनों द्वारा बुनाई किए जाने पर प्रयोग किए जाते रहेंगे और उनका आगे भी विकास किया जाएगा, और प्रस्ताव है कि एक केन्द्रीय नारियल जटा अनुसंधान संस्था और एक प्रारम्भिक संयंत्र की भी स्थापना की जाए। विदेशों में प्रदर्शन कक्षों और माल गृहों की स्थापना करके तथा दूसरे देशों में व्यापारिक शिष्टमंडल भेजकर नारियल और उसके उत्पादनों की विदेशों में और अधिक बिक्री की जाएगी।

प्रशासन, प्रशिक्षण और खोज कार्य

५१. ग्राम और लघु उद्योगों के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से इन कार्यों को उच्च प्राथमिकता दी जाएगी : राज्य के उद्योग विभागों के मुख्यालयों और क्षेत्र दोनों जगहों में वृद्धि की जाएगी, क्षेत्र कर्मचारियों और कारीगरों का प्रशिक्षण दिया जाएगा, कारीगरों की सहकारी संस्थाएं बनाई जाएंगी और उद्योगों के उत्पादनों की हाट-व्यवस्था के लिए उचित प्रबन्ध किया जाएगा। उद्योग विभागों की वृद्धि के लिए योजना में 'सामान्य योजनाओं' की व्यवस्था रखी गई है। छोटे पैमाने के उद्योगों में लगे हुए कर्मचारियों की तनख्वाहों और भत्तों के लिए १९५५-५६ से लेकर तीन साल तक कुल खर्च का ५० प्रतिशत देना शुरू कर दिया है। क्षेत्र स्तर पर अर्थात जिला उद्योग और उससे नीचे के कर्मचारियों के सम्बन्ध में इस बात को तरजीह दी जाएगी कि समस्त ग्राम समूह और लघु उद्योगों के लिए एक ही कर्मचारी वर्ग हो।

ग्राम और लघु उद्योगों के विकास सम्बन्धी संगठन का अधिकांश काम राज्यों में ही होता है। हर राज्य में ग्राम और लघु उद्योगों के कार्यक्रम को सुव्यवस्थित संगठनों द्वारा कार्यान्वित किया जाना है। इस संगठन में टेकनीकल और विकास स्तरों के लिए तथा सहकारी एजेंसियों के सहयोग वाले कारखानों के लिए काफी कर्मचारी होंगे। पर्याप्त सलाह और पथ-प्रदर्शन के अलावा प्रत्येक राज्य के संगठन कार्य की मोटी-मोटी दो श्रेणियां हैं : (क) कारीगरों और छोटे उद्यमकर्ताओं के सहयोग से नागरिक क्षेत्रों या विकसित केन्द्रों के काम, और (ख) रोजगार की कमी को दूर करने के लिए ग्राम विकास कार्यक्रमों के साथ काम। इन दोनों के लिए ऐसे प्रशिक्षण विकास कार्यकर्ताओं की जरूरत है जो एक तो विशेषज्ञों से निदेश प्राप्त कर सकें, दूसरे, संख्या में इतने पर्याप्त हों कि एक-एक कारीगर और सहकारी संस्था तक पहुंचकर उनको आवश्यक सहायता दे सकें। थोड़े समय में कारीगरों के संगठन का काम सहकारी संस्थाओं के हाथ में आ जाएगा और पदाधिकारियों का अभी जो इतना अधिक योग है वह भी धीरे-धीरे खत्म होता जाएगा, लेकिन यह स्थिति लाने के लिए बहुत-सा रचनात्मक कार्य करना होगा।

कर्वे समिति ने विकेन्द्रित क्षेत्र में कामों, नीति और वित्त के बीच समन्वय स्थापित करने की आवश्यकता पर जोर दिया था। इस समिति ने यह भी सिफारिश की थी कि केन्द्र में ग्राम और लघु उद्योगों के लिए एक मंत्रालय तथा अखिल भारतीय बोर्डों के अध्यक्षों की एक समन्वय समिति बनाई जाए।

५२. दूसरी योजना के लिए अखिल भारतीय बोर्डों और राज्य सरकारों ने अपने प्रस्तावों में प्रशिक्षण तथा अनुसंधान की अनेक योजनाएं रखी हैं। हथकरघा उद्योग में जुलाहों को उत्पादन की समुन्नत टेकनीकों का प्रशिक्षण देने के लिए केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। देशी रंगों पर अनुसंधान करने की भी व्यवस्था की गई है। खादी और ग्राम उद्योगों के लिए एक सुगठित प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाया गया है जिसमें ४ केन्द्रीय संस्थाएं और २० प्रादेशिक विद्यालय तथा साथ ही भिन्न-भिन्न ग्रामोद्योगों का सविस्तर प्रशिक्षण देने वाली अनेक प्रशिक्षण संस्थाएं होंगी। अम्बर चरखा कार्यक्रम की शुरुआत १९५५-५६ में तभी हो गई थी जब प्रशिक्षण और खोज कार्य के लिए ३० लाख रुपया स्वीकृत किया गया था। ग्रामोद्योग में खोज कार्य के लिए एक केन्द्रीय टेकनोलौजिकल संस्था वर्धा में खोली गई है। दस्तकारियों के प्रशिक्षण और खोज कार्यक्रम में ये बातें शामिल हैं :—केन्द्रीय दस्तकारी विकास केन्द्र की स्थापना, टेकनीकल खोज कार्य संस्थाओं को दस्तकारी की टेकनीकों पर विशिष्ट खोज कार्य करने के लिए सहायता, वर्तमान प्रशिक्षण कक्षाओं को विस्तार केन्द्रों में बदलना और नए केन्द्रों की स्थापना तथा प्रशिक्षण के लिए काम करने वाले कारीगरों के लिए वजीफे देना। लघु उद्योगों के लिए प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन और प्रशिक्षण एवं उत्पादन केन्द्र अधिकांश राज्यों में खोले जाएंगे। बहुत-से राज्यों ने भिन्न-भिन्न उद्योगों में प्रशिक्षण देने के लिए पोलीटेकनीक विद्यालय खोलने के प्रस्ताव तैयार किये हैं। ये पोलीटेकनीक विद्यालय लघु उद्योग सेवा संस्थानों और आदर्श और चल कारखानों के अलावा होंगे। रेशम कीट पालन के लिए २ प्रशिक्षण संस्थानों और प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना के अलावा प्रस्ताव यह है कि उच्चतर प्रशिक्षण के लिए टेकनीकल कर्मचारियों को विदेशों में भी भेजा जाए। रेशम कीट पालन में अनुसंधान की सुविधाएं बरहामपुर और मद्रास की अनुसंधान संस्थाओं में उनका विस्तार करके प्रदान की जाएंगी। नारियल जटा उद्योग के कार्यक्रम में ये कार्य शामिल हैं : बम्बई में ३ प्रशिक्षण स्कूलों की स्थापना, तिरुवांकुर-कोचीन में एक केन्द्रीय अनुसंधानशाला और उसकी एक अनुसंधान शाखा की कलकत्ता में स्थापना तथा मशीनों द्वारा नारियल जटा की बुनाई करने के लिए प्रारम्भिक संयंत्रों की संस्थापना। औद्योगिक सहकारी संस्थाओं में कर्मचारियों को जो प्रशिक्षण दिया जाएगा वह सहकारी प्रशिक्षण की केन्द्रीय समिति के निदेशन में संगठित किए जाने वाले प्रशिक्षण के एक भाग के रूप में होगा। सामुदायिक योजना प्रशासन ने भी सामुदायिक योजना क्षेत्रों के लिए अनेक खण्ड विकास अफसरों (उद्योग विषयक) के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया है।

अध्याय २१

परिवहन

विषय-प्रवेश

आर्थिक विकास की किसी भी योजना की सफलता के लिए, जिसमें द्रुतगति से औद्योगीकरण पर ध्यान दिया गया हो, परिवहन और संचार की सुविकसित और समर्थ व्यवस्था बहुत जरूरी है। पहले, देश के परिवहन और संचार साधनों का विकास करने में मुख्य विचार, व्यापार और प्रशासन की आवश्यकताओं का रखा जाया करता था। द्वितीय विश्व युद्ध के समय से परिवहन के साधनों का संगठन औद्योगिक विकास की आवश्यकताएं अधिकाधिक पूरी करने की दृष्टि से किया जाने लगा। द्वितीय योजना में इस प्रक्रिया को और भी आगे बढ़ाया जाएगा। इस योजना में परिवहन और संचार साधनों की उन्नति के लिए १,३८५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है, जो योजना के सरकारी भाग के समस्त व्यय का २९ प्रतिशत है। आगे चलकर देश के परिवहन और संचार साधनों पर जो भारी बोझ पड़ने की सम्भावना है, उसका विचार करें तो ऐसा महसूस होता है कि जो राशि इस कार्य के लिए अब नियत की गई है उससे अधिक का व्यय किया जाता तो राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था को और भी लाभ हो सकता था। परन्तु उपलब्ध साधनों पर अन्य बड़ी-बड़ी आवश्यकताओं का भी दबाव था, इसलिए इस राशि को सीमित कर देना पड़ा। परिवहन और संचार के लिए रखी गई १,३८५ करोड़ रुपए की समस्त राशि में से, ९०० करोड़ रुपए रेलों पर, २६६ करोड़ रुपए सड़कों, सड़क परिवहन और पर्यटन पर, १०० करोड़ रुपए जहाजरानी, बन्दरों व बन्दरगाहों, प्रकाश-स्तम्भों और आन्तरिक जल मार्गों पर, ४३ करोड़ रुपए नागरिक वायु परिवहन पर, और ७६ करोड़ रुपए संचार साधनों तथा प्रसारण पर व्यय किए जाएंगे।

२. प्रथम पंचवर्षीय योजना में परिवहन के क्षेत्र में प्रधान कार्य उन स्थायी परिवहन साधनों के यथाशक्ति पुनस्संस्थापन करने का था जिन पर विगत दस वर्षों में काम का अभूतपूर्व दबाव पड़ा था। रेलों के पुनस्संस्थापन का कार्य विशेष रूप से भारी था, परन्तु जहाजों, बन्दरों, बन्दरगाहों, प्रकाश-स्तम्भों और नागरिक वायु परिवहन पर भी बड़ी-बड़ी राशियां व्यय करनी पड़ी थीं। प्रथम योजना के समय ज्यों-ज्यों कृषि और उद्योगों का उत्पादन बढ़ता गया त्यों-त्यों, विशेषत: योजना के तृतीय वर्ष से, परिवहन के साधनों पर बढ़ता हुआ दबाव अनुभव होने लगा। इसका सामना करने के लिए रेलों, सड़कों, जहाजों, और नदी तथा वायु मार्गों द्वारा परिवहन के लिए अतिरिक्त धन जुटाया गया और इनके कार्यक्रमों को अधिक बढ़ा दिया गया। रेलों के लिए इंजन और डिब्बे आदि प्राप्त करने के कार्यक्रम की गति तीव्र करके, रेल मार्ग के अधिक कठिन भागों ने परिवहन के सब साधनों का समन्वित विकास करने के प्रश्नों पर विचार किया। सड़कों के परिवहन पर उसने विशेष ध्यान दिया, क्योंकि कुछ समय से वह बढ़ती हुई आवश्यकताएं पूरी करने में सफल नहीं हो रहा था। नए लाइसेंस देने की नीति उदार कर दी गई, और योजना के निजी भाग में जिन कारणों से सड़क परिवहन का विकास होने में रुकावटें पड़ रही थीं, उन्हें दूर करने के उपाय किए गए। भारतीय जहाजरानी की सहायता के लिए भी कदम उठाए गए हैं।

३. पुनर्निर्माण का कार्य अभी पूरा नहीं हुआ है, फिर भी द्वितीय योजना में देश के परिवहन साधनों का प्रभूत विस्तार करने का कार्यक्रम है, विशेषत: रेलों का, क्योंकि यातायात का सर्वाधिक भार उन पर ही रहेगा । रेल विस्तार का कार्य औद्योगिक विकास के, विशेषत: लोहा, कोयला और सीमेंट जैसे बड़े उद्योगों के कार्यक्रम के साथ समन्वित करके करना होगा । द्वितीय योजना में परिवहन के विभिन्न साधनों में अधिक अच्छा तालमेल रखने का भी ध्यान रखा जाएगा । यह भी विचार है कि योजना के सरकारी विभाग में सड़क परिवहन के कार्यों में रेलों से सहायता ली जाए । एक ओर रेलों और समुद्र-तट की जहाजरानी में और दूसरी ओर रेलों और आन्तरिक जल मार्गों के परिवहन में समन्वय की समस्याओं पर भी ध्यान दिया जा रहा है । इस प्रकार योजना का लक्ष्य यह है कि देश के सभी महत्वपूर्ण परिवहन साधनों का यथासम्भव अधिकतम विकास हो जाए, और उनमें उचित समन्वय तथा सहयोग रहे, जिससे जो साधन जिस कार्य को करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है उसे वही कार्य सौंपा जा सके । सारांश यह है कि आगामी पांच वर्षों में सभी परिवहन साधनों पर भारी बोझ पड़ने की सम्भावना है । इसलिए विचार है कि परिवहन और संचार के कार्यक्रमों की पर्यालोचना प्रतिवर्ष की जाती रहे, जिससे कि जहां कहीं आवश्यकता हो वहां अतिरिक्त उपाय करके मार्ग की बाधाओं को दूर कर दिया जाए और योजना के अन्य कार्यक्रमों की पूर्ति में विघ्न न पड़े ।

१. रेलें

४. भारतीय रेलों में सब मिलाकर लगभग ९७४ करोड़ रुपए की पूंजी लगी हुई है, और यह देश का सबसे बड़ा राष्ट्रीय उद्योग है । इसमें सन्देह नहीं कि यह राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के प्रधान स्तम्भों में से है । रेलें जो सेवा प्रदान कर रही हैं उसका सुरक्षित, कुशल तथा कम खर्चीला होना आवश्यक है । रेलों के लिए यह भी आवश्यक है कि वे अपना कार्य करते हुए नवीनतम वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक प्रगति से लाभ उठाती रहें । व्यय घटाने और कुशलता बढ़ाने के लिए उन्हें डीजल तेल और बिजली की ताकत का, उन्नत प्रकार के भाप के इंजनों का, माल ढोने और यात्रियों के बैठने के बढ़िया डिब्बों का, और सिगनल देने तथा दूर संचार के लिए नए सुधरे हुए यन्त्रों का अधिकाधिक मात्रा में प्रयोग करना होगा । द्वितीय योजना में इन सब दिशाओं में सुधार किया जाएगा और उसका फल यह होगा कि रेलगाड़ियां अधिक लम्बी, भारी और आवश्यकतानुसार अधिक द्रुतगामी की जा सकेंगी । इससे बिछी हुई लाइनों की सामर्थ्य और इंजनों व डिब्बों आदि का पूरा उपयोग हो सकेगा । देश के जिन भागों में अभी तक रेल अच्छी तरह नहीं आती जाती है उनमें से कइयों में अपने साधनों के अनुसार नई लाइनें भी बनाई जाएंगी ।

प्रथम योजना में हुई प्रगति

५. प्रथम पंचवर्षीय योजना के पहले एक दशक से भी अधिक समय से रेलों पर काम का अत्यधिक भारी बोझ पड़ता रहा था । इसलिए प्रथम योजना का प्रधान लक्ष्य इंजनों व डिब्बों और स्थायी साधनों का पुनस्संस्थापन तथा नवीकरण करना था । इस योजना के अन्य लक्ष्य थे : उत्पादन और विकास के कार्यक्रमों की पूर्ति के कारण जो नई आवश्यकताएं हों उनको पूरा करने के लिए यथासम्भव नए साधन मुहैया करना, यात्रियों को अधिक सुख-सुविधाएं पहुंचाना और रेल कर्मचारियों के लिए अच्छे मकानों तथा कल्याण कार्यों का प्रबन्ध करना । प्रथम योजना काल में इन सब लक्ष्यों को पूरा करने का निरन्तर प्रयत्न किया जाता रहा । इस योजना के पांचों वर्षों में रेलों के सब कार्यक्रमों पर व्यय करने के लिए पहले ४०० करोड़ रुपए रखे गए थे । इनमें, १५०

करोड़ रुपए मूल्यह्रास के लिए भी शामिल थे। परन्तु अब ख्याल है कि पांचों वर्षों में मिलकर ४३२ करोड़ रुपया व्यय हो गया होगा। इस अतिरिक्त व्यय का प्रधान कारण यह है कि अन्तिम दो या तीन वर्षों में इंजनों और डिब्बों का कार्यक्रम बढ़ा दिया गया था। इंजन और डिब्बे अधिक मंगाने के साथ-साथ वर्तमान इंजनों और डिब्बों का अधिक अच्छा उपयोग करने और लाइन की सामर्थ्य बढ़ाने के विशेष उपाय करने का फल यह निकला कि रेलें काफी अधिक माल की ढुलाई करने में समर्थ हो गईं—विशेषतः योजना के द्वितीयार्ध में। इस प्रकार १९५३-५४ और १९५४-५५ के बीच रेलों द्वारा ढोए हुए माल की मात्रा, टनों में, लगभग ८ प्रतिशत बढ़ गई, और अन्दाजा है कि योजना के अन्तिम वर्ष में यह मात्रा कोई ९ प्रतिशत और भी बढ़ गई होगी। परन्तु ढोए जाने वाले माल का परिमाण, उसे ढोने की रेलों की सामर्थ्य की अपेक्षा, अधिक द्रुत गति से बढ़ता रहा। रेलों पर लदान का दैनिक औसत अवश्य बढ़ गया, परन्तु अनलदे माल का लेखा उनकी अपेक्षा अधिक तेजी से बढ़ा।

६. प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान में विभिन्न खातों में जो व्यय किया गया उसका विवरण निम्नलिखित है :—

(करोड़ रुपए)

पुनस्संस्थापन और वृद्धि	योजना में रखी गई राशि	समस्त व्यय
१. इंजन, डिब्बे और यन्त्र आदि ...	२०७·९६	२५३·४८
२. लाइनें और पुल ...	७०·४७	६४·४१
३. संरचना और इंजीनियरी के अन्य काम जिनमें सवारी के डिब्बों का कारखाना, चित्तरंजन कारखाना, गंगा का पुल, कोयला खानें और बन्दर आदि शामिल हैं	४५·९०	४९·९९
४. उखाड़ी हुई लाइनों का पुनर्निर्माण, नई लाइनों का निर्माण और गाड़ियों को बिजली से चलाने की तैयारी	३४·१८	३३·२०
५. यात्रियों के लिए सुख-सुविधाएं	१५·००	१३·२९
६. कर्मचारियों के मकान और कल्याण कार्य ...	२४·०९	२०·५२
७. विविध ...	२·४०	–२·७५*
योग	४००·००	४३२·०७

७. **इंजन और डिब्बे**—प्रथम पंचवर्षीय योजना शुरू होने के समय भारतीय रेलों के ८,२०९ इंजन, १९,२२५ सवारी डिब्बे और २२२,४४१ माल डिब्बे चल रहे थे। इनमें से २,११२ इंजन, ७,०११ सवारी डिब्बे और ३९,५८४ माल डिब्बे इतने पुराने हो चुके थे कि उन्हें बदल देने की आवश्यकता थी। योजना में १,०३८ इंजन, ५,६७४ सवारी डिब्बे तथा ४९,१४३ माल डिब्बे उपलब्ध कराने का कार्यक्रम रखा गया था। परन्तु बाद को इंजन और

*इस घटती का कारण यह है कि पहले एकत्र सामान में कमी हो गई और जो सामान नया दिया गया उसे और अन्य वसूलियों को आय-खाते में जमा कर दिया गया।

माल डिब्बे और अधिक मंगाने का निश्चय कर लिया गया। आशा है कि प्रथम योजना की समाप्ति के समय तक नीचे उल्लिखित सामान आ चुका होगा :

	भारत में निर्मित	विदेशों से मंगाया	योग
इंजन	४९६	१,०९३	१,५८९
सवारी डिब्बे	४३,५१	४८६	४,८३७
माल डिब्बे	४१,१९२	२०,५२१	६१,७१३

योजना के समय जो नया सामान आया उसका कुछ भाग उस बहुत पुराने सामान को बदलने के काम आ गया जो कि आगे काम नहीं दे सकता था। प्रथम योजना की समाप्ति पर ९,२९२ इंजन, २३,७७९ सवारी डिब्बे, और २९६,०४९ माल डिब्बे रेलवे लाइनों पर चल रहे होंगे। इनमें से २,८१३ इंजनों, ६,३०५ सवारी डब्बों और ४९,५६८ माल डब्बों की आयु पूरी होकर उन्हें बदल डालने की आवश्यकता होगी। इस प्रकार हाल के वर्षो में इतना अधिक नया माल खरीदने पर भी पुराना माल बडी मात्रा में बदल देने की आवश्यकता रहेगी, और उसे द्वितीय योजना काल में पूरा करना पड़ेगा। इंजनों और डिब्बों के मामले में और अधिक स्वावलम्बी बनने के लिए बहुत प्रयत्न किया गया है। स्वदेश में १९५१-५२ में ३,७०७ माल डिब्बे बने थे, और १९५५-५६ में १३,५२६ बने। १९५१-५२ में सवारी डिब्बे ९७३ बने और १९५५-५६ में १,२९०। चित्तरंजन के इंजन कारखाने ने प्रथम योजना के समय में ३३७ इंजन बनाए, जबकि पहले यह लक्ष्य २९८ रखा गया था। मीटर नाप की छोटी लाइन के इंजन, टाटा लोकोमोटिव एण्ड इंजिनीयरिंग कम्पनी ने १९५१-५२ में केवल १० बनाए थे, १९५५-५६ में ५० बनाए। पेराम्बूर (मद्रास) की इन्टीग्रल कोच फैक्टरी योजना काल में ही स्थापित हुई और अक्तूबर १९५५ से उत्पादन करने लगी।

८. **नई लाइनें, उखाड़ी हुई लाइनों का दोबारा बिछाया जाना और गाड़ियों का बिजली से संचालन**—योजना काल में युद्ध के समय उखाड़ी हुई ४३० मील लम्बी लाइनें दोबारा बिछाई गईं; ३८० मील लम्बी नई लाइनें बनाई गईं, और ४६ मील लम्बी लाइनें सकरी लाइनों (छोटी लाइनों) में बदली गईं। प्रथम योजना की समाप्ति के समय ४५४ मील लम्बी नई लाइनें बन रही थीं और ५२ मील सकरी लाइनों को बड़ी लाइनों में बदला जा रहा था। कलकत्ता के उपनगरीय क्षेत्र में बिजली से गाड़ियां चलाने के लिए बिजली लगवाने का काम प्रथम योजना के समय आरम्भ कर दिया गया था और उसका प्रथम चरण १९५८ तक पूरा हो जाने की आशा है।

पुरानी बेकार लाइनों को बदलने का काम माल की कमी के कारण मन्द गति से ही किया जा सका है। पटरियों की खराबी के कारण जिन रास्तों पर गाड़ियां धीमी चाल से चलानी पड़ती थीं, उनकी लम्बाई १९५०-५१ में ३,००० मील थी। योजना की समाप्ति पर वह घटकर १,७८४ मील रह गया था।

९. **संरचना और इंजीनियरिंग के काम**—हाल के बरसों में लाइनों की सामर्थ्य बढ़ाने पर विशेष ध्यान दिया गया है। इस कार्यक्रम में प्राथमिकता लाइन के उन भागों को दी गई जहां आवश्यकता उपलब्ध सामर्थ्य से अधिक थी और सामर्थ्य बढ़ाने के लिए दीर्घकालिक और अल्पकालिक दोनों प्रकार के उपायों का अवलम्बन किया गया। इन उपायों में अधिक लम्बी माल गाड़ियां चला सकने के लिए क्रांसिंग लूप को लम्बा कर देने, क्रांसिंग लूप और स्टेशनों की संख्या बढ़ा देने, जंक्शन स्टेशनों के यार्डों में अधिक सुविधाएं प्रदान कर देने, एक लाइन से दूसरी लाइन को भेजने वाले यार्डों का विस्तार करने और

सिगनल व्यवस्था सुधारने के उपाय भी सम्मिलित थे। इन उपायों का फल यह निकला है कि रेलवे लाइन के कई हिस्सों पर काम की सामर्थ्य बढ़ गई है। उनमें से उल्लेखनीय ये हैं :— मद्रास-विजयवाड़ा, खड़गपुर-वाल्टेयर, झाझा-मुगल सराय, इलाहाबाद-कानपुर, रतलाम-गोधरा भुसावल-सूरत, अहमदाबाद-कालोल और मीनी-गोम्हड़िया। एक गाड़ी से निकालकर दूसरी गाड़ी में माल लादने की सहूलियत, मण्डुआडीह, सवाई माधोपुर, साबरमती, वीरगांव, घोड़पुरी, गण्टकल, बंगलौर और आर्कोणम स्टेशनों पर बढ़ा दी गई है। कई बड़े स्टेशनों के मार्गों का प्रबन्ध नए ढंग से कर दिया गया है। इनमें विजयवाड़ा और रतलाम का नाम उल्लेखनीय है।

द्वितीय योजना के लक्ष्य

१०. रेलों की चल और अचल दोनों प्रकार की सम्पत्ति के पुनर्निर्माण और आधुनिकीकरण का काम द्वितीय योजना के समय भी जारी रखना पड़ेगा, जिससे कि जो सामान पुराना हो जाने पर भी काम में लाया जा रहा है उसका अनुपात घट जाए और लाइन की खराबी के कारण जहां गाड़ियों की चाल पर पाबन्दी लगाई हुई है वहां उसे उठाया जा सके। साथ ही, लाइनों और इंजनों व डिब्बों की सामर्थ्य बढ़ाने की योजना बनानी पड़ेगी, जिससे कि योजना के विभिन्न अंगों की पूर्ति से उत्पादन बढ़ जाने पर रेल द्वारा ढुलाई की जो मांग बढ़ेगी, उसे पूरा किया जा सके। पिछले अध्यायों में बतलाया जा चुका है कि कृषि, कोयले, खनिज, कच्ची धातुओं, लोहे व इस्पात, सीमेंट, रासायनिक खाद, बड़ी और छोटी मशीनों और उपभोग्य वस्तुओं के उत्पादन लक्ष्य क्या-क्या रखे गए हैं। रेलों के विकास की योजना इन लक्ष्यों को ध्यान में रखकर ही बनाई गई है, फिर भी इस पर निरन्तर पुनर्विचार और आवश्यकतानुसार परिवर्तन करते रहना पड़ेगा, जिससे राष्ट्रीय योजना के विभिन्न अंग पूरे हो जाने पर जो नई परिस्थितियां उत्पन्न हों उनके साथ रेलों का मेल रह सके।

११. द्वितीय योजना के उत्पादन लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए अन्दाजा लगाया गया है कि माल की अतिरिक्त ढुलाई निम्न प्रकार करनी पड़ेगी:—

	अतिरिक्त ढुलाई (लाख टनों में)	
कोयला	२००.००	
इस्पात और इस्पात के कारखानों के लिए कच्चा माल	१८०.००	(कच्चे लोहे और इस्पात के उत्पादन में ५० लाख टन वृद्धि होने की सम्भावना है)
सीमेंट	*५०.००	
विशिष्ट वृद्धियों का योग	४३०.००	
विविध ढुलाइयों में वृद्धि, ५ प्रतिशत प्रति वर्ष के हिसाब से, अर्थात ५ वर्षों में २५ प्रतिशत	१७८.००	
योग ...	६०८.००	

*सीमेंट उत्पादन में वृद्धि का लक्ष्य बढ़ा दिया गया है। नए कारखाने के लिए स्थान चुनते समय रेल परिवहन का ध्यान रखना होगा। कुछ सीमेंट की ढुलाई तटवर्ती जहाजरानी और सड़कों के द्वारा भी संभव है।

१९५५-५६ में करीब १२ करोड़ टन माल ढोए जाने की आवश्यकता पड़ेगी। आशा है कि रेलें उसमें से ११.५ करोड़ टन ढो सकेंगी। ५० लाख टन की कमी रह जाएगी। आशा है कि वह भी उन उपायों द्वारा पूरी कर दी जाएगी जिनका अवलम्बन पहले से किया जा रहा है। द्वितीय योजना के अन्त तक अतिरिक्त ढुलाई ६ करोड़ ८ लाख टन बढ़ जाने की सम्भावना है। इस प्रकार १९६०-६१ तक सारी ढुलाई का योग १८ करोड़ ८ लाख टन हो जाएगा। रेलों के विकास के लिए अब तक जो धनराशियां रखी गई हैं उनसे रेलों के यह सब माल ढोने में समर्थ हो सकने की सम्भावना नहीं है। वे माल ढोने की जितनी सुविधा दे सकेंगी, उसमें अन्दाज़न १० प्रतिशत कमी तो इंजनों और डिब्बों में और ५ प्रतिशत लाइनों की सामर्थ्य में रह जाएगी। परन्तु कुछ सहायता उन इंजनों और डिब्बों से मिल जाने की आशा है जो तब तक बदल तो दिए जाएंगे, परन्तु जो शायद तब काम-चलाऊ अवस्था में रहें। इस सारी परिस्थिति पर निरन्तर विचार किया जाता रहेगा, और योजना के अन्य अंगों में विकास की जैसी कुछ स्थिति होगी उसे सामने रखकर रेलों की योजना में आवश्यक परिवर्तन किया जाता रहेगा।

१२. यात्रियों के यातायात में द्वितीय योजना में प्रतिवर्ष ३ प्रतिशत अर्थात पांच वर्षों में १५ प्रतिशत वृद्धि करने की व्यवस्था की गई है। यदि यात्रियों का यातायात वर्तमान गति से ही बढ़ता रहा तो उससे रेलों में भीड़ कम करने में कोई मदद नहीं मिलेगी। द्वितीय योजना के समय माल ढोने की आवश्यकता की पूर्ति का ध्यान अधिक रखना पड़ेगा, इसलिए यात्रियों की भीड़-भाड़ की कठिनाई किसी हद तक सहनी ही पड़ेगी। इस सम्बन्ध में एक सम्भावना यह अवश्य है कि यात्रियों की बहुत बड़ी संख्या सड़क परिवहन का उपयोग करने लगेगी।

१३. कोश सीमित होने के कारण, देश के ऐसे भागों में नई पटरियां बिछाने के लिए योजना में व्यवस्था नहीं है जहां आजकल रेल नहीं जाती। केवल उन्हीं नई पटरियों के लिए योजना में व्यवस्था है जो कि संचालन-कार्यों तथा नए औद्योगिक योजना कार्यों के लिए आवश्यक हैं।

द्वितीय योजना में व्यय

१४. रेलवे मूल्यह्रास कोश में अन्दाज़न २२५ करोड़ रुपए जमा करवाने के अतिरिक्त, द्वितीय योजना में रेलों के विकास पर ९०० करोड़ रुपए व्यय किए जाएंगे। आशा है कि इनमें से १५० करोड़ रुपए तो रेलें ही अपनी आय में से विकास योजनाओं पर व्यय कर सकेंगी, शेष ७५० करोड़ रु० का प्रबन्ध सामान्य राजस्व खाते से करना पड़ेगा। द्वितीय योजना में रेलों के कार्यक्रमों पर जो धन व्यय किया जाएगा, उसके परिमाण का विचार बहुत सावधानीपूर्वक कर लिया गया है। रेलवे मंत्रालय ने विकास की जो रूपरेखा योजना के अन्य भागों के विकास कार्यों को सामने रखकर तैयार की थी, उसके व्यय का परिमाण १,४८० करोड़ रुपए था। पीछे विदेशी मुद्रा की अन्य आवश्यकताओं, इस्पात मिल सकने की अनिश्चित अवस्था, रेलवे योजना की प्राथमिकताओं, और योजना के अन्य भागों के दावों का विचार करके व्यय के उक्त परिमाण को बहुत घटा दिया गया। रेलों की न्यूनतम आर्थिक आवश्यकताओं का निर्णय करते हुए मुख्य ध्यान माल ढोने की बढ़ती हुई आवश्यकताओं का रखा गया है। माल ढोने की बढ़ती हुई आवश्यकता पूरी करने में रेलों की सामर्थ्य बढ़ाने के लिए कार्यक्रम में उपयुक्त परिवर्तन कर दिए गए हैं और यह ध्यान रखा गया है कि पूंजी का विनियोग यथाशक्ति कम करना पड़े। इसी प्रयोजन से यह मान लिया गया कि कुछ लाइनों पर गाड़ियां बिजली की जगह डीज़ल तेल से चलाई जाएं। इसी प्रकार, कुछ चुने हुए भागों में यातायात के चरम सीमा तक पहुंच जाने पर भी सारी लाइन को डबल न करके केवल कुछ हिस्से को डबल किया जाएगा। पुरानी लाइनों को फिर से बनाने और अपनी

आयु बिता चुके हुए इंजनों और डिब्बों को बदल डालने के कार्यक्रम को कम करके सोचा यह गया है कि बदले हुए इंजनों आदि में से जो काम चलाने लायक हों, उनसे काम लिया जाता रहे। इस प्रकार रेलों के लिए जो सीमित धनराशि रखी गई है उससे योजना के लक्ष्य पूरे करने का अधिकतम प्रयोजन सिद्ध किया जा सकेगा। अब रेलों की योजना में, १,६०७ मील लाइन को डबल करने, २६५ मील मीटर नाप की छोटी लाइन को बड़ी लाइन में बदलने, ८२६ मील लम्बी लाइन पर कई भागों में गाड़ियां बिजली से और १,२९३ मील लम्बी लाइन पर डीज़ल से चलाने, ८४२ मील नई लाइन बनाने, ८,००० मील पुरानी लाइन को नया करने, और २,२५८ इंजन, ११३६४ सवारी डिब्बे और १०७,२४७ माल डिब्बे खरीदने के कार्यक्रम हैं। निम्न तालिका में विभिन्न कार्यों के लिए १,१२५ करोड़ रुपए की वितरण व्यवस्था दिखलाई गई है :—

	(करोड़ रु० में)
१. इंजन और डिब्बे	३८०
२. कारखाने, यन्त्र और मशीनें	६५
३. पुरानी लाइनों को नया करना	१००
४. पुलों के कार्य	३३
पुनर्निर्माण	१८
गंगा का पुल	९
नए पुल	६
५. लाइनों की सामर्थ्य बढ़ाने के काम (माल गोदामों के विस्तार को शामिल करके)	१८६
६. सिगनल लगाने और सुरक्षा के काम	२५
७. रेलगाड़ियों का बिजली से संचालन	८०
८. नई तामीरें	६६
९. रेल कर्मचारियों के कल्याण कार्य और मकान	५०
१०. स्टोर्स-डिपो (समान रखने के स्थान)	७
११. ट्रेनिंग स्कूल	३
१२. रेलों का उपयोग करने वालों के लिए सुख-सुविधाएं	१५
१३. अन्य विकास कार्य (इनमें विशाखापत्तनम का बन्दर भी शामिल है)	१५
१४. सड़क परिवहन के संगठनों में रेलों का भाग	१०
१५. स्टोर में सामान	५०
१६. आयात किए हुए इस्पात* के लिए अतिरिक्त धनराशि	४०
योग	१,१२५

१५. रेलों के लिए निश्चित सारी राशि में से ४२५ करोड़ रुपए विदेशी मुद्रा के रूप में व्यय करने पड़ेंगे। किस कार्यक्रम के लिए कितनी विदेशी मुद्रा की आवश्यकता होगी, यह नीचे देखिए :—

	(करोड़ रु० में)
इंजन	८१
डिब्बे आदि अन्य गाड़ियां	८२
अन्य सामान	१२५
इस्पात	१३७
योग	४२५

*यह इस्पात रेलों द्वारा 'समीकरण निधि' से बाहर मंगाया जाएगा

विदेशी मुद्रा की आवश्यकता, बिजली और डीज़ल तेल के इंजनों और विशेष माल डिब्बों आदि खास-खास वस्तुओं के लिए पड़ेगी। प्रयत्न यह किया जाएगा कि इंजन और डिब्बों की अधिकतम आवश्यकताएं यथाशक्ति देश में ही पूरी कर ली जाएं।

१६. **इंजनों और डब्बों का कार्यक्रम**—इंजनों और डिब्बों के लिए जो ३८० करोड़ रुपए रखे गए हैं, उनमें से १८३ करोड़ रुपए विकास पर और १९७ करोड़ रुपए पुनर्निर्माण कार्यक्रम पर व्यय किए जाएंगे। सब मिलाकर २,२५८ इंजन, ११,३६४ सवारी डिब्बे और १०७,२४७ माल डिब्बे लेने का विचार है। नीचे की तालिका में पुनर्निर्माण और विकास की आवश्यकताएं विस्तारपूर्वक पृथक-पृथक दिखलाई गई हैं:—

	इंजन			माल डिब्बे			सवारी डिब्बे		
	बड़ी लाइन	छोटी लाइन	सकरी लाइन	बड़ी लाइन	छोटी लाइन	सकरी लाइन	बड़ी लाइन	छोटी लाइन	सकरी लाइन
विकास	५३३	३७३	...	६६,५७५	१६,८२०		२,१४९	२,७६८	...
पुनर्निर्माण	१,०६२	२०९	८१	१४,८७९	४,९५२	४,०२१	४,३९२	१,४२२	६३३
योग ...	१,५९५	५८२	८१	८१,४५४	२१,७७२	४,०२१	६,५४१	४,१९०	६३३

१७. विचार यह है कि पुनर्निर्माण का कार्यक्रम पूरा करते हुए जिन इंजनों और माल डिब्बों की आयु १९६०-६१ तक ४०-४५ वर्ष हो जाएगी, उन सबको काम में लाया जाता रहे। जिन इंजनों और माल-डिब्बों की आयु ४५ वर्ष से ऊपर हो जाएगी, उनमें से उतनी संख्या में तो चलते ही रहेंगे जितनी संख्या में मार्च १९५६ में चल रहे होंगे। ऐसा करने में पूरी से ऊपर आयु वाले इंजनों और डिब्बों का अनुपात काफी घट जाएगा। यह नीचे की तालिका में दिखाया गया है। पूरी से ऊपर आयु वाले सवारी डिब्बों का अनुपात द्वितीय योजना के अन्त तक घटाते-घटाते लगभग १० प्रतिशत रहने देने का विचार है।

चालू इंजनों और डिब्बों में अधिक आयु वालों का प्रतिशत

३१ मार्च की स्थिति	इंजन		माल डिब्बे		सवारी डिब्बे	
	बड़ी लाइन	छोटी लाइन	बड़ी लाइन	छोटी लाइन	बड़ी लाइन	छोटी लाइन
१९५१	२३·०	३१·०	१३·३	२९·४	२९·५	४५·०
१९५६	३२·५	२६·०	१६·५	१७·२	२४·०	२६·४
१९६१	१६·२	२२·५	६·६	११·९	१०·०	९·५

१८. **कारखाने, संयंत्र और मशीनें**—इंजनों और डिब्बों की संख्या बढ़ जाने पर उन सबकी मरम्मत आदि करने के लिए वर्तमान कारखानों और इंजन घरों में से कइयों में सुधार और विस्तार कर दिया जाएगा और कुछ नए कारखाने भी खोले जाएंगे। योजना का कार्यक्रम यह है कि छः नए कारखाने खोले जाएं, एक नया कारखाना छोटी लाइन के सवारी डिब्बे बनाने के लिए स्थापित किया जाए और बिना जोड़वाले सवारी डिब्बों के कारखाने में एक विभाग डिब्बों की फर्निशिंग का बड़ा

दिया जाए। चित्तरंजन के इंजन बनाने के कारखाने का और भी विस्तार किया जाएगा। इस खाते के लिए रखे गए ६५ करोड़ रुपए इस प्रकार व्यय किए जाएंगे :—

	व्यय करोड़ (रुपए में)
१. वर्तमान कारखानों में सुधार और नए मरम्मत कारखाने ...	२८·५
२. फालतू पुर्जे बनाने के लिए दो नए कारखाने	७·०
३. छोटी लाइन के सवारी डिब्बे का नया कारखाना और बिना जोड़ के सवारी डिब्बों के कारखाने का विस्तार	१०·०
४. चित्तरंजन के इंजन कारखाने का विस्तार	५·०
५. सिविल इंजीनीयरी के कारखाने	६·०
६. इंजन घरों का सुधार	८·५
योग	६५·०

आशा है कि इस कार्यक्रम के पूरा हो चुकने पर इंजनों और डिब्बों की मरम्मत करने की सामर्थ्य में सब मिलाकर वार्षिक वृद्धि इस प्रकार हो जाएगी :—

	वर्तमान सामर्थ्य	प्रस्तावित कार्यक्रम पूरा हो जाने पर सम्भावित सामर्थ्य	वृद्धि का प्रतिशत
१. इंजन			
बड़ी लाइन के	१,८२३	२,३४७	२६
छोटी औरसकरी लाइनों के	१,२३७	२,०५२	६६
२. सवारी डिब्बे			
बड़ी लाइन के	१२,५१४	२२,३६०	७६
छोटी और सकरी लाइनों के	७,३७३	१८,४४३	१५०
३. माल डिब्बे			
बड़ी लाइन के	४८,०१४	६०,३११	८८
छोटी और सकरी लाइनों के	१४,०७७	३४,३७२	१४४

तेल की ढुलाई करने वाले माल डिब्बों और बिजली के इंजनों तथा सवारी डिब्बों की मरम्मत करने और उन्हें नया जैसा बना देने की सामर्थ्य बढ़ा देने का भी विचार है। आशा है कि चित्तरंजन के इंजन कारखाने की उत्पादन सामर्थ्य बढ़कर औसत नाप के ३०० इंजन प्रतिवर्ष बना सकने तक पहुंच जाएगी। पेराम्बूर में स्थित बिना जोड़ के डिब्बे बनाने के कारखाने की सामर्थ्य योजना के प्रारम्भिक काल में २०० डिब्बे प्रतिवर्ष तक पहुंच जाने की आशा है जो अन्ततः बड़ी लाइन के ३५० गैर-फर्निश्ड डिब्बों तक पहुंच जाएगी।

१६. कारखानों का विस्तार और सुधार करने के कार्यक्रम बनाने के अतिरिक्त, उनका अधिकतम उपयोग करने के लिए भी विशेष उपायों पर विचार किया गया है। इनमें उत्पादन का

नियन्त्रण करने के लिए आवश्यक संगठन की स्थापना करना और कारखानों के कुछ हिस्सों में काम की कई पालियां चलाना भी शामिल है। द्वितीय योजना काल में इंजनों, डिब्बों और रेलों के अन्य सामान के लिए आत्म-निर्भर हो जाने का प्रयत्न भी जारी रखा जाएगा। योजना में निजी भाग के उद्योगों का कार्यक्रम तैयार करते हुए इस उद्देश्य को भी ध्यान में रखा गया है। आशा है कि टाटा का इंजन कारखाना अपना उत्पादन १०० इंजन प्रतिवर्ष तक बढ़ा सकेगा। उसे और चित्तरंजन के कारखाने को मिलाकर विस्तार के पश्चात प्रतिवर्ष ४०० इंजन बनाने में समर्थ हो जाना चाहिए। इनमें से ३०० इंजन बड़ी लाइन के और १०० छोटी लाइन के होंगे। सवारी डब्बों का उत्पादन, द्वितीय योजना के अन्त तक, १,२६० प्रतिवर्ष से बढ़कर १,८०० प्रति वर्ष, और माल डिब्बों का १३,५२६ प्रति वर्ष से बढ़कर २५,००० प्रतिवर्ष हो जाने की आशा है। रेलों के अन्य सामान और इंजनों और डिब्बों के निर्माण की देश की सामर्थ्य का और अधिक विकास करने के सुझावों पर एक विशेष समिति विचार कर रही है।

२०. **लाइनों का नवीकरण**—रेल मार्ग के जिन भागों की लाइनें पुरानी पड़ चुकी हैं, उनमें गाड़ियों की चाल पर पाबन्दियां लगा देनी पड़ती हैं, जिससे लाइनों की सामर्थ्य घट जाती है और गाड़ियों की गति मन्द हो जाती है। प्रथम योजना के अन्त में लगभग ७,००० मील लम्बे रेल मार्ग पर लाइन नहीं बदली जा सकी थीं। प्रथम योजना आरम्भ होने के समय ३,००० मील लम्बे मार्ग पर लाइन खराब होने के कारण गाड़ियों की चाल पर पाबन्दियां लगानी पड़ती थीं। मार्च १९५६ तक यह दूरी घटकर १,७८४ मील रह गई होगी। प्रथम योजना से बची हुई और द्वितीय योजना के समय बदलने योग्य हो जाने वाली लाइनों की लम्बाई मिलकर लगभग १३,००० मील हो जाएगी। इसमें से ४,५०० मील बड़ी लाइन की और ४,१०० मील छोटी लाइन की लम्बाई रेलों के मुख्य मार्गों पर पड़ती है। शेष सारी लम्बाई शाखा लाइनों पर पड़ती है, परन्तु उसके भी कई भाग महत्वपूर्ण हैं। द्वितीय योजना में प्रतिवर्ष १,६०० मील अथवा पांचों वर्षों में ८,००० मील लम्बी लाइनें बदलने की व्यवस्था है।

२१. **लाइनों की सामर्थ्य बढ़ाने के काम**—द्वितीय योजना काल में रेल परिवहन का जो काम बढ़ेगा, उसे पूरा करने के लिए रेलवे लाइनों की वर्तमान सामर्थ्य में लगभग ५० प्रतिशत वृद्धि कर देनी होगी। इसके लिए १,६०७ मील लम्बी लाइन तो दोहरी कर देने और २६५ मील छोटी लाइन को बड़ी लाइन में परिवर्तित कर देने की योजना बनाई गई है। इसके अतिरिक्त, आमने-सामने से आती हुई गाड़ियों को एक दूसरे की बगल में से गुजारने की व्यवस्था वाले स्टेशनों और "लूप" अर्थात घूमकर जाने वाली लाइनों की संख्या बढ़ा देने, बहुत-से स्टेशनों पर लूप लाइनों का विस्तार कर देने और बहुत-से बड़े स्टेशनों के यार्डों को सुधार कर उनका पुनर्गठन कर देने की योजनाएं भी हैं। निम्नलिखित स्टेशनों के बीच में रेलवे लाइन दोहरी कर दी जाएगी :—

	मील संख्या
पूर्व रेलवे	
बोकारो-बड़काकाना	३६
अण्डाल-उखड़ा	७
	४३

				मील संख्या	
दक्षिण-पूर्व रेलवे					
मनोहरपुर-राउरकेला	...	..		२५	
राउरकेला-नागपुर	...	..	.	४४६	
गढ़धुवेश्वर-ज्योचण्डीपहाड़		...		४	
सीनी-गोम्हड़िया	...	.		१०	
सीनी-कन्द्रा	...	..	.	४	
राजखरसवान-बड़ाजमदा	...	...	...	६०	
नरगुण्डी-खुर्दा रोड	...	...	..	२६	
खड़गपुर-टाटानगर*	...	...		३०	
					६०५
मध्य रेलवे					
दिल्ली-आगरा*	...	...	...	७७	
कटनी-जबलपुर	...	...	...	५७	
जबलपुर-इटारसी*	...	...	...	८०	
					२१४
दक्षिण रेलवे					
आर्कोणम-जोलारपेट	...	...	...	६०	
वाल्टेयर-राजामुन्द्री*	...	...	...	३०	
विजयवाड़ा-गुडूर	...	...	...	१८२	
जोलारपेट-इरोड*	...	...	...	६०	
आर्कोणम-रेनीगुण्टा	...	...	...	४०	
					४०२
उत्तर रेलवे					
इलाहाबाद-कानपुर*	...	...	...	६०	
कानपुर-लखनऊ*	...	...	...	११	
रेवाड़ी-दिल्ली*	...	...	...	३०	
मुरादाबाद-सहारनपुर*	...	...	...	५०	
			योग	...	१५१
पश्चिम रेलवे					
गोधरा-रतलाम	...	...	..	११५	
बड़ौदा-आनन्द	...	...	...	२२	
रतलाम-नागदा	...	...	...	२६	
					१६३

*इन स्टेशनों के बीच में लाइन का केवल कुछ भाग दोहरा किया जाएगा। उसकी दूरी मीलों में दे दी गई है।

	मील संख्या
उत्तर-पूर्व रेलवे	
कटिहार-बरसोई	२४
मानसी-खगरिया	५
	२९
योग	१६०७

छोटी लाइन पर इन भागों को बड़ी लाइन में बदलने का विचार हैं :—

	मील संख्या
दक्षिण रेलवे	
भीमावरम्-गुडीवाड़ा-विजयवाड़ा-गुण्टूर	१११
कुरुन्दुवाडी-मिरज-कोल्हापुर-सांगली	१५४
योग	२६५

२२. **सिगनलों में सुधार और सुरक्षा के काम**—रेलगाड़ियों के संचालन में सुरक्षा की व्यवस्था करने और अधिक यातायात वाले भागों में लाइन की सामर्थ्य बढ़ाने के लिए सुधरे हुए सिगनल लगाने की योजना बनाई गई है। इसमें ये काम शामिल हैं :—

(१) मथुरा-बड़ौदा, वर्धा-विजयवाड़ा और दिल्ली-अम्बाला-कालका आदि मुख्य मार्गों पर लाइनों के इन्टरलाकिंग स्टेण्डर्ड अधिक ऊँचा कर देना, जिससे कि गाड़ियों की चाल अधिक तेज की जा सके;

(२) जिन भागों में अभी तक सिगनलों का इंटरलाकिंग नहीं हुआ है, परन्तु यातायात बढ़ गया है, उनमें भी और बड़े तथा महत्वपूर्ण स्टेशनों के यार्डो में भी इंटरलाकिंग कर देना;

(३) अधिक काम-काज वाले स्टेशनों के यार्डो में और कुरला जंकशन, दिल्ली, लखनऊ डालीगंज, सियालदा और मद्रास आदि क्षेत्रों में बिजली के आधुनिक सिगनल लगाना;

(४) दिल्ली-गाजियाबाद, मुगलसराय-बनारस, इलाहाबाद-छेउकी, सन्त्रागाछी-टिकियापाड़ा, और कुरला-थाना आदि अधिक यातायात वाले भागों में स्वचालित सिगनल लगाना;

(५) मुगलसराय पर 'हम्प यार्ड' के लिए आधुनिक ढंग की सिगनल व्यवस्था करना जिसमें गाड़ियों आदि के लिए स्वचालित प्वाइंट्स और रिटार्ड्स की व्यवस्था सम्मिलित है; और

(६) छोटी लाइन और बड़ी लाइन के एक-एक विभाग पर केन्द्रीकृत यातायात नियन्त्रण करना ।

सुरक्षा के कामों में यह व्यवस्थाएं भी सम्मिलित है : दुहरी लाइनों पर लाक और ब्लाक यंत्रों की, इकहरी लाइनों पर 'टोकन' यंत्र की, महत्वपूर्ण यार्डों में 'ट्रैक सर्किट' की और 'लेवल क्रासिंग', 'कैच साइडिंग' और 'स्लिप साइडिंग' पर इंटरलाकिंग की व्यवस्था। दूर संचार की सुविधाएं बढ़ाने के लिए ये काम किए जाएंगे : थोड़े और बड़े फासले के और अधिक वायरलैस लिंक लगाए जाएंगे, मार्शलिंग यार्डों पर बहुत अधिक शक्तिशाली उपकरण लगाए जाएंगे और नए विभाग नियन्त्रक सर्किट खोले जाएंगे।

२३. गाड़ियों को बिजली से चलाना—जहां लाइनों की सामर्थ्य अपनी चरम सीमा पर पहुंच चुकी है, वहां गाड़ियों को बिजली से चलाने की योजना बनाई गई है जिससे कि काम अधिक कुशलतापूर्वक हो और सामर्थ्य का विकास मितव्ययिता से किया जा सके। इस योजना के अनुसार इन भागों में ८२६ मील लम्बी लाइनों पर गाड़ियां बिजली से चलाई जाएंगी

	मील संख्या	
पूर्वी रेलवे		
कलकत्ता क्षेत्र (नगर के चारों ओर की रेल छोड़कर) अर्थात हावड़ा-वर्दवान चोर्ड, बैण्डल-नाइहाटी, सियाल्दा डिवीजन-रानाघाट तज, दक्षिणी भाग दांकुनी-दमदम ...	३४६	
वर्दवान-आसनसोल	६६	
आसनसोल-गोमोह	४८	
		४६३
दक्षिण-पूर्व रेलवे		
हावड़ा-खड़गपुर	७२	
		७२
मध्य रेलवे		
इगतपुरी-भुसावल	१६१	
		१६१
दक्षिणी रेलवे		
मद्रास-ताम्बरम-विल्लुपुरम		१००
योग		८२६

२४. गाड़ियों का डीजल तेल से संचालन—गाड़ियों का संचालन अधिक मितव्ययिता और कुशलता से करने के लिए बड़ी लाइन के १,०२० मील और छोटी लाइन के २७३ मील में

परीक्षण स्वरूप गाड़ियां डीज़ल तेल से चलाकर देखने का विचार है। जिन भागों में यह परीक्षण करके देखा जाएगा उनके नाम ये हैं :

	मील संख्या	
पूर्वी रेलवे		
गोमो-मुग़लसराय	२३२	
		२३२
दक्षिण-पूर्वी रेलवे		
आसनसोल-राजखरसवान	९७	
राजखरसवान-झरसनगुडा	१३८	
राजखरसवान-वड़ाडमदा	६०	
		२९५
मध्य रेलवे		
वल्हारशाह-काज़ीपेट	१४६	
काज़ीपेट-सिकन्दरावाद	८१	
		२२७
दक्षिण रेलवे		
विजयवाड़ा-मद्रास	२६६	
पूना-मिराज	१५८	
		४२४
पश्चिम रेलवे		
अहमदावाद-आवू रोड	११५	
		११५
योग		१२९३

२५. पुल—गंगा के पुल पर आरम्भिक कार्य १९५३-५४ में शुरू किया गया था। द्वितीय योजना में इसके लिए ९ करोड़ रुपए रखे गए हैं। यह पुल ६,०७४ फुट लम्बा होगा। इसके ऊपर एक आधुनिक ढंग की चौड़ी सड़क रहेगी और वाएं तट पर एक वड़ा आधुनिक ट्रांशिपमेंट यार्ड रहेगा, जिसमें प्रतिदिन वड़ी लाइन के ३५० से ४०० तक माल डिब्बों से माल लादा-उतारा जा सकेगा। इस पुल पर सब मिलाकर १६ करोड़ रुपए व्यय होने का अन्दाजा है और आशा है कि यह १९६० के शुरू में ही वनकर पूरा हो जाएगा। अन्य कार्यों में प्रमुख कार्य ब्रह्मपुत्र, यमुना और गण्डक

नदियों पर भी इसी योजना काल में एक-एक पुल बनाने का कार्य आरम्भ कर देने का कार्यक्रम रखा गया है। इसके अतिरिक्त, द्वितीय योजना काल में पुलों का पुनर्निर्माण कार्य यथापूर्व होता रहेगा।

२६. नई लाइनें—इस योजना काल में ८४२ मील लम्बी नई लाइनें बिछाई जाएंगी। इन्हें बनाने के दो प्रयोजन हैं। एक तो संचालन की बहुत जरूरी आवश्यकताओं को पूरा करना और दूसरा लोहा और इस्पात तथा कोयला उद्योगों के विस्तार में सहायक होना। जो लाइनें बनाई जाएंगी उनके नाम ये हैं :—

	मील संख्या	
पूर्व रेलवे		
बड़सेट-बसिरहाट	४८	
		४८
दक्षिण-पूर्व रेलवे		
बड़काखाना-बीरमित्रपुर	१२४	
राउरकेला-तालडीह-डुमारो	३०	
नोआमण्डी-बनसापानी	१८	
भिलाई-डल्ली राझाड़ा	६०	
गुना-मनोहरपुर	३०	
करनपुरा-रामगढ़	७५	
सेण्ट्रल इण्डिया कोलफील्ड्स	१२५	
कोरबा एक्सटेन्शन	५	
		४६७
मध्य रेलवे		
गुना-उज्जैन	१७५	
		१७५
उत्तर रेलवे		
रावर्ट्सगंज-गढ़वा रोड	१००	
		१००
उत्तर-पूर्व रेलवे		
मुजफ्फरपुर-दरभंगा	३५	
रामशाई-बिन्नागुरी	२१	
		५६
योग		८४६

२७. **कर्मचारी कल्याण कार्य**—भारतीय रेलें देश में सबसे अधिक लोगों को काम तो देती ही हैं, उनकी योजनाओं में अपने कर्मचारियों के लिए कल्याण कार्यों को भी ऊंची प्राथमिकता दी जाती है। द्वितीय योजना में कर्मचारियों के मकानों और कल्याण कार्यों पर यथापूर्व विशेष ध्यान दिया जाता रहेगा। रेलों का काम बढ़ जाने के कारण कर्मचारियों की संख्या भी बढ़ा देनी पड़ेगी, और इसीलिए उनके मकानों और अन्य कल्याण कार्यों पर किया जाने वाला व्यय भी खासा बढ़ा देना होगा। इस योजना में ३५ करोड़ रुपए मकानों पर और १५ करोड़ रुपए अन्य सुविधाओं पर व्यय करने के लिए रखे गए हैं। आशा है कि लगभग ६६,००० नए मकान बनाए जाएंगे। इनमें वे मकान भी शामिल हैं जो नए कारखानों के आसपास बसाई जाने वाली बस्तियों में बनाए जाएंगे। द्वितीय योजना में कर्मचारियों के कल्याणार्थ अन्य जो काम किए जाएंगे, उनमें १३ चिकित्सालयों और ७५ औषधालयों का खोलना भी सम्मिलित है। चिकित्सालयों में लगभग १,६०० रोगी शैयाओं की व्यवस्था की जाएगी।

२८. **रेलों का उपयोग करने वालों के लिए सुविधाएं**—यात्रियों के लिए जो सुविधाएं उपलब्ध की जाएंगी उनमें स्टेशनों को सुधार कर बनाना भी शामिल है। विश्राम-कक्ष, जलपान गृहों और दुकानों का निर्माण, प्रतीक्षालयों का विस्तार, प्लैटफार्मों को ऊंचा, चौड़ा तथा लम्बा करना, और लाइन पार करने के लिए पुलों का बनाना आदि भी इन सुधारों में सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त स्टेशनों पर सुधरे हुए शौचालय बनाने, स्नान की सुविधा और पानी मिलने की व्यवस्था करने, प्रतीक्षा गृहों में बिजली की रोशनी और पंखे लगवाने और वर्तमान यात्री गाड़ियों को अधिक आरामदेह बनाने पर भी ध्यान दिया जाएगा। इन सुविधाओं के अधिक विवरण और इन्हें पूरा करने के क्रम का निश्चय, रेल उपयोगकर्ता सलाहकार समितियों के साथ विचार-विनिमय करके किया जाएगा। उपलब्ध कोश के सीमित होने के कारण जो कार्यक्रम बनाए जाएंगे वे मितव्ययिता के आधार पर ही बनाने पड़ेंगे।

२९. **सामान को उचंती में एकत्र रखने का खाता**—कोई भी काम समय पर और पर्याप्त मात्रा में सामान न मिल सकने के कारण न रुके, इसलिए यह विचार किया गया है कि उपयुक्त स्थानों पर तामीरी सामान के डिपो खोलकर, उनमें सामान का संग्रह तुरन्त उपलब्ध होने योग्य अवस्था में रखा जाए। इसका फल यह होगा कि किसी भी समय सामान पर्याप्त मात्रा में संगृहीत रहेगा, और आशा है कि द्वितीय योजना की समाप्ति पर लगभग २५ करोड़ रुपए का सामान विद्यमान होगा। इस सामान में इंटरलाकिंग तथा सिगनल करने की चीजें और माल डिब्बे बनाने के लिए खास किस्म का इस्पात भी शामिल रहेगा। संग्रह में इस समय बचे हुए सामान का मूल्य लगभग ५६ करोड़ रुपए है। रेलों के विस्तार का कार्यक्रम बढ़ जाने के कारण उसमें कोई २५ करोड़ रुपए मूल्य तक के सामान की और वृद्धि कर देनी पड़ेगी।

३०. **प्रशिक्षण कार्यक्रम**—रेलों की विकास योजनाओं की पूर्ति के लिए कर्मचारियों की संख्या भी बहुत बढ़ानी पड़ेगी। अन्दाजा लगाया गया है कि बढ़े हुए यातायात को संभालने और नए साधनों को ठीक रखने के लिए १६५,००० नए कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ेगी। इन नए भरती किए हुए कर्मचारियों को आरम्भ में कुछ प्रशिक्षण भी देना पड़ेगा, इसलिए द्वितीय योजना में नई भरती के साथ-साथ कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी रखी गई है। इसके लिए वर्तमान प्रशिक्षण व्यवस्था को दृढ़ करने के अतिरिक्त नौ नए प्रशिक्षण स्कूल भी खोले

जाएंगे। रेलवे मंत्रालय इस विस्तार कार्यक्रम की पूर्ति के लिए अस्थायी अधिकारियों और कर्मचारियों की भरती पहले ही आरम्भ कर चुका है।

परिवहन साधनों में समन्वय

३१. रेलों की योजना बनाते हुए परिवहन के अन्य साधनों, अर्थात सड़कों, आन्तरिक जल मार्गों, समुद्री और हवाई यातायात के विकास का भी ध्यान रखना पड़ता है। एक-से काम पर दोहरे व्यय से बचने के लिए आवश्यक है कि सब परिवहन साधन कार्यों की उपयोगिता को समझकर उनमें सफल समन्वय कर लिया जाए। राष्ट्रीयकृत सड़क परिवहन का विकास करने के लिए अब तक साधारण नीति यह रही है कि सड़क परिवहन निगम अधिनियम, १९५० के अनुसार निगमों का संगठन होने दिया जाए, क्योंकि यह कानून इन निगमों के साथ रेलों को भी सहयोग करने की इजाजत देता है। इन निगमों का संगठन हो जाने पर रेलों और सड़कों के परिवहन में समन्वय होकर दोनों मिलकर काम कर सकेंगे, जोकि देश के लिए अधिकतम लाभदायक सिद्ध होगा। सड़क परिवहन के अतिरिक्त समस्या रेल परिवहन और आन्तरिक जल मार्गों के परिवहन में समन्वय करने की भी है। इसका देश के उत्तर-पूर्वी भाग में विशेष महत्व है, क्योंकि वहां ज्वाएंट स्टीमर कम्पनियां नदी मार्गों से माल और यात्रियों के यातायात के एक बड़े अंश का प्रबंध करती हैं। इसी प्रकार रेलों, और समुद्र-तट पर चलने वाले जहाजों के परिवहन में भी समन्वय करने की समस्या है। इन दोनों का विकास भी सहयोग-पूर्वक होने की आवश्यकता है। इस समस्या पर विशेषज्ञों की एक समिति विचार कर रही है। समन्वय की इन तथा अन्य समस्याओं पर निरन्तर विचार करते रहना होगा, जिससे समय-समय पर आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सके।

नीति और संगठन

३२. भारतीय रेलों का एक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि वे उपलब्ध इंजनों, डिब्बों और लाइनों की सामर्थ्य का अधिक से अधिक अच्छा उपयोग करें, जिससे कार्य-कुशलता और मित-व्ययिता में निरन्तर वृद्धि होती रहे। इसके लिए आयोजित और संगठित प्रयत्न करने की आवश्यकता है, जिससे कि गाड़ियों को आवश्यक रूप से चक्कर काट कर जाना न पड़े और जहां दो गाड़ियों का मेल होता हो, वहां उन्हें देर न लगे। इस प्रकार अनावश्यक व्यय से बचकर ही कुशलता का स्तर ऊंचा किया जा सकता है। इनमें से प्रथम उद्देश्य की सिद्धि तो आजकल किसी हद तक इस कारण हो रही है कि सीमेंट, लोहा और इस्पात, कोयला, कपड़ा, चीनी और नमक आदि कुछ वस्तुओं को रेल द्वारा ढोने के लिए अनावश्यक व्यय से बचकर चलने की एक पद्धति अपना ली गई है। इस पर शायद द्वितीय योजना के समय विद्यमान परिस्थितियों के अनुसार पुनर्विचार करना पड़े। रेलों की कुशलता बढ़ाने के लिए आवश्यक होगा कि प्रतिवर्ष की योजनाओं में संचालन कुशलता के विशिष्ट लक्ष्य पहले से निर्धारित कर दिए जाएं, और वर्ष की समाप्ति पर देखा जाए कि वे लक्ष्य कहां तक पूरे हुए। वार्षिक योजनाओं का बनाना और उनकी पूर्ति करना रेलवे बोर्ड का एक श्रम-साध्य उत्तरदायित्व होगा। विभिन्न कार्यक्रमों का समय निश्चित करके, उसके भीतर ही उन्हें पूरा कर देने के लिए आवश्यक होगा कि इन सबमें समय तथा गति आदि का मेल अति सावधानीपूर्वक बिठाया जाए, जिससे कि व्यय में तो बचत हो जाए और साधनों की बरबादी न हो। इसके लिए इस्पात, सीमेंट, कोयला और अन्य सामग्रियों की उपलब्धि की योजना भी पहले से ही बनाकर चलना होगा।

३३. ये काम बहुत भारी हैं। इन्हें पूरा करने के लिए संगठन और प्रशासन की व्यवस्थाओं का बहुत ऊंचे स्तर का होना आवश्यक है। सम्भव है कि व्यय की बचत करने और योजना को शीघ्रतापूर्वक क्रियान्वित करने के लिए कार्य प्रणाली में भी कुछ विशेष परिवर्तन करने पड़ जाएं। संगठन का कार्य ठीक प्रकार होने पर ही द्वितीय पंचवर्षीय योजना में निर्धारित किए गए भारतीय रेलों के लक्ष्यों और कार्यक्रमों को पूरा किया जा सकता है।

रेल कर्मचारियों का काम

३४. रेलें इन कार्यों को कहां तक पूरा कर सकती हैं, यह अन्ततोगत्वा दस लाख से ऊपर रेल कर्मचारियों के प्रयत्न पर निर्भर करता है। वे इस महान राष्ट्रीय कार्य में भागीदार हैं, और द्वितीय पंचवर्षीय योजना में विकास कार्य के भार का एक महत्वपूर्ण भाग उन्हें ही उठाना पड़ेगा। इसलिए ऐसी व्यवस्था की जाएगी कि रेल कारखानों के प्रबन्ध और संचालन में रेल कर्मचारियों का भाग अधिकाधिक बढ़ता जाए।

३५. इस योजना की पूर्ति में व्यय भारी मात्रा में होगा, इस कारण सब प्रकार के अपव्यय से बचने का प्रयत्न भी सबको मिल-जुलकर करना पड़ेगा। इस प्रयत्न की सफलता रेल कर्मचारियों की ईमानदारी पर ही निर्भर करती है। इसलिए रेलवे बोर्ड पहले से ही रेल भ्रष्टाचार जांच समिति की सिफारिशों पर अमल करने का प्रयत्न कर रहा है।

२. सड़कें

३६. युद्ध के पश्चात सड़कों का विकास करने की नागपुर योजना १९४३ में तैयार की गई थी। उसमें देश की सड़कों का विकास करने के कुछ प्रधान लक्ष्य बतला दिए गए थे। उसमें अब तक २० वर्षों का पर्यविलोकन करके सुझाया गया था कि सुविकसित कृषि के किसी भी क्षेत्र में कोई भी ग्राम मुख्य सड़क से पांच मील से अधिक दूर नहीं रहना चाहिए। विभाजन के पश्चात देश की राजनीतिक एकता सम्पन्न हो जाने पर सड़कों के विकास का विचार अधिक व्यापक दृष्टि से करना आवश्यक हो गया—विशेषतः ख और ग भागों के राज्यों तथा विभाजन से प्रभावित राज्यों की आवश्यकताओं की दृष्टि से देश के इन भागों का सम्बन्ध, शेष देश के साथ अधिक निकटता से जोड़ने पर ध्यान देना आवश्यक हो गया। यह कार्य वर्तमान सड़कों को सुधारकर और बीच-बीच में विच्छिन्न मार्ग खण्डों और पुलों को बनाकर पूरा किया गया। यह विशेष कार्य प्रायः पूरा हो चुका है। प्रथम पंचवर्षीय योजना आरम्भ होने के समय भारत में कोलतार की पक्की सड़कें ९७,००० मील और कच्ची सड़कें लगभग १,४७,००० मील थीं। प्रथम योजना के समय लगभग १०,००० मील कोलतार की पक्की सड़कें और लगभग २०,००० मील कच्ची सड़कें नई बन गई होंगी और १०,००० मील पुरानी सड़कों को सुधार दिया गया। विगत पांच वर्षों में सड़कों पर समस्त व्यय कोई १५५ करोड़ रुपए हो गया होगा। इसमें केन्द्रीय सड़क कोश का अनुदान भी सम्मिलित है। १९४७ से १९५१ तक सड़कों पर ४८ करोड़ रुपए व्यय किए गए। इस प्रकार विभाजन के पश्चात सड़कों के विकास पर समस्त पूंजी विनियोग लगभग २०० करोड़ रुपए का हुआ।

३७. द्वितीय योजना में सड़कों के विकास पर, केन्द्र और राज्यों की योजनाओं को मिलाकर, समस्त व्यय लगभग २४६ करोड़ रुपए किया जाएगा। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय सड़क कोश २५ करोड़ रुपए देगा। अन्दाजा है कि इतना व्यय कर देने पर नागपुर योजना में सड़कों के विकास का जो लक्ष्य रखा गया था वह १९६०-६१ तक प्रायः पूरा हो जाएगा।

केन्द्रीय सड़कों के कार्यक्रम

३८. प्रथम पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय मुख्य सड़कें बनाने के लिए २८ करोड़ रुपए की राशि रखी गई थी। इनमें जम्मू व कश्मीर की बनिहाल सुरंग भी शामिल थी। द्वितीय योजना में काम को किफायत से करने और लगातार जारी रखने की दृष्टि से जो कार्यक्रम हाथ में लिया जा चुका है उस सब पर अन्दाजन ५७ करोड़ रुपए व्यय होंगे। इनमें १,२५० मील के विच्छिन्न मार्ग खण्डों और ७५ बड़े पुलों का निर्माण और ६,००० मील की वर्तमान सड़कों का सुधार भी सम्मिलित है। आशा है कि प्रथम योजना काल में ६४० मील के विच्छिन्न मार्ग खण्ड तथा ४० बड़े पुल बन चुके होंगे और २,५०० मील की पहले से बनी हुई सड़कों का सुधार हो गया होगा। पुलों के सिवाय, ये सब काम बिल्कुल पूरे हो चुके होंगे, केवल पुलों में कुछ कमी हो सकती है। सड़कों के सुधार का काम आरम्भ में सोचे गए काम से लगभग दुगुना हो गया होगा। प्रथम योजना की समाप्ति पर लगभग ६५० मील के विच्छिन्न मार्ग खण्डों और ३५ बड़े पुलों के निर्माण का, पहले से विद्यमान राष्ट्रीय मार्गों के ३,००० मील में सुधार करने तथा अस्फाल्ट बिछाने का, और लगभग ३०० मील में गाड़ियों के आने-जाने के लिए सड़कें चौड़ी करने का काम चल रहा होगा। प्रथम योजना की तरह, द्वितीय योजना में भी प्रधान कार्य विच्छिन्न मार्ग खण्डों और बड़े पुलों को बनाने और पहले से विद्यमान सड़कों को सुधारने का रहेगा। द्वितीय योजना में प्रारम्भ किए गए कामों पर होने वाले व्यय का अन्दाजा ८७·५ करोड़ रुपए है और उनका विवरण निम्न है :

	(करोड़ रुपए)
प्रथम योजना के समय से चालू काम, इसमें बनिहाल सुरंग भी है .	३०·०
विच्छिन्न मार्ग खण्ड और घुमावदार मार्ग (६०० मील) ...	१०·५
बड़े पुल (६०)	२०·०
छोटे पुल	५·०
वर्तमान सड़कों में सुधार (१,७०० मील)	७·०
गाड़ियों के चलने का रास्ता १२ फुट से बढ़ाकर २२ फुट चौड़ा करना (३०० मील)	१५·०
	८७·५

इन कामों पर द्वितीय योजना में वास्तविक व्यय लगभग ५५ करोड़ रुपए होने की आशा है।

३९. केन्द्रीय सरकार ने प्रथम योजना के समय राष्ट्रीय मार्गों के अतिरिक्त, कुछ अन्य महत्वपूर्ण सड़कों का निर्माण भी हाथ में ले लिया था। इनका काम द्वितीय योजना में भी जारी रखा जाएगा। इन पर इस योजना के समय लगभग ९ करोड़ रुपए व्यय होने की सम्भावना है। इन कामों में, पासी-बदरपुर रोड, पश्चिमी घाट की सड़क और पठानकोट और ऊधमपुर के बीच में एक और सड़क बनाने का काम भी शामिल है। पासी-बदरपुर रोड बन तो प्रथम योजना के समय ही गई थी, उस पर मसाला बिछाने और पक्के पुल बनाने का काम द्वितीय योजना के समय किया जाएगा। पठानकोट से ऊधमपुर तक दूसरी सड़क भी द्वितीय योजना काल में ही बनाई जाएगी। पश्चिमी घाट की सड़क का तीन-चौथाई काम द्वितीय योजना के अन्त तक पूरा हो जाने की आशा है। सब मिलाकर, इस कार्यक्रम में लगभग १५० मील सड़कें तो नई बनाई जाएंगी और ५०० मील से ऊपर सुधारी जाएंगी।

४०. १९५४ में अन्तर-राज्य और आर्थिक महत्व की सड़कों का एक विशेष कार्यक्रम आरम्भ किया गया था, और उसके लिए केन्द्रीय सरकार ने १० करोड़ रुपए का अनुदान स्वीकृत किया था। इसे द्वितीय योजना काल में जारी रखा जाएगा। इस पर सब मिलाकर १८ करोड़ रुपए व्यय होने की सम्भावना है। इसमें से लगभग तीन-चौथाई उन कामों पर व्यय होगा जो प्रथम योजना के समय आरम्भ किए गए थे। इस कार्यक्रम में अन्तर-राज्य सड़कें, सीमाओं और पहाड़ों की सड़कें और देश का भ्रमण करने वालों के लिए उपयोगी सड़कें सम्मिलित हैं। इन सब सड़कों की लम्बाई मिलकर लगभग १,००० मील हो जाएगी।

राज्यों में सड़कें बनाने के कार्यक्रम

४१. राज्यों में सड़कों का विकास करने के लिए प्रथम योजना में ९३ करोड़ रुपए रखे गए थे। द्वितीय योजना में सब मिलाकर १६४ करोड़ रुपए की व्यवस्था की जा रही है। आशा है कि द्वितीय योजना काल में लगभग १८,००० मील बिना कोलतार की पक्की सड़कें तैयार हो जाएंगी। यह काम करते हुए उन पिछड़े हुए इलाकों की आवश्यकताओं का विशेष ध्यान रखा जाएगा जिन पर प्रथम योजना में पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा सका था। कुछ रकम उन कच्ची या मिट्टी की सड़कों को सुधारने के लिए भी रखी गई है, जो कि प्रथम योजना के समय देहात सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत बनाई गई थीं। आशा है कि द्वितीय योजना में राष्ट्रीय विस्तार के तथा अन्य क्षेत्रों में देहाती सड़कों के विकास का कार्य बड़े पैमाने पर किया जाएगा, परन्तु इसके लक्ष्यों को पहले से निर्धारित कर लेना सरल नहीं है और इसलिए अभी सम्भावित लम्बाई का मीलों में अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। फिर भी, देहाती सड़कों को बनाने, उनकी मरम्मत करने, और विविध संगठनों द्वारा उनके लिए किए जा रहे कामों में समन्वय रखने पर प्रत्येक राज्य विशेष ध्यान देगा, और उसे अपनी सड़कों के विकास की योजना का अंग समझेगा।

३. सड़क परिवहन

४२. प्रथम योजना में राज्यों के राष्ट्रीयकृत सड़क परिवहन कार्यक्रमों के लिए लगभग १२ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई थी। आशा है कि उसमें से १० करोड़ रुपए योजना की अवधि में व्यय हो गए होंगे। द्वितीय योजना में इस कार्य के लिए १३·५ करोड़ रुपए की राशि स्वीकार कर राज्य सरकारों को सलाह दी गई है कि वे १९५० के सड़क परिवहन निगम अधिनियम के अनुसार निगमों का संगठन कर लें। रेलवे योजना में भी १० करोड़ रुपए इसलिए रखे गए हैं कि रेलें इन निगमों के कार्य में भाग ले सकें। इसके अतिरिक्त ३ करोड़ रुपए परिवहन मंत्रालय की योजना में दिल्ली ट्रान्सपोर्ट सर्विस के लिए स्वीकृत किए गए हैं। इस प्रकार अन्दाजा है कि द्वितीय योजना में राष्ट्रीयकृत सड़क परिवहन के लिए सब मिलाकर २७ करोड़ रुपए की पूंजी लग जाएगी। खयाल है कि इस सबका परिणाम यह होगा कि लगभग ५,००० अतिरिक्त गाड़ियां निश्चित रास्तों पर चलने लग जाएंगी और उनकी मरम्मत आदि के लिए आवश्यक कारखाने खुल जाएंगे।

४३. १९५४ की अन्तिम तिमाही में सड़कों पर अन्दाजन ३,५३,००० गाड़ियां चल रही थीं। यह संख्या यद्यपि प्रथम योजना का आरम्भ होने के समय की संख्या, अर्थात २,९४,७२७ की अपेक्षा बड़ी थी, परन्तु देश की विशालता, सड़कों की लम्बाई और आबादी की दृष्टि से बहुत कम थी। हाल के वर्षों में देश में आर्थिक काम-काज बहुत बढ़ गया है और रेलें यातायात की सब आवश्यकताएं पूरी करने में असमर्थ हैं। इसलिए सड़क परिवहन के विस्तार की गुंजाइश है। परन्तु यह विस्तार अब तक हुआ नहीं है। इस समय सड़कों द्वारा होने वाली माल की ढुलाई प्रायः

सबको सब और यात्रियों का यातायात कोई तीन-चौथाई, निजी मोटर चालकों के हाथ में है। द्वितीय योजना में सरकार द्वारा सड़क परिवहन का काफी विस्तार कर दिए जाने पर भी, उसका एक बड़ा भाग निजी चालकों के ही हाथ में रहेगा। हाल के वर्षों में सड़क परिवहन का विस्तार अपर्याप्त रहने के अनेक कारण बताए जाते हैं। इनमें से जिनकी चर्चा बहुधा होती रहती है वे ये हैं: राष्ट्रीयकरण का भय, मोटर परिवहन पर करों की ऊंची दरें, अन्तर-राज्य यातायात और दूर की ढुलाई पर 'कोड आफ प्रिन्सिपल्स एण्ड प्रैक्टिस' के अनुसार लगाई गई पाबन्दियां, और कुछ राज्यों में कानून द्वारा निर्धारित तीन से पांच वर्ष तक की मियाद के स्थान पर परमिटों (अनुमति पत्रों) का थोड़ी मियाद के लिए दिया जाना। ये सभी कारण सड़क परिवहन के विस्तार में थोड़े-बहुत बाधक रहे होंगे, परन्तु साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि अधिकतर मोटर चालक निजी गाड़ियों के अकेले-अकेले मालिक हैं। उनके पास इतने साधन नहीं हैं कि वे अपने काम का विस्तार व्यापारिक ढंग से और विश्वसनीय आधार पर कर सकें।

४४. योजना आयोग ने परिवहन मंत्रालय की सलाह से सड़क परिवहन की समस्याओं पर कुछ विशिष्ट जानकार व्यक्तियों से विचार करवाया था। उसे देखकर आयोग ने सिफारिश की है कि सड़कों द्वारा माल की ढुलाई का द्वितीय योजना काल में राष्ट्रीयकरण न किया जाए और निजी मोटर चालकों को टिक सकने लायक बड़ी इकाइयों में संगठित हो जाने में सहायता दी जाए। यात्री परिवहन के सम्बन्ध में आयोग की सिफारिश यह है कि राष्ट्रीयकृत सेवाओं के विस्तार का कार्यक्रम सोच-समझकर बनाया जाए और जहां-जहां राज्य सरकारें सड़क परिवहन का काम स्वयं न करना चाहें वहां निजी चालकों को परमिट उदार शर्तों पर दिए जाएं। अब विशिष्ट जानकारों की सिफारिशों के अनुसार, लाइसेन्स देने की कठोर नीतियों को उदार कर देने और विभिन्न राज्यों के बीच में चलने वाली मोटर गाड़ियों से डबल टैक्स वसूल न करने के लिए आवश्यक कारंवाई की जा रही है। केन्द्रीय सरकार का इरादा है कि वह अन्तर-राज्य सड़क परिवहन को नियन्त्रित करने का अधिकार अपने हाथ में ले ले। आशा है कि इन सब उपायों से द्वितीय योजना के समय सड़क परिवहन का विकास करने में सहायता मिलेगी।

४५. बैलगाड़ियां अभी बहुत समय तक देश की अर्थ-व्यवस्था में महत्वपूर्ण भाग लेती रहेंगी, इसलिए उन्हें सुधारने के उपायों पर विचार किया जा रहा है। कुछ वर्ष हुए, एक ऐसा पहिया बनाया गया था जिसका टायर तो लोहे का था परन्तु वह चौड़ा अधिक था। इसके कारण गाड़ी को खींचने में जोर कम लगता था और सड़कों को भी नुकसान कम पहुंचता था। इस पहिए का चलन बढ़ाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। केन्द्रीय सड़क अनुसन्धान प्रतिष्ठान बैलगाड़ियों के लिए कई ऐसी नाभें बनाकर देख रहा है जिनका आरों के साथ मेल आप-से-आप बैठ जाए। हाल में परिवहन सलाहकार परिषद ने निश्चय किया था कि परीक्षण के लिए एक ऐसी योजना आरम्भ की जाए जिससे कि रबर के टायर लगी हुई बैलगाड़ियों की बोझ ढोने की सामर्थ्य की जांच की जा सके। यदि आवश्यकता होगी तो केन्द्रीय सड़क कोष से भी इस काम को वित्तीय सहायता दे दी जाएगी।

४. पर्यटन

४६. केन्द्र और कई राज्यों की सरकारों की योजनाओं में पर्यटन का विकास करना भी सम्मिलित है। इस कार्यक्रम का मुख्य काम ठहरने के स्थान में परिवहन और महत्वपूर्ण यात्रा केन्द्रों में मनोरंजन की सुविधाओं का प्रबन्ध करना है—विशेषत: उन स्थानों पर जो चलते मार्गों

से दूर हों। मोटी दृष्टि से इसके दो भाग हैं : (क) ऐसे स्थानों पर सुविधाओं का प्रबन्ध करना जहां विदेशी पर्यटक बहुत जाते हैं, और (ख) निम्न और मध्य वित्त वर्ग के स्वदेशी यात्रियों के लिए कुछ ऐसे स्थानों पर सुविधाओं की व्यवस्था करना जो स्थानीय और प्रादेशिक महत्व के हों। प्रथम भाग से सम्बद्ध कामों को केन्द्रीय सरकार और द्वितीय से सम्बद्ध को राज्य सरकारें करेंगी। उनकी कुछ सहायता इस काम में केन्द्रीय सरकार भी कर देगी। इस कार्यक्रम में पर्यटक संघों और राज्यों अथवा स्थानीय स्वशासन संस्थाओं द्वारा संचालित कार्यालयों को सहायता देना और स्वदेश में पर्यटन की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने के लिए प्रादेशिक भाषाओं में प्रचार कार्य करना भी सम्मिलित है।

५. जहाजरानी

४७. १९४७ में जहाजरानी नीति निर्धारक समिति ने सिफारिश की थी कि देश को यह लक्ष्य रख लेना चाहिए कि ५–७ वर्ष में उसके पास २० लाख टन के जहाज हो जाएं। १९५० में केन्द्रीय सरकार ने यह नीति अपना ली कि तटवर्ती व्यापार केवल भारतीय जहाजों के लिए सुरक्षित कर दिया जाए और व्यापारिक जहाजों के लिए कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने का उत्तरदायित्व भी सरकार अपने ऊपर ले। भारतीय जहाजों की भारवहन क्षमता मन्द गति से ही बढ़ पाई है और युद्धोत्तर काल में भारवहन क्षमता में वृद्धि कर लेने के अवसर का भारत ने पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाया है। प्रथम योजना आरम्भ होने के समय रजिस्टर्ड भारतीय जहाजों की कुल भारवहन क्षमता ३,९०,७०७ जी० आर० टी० थी। प्रथम योजना में लक्ष्य यह रखा गया कि उसमें २,१५,००० जी० आर० टी० की वृद्धि कर दी जाए। खयाल था कि यदि इस अवधि में लगभग ६०,००० जी० आर० टी० क्षमता के जहाज पुराने और बेकार हो गए, तो भी रजिस्टर्ड जहाजों की कुल क्षमता ६,००,००० जी० आर० टी० से ऊपर जा पहुंचेगी। इस लक्ष्य के पूरा हो जाने की सम्भावना है। हां, कुछ नए जहाजों से काम लेने में समय लगेगा। द्वितीय योजना काल में अनुमानतः ९०,००० जी० आर० टी० क्षमता के जहाज पुराने और बेकार हो जाने की गुंजाइश रखकर, लगभग ३,००,००० जी० आर० टी० क्षमता के नए जहाज बढ़ा दिए जाएं। इस प्रकार, द्वितीय योजना के अन्त में सब रजिस्टर्ड जहाजों की कुल भारवहन क्षमता ९,००,००० जी० आर० टी० हो जाएगी।

४८. इस योजना के मोटे-मोटे लक्ष्य ये हैं :

(क) तटवर्ती व्यापार की सब आवश्यकताएं पूरी तरह अच्छी कर देना। इस सम्भावना का भी ध्यान रखा जाए कि रेलों का कुछ यातायात तटवर्ती जहाजों के सुपुर्द कर दिया जाएगा,

(ख) भारत के समुद्र-पार के व्यापार का अधिकाधिक भाग भारतीय जहाजों को दिलवाना, और

(ग) तेल ढोने वाले बेड़े की नींव डाल देना।

इस समय भारत के समुद्र-पार के व्यापार का केवल ५ प्रतिशत और अड़ोस-पड़ोस के देशों के साथ ४० प्रतिशत भारतीय जहाजों द्वारा होता है। ऊपर निर्दिष्ट लक्ष्य पूरे हो जाने पर इन दोनों प्रकार के व्यापारों में भारतीय जहाजों का भाग क्रमशः १२ से १५ और ५०

प्रतिशत हो जाने की आशा है। निम्न तालिका में प्रथम और द्वितीय योजनाएं पूरी होने के समय, भारतीय जहाजों की कुल भारवहन क्षमता की तुलना करके दिखाई गई है :—

(नकल रजिस्टर्ड टन)

	प्रथम योजना से पूर्व	प्रथम योजना के अन्त में	द्वितीय योजना के अन्त में
तटवर्ती और पड़ोसी देशों तक आने-जाने वाले जहाज ...	२,१७,२०२	३,१२,२०२	४,१२,२००
समुद्र-पार आने-जाने वाले जहाज ...	१,७३,५०५	२,८३,५०५	४,०५,५०५
चाहे जहां बुक हो सकने वाले जहाज	—	—	६०,०००
तेलवाही जहाज	—	५,०००	२३,०००
डूबे हुए जहाजों को खींचकर निकालने वाला टग ..	—	—	१,०००
योग ...	३,९०,७०७	६,००,७०७	९,०१,७०७

४९. प्रथम योजना में १९·५ करोड़ रुपए की राशि जहाजों के लिए रखी गई थी, जो बाद में बढ़ाकर २६·३ करोड़ रुपए कर दी गई। परन्तु इस योजना की अवधि में वास्तविक व्यय लगभग १८ करोड़ रुपए हुआ होगा। अब जहाजों की उन्नति के लिए ४५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है, परन्तु चूंकि लगभग ८ करोड़ रुपए प्रथम योजना से बचे हुए हैं इसलिए द्वितीय योजना के समय कोई ३७ करोड़ रुपए की व्यवस्था की जाएगी। इसके अतिरिक्त १·५ करोड़ रुपया इसलिए रखा गया है कि अण्डमान तथा निकोबार द्वीप-समूह की उन्नति के लिए एक जहाज खरीदकर उसे भारत से इन द्वीपों तक चलाया जाए और तीन नए लांच इन द्वीपों के बीच चलाने के लिए खरीदे जाएं। आशा है कि जहाजी कम्पनियां अपने विस्तार के लिए १० करोड़ रुपए का प्रबन्ध स्वयं कर लेंगी। योजना में निर्धारित समस्त राशि में से २० करोड़ रुपए तो सीधे ही ईस्टर्न शिपिंग कार्पोरेशन में और एक अन्य जहाजी निगम में फारस की खाड़ी और लाल सागर आदि में जहाज चलाने के लिए लग जाएंगे। शेष राशि से निजी कम्पनियों को अपने विस्तार कार्यक्रम पूरे करने में सहायता दी जाएगी। अभी अन्दाजा ऐसा है कि द्वितीय योजना में जो धनराशि रखी गई है वह योजना काल में ही अतिरिक्त ३ लाख टन का लक्ष्य पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं होगी। कितनी अतिरिक्त राशि की आवश्यकता पड़ेगी, इस प्रश्न का उत्तर अन्य अनेक बातों के अलावा इन बातों पर भी निर्भर करता है कि जहाजों के बाजार में खरीद के समय भाव क्या होंगे, अपने विस्तार कार्यक्रम को पूरा करने के लिए विदेशों में पुराने जहाज कितने मिल सकेंगे, और निजी जहाजी कम्पनियां स्वयं कितनी रकम का प्रबन्ध कर सकेंगी। सारी स्थिति पर निरन्तर नजर रखी जाएगी, जिससे कि अपना कार्यक्रम पूर्णतया पूरा करने के लिए आवश्यकतानुसार अतिरिक्त उपायों का अवलम्बन किया जा सके। यह कार्यक्रम साधारण ही है और निम्नतम लक्ष्य को प्रकट करता है।

५०. इस समय जहाजों के कार्यक्रम सम्बन्धी कई महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार किया जा रहा है। भारत सरकार सोच रही है कि अब तक जहाजी कम्पनियों को वित्तीय सहायता जिन

शर्तों पर दी जाती है उन्हें उदार कर दिया जाए। कम्पनियों ने ये शर्तें तीन प्रकार से नरम कर देने की प्रार्थना की है : एक तो व्याज की दर घटा दी जाए, दूसरे अदायगी का समय बढ़ा दिया जाए, और तीसरे जहाज खरीदने के लिए ऋण की मात्रा बढ़ा दी जाए। हिन्दुस्तान शिपयार्ड (जहाजी कारखाने) में बने हुए जहाजों को सस्ता बेचने के लिए सरकार जो सहायता देती है उसके आधार पर भी पुनर्विचार किया जा रहा है। आशा है कि शीघ्र ही यह निश्चय हो जाएगा कि विशाखा-पत्तनम में बने हुए जहाजों का विक्रय-मूल्य किस आधार पर तय किया जाए। भारत के समुद्र-पार के व्यापार में भारतीय जहाजी कम्पनियों को उचित भाग दिलाने में भी सहायता दी जाएगी। प्रथम योजना के समय ऐसे उपाय किए गए थे कि जिस माल पर सरकार का नियन्त्रण हो उसे ढोने के लिए यथाशक्ति भारतीय जहाजों का ही प्रयोग किया जाए। अब ऐसे उपाय सोचे जा रहे हैं कि सरकारी और अर्ध-सरकारी संगठनों द्वारा ढोये जाने वाले माल के लिए एक समन्वित नीति बनाई जाए। तटवर्ती व्यापार केवल भारतीय जहाजों के लिए सुरक्षित किया जा चुका है। अब एक विशेषज्ञ समिति यह विचार कर रही है कि इस व्यापार का भुगतान करने के लिए रेलों और तटवर्ती जहाजों में निकट सहयोग किस प्रकार हो सकता है।

५१. केन्द्रीय सरकार ने सिद्धान्ततः यह स्वीकार कर लिया है कि पाल से चलने वाली नौकाओं के उद्योग की सहायता करनी चाहिए और इन नौकाओं के जो मालिक अपनी नौकाओं को यन्त्र चालित बनाना चाहें उनको ऋण अथवा नकदी की सहायता देनी चाहिए। इसके लिए ४० लाख रुपए की राशि रखी गई है।

५२. व्यापारिक जहाजों के कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने के लिए प्रथम योजना में लगभग १ करोड़ १२ लाख रुपए की व्यवस्था थी। यह राशि कलकत्ता में एक मैरीन इंजीनियरिंग कालेज खोलने और नाविकों को प्रशिक्षित करने की अन्य योजनाओं पर व्यय की जाने वाली थी। सम्भावना है कि प्रथम योजना के समय इन कार्यों पर ६५ लाख रुपए व्यय हो गए होंगे। द्वितीय योजना में इसके लिए ७५ लाख रुपए रखे गए हैं जिसमें ७० लाख रुपए तो बम्बई के नाटिकल एण्ड इंजीनियरिंग कालेज की नई इमारत के लिए और ५ लाख कलकत्ता कालेज में कुछ इमारतें बढ़ाने के लिए हैं।

६. बन्दर और बन्दरगाहें

५३. भारत में समुद्री बन्दर दो प्रकार के हैं : (१) बड़े बन्दर, जिनका प्रबन्ध केन्द्रीय सरकार करती है, और (२) छोटे बन्दर, जिनका प्रबन्ध राज्य सरकारें करती हैं। विभाजन के पश्चात भारत में बड़े बन्दर पांच रह गए थे : कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, कोचीन और विशाखा-पत्तनम। प्रथम योजना आरम्भ होने के समय से पांचों बन्दर मिलकर प्रतिवर्ष लगभग दो करोड़ टन के जहाजों को संभाल लेते थे और इनकी सामर्थ्य भी इतनी ही थी। प्रथम योजना में बड़े-बड़े काम ये थे :—

(क) कंडला में एक बड़ा बन्दर बनाना, जो उस जहाजी यातायात को संभाल सके जो पहले कराची से हुआ करता था,

(ख) समुद्री मार्ग से आने वाले तेल का बम्बई में घाट बनाना,

(ग) वर्तमान सब बन्दरों का पुनर्निर्माण और आधुनिकीकरण,

(घ) कलकत्ता, कोचीन और मद्रास में अतिरिक्त घाट और जहाज खड़े होने के स्थान बनाना, और

(ङ) छोटे बन्दरों में उपलब्ध सुविधाओं की नाप-जोख करना और उनमें से कुछ चुने हुए बन्दरों को सुधारना, जिससे बड़े बन्दरों का बोझ कुछ हलका हो सके।

५४. प्रथम योजना में बन्दरों के विकास का जो कार्यक्रम आरम्भ किया गया था उसका व्यय ६२ करोड़ रुपए कूता गया था। इस कार्यक्रम के विवरण को अन्तिम रूप योजना के बाद के वर्षों में दिया गया था, और उसके लिए ८५ करोड़ रुपए की राशि स्वीकृत कर दी गई थी। उनमें से अब तक ३१ करोड़ रुपए व्यय हुए हैं। कंडला में बन्दर और तेलवाही जहाजों को खड़ा करने के स्थान पर काम होने लगा है। बम्बई में भी तेलवाही जहाजों को खड़ा करने के तीन ऐसे स्थान तैयार किए जा चुके हैं जहां बड़े से बड़ा तेलवाही खड़ा हो सकता है। वहां से मुख्य भूमि तक तेल लाने के लिए समुद्र के भीतर नल भी लगाए जा चुके हैं। प्रिन्सेज और विक्टोरिया डाक (जहाजों के लंगर डालने के स्थान) में माल उतारने-चढ़ाने के बड़े शेडों का पुनर्निर्माण और एलेक्ज़ेण्ड्रा डाक के क्रेन को बिजली से चलाने के लिए उसमें बिजली लगाने का काम करीब-करीब पूरा हो चुका है। कलकत्ता में हुगली नदी को नियन्त्रित करने के लिए अकरा नामक स्थान पर एक ठोकर बनाई गई और सोनाई नामक यार्ड में खनिज कच्ची धातुएं एकत्र करने के लिए एक केन्द्रीय डिपो और ४,००० कर्मचारियों के रहने के लिए एक बड़ी बस्ती तैयार हो चुकी है। जो काम चल रहे हैं, उनमें खिदिरपुर डाक के रेलवे यार्ड का सुधार, किंग जार्ज डाक में भारी सामान उठाने के लिए २०० टन के क्रेन से युक्त यार्ड का निर्माण, माल-जहाज खड़े करने के दो अतिरिक्त घाट, और एक बड़े ड्रेजर (मिट्टी कीचड़ खोदकर हटाने वाला यन्त्र) का निर्माण भी शामिल हैं। मद्रास में जो काम चल रहे हैं उनमें दो मुख्य हैं : एक तो जहाज खड़े करने के नए स्थान बनाने के लिए एक जलाशय (वेट डाक) का निर्माण, और दूसरा रेत का जमाव रोकने की व्यवस्था। कोचीन में तेलवाही और कोयला-वाही जहाजों से माल उतारने के नए घाट बनकर तैयार हो गए हैं। घाटों पर जहाज खड़े करने के चार नए स्थान बन रहे हैं। इन सब सुधारों का लाभ यह हुआ है कि बड़े बन्दर अब लगभग २·५ करोड़ टन के जहाजों को संभाल सकेंगे।

५५. द्वितीय योजना का प्रधान लक्ष्य यह है कि जो काम प्रथम योजना में आरम्भ किए गए थे उन्हें पूरा कर लिया जाए और बन्दरों में डाकों को ऐसा आधुनिक और साधन-सम्पन्न बना दिया जाए कि वे देश के आर्थिक तथा औद्योगिक विकास के कारण उत्पन्न हुई नई आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। इसलिए द्वितीय योजना में बड़े बन्दरों के सब कार्यक्रम पूरे करने के लिए ४० करोड़ रुपए की व्यवस्था कर दी गई है। जो काम शुरू किए जाएंगे उन पर, प्रथम योजना से बचे हुए कामों को मिलाकर, ७६ करोड़ रुपए व्यय हो जाने की सम्भावना है। योजना में जो ४० करोड़ रुपए रखे गए उनके अतिरिक्त कुछ राशियां बन्दरों के अपने साधनों से भी मिल सकती हैं। जो धनराशि रखी गई है उसका उपयोग सरकार द्वारा कंडला में प्रत्यक्ष विनियोग करने और योजना में पोर्ट ट्रस्टों की प्रबन्धकर्त्री संस्थाओं को सहायता देने के लिए किया जाएगा। इस समय पोर्ट ट्रस्टों को जिन रियायती शर्तों पर ऋण दिए जाते हैं उन्हीं शर्तों पर द्वितीय योजना में भी दिए जाते रहेंगे।

५६. द्वितीय योजना में बड़े बन्दरों के विकास के लिए जो राशियां व्यय की जाएंगी उनमें से कलकत्ता पर १६.६ करोड़ रुपए, बम्बई पर २६·३ करोड़ रुपए, मद्रास पर ९·२ करोड़ रुपए, कोचीन पर ४ करोड़ रुपए और कान्दला पर १४ करोड़ रुपए व्यय होंगे।

५७. बम्बई के बन्दरगाह का विकास करने के लिए जो काम किए गए या किए जा रहे हैं उनमें मुख्य ये हैं : प्रिन्सेज और विक्टोरिया डाक के विकास का 'न्यूनतम कार्यक्रम' (१० करोड़ रुपए), बन्दरगाह की मुख्य धारा को गहरा करना (८ करोड़ रुपए), प्रिन्सेज और विक्टोरिया डाक में मरम्मत घरों का निर्माण (२·२५ करोड़ रुपए), एलेक्जेण्ड्रा डाक में क्रेनों को बिजली से चलाने की व्यवस्था करना (१·६ करोड़ रुपए), तैरता क्राफ्ट (१·४ करोड़ रुपए) और कर्मचारियों के मकान (२·२६ करोड़ रुपए)। प्रिन्सेज और विक्टोरिया डाक के विकास के न्यूनतम कार्यक्रम के कुछ काम ये हैं : जहाजों के भीतर बाहर जाने-आने के लिए एक ऐसे 'लाक' अर्थात प्रवेश द्वार का निर्माण जो डाक में पानी भर और निकाल सके। इस 'लाक' में ऐसे सरकने वाले 'केइसन' (पिंजरे) लगे होंगे जिनमें पानी रहने पर भी आदमी काम कर सकें; पानी भरने और निकालने के पम्प लगाना; प्रिन्सेज और विक्टोरिया डाक के मध्यवर्ती रास्ते को चौड़ा करना; और विक्टोरिया डाक की बर्थों (जहाज खड़ा करने की जगहों) का विस्तार करना। इस कार्यक्रम आदि के विवरण पर विचार किया जा रहा है। इसका उद्देश्य इन डाकों को ऐसा आधुनिक बना देना है कि ज्वार की अवस्था का विचार किए बिना भी जहाज जब चाहें तब आ-जा सकें। बम्बई के बन्दरगाह में बहुत समय से गाद इकट्ठी होती जा रही है, इसलिए उसकी खुदाई करना आवश्यक हो गया है। बम्बई के बन्दर में जहाजों की मरम्मत के लिए भी दो अतिरिक्त 'बर्थ' बनाए जाएंगे।

५८. कलकत्ता के बन्दर का विकास करने के लिए जो काम किए जाएंगे उनमें मुख्य-मुख्य ये हैं—डाकों और बर्थों का सुधार (५·१४ करोड़ रुपए), नदी का नियन्त्रण (२·६१ करोड़ रुपए), तैरता क्राफ्ट (६·६४ करोड़ रुपए), और कर्मचारियों के लिए मकान (१ करोड़ रुपए)। किदरपुर डाकों में घाट की दीवारों को सुधारा और मजबूत बनाया जाएगा, साथ ही किंग जार्ज और खिदिरपुर डाकों में सब प्रकार का माल लादने-उतारने का एक बर्थ बनेगा और पुराने बर्थों को सुधारा जाएगा। फुल्टा पाइण्ट रीच में नदी को नियन्त्रित करने के लिए जो काम किया जाएगा उसका उद्देश्य हुगली नदी में जहाजों के यातायात में सुधार करना है।

५९. मद्रास के बन्दर को सुधारने के लिए जो काम किए जाएंगे उनमें एक काम 'वेट डाक' का बनाना भी है। द्वितीय योजना में इसके निर्माण की पहली मंजिल पूरी की जाएगी, और इस पर ७ करोड़ रुपए व्यय होंगे। इनका सम्बन्ध वर्तमान बन्दरगाह के साथ जोड़कर इसमें चार नए बर्थ बना दिए जाएंगे, जिससे इस बन्दर में अधिक माल लादा-उतारा जा सके। इसके अतिरिक्त यहां एक आयल डाक (तेलवाही जहाज खड़े करने का जलाशय, लागत ५५ लाख रुपए) और एक फ्लोटिंग क्राफ्ट (तैरता घाट, लागत ६५ लाख रुपए) बनाया जाएगा और बन्दर पर अन्य यन्त्र (लागत २४ लाख रुपए) लगाए जाएंगे।

६०. कोचीन के बन्दर में कोयले का एक बर्थ, फोर्ट-कोचीन में एक नया बर्थ और एक बर्थ दूसरे टग (खींचने या धकेलने वाले जहाज) के लिए बनाया जाएगा। चार अतिरिक्त व्हार्फ (घाट) जो वहां पहले से बन रहे हैं, पूरे कर दिये जाएंगे; इन सब कामों पर १ करोड़ ५२ लाख रुपए व्यय हो जाने का अन्दाजा है। इस बन्दर के अन्य काम हैं : प्रकाश की सुविधाएं प्रदान करना (३० लाख रुपए), बन्दर के यन्त्रादि का प्रबंध करना (४० लाख रुपए) और कर्मचारियों के मकान बनाना (२४ लाख रुपए)।

६१. कंडला में माल उतारने की चार जेटियां बनाई जा रही हैं। दो तो अक्तूबर १९५६ और दो मार्च १९५७ में पूरी हो जाएंगी। द्वितीय योजना के समय ३ करोड़ ४६ लाख रुपए की लागत से दो और जेटियां (खनिज) कच्ची धातुओं के लिए बनाई जाएंगी। ३·१२ करोड़ रुपए गान्धीधाम नगर का विकास करने के लिए रखे गए हैं।

६२. छोटे बन्दर—भारत में छोटे बन्दरगाह १५० से ऊपर हैं, परन्तु इनमें से १८ अधिक महत्व के हैं और उनका विकास करने पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। प्रथम योजना में इनका विकास करने के लिए २·४१ करोड़ रुपए रखे गए थे। इनमें से १ करोड़ रुपया तो केन्द्रीय ऋण से मिलने वाला था और शेष राशि का प्रबन्ध इन बन्दरों के अधिकारी स्वयं करने वाले थे। द्वितीय योजना में छोटे बन्दरों की उन्नति के लिए ५ करोड़ रुपए रखे गए हैं। इनमें से ३ करोड़ रुपए इन बन्दरों के सुधार पर व्यय किए जाएंगे, और १ करोड़ रुपए से तीन ड्रेजर (समुद्र में खुदाई करने वाले यन्त्र) मंगवाकर दो को पश्चिमी तट पर और एक को पूर्वी तट पर रखा जाएगा। ये तट उन सब छोटे बन्दरों की जरूरत पूरी किया करेंगे जिन पर अब तक आवश्यक ध्यान नहीं दिया गया। छोटे बन्दरों की नाप-जोख करने की भी आवश्यकता है। केवल इसी काम के लिए जल सेना की एक नौका को सर्वे नौका में बदल दिया जाएगा और उस पर ३६ लाख रुपए व्यय होंगे। शेष राशि परादीप, मंगलौर और मालपे बन्दरों को सब ऋतुओं के योग्य बन्दरगाह बनाने के लिए अनुसन्धान करने, और सेतुसमुद्रम् तथा तूतीकोरिन के विकास के लिए आवश्यक आरम्भिक कार्रवाइयां करने में व्यय किया जाएगा। समुद्र तट-वर्ती राज्यों को अपने छोटे बन्दरों की उन्नति करने के लिए केन्द्रीय सरकार जिस प्रकार प्रथम योजना काल में ऋण देती रही थी, उसी प्रकार द्वितीय योजना काल में भी देती रहेगी।

६३. प्रकाश स्तम्भ—प्रकाश स्तम्भों का विकास करने के लिए द्वितीय योजना में ४ करोड़ रुपए रखे गए हैं। अन्दाजा है कि ८० लाख रुपए तो लाइटहाउस रिजर्व फण्ड (प्रकाश स्तम्भ सुरक्षित कोश) से मिल जाएंगे और शेष ३·२ करोड़ रुपए का सरकार से ऋण लिया जाएगा। इस कार्यक्रम में नए प्रकाश स्तम्भों का निर्माण करना और पुरानों को आवश्यक सामग्री से सम्पन्न करके उन्हें उचित स्तर तक ले आना भी सम्मिलित है। प्रथम योजना में सुझाव दिया गया था कि सब प्रकाश स्तम्भों की तालिका एक केन्द्रीय पंजिका में बनाकर, उन्हें धीरे-धीरे केन्द्रीय सरकार अपने अधिकार में ले ले। इस पर कुछ अमल किया गया है, और द्वितीय योजना के समय भी किया जाता रहेगा। १९५३ में एक प्रकाश स्तम्भ अधिनियम बनाकर प्रकाश स्तम्भों की चुंगी २ आना प्रति टन से बढ़ाकर ४ आना प्रति टन कर दी गई थी।

७. आन्तरिक जल मार्ग परिवहन

६४. उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक भारत की परिवहन व्यवस्था में आन्तरिक जल मार्गों का महत्वपूर्ण भाग हुआ करता था। उसके पश्चात अनेक कारणों से जल मार्गों का निरन्तर ह्रास होता गया। इनमें दो बड़े कारण थे, रेलों का विस्तार और नदियों के ऊपरी भागों में सिंचाई के लिए बड़ी मात्रा में पानी का खींच लिया जाना। परन्तु देश के उत्तर-पूर्वी भागों में जल मार्गों का महत्व अब भी बहुत है। अन्दाजा लगाया गया है कि भारत की नदियों में ५,००० मील के जल मार्ग आधुनिक यन्त्र-चालित नौकाओं के चलने योग्य बनाए जा सकते हैं। इस समय भारतीय नदियों में यन्त्र-चालित देशी नौकाएं १,५५७ मील तक और बड़ी देशी नावें ३,५८७ मील तक चल सकती हैं। नदियों की उथली धाराओं में नौका-चालन के तीन उपाय हैं—धाराओं को गहरा कर देना, उन्हें नियन्त्रित कर देना, नहरें बनाना और खोदकर गहरा कर देना, और विशेष रूप

से उथली धाराओं में चलने योग्य नौकाओं का प्रयोग करना। प्रथम दो उपायों के लिए भारी मात्रा में पूंजी लगानी पड़ेगी और खुदाई का काम निरन्तर करते रहना पड़ेगा। इसलिए इस समय लक्ष्य प्रधानतया विशिष्ट प्रकार की नौकाओं पर केन्द्रित किया जा रहा है। प्रथम योजना काल में एक गंगा-ब्रह्मपुत्र बोर्ड बनाया गया था। वह तीन स्थानों पर परीक्षण करके देख रहा है। इनमें से दो परीक्षण तो ऊपरी गंगा और असम की सहायक नदियों में, और तीसरा असम में ब्रह्मपुत्र नदी पर यात्रियों और माल को उतारने का किया जा रहा है। ऊपरी गंगा में चलने योग्य नौकाओं का प्रयोग द्वितीय योजना के आरम्भ में होने वाला था। शेष दो स्थानों पर चलने योग्य नौकाओं की विशेषताओं का निर्धारण किया जा रहा है। द्वितीय योजना काल में गंगा-ब्रह्मपुत्र प्रदेश का विकास कार्य पूरा कर लेने का विचार है। इसमें महत्वपूर्ण जल धाराओं को गहरा करना, नौका संचालन में रेडियो टेलीफोन तथा स्वयं चालित दूर से ज्योतियां आदि लगवाकर सहायता पहुंचाना और चुने हुए स्थानों पर घाट बन्दर आदि बनवाना सम्मिलिति है। इस योजना में बकिंघम नहर को सुधारने तथा उसे मद्रास बन्दरगाह के साथ मिलाने और पश्चिमी तट की नहरों को सुधारने का कार्यक्रम भी रखा गया है।

६५. आन्तरिक जल परिवहन को सुधारने के लिए द्वितीय योजना में ३ करोड़ रुपए रखे गए हैं। इनमें से १ करोड़ १५ लाख रुपए बकिंघम नहर को और ४३ लाख रुपए पश्चिमी तट की नहरों को सुधारने के लिए हैं। शेष राशि गंगा-ब्रह्मपुत्र बोर्ड द्वारा अपने कामों पर व्यय की जाएगी। इसके अतिरिक्त, इस बोर्ड को कुछ सहायता राज्य सरकारें भी दिया करेंगी। यह तय किया गया है कि गंगा-ब्रह्मपुत्र प्रदेश के विकास कार्यों के लिए वर्तमान वित्तीय व्यवस्था को बना रहने दिया जाएगा। इस बोर्ड की पूंजी-विनियोग की सारी आवश्यकता तो केन्द्रीय सरकार पूरी करती ही है, साथ ही बोर्ड के चालू खातों में जितना व्यय होता है उतना ही उसे वह अनुदान के रूप में दे देती है। बकिंघम नहर कई राज्यों में से गुजरती है, इसलिए यदि अनुसन्धान के पश्चात यह प्रतीत हुआ कि इसके सुधार पर पूंजी का व्यय कर देना उचित होगा, तो इस कार्य के लिए जितनी पूंजी की आवश्यकता होगी उतनी दे देने के बारे में केन्द्रीय सरकार विचार करेगी। गंगा और ब्रह्मपुत्र के जल मार्गों की सब योजनाएं गंगा-ब्रह्मपुत्र बोर्ड द्वारा ही क्रियान्वित की जाएंगी। दक्षिण में पृथक बोर्ड न बनाकर सब काम सम्बद्ध राज्य सरकारों द्वारा करवा लिए जाएंगे। यदि आवश्यकता हुई तो उनमें समन्वय की व्यवस्था कर दी जाएगी।

८. नागरिक वायु परिवहन

६६. नागरिक विमानन—गत पन्द्रह वर्षों में नागरिक विमानन ने द्रुत गति से प्रगति की है। भारत सरकार ने पहले-पहल १९२० में बम्बई-कलकत्ता और कलकत्ता-रंगून के वायु मार्ग खोलने और आवश्यक हवाई अड्डे बनाने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेने और उन्हें अन्य सामग्रियों तथा सुविधाओं से सम्पन्न करने का निश्चय किया था परन्तु सरकार ने नागरिक विमानन का आरम्भ १९२४-२५ में किया और द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ने तक उनकी प्रगति मन्द ही रही। देश के विभाजन के पश्चात नागरिक विमानन पर व्यय धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा है। १९४७ से लेकर प्रथम योजना आरम्भ होने तक इन कामों पर लगभग ६·६ करोड़ रुपए व्यय हो गए होंगे और आशा है कि प्रथम योजना काल में ८ करोड़ रुपए और भी व्यय किए गए होंगे। द्वितीय योजना काल में आशा है कि १८ करोड़ रुपए के नए काम आरम्भ किए जाएंगे। योजना में उनके लिए लगभग १२·५ करोड़ रुपए रखे गए हैं। हाल में जो नई प्रौद्योगिक उन्नतियां हुई हैं, उनके कारण तो नई जरूरतों को पूरा करने की मांग होगी ही, अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक विमानन के समझौते के

अनुसार भी भारत पर अपने हवाई अड्डों में उक्त समझौते द्वारा निर्धारित सुविधाएं पहुंचाने का जो उत्तरदायित्व आएगा उसका निर्वाह करने के लिए भी नया व्यय करना पड़ेगा। नागरिक विमानन के कार्यक्रम में ८·३ करोड़ रुपए, दूर-संचार के यन्त्रों के लिए २·८ करोड़ रुपए, वायु मार्गों और हवाई अड्डों के सामान के लिए ७० लाख रुपए, प्रशिक्षण और शिक्षण की सामग्री के लिए ५० लाख रुपए, अनुसन्धान और विकास कार्यों की सामग्री के लिए १६ लाख रुपए, और हवाई निरीक्षण के सामान के लिए ३·८ लाख रुपए रखे गए हैं।

६७. इस समय नागरिक विमानन विभाग ८१ हवाई अड्डों की देख-भाल और संचालन करता है। प्रथम योजना के समय ६ नए हवाई अड्डे बनाए गए थे, और दो १६५६ के अन्त तक तैयार हो जाएंगे। इस विभाग ने कुछ अड्डे प्रतिरक्षा मंत्रालय से भी लिए हैं। साधारण लक्ष्य यह रखा गया है कि सब राज्यों की राजधानियों और देश के बड़े नगरों में हवाई अड्डों की व्यवस्था रहे। उसकी पूर्ति के लिए आशा है कि द्वितीय योजना काल में ८ नए हवाई अड्डे और ग्लाइडर ड्रोम बना दिए जाएंगे। हवाई अड्डों पर तामीर के जो काम किए जाएंगे उनमें हवाई जहाजों के उड़ने तथा उतरने के मार्ग, मोटरों के मार्ग, हवाई जहाज घर, उनके सामने के पक्के स्थान, किराया घर, कर्मचारियों के निवास गृह और अन्य औद्योगिक भवन आदि शामिल हैं। इनके अतिरिक्त, कुछ हवाई अड्डों की भूमि पर प्रकाश की भी स्थायी व्यवस्था की जाएगी।

६८. दूर-संचार के यन्त्र और हवाई मार्गों तथा हवाई अड्डों पर अन्य यन्त्र लगाने के कार्यक्रम यह मानकर बनाए जा रहे हैं कि द्वितीय योजना की समाप्ति पर जितने हवाई अड्डे नागरिक विमानन विभाग के नियन्त्रण में होंगे, उनमें से कम से कम ५० पर प्रकाश की और लगभग ७४ पर दूरक्षेपी ज्योतियों की स्थायी व्यवस्था करनी पड़ेगी, जिससे कि रात्रि के समय भी वहां हवाई जहाज उतर सकें। हवाई उड़ान और दूर-संचार के कोई भी यन्त्र लगाते हुए द्रुत औद्योगिक उन्नति के कारण होने वाली अनिश्चितताओं का सामना करना ही पड़ता है।

६६. प्रथम योजना काल में शिक्षण और प्रशिक्षण की प्रगति मन्द रही थी। हवाई सर्विसों की उत्कृष्टता के लिए कर्मचारियों का प्रशिक्षण और प्रयुक्त यन्त्र-सामग्री के मानदंड ऊंचे होने आवश्यक हैं। सरकार द्वारा नियुक्त एक समिति की सिफारिशों के अनुसार निश्चय किया गया है कि प्रशिक्षण का केन्द्र इलाहाबाद को बना दिया जाए और व्यापारिक वायु चालकों के प्रशिक्षण का स्तर ऊंचा उठाया जाए। 'ग्लाइडिंग' को प्रोत्साहित करने और हवाई क्लबों को ठोस आधार पर संगठित करने के उपाय करने का भी विचार है। द्वितीय योजना काल में १० नए ग्लाइडिंग केन्द्र और ५ नई हवाई क्लबें कायम करने का प्रस्ताव है। द्वितीय योजना में अनुसन्धान की सुविधाओं का विस्तार करने और अतिरिक्त यन्त्र-सामग्री मंगाने की भी व्यवस्था रखी गई है।

७०. एयर कारपोरेशन—हवाई सर्विसों का राष्ट्रीयकरण प्रथम योजना काल में पूरा करके, अगस्त १६५३ में एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल का अन्तर्राष्ट्रीय यात्राओं के लिए और इण्डियन एयरलाइन्स कार्पोरेशन का देश के भीतर की यात्राओं के लिए दो एयर कार्पोरेशनों (हवाई कम्पनियों) का संगठन कर दिया गया था। ये कार्पोरेशन अपनी हवाई सर्विसों को संगठित करने और अपने संगठन को बलवान बनाने का यत्न करते रहे हैं। इन्होंने कुछ विस्तार कार्यक्रम भी आरम्भ किए हैं। इण्डियन एयरलाइन्स के पास इस समय ६२ हवाई जहाज हैं—इनमें ६६ डकोटा, १२ वाईकिंग, ६ स्काइमास्टर और ८ हिरोन हैं जो देश के अधिकतर बड़े नगरों में चलते हैं, और इनके नियमित मार्गों की लम्बाई १६,६८५ मील है। एयर इण्डिया इन्टर्नेशनल

के पास ६ वायुयान हैं, जिनमें ५ सुपर-कानस्टेलेशन, ३ कानस्टेलेशन और १ डकोटा है। ये १५ देशों में आते-जाते हैं और इनके मार्गों की लम्बाई २३,४८३ मील है। प्रथम योजना में इन दोनों कार्पोरेशनों के लिए आरम्भ में ९·५ करोड़ रुपए रखे गए थे, परन्तु सम्भावना है कि इन पर वस्तुतः १५·३ करोड़ रुपए व्यय हो गए होंगे।

७१. द्वितीय योजना में इन दोनों के लिए ३०·५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है—१६ करोड़ रुपए इण्डियन एयरलाइन्स कार्पोरेशन के लिए और १४·५ करोड़ रुपए एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल के लिए। व्यय की मोटी-मोटी मदें ये हैं :–

	(करोड़ रुपए)
मुआवजे की अदायगी	५·१४
हवाई जहाजों की खरीद	१५·३४
इण्डियन एयरलाइन्स के संचालन में हानि	७·००
कार्यालय और निवास गृह (इण्डियन एयरलाइन्स)	०·५०
एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल के कारखानों का विस्तार	१·९५
इण्डियन एयरलाइन्स के लिए यन्त्रादि की खरीद	०·५१
एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल के डिबेंचरों की वापसी	०·०९
योग ...	३०·५३

७२. इण्डियन एयरलाइन्स के वायुयानों के बेड़े के आधुनिकीकरण की भी व्यवस्था की जा रही है। प्रथम योजना काल में ५ वाइकाउण्ट वायुयानों के लिए आर्डर दिया गया था और उनके १९५७ के मध्य तक आ जाने की आशा थी। द्वितीय योजना काल में कौन-से वायुयान मंगाए जाएं, इसका विचार किया जा रहा है। एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल के लिए कुछ 'टर्बोप्राप' अथवा 'जेट' किस्म के वायुयान खरीदने की बात सोची जा रही है, जिससे वर्तमान सर्विसों की बढ़ती हुई मांग पूरी की जा सके और नई सर्विसें जारी की जा सकें। 'सर्विसों' का विस्तार करते हुए अनेक बातों का विचार करना पड़ता है, जैसे वायुयान किस प्रकार के खरीदे जाएं, संचालन व्यय क्या पड़ेगा, किराए और भाड़े क्या हैं, संगठन की कुशलता कैसी है, संभावित हानियों को कैसे रोका जाए, सर्विसें सुरक्षित कैसे रहेंगी, और देश के सब भागों को एक-दूसरे के साथ सम्बद्ध किस प्रकार किया जा सकेगा, इत्यादि।

संचार और प्रसारण

विषय-प्रवेश

संचार सेवाओं में डाक, तार और टेलीफोन, वैदेशिक संचार और ऋतु विज्ञान आदि सेवाएं सम्मिलित ह । संचार संबंधी इस अध्याय में प्रसारण का भी वर्णन है, जैसा कि प्रायः होता आया है । संचार और प्रसारण की वृद्धि देश की आर्थिक और टेक्नोलौजिकल उन्नति का एक परिपूरक तत्व है और औद्योगिक एवं व्यावसायिक गतिविधि का विस्तार, जीवन स्तर की उन्नति, साक्षरता की वृद्धि तथा सामाजिक जीवन के परिवर्तन आदि का असर इन सेवाओं के विकास की गति पर पड़ता है। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में संचार और प्रसारण के विकास के कार्यक्रम दूसरे क्षेत्रों में परिकल्पित विकास कार्यों को ध्यान में रखकर ही बनाए गए हैं। योजना में इन कार्यक्रमों के लिए ७६ करोड़ रुपए की व्यवस्था है जिसमें से ६३ करोड़ रुपए डाक-तार और टेलीफोन सेवाओं पर, ५० लाख रुपए भारतीय टेलीफोन उद्योग पर, २ करोड़ रुपए वैदेशिक संचार पर, १·५ करोड़ रुपए ऋतु विज्ञान पर और ६ करोड़ रुपए प्रसारण पर खर्च होंगे । इसके अतिरिक्त जैसा प्रायः होता रहा है, डाक-तार विभाग योजना की अवधि में अपने राजस्व का १·७५ करोड़ रुपया लगाकर नये डाकघर खोलेगा । संचार विकास के कार्यक्रम में, दूसरे कार्यों के अतिरिक्त, २०,००० डाकघर, १,४०० तारघर और १,२०० सार्वजनिक टेलीफोन घर और १,८०,००० टेलीफोन लगाए जाएंगे । इस कार्यक्रम का प्रतिवर्ष पर्यालोचन भी होगा, जिससे यह देखा जा सके कि संचार व्यवस्था का विकास इस गति से हो कि उससे उद्योग तथा व्यवसाय और दूसरी पंचवर्षीय योजना के समय हाथ में लिए हुए दूसरे विकास कार्यों की मांग पूरी होती है ।

डाक व तार

२. प्रथम योजना में डाक-तार विभाग के लिए ५० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई थी । इस योजना की अवधि में वास्तविक व्यय ४१ करोड़ रुपए होने की आशा है । दूसरी योजना में डाक और तार के लिए ६३ करोड़ रुपए की व्यवस्था है, जिसका वितरण निम्न प्रकार है :

	(करोड़ रुपए)
स्थानीय टेलीफोन सेवा	२९·०
सार्वजनिक टेलीफोन घर	१·०
खुले तार के ट्रंक तथा उसके प्रेषक तार	३·०
ट्रंक तार और उसके प्रेषक तार	८·५
ट्रंक एक्सचेंज	१·४
तार सेवा	२·०
अन्य प्रशासनिक कार्यों की मांगें	२·१
विविध आवश्यकताएं	६·०
भवन	१०·०
योग	६३·०

३. स्थानीय तार सेवा—पहली योजना शुरू होने से पहले देश में १,६८,००० टेलीफोन थे। योजना की अवधि में लगभग १,००,०००, टेलीफोन और लगाए गए। इस समय १ लाख से अधिक टेलीफोनों की मांग विचाराधीन है और दूसरी योजना की अवधि में इस मांग में काफी अधिक वृद्धि होगी। दूसरी योजना की अवधि में १,८०,००० नए टेलीफोन लगाने का विचार है। इस विस्तार के लिए १ लाख ६० हजार नई एक्सचेंज लाइनें स्थापित करने, बहुत सारे नए एक्सचेंज खोलने और कई वर्तमान हस्त-चालित एक्सचेंजों को स्वचालित बनाने की आवश्यकता होगी। विस्तार का यह कार्यक्रम मुख्यत: देश में टेलीफोन के यंत्र और एक्सचेंज लाइनें बनाने और विशेषत: भारतीय टेलीफोन उद्योग के उत्पादन की क्षमता पर निर्भर करता है। विभिन्न स्रोतों की बढ़ती हुई मांगों को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि इस कार्यक्रम की प्रगति का निरन्तर पर्यालोचन होता रहे।

४. ट्रंक टेलीफोन सेवा—ट्रंक टेलीफोन सेवा सार्वजनिक फोन कार्यालयों और ट्रंक एक्सचेंजों से उपलब्ध होती है जो कि फिजिकल सर्किटों और खुले तार मार्गों तथा भूमिगत तारों द्वारा संचालित प्रेषण पद्धतियों के जरिये ट्रंक ताने-बाने से जुड़े होते हैं। ट्रंक टेलीफोन व्यवस्था के विस्तार का उद्देश्य केवल यही नहीं है कि सब नगरों और प्रशासन इकाइयों को यह सेवा उपलब्ध हो, बल्कि यह है कि देश में किसी भी सुविधाजनक दूरी तक, उदाहरणार्थ पांच मील के भीतर टेलीफोन सेवाएं उपलब्ध हों। इस व्यवस्था के स्तर को भी उठाना है, जिससे प्रमुख लाइनों पर नम्बर मिलाया जा सके और शाखा लाइनों पर भी प्राय: अविलम्ब नम्बर मिल सके। दूसरी योजना में देश में सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालयों और ट्रंक एक्सचेंजों की यथेष्ट संख्या बढ़ाने और खुले तार के ट्रंक तथा प्रेषकों के ताने-बाने के विस्तार की व्यवस्था की गई है। लम्बे भूमिगत तार बिछाने की भी इस योजना में उचित व्यवस्था है। यह कार्य पहली योजना की अवधि में शुरू किया गया था।

५. पहली योजना से पूर्व देश में ३३८ सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालय थे। सितम्बर १९५३ तक सरकार की सामान्य नीति यह थी कि ऐसे कार्यालय केवल वहीं चलाए जाएं जहां कि वे आत्म-निर्भर हो सकें। तब यह निर्णय किया गया कि सभी जिलों के सदर मुकामों में सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालय खोले जाएं। बाद में यह निर्णय हुआ कि सब-डिवीजनों के सदर मुकामों में भी सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालय खोले जाएं। यह कार्यक्रम दूसरी योजना की अवधि में पूरा किया जाना है। अब विचार यह है कि तहसीलों के सदर मुकामों, बीस हजार या अधिक जनसंख्या के नगरों, ऐसे केन्द्रों में जहां कि सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालय अपना व्यय उठा सकें तथा कुछ दूसरे स्थानों में भी सार्वजनिक टेलीफोन लगाए जाएं। यह आशा की जाती है कि पहली योजना के अन्त तक सार्वजनिक टेलीफोनों की संख्या १,२१८ तक पहुंच जाएगी और दूसरी योजना की अवधि में यह संख्या लगभग दूनी हो जाएगी।

६. पहली योजना में ४०९ ट्रंक एक्सचेंज लगाने का कार्यक्रम बनाया गया था। आशा है कि योजना की अवधि में उनमें से ३५० पूरे हो गए होंगे। देश की ट्रंक एक्सचेंज व्यवस्था को पुनर्गठित करने का विचार है। इसके अनुसार देश को ११ प्रादेशिक केन्द्रों, ९५ जिला केन्द्रों और कई छोटे व आश्रित एक्सचेंजों में विभक्त किया जाएगा। दूसरी योजना की अवधि में ६ प्रादेशिक केन्द्र, ९ जिला केन्द्र और उनसे सम्बद्ध छोटे व आश्रित एक्सचेंज खोलने का विचार है। कई टेकनीकल सुधार भी किए जाएंगे।

७. दूसरी योजना के लिए खुले तार मार्गों और भूमिगत तारों के विस्तार का कार्यक्रम भी बनाया गया है। पहली योजना में जहां खुले तार मार्गों पर ५०,००० चैनल मील प्रेषक तार लगाए गए हैं, वहां दूसरी योजना में लक्ष्य १ लाख ५० हजार मील पूरा करने का है: इसमें नए मार्गों पर तार बिछाना और वर्तमान मार्गों पर अतिरिक्त तार लगाना दोनों सम्मिलित हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की २२६ खुली तार प्रेषक पद्धतियों की व्यवस्था की गई है। भूमिगत तारों के सम्बन्ध में बनाई गई योजना में बम्बई-दिल्ली-कलकत्ता, दिल्ली-अमृतसर, अम्बाला-शिमला और थाना-पूना के मध्य लम्बे भूमिगत ट्रंक तार बिछाने का कार्यक्रम है। इन भूमिगत तारों में ऐसी तारवाहक व्यवस्थाएं होंगी कि टेलीफोन, संगीत और वी० एफ० टी० चैनल लगाये जा सकें। इस सारी व्यवस्था पर ११ करोड़ रुपए व्यय होंगे।

८. तार सेवा—पहली योजना से पूर्व ३,५६२ तारघर थे। पहली योजना की अवधि में १,३२० नए तारघर खोले गए। ट्रंक एक्सचेंजों की भांति तारघरों के विकास कार्यक्रम का सामान्य उद्देश्य यही है कि देश के प्रत्येक स्थान से नियत दूरी तक, जैसे कि ५ मील के भीतर, तार सेवा उपलब्ध हो सके। एक साधारण तार को तारघर में लेने और उसको ठिकाने पर पहुंचाने में जो समय लगता है उसको घटाकर कम से कम करना है। इसके लिए यह आवश्यक है कि तारों के बार-बार के आदान-प्रदान से बचने के लिए टेलीप्रिंटर (दूर मुद्रक) और टेप प्रसारण पद्धति का व्यापक प्रयोग किया जाए और मोर्स क्रिया प्रणाली को क्रमशः हटा दिया जाए। दूसरी योजना में कार्यक्रम का लक्ष्य यह है कि तहसील और थानों में, जहां इस समय तारघर नहीं हैं, तथा दूसरे प्रशासनिक केन्द्रों में ७०० तारघर, तथा ५,००० या इससे अधिक जनसंख्या के नगरों में ४०० नए तारघर खोले जाएं। विकास कार्यक्रम की सुविधा की दृष्टि से हर एक केन्द्र की प्रतिवर्ष औसतन हानि की सीमा को ५०० रुपए से बढ़ाकर १,००० रुपए करना होगा। उन स्थानों पर जहां कि आर्थिक लाभ होने की सम्भावना है तथा कुछ अन्य चुने हुए स्थानों पर भी तारघर खोले जाएंगे। आशा है कि दूसरी योजना की अवधि में लगभग १,४०० तारघर स्थापित हो जाएंगे। तार पद्धति को आधुनिक स्तर पर लाने के लिए कई टेकनीकल सुधार भी किए जाएंगे। इन सुधारों में दूसरे सुधारों के अतिरिक्त ७० हजार से ८० हजार चैनल मील वी० एफ० टी० वाहक पद्धतियां, बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली और मद्रास में टेप प्रसारण पद्धति तथा कलकत्ता, दिल्ली और मद्रास में टेली-प्रिंटरों का लगाना तथा प्रतिलिपि (फैसिमिली) कार्य पद्धति का प्रारम्भ भी सम्मिलित हैं।

९. डाक सुविधाओं का विस्तार—पहली योजना से पूर्व ३६,००० डाकघर थे और योजना की अवधि में १८,९०० डाकघर नए बनाए गए। पहली योजना का उद्देश्य था कि तहसील, ताल्लुका, थाना आदि सभी प्रशासनिक केन्द्रों के अतिरिक्त चारों ओर दो-दो मील तक के क्षेत्र में २,००० जनसंख्या वाले प्रत्येक ग्राम-समूह में एक डाकखाना हो, बशर्ते कि वार्षिक हानि ७५० रुपए से अधिक न हो और ३ मील तक कोई डाकघर न हो। दूसरी योजना का लक्ष्य यह होगा कि ४ मील के घेरे में स्थित २,००० तक की जनसंख्या के प्रत्येक ग्राम-समूह में डाकघर हो। इसके अतिरिक्त, दूसरी योजना की अवधि में सभी राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों के सदर मुकामों में भी डाकघर खोले जाएंगे, यदि वहां वार्षिक हानि और वर्तमान डाकघर से दूरी की शर्तें पूरी हो जाएं। दूसरी योजना की अवधि में कुल मिलाकर लगभग २० हजार डाकघर खुलने की आशा है।

१०. विस्तार कार्यक्रम के साथ-साथ डाक के शीघ्रतर पहुंचाने के उपाय भी किए जाएंगे जिन मार्गों पर विमान सेवाएं उपलब्ध हैं, वहां हवाई डाक का प्रबन्ध करने का विचार है यह भी सुझाव दिया गया है कि लगभग १८ देशों को, जहां अभी तक हवाई पार्सल भेजने क व्यवस्था नहीं है, हवाई पार्सल भेजने की व्यवस्था की जाए। कुछ अतिरिक्त रेलवे मेल गाड़िय और १०० नई मेल मोटरों की भी व्यवस्था की गई है। डाक व्यवस्था में मशीनों का प्रयोग शु करने का कार्यक्रम भी बनाया गया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बड़े-बड़े डाकघरों में डाक थैलों को लाने-ले जाने और उठाने के यंत्र, कम्प्टोमीटर, कार्ड-लिफाफे बेचने की मशीनें, टिकट प मुहर लगाने की मशीनें, पार्सल लेबल देने की मशीनें आदि लगाई जाएंगी। आशा है कि इ सब उपायों से डाकघरों की कार्यकुशलता काफी कुछ बढ़ जाएगी।

११. अन्य कार्यक्रम—डाक-तार विभाग की योजनाओं में टेलीप्रिंटर कारखाने, माईया की डाक-तार वर्कशाप, वर्तमान तार वर्कशापों के विकास और शोध एवं प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापन का उल्लेख किया जा सकता है। इस विभाग के भवन निर्माण कार्यक्रम में कार्यालय भवनों के निर्माण के अतिरिक्त कर्मचारियों के लिए बहुत-से क्वार्टर भी बनाए जाएंगे। योजना में सरकारी विभागों और निजी व्यक्तियों की टेलीफोन सम्बन्धी आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखा गय है।

भारतीय टेलीफोन उद्योग

१२. टेलीफोन सेवा के द्रुततर विकास के लिए आवश्यक है कि टेलीफोन यंत्र देश में ही बनाए जाएं। इस उद्देश्य से ही १९४८ में भारतीय टेलीफोन उद्योग योजना चालू की गई थी। कारखाने के विकास के लिए पहली योजना में १ करोड़ ३० लाख रुपए की व्यवस्था थी। बाद में यह राशि बढ़ाकर ३ करोड़ ४९ लाख कर दी गई। योजना की अवधि में वास्तविक व्यय २ करोड़ ९१ लाख रुपए होने का अनुमान है। कारखाने की क्षमता ३५ हजार एक्सचेंज लाइनें और ५० हजार टेलीफोन यंत्र प्रतिवर्ष तैयार करने की हो गई है। इस कारखाने का आरम्भ विदेशों से आयात किए गए टेलीफोन यंत्रावयवों को एकत्र कर यंत्र तैयार करने के काम से किया गया था, परन्तु अब अवयव बनाने का काम भी सन्तोषजनक प्रगति पर है। अब यह कारखाना टेलीफोन के ५३९ अवयवों में से ५२० स्वयं तैयार कर लेता है, शेष १९ में से १७ दूसरे भारतीय कारखानों में तैयार हो जाते हैं, और केवल २ अवयव विदेश से मंगवाए जाते हैं। एक्सचेंज लाइन के यंत्रों के सम्बन्ध में भी भारतीय टेलीफोन उद्योग आत्मनिर्भरता प्राप्त करने की कोशिश में है। आशा है कि दूसरी योजना की अवधि में एक्सचेंज लाइन यंत्र के लिए अपेक्षित अवयवों में से ८५ प्रतिशत अवयव इसी कारखाने में ही तैयार होने लगेंगे।

१३. दूसरी योजना की अवधि में ४० हजार एक्सचेंज लाइनों और ६० हजार टेलीफोन यंत्रों के प्रतिवर्ष निर्माण किये जाने का अभीष्ट कार्यक्रम है। परन्तु इस स्तर पर यह उत्पादन तभी पहुंचेगा जब कि निर्यात व्यापार के लिए बाजार मिल सकेगा। भारतीय टेलीफोन उद्योग के लिए योजना में ५० लाख रुपए की व्यवस्था है। यदि आवश्यक हुआ तो यह उद्योग अपने विकास के लिए स्वयं कुछ धन दे सकेगा।

समुद्रपार संचार सेवा

१४. विदेशों से अपना सम्पर्क बढ़ाने और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए भारत को एक सुविकसित समुद्रपार संचार पद्धति की अपेक्षा है। समुद्रपार संचार सेवा का उद्देश्य सब महत्व-

पूर्ण देशों के साथ बेतार-तार, टेलीफोन और रेडियो-फोटो सम्बन्ध स्थापित करता है। पहली योजना से पूर्व भारत का ९ देशों—ब्रिटेन, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, चीन, अफगानिस्तान और जापान के साथ सीधा रेडियो सम्बन्ध था। शेष संसार से सम्पर्क स्थापित करने के लिए इसे लन्दन की 'केबल एण्ड वायरलेस लिमिटेड' संचार पद्धति पर निर्भर रहना होता था। दूसरी योजना के शुरू किये जाने के समय तक यह आशा की जाती है कि भारत का १४ देशों से रेडियो-तार सम्बन्ध, १६ देशों से रेडियो-टेलीफोन सम्बन्ध और ५ देशों से रेडियो-फोटो सम्बन्ध स्थापित हो चुकेगा। इसके अतिरिक्त समुद्रपार संचार सेवा विदेशस्थ भारतीय राजदूतावासों और वाणिज्यिक निकायों के लिए संयुक्त प्रसारण व समाचार-पत्रों के लिए समाचार प्रसारण की भी व्यवस्था करती है।

१५. पिछले वर्षों में जनता, समाचार-पत्रों, व्यापार संस्थाओं, सरकारी एजेंसियों और विदेशों से यह मांग बढ़ती जा रही है कि द्रुततर सुदूरगामी संचार साधनों की अतिरिक्त सुविधाएं मिलें। कुछ अवस्थाओं में उपलब्ध यंत्रों द्वारा अस्थायी व्यवस्था कर दी गई है। दूसरी योजना की अवधि में सबसे पहले उपयुक्त उपकरणों द्वारा विद्यमान सर्किटों को सुदृढ़ किया जाएगा। जहां तक सम्भव होगा, विद्यमान उपकरणों में आधुनिक टेकनीकों का उपयोग कर सन्देश आदान-प्रदान की क्षमता को बढ़ाया जाएगा। योजना के अनुसार कई नए सर्किटों की भी स्थापना होगी। आशा है कि दूसरी योजना की अवधि में २५ और देशों के साथ सीधा रेडियो-तार, रेडियो-फोन और रेडियो-फोटो सम्बन्ध स्थापित हो जाएगा। इसके अतिरिक्त, योजना के अनुसार रेडियो-टेलीफोन मार्गों पर एक उच्च गोपनीयता पद्धति, समाचार-पत्रों में समाचार प्रसार के लिए विशेष सुविधाएं, विदेश मंत्रालय के अधीन समाचार प्रसारण कार्यक्रम का अपेक्षाकृत विस्तृत प्रसारण और उड्डयन कम्पनियों एवं व्यापार संस्थाओं के लाभ के लिए पट्टे पर लिए जा सकने वाले अनेक सर्किटों की भी व्यवस्था की जाएगी। इन सर्किटों की रचना ऐसी होगी कि भारत के समुद्रपार संचार के चारों केन्द्रों से इन्हें काम में लाया जा सके और योजना का लक्ष्य यह है कि सब केन्द्रों में उपलब्ध सेवाएं परस्पर संगठित हों, जिससे किसी एक केन्द्र के बिगड़ जाने पर भी दूसरे केन्द्र द्वारा बाह्य संसार से सम्पर्क बनाए रखा जा सके। दूसरी योजना की अवधि में इस कार्यक्रम में कुल व्यय २ करोड़ रुपए होने का अनुमान है।

ऋतु विज्ञान

१६. पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में प्रमुख हवाई अड्डों की वेधशालाओं में यंत्रों के आधुनिकीकरण के लिए यत्न किया गया था। शिलांग में स्थित केन्द्रीय सिस्मोलाजिकल (भूचाल दर्शक) वेधशाला और कोडाई-कनाल वेधशाला तथा विभाग की प्रयोगशालाओं के लिए नए यंत्रों की व्यवस्था की गई थी। वेधशालाओं के लिए अपेक्षित बहुत-से औजारों के निर्माण के लिए आरम्भिक कार्य शुरू कर दिया गया। कोसी, नर्मदा, ताप्ती आदि कुछ नदियों के जलस्रवण क्षेत्रों में जल मापक संस्थाओं का ढांचा भी बना लिया गया, ताकि जल परिमाण सम्बन्धी तथ्य एकत्र किये जा सकें और बाढ़ नियन्त्रण योजना के लिए उनका अध्ययन किया जा सके। कार्यालयों, वेधशालाओं और कर्मचारियों के क्वार्टरों के लिए भवन निर्माण के कार्य में सन्तोषजनक प्रगति हुई। सुझाव है कि दूसरी योजना की अवधि में महत्वपूर्ण हवाई अड्डा वेधशालाओं के यंत्रों का और अधिक आधुनिकीकरण किया जाए, विभागीय कारखानों और प्रयोगशालाओं का विस्तार किया जाय तथा जलवायु विज्ञान और कृषि सम्बन्धी ऋतु विज्ञान के विकास के लिए भी कार्य किया जाए। शिलांग स्थित केन्द्रीय भूचाल दर्शक वेधशाला और अलीबाग स्थित मैगनेटिक वेधशालाओं के कार्यों का भी विस्तार किया जाएगा। कोडाई-

कनाल वेवशाला को नक्षत्र विज्ञान, रेडियो ज्योतिर्विज्ञान व दूसरी नई दिशाओं में काम करने के लिए नए यंत्रों से और अधिक विकसित किया जाएगा। इस वेधशाला के विकास कार्यक्रम में जिन कामों के करने का विचार है उनमें एक चश्मों का कारखाना और दूसरा मशीन कारखाना लगाना सम्मिलित है। योजना की अवधि में केन्द्रीय ज्योतिर्विज्ञान वेधशाला और नौ सेना सम्बन्धी वेधशाला, इन दो नई वेधशालाओं का निर्माण शुरू किया जाएगा। योजना में कार्यालय, वेधशाला के लिए भवन, कारखाने और प्रयोगशालाओं के विस्तार और कर्मचारियों के लिए क्वार्टर बनाने की भी व्यवस्था है। इन सब कार्यों के लिए योजना में १ करोड़ ५० लाख रुपए की व्यवस्था की गई है।

प्रसारण

१७. पहली योजना में प्रसारण के लिए ३ करोड़ ५२ लाख रुपए की व्यवस्था थी। योजना के चौथे वर्ष में यह राशि बढ़ाकर ४ करोड़ ६४ लाख रुपए कर दी गई। रेडियो के कार्यक्रम कितने क्षेत्र में सुने जाएंगे और उन्हें कितनी जनता सुन सकेगी, इस सम्बन्ध में योजना के मूल रूप में जो लक्ष्य रखे गए थे वे बहुत कुछ पूरे हो गए हैं। बम्बई, बंगलौर, अहमदाबाद, लखनऊ, जालन्धर और कलकत्ता में ५० किलोवाट मीडियम वेव के छः सम्प्रेषण यंत्र लगाये जा चुके हैं। इन्दौर, मद्रास और अजमेर में २० किलोवाट मीडियम वेव सम्प्रेषण यंत्र लगा दिये गए हैं तथा पटना, कटक, विजयवाड़ा, त्रिचूर और दिल्ली में २० किलोवाट मीडियम वेव सम्प्रेषण यंत्र लगाने का काम १९५६ के अन्त तक पूरा हो जाएगा। इन अतिरिक्त यंत्रों की व्यवस्था प्रसारण के विस्तार की दृष्टि से की गई है। नागपुर और गोहाटी के रेडियो स्टेशनों में तथा पूना, राजकोट और जयपुर में जो नए स्टेशन बनाए गए हैं उनमें कम शक्ति के मीडियम वेव सम्प्रेषण यंत्र लगाने का कार्यक्रम पहली योजना के अन्तर्गत नहीं हुआ है। कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और असम आदि देश के कुछ प्रदेशों में भूमि की बनावट और प्रादेशिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए शार्ट वेव सम्प्रेषण यंत्र लगाने का कार्य १९५६ के अन्त तक सम्पन्न हो जाएगा। इस प्रकार पहली योजना में प्रत्येक भाषा के क्षेत्र में कम से कम एक सम्प्रेषण केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था की गई है और देश के लगभग सभी क्षेत्रों को प्रसारण क्षेत्र में लाने का प्रयत्न किया गया है। शार्ट वेव पर अन्तर्राष्ट्रीय सेवा सम्बन्धी जो कार्यक्रम रखा गया है उसका बड़ा भाग १९५६ के अन्त तक पूरा हो जाएगा।

१८. दूसरी योजना का प्रधान लक्ष्य नए केन्द्रों की स्थापना करना नहीं है बल्कि यह है कि सब भाषाओं के लिए उपलब्ध सेवाओं को अधिक से अधिक क्षेत्रों में विस्तृत किया जाए। इसलिए दूसरी योजना में सम्प्रेषण केन्द्रों के खोलने की व्यवस्था इस प्रकार की गई है जिससे कि उन क्षेत्रों को प्रसारण सुविधाएं दी जा सकें जहां इस समय ये सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखकर इस लक्ष्य की पूर्ति मीडियम वेव और शार्ट वेव के उचित संयोजन से की जाएगी। तिरुचिरापल्ली में ५० किलोवाट मीडियम वेव सम्प्रेषण यंत्र लगाकर तमिल भाषा भाषी क्षेत्र में प्रसारण का विस्तार किया जाएगा और बम्बई तथा कलकत्ता की प्रसारण सेवा को भी मीडियम वेव पर सशक्त किया जाएगा। दूसरी ओर उन क्षेत्रों में जहां वायुमण्डलीय कोलाहल रहता है या जो विशेष भौगोलिक रचना के प्रदेश हैं अथवा जहां की जनसंख्या बहुत बिखरी हुई और बस्तियां दूर-दूर हैं अथवा जहां अनेक बोलियां बोली जाती हैं, वहां प्रसारण की सफलता के लिए शार्ट वेव का प्रयोग किया जाएगा। इसके लिए पहाड़ी प्रदेशों में, शिमला, लखनऊ और गोहाटी में, मध्य प्रदेश और उसके आस-पास की आदिवासी बस्तियों में, राजस्थान और मराठी तथा तेलुगु क्षेत्रों में शार्ट वेव सम्प्रेषण यंत्रों के प्रयोग की व्यवस्था की गई है।

१९. राष्ट्रीय कार्यक्रमों की बढ़ती हुई मांग और राष्ट्रीय कार्यक्रमों के देशव्यापी प्रसारण की आवश्यकता को देखते हुए यह विचार है कि दिल्ली में १०० किलोवाट शार्ट वेव और १०० किलोवाट मीडियम वेव के सम्प्रेषण यंत्र लगाए जाएं। कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में ५० किलोवाट मीडियम वेव सम्प्रेषण लगाकर इन स्थानों की प्रसारण सेवाएं समस्त भारत के लिए उपलब्ध की जाएंगी। इन सम्प्रेषण यंत्रों का उपयोग वैदेशिक प्रसारण सेवाओं को अधिक सफल बनाने में भी किया जाएगा। भारत के विदेशों से बढ़ते हुए सम्पर्क के कारण वैदेशिक प्रसारण सेवाओं के विस्तार की आवश्यकता बढ़ रही है। दिल्ली में १०० किलोवाट के दो शार्ट वेव सम्प्रेषण यंत्र लगाए जाएंगे जिनसे यह आवश्यकता पूरी की जा सकेगी।

२०. टेलीविजन के क्षेत्र में भी कार्य शुरू करने का प्रस्ताव है।

२१. देहातों में रेडियो कार्यक्रम सुनने की सुविधाएं बहुत बढ़ाई जाएंगी ताकि गांवों में रहने वाले उस प्रसारण व्यवस्था से लाभ उठा सकें जिसकी व्यवस्था पहली योजना में की गई है और जो दूसरी योजना में बढ़ाई जाएगी। विचार है कि १,००० या इससे अधिक आबादी वाले सब गांवों में पंचायती रेडियो लगा दिये जाएं। इस योजना की अवधि में कुल मिलाकर लगभग ७२,००० रेडियो लगाने का प्रस्ताव है।

२२. योजना में रखी गई धनराशि का शेष भाग अदला-बदली करने, कुछ केन्द्रों में स्थायी स्टूडियो की व्यवस्था करने और प्रतिलिपि, शोध एवं प्रशिक्षण की सुविधाओं को सफल बनाने के लिए है। विकास कार्यक्रम को पूरा करने के लिए आल इंडिया रेडियो को अधिक कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होगी। इसके लिए भी योजना में व्यवस्था कर दी गई है। इनमें ६७८ रेडियो इंजीनियर भी होंगे।

२३. योजना में प्रसारण के लिए ९ करोड़ रुपए की व्यवस्था है, जिसका विवरण इस प्रकार है :—

(लाख रुपयों में)

१. सम्प्रेषण यंत्र	
अन्तर्देशीय सेवाएं	२१९.९९
वैदेशिक सेवाएं	१२८.०६
२. स्टूडियो की स्थापना और अतिरिक्त कार्यालय	२६७.८१
३. टेलीविजन	४०.००
४. पंचायती रेडियो	७५.००
५. सम्पत्ति की अदला-बदली	३१.२०
६. शोध विभाग	१९.६०
७. प्रतिलिपि सेवा ट्रांसक्रिप्शन सर्विस	१४.००
८. कर्मचारी प्रशिक्षण विद्यालय...	५.००
९. कर्मचारी आवास गृह	५.००
१०. क्षेत्रगति और भूमि परिवहन, पर्यवेक्षण, चलती-फिरती अभिलेखन (रिकार्डिंग) गाड़ियां, फ़ोटो-स्टाट यूनिट आदि दूसरे कार्यक्रम	६८.३४
११. स्थापना दल	२६.००
जोड़ ...	९००.००

अध्याय २३

शिक्षा

विषय-प्रवेश

आर्थिक प्रगति जिस तेजी से की जा सकती है और उससे जो लाभ उठाए जा सकते हैं, उसका निश्चय करने में शिक्षा पद्धति का विशेष महत्व होता है। आर्थिक विकास स्वाभाविक रूप से मानवीय साधनों की मांग करता है और एक लोकतान्त्रिक व्यवस्था में यह ऐसे मूल्यों तथा मान्यताओं को जगा देता है जिनके निर्माण में शिक्षा एक महत्वपूर्ण तत्व होती है। समाजवादी ढंग के समाज का अर्थ यह है कि विभिन्न स्तरों पर प्रत्येक कार्य में जनता का सहयोग और रचनात्मक नेतृत्व हो। परन्तु भरपूर विकास के कार्यकाल में आर्थिक और सामाजिक विकास की योजनाओं को बनाते हुए जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है उनके अन्तर्गत एक यह भी समस्या है कि शिक्षा और उसके लक्ष्यों को पूरा करने के लिए साधनों का आवंटन कैसे किया जाए। पिछले वर्षों में शिक्षा के ढांचे के सम्बन्ध में बहुत कुछ विचार-विमर्श हुआ है और बहुत-से विषयों पर परिवर्तन के लिए शिक्षा शास्त्री कुछ विशेष प्रस्तावों पर सहमत हो चुके हैं, जैसा कि विश्वविद्यालय आयोग, माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा अन्य कई ऐसी समितियों के प्रतिवेदनों से प्रकट है, जिन्होंने शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं पर विचार किया है। केन्द्र और राज्य सरकारों ने द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रमों के निश्चित करने के लिए शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में हुई उन्नति का सिंहावलोकन किया है। जो कार्यक्रम बनाए गए हैं उनके मुख्य भागों पर इस अध्याय में प्रकाश डाला गया है।

२. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में बुनियादी शिक्षा, प्रारम्भिक शिक्षा के विस्तार, माध्यमिक शिक्षा के रूप-परिवर्तन, कालेज और विश्वविद्यालय के शिक्षा-स्तर में सुधार, प्रौद्योगिक तथा व्यावहारिक शिक्षा के लिए सुविधाओं के विस्तार और सामाजिक शिक्षा तथा सांस्कृतिक विकास के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने पर अधिक जोर दिया गया है। पहली पंचवर्षीय योजना में शिक्षा के विकास के लिए १६९ करोड़ रुपए—४४ करोड़ रुपए केन्द्रीय सरकार द्वारा और १२५ करोड़ रुपए राज्य सरकारों द्वारा—रखे गये थे। दूसरी योजना में ३०७ करोड़ रुपयों की व्यवस्था है जिसमें से ९५ करोड़ केन्द्रीय सरकार और २१२ करोड़ रुपए राज्य सरकारों द्वारा व्यय होने हैं। पहली और दूसरी योजना में शिक्षा के विविध क्षेत्रों पर खर्च का जो विभाजन रखा गया है वह इस प्रकार है :

	पहली योजना	दूसरी योजना
	(करोड़ रुपयों में)	
प्रारम्भिक शिक्षा	९३	८९
माध्यमिक शिक्षा	२२	५१
विश्वविद्यालयिक शिक्षा	१५	५७
प्रौद्योगिक और व्यावसायिक शिक्षा	२३	४८
सामाजिक शिक्षा	५	५
प्रशासन और विविध	११	५७
योग ...	१६९	३०७

पहली योजना के लिए रखी गई धनराशि का कुछ भाग शिक्षा के विकास के लिए योजना से पूर्व निर्मित योजनाओं को चालू रखने पर भी खर्च होना था। परन्तु दूसरी योजना में पहली योजना की अवधि में स्थापित संस्थाओं पर होने वाले खर्च को तो समाविष्ट खर्च मान लिया गया है और योजना के लिए जो धनराशि रखी गई है वह नई संस्थाओं की स्थापना, वर्तमान संस्थाओं के विस्तार अथवा विकास के लिए ही है। ऊपर जिस व्यवस्था का उल्लेख किया गया है, उसके अतिरिक्त दूसरी योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार सेवा तथा सामुदायिक विकास क्षेत्रों के शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रम में सामान्य शिक्षा पर १२ करोड़ तथा सामाजिक शिक्षा पर १० करोड़ रुपए की व्यवस्था विद्यमान है। विकास के विभिन्न क्षेत्रों—कृषि, स्वास्थ्य, पिछड़े वर्गों का कल्याण, विस्थापित व अन्य व्यक्तियों का पुनर्वास आदि कार्यक्रमों के अन्तर्गत भी शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं के विस्तार के लिए काफी धनराशि रखी गई है।

३. नीचे दिये गये विवरण से ज्ञात होगा कि पहली योजना की अवधि में शिक्षा के विविध क्षेत्रों में कितनी उन्नति हो सकी है और दूसरी योजना का क्या लक्ष्य है। प्रत्येक क्षेत्र की पृथक-पृथक प्रगति का सिंहावलोकन आगे किया गया है।

	इकाई	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१
१. विभिन्न वय वर्ग के बच्चों के लिए शिक्षा सुविधाएं				
(क) ६–११	छात्र संख्या	१,८६,८०,०००	२,४८,१२,०००	३,२५,४०,०००
वय वर्ग का प्रतिशत		४२·०	५१·०	६२·७
(ख) ११–१४	,,	३१,७०,०००	५०,९५,०००	६३,८७,०००
वय वर्ग का प्रतिशत		१३·९	१९·२	२२·५
(ग) १४–१७	,,	१४,५०,०००	२३,०३,०००	३०,७०,०००
वय वर्ग का प्रतिशत		६·४	९·४	११·७
२. संस्थाएं				
(क) प्राथमिक/निम्न बुनियादी	स्कूल संख्या	२,०९,६७१	२,७४,०३८	३,२६,८००
(ख) निम्न बुनियादी	,,	१,४००	८,३६०	३३,८००
(ग) मिडिल/उच्च बुनियादी	,,	१३,५९६	१६,२७०	२२,७२५
(घ) उच्च बुनियादी	,,	३५१	१,६४५	४,५३१
(ङ) हाई/हायर सैकण्डरी	,,	७,२८८	१०,६००	१२,१२५
(च) बहूद्देश्यीय स्कूल	,,	—	२५०	१,१८७
(छ) हायर सैकण्डरी स्कूल बना दिये जाने वाले हाई स्कूल		—	४७	१,१९७
(ज) विश्वविद्यालय		२९	३१	३८
३. इंजीनियरी				
(क) संस्थाएं—				
(१) डिग्री देने वाली		४१	४५	५४
(२) डिप्लोमा देने वाली		६४	८३	१०४

	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१
(ख) प्रतिफल—			
(१) डिग्री लेने वाले	१,७००	३,०००	५,४८०
(२) डिप्लोमा लेने वाले	२,१४६	३,५६०	८,०००
४. टेकनोलौजी			
(क) संस्थाएं—			
(१) डिग्री देने वाली	२५	२५	२८
(२) डिप्लोमा देने वालो	३६	३६	३७
(ख) प्रतिफल—			
(१) डिग्री लेने वाले	४९८	७००	८००
(२) डिप्लोमा लेने वाले	३३२	४३०	४५०

४. इस विवरण से ज्ञात होता है कि पहली योजना की अवधि में किए गए और दूसरी योजना के लिए निर्धारित प्रयत्न किसी भी प्रकार थोड़े नहीं हैं। तथापि, सारी समस्या के आकार-प्रकार की दृष्टि से इन्हें देखना होगा। हाल के वर्षों में कई क्षेत्रों में स्पष्ट उन्नति हुई है, फिर भी कुछ भारी काम ऐसे हैं जो अभी करने बाकी हैं। उदाहरण के लिए संविधान के एक निदेशक सिद्धान्त के अनुसार राष्ट्र का प्रयत्न होना चाहिए कि संविधान लागू होने से १० वर्ष के भीतर १४ वर्ष तक के प्रत्येक बच्चे के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था हो। पहली योजना लागू होने से पूर्व ६–१४ वय वर्ग के बच्चों में से ३२ प्रतिशत के लिए शिक्षा की व्यवस्था थी। यह प्रतिशत पहली योजना की अवधि के अन्त में ४० प्रतिशत और दूसरी योजना की अवधि में केवल ४९ प्रतिशत तक पहुंचने की आशा है।

प्रारम्भिक शिक्षा

५. प्रारम्भिक शिक्षा की मुख्यतः दो समस्याएं हैं : वर्तमान सुविधाओं का विस्तार और बुनियादी शिक्षा पद्धति के आधार पर शिक्षा पद्धति का नवीकरण। सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए दोनों ही कार्य तात्कालिक एवं आवश्यक हैं।

६. शिक्षा के विस्तार के क्षेत्र में जो लक्ष्य पूरे किए गए और दूसरी योजना के लिए जो लक्ष्य नियत किए गए हैं, वे इस प्रकार हैं :

स्तर	विभिन्न वर्गों के कुल बालकों की प्रतिशत विद्यार्थी संख्या								
	१९५०-५१			१९५५-५६ के अनुमान			१९६०-६१ के लक्ष्य		
	लड़के	लड़कियां	कुल	लड़के	लड़कियां	कुल	लड़के	लड़कियां	कुल
१. प्राथमिक (६-११)	५९	२५	४२	६६	३३	५१	८६	४०	६३
२. मिडिल (११-१४)	२२	५	१४	३०	८	१९	३६	१०	२३
प्रारम्भिक (६-१४)	४६	१७	३२	५७	२३	४०	७०	२८	४९

इस विवरण से स्पष्ट है कि निःशुल्क, अनिवार्य और सबके लिए शिक्षा का जो लक्ष्य संविधान में निर्दिष्ट है वह तो अभी बहुत दूर है। इस विवरण में दिए गए अंक समूचे भारत के अंक हैं, परन्तु राज्य की शिक्षा सम्बन्धी स्थिति में बहुत अन्तर है। कई राज्यों में ये आंकड़े अखिल भारतीय आंकड़ों से कहीं नीचे हैं, तथापि यह आवश्यक है कि संविधान के निदेश को आगामी दस-पन्द्रह वर्षों में पूरा कर दिया जाए।

७. शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं के विस्तार की समस्या कुछ जटिल है और इसके विभिन्न पहलुओं पर विचार करना होगा। विवरण से स्पष्ट है कि ६-११ वय वर्ग के लड़कों के सम्बन्ध में तो प्रगति सन्तोषजनक है परन्तु ११-१४ वय वर्ग के लड़कों की प्रगति अपेक्षाकृत बहुत धीमी हुई है। दोनों ही वय वर्गों में लड़कियों की शिक्षा बहुत ही पिछड़ी हुई है। परिस्थिति का बहुत ही चिन्ताजनक पहलू "क्रमिक ह्रास" है : प्राथमिक स्तर पर यह ५० प्रतिशत से भी अधिक है। स्कूल की पहली कक्षा में प्रविष्ट होने वाले १०० लड़कों में से ५० चौथी कक्षा में पहुंच पाते हैं, शेष लड़के इन चार वर्षों की समाप्ति से पूर्व ही स्कूल छोड़ देते हैं। लड़कियों के मामले में यह ह्रास और भी अधिक है। ह्रास की समस्या से मिलती-जुलती समस्या गतिरोध की होती है। शिक्षा के विस्तार की समस्याओं का राज्यों में और एक ही राज्य के विभिन्न भागों में विभिन्न होना सम्भव है। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक इलाके में अपेक्षित उपायों का निश्चय करने के लिए विस्तृत सर्वेक्षण किया जाए। राज्य सरकारों के साथ मिलकर केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय यह सर्वेक्षण करवा रहा है। तथ्यों पर मोटे तौर पर विचार करने के बाद स्थिति सुधार के हेतु कुछ सामान्य सुझाव दिए जा सकते हैं।

८. ह्रास को रोकने के लिए अनिवार्य शिक्षा का आरम्भ करना जरूरी है। यदि किसानों के अधिक काम के दिन यथासम्भव स्कूलों की छुट्टियां के साथ-साथ पड़ें तो अनिवार्य शिक्षा का पालन कराना अपेक्षाकृत सरल हो जाएगा। फिर, विशेषकर देहातों में शिक्षा को व्यावहारिक रूप देने का यथासम्भव प्रयत्न होना चाहिए। गतिरोध दूर करने का मुख्य उपाय यह है कि अध्यापक योग्य हों एवं अध्यापन विधि में जिसमें मानव सम्बन्धों और व्यक्तित्व की समस्याएं सम्मिलित हैं, सुधार किया जाए।

९. लड़कियों की शिक्षा की समस्या सबसे अधिक आवश्यक है। लड़कियों की शिक्षा के सम्बन्ध में देश के प्रत्येक भाग में जन-मत एक-सा जाग्रत नहीं है। माता-पिताओं को सिखलाने और शिक्षा को कन्याओं की आवश्यकताओं से और अधिक सम्बद्ध करने का विशेष यत्न करने की आवश्यकता है। हर क्षेत्र की परिस्थिति का अलग-अलग अध्ययन करना आवश्यक होगा। जहां सहशिक्षा स्वीकार करने में बाधाएं हैं, वहां के लिए दूसरे उपायों को खोजना होगा। कुछ क्षेत्रों में पृथक स्कूल ही खोलने पड़ेंगे और कुछ में अन्तरिम उपाय के रूप में पारी पद्धति को अपनाना सम्भव होगा। एक पारी में लड़कों की और दूसरी पारी में लड़कियों की पढ़ाई होगी।

स्त्री शिक्षा की प्रगति में एक बड़ी बाधा अध्यापिकाओं की कमी भी है। १९५३-५४ में अध्यापिकाओं की संख्या, प्राथमिक और सैकेण्डरी स्कूलों में नियुक्त सब अध्यापकों की संख्या के जोड़ की १७ प्रतिशत थी। अध्यापिकाओं के प्रशिक्षण कार्य को अविलम्ब्य मानकर चलना होगा, विशेषकर इसलिए कि तीसरी पंचवर्षीय योजना में प्राथमिक शिक्षा के विस्तार की समस्या अधिकतर स्त्री शिक्षा से सम्बद्ध होगी। अध्यापिकाओं के लिए गांवों में

आवास सुविधाओं की व्यवस्था करना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण पग बढ़ाना होगा। अध्यापन वृत्ति के अल्पसामयिक होने के कारण विवाहित स्त्रियों का अध्यापन वृत्ति की ओर आकृष्ट होना सम्भव है।

१०. ११-१४ वय वर्ग के उन बच्चों के लिए जो पारिवारिक आय में अपना भाग देते हैं, निरन्तर खुले रहने वाले स्कूल बहुत-से विद्यार्थियों को स्कूली शिक्षण देने में सहायक हो सकते हैं।

११. उपलब्ध भवनों तथा अन्य सुविधाओं को अधिकाधिक प्रभावशाली बनाने की भी काफी जरूरत है। इस सम्बन्ध में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने १९५६ की पिछली बैठक में बुनियादी तथा गैर-बुनियादी दोनों प्रकार के स्कूलों में पारी पद्धति चलाने की सिफारिश की है। इस योजना से पूरा लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा को क्रमशः अनिवार्य किया जाए और इस लक्ष्य से स्कूलों में प्रवेश संख्या की वृद्धि के लिए पर्याप्त प्रचार का आश्रय लिया जाए। पारी पद्धति का परीक्षण अभी तिरुवांकुर-कोचीन और बम्बई राज्य में ही किया गया है, शेष देश के लिए यह पद्धति अभी नई है। सुझाव यह है कि आरम्भ में इसको केवल दो कक्षाओं तक सीमित रखा जाए और इससे प्राप्त अनुभव का बीच-बीच में सिंहावलोकन होता रहे। पारी पद्धति की सिफारिश आदर्श पद्धति के रूप में नहीं, अपितु कुछ व्यावहारिक कठिनाइयों को दूर करने के लिए है। पढ़ाई के घण्टों में कमी हो जाने से पाठ्यक्रम और स्कूल के अन्दर तथा स्कूल से बाहर दोनों समय के कार्य की योजना का पुनर्नवीकरण करना पड़ेगा।

१२. स्कूल भवनों के सम्बन्ध में अभी तो मितव्ययिता के मानदण्ड को अपनाना होगा। स्कूल का बहुत-सा काम तो मकान से बाहर किया जा सकता है और न्यूनतम आवश्यक स्थान की व्यवस्था स्थानीय समाज जन-अधिकारियों की थोड़ी सहायता से कर सकेगा। स्कूल भवनों के लिए सस्ते नक्शों के परीक्षण किए जाने चाहिएं। किसी गांव में स्कूल खोलने के लिए किसी स्वीकृत मानदण्ड को पूरा करने की शर्त आवश्यक नहीं होनी चाहिए। किसी स्थान में तत्काल जो भी व्यवस्था सम्भव हो उसी के अधीन स्कूल खोला जा सकता है और गांव का मन्दिर, पंचायत घर आदि सार्वजनिक भवनों का उपयोग इसके लिए किया जा सकता है। एक बार स्कूल काम करना शुरू कर दे तो फिर ज्यों ही परिस्थिति अनुकूल हो और स्थानीय चन्दा एकत्र हो जाए, स्कूल का भवन बनना शुरू हो जाएगा।

१३. १४ वर्ष की आयु तक के बच्चों की निःशुल्क शिक्षा और अनिवार्य शिक्षा के बारे में संविधान के निदेश को पूरा करने के लिए सरकारी साधनों के साथ-साथ स्थानीय समाज को भी काफी प्रयत्न करना होगा। बहुत-से देशों में प्रारम्भिक शिक्षा की मुख्य जिम्मेदारी स्थानीय समाज पर होती है। उचित अनुदान देकर राज्य के अधिकारी स्थानीय प्रयत्न को प्रोत्साहित करते हैं। भारत में भी शताब्दियों तक यही प्रथा रही है कि शिक्षा का अधिकांश व्यय जनसमाज ही करता था। पिछले वर्षों में भी स्थानीय समाज ने स्कूल भवनों के लिए बड़ी उदारता से भूमि, श्रम और धन दिया है। अब इसके साथ-साथ यह भी अपेक्षित है कि स्कूल चलाते रहने के लिए धन की व्यवस्था हो। कुछ धन स्थायी रूप में मिले और कुछ नियमित रूप से बाद में मिलता रहे, केवल एक बार के लिए या प्रासंगिक न हो। इस कार्य में निहित सतत उत्तरदायित्व को किसी सीमा तक कन्धा देने योग्य बनाने के लिए राज्य को चाहिए कि वह

ऐसे अधिनियम बनाए जिनसे कि गांव पंचायत आदि के स्थानीय अधिकारी शिक्षा के लिए कर लगा सकें। इस कर को स्थानीय रूप से उगाहने का फल यह होगा कि समुदाय विशेष की जिम्मेदारी ज्यादा अच्छी तरह समझी जाने लगेगी और जनता को बोध हो जाएगा कि जो कुछ भी वे देते हैं उसका उपयोग उनके लाभ के लिए ही होता है। ऐसा विधेयक काफी लचकीला रहना चाहिए जिससे प्रगतिशील तथा दूरदर्शी समुदायों का उदाहरण ऐसे कार्य में दूसरे समुदायों का प्रेरक बन सके। इस शिक्षा कर का मालगुजारी, सम्पत्ति कर आदि उचित राज्य तथा स्थानीय करों से ऐसा सम्बन्ध हो कि समुदाय के विभिन्न हिस्से अपना भाग देने योग्य रहें।

बुनियादी शिक्षा

१४. शीघ्र विकसित होने के लिए देश में बुनियादी शिक्षा के महत्व को अब भली-भांति स्वीकार किया जा चुका है। पहले-पहल प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में ही बुनियादी शिक्षा के कार्यक्रमों पर अमल शुरू हुआ। बुनियादी शिक्षा की प्रगति और दूसरी योजना में इस के निर्धारित लक्ष्य का विवरण इस प्रकार है :—

	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१
स्कूल	१,७५१	१०,०००	३८,४००
भर्ती	१,८५,०००	११,००,०००	८२,२४,०००
प्रशिक्षण स्कूल	११४	४८६	७२६

विभिन्न राज्यों में स्थिति बहुत भिन्न है। सब मिलाकर प्रगति पर्याप्त द्रुत प्रतीत होती है परन्तु जब देखते हैं कि प्रारम्भिक शिक्षा का बुनियादी पद्धति के आधार पर आमूल नवीकरण किया जाना है, तब प्रक्रिया अभी तक बहुत आगे बढ़ी प्रतीत नहीं होती। १९५०-५१ में बुनियादी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों की संख्या, प्रारम्भिक अवस्था के सब बच्चों की संख्या के १ प्रतिशत से भी कम थी। पहली योजना की अवधि की समाप्ति तक यह अनुपात लगभग ४ प्रतिशत हो गया। आशा है कि १९६०-६१ के अन्त तक यह अनुपात ११ प्रतिशत हो जाएगा। बुनियादी अध्यापकों को प्रशिक्षण की सुविधाएं देने में अधिक प्रगति हुई है। स्कूलों को बुनियादी पद्धति के लिए तैयार करने के लिए दस्तकारी तथा दूसरे छात्रोपयोगी कार्यों का अधिक मात्रा में समावेश किया जा रहा है।

१५. बुनियादी शिक्षा के फैलाव की दृष्टि से कुछ प्रशासकीय समस्याओं पर विचार करना होगा। प्रशासकीय दृष्टि से यह आवश्यक है कि शिक्षा सम्बन्धी प्रशासन से सम्बद्ध व्यक्ति नए कार्यक्रम और उसकी पूर्ति के लिए अपेक्षित परिस्थितियों से पूर्णतया परिचित हों। विद्यमान कर्मचारी मण्डल को प्रशिक्षित करना होगा। लक्ष्य यह होना चाहिए कि नई शिक्षा सम्बन्धी सेवाओं में नए भर्ती हुए व्यक्ति बुनियादी शिक्षा में प्रशिक्षण ले चुके हों। स्कूल और स्थानीय समाज को अधिकतम प्रेरणा देने के लिए प्रशासकीय रीति-नीतियों को संशोधित करना होगा।

१६. बुनियादी शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था के लिए अध्यापन के मानदण्ड की उच्चता की गारंटी महत्वपूर्ण है। गोष्ठियों, प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रमों और अन्तर्वृत्ति (इन-सर्विस) प्रशिक्षण योजनाओं का संगठन किया जाना चाहिए और स्नातकोत्तर बुनियादी प्रशिक्षण कालेज

विश्वविद्यालयों द्वारा स्वीकृत हों, जिससे इनमें प्रशिक्षित हुए स्नातक उच्चतर व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए ऊपर जाने के अधिकारी हों। इस प्रयोजन से विविध विश्वविद्यालयों से बातचीत करनी होगी। बुनियादी संस्थाओं के लिए साहित्य निर्माण और बुनियादी शिक्षा पर प्रभाव डालने वाली विविध समस्याओं के अनुसन्धान भी अपेक्षित हैं। पिछले दिनों स्थापित बुनियादी शिक्षा की राष्ट्रीय संस्था इन कार्यों पर ध्यान देगी।

१७. बुनियादी शिक्षा के विस्तार में एक बड़ी कठिनाई जो प्रायः अनुभव होती है यह है कि दूसरे प्रारम्भिक स्कूलों की शिक्षा की अपेक्षा यह महंगी पड़ती है। हाल के वर्षों में हुए अनुभव के आधार पर कुछ सुझाव देना अप्रासंगिक न होगा। किसी भी नए कार्यक्रम में मितव्ययिता की आवश्यकता स्पष्ट है। बुनियादी शिक्षा के उत्पादक पहलू को शिक्षा की आवश्यकताओं के विरुद्ध न होने की सीमा तक मान्यता दी जानी चाहिए और उसे बुनियादी शिक्षा पद्धति के आवश्यक भाग के रूप में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। जो सीमित अनुभव अभी तक हुआ है उससे प्रकट है कि जहां कहीं पर्याप्त सन्तोषजनक परिस्थितियों की व्यवस्था कर दी गई वहां बुनियादी शिक्षा के परिणाम उत्साहजनक रहे, तथापि इस बात पर सब सहमत हैं कि सर्वोत्तम परिणाम तभी प्राप्त होंगे जब कि बहुत-से राज्यों में आजकल चलने वाले पंचवर्षीय स्कूलों के स्थान पर सर्वांगपूर्ण अष्टवर्षीय स्कूल अथवा एक केन्द्रीय अष्टवर्षीय स्कूल को भरने वाले अनेक पंचवर्षीय स्कूल स्थापित हों। स्कूलों में उपस्थिति बढ़ाने के लिए कई उपाय करने आवश्यक हैं। स्कूल के लिए भूमि और सामान प्राप्त करने के लिए स्थानीय समाज के चन्दे को अधिकतम मात्रा में उगाहना चाहिए। अनेक बार, जब कृषि भूमि की चकबन्दी की जाती है या कृषि सहकारी समितियों का निर्माण होता है अथवा कहीं से ग्राम समाज के अधिकार में भूमि का कोई टुकड़ा आता है, तो ग्राम विद्यालय को उसके कार्यों के लिए तथा पूरक आय का एक नियमित साधन प्रदान करने के लिए कुछ भूमि दी जा सकती है। निर्मित वस्तुओं की किस्म पर विशेष बल देना आवश्यक है। इससे उनको खपाने में सुगमता होगी। स्कूल अथवा समाज के उपयोग से बचे माल की खपत में स्थानीय सहकारी समितियों की सहायता लेनी चाहिए। दस्तकारी के उपकरणों की रचना में विद्यार्थियों को यथासम्भव हिस्सा लेना चाहिए।

कृषि, ग्राम तथा लघु उद्योग, सहकारिता विकास तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा आदि सम्बद्ध कार्यक्रमों से सम्बन्ध स्थापित करके और इस प्रकार हर एक जिले और ब्लाक की विकास योजना में बुनियादी शिक्षा देने वाली संस्थाओं का एक सुनिश्चित स्थान बनाकर बुनियादी शिक्षा के व्यावहारिक मान और आर्थिक लाभ को भी बढ़ाया जा सकता है। यह इस बात में भी सहायक होगा कि बुनियादी शिक्षा विकास के अन्य क्षेत्रों की आवश्यकताओं के साथ-साथ चल सके। ऐसे समन्वय के लिए यह आवश्यक है कि बुनियादी शिक्षा की परामर्शदात्री समितियों में विकास कार्य की विविध शाखाओं के प्रतिनिधि सम्मिलित रहें।

१८. सामुदायिक विकास में ग्राम स्कूलों, विशेषतः बुनियादी पद्धति के स्कूलों का प्रमुख हिस्सा है। इस प्रकार स्कूल में जिन विचारों का सूत्रपात होता है वे बच्चों के साथ अध्यापकों के सामान्य सम्पर्क द्वारा समुदाय के जीवन में प्रविष्ट होते हैं। जो ग्राम निवासी स्थानीय स्कूल में जाते हैं और वहां होते हुए कार्य को देखते हैं, वे नए सुझावों को ग्रहण कर लेते हैं। एक स्कूल समुदाय की उन्नति में जो कुछ योग दे सकता है, उसके महत्व को बढ़ाने के लिए यह सुझाव दिया गया है कि सब उच्च बुनियादी स्कूलों के पास एक खेत और उससे सम्बद्ध एक कारखाना हो। साधारणतया लोग उदारतापूर्वक दान देकर ऐसे कार्यों को सहायता देने के लिए तैयार रहते हैं।

१६. ऊपर के वर्णन से यह स्पष्ट है कि प्रारम्भिक शिक्षा एक मौलिक महत्व का क्षेत्र है, जिसमें पर्याप्त समय तक नए विचारों के परीक्षण, मार्ग-दर्शक अध्ययनों का प्रारम्भ, परिणामों की जांच, और निर्णीत विधियों को बहुसंख्या में कार्यान्वित करने की त्वरित विधियों का विकास करना आवश्यक होगा। प्रशासकीय रीति-नीति, भर्ती के नियम, पदवृद्धि की विधियों आदि में बड़े-बड़े नए मार्ग निकालने आवश्यक होंगे। इन कार्यों और इस अध्याय में वर्णित अन्य कार्यों को करने के लिए शिक्षा मन्त्रालय एक बुनियादी तथा प्रारम्भिक शिक्षा परिषद की स्थापना के प्रस्ताव पर विचार कर रहा है।

माध्यमिक शिक्षा

२०. माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं पर विचार-विमर्श किया और १९५३ में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। आयोग ने विद्यमान माध्यमिक स्कूलों की त्रुटियों पर विचार किया और कहा कि तत्कालीन पाठ्यक्रम और अध्यापन की परम्परागत रीति विद्यार्थियों के अपने चारों ओर के संसार का अन्तर्दर्शन नहीं करा पाती और विद्यार्थियों के समूचे व्यक्तित्व को विकसित करने में असफल रहती है। पहले अंग्रेजी भाषा के अध्ययन पर अधिक बल दिया जाने के कारण बहुत-से दूसरे विषयों की उपेक्षा की जाने लगी थी। कक्षाओं में विद्यार्थियों की संख्या बहुत अधिक हो जाने के कारण अध्यापकों और विद्यार्थियों का व्यक्तिगत सम्पर्क कम हो गया और अनुशासन तथा चरित्र-निर्माण पर पर्याप्त बल नहीं दिया जा सका। जब-तब आंशिक सुधार आरम्भ किए गए परन्तु आवश्यकता इस बात की थी कि माध्यमिक शिक्षा पद्धति का आमूल नवीकरण हो। इसलिए माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षा सम्बन्धी पाठ्यक्रमों में अपेक्षाकृत अधिक विविधता और व्यापकता लाने और अधिक सर्वांगपूर्ण पाठ्यक्रमों की—जिनमें सामान्य और व्यावसायिक दोनों प्रकार के विषय सम्मिलित हों—व्यवस्था करने के प्रस्ताव रखे। उनका यह विचार नहीं है कि 'सामान्य' या 'सांस्कृतिक' शिक्षा और 'व्यावहारिक', 'व्यवसायात्मक' अथवा 'टेकनीकल' शिक्षा में कोई बनावटी विभाग कम विद्यमान है। आयोग ने जिस प्रशासन सम्बन्धी आदर्श की सिफारिश की है उसमें यह सुझाव विद्यमान है कि प्रारम्भिक या निम्न बुनियादी शिक्षा के चार-पांच साल के अन्तर के बाद तीन वर्ष की एक मिडिल अथवा उच्च जूनियर अथवा निम्न या माध्यमिक अवस्था और चार वर्ष की उच्च माध्यमिक अवस्था होनी चाहिए। उसके बाद पहला डिग्री पाठ्यक्रम तीन वर्ष का होना चाहिए। आयोग ने बहूद्देश्यीय स्कूलों, पृथक या बहूद्देश्यीय स्कूलों के अंगभूत औद्योगिक स्कूलों की स्थापना और देहातों में कृषि शिक्षा के लिए विशेष सुविधा देने की सिफारिश की। सब माध्यमिक स्कूलों में भाषा, सामान्य विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, और एक समान अंग के रूप में किसी एक दस्तकारी को पाठ्यक्रमों में सामान्यतया अपनाने की व्यवस्था का प्रस्ताव किया। इन सिफारिशों के आधार पर ही केन्द्र और राज्य सरकारों ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए कार्यक्रमों का निर्धारण किया है। आधुनिक रीति से आर्थिक विकास के लिए ऐसी निर्दोष माध्यमिक शिक्षा पद्धति को आधार बनाना आवश्यक है जो बहुत-सी विभिन्न दिशाओं में प्रवेश करा सके। आंशिक रूप से इसलिए कि माध्यमिक शिक्षा का रूप पहले ही एक रेखात्मक रहा है, मैट्रिक पास लोगों में पहले ही बेकारी बहुत बढ़ी हुई है, आर्ट्स कालेज अनियंत्रित होते दिखाई देते हैं और इस पद्धति से न तो समाज को ही उचित लाभ पहुंचा है न व्यक्ति को ही।

२१. दूसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए बहुत बड़ी संख्या में ऐसे विज्ञ कार्यकर्ताओं, टेकनीशियनों और विशेषज्ञों की आवश्यकता है जिन्होंने

प्रारम्भिक या माध्यमिक शिक्षा के बाद किसी विशेष व्यवसाय की प्रौद्योगिक और व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण की हुई हो। इस प्रकार अध्यापकों, राष्ट्रीय विस्तार सामुदायिक योजना क्षेत्रों के कार्यकर्ताओं, सहकारिता कर्मचारियों, राजस्व प्रशासकों, उद्योग-धन्धों, कृषि व विकास के दूसरे क्षेत्रों में प्रौद्योगिक तथा अवीक्षक कर्मचारियों की पूर्ति मुख्यतया १४-१७ वय वर्ग में से करनी है। इस वय वर्ग में इस समय ह्रास और कुनिर्देश की मात्रा बहुत अधिक है, जैसा कि इस तथ्य से स्पष्ट है कि मैट्रिकुलेशन या इसके समकक्ष दूसरी परीक्षा देने वाले विद्यार्थियों में से ५० प्रतिशत से अधिक अनुत्तीर्ण हो जाते हैं। इस बात पर तो सभी सहमत हैं कि शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रमों की विविधता वर्धमान होती रहनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों को उनकी रुचि और क्षमता के अनुसार विषयों में प्रशिक्षण लेने के निदेश दिऐ जा सकें और उनका पथप्रदर्शन किया जा सके। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रस्ताव यह है कि दस्तकारियों और विविध पाठ्यक्रमों का समावेश हो, विज्ञान के अध्यापन के लिए अपेक्षाकृत उत्तम सुविधाओं की व्यवस्था हो, बहूद्देश्यीय स्कूल और जूनियर टेकनीकल स्कूल खोले जाएं, साथ ही हाई स्कूलों को ऊंचा दर्जा देकर उच्चतर माध्यमिक स्कूल बना दिया जाए।

२२. माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन का जो आदर्श प्रस्तुत किया था उसको कार्यान्वित करने के लिए पिछले दो वर्षों से कार्य हो रहा है। पहली योजना में इसके लिए २२ करोड़ रुपए की व्यवस्था थी, दूसरी योजना में ५१ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इससे आशा है कि माध्यमिक शिक्षा के नवीकरण का कार्यक्रम कुछ आगे बढ़ेगा। अन्य कार्यक्रमों के अतिरिक्त वर्तमान हाई स्कूलों में से कुछ को उच्चतर माध्यमिक स्कूलों और बहूद्देश्यीय स्कूलों में परिणत करना है। पहली योजना की अवधि में लगभग २५० बहूद्देश्यीय स्कूलों की स्थापना की गई थी, दूसरी योजना की अवधि में इनकी संख्या बढ़ाकर १,१८७ की जाएगी। हाई और उच्चतर माध्यमिक स्कूलों (जिनमें सामान्यतया मिडिल कक्षाएं भी होती हैं) की संख्या १०,६०० से बढ़कर दूसरी योजना के अन्त तक १२,००० हो जाएगी। दूसरी योजना की अवधि तक आशा है कि १,१५० हाई स्कूल भी उच्चतर माध्यमिक स्कूल बन जाएंगे। इस प्रकार उच्चतर माध्यमिक स्कूलों की संख्या लगभग २,८०० हो जाएगी। देहातों में माध्यमिक स्तर पर कृषि शिक्षा के विकास के लिए विचार यह है कि देहाती माध्यमिक स्कूलों में २०० अतिरिक्त कृषि पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जाए। दूसरी योजना काल में माध्यमिक स्तर के स्कूलों में विद्यार्थियों की संख्या २३ लाख से बढ़कर ३१ लाख हो जाएगी।

माध्यमिक शिक्षा की समाप्ति पर विद्यार्थियों को अर्ध-प्रशिक्षित कर्मचारियों के रूप में किसी धन्धे में लगने अथवा अपना कोई छोटा-मोटा धन्धा शुरू करने योग्य बनाने के लिए दूसरी योजना में ९० जूनियर टेकनीकल स्कूल खोलने का प्रस्ताव है। इन स्कूलों में १४-१७ वय वर्ग के लड़कों को तीन वर्ष तक सामान्य और टेकनीकल शिक्षा तथा कारखाना-सम्बन्धी प्रशिक्षण दिया जाएगा।

२३. पहली योजना के अन्त में माध्यमिक स्कूलों के कर्मचारी वर्ग में प्रशिक्षित शिक्षकों का अनुपात ६० प्रतिशत था। राज्यों की योजनाओं के अनुसार आगामी पांच वर्षों में प्रशिक्षित शिक्षकों का यह अनुपात बढ़कर ६८ प्रतिशत हो जाने की आशा है। व्यावसायिक पाठ्यक्रम के लिए माध्यमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण पर बहुत ध्यान देना होगा। शिक्षा पद्धति के पुनर्निर्माण की दिशा में प्रारम्भिक और माध्यमिक स्कूलों में दस्तकारी की शिक्षा देना एक आवश्यक अंग है,

परन्तु प्रशिक्षित अध्यापकों के अभाव में ऐसे पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की प्रगति धीमी है। शिक्षा मन्त्रालय के एक कार्यक्रम के अनुसार ५०० डिग्री वाले और १,००० डिप्लोमा वाले शिक्षकों को बहुद्देश्यीय और जूनियर टेकनीकल स्कूलों के लिए प्रशिक्षण देने की योजना है। राज्यों की योजनाओं में माध्यमिक शिक्षा के नवीकरण के लिए ४६ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। उनकी योजनाओं में हाई स्कूलों को उच्चतर माध्यमिक स्कूल बनाने, प्रयोगशालाओं और पुस्तकालयों का सुधार करने, शिक्षकों को प्रशिक्षण देने तथा शिक्षण के मानदण्ड में वृद्धि करने, अध्यापकों का वेतन बढ़ाने और शिक्षा तथा व्यवसाय सम्बन्धी पथप्रदर्शन करने की आवश्यकता है।

२४. माध्यमिक स्तर पर लड़कियों की शिक्षा बहुत पिछड़ी हुई दशा में है। इस समय १४-१७ वय वर्ग की लड़कियों की कुल १ करोड़ २० लाख संख्या में से लगभग ३ प्रतिशत पढ़ने जाती हैं। राज्यों की योजनाओं में लड़कियों की शिक्षा के लिए पर्याप्त व्यवस्था नहीं है, क्योंकि लड़कियों के हाई स्कूलों की संख्या १,५०० से बढ़कर दूसरी योजना की समाप्ति तक केवल १,७०० होने की आशा है। जिन क्षेत्रों में अभी प्रवेश खुला है और अधिक हो जाने की आशा है (जैसे ग्राम सेविका, उपचारिका, स्वास्थ्य निरीक्षक, शिक्षक आदि) उन धन्धों को अपनाने योग्य बनाने के लिए लड़कियों के लिए विशेष छात्रवृत्तियों की सिफारिश की गई है। इस दिशा में लड़कियों की शिक्षा को विशेष प्रोत्साहन की अपेक्षा है।

२५. शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर एक सवाल, जिस पर अब केन्द्रीय शिक्षा परामर्शदात्री परिषद की एक समिति विचार कर रही है, यह है कि बुनियादी शिक्षा और माध्यमिक शिक्षा सुधार की योजना का आपस में क्या सम्बन्ध है? प्रारम्भिक स्कूलों को बुनियादी स्कूलों में परिवर्तित करने का कार्यक्रम चालू कर ही दिया गया है। जैसे-जैसे यह कार्यक्रम आगे बढ़ेगा, उच्च बुनियादी और मिडिल स्कूल जो अगले स्तर के प्रतिनिधि हैं, अपनी पद्धतियों और पहुंच की दृष्टि से एक-दूसरे के निकटतर होते जाएंगे। ऐसा सोचा जा रहा है कि उच्च बुनियादी स्तर के बाद एक बुनियादी पश्चात स्तर हो। बुनियादी पश्चात प्रशिक्षण देने वाली संस्थाओं की संख्या अभी बहुत थोड़ी है। इस कारण शिक्षा मन्त्रालय ने बुनियादी पश्चात स्कूलों के विकास की सहायता के लिए आर्थिक व्यवस्था की है। राज्यों में माध्यमिक शिक्षा के नवीकरण का कार्यक्रम ज्यों-ज्यों कार्यान्वित होता जाएगा त्यों-त्यों यह वांछित होता जाएगा कि बुनियादी पश्चात शिक्षा और अब विकसित होने वाले माध्यमिक शिक्षा के ढांचे में निकट समन्वय स्थापित करने के उपाय सोचे जाएं।

२६. शिक्षा पद्धति के पुनर्गठन के साथ-साथ, जो अब प्रगति पर है, शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर हिन्दी तथा दूसरी प्रादेशिक भाषाओं के अध्ययन का महत्व अधिक बढ़ जाता है। इस सम्बन्ध में एक समस्या, जिस पर ध्यान गया है, यह है कि अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी अध्ययन की सुविधाओं की व्यवस्था हो और हिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं के अध्ययन की व्यवस्था हो। इस विषय में मुख्य कठिनाई विशिष्ट भाषाओं में प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी की है। इस कमी को दूर करने के लिए शिक्षा मन्त्रालय ने अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के माध्यमिक स्कूलों में हिन्दी अध्यापकों और हिन्दी भाषी क्षेत्रों के माध्यमिक स्कूलों में हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं के अध्यापकों की व्यवस्था के लिए कोष का प्रबन्ध कर दिया है।

विश्वविद्यालय शिक्षा

२७. हाल के वर्षों में विश्वविद्यालयों और कालेजों में विद्यार्थियों की संख्या की द्रुत वृद्धि का शिक्षा के मानदण्ड पर गहरा असर हुआ है। पांच वर्ष पहले विद्यार्थियों की संख्या ४,२०,०००

थीं; पहली योजना की अवधि के अन्त में यह लगभग ७,२०,००० हो गई है। कला और विज्ञान में डिग्री तथा उच्च परीक्षाएं पास करने वाले विद्यार्थियों की संख्या इस अन्तर में प्रति वर्ष ४१,००० से ५८,००० हो गई है। विश्वविद्यालय और कालेज की शिक्षा को उन्नत करने तथा ह्रास एवं उत्तीर्ण होने में असमर्थ विद्यार्थियों के गतिरोध को कम करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग कई उपाय कर रहा है। उदाहरणार्थ, कुछ उपाय इस प्रकार हैं :— त्रि-वर्षीय डिग्री पाठ्यक्रम की स्थापना, प्रवचनों और गोष्ठियों का संगठन, भवनों, पुस्तकालयों और प्रयोगशालाओं में सुधार, छात्रावासों की सुविधा की व्यवस्था, गुणी छात्रों के लिए वजीफे और शोध के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था और विश्वविद्यालय के अध्यापकों के वेतन में वृद्धि। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में सात नए विश्वविद्यालय स्थापित होंगे।

२८. विश्वविद्यालय की शिक्षा पर असर डालने वाली कई महत्वपूर्ण समस्याएं विचाराधीन हैं। इनमें से दो का विशेष उल्लेख किया गया है। माध्यमिक स्तर पर विविधतायुक्त पाठ्यक्रम के प्रवर्तन से शायद आर्ट कालेजों में छात्रों की भीड़-भाड़ किसी सीमा तक घट जाए। केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त एक समिति इस विषय पर विचार कर रही है कि सार्वजनिक सेवाओं में भर्ती के लिए डिग्री पर निर्भर किया जाए या नहीं, यदि किया जाए तो कहां तक। बहुत-से स्वीकृत संयुक्त कालेजों के शिक्षा के वर्तमान मानदण्ड असन्तोषजनक होना एक दूसरी समस्या है, जिस पर ध्यान दिया जा रहा है। यह आवश्यक है कि माध्यमिक और विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा के सम्बन्ध में की गई कार्रवाई से और सार्वजनिक सेवाओं के लिए की जाने वाली भर्ती की शर्तों और पद्धति में किए गए उचित परिवर्तन से विश्वविद्यालय की शिक्षा को ध्येय और दिशा की दृष्टि से ऊंचा बनाया जाए और इस प्रकार वह आर्थिक तथा सामाजिक विकास की योजनाओं के अधिक अनुकूल हो सके।

२९. दूसरी पंचवर्षीय योजना में विश्वविद्यालय की शिक्षा के लिए कुल ५७ करोड़ रुपए की व्यवस्था है; इसमें से २२ करोड़ ५० लाख रुपए की व्यवस्था राज्यों की योजनाओं में और ३४ करोड़ ४० लाख की व्यवस्था केन्द्रीय सरकार की योजना में है, जिसमें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के हिस्से के २७ करोड़ रुपए भी सम्मिलित हैं। इस व्यय का अधिकांश विश्वविद्यालयों में टेकनीकल तथा वैज्ञानिक शिक्षा की अधिक अच्छी व्यवस्था और संगठन के लिए है। इसके अतिरिक्त टेकनीकल शिक्षा के कार्यक्रम में १३ करोड़ रुपए विश्वविद्यालय की तथा उच्चतर स्तरों पर इंजीनियरी तथा टेकनीकल शिक्षा के लिए सुरक्षित हैं और १० करोड़ रुपए छात्रवृत्तियों के लिए रखे गए हैं। इनके अतिरिक्त विश्वविद्यालय तथा उच्चतर स्तर पर ४ करोड़ ६० लाख रुपए कृषि शिक्षा के लिए और १० करोड़ रुपए स्वास्थ्य शिक्षा के लिए उन क्षेत्रों के कार्यक्रमों के लिए रखे गए हैं। वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद के कार्यक्रम तथा अन्य सम्बद्ध कार्यक्रमों में वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान के लिए रखे गए २० करोड़ रुपए इनके अतिरिक्त हैं।

टेकनीकल शिक्षा

३०. विकास के प्रत्येक क्षेत्र में टेकनीकल कर्मचारियों की निरन्तर अधिकाधिक संख्या में आवश्यकता होगी। डाक्टरों, कृषि तथा पशुपालन विशेषज्ञों तथा अन्य लोगों के प्रशिक्षण की सुविधाओं में वृद्धि करने के लिए जो कदम उठाए जा रहे हैं उनका वर्णन उचित अध्यायों में किया गया है। पहली योजना की अवधि में कुछ उन्नति होने पर भी इंजीनियरों तथा टेकनीकल कर्म-

चारियों की आवश्यकता की पूर्ति करना वर्तमान संस्थाओं की क्षमता से बाहर की बात होगी। दूसरी योजना की अवधि में टेकनीकल शिक्षा के विकास की यह प्रमुख समस्या है।

३१. टेकनीकल शिक्षा के क्षेत्र में दीर्घकालीन आयोजन करना पड़ता है। प्रथम योजना की अवधि में टेकनीकल शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण उन्नति हुई। कुछ वर्ष पहले टेकनीकल शिक्षा की अखिल भारतीय परिषद ने जिन उच्च टेकनीकल संस्थानों की स्थापना की सिफारिश की थी, उनमें से पहले इंडियन इंस्टिट्यूट आफ टेकनोलोजी खड़गपुर में स्थापित हो गया। इस इंस्टिट्यूट में योजना के अनुसार १,२०० छात्रों के लिए प्राक्-स्नातक शिक्षण, और ६०० छात्रों के लिए स्नातकोत्तर एवं शोध की व्यवस्था की जाएगी। यहां विषयों की दृष्टि से बहुत व्यापक विषयों के प्रशिक्षण की सुविधाएं हैं, जैसे जलपोत निर्माण, शिल्प और सामुद्रिक इंजीनियरी, ईंधन और ज्वलन इंजीनियरी, उत्पादन टेकनोलोजी, पदार्थों का यान्त्रिक प्रणयन, कृषि इंजीनियरी, भू-भौतिकी, नगर व प्रादेशिक निर्माण योजना और निर्माण शिल्प—ये विषय अपेक्षाकृत नए हैं और टेकनीकल कर्मचारियों की आवश्यकता की दृष्टि से रखे गए हैं। बंगलौर में इंडियन इंस्टिट्यूट आफ साइन्स नामक संस्था का विकास वायु एवं जल सेना इंजीनियरी, शक्ति इंजीनियरी, आन्तरिक ज्वलन इंजीनियरी, धातु विज्ञान और विद्युत इंजीनियरिंग विषयक शोध और टेकनीकल शिक्षा के लिए किया गया है। डिग्री और डिप्लोमा पाठ्यक्रमों के लिए देश भर में कई टेकनीकल संस्थाओं का विकास किया गया है, और विभिन्न राज्यों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए नई संस्थाएं स्थापित की गई हैं। पहली योजना के आरम्भ और अन्त में टेकनीकल शिक्षा की स्थिति का विवरण इस प्रकार है :—

इंजीनियरी और टेकनोलोजी

	१९४९-५०			१९५५-५६		
	संस्थाओं की संख्या	प्रवेश	प्रतिफल	संस्थाओं की संख्या	प्रवेश	प्रतिफल
स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम और अनुसन्धान सुविधाएं	८	१३६	९१	१८	२७०	१९०
डिग्री अथवा समकक्ष पाठ्यक्रम	५३	४,१२०	२,२००	६०	६,०५०	३,७००
डिप्लोमा पाठ्यक्रम	८१	५,९००	२,४८०	१०८	८,७००	३,६००

३२. इस विवरण से स्पष्ट है कि संस्थाओं में छात्रों की प्रवेश संख्या और स्नातकों की प्रतिफल संख्या में १९४९-५० की अपेक्षा ५० प्रतिशत वृद्धि हुई है। १९४७ की अपेक्षा तो यह वृद्धि तिगुनी है। वर्तमान प्रवेश संख्या के आधार पर १९५८-५९ में और इसके पश्चात ४,६०० स्नातक और ५,२२० डिप्लोमा लेने वाले इन संस्थाओं से प्राप्त होने लगेंगे। १९५० के अंकों से ये अंक दुगने हैं। संख्या वृद्धि के साथ-साथ प्रशिक्षण के मानदण्ड की उत्कृष्टता में उन्नति का भी ध्यान रखा गया है। शिक्षा में उत्कृष्टता की समस्या की कठिन कोर शिक्षा संस्थाओं में योग्यतर कर्मचारियों, श्रेष्ठतर साज-सामान और अधिक सुविधाजनक आवास स्थान का होना है। टेकनीकल शिक्षा की अखिल भारतीय परिषद और उसकी प्रादेशिक समितियों ने देश की विभिन्न संस्थाओं की स्थिति का, उनकी कमियों, पाठ्यक्रमों, मानदण्डों और आवश्यक सुधारों

का व्यापक अध्ययन किया है। परिषद के प्रतिवेदनों के आधार पर केन्द्रीय सरकार ने संस्थाओं को अलग-अलग पर्याप्त अनुदान दिए हैं।

३३. विशिष्ट क्षेत्रों में सुविधाओं के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया है। प्रबन्ध शिक्षा और प्रशिक्षण की एक योजना को, जिसमें औद्योगिक इंजीनियरी, औद्योगिक प्रशासन, और व्यावसायिक प्रबन्ध सम्मिलित हैं, सात चुने हुए केन्द्रों में कार्यान्वित किया गया है और उद्योग व व्यापार संस्थाओं के साथ मिलकर इन विषयों के प्रशिक्षण के समन्वित विकास के लिए एक प्रबन्ध प्रशिक्षण बोर्ड की स्थापना की गई है। हैदराबाद में एक प्रशासनिक कर्मचारी कालेज और वैज्ञानिक प्रबन्ध को उन्नत करने के लिए एक संस्था की स्थापना का कार्य पर्याप्त आगे बढ़ चुका है। मद्रास, कलकत्ता, बम्बई और इलाहाबाद में मुद्रण कला के लिए चार प्रादेशिक स्कूल खोले जा रहे हैं; ऐसे पांचवे स्कूल की योजना दिल्ली के लिए है। इंस्टिट्यूट आफ टाउन प्लेनर्स के साथ मिलकर दिल्ली में नगर व ग्राम आयोजन का एक स्कूल खोला जा रहा है। संस्थाओं को छात्रावासों के निर्माण के लिए ब्याज रहित ऋण देने की योजना भी कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के पूरा हो जाने पर सात हजार छात्रों के लिए आवास की सुविधा हो जाएगी। जो छात्र विज्ञान, इंजीनियरी या टेकनोलौजी में अनुसन्धान करना चाहते हैं, उनके लिए २०० रुपए मासिक की ५०० से अधिक अनुसन्धान छात्रवृत्तियों की स्थापना की गई है। अधिक उन्नत वैज्ञानिक अनुसन्धान को प्रोत्साहित करने के लिए एक अनुसन्धान वृत्ति योजना बनाई गई है।

३४. प्रथम पंचवर्षीय योजना में किए गए उपायों के अतिरिक्त, भविष्य में टेकनीकल कर्मचारियों की बढ़ती हुई मांग के कारण टेकनीकल शिक्षा का विस्तार करना अब आवश्यक है। पिछले दो-तीन वर्षों में जनशक्ति के आयोजन की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। सामान्यतया, वर्तमान संस्थाओं में से अधिकांश की क्षमता से यह बाहर की बात है कि वे प्रशिक्षण के लिए वर्तमान से अधिक संख्या में छात्रों को प्रवेश दे सकें और साथ-साथ उचित मानदण्ड को भी स्थापित रख सकें।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में टेकनीकल शिक्षा के लिए ४८ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इसका एक भाग प्रथम योजना में आरम्भ की गई योजनाओं के लिए है, शेष नई संस्थाओं और नए पाठ्यक्रमों को जारी रखने के लिए रखा गया है। दूसरी योजना की अवधि में इंडियन इंस्टिट्यूट आफ टेकनोलौजी, खड़गपुर को स्नातक तथा स्नातकोत्तर अध्ययन के लिए पूरी तरह विकसित कर दिया जाएगा। दूसरे चुने हुए केन्द्रों में भी स्नातकोत्तरकालीन पाठ्यक्रमों और इंजीनियरी तथा टेकनोलौजी में अनुसन्धान की व्यवस्था की जाएगी। वर्तमान संस्थाओं को डिग्री और डिप्लोमा पाठ्यक्रमों के लिए विकसित करने की जो योजना कुछ वर्ष पहले आरम्भ की गई थी उसे पूरा किया जाएगा।

दूसरी योजना की अवधि में जो नए प्रयोग शुरू किए जाएंगे, उनमें देश के पश्चिमी, उत्तरी और दक्षिणी प्रदेशों में उच्चतर टेकनीकल संस्थाओं की स्थापना के प्रयोग भी हैं। इनमें से दो बम्बई और कानपुर में स्थापित होंगी, तीसरी संस्था का स्थान विचाराधीन है। प्रत्येक संस्था में, जब वह पूरी तरह विकसित हो जाएगी, १,२०० प्राक्-स्नातक और ६०० स्नातकोत्तर विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर सकेंगे।

३५. दिल्ली पॉलीटेकनीक संस्था में विषयों की व्यापकता की दृष्टि से प्रशिक्षण की सुविधाओं के विस्तार का प्रस्ताव है। इंजीनियरी और टेकनोलोजी के प्रथम डिग्री और डिप्लोमा पाठ्यक्रमों की उचित सुविधा की व्यवस्था के लिए ६ संस्थाएं डिग्री स्तर की और २१ संस्थाएं डिप्लोमा स्तर की स्थापित करने का विचार है। फोरमैनों के प्रशिक्षण की योजना को—जिसमें काम करने और प्रशिक्षण के अन्तर पारी-पारी से बदलते है—उद्योग संस्थाओं के सहयोग से कार्यान्वित किया जाएगा। ६० जूनियर टेकनीकल स्कूल खोलने की योजना का उल्लेख किया जा चुका है। प्रत्येक स्तर पर टेकनीकल शिक्षा को गुणों की दृष्टि से उन्नत करने के लिए टेकनीकल शिक्षकों के लिए प्रत्यास्मरण तथा अन्य पाठ्यक्रमों के प्रबन्ध किए जाने का प्रस्ताव किया गया है। छात्रवृत्तियों की संख्या ६३३ से बढ़ाकर ८०० कर दी जाएगी और छात्रवृत्तियों तथा टेकनीकल अध्ययन के लिए कुछ निःशुल्क स्थानों की पर्याप्त व्यवस्था रखी गई है। १३,००० टेकनीकल विद्यार्थियों और जूनियर टेकनीकल स्कूलों के ३,३०० छात्रों के लिए अतिरिक्त छात्रावास निर्मित किए जाएंगे। मुद्रण शिल्प विज्ञान के लिए भी एक केन्द्रीय संस्था की योजना बनाई जा चुकी है और धनबाद के इंडियन स्कूल आफ माइन्स एण्ड अप्लाइड ज्योलोजी का विस्तार किया जाएगा जिससे खान इंजीनियरी तथा उससे सम्बद्ध विषयों म प्रशिक्षण की सुविधाएं प्राप्त हो सकेंगी। ऊपर उल्लिखित विकास का परिणाम यह होगा कि विभिन्न स्तरों पर टेकनीकल पाठ्यक्रमों में प्रविष्ट होने वाले विद्यार्थियों की संख्या नीचे लिखे ढंग से बढ़ जाएगी :—

	१९६०-६१ तक अनुमानित प्रवेश संख्या
स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम और अनुसन्धान कार्य	५७०
प्रथम डिग्री पाठ्यक्रम	७,५५०
डिप्लोमा पाठ्यक्रम (इसमें फोरमैनों के प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम सम्मिलित हैं)	११,३००
जूनियर टेकनीकल स्कूल	५,६००

इन अंकों का अर्थ यह है कि १९६०-६१ तक प्रति वर्ष ५,७०० स्नातक और ६,८०० डिप्लोमाधारी प्राप्त हुआ करेंगे, अर्थात् पहली योजना के अन्त में प्राप्त होने वाले स्नातकों की संख्या से दुगने स्नातक और तिगुने डिप्लोमाधारी होंगे।

३६. योजना आयोग द्वारा नियुक्त इंजीनियरिंग कर्मचारी समिति ने इस बात की जांच कर ली है कि उल्लिखित प्रशिक्षण सुविधाएं पर्याप्त होंगी या नहीं। इस समिति की सिफारिशें भी हाल ही में मिली हैं। समिति इस परिणाम पर पहुंची है कि दूसरी योजना में इंजीनियरी प्रशिक्षण की प्रस्तावित सुविधाओं के अलावा, कुछ अतिरिक्त इंजीनियर स्नातकों को नागरिक, यांत्रिक, वैद्युतिक तार-संचार सम्बन्धी, धातु विज्ञान सम्बन्धी और खान इंजीनियरी सम्बन्धी सेवाओं के प्रशिक्षण की और नागरिक, यांत्रिक तथा विद्युत इंजीनियरिंग क्षेत्र में ६,२२५ डिप्लोमाधारियों को प्रशिक्षण की और अधिक सुविधाएं प्रदान करनी होंगी। यदि विशेष उपाय न किए गए तो दूसरी योजना की अवधि के बाद वाले वर्षों में और तीसरी योजना में कर्मचारी वर्ग की कमी अधिक बढ़ जाएगी। समिति की सिफारिश है कि वर्तमान संस्थाओं की क्षमता में स्नातक प्रशिक्षण में २० प्रतिशत और डिप्लोमा प्रशिक्षण में २५ प्रतिशत की वृद्धि की जाए। यह भी सुझाव है कि देश के विभिन्न भागों में १८ इंजीनियरी कालेज तथा ६२ इंजीनियरी स्कूल

और स्थापित किए जाएं। इन सुझावों को कार्यान्वित करने के लिए, जिन पर लगभग १० करोड़ रुपया व्यय होगा, विचार हो रहा है।

३७. प्रवीण मजदूरों, फोरमैनों तथा अन्य निरीक्षक कर्मचारियों की बढ़ती हुई मांग को भी दूसरी योजना की अवधि में पूरा करना होगा। श्रम मन्त्रालय का एक कार्यक्रम शिल्पियों की संख्या को प्रतिवर्ष २०,००० बढ़ा देने का है, और दस्तकारी प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए दो संस्थाएं स्थापित की जा रही हैं। अप्रेंटिसों के प्रशिक्षण की सुविधाओं को बड़े पैमाने पर विकसित करना पड़ेगा और इस क्षेत्र में एक अपेक्षाकृत महत्वपूर्ण कर्तव्य अधिक संगठित निजी धन्धों और सार्वजनिक उद्योगों के व्यवस्थापकों पर है। लोहा तथा इस्पात मन्त्रालय ने एक प्रशिक्षण निदेशालय की स्थापना की है। इसका काम इस्पात के कारखानों के कर्मचारियों की जरूरत का समन्वय करना और आवश्यक प्रशिक्षण सुविधाओं की व्यवस्था करना है। रेलवे मन्त्रालय को भी जो बड़े कार्यक्रम शुरू करने हैं, उनको दृष्टि में रखते हुए कई नए टेकनीकल स्कूलों की स्थापना करने का विचार किया गया है।

समाज शिक्षा

३८. १९५१ की जनगणना से ज्ञात हुआ था कि आबादी के १६·६ प्रतिशत व्यक्ति साक्षर हैं। यदि इसमें से १० वर्ष से कम बच्चों की संख्या निकाल भी दी जाए तो भी अनुपात २० प्रतिशत तक पहुंचता है। साक्षरता के इस अनुपात के अलावा पुरुषों (२४·९ प्रतिशत) और स्त्रियों (७·९ प्रतिशत) में तथा शहरी आबादी (३४·६ प्रतिशत) और देहाती आबादी (१२·१ प्रतिशत) की साक्षरता के मध्य बहुत विषमता है। लोकतांत्रिक पद्धति पर द्रुत सामाजिक और आर्थिक प्रगति का मेल व्यापक निरक्षरता के साथ नहीं बैठता।

३९. शिक्षा पद्धतियों में प्रस्तावित सुधारों को कार्यान्वित करने के साथ-साथ निरन्तर जारी रहने वाली कक्षाओं और विभिन्न स्तरों पर समाज शिक्षा कक्षाओं का विस्तार होता जाएगा। राज्यों की योजनाओं में साक्षरता तथा समाज शिक्षा केन्द्रों के उद्घाटन, समाज शिक्षा कार्यकर्ताओं तथा संगठनकर्ताओं के प्रशिक्षण, पुस्तकालय, साहित्य प्रकाशन, दृश्य-श्रव्य शिक्षा की व्यवस्था और जनता कालेजों की स्थापना के कार्यक्रम सम्मिलित हैं। योजना में समाज शिक्षा के हिस्से में कुल रुपया लगभग १५ करोड़ है। इसमें १० करोड़ रुपया वह भी सम्मिलित है जो राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम में दिखाया गया है। शिक्षा मन्त्रालय समाज शिक्षा के संगठनकर्ताओं के प्रशिक्षण और समाज तथा बुनियादी शिक्षा से सम्बद्ध समस्याओं पर शोध एवं अध्ययन जारी रखने के लिए एक प्रधान शिक्षा केन्द्र खोलना चाहता है।

यद्यपि साक्षरता निस्सन्देह महत्वपूर्ण है, तथापि यह मानना पड़ेगा कि समाज शिक्षा के वृहत्तर विचार क्षेत्र का यह एक अंग है। समाज शिक्षा के अन्तर्गत मुख्यतया समाज की अपनी गतिविधि द्वारा अपनी समस्याओं के समाधान का व्यापक मार्ग विद्यमान है। साक्षरता के अलावा इसमें स्वास्थ्य, मनोरंजन तथा पारिवारिक जीवन, आर्थिक गतिविधि, और नागरिकता प्रशिक्षण भी सम्मिलित हैं। समूचा केन्द्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम, समाज कल्याण विस्तार योजनाएं, जनता के सहयोग से सरकारी प्रतिनिधि संस्थाओं द्वारा संचालित देहाती कार्यक्रम, सर्व सेवा संघ, भारत सेवक समाज आदि संस्थाओं के कार्यक्रम, सहयोग आन्दोलन, ग्राम पंचायतें आदि सब देश में इस समय वर्तमान समाज शिक्षा और देहात सुधार की दिशा

में राष्ट्रव्यापी प्रयत्न के विभिन्न रूप हैं। इस दृष्टिकोण से देखें तो समाज शिक्षा के क्षेत्र को विशेषतया केवल इस विवरण में वर्णित आर्थिक व्यवस्थाओं से ही मापना ठीक नहीं होगा। तथापि विशिष्ट प्रयोजन से एक संगठित और सुव्यवस्थित गतिविधि के रूप में समाज शिक्षा एक नया कार्यक्षेत्र है। बहुत बड़ी संख्या में विकास संस्थाएं समाज शिक्षा के एक-न-एक कार्य में संलग्न हैं। उचित विशेषज्ञों द्वारा उनके कार्य की पूर्ति कराना अभीष्ट है। इसलिए राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास योजनाओं के क्षेत्रों में इस ओर जो कदम बढ़ाया गया है उसका बहुत बड़ा महत्व है। कुछ समय तक सावधानी से पर्यवेक्षण करने से यह निश्चय हो जाएगा कि इस क्षेत्र के शहरी और देहाती दोनों इलाकों में कैसी विशेषज्ञ संस्थाओं, पद्धतियों और चातुरी की आवश्यकता है।

उच्चतर ग्राम शिक्षा

४०. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने अपने दो वर्ष पहले के प्रतिवेदन में उच्चतर स्तर पर ग्राम शिक्षा के विकास के सम्बन्ध में कई सुदूरगामी प्रस्ताव रखे थे। हाल ही में उच्चतर ग्राम शिक्षा समिति ने इस समस्या पर नए सिरे से विचार किया है और ग्राम संस्थाओं की स्थापना की सिफारिश की है। इन संस्थाओं का कार्य ग्राम समाज के लिए विभिन्न कार्य करना और विशेषतः इन कार्यों की व्यवस्था करना होगा : (क) बुनियादी-पश्चात अथवा हायर सैकण्डरी अध्ययन पूरा कर लेने वाले छात्रों को उच्चतर अध्ययन की सुविधाएं प्रदान करना, (ख) ग्राम स्वास्थ्य, कृषि और ग्राम इंजीनियरी तथा अन्य लघुतर पाठ्यक्रमों के प्रमाण पत्रीय पाठ्यक्रमों की व्यवस्था करना, और (ग) अध्यापन शोध विस्तार के व्यापक कार्यक्रमों की व्यवस्था करना। ऐसा ख्याल है कि ग्राम संस्थाएं सांस्कृतिक तथा प्रशिक्षण केन्द्रों और देहात में विकास योजना के केन्द्रों का काम करेंगी। शिक्षा मन्त्रालय का विचार दूसरी पंचवर्षीय योजना में १० ग्राम संस्थाएं स्थापित करने का है। इस काम के लिए उसने २ करोड़ रुपया रखा है। इन संस्थाओं के स्थान के लिए पहले से ही ग्राम कार्य में संलग्न केन्द्रों में से प्रमुख केन्द्र चुन लिए गए हैं। कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए केन्द्रीय सरकार ने ग्राम उच्चतर शिक्षा परिषद का निर्माण पहले ही कर दिया है।

अध्यापक

४१. अध्यापक सदा ही शिक्षा प्रणाली के चक्र में धुरी स्थान पर रहे हैं। बुनियादी परिवर्तन और नवीकरण के संक्रमण काल में यह और भी अधिक सच है। इस बात पर सामान्यतया सब सहमत हैं कि आजकल अध्यापन कार्य पर्याप्त संख्या में ऐसे लोगों को अपनी ओर आकर्षित नहीं करता जो अध्यापन को धन्धे के रूप में स्वीकार करें और इस रूप में बहुत-से लोग थोड़े काल के लिए अध्यापन कार्य को अपनाते हैं और बाद में दूसरे धन्धों में लग जाते हैं। इसलिए शिक्षा की प्रगति के लिए महत्वपूर्ण बात अभीष्ट अध्यापकों की स्थिति में सुधार करना है। जो सुधार आवश्यक हैं वे चाहे प्रशस्ततर प्रशिक्षण के रूप में हों या अधिक वेतन व अच्छी सेवा की शर्तों के रूप में हों, अध्यापकों की संख्या अति बहुल होने के कारण रुके रह सकते हैं। पहली योजना से पहले अध्यापकों की संख्या ७ लाख ३० हजार थी, १९५५-५६ में वह बढ़कर १० लाख २४ हजार हो गई है तथा १९६०-६१ तक बढ़कर १३ लाख ५६ हजार हो जाने की सम्भावना है।

४२. पहली योजना के शुरू होने से पहले प्राथमिक स्कूलों के ५९ प्रतिशत अध्यापक और सैकेण्डरी स्कूलों के ५४ प्रतिशत अध्यापक प्रशिक्षित अध्यापक थे। प्रथम योजना के अन्त तक ये

अंक क्रमशः ६४ और ५६ प्रतिशत हो गए हैं। अध्यापकों के लिए प्रशिक्षण सुविधाओं की वृद्धि के लिए दूसरी योजना में १७ करोड़ रुपए की व्यवस्था है और वर्तमान संस्थाओं को विकसित करने के अतिरिक्त २२१ प्रशिक्षण विद्यालय और ३० प्रशिक्षण कालेज नए स्थापित करने का विचार है। आशय यह है कि योजना की समाप्ति पर प्रशिक्षण अध्यापकों का अनुपात, प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों में बढ़कर क्रमशः ७६ और ६८ प्रतिशत हो जाए। बुनियादी प्रशिक्षण कालेजों की संख्या ३३ से ७१ और बुनियादी प्रशिक्षण स्कूलों की संख्या ४४६ से ७२६ पहुंच जाएगी। अनुसन्धान केन्द्र के रूप में बुनियादी शिक्षा की एक राष्ट्रीय संस्था स्थापित की जा रही है।

४३. पिछले कुछ समय से अध्यापकों की वेतनवृद्धि का प्रश्न विचाराधीन रहता आया है। यह स्वीकार किया जा चुका है कि शिक्षा पद्धति को प्रभावशाली ढंग से पुनर्गठित करने के लिए अध्यापकों के लिए सन्तोषजनक वेतन की व्यवस्था एक आवश्यक उपाय है। पिछले कुछ वर्षों में कई राज्यों में अध्यापकों की वेतनवृद्धि के उपाय किए जा चुके हैं। स्वाभाविक बात यह है कि अध्यापकों के वेतन स्थानीय वेतन ढांचे के स्तर पर स्थिर करने होंगे ताकि उचित रूप में प्रशिक्षित व्यक्ति अध्यापन वृत्ति की ओर आकर्षित हो सकें और इसमें टिक सकें। इसलिए विभिन्न राज्यों में इस समस्या का एक ही रूप नहीं है। अध्यापकों के वेतन की वृद्धि के प्रश्न के महत्व को स्वीकार करते हुए भी केन्द्रीय सरकार समझती है कि इस सम्बन्ध में अतिरिक्त व्यय उठाने की जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है। तथापि, आगामी वित्त आयोग के प्रस्तावों के आने तक अस्थायी उपाय के रूप में केन्द्रीय सरकार ने राज्यों की सहायता के लिए उस अतिरिक्त व्यय का ५० प्रतिशत देना स्वीकार कर लिया है जो प्राथमिक स्कूलों के अध्यापकों का वेतन स्थानीय स्थितियों के अनुसार बढ़ाने में खर्च होगा। यह भी सुझाया गया है कि माध्यमिक स्कूलों के अध्यापकों की वेतनवृद्धि पर होने वाले अतिरिक्त व्यय को पूरा करने के लिए राज्यों को चाहिए कि वे स्कूलों की इमारतें बनाने पर किए जाने वाले खर्च में यथासम्भव कमी करने की सम्भावना को देखें। उन्होंने यह भी प्रस्ताव किया है कि विभिन्न राज्य एक विशेष शिक्षा उपकर लगावें जिससे कि वे वेतन क्रम में वृद्धि करने में समर्थ हो सकें।

४४. यह तथ्य कि अध्यापक राज्य सरकारों, नगरपालिकाओं, जिला बोर्डों और निजी संस्थाओं आदि द्वारा नियुक्त हैं, एक ही राज्य में अध्यापकों के वेतनों, मानदण्डों, काम करने की अवस्थाओं व उन्नति और संभावनाओं में विविधता का एक महत्वपूर्ण कारण है। यह सिफारिश की गई है कि प्रत्येक राज्य इस बात पर विचार करे कि वह प्राथमिक स्कूल के अध्यापकों को उचित वर्गों में अपनी सेवा में ले आवे। जब अध्यापकों की सेवाएं उनके अपने सम्बद्ध वर्ग में स्थानीय संस्थाओं या निजी संस्थाओं को सौंप दी जाएंगी, तो उनकी नियुक्ति की शर्तें पूरी की जाती रहेंगी। इस प्रकार राज्य सरकारें अध्यापकों को वे पूरी सहूलियतें देने में समर्थ हो सकेंगी जिनमें सुरक्षा, पेंशन, भविष्य निधि में अंशदान, तरक्की तथा ऊंचे ग्रेड में जाने के अवसरों और अन्य उचित सुख-सुविधाओं की व्यवस्था सम्मिलित है।

छात्रवृत्तियां

४५. शिक्षा के क्षेत्र में अपेक्षाकृत अधिक अच्छे अवसर प्रदान करने और योग्य छात्रों को शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएं देने के लिए पहली योजना की अवधि में छात्रवृत्तियों के कुछ कार्यक्रम चालू किए गए थे। दूसरी पंचवर्षीय योजना में छात्रवृत्तियों के लिए लगभग १२ करोड़ रुपए रखे गए हैं। यह धनराशि उस राशि के अतिरिक्त है जो उन छात्रवृत्ति योजनाओं के जारी रखने

म व्यय होगी, जो इस योजना का अंग नहीं है। अन्य छात्रों के अलावा अनुसूचित आदिम जातियों, अनुसूचित जातियां तथा अन्य पिछड़े वर्गों के छात्रों के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की गई है। इस कार्यक्रम में मैट्रिक के बाद की छात्रवृत्तियां, शोध छात्रवृत्तियां, समुद्रपार की छात्रवृत्तियां तथा भारत में एशियाई, अफ्रीकी आदि विदेशी छात्रों के अध्ययन के लिए सांस्कृतिक छात्रवृत्तियां भी सम्मिलित हैं।

४६. छात्रवृत्तियों के प्रमुख वर्ग इस प्रकार हैं :—

	छात्रवृत्तियों, वजीफों आदि की संख्या
(क) केन्द्रीय सरकार—पहले से जारी योजनाएं :	
१. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए	१,५५,०००
२. विदेशों में अध्ययन के लिए	३६१
३. विदेशी छात्रों के भारत में अध्ययन के लिए	२,५८०
४. अन्य	३५६
(ख) केन्द्रीय सरकार—दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत .	
१. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों व अन्य पिछड़े वर्गों के लिए	७८,५००
२. मानव विज्ञान सम्बन्धी शोध कार्य के लिए	५००
३. विविध क्षेत्रों में नए कलाकारों के लिए	५००
४. विदेशों में अध्ययन के लिए	४६५
५. विदेशी छात्रों के भारत में अध्ययन के लिए	६१०
६. अन्य	१,५६०
(ग) राज्य सरकारें—(पहले से जारी योजनाएं व दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत) :	
१. आरम्भिक स्तर पर	२,५००
२. माध्यमिक स्तर पर	१२,०००
३. विश्वविद्यालय स्तर पर (मानव विज्ञान संबंधी)	६,६००
४. टेकनीकल शिक्षा	१,२००
५. अन्य	१६,०००

४७. व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा के लिए दिए जाने वाले वजीफों का समावेश राज्यों में श्रम व उद्योग विभागों द्वारा तथा केन्द्र में श्रम मन्त्रालय द्वारा कर लिया गया है। उच्च वैज्ञानिक और टेकनोलोजिकल शोध के लिए प्राकृतिक साधन और वैज्ञानिक अनुसंधान मन्त्रालय ने, कृषि अनुसन्धान के लिए कृषि मन्त्रालय ने, और मेडिकल शोध के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय ने वृत्तियों की व्यवस्था की है। यह कहना सर्वथा संगत होगा कि

दूसरी योजना के काल में योग्यता और प्रवृत्ति रखने वाले अधिकांश विद्यार्थी, जो उच्च शिक्षा और शोध कार्य में लगना चाहते हैं, राज्य से उपयुक्त और व्यावहारिक सहायता लेने में समर्थ हो सकेंगे।

सांस्कृतिक व अन्य कार्यक्रम

४८. शिक्षा मन्त्रालय ने सांस्कृतिक विकास व अन्य संगठन के लिए कई महत्वपूर्ण कार्यक्रम बनाए हैं; इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :—

(क) योजना में हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाओं के विकास की व्यवस्था है। हिन्दी सम्बन्धी कार्यक्रम में हिन्दी विश्वकोष बनाना, प्रामाणिक पाठ्य पुस्तकों और आरम्भिक रीडरों की रचना, हिन्दी भाषा की शिक्षा व विकास में संलग्न संस्थाओं को अनुदान देना और अहिन्दी भाषा भाषी क्षेत्रों के प्रार्थियों को उच्च हिन्दी शिक्षा के लिए छात्रवृत्तियां देना सम्मिलित है। केन्द्रस्थ व्यवस्थाओं के अतिरिक्त, राज्यीय योजनाओं में प्रादेशिक भाषाओं के विकास के कार्यक्रम सम्मिलित हैं और हिन्दी भाषा के प्रसार की भी व्यवस्था की गई है। साहित्य अकादेमी ने भी विविध भाषाओं और देश के साहित्य के विकास की योजनाएं बनाई हैं। सब भाषाओं की अच्छी पुस्तकों को कम मूल्य पर भारतीय प्रकाशकों के माध्यम से यथासम्भव अधिक से अधिक परिमाण में उपलब्ध बनाने की दृष्टि से प्रकाशित करने के लिए एक राष्ट्रीय पुस्तक न्यास (नेशनल बुक ट्रस्ट) की स्थापना की जा रही है। दक्षिण भारतीय पुस्तक न्यास की स्थापना द्वारा इस दिशा में काम आरम्भ कर दिया गया है। कुरुक्षेत्र और वाराणसी में एक संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना की व्यवस्था भी योजना में विद्यमान है और एक प्रस्ताव यह किया गया है कि देश में संस्कृत शिक्षा की वर्तमान दशा के अनुसन्धान और इसके आगे विकास के सम्बन्ध में निदेश देने के लिए एक आयोग की नियुक्ति की जाए।

(ख) कलाओं के विकास के लिए साहित्य अकादेमी, नृत्य-नाटक और संगीत अकादेमी और ललित कला अकादेमी के कार्यक्रम बनाए गए हैं और उनके लिए योजना में व्यवस्था की गई है। योजना में राष्ट्रीय रंगमंच के लिए भवन निर्माण, राष्ट्रीय बाल संग्रहालय और अन्य संग्रहालयों के विकास व पुनर्गठन, आधुनिक कला की राष्ट्रीय वीथिका के विकास, बाल भवन की स्थापना, कलकत्ता स्थित राष्ट्रीय ग्रन्थालय के विकास, दिल्ली में केन्द्रीय उद्धरण पुस्तकालय की स्थापना और राष्ट्रीय केन्द्रीय उद्धरण पुस्तकालय तथा राष्ट्रीय ग्रन्थानुक्रमणिका के प्रकाशन की व्यवस्था की गई है।

(ग) योजना में पुरातत्व विभाग, भारत के राष्ट्रीय अभिलेख भवन और मानव विज्ञान विभाग के विकास की व्यवस्था है। भारतीय इतिहास विज्ञान का एक केन्द्रीय संस्थान स्थापित किया जाएगा और विविध राज्यों व जिले के गजेटियरों संशोधित किए जाएंगे। स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास की तैयारी का काम योजना की अवधि में पूरा किया जाना है।

(घ) औद्योगीकरण के सामाजिक प्रभाव पर दक्षिण एशिया के लिए एक शोध केन्द्र की भी योजना में व्यवस्था है। इस केन्द्र की स्थापना भारत सरकार के सहयोग से यूनेस्को ने की है।

४९. दूसरी योजना की अवधि के लिए नियत शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रमों के हमारे इस सर्वेक्षण से स्पष्ट है कि प्रत्येक क्षेत्र में राष्ट्र के भविष्य के लिए बहुत भारी कार्यों को सम्पन्न किया जाना है। यदि स्थानीय सार्वजनिक अधिकारी और प्रत्येक स्थानीय जनसमुदाय शिक्षा के लिए बड़े-बड़े साधनों को उपलब्ध करा सकें तो अधिक सफलता मिल सकती है और जो लक्ष्य अभी दूरस्थ प्रतीत होते हैं, वे शीघ्रतर सम्पन्न किए जा सकते हैं। आर्थिक विकास को पूर्णतया जनता की भलाई का साधन बनाने के लिए शिक्षा के कार्यक्रमों को आर्थिक योजनाओं में पहले स्थान दिया जाना चाहिए। इसलिए ऐसे उपाय किए जाने चाहिएं जिनसे शिक्षा के क्षेत्र में किए गए प्रयत्नों द्वारा वर्तमान बाधाओं पर विजय प्राप्त की जा सके। शिक्षा पद्धति के पुनर्गठन की समस्या के कई व्यावहारिक तथ्य भी हैं—जैसे, जिनके लिए शिक्षा की सुविधाएं उपलब्ध हैं उनकी संख्या में वृद्धि, लड़कियों और सामान्यतः स्त्रियों के लिए अधिक अवसरों की व्यवस्था, माध्यमिक स्तर पर शिक्षा की विविधता, परम्परागत प्रारम्भिक शिक्षा के स्थान पर बुनियादी शिक्षा पद्धति का प्रचलन, समाज शिक्षा का विकास, टेक्नीकल और व्यावसायिक शिक्षा की उचित व्यवस्था और विश्वविद्यालयों की शिक्षा में सुधार। इन कार्यों के पीछे अधिक मूलभूत उद्देश्य विद्यमान हैं। इस पिछड़ेपन को दूर करके तेजी से आगे बढ़ने के लिए राष्ट्र को एकता, सब क्षेत्रों में सहयोग और तीव्रतम प्रयत्नों की आवश्यकता है। आधुनिक आर्थिक विकास के लिए यह अपेक्षित है कि जनता की मनोदशा अधिक वैज्ञानिक हो, श्रम के प्रति आदर भाव हो, सेवाओं में अनुशासन भावना हो और जनता की आवश्यकता के अनुसार नए टेक्नीक और नए ज्ञान सहज ही स्वीकार किए जाएं। दैनिक जीवन में इन मान्यताओं और मानसिक रुख को उतना ही स्वीकार किया जाएगा जितना कि वे शिक्षा सम्बन्धी आदर्शों और व्यवहारों में प्रकट किए जाएंगे।

अध्याय २४

वैज्ञानिक और टेकनोलौजिकल अनुसन्धान

प्रथम पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं तथा अन्य शोध संस्थानों के निर्माण की ओर मुख्य रूप से ध्यान दिया गया था। परन्तु दूसरी योजना का प्रमुख उद्देश्य यह है कि वर्तमान सुविधाओं को विकसित किया जाए और राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं में काम करने वाले वैज्ञानिकों और विश्वविद्यालयों तथा अन्य केन्द्रों में अनुसन्धान करने वाले व्यक्तियों के कार्य का राष्ट्रीय विकास के विभिन्न क्षेत्रों की समस्याओं के साथ अधिकाधिक सम्बन्ध स्थापित किया जाए। ३२ विश्वविद्यालयों के अनुसन्धान विभागों के अतिरिक्त, भारत में आज वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के अधीन १४ राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं, ८८ अनुसन्धान संस्थाएं एवं अनुसन्धान केन्द्र और वैज्ञानिक एवं टेकनोलौजिकल अनुसन्धान के क्षेत्र में कार्य करने वाले ५४ संगठन विद्यमान हैं। परमाणु शक्ति विभाग अपने अनुसन्धान कर्मचारियों द्वारा और टाटा के मूलभूत अनुसन्धान संस्थान आदि कई अन्य शोध संस्थाओं द्वारा महत्वपूर्ण अनुसन्धान कार्य कर रहा है। केन्द्रीय सरकार का लक्ष्य वर्तमान अनुसन्धान संस्थाओं को सुदृढ़ करना, अनुसन्धान के लिए सुविधाओं का विस्तार करना और सृजनात्मक वैज्ञानिक कार्य के लिए अधिकाधिक अवसर प्रदान करना रहा है। प्रत्येक क्षेत्र में राष्ट्रीय संस्थानों तथा प्रादेशिक और राज्यों की संस्थाओं के कार्यों में समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया जाता है। कृषि, पशु पालन और मछली पालन, वन और भूमि संरक्षण, सिंचाई और बिजली, खनिज साधनों का विकास और स्वास्थ्य संबंधी अध्यायों में उन विभिन्न विभागों के लिए दूसरी पंचवर्षीय योजना के काल में अभीष्ट खोज और अनुसन्धान कार्यक्रम का विवरण दिया गया है। इस अध्याय का उद्देश्य यह बताना है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में वैज्ञानिक और टेकनोलौजिकल अनुसन्धान के क्षेत्र में कितनी उन्नति हुई है और दूसरी योजना की अवधि में उसको कितना आगे बढ़ाने का विचार है।

२. देश की औद्योगिक और टेकनोलौजिकल उन्नति में दूसरी योजना एक महत्वपूर्ण कदम है। विकास के हर क्षेत्र में बहुत-सी प्रबल समस्याएं हैं जिनके हल करने के लिए वैज्ञानिक अध्ययन, खोज और अनुसन्धान के परिणामों को कार्यान्वित करने की आवश्यकता है। इसलिए यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, विश्वविद्यालयों और दूसरे संस्थानों में हो रहे अनुसन्धान कार्यक्रमों का समन्वय राष्ट्रीय विकास योजना की आवश्यकताओं के साथ हो। इस कार्य में योजना आयोग की सहायता के लिए एक वैज्ञानिक मंडल बनाया गया है।

३. वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान की उन्नति, पथप्रदर्शन तथा समन्वय और वैज्ञानिक अनुसन्धान योजनाओं के लिए धन की व्यवस्था करना, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के प्रमुख कार्यों में से हैं। परिषद की स्थापना १९४२ में हुई थी परन्तु इसकी गतिविधि का क्षेत्र १९४७ के बाद बहुत बढ़ गया। परिषद का प्रशासनाधिकार एक प्रबन्ध-कर्त्री सभा को मिला हुआ है। इसके अध्यक्ष प्रधान मंत्री और उपाध्यक्ष प्राकृतिक साधन और वैज्ञानिक अनुसन्धान मंत्रालय के मंत्री हैं। परिषद की दो स्थायी परामर्शदात्री संस्थाएं हैं —

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान बोर्ड और इंजीनियरी अनुसन्धान बोर्ड। वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान बोर्ड परिषद की प्रबन्धक सभा को इन चार विषयों से सम्बद्ध प्रस्तावों पर परामर्श देता है : (१) विशिष्ट अनुसन्धान योजनाएं, (२) विविध संस्थानों में पृथक-पृथक उद्योगों की समस्याओं का वैज्ञानिक अध्ययन, (३) स्वदेशी साधनों के सर्वेक्षण और विशिष्ट अध्ययन, और (४) नई अनुसन्धान संस्थाओं की स्थापना। बोर्ड की सहायता के लिए कई अनुसन्धान समितियां हैं, जैसे रासायनिक अनुसन्धान समिति, भौतिक अनुसन्धान समिति, धातु अनुसन्धान समिति, रेडियो अनुसन्धान समिति, अंक-संकलन समिति, प्रतिमान और गुण नियन्त्रण समिति आदि। परिषद के अधीन अनुसन्धान कार्य उसकी अपनी प्रयोगशालाओं तथा विश्व-विद्यालयों एवं अन्य अनुसन्धान केन्द्रों में भी किया जाता है। सब राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं सम्मिलित कार्य और पथप्रदर्शन अथवा परीक्षणात्मक अनुसन्धान की सुविधाएं प्रदान करती हैं। परिषद द्वारा दिए गए अनुदानों से देश के विविध केन्द्रों में काम करने वाले बहुत-से वैज्ञानिकों का कार्य भी समन्वित शोधकार्य की परिकल्पना का अंग बन सका है।

४. हाल के वर्षों में ज्यों-ज्यों वैज्ञानिक कार्य विस्तृत हुआ है, वैज्ञानिक जनशक्ति को पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षण देने और उपलब्ध कर्मचारियों को देश के सर्वोत्तम लाभ के लिए प्रयुक्त करने की समस्याएं तात्कालिक हो गई हैं। सात वर्ष पूर्व वैज्ञानिक जनशक्ति समिति ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था। तब से वैज्ञानिक जनशक्ति सम्बन्धी समस्याओं के विषय में कोई व्यापक छानबीन नहीं हुई, यद्यपि उसके बाद बहुत-सी महत्वपूर्ण बातें हो चुकी हैं और दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, परमाणु शक्ति विभाग, विश्वविद्यालयों और अनेक अनुसन्धान संस्थाओं द्वारा शुरू किए जाने वाले कार्यक्रमों को दृष्टि में रखते हुए वैज्ञानिक जनशक्ति का फिर से पर्यवेक्षण करना आवश्यक प्रतीत होगा। भावी कार्यों से सम्बन्धित कई बातों पर विचार करना होगा, जैसे विविध क्षेत्रों की आवश्यकताओं के अनुसार कर्मचारियों की संख्याएं समुन्नत करना, विशिष्टीकरण के क्षेत्र जिनमें प्रशिक्षण की व्यवस्था देश अथवा विदेश में करनी होगी, उन क्षेत्रों का निश्चय करना जिनकी ओर आगामी पांच वर्षों में अनुसन्धान कर्मचारियों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करना है और वैज्ञानिक जनशक्ति के विकास से सम्बद्ध अन्य समस्याएं।

५. प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान परिषद ने भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, धातु कर्म विज्ञान, ईंधन, कांच और मृच्छिल्प (सिरे-मिक्स), खाद्य टेकनोलौजी, औषधियां, विद्युत रसायन, सड़क अनुसन्धान, चमड़ा और भवन निर्माण अनुसन्धान क्षेत्र में काम करने वाली राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं स्थापित करने का काम पूरा किया। पिलानी में इलेक्ट्रोनिक्स शोध संस्था स्थापित की जा रही है और लखनऊ में एक राष्ट्रीय वनस्पति वाटिका बनाने की योजना पर काम शुरू कर दिया गया है। राष्ट्रीय प्रयोग-शालाओं में मूल और व्यावहारिक शोध का काम किया जा रहा है और ये अपने-अपने क्षेत्र के उद्योगों की समस्याओं पर विशेष ध्यान देती हैं। औद्योगिक प्रतिमानीकरण से सम्बद्ध विकास कार्य से इन सब प्रयोगशालाओं का सम्बन्ध जुड़ा हुआ है। हर एक प्रयोगशाला का अपना अपना विस्तृत कार्यक्रम है, जिसे विशेषज्ञ समितियां बनाती हैं। इस प्रकार राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला में इलैक्ट्रोन के तापीयक्षरण तापायेनोद्गिरण (थरमियोनिक एमीशन आफ इलेक्ट्रोन्स), पर पारस्वानिकी (अल्ट्रासौनिक्स) पर, और अति न्यून तापमान पर पदार्थों के गुणों के सम्बन्ध में मूलभूत अनुसन्धान के साथ-साथ, औद्योगिक प्रतिमानों के अध्ययन, उद्योगों के लिए

और निर्माण का काम भी किया जाता है। ईंधन अनुसंधान संस्थान देश में उपलब्ध कोयले के भौतिक तथा रासायनिक गुणों के विस्तृत पर्यवेक्षण का काम जारी रखेगा और छानबीन के अन्य कामों के अतिरिक्त विविध प्रकार के कोयलों के न्यून तापमान पर कार्बनीकरण, गैर-कोक और कोक कोयले के मिश्रण और लिगनाइट के उपयोग के सम्बन्ध में परीक्षणात्मक संयंत्र कार्य भी करता रहेगा। कांच और मृच्छिल्प अनुसन्धान संस्थान, मृच्छिल्प उत्पादों के स्तर के उत्कर्ष, कांचीय बालू तथा मृत्तिका की कांच एवं मृच्छिल्प उद्योग सम्बन्धी उपयोगिता के अध्ययन और चीनी मिट्टी, पोर्सिलेन और झाग-कांच (ग्लास-फोम) आदि के निर्माण की विधियों पर शोध कार्य जारी रखेगा। छोटे पैमाने पर चश्मों के शीशे भी बनाए जाएंगे। चमड़ा अनुसन्धान संस्थान भारतीय कच्ची खालों और चमड़े के विकृत होने के कारणों और उसके निरोधक उपायों, चमड़े की किस्म की वृद्धि की प्रक्रियाओं और चमड़ा कमाई की नई वानस्पतिक तथा संश्लेषणात्मक वस्तुओं के निर्माण का अध्ययन करेगा। राष्ट्रीय धातुकर्म विज्ञान प्रयोगशाला, धात्वीय खनिजों के अभिशोधन, (बैनीफिकेशन आफ मैटलिक मिनरल्स) नए इस्पातों के विकास, उन दुर्लभ धातुओं के निष्कर्षण (एक्सट्रैक्शन) तथा उपयोग जो कि खनिज रूप में भारत में पाई जाती हैं, स्वदेशी संसाधनों के उष्मसह प्रसाधनों के विकास आदि कार्यों को चालू रखेगी। विद्युत रसायन अनुसन्धान संस्थान ने कच्चे मैंगनीज़ से परीक्षण के स्तर पर विद्युदंशिक (इलेक्ट्रोलिटिक) मैंगनीज़ के उत्पादन का विकास कर लिया है। अन्य प्रयोगशालाओं में भी उद्योगों के विकास पर गहरा असर करने वाले ऐसे ही कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

परमाणु शक्ति का विकास

६. परमाणु शक्ति के क्षेत्र में मुख्य उद्देश्य आणविक शक्ति से विद्युत शक्ति का उत्पादन और आणविक विज्ञान का कृषि, उद्योग, चिकित्सा तथा स्वास्थ्य में प्रयोग करना है। परमाणु शक्ति आयोग का संगठन १९४८ में भारत में परमाणु शक्ति के विकास की आधार शिला रखने और परमाणु शक्ति से सम्बद्ध विज्ञान के विविध क्षेत्रों के वैज्ञानिकों के दलों के संगठन के लिए किया गया था। इस कार्य में टाटा के मूलभूत अनुसन्धान संस्थान ने, जो १९४५ में स्थापना काल से ही आणविक भौतिक विज्ञान तथा सम्बद्ध प्रयोगात्मक विधियों में वैज्ञानिकों के एक दल को प्रशिक्षित कर चुका था, आयोग को सहायता दी। आयोग की क्रियाशीलता का यह परिणाम है कि अब व्यापक परिमाण में शोध तथा औद्योगिक योजना कार्यों को शुरू किया जा सका है और इस क्षेत्र के विकास कार्य को संभालने के लिए १९५४ में एक परमाणु शक्ति विभाग की स्थापना की गई। १९५५ में ट्राम्बे में एक परमाणु शक्ति संस्थान की स्थापना का कार्य शुरू किया गया। इस संस्थान में भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान और इंजीनियरी अनुसन्धान के लिए तीन मुख्य विभाग हैं। अपनी प्रयोगशालाओं और अपने शोध तथा प्रोटोटाइप रिएक्टरों (भट्ठियों) को स्थापित करने के अतिरिक्त संस्थान में परीक्षण के स्तर पर प्रयोगों की भी उचित सुविधाएं रहेंगी। १९५५ में इस संस्थान के वैज्ञानिक कर्मचारियों की संख्या २०० थी, १९५६ तक यह संख्या बढ़ाकर ८०० कर देने की योजना है। संस्थान के कर्मचारियों द्वारा ट्राम्बे में आयोजित एवं निर्मित एक स्विमिंग पूल रिएक्टर आशा है कि १९५६ के मध्य तक चालू हो जाएगा। यह प्राणि विज्ञान सम्बन्धी, चिकित्सा विज्ञान सम्बन्धी तथा औद्योगिक अनुसन्धान के लिए आइसोटोप (सस्थानी) का उत्पादन करेगा जिसे आगामी योजना कार्यों के लिए इंजीनियरों के प्रशिक्षण में प्रयुक्त किया जाएगा। कोलम्बो योजना के अधीन कैनेडा से प्राप्त एक उच्च शक्ति, उच्च कोटि परिमाणु भट्ठी (हाई पावर हाई फ्लक्स रिएक्टर) आशा है १९५८ में चालू हो जाएगी। यह कैनेडा-भारत

भट्ठी पदार्थ-जांच के लिए तथा उच्च शक्ति भट्ठियों से सम्बद्ध इंजीनियरी अनुसन्धान के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है।

७. भारतीय परमाणु शक्ति कार्यक्रम को सन्तुलित रूप से कार्यान्वित करने के लिए प्रस्ताव यह है कि देश आवश्यक पदार्थों और प्रक्रियात्मक पद्धतियों में आत्मनिर्भर हो। इसलिए इस दिशा में यह विभाग जो कार्य कर रहा है, उनका संक्षिप्त संकेत यहां किया जा सकता है। परमाणु शक्ति कार्य के लिए आवश्यक पदार्थ यूरेनियम, थोरियम, भारी पानी, ग्रेफाइट, जिरकोनियम और बेराइल हैं। भूगर्भ और भूभौतिकी सम्बन्धी व्यापक सर्वेक्षण तथा जरूरी खनिज पदार्थों के पता लगाने का काम आगे बढ़ रहा है। तिरुवांकुर-कोचीन के मोनेज़ाइट निक्षेपों में थोरियम, यूरेनियम तथा जिरकोनियम विद्यमान हैं, और राजस्थान में प्राप्य पैगामटाइट में बेराइल तथा विविध रेडियमधर्मी खनिज विद्यमान हैं। इनके अतिरिक्त बिहार, उदयपुर, जिला नैल्लोर तथा भारत के अन्य भागों में हाल ही में ऐसे निक्षेप ढूंढे गए हैं जिनमें कोलम्बाइट, टेन्टालाइट और विविध यूरेनियमवाही खनिज विद्यमान हैं। इस विभाग के औद्योगिक योजना कार्य इस दृष्टि से विकसित किए जा रहे हैं कि इन पदार्थों में देश की सब आवश्यकताएं शीघ्रातिशीघ्र पूरी की जा सकें। इनमें नीचे लिखे कार्य सम्मिलित हैं :—

(१) अलवाये में स्थित मोनेज़ाइट विधायन कारखाने ने १९५२ में उत्पादन आरम्भ किया था। १९५६-६१ तक इसकी विधायन क्षमता दुगनी, अर्थात ३,००० टन मोनेज़ाइट प्रति वर्ष हो जाएगी। यह कारखाना थोरियम यूरेनियम युक्त अवशिष्ट पिंड के अलावा, दुर्लभ मृत्तिका (रेअर अर्थ उत्पादों) और ट्रिसोडियम फास्फेट के उत्पादन का कार्य भी करता है।

(२) ट्राम्बे स्थित थोरियम-यूरेनियम कारखाने ने १९५५ में उत्पादन आरम्भ कर दिया था; वह अब अलवाये कारखाने में संगृहीत अवशिष्ट थोरियम-यूरेनियम पिंड का विधायन और थोरियम नाइट्रेट तथा यूरेनियम का उत्पादन कर रहा है। इसका ईंधन मान प्रति वर्ष लगभग एक अरब टन कोयले के बराबर है।

८. आयोजन अथवा जांच-पड़ताल की उन्नत अवस्था में स्थित अन्य योजना कार्य, जो सम्भवतः १९६१ तक चालू हो जाएंगे, इस प्रकार हैं :—

(१) भारतीय ताम्र निगम के कारखाने की कतरनों से प्राप्त यूरेनियम कच्ची धातुओं के उद्धार तथा दूसरी निम्न वर्ग की यूरेनियम कच्ची धातु से लाभ उठाने के लिए एक परीक्षणात्मक मार्गदर्शक कारखाना। यह कारखाना घाटशिला में स्थापित होगा और इसकी विधायन क्षमता २०० टन प्रति दिन होगी।

(२) १९५७ तक तैयार हो जाने की आशा से ट्राम्बे में एक यूरेनियम शुद्धिकरण संयंत्र बनाया जा रहा है जो मोनेज़ाइट से निष्कासित अशुद्ध यूरेनियम को भट्ठी में प्रयुक्त होने योग्य आणविक शुद्धता की यूरेनियम धातु में परिवर्तित कर देने का कार्य करेगा।

(३) पंजाब स्थित नंगल में अवस्थित नए उर्वरक कारखानों में से एक में भारी जल तथा नाइट्रोजनीय उर्वरक का संयुक्त उत्पादन।

(४) उद्योगों में प्रयोग के लिए ग्रेफाइट इलेक्ट्रोड के उत्पादन से सम्बद्ध आणविक शुद्ध ग्रेफाइट के उत्पादन का कारखाना ।

(५) खनिज बेराइल के विधायन का एक संयंत्र जो बेराइलियम ऑक्साइड तैयार करेगा ।

(६) पश्चिमी तट पर खनिज पदार्थों को रेणुका से पृथक करने के उद्योग के संगठन तथा उसके वैज्ञानिकन के लिए एक निगम की स्थापना ।

(७) रूटाइल और इल्मेनाइट रेत से टाइटेनियम स्पंज धातु निकालने के लिए परीक्षण स्तर का एक मार्गदर्शक संयंत्र; और

(८) ज़िरकोनियम धातु के उत्पादन के लिए एक संयंत्र ।

वैज्ञानिक अनुसन्धान का कार्यक्रम

९. १९५३ के अन्त में भारत सरकार ने राष्ट्रीय शोध विकास निगम की स्थापना की थी । इस निगम का काम अनुसन्धान और विकास के मध्य सम्पर्क स्थापित करना तथा यह प्रयत्न करना था कि अनुसन्धान के परिणामों का उद्योगों में अधिक से अधिक व्यावहारिक उपयोग होता रहे । उक्त निगम उद्योगों के सहयोग से पूर्ण हुए विधायकों के परीक्षणात्मक उत्पादन का काम करता है और अपने एकस्वों और अन्वेषणों की अनुज्ञप्तियां प्रदान करता है । अब तक १७७ अन्वेषणों के विकसित किए जाने का समाचार प्राप्त हुआ है ।

१०. विश्वविद्यालयों के विज्ञान विभागों को शिक्षा मन्त्रालय तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से अपनी-अपनी प्रयोगशालाओं तथा पुस्तकालयों में उपकरणों की पूर्ति तथा निर्माण कार्यक्रमों में और वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद से विशिष्ट शोध कार्यक्रमों व योजना कार्यों में सहायता मिली है । रसायन शास्त्र, रेडियो तथा आणविक भौतिकी विज्ञान, ब्रह्माण्ड रश्मि तथा अन्य कई विशिष्ट क्षेत्रों में कई विश्वविद्यालयों के अनुसन्धान केन्द्रों में बहुमूल्य कार्य किया जा रहा है । योग्य तथा प्रशिक्षित वैज्ञानिक कार्यकर्ताओं की प्राप्ति के लिए विश्वविद्यालयों के अनुसन्धान केन्द्रों के महत्व को भली-भांति माना जा रहा है । दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को आशा है कि वह विश्वविद्यालय में अनुसन्धान सुविधाओं को बढ़ाने तथा उच्चतर औद्योगिक शिक्षा के लिए १७ करोड़ की राशि दे सकेगा ।

११. भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलौर, टाटा का मूलभूत अनुसन्धान केन्द्र बम्बई, भारतीय आणविक भौतिकी विज्ञान संस्थान, कलकत्ता, बोस अनुसन्धान संस्थान, कलकत्ता, भारतीय विज्ञान संवर्धक संस्थान, कलकत्ता, बीरबल साहनी पुरावनस्पति संस्थान, लखनऊ, और श्रीराम औद्योगिक शोध संस्थान, दिल्ली आदि अनुसन्धान संस्थानों के अपने-अपने महत्वपूर्ण अनुसन्धान कार्यक्रम हैं । इन संस्थाओं में शोध की सुविधाएं बढ़ाने के लिए योजना में धन की व्यवस्था की गई है ।

१२. वैज्ञानिक ज्ञान के प्रसार के कार्य में संलग्न संस्थाओं में से भारतीय विज्ञान कांग्रेस एसोसिएशन, राष्ट्रीय विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली और बंगलौर स्थित भारतीय विज्ञान अकादमी उल्लेखनीय हैं । ये संस्थाएं पत्रिकाएं प्रकाशित करती हैं और वैज्ञानिक विचार-विमर्श व वाद-विवाद के लिए गोष्ठियों का आयोजन करती हैं । आधुनिक विज्ञान की विविध शाखाओं का प्रतिनिधित्व करने वाला भारतीय भौतिक विज्ञान संस्थान और भारतीय रसायन विज्ञान संस्थान

भी ऐसे ही कार्य कर रहे हैं। इन में से कई संस्थानों को सरकार ने या तो सीधे या बंगलौर स्थित भारतीय वैज्ञानिक संस्थान द्वारा अपनी-अपनी गतिविधि के विकास के लिए अनुदान दिए हैं।

१३. दूसरी पंचवर्षीय योजना में वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के विद्यमान कार्यक्रमों को चालू करने के लिए धन की व्यवस्था करने के अतिरिक्त, विकास कार्यक्रमों के लिए २० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। परिषद ने हैदराबाद में स्थित वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसन्धान की केन्द्रीय प्रयोगशालाओं और कलकत्ता में स्थित चिकित्सा शोध भारतीय संस्थान को, जिसका नाम अब भारतीय जीव रसायन और परीक्षणात्मक औषध संस्थान रख दिया गया है, अपने हाथ में ले लिया है। जो नए संस्थान बनाए जाएंगे उनमें से कुछ के नाम इस प्रकार हैं :— धनबाद में खान अनुसन्धान केन्द्र, कलकत्ता के समीप किसी स्थान पर केन्द्रीय यांत्रिक इंजीनियरी संस्थान, एक राष्ट्रीय प्राणि विज्ञान प्रयोगशाला, कलकत्ता में एक वैज्ञानिक और औद्योगिक संग्रहालय तथा असम में एक प्रादेशिक प्रयोगशाला। सांभर (राजस्थान) में उपलब्ध कटु क्षारीय द्रवों को उपयोगी बनाने की दृष्टि से वहां एक नमक अनुसन्धान केन्द्र स्थापित किया जाना है। यह भी प्रस्ताव है कि बंगलौर स्थित वैज्ञानिक संस्थान में गैस टर्बाइन अनुसन्धान के लिए, नई दिल्ली में वर्षा और बादलों सम्बन्धी भौतिक विज्ञान अनुसन्धान के लिए, पूना, देहरादून, कानपुर और बंगलौर में गंधयुक्त तेलों के अनुसन्धान के लिए, पवन-शक्ति के विकास के लिए, भारतीय जड़ी-बूटियों और जीव-भौतिकीय अनुसन्धान के लिए केन्द्र स्थापित किए जाएं। कोक कोयले के भण्डार को सुरक्षित रखने की दृष्टि से खनिज लोहे को पिघलाकर शुद्ध करने में कोक कोयले के स्थान पर गैर-कोक कोयले के प्रयोग के लिए परीक्षणात्मक खोज आरम्भ की जाएगी। परिषद की अनुसन्धान समितियों ने वैज्ञानिक और टेकनोलोजिकल क्षेत्रों में इंजीनियरी की विविध शाखाओं में तथा जीवन विज्ञान सम्बन्धी विषयों में अनुसन्धान करने के विषय में व्यापक कार्यक्रम तैयार किए हैं।

१४. भारतीय वनस्पति विज्ञान तथा प्राणि विज्ञान सम्बन्धी सर्वेक्षण संस्थाओं ने दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में किए जाने वाले अपने विकास कार्यक्रम बनाए हैं तथा राष्ट्रीय एटलस की तैयारी का कार्यक्रम प्रगति पर है।

१५. अहमदाबाद वस्त्रोद्योग अनुसन्धान संस्था, भारतीय जूट उद्योग अनुसन्धान संस्था और रेशम तथा नकली रेशम उद्योग अनुसन्धान संस्था आदि प्रमुख अपवादों को छोड़कर पृथक-पृथक उद्योगों में विशिष्ट अनुसन्धान संस्थाएं बहुत कम हैं। इन संस्थाओं के निर्माण और उनको चालू रखने में वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद ने सहायता की है।

१६. विश्वविद्यालयों तथा अनुसन्धान संस्थाओं में अनुसन्धान सम्बन्धी फैलोशिप तथा छात्रवृत्तियों की एक योजना, वैज्ञानिक जनशक्ति समिति की सिफारिश पर कुछ वर्ष पहले आरम्भ की गई थी। शिक्षा मन्त्रालय और वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद अनुसन्धान कार्यरत छात्रों को बहुत-सी छात्रवृत्तियां प्रदान करते रहते हैं।

१७. विज्ञान मन्दिर के नाम से तीन देहाती वैज्ञानिक अनुसन्धान केन्द्र खोले गए हैं और इनसे प्राप्त अनुभव के आधार पर ऐसे ९० से १०० तक केन्द्र दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में खोले जाने का विचार है। विज्ञान मन्दिर पद्धति का लक्ष्य ग्रामवासियों की भलाई से

सम्बद्ध आवश्यक विषयों में उनको सहायता व परामर्श देना और उन्हें वैज्ञानिक रीतियां सिखाना है ताकि वे कृषि, स्वास्थ्य, सफाई आदि के कार्यक्रमों से और अधिक लाभ उठा सकें। विज्ञान मन्दिर सामुदायिक विकास योजना क्षेत्रों में खोले जाएंगे और देहाती लोगों में हितकर वैज्ञानिक सूचनाओं का प्रसार करेंगे। कृषि और सार्वजनिक स्वास्थ्य सम्बन्धी सरल साहित्य उपलब्ध कराया जाएगा, वनस्पति रोगों और कृमियों के प्रदर्शक उदाहरण और उनके नमूने प्रदर्शन के लिए सुरक्षित रखे जाएंगे और कृमि नाशक तथा कवकमार (फंगीसाइड) दवाई छिड़कने के लिए हाथ से चलने वाली मशीनें ग्रामवासियों को दिखाई जाएंगी। एक परामर्शदात्री समिति की सहायता से, जिसमें कई मंत्रालयों के प्रतिनिधि सम्मिलित हैं, इस योजना को कार्यान्वित किया जा रहा।

मीटरिक प्रणाली

१८. भारत सरकार ने एक महत्वपूर्ण निर्णय किया है और उसे संसद की स्वीकृति मिल चुकी है। वह निर्णय यह है कि देश भर में मीटरिक प्रणाली के आधार पर नाप-तोल के मानक निश्चित किए जाएं। इस समय देश के विभिन्न भागों में प्रयोग में आने वाले नाप-तोल के प्रतिमानों में बहुत भिन्नता है। केवल विभिन्न क्षेत्रों के ही नाप-तोलों में भेद नहीं है, अपितु एक ही क्षेत्र की विभिन्न वस्तुओं के नाप-तोल की इकाइयों में भी अन्तर है, जैसे 'सेर' का नाप विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग है। दैनिक व्यवहार में प्रयुक्त भार और नाप के प्रतिमानों में ऐसी विभिन्नता से भ्रम और कठिनाई उत्पन्न होती है।। इस विषमता के अतिरिक्त यों ही प्रचलन में आए तथा प्रायः अवैज्ञानिक नाप-तोल की इन प्रचलित पद्धतियों में गणना की जो विषमताएं हैं वह एक और असुविधा है।

१९. नाप-तोल की मीटरिक प्रणाली स्वीकार कर लेने से राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक प्रतिमानित पद्धति का विकास होगा और इससे नाना प्रकार की गणनाएं सुगम हो जाएंगी। इस प्रकार के सुधार को औद्योगीकरण की आरम्भिक अवस्था में हाथ में लेना सर्वोत्तम होगा। ऐसा करने से इस पर न्यूनतम व्यय और कम से कम गड़बड़ होगी क्योंकि देर करने से कठिनाइयां बढ़ती हैं। इसलिए निश्चय किया गया है कि एक नियत कार्यक्रम के अनुसार इस सुधार को तत्काल आरम्भ किया जाए। इस कार्यक्रम को १०-१२ वर्षों में फैलाया जाएगा और इस अवधि के अन्त में आशा है कि मीटरिक प्रणाली पर आश्रित नाप-तोल की इकाइयां देश भर में सार्वजनिक रूप से प्रचलित हो जाएंगी।

२०. मीटरिक प्रणाली को सुगमता से अपनाने की दृष्टि से निश्चय किया गया है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में दाशमिक मुद्रा पद्धति चालू की जाए। इसके लिए आवश्यक अधिनियम बन चुका है और ज्यों ही टकसालें अपेक्षित संख्या में सिक्के ढालने लगेंगी त्यों ही नए सिक्के चालू कर दिए जाएंगे। उद्योग मंत्री की अध्यक्षता में एक स्थायी मीटरिक समिति का निर्माण किया जा चुका है। केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों, उनके अधीनस्थ कई विभागों और अधिकांश राज्य सरकारों ने अपनी-अपनी मीटरिक समितियां नियुक्त की हैं जो नई पद्धति को अपनाने के लिए कार्यक्रम बनाएंगी और संक्रमण काल में आने वाली समस्याओं की ओर सतत ध्यान देंगी। स्थायी मीटरिक समिति का यह दायित्व है कि वह परिवर्तन की रीति और उसके रूप के सम्बन्ध में परामर्श दे, विभिन्न विभागों के कार्यों को समन्वित करे और सुधार के क्रियान्वित होने की प्रगति की देखभाल करे। आगामी पांच वर्षों के लिए तात्कालिक कार्यक्रम के सम्बन्ध में उठने वाली टेकनीकल कठिनाइयों के समाधान के सम्बन्ध में मंत्रालयों

और राज्य सरकारों को परामर्श देने के लिए एक टेकनीकल उप-समिति भी नियुक्त कर दी गई है। शिक्षा और प्रचार के लिए एक अन्य उप-समिति है। स्थायी मीटरिक समिति के निर्णय केन्द्रीय सरकार के सब मंत्रालयों, राज्य सरकारों और व्यापार उद्योग से सम्बद्ध सब संस्थाओं को भेजे जाते हैं। एक महत्वपूर्ण निर्णय इस समिति ने यह किया है कि जब कभी किसी नए संयंत्र अथवा नई मशीन का क्रयादेश दिया जाए अथवा उत्पादन की कोई नई शाखा स्थापित की जाए तो यह ध्यान रखा जाए कि जो उपकरण मंगाया गया है वह और उत्पादन की जिस नई दिशा को स्थापित किया गया है उसका आधार मीटरिक प्रणाली ही हो, ताकि इनके सम्बन्ध में भविष्य में कोई संक्रमणकालीन कठिनाई खड़ी न हो।

२१. नाप-तोल की मीटरिक प्रणाली की स्थापना के लिए एक अधिनियम बनाया जा चुका है। आशा है कि इस वर्ष यह संसद के सामने विचारार्थ प्रस्तुत होगा। सुधार को पूरा होने में तो १०-१२ वर्ष लगेंगे पर आशा है कि अगले पांच वर्षों में भी कई दिशाओं में महत्वपूर्ण प्रगति हो सकेगी। वैज्ञानिक और औद्योगिक विकास के लिए यह सुधार मौलिक महत्व रखता है, अतएव इसे शीघ्र गति से कार्यान्वित करना चाहिए। मीटरिक प्रणाली के विषय में तथा जनता को इससे होने वाले लाभों के सम्बन्ध में भरपूर प्रचार होना चाहिए। देहाती और शहरी जनता में मीटरिक प्रणाली को सर्वप्रिय बनाने के कार्य को प्राथमिकता मिलनी चाहिए और इसके विभिन्न साधनों का उपयोग होना चाहिए। राष्ट्रीय विस्तार सेवा, जिसका देहात से घना सम्पर्क रहता है, देहातियों को मीटरिक प्रणाली के लाभ समझाने का बहुत-सा काम कर सकती है, और ऐसा वातावरण उत्पन्न कर सकती है जिसमें गांव वाले समझ-बूझकर सुधारों को स्वीकार करें।

अध्याय २५

स्वास्थ्य

दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रमों का सामान्य उद्देश्य वर्तमान स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार करना तथा राष्ट्रीय स्वास्थ्य के स्तर में क्रमशः सुधार करना है ताकि इनसे सभी लोगों को लाभ मिल सके। विशेष उद्देश्य इस प्रकार हैं :—

(१) ऐसी संस्थाएं स्थापित करना जो स्थानीय लोगों की और आस-पास के इलाकों के लोगों की सेवा का आधार बन सकें;

(२) उचित प्रशिक्षण द्वारा टेकनीकल कार्यकर्ता तैयार करना और प्रशिक्षित व्यक्तियों को काम पर लगाना;

(३) सार्वजनिक स्वास्थ्य के सुधार की दिशा में पहले कदम के नाते ऐसी संचारी बीमारियों को रोकने के उपाय करना जो किसी वर्ग में व्यापक रूप से विद्यमान हैं;

(४) रहने की जगहों और वातावरण की सफाई का सक्रिय प्रयत्न करना; और

(५) लोगों के स्वास्थ्य स्तर को ऊंचा उठाने के लिए परिवार नियोजन तथा अन्य सहायक कार्यक्रम बनाना।

चिकित्सालय सम्बन्धी सुविधाएं

२. चिकित्सालय सम्बन्धी सुविधाओं का प्रबन्ध करते हुए इन बातों का ध्यान रखा जाएगा—परिमाण, वितरण, समन्वय और किस्म। इसमें प्रभावशाली आंचलिक पद्धति के आधार पर मुख्य रूप से चार प्रकार के चिकित्सालय होंगे, अर्थात अध्यापन चिकित्सालय, जिला चिकित्सालय, तहसील चिकित्सालय और एक स्वास्थ्य इकाई से सम्बद्ध ग्राम चिकित्सा केन्द्र। इस पद्धति में ये चारों प्रशासनिक दृष्टि से एक-दूसरे से सम्बद्ध होंगे। इस तरह की समन्वित चिकित्सा व्यवस्था से, जिसमें चिकित्सा सेवाओं और रोगियों का अबाध प्रवाह रहेगा, शहरी और देहाती दोनों इलाकों में चिकित्सा की सन्तोषजनक सुविधा रहेगी।

३. चिकित्सालय सम्बन्धी सुविधाओं को बढ़ाने की जरूरत तो है, परन्तु इन सुविधाओं पर होने वाले भारी व्यय को ध्यान में रखते हुए यह भी उतना ही जरूरी है कि वर्तमान चिकित्सा संस्थाओं को सुधारा जाए और उन्हें कार्यकुशल एवं मितव्ययी बनाया जाए। वर्तमान चिकित्सालयों में कर्मचारी, स्थान, साधन तथा अन्य सामग्रियों की वृद्धि की ओर विशेष ध्यान देना भी आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त निम्न तरीकों से एक सुदूरगामी कार्यक्रम बनाया जाना है :—

(१) चिकित्सालयों की कार्यप्रणाली में समन्वय लाना;

(२) क्लिनिक, पारिवारिक चिकित्सा संस्थाओं तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थाओं के कार्यों को चिकित्सालयों के कार्यों से मिलाना;

(३) जहां सम्भव हो वहां रोगियों के निवास की औसत अवधि को कम करके चिकित्सालयों में प्राप्य स्थानों को शीघ्रातिशीघ्र उपलब्ध कराना;

(४) दारुण संचारी रोगों के रोगियों के लिए पृथक स्थान की व्यवस्था करना; क्योंकि वर्तमान सामान्य चिकित्सालयों में ऐसे रोगियों को बहुत अधिक स्थान देना पड़ता है;

(५) पुराने रोगों के रोगियों के लिए सस्ती दवाओं, सस्ती सेवा-शुश्रूषा तथा अधिक स्थान देने की व्यवस्था करना; और

(६) रासायनिक चिकित्सा पद्धति और बहुत-सी बीमारियों के निरोधक उपायों में आधुनिक उन्नति के कारण क्लिनिक तथा पारिवारिक चिकित्सा सेवाएं अधिक प्रभावजनक हो गई हैं, अतएव चिकित्सालयों में रोगी स्थानों की वृद्धि की अपेक्षा इन सेवाओं के विस्तार पर ध्यान देना ।

४. अनुमान लगाया गया है कि १९५१ में देश में ८,६०० चिकित्सा संस्थाएं थीं, जिनमें बीमारों के लिए रोगी शैयाओं की संख्या १,१३,००० थी । १९५५-५६ में चिकित्सा संस्थाएं १०,००० और शैया संख्या १,२५,००० हो गई । इस प्रकार प्रथम योजना की अवधि में चिकित्सा संस्थाओं में १६ प्रतिशत की और रोगी शैया संख्या में १० प्रतिशत की वृद्धि हुई । द्वितीय योजना की समाप्ति पर संस्थाओं की संख्या १,२६,०० और रोगी शैया संख्या १,५५,००० हो जाने का अनुमान है । इस प्रकार संस्थाओं की संख्या में २६ प्रतिशत और रोगी शैया संख्या में २४ प्रतिशत वृद्धि का अनुमान है । योजना में नए चिकित्सालय बनाने और कर्मचारी, स्थान, साधन तथा दूसरे सामान की वृद्धि कर वर्तमान चिकित्सालयों के सुधार के लिए लगभग ४३ करोड़ रुपए की व्यवस्था है ।

स्वास्थ्य इकाइयां

५. दूसरी योजना की अवधि में सबसे अधिक जरूरी काम देहाती आबादी की स्वास्थ्य रक्षा का उचित प्रबन्ध करना है । देश के सारे देहाती इलाके में राष्ट्रीय विस्तार योजना के अधीन काम शुरू करने का जो कार्यक्रम है, उसे ध्यान में रखकर यथासम्भव अधिक विकास खण्डों में प्राथमिक स्वास्थ्य इकाइयां बनाना जरूरी है, ताकि देहातों के निवासियों के लिए सम्पूर्ण निरोधात्मक और उपचारात्मक स्वास्थ्य सेवा की व्यवस्था हो सके । स्वास्थ्य इकाई में कर्मचारियों की प्रस्तावित संख्या यद्यपि एक औसत दर्जे के विकास खण्ड की समग्र जनता की सेवा के लिए पर्याप्त न होगी, तथापि इस योजना की अवधि में देश भर में आरंभिक तरह के स्वास्थ्य संगठन तो स्थापित हो ही जाएंगे । आगामी योजनाओं की अवधि में स्वास्थ्य इकाइयों द्वारा परिकल्पित चिकित्सा पद्धति में क्रमशः सुधार किए जा सकते हैं ।

६. स्वास्थ्य इकाई कार्यक्रम की अन्तिम सफलता इस बात में है कि अपेक्षित सेवाएं कितनी मात्रा में उपलब्ध होती हैं । ये सेवाएं निम्न हैं —

(१) संस्थागत और पारिवारिक चिकित्सा व्यवस्था, जिसमें रोग के निरोधात्मक भाग पर समुचित ध्यान दिया जाए और माता तथा बालक का स्वास्थ्य, स्कूल एवं संक्रामक रोग नियन्त्रण आदि विषय सम्मिलित हों,

(२) निवास स्थान तथा आस-पास के वातावरण की स्वच्छता,

(३) स्वास्थ्य शिक्षा,
(४) जीवन और स्वास्थ्य सम्बन्धी आंकड़ों में सुधार, और
(५) परिवार नियोजन ।

शुरू-शुरू में मलेरिया, फाईलेरिया, तपेदिक, गुप्तांग रोग और कोढ़ के नियन्त्रण आदि के कार्य भले ही विशेष कर्मचारी करते रहें, परन्तु समुचित नियन्त्रण हो जाने के पश्चात ऐसी सेवाएं भी सामान्य स्वास्थ्य इकाई की गतिविधि का एक भाग बना दी जानी चाहिएं । यदि दूसरी योजना की अवधि में ऐसी विशिष्ट सेवा संस्थाओं और स्वास्थ्य इकाइयों की गतिविधियों में परस्पर पूरा सम्बन्ध हो सके तो इसमें बहुत सुविधा होगी । हर एक स्वास्थ्य इकाई में नियुक्त कर्मचारी ऐसे होने चाहिएं ताकि वह इकाई आधारभूत सेवाओं के साथ-साथ मलेरिया तथा अन्य रोगों से सम्बद्ध विशिष्ट सेवाएं प्रदान करने में भी समर्थ हो सके । एक स्वास्थ्य इकाई अपने सारे इलाके में इन सेवाओं को पहुंचा सके, इसके लिए परिवहन का पर्याप्त व्यावहारिक महत्व है । इससे यह सुविधा भी होगी कि हालत ज्यादा खराब होने पर रोगियों को अविलम्ब चिकित्सालयों में पहुंचाया जा सकेगा । अच्छा तो यह है कि स्वास्थ्य इकाई की रचना और उसके कार्यों का एक आदर्श रूप ऐसा हो जो कि उदार और देश भर के लिए एक-सा हो । यथासम्भव नए औषधालय पुराने ढंग के न खोले जाएं और वर्तमान औषधालयों को स्वास्थ्य इकाइयों में बदल दिया जाए ।

७. देहातों के लिए डाक्टर और दूसरे स्वास्थ्य कर्मचारी न मिलने का कारण प्रशिक्षित कर्मचारी वर्ग की कमी तो है ही, परन्तु डाक्टर तो विशेष रूप से इसलिए वहां जाने को तैयार नहीं होते कि वहां मकान, बच्चों की शिक्षा व अन्य सुविधाएं सन्तोषजनक नहीं हैं । स्वास्थ्य कर्मचारियों को देहात की ओर आकृष्ट करने के लिए यह अपेक्षित है कि इन इलाकों में सेवा के लिए वातावरण अधिक आकर्षक बना दिया जाए ।

८. पहली योजना की अवधि में ७२५ स्वास्थ्य इकाइयां स्थापित की गई थीं; दूसरी योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार योजना तथा सामुदायिक योजना क्षेत्रों तथा दूसरे इलाकों में ३,००० से अधिक स्वास्थ्य इकाइयां बनाने का विचार है । राज्य सरकारों का भी विचार है कि १३१ वर्तमान औषधालयों को प्रारम्भिक स्वास्थ्य इकाइयां और कुछ को माध्यमिक स्वास्थ्य इकाइयां बना दिया जाए । इस काम के लिए योजना में २३ करोड़ रुपए की व्यवस्था कर दी गई है ।

डाक्टरी शिक्षा

६. १९५०-५१ में ३० चिकित्सा कालेज थे । १९५४-५५ में इनकी संख्या बढ़कर ३४ और १९५५-५६ में ४२ हो गई । १९५०-५१ में हर वर्ष लगभग २,५०० विद्यार्थी प्रवेश पाते थे, परन्तु १९५५ तक लगभग ३,५०० विद्यार्थियों के प्रवेश की व्यवस्था हो गई । प्रशिक्षण की वर्तमान सुविधाओं के अनुसार दूसरी योजना में हर वर्ष लगभग २,५०० डाक्टर मिल सकेंगे । इस समय देश में ७० हजार डाक्टर हैं । दूसरी योजना की अवधि में इस प्रगति के अनुसार १२,५०० डाक्टर और बन सकेंगे, फिर भी ६०,००० डाक्टरों की जरूरत रहेगी । इस कमी को पूरा करने के लिए यह सोचा गया है कि दूसरी योजना की अवधि में प्रशिक्षण की सुविधाओं को बढ़ाया जाए जिससे डाक्टरों की कमी शीघ्र पूरी हो सके ।

१०. नए चिकित्सा कालेजों को पूरी तरह काम करने की अवस्था में लाने में तो कुछ देरी लगेगी, अतएव वर्तमान कालेजों के विस्तार को प्राथमिकता दी जाएगी । चिकित्सा कालेजों और

उनसे सम्बद्ध चिकित्सालयों के विस्तार के लिए, चिकित्सा कालेजों के निरोधात्मक औषध-विभाग और मनोरोग विभाग खोलने के लिए, अखिल भारतीय चिकित्सा विज्ञान संस्थान की पूर्ति के लिए और स्नातकोत्तर प्रशिक्षण व अनुसन्धानार्थ चिकित्सा कालेजों के कुछ विभागों का दर्जा बढ़ाने के लिए योजना में २० करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इन विस्तार व्यवस्थाओं के कारण वार्षिक प्रवेश की संख्या में ४०० की वृद्धि होने का अनुमान है परन्तु इस प्रकार डाक्टरों की कमी का एक छोटा-सा अंश ही पूरा होगा। इसलिए दूसरी योजना की अवधि में कुछ नए कालेजों का खोलना आवश्यक होगा। नए चिकित्सा कालेज खोलने के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय की योजना में ६·५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

११. भारत के चिकित्सा कालेजों के अध्यापकों को इस समय निजी प्रेक्टिस करने की इजाजत है। अध्यापन के स्तर के निम्नकोटि का होने और चिकित्सा सम्बन्धी अनुसन्धान की ओर बहुत कम ध्यान होने का एक विशेष कारण यह भी है। इस परिस्थिति के सुधार के लिए भारतीय चिकित्सा परिषद ने सिफारिश की है कि चिकित्सा कालेज के हर विभाग में पूरे समय काम करने वाले अध्यापक नियुक्त किए जाएं। उपस्नातक और स्नातकोत्तर चिकित्सा शिक्षा के स्तर को उन्नत करने के लिए एवं अनुसन्धान कार्य के विकास के लिए यह अपेक्षित है कि पूरे समय काम करने वाले अध्यापक नियुक्त करके चिकित्सा कालेजों को सुदृढ़ बनाया जाए। इस कार्य के लिए प्रत्येक कालेज को लगभग २ लाख रुपए प्रति वर्ष अधिक खर्च करने पड़ेंगे। अतएव दूसरी योजना की अवधि में इस काम के लिए ३५ चिकित्सा कालेजों के लिए ३·५ करोड़ रुपए की व्यवस्था आवश्यक है।

दन्त चिकित्सा शिक्षा और सेवाएं

१२. देश में योग्यताप्राप्त दन्त चिकित्सकों की कुल संख्या केवल ६०० से ७०० तक है। इस प्रकार देश में जरूरत के लिहाज से बहुत कम दन्त चिकित्सक हैं। अतएव दन्त चिकित्सकों के प्रशिक्षण की सुविधा में पर्याप्त वृद्धि की आवश्यकता स्पष्ट है। इस समय देश में केवल ६ दन्त चिकित्सा कालेज हैं। इनमें भी कर्मचारी, साधन और भवन की व्यवस्था समुचित नहीं है। पहला कदम यह होगा कि वर्तमान दन्त चिकित्सा कालेजों की कार्यप्रणाली को अपेक्षित स्तर तक ऊंचा उठाया जाए और उनमें प्रवेश संख्या को दुगुना कर दिया जाए। बम्बई राज्य में दो तथा पंजाब, उत्तरप्रदेश, पश्चिम बंगाल और मद्रास में एक-एक दन्त चिकित्सा कालेज है। एक दन्त चिकित्सा कालेज अखिल भारतीय चिकित्सा विज्ञान संस्थान दिल्ली में खोला जाएगा। दूसरी योजना की अवधि में आंध्र, बिहार, मध्यप्रदेश और पेप्सू में नए दन्त चिकित्सा कालेज खोलने का विचार है और पश्चिम बंगाल तथा पंजाब के वर्तमान कालेजों का विस्तार भी किया जाएगा। दन्त चिकित्सा की शिक्षा के लिए योजना में २ करोड़ रुपए की व्यवस्था है।

१३. दन्त चिकित्सा सेवाओं के विस्तार के लिए यह सुझाव है कि देहाती औषधालयों में नियुक्त चिकित्सकों को चिकित्सा के लिए प्रशिक्षित किया जाए। दन्त चिकित्सकों के रजिस्टर 'ब' भाग में अंकित दन्त चिकित्सकों की संख्या ६,००० से ७,००० तक है। इनको और अधिक प्रशिक्षण मिलना चाहिए। इस बारे में दन्त स्वास्थ्य निरीक्षकों, दन्त वैज्ञानिकों, दांत सम्बन्धी मशीनों का ज्ञान तथा दन्त सम्बन्धी टेकनीकल प्रशिक्षण की व्यवस्था करना आवश्यक है। ये लोग इस समय उपलब्ध सीमित दन्त चिकित्सा सेवाओं की कुशलता में वृद्धि कर सकेंगे। दूसरी योजना की अवधि में कई जिला सदर मुकामों के चिकित्सालयों में दन्त चिकित्सक क्लिनिक स्थापित किये जाएंगे।

उपचार तथा अन्य प्रशिक्षण कार्यक्रम

१४. डाक्टरों की अपेक्षा अन्य कर्मचारियों की भी बहुत कमी है और ऐसी सम्भावना है कि इन कर्मचारियों की कमी डाक्टरों की अपेक्षा ज्यादा समय तक बनी रहेगी। १९५४ के अन्त में इस प्रकार के कर्मचारियों की संख्या विभिन्न राज्यों में इस प्रकार थी—२०,७९३ उपचारिकाएं (नर्सें), २४,२९० प्रसाविकाएं (मिड-वाइफें), ७५६ स्वास्थ्य निरीक्षक, ४,४६८ दाइयां और ९४६ उपचारिका-दाइयां। लक्ष्य यह है कि १,००० जनसंख्या के लिए एक चिकित्सालय हो, ५,००० जनसंख्या के लिए एक उपचारिका तथा एक प्रसाविका हो और २०,००० जनसंख्या के लिए एक स्वास्थ्य निरीक्षक और एक सफाई निरीक्षक हो। नीचे दी गई तालिका के अन्तिम कोष्ठक में सहायक कर्मचारियों के सम्बन्ध में दिए गए अंक अभी कुछ दूर के ही हैं, तथापि इनसे वर्तमान कमी का आभास मिलता है और बोध होता है कि सभी लोगों के लिए आरम्भिक स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था करने के लिए किस द्रुत गति से और लगातार प्रयत्न करना होगा। तालिका निम्न प्रकार है —

	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१	आवश्यक संख्या
डाक्टर	५९,०००	७०,०००	८२,५००	९०,०००
उपचारिकाएं (सहायक उपचारिका दाइयों सहित) ...	१७,०००	२२,०००	३१,०००	८०,०००
प्रसाविकाएं (मिड-वाइफ) ...	१८,०००	२६,०००	३२,०००	८०,०००
स्वास्थ्य निरीक्षक ...	६००	८००	२,५००	२०,०००
उपचारिका-दाइयां और दाइयां	४,०००	६,०००	४१,०००	८०,०००
स्वास्थ्य सहायक और सफाई निरीक्षक	३,५००	४,०००	७,०००	२०,०००

दूसरी योजना की अवधि में चिकित्सा कालेजों और उन बड़े चिकित्सालयों में जहां शिक्षा की व्यवस्था नहीं है और अधिक संख्या में उपचारिकाओं, प्रसाविकाओं, फार्मेसिस्टों, सफाई निरीक्षकों और अन्य टेकनीकल लोगों के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया जा रहा है। प्रशिक्षण के इन कार्यक्रमों के लिए ६ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

१५. उपचारिकाएं—इस समय विभिन्न प्रकार की और विभिन्न स्तर पर उपचारिका शिक्षा दी जा रही है। यह आवश्यक है कि शिक्षा एक नियत स्तर की हो, जिससे प्रशिक्षण की वर्तमान और नई सुविधाओं से अधिकतम लाभ उठाया जा सके। उपचारिकाओं के दो वर्तमान कालेज, जो उपचारिकाओं को बी० एस० सी० डिग्री तक की शिक्षा देते हैं, इसी प्रकार शिक्षा देते रहें और उच्च श्रेणी की उपचारिका बनाने का प्रशिक्षण कार्य करते रहें। आजकल जो ३ वर्ष का आधारभूत उपचारिका पाठ्यक्रम नियत है, जिसमें सामान्यत: ६ मास या १ वर्ष का प्रसाविका प्रशिक्षण भी जोड़ दिया जाता है, उसमें विस्तार की बहुत आवश्यकता है। उपचारिका सेवाओं का विकास भी इसी पर निर्भर है। वर्तमान उपचारिका प्रशिक्षण संस्थाओं में प्रवेश की संख्याओं को बढ़ाना होगा और प्रत्येक बड़े चिकित्सालय का उपयोग प्रशिक्षण केंद्र के रूप में करना होगा। आधारभूत प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम में उपचरण के सार्वजनिक स्वास्थ्य और परिवार नियोजन संबंधी पहलुओं की ओर झुकाव होना चाहिए।

१६. **सहायक उपचारिका-प्रसाविकाएं**—जब देश भर में बड़े-बड़े विकास कार्यक्रम हाथ में लिए जा रहे हैं तो सहायक उपचारिका-प्रसाविकाओं की एक बड़ी संख्या अपेक्षित है। इनका पाठ्यक्रम उपचारिकाओं के पाठ्यक्रम से छोटा होगा। इस प्रकार के प्रशिक्षण की सुविधाओं को बढ़ाना होगा और चिकित्सालय की सुविधाओं का उपयोग करना होगा। सुझाव है कि प्रसाविकाओं के प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त वर्तमान संस्थाओं को बढ़ाकर सहायक उपचारिका-प्रसाविका प्रशिक्षण केंद्र बना दिया जाए और जिले के सदर चिकित्सालयों व उन दूसरे चिकित्सालयों को जहां ५० या ५० से अधिक रोगी-शैयाएं हैं, इस प्रशिक्षण के लिए प्रयुक्त किया जाए।

१७. होना यह चाहिए कि प्रत्येक प्रकार की उपचारिका को अपने से ऊंचे प्रकार की उपचारिका का प्रशिक्षण क्रमश: मिले और वह चाहे तो इस प्रकार उपचारिका कार्य में स्नातक बन सके। उपलब्ध उपचारिका कर्मचारियों का अधिक से अधिक उपयोग प्राप्त करने की विधि यह है कि पूरे समय काम करने वाली उपचारिकाओं के अतिरिक्त अल्पकालीन कार्यकर्ताओं को भी नियुक्त किया जाए। यदि पूरे समय काम करने की शर्त लगाई जाए तो विवाह के पश्चात उपचारिकाएं प्राय: इस धन्धे को छोड़ देती हैं। बहुत-सी विवाहिता उपचारिकाएं अल्पकालीन सेवा करने को तैयार हो सकती हैं, यदि उन्हें अपना स्थान न छोड़ना पड़े। यदि स्थानीय प्रार्थियों को प्रशिक्षण दिया जाए और उन्हें फिर किसी दूर स्थान पर न भेजकर उनके ही इलाकों में नियुक्त कर दिया जाए तो उपचारिका कार्य के लिए और भी बहुत-से प्रार्थी मिल सकते हैं।

१८. **दाइयां**—जिन इलाकों में दाइयों की अविलम्ब आवश्यकता है, उनमें दाइयों को प्रशिक्षित करना चाहिए। इस सम्बन्ध में चुनाव करते हुए दाई-वर्ग की स्त्रियों को प्राथमिकता देनी होगी। पाठ्यक्रम ६ मास का होना चाहिए और इनके प्रशिक्षण का कार्य सार्वजनिक स्वास्थ्य उपचारिकाओं अथवा योग्यताप्राप्त प्रसाविका स्वास्थ्य निरीक्षकों के सुपुर्द होना चाहिए।

१६. **स्वास्थ्य निरीक्षक**—स्वास्थ्य निरीक्षकों के पाठ्यक्रम में प्रार्थियों की इस समय बहुत कमी है। स्वास्थ्य निरीक्षक के पाठ्यक्रम के लिए प्रसाविका प्रशिक्षण अपेक्षित है, परन्तु इसके लिए समुचित व्यवस्था का न होना उपर्युक्त कमी का एक कारण है। इस कमी का दूसरा कारण यह है कि जिन स्वास्थ्य निरीक्षकों के पास सामान्य उपचारिका का प्रमाणपत्र नहीं है, उनके लिए आगे बढ़ने का कोई मार्ग नहीं है। अधीक्षण और अध्यापन के पद इतने कम हैं कि उच्च योग्यता वाले स्वास्थ्य निरीक्षकों को भी अपने क्षेत्र में उन्नति करने का अवसर नहीं है। छोटे शहरों और देहातों में काम करने के लिए स्वास्थ्य निरीक्षकों का मिलना इसलिए कठिन है कि चिकित्सालय से असम्बद्ध स्थानों में रहने के लिए मकानों की व्यवस्था प्राय: नहीं होती। एक और बाधा यह है कि सेवा के लाभों में समानता नहीं है, भोजन, पोशाक और धुलाई के भत्ते स्वास्थ्य निरीक्षकों को नहीं मिलते।

२०. यदि सब प्रकार के कर्मचारी (उपचारिकाएं, प्रसाविकाएं और स्वास्थ्य निरीक्षक) एक ही सेवा वर्ग के हों, तो बहुत-से लाभ होंगे। इस समय सार्वजनिक स्वास्थ्य उपचारिकाएं, स्वास्थ्य निरीक्षक और घरों में जाकर काम करने वाली प्रसाविकाएं सदा एक सुगठित परिचारिका मण्डल के अंग नहीं मानी जातीं। सुगठित संवर्ग बनाने के लिए कुछ सीमा तक सब कर्मचारियों के लिए एक ही आधारभूत प्रशिक्षण का होना आवश्यक है। यह मान्यता लगातार बढ़ रही है कि चिकित्सालयों और सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए परिचर्या सेवा संस्थाओं को एक संवर्ग में गठित

1537

करना चाहिए और सब उपचारिकाओं व प्रसाविकाओं को भी सार्वजनिक स्वास्थ्य का तथा घरों में जाकर कार्य करने का प्रशिक्षण मिलना चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि आगे चलकर स्वास्थ्य निरीक्षक के लिए पृथक प्रशिक्षण की आवश्यकता न रहेगी। यद्यपि सुदूरवर्ती उद्देश्य यही होगा कि स्वास्थ्य निरीक्षकों का स्थान सार्वजनिक स्वास्थ्य में भी प्रशिक्षित उपचारिकाएं ग्रहण करें और प्रसाविकाओं का स्थान सहायक उपचारिका-दाइयां लें, तथापि अभी स्वास्थ्य निरीक्षकों की भारी कमी को देखते हुए यह उचित नहीं है कि स्वास्थ्य निरीक्षक प्रशिक्षण को समाप्त किया जाए। इसलिए यह अपेक्षित है कि इस प्रकार के कर्मचारियों के प्रशिक्षण की वर्तमान सुविधाओं को अधिक सशक्त बनाया जाए और समुचित रूप से विस्तृत किया जाए ताकि वर्तमान जरूरतों को भली-भांति पूरा किया जासके और परिवर्तन सुविधा से हो।

२१. **सहायक कर्मचारी मंडल**—सहायक कर्मचारी मण्डल के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में यह ध्यान रखना होगा कि प्रशिक्षित लोगों को प्रशिक्षण के पश्चात शीघ्रातिशीघ्र काम पर लगाया जा सके। प्रशिक्षण के लिए भर्ती यथासम्भव स्थानीय लोगों से की जाए और कम आय वाले लोगों में से योग्य विद्यार्थी अवसर से लाभ उठा सकें, इस हेतु छात्रवृत्तियों की व्यवस्था होनी चाहिए। सहायक स्वास्थ्य कर्मचारियों का काम यह है कि वे डाक्टरों तथा दूसरे उच्च प्रशिक्षित कर्मचारियों के उस काम में सहायक हों जो वे निरोधात्मक और उपचारात्मक स्वास्थ्य सेवा के सम्बन्ध में करते हों। सहायक कर्मचारियों के प्रशिक्षण और भर्ती का मुख्य उद्देश्य यह है कि जनता को स्वास्थ्य संरक्षण शीघ्रतापूर्वक और अपेक्षाकृत सस्ता प्राप्त हो सके। अधिकतर हालतों में प्रत्येक मुख्य वर्ग के पूर्ण प्रशिक्षित कर्मचारियों के साथ एक सहायक कर्मचारी की अपेक्षा है। इस प्रकार सफाई निरीक्षक सार्वजनिक स्वास्थ्य इंजीनियर का सहायक कर्मचारी है, रेडियोग्राफर रेडियोलोजिस्ट का, और प्रयोगशाला का टेकनीशियन प्रयोगशाला के प्रशिक्षित अनुसन्धान कार्यकर्ता का सहायक है। इसी प्रकार जो डाक्टर निरोधात्मक एवं उपचारात्मक चिकित्सा में संलग्न है, उसके लिए ऐसा सहायक कर्मचारी सचमुच सहायक हो सकता है जो विभिन्न निरोधात्मक कार्रवाइयों को कर सके और साथ ही प्रारम्भिक प्रकार के उपचार कर सके। स्वास्थ्य संरक्षण और चिकित्सा की उत्तम व्यवस्था के लिए यह अपेक्षित है कि सहायक कर्मचारी मण्डल पूर्ण प्रशिक्षित पेशेवर लोगों की देख-रेख में काम करे। प्रत्येक प्रकार के सहायक कर्मचारी का कार्य विशिष्ट और सुनिरूपित होना चाहिए। ऐसे कर्मचारियों के तैयार करने का मुख्य सिद्धांत यह होना चाहिए कि कर्मचारी अपने निश्चित कार्यक्षेत्र में पूरी योग्यता से काम कर सके। यह अभिप्राय नहीं है कि सहायक कर्मचारी ऐसा बन जाए कि उसे विभिन्न प्रकार के स्वास्थ्य कार्यों का ऊपरी ज्ञान करा दिया जाए और वह किसी में भी प्रवीण न हो।

२२. प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आधार देश भर में कुछ न्यूनतम मान प्राप्त करना होगा। भारत की चिकित्सा, दन्त चिकित्सा, उपचारिका और फार्मेसी परिषदें अपने-अपने व्यावसायिक प्रशिक्षण क्षेत्रों में इस मान पर पहुंचने का प्रयत्न करती हैं। सफाई निरीक्षकों, स्वास्थ्य सहायकों और कई दूसरे प्रकार के कार्यकर्ताओं, जैसे प्रयोगशाला टेकनीशियनों के लिए ऐसी समन्वय करने वाली संस्थाएं इस समय नहीं हैं, जो एक समान न्यूनतम मान की प्राप्ति के लिए अपेक्षित अधिकार रखती हों। यह भी जरूरी है कि विभिन्न प्रकार के सहायक कर्मचारियों को अपने-अपने विभाग में उच्चतर व्यावसायिक और प्रशासनिक पदों पर पहुंचने का अवसर मिले। इसलिए उन्हें आगे, सामान्य एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण लेने का अवसर देना आवश्यक है।

चिकित्सा सम्बन्धी अनुसन्धान

२३. दस वर्ष पहले चिकित्सा सम्बन्धी अनुसन्धान के समग्र क्षेत्र का पर्यालोचन स्वास्थ्य सर्वेक्षण और विकास समिति ने किया था। समिति ने चिकित्सा शिक्षा संस्थाओं में अनुसन्धान कार्य के अभाव की ओर ध्यान आकर्षित किया था और इस बात पर चिन्ता प्रकट की थी कि अनुसन्धान संस्थाओं में शोध को विकास के स्थान पर प्राणिशास्त्र सम्बन्धी वस्तुओं के निर्माण तथा नित्य के कार्यों पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है। समिति की यह भी सम्मति थी कि अनुसन्धान संस्थाओं को अतिरिक्त कर्मचारी, सामान और साधनों की आवश्यकता है. इस निष्कर्ष के प्राप्त होने के पश्चात भी स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है।

२४. पिछले वर्षों में चिकित्सा सम्बन्धी अनुसन्धान के लिए बहुत-सी अनुसन्धान संस्थाएं बनी हैं। अब देश में एक संस्था औषधि अनुसन्धान के लिए है और वक्ष रोगों, कुष्ठ, कैंसर और मानसिक स्वास्थ्य का अनुसन्धान करने के लिए भी संस्थाएं हैं। इन संस्थाओं के लिए समुचित सुविधाओं और धन की व्यवस्था होनी चाहिए। अनुसन्धान संस्थाओं को चिकित्सा विज्ञान के विशिष्ट क्षेत्रों में कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देने का महत्वपूर्ण काम भी करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनुसन्धान संस्थाओं को विश्वविद्यालयों के घनिष्ठ सम्पर्क में लाना होगा।

२५. चिकित्सा सम्बन्धी अनुसन्धान को प्रोत्साहन देने के लिए सबसे पहली आवश्यकता इस बात की है कि इस कार्य के लिए योग्य अनुसन्धानकर्ता पर्याप्त संख्या में मिल सकें। चिकित्सा विज्ञान में शोध करने योग्य कर्मचारी मुख्य रूप से चिकित्सा कालेजों से ही मिल सकते हैं, इसलिए इन संस्थाओं में अनुसन्धान का वातावरण तैयार करने की आवश्यकता है। अध्यापन के साथ शोध न होने से अध्यापन का स्तर उठेगा और चिकित्सा विज्ञान के विद्यार्थियों में शोध की प्रवृत्ति बढ़ेगी और उनमें से बहुत-से शोध को व्यवसाय के रूप में ग्रहण करने के लिए प्रवृत्त होंगे। १९४६ में स्वास्थ्य सर्वेक्षण और विकास समिति ने इस बात की ओर ध्यान आकृष्ट किया था कि 'चिकित्सा कालेजों के विभिन्न विभागों में संगठित चिकित्सा अनुसन्धान का प्रायः पूर्ण अभाव ही है।' इस असन्तोषजनक स्थिति के अनेक कारण थे, जैसे अध्यापन का अत्यधिक भार, प्रशिक्षित कर्मचारी मण्डल की कमी, चिकित्सा कालेजों के विभिन्न विभागों में परस्पर संगठित कार्य प्रणाली पद्धति का अभाव और अनुपयुक्त साधन। पिछले कुछ वर्षों में भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान परिषद ने चिकित्सा कालेजों में शोध कार्य को पर्याप्त सहारा दिया है। परिषद की दृष्टि में अब निम्नलिखित कार्यक्रम है :—

(क) अनुसन्धान कार्य में लगे व्यक्तियों की अधिक संख्या में अनुदान देना,

(ख) चिकित्सा कालेजों के विभिन्न विभागों में सहयोगी अनुसन्धान कार्य के प्रोत्साहन के लिए विशिष्ट निधियों की स्थापना करना,

(ग) चिकित्सा कालेज के कुछ विभागों, विशेषतया क्लिनिक से पहले के विभागों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करना कि वे चिकित्सा विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के लिए एक समन्वित कार्यक्रम बनाकर उसमें भाग लें,

(घ) जब उपर्युक्त कर्मचारी मण्डल उपलब्ध हो, तब चिकित्सा विज्ञान के विशिष्ट क्षेत्रों में शोध के सतत कार्यक्रम के लिए लगभग अर्धस्थिर आधार पर विशिष्ट अनुसन्धान इकाइयों की स्थापना करना, और

(ङ) हर संस्था में विशेष निधियां स्थापित करके जूनियर कर्मचारियों को प्रारम्भिक रूप में अपने विचारों को क्रिया रूप देने का अवसर देना।

२६. चिकित्सा कालेजों में अनुसन्धान का वातावरण तैयार करने के बाद नवयुवक और प्रतिभा सम्पन्न स्नातकों को अनुसन्धान की रीतियों के प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करना है। चिकित्सा कालेजों के गैर-क्लिनिकल और क्लिनिकल विभागों के जूनियर अध्यापकों को अध्यापन और अनुसन्धान की रीतियों का प्रशिक्षण देने का विचार है। चिकित्सा प्रशासन में एक प्रमुख समस्या ऐसे युवकों और प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों को इस ओर आकृष्ट करने और इस बात के लिए तैयार करने की है कि वे अनुसन्धान को अपनी जीविका का साधन बनाने को तैयार हों। अतएव भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान परिषद ने अनुसन्धान संवर्ग बनाने के प्रस्ताव तैयार किए हैं।

२७. इससे पूर्व कि किसी एक विषय पर एक नया संस्थान खोलने का विचार किया जाए, विश्वविद्यालय के विभागों में योग्यतम कर्मचारियों के माध्यम द्वारा अनुसन्धान इकाइयों को सहायता देकर देश में उस विषय के प्रति विशाल आधार बनाना आवश्यक है। भारतीय औषधि अनुसन्धान परिषद ने विभिन्न संस्थानों में कुछ विशिष्ट क्षेत्रों के लिए ९ अनुसन्धान इकाइयां कायम की हैं। भूतकाल में कवक विज्ञान (माइकोलौजी), परजीवि (रोग) विज्ञान (पैरासाइटोलौजी), पाएडियाट्रिक आदि रोगों के अध्ययन पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है, अतः द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इनके लिए नई अनुसन्धान इकाइयों का विकास किया जाएगा। कुछ क्षेत्रों में नए संस्थानों की भी आवश्यकता है। इसी के अनुसार जीव विज्ञान के लिए एक संस्थान स्थापित करने और व्यावसायिक स्वास्थ्य के लिए एक अनुसन्धान केन्द्र खोलने की भी व्यवस्था की गई है तथा वर्तमान विरस अनुसन्धान केन्द्र को एक पूर्ण विकसित विरस अनुसन्धान संस्थान का रूप भी दिया जाना है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में कतिपय विशिष्ट योजनाओं के क्रियान्वय की भी व्यवस्था की गई है। इनमें आहार पोषण, औषधि अनुसन्धान, औद्योगिक स्वास्थ्य, माता और शिशु स्वास्थ्य, क्षय और पास-पड़ोस के वातावरण की सफाई के क्षेत्र आ जाते हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में डाक्टरी अनुसन्धान कार्यक्रम के लिए ४ करोड़ रुपए से भी अधिक की व्यवस्था की गई है।

२८. स्वास्थ्य प्रबन्ध में, क्लिनिकल तथा जन स्वास्थ्य प्रयोगशालाओं की सुविधाएं देने का महत्व बढ़ता जा रहा है। जहां कहीं इनकी आवश्यकता है, वहां इनकी स्थापना के लिए तथा राज्यों में वर्तमान प्रयोगशालाओं को हर दृष्टि से विकसित करने के लिए लगभग २·५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। ये प्रयोगशालाएं रोगों की रोकथाम के साथ-साथ खाद्यान्नों और औषधियों में होने वाली मिलावट को भी रोकेंगी।

२९. स्वास्थ्य के क्षेत्र में इस समय योग्यता प्राप्त अंक-संकलन विशेषज्ञों की बड़ी भारी कमी है। कुछ डाक्टरी संस्थाओं में स्वास्थ्य अंक-संकलन सम्बन्धी लघु पाठ्यक्रम की व्यवस्था रखी गई है। सिफारिश की गई है कि पढ़ाने वाली सभी डाक्टरी संस्थाओं में इस तरह का पाठ्यक्रम रखा जाना चाहिए। अंक-संकलन में उच्च प्रशिक्षित लोगों की बहुत अधिक आवश्यकता है, विशेषकर स्वास्थ्य अंक-संकलन में। इस बारे में आवश्यक व्यवस्था की जा रही है।

औषधि की देशी प्रणाली

३०. देशी औषधियों की प्रणाली के विकास के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना में ३.७५ लाख रुपए की व्यवस्था की गई थी, जबकि दूसरी पंचवर्षीय योजना में इसके लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा १ करोड़ और राज्य सरकारों द्वारा ५.५ करोड़ रुपया खर्च किया जाएगा। जामनगर स्थित स्नातकोत्तर संस्था, अनुसन्धान केन्द्र के विकास, पांच आयुर्वेदिक कालेजों के उद्घाटन, १३ चालू कालेजों के विस्तार, १,१०० आयुर्वेदिक औषधालयों, जड़ी-बूटी संग्रहालयों और दवाखानों को प्रारम्भ करने तथा २५५ चालू औषधालयों को सुधारने की भी इस योजना में व्यवस्था की गई है। आशा है यह योजना आयुर्वेदिक संस्थाओं की क्षमता बढ़ा देगी जिससे वे अनुसन्धान का कार्य कर सकें।

संचारी रोगों की रोकथाम

३१. प्रथम पंचवर्षीय योजना में संचारी रोगों की रोकथाम की दिशा में कुछ प्रगति हुई थी। इन रोगों में मलेरिया, फाइलेरियासिस, क्षय, कुष्ठ और गुप्तांग सम्बन्धी रोग मुख्य हैं। इन सभी रोगों से आक्रान्त स्थानों में इनकी रोकथाम के लिए राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम बनाया जाना आवश्यक है। इन रोगों की रोकथाम के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना में २२ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई थी, जबकि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इनकी रोकथाम के लिए ५८ करोड़ रुपए की व्यवस्था रखी गई है।

३२. **मलेरिया नियंत्रण**—पहली पंचवर्षीय योजना में स्वास्थ्य कार्यक्रमों में मलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम प्रमुख था। मलेरिया-ग्रस्त क्षेत्रों में अब तक स्थापित १६२ इकाइयों में से ८८ इकाइयां तीन वर्षों से अपना कार्य कर रही हैं। इन इकाइयों द्वारा जिन मलेरिया-ग्रस्त क्षेत्रों में रोकथाम की गई थी उनमें ६ करोड़ व्यक्ति मलेरिया से पड़ित थे, परन्तु पहले वर्ष की रोक-थाम के बाद ही मलेरिया-ग्रस्त रोगियों की संख्या में २ करोड़ व्यक्तियों की कमी हो गई। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में मलेरिया निरोधक कार्यक्रम के जो प्रस्ताव हैं, उनकी मूलभूत बातें ये हैं :—

(१) मूल सक्रिय दौर की तीन वर्ष की अवधि को बढ़ाकर पांच वर्ष कर देना चाहिए।

(२) देश में मलेरिया से पीड़ित होने वाली कुल अनुमानित जनसंख्या को लाभ पहुंचाने के लिए इकाइयों की संख्या बढ़ाकर २०० कर दी जानी चाहिए।

(३) पांच वर्ष बीतने पर जब कि प्रत्येक इकाई मलेरिया नियंत्रण के अनुरक्षण दौर में पहुंच जाएगी, कीटाणुनाशक पदार्थों की आवश्यकता काफी घट जानी चाहिए।

सामान्य अनुभव यह रहा है कि सक्रिय कार्यक्रम के पूर्णतः सफल होने में तीन वर्ष का समय लगता है। इसके बाद दो वर्ष तक और निरोधात्मक कार्य इसी प्रकार चलना चाहिए।

३३. अब सवाल यह उठता है कि मूल सक्रिय कार्यक्रम को कहां पर खत्म माना जाए, अनुरक्षण दौर कहां आरम्भ हो और बाद वाले समय में कार्रवाइयां किस स्तर पर की जाएं। सक्रिय कार्यक्रम की समाप्ति के मापदंड ये माने गए हैं :—

(१) स्थानीय मलेरिया प्रसार क्षेत्रों में प्राकृतिक संक्रमण का अभाव;

(२) बच्चों का संक्रमण से छुटकारा, और

(३) स्थानीय मलेरिया पीड़ित लोगों का अभाव।

जिस हद तक ऊपर दी गई बातें पूरी होंगी, उसी हद तक यह स्थिर किया जा सकेगा मलेरिया नियंत्रण के अनुरक्षण दौर में क्या कार्रवाइयां की जाएंगी। यदि उपरोक्त बातें पूरी हुई तो तीन सम्भावनाएं हो सकती हैं :—

(१) छिड़काव को एकदम बन्द कर देना,

(२) कीटनाशक द्रव्य का उपयोग यदि उतनी ही बार करना हो तो उसकी मात्रा घटा देना, अथवा

(३) यदि मात्रा उतनी ही रखनी हो तो उपयोग उतनी बार न करना।

उपरोक्त बातों में से एक या अधिक को काफी बड़े इलाके में परिणाम जानने के लिए लागू किया जा सकता है और यदि कोई दुष्परिणाम दिखाई न दें तो छिड़काव रोक दिया जाना चाहिए।

३४. इस देश में अभी तक इस बात का कोई संकेत नहीं मिला कि एनोफिलीन्स जाति के मच्छर डी० डी० टी० का अवरोध कर पाते हों परन्तु क्यूलिसीन्स जाति के मच्छरों पर उसका कम घातक प्रभाव होने की कुछ खबरें मिली हैं। तथापि अन्य देशों के अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कीटनाशक द्रव्यों के प्रति एनोफिलीन्स और क्यूलिसीन्स दोनों जातियों के मच्छरों का अवरोध कुछ बढ़ गया है, लेकिन देखा यह गया है कि मलेरिया नियंत्रण में जितना समय लगता है उससे अधिक समय अवरोध के विकास में लगता है। इसलिए नियंत्रण के पर्याप्त उपाय समूचे राष्ट्र में लागू करने चाहिएं और उन्हें जारी रखना चाहिए ताकि एनोफिलीन्स मच्छरों में अवरोध शक्ति उत्पन्न न होने पाए। मच्छरों पर कीटनाशक द्रव्यों के घातक प्रभाव में कमी का सक्रिय निरीक्षण देश भर की प्रयोगशालाओं और मलेरिया पीड़ित क्षेत्रों में किया जा रहा है। सक्रिय दौर समाप्त करके अनुरक्षण दौर आरम्भ करते समय स्थिति का मूल्यांकन ही आवश्यक नहीं अपितु निरन्तर सतर्कता बनाए रखना भी आवश्यक है और यह सतर्कता समूचे अनुरक्षण दौर में जारी रहनी चाहिए। प्रत्येक मलेरिया अवरोध इकाई के सदस्यों द्वारा नियमित छान-बीन के अलावा यह भी जरूरी समझा जा रहा है कि समय-समय पर कुछ विशिष्ट योग्य कर्मचारी दल उपर्युक्त कार्यों की परीक्षणात्मक जांच करते रहें। मूल्यांकन के परिणाम का आधार बाकायदा एकत्र किए हुए मलेरिया विशेषज्ञों द्वारा स्वीकृत मलेरिया विस्तार सम्बन्धी सूचना ही होनी चाहिए। इनका संग्रह और अध्ययन इकाई और राज्य स्तर पर होना चाहिए और समूचे देश के लिए यह कार्य मलेरिया संस्थान में सम्पन्न होना चाहिए। योजना में मलेरिया नियंत्रण के लिए २८ करोड़ रुपए की व्यवस्था है।

३५. **फाइलेरिया नियन्त्रण**—उड़ीसा राज्य में फाइलेरियासिस के परीक्षणात्मक अवरोध के लिए (क) औषधि प्रयोग; (ख) मिश्रणों द्वारा मच्छरों का निवारण, और (ग) डिंभावस्था में ही कीड़ों के निवारण के उपाय चार वर्ष तक किए गए थे। इन उपायों से जो भी परिणाम निकले हैं उनसे यह स्पष्ट है कि कोई भी एक उपाय इस रोग के पूर्णतः अवरोध में सफलता प्राप्त नहीं कर सका, यद्यपि कीड़ों को डिंभावस्था में ही नष्ट करने के उपाय से दूसरे वर्ष के अन्त में रोग के फैलाव में कमी दिखाई देने लगी, जब कि मिश्रण द्वारा मच्छरों के उन्मूलन की प्रक्रिया से रोग के फैलाव में कमी कहीं बाद को जाकर दृष्टिगोचर हुई। औषधि द्वारा रोग के उपचार में प्रथम दो वर्षों में रोग के फैलाव की मात्रा में पर्याप्त कमी आ गई, किन्तु इसके बाद मात्रा में वृद्धि हो गई। इसलिए आशा है कि इन कार्यक्रमों को मिला देने से थोड़े ही दिनों

में काफी अच्छा परिणाम निकलेगा। द्वितीय योजना में इस कार्यक्रम के लिए निम्न योजनाएं रखी गई हैं :—

(क) सभी क्षेत्रों में हेट्राजन का उपचार,

(ख) शहरी क्षेत्रों में मच्छरों की वृद्धि के अवरोध के लिए मिश्रण का छिड़काव तथा इसी तरह के तीन छिड़काव देहाती क्षेत्रों में, और

(ग) शहरी क्षेत्रों में डिमावस्था में ही कीड़ों को रोकने का उपाय।

योजना इस आधार पर बनाई गई है कि देश के ढाई करोड़ व्यक्ति इस रोग के खतरे से बच जाएं। इस रोग के खिलाफ जो सक्रिय आन्दोलन किया जाएगा उसके लिए देश के विभिन्न भागों में जो सर्वेक्षण इकाइयां काम कर रही हैं वे निश्चय ही अधिक पक्की सूचना देंगी। योजना में इस बात की भी व्यवस्था है कि मलेरिया तथा फाइलेरियासिस बीमारियां जिन देहातों में अधिकता से फैली हुई हैं, वहां दोहरे प्रयत्न न किए जाएं। भारत में डब्ल्यू बैनक्राफ्टी साधारणतः अधिक फैलता है और इसका ज्यादातर जोर शहरी इलाकों में होता है। शहरी क्षेत्रों में जहां फाइलेरियासिस स्वास्थ्य की समस्या बना हुआ है, वहां चूंकि सी० फैटिगन्स प्रसारक है और इस प्रसारक को स्थायी तौर से रोकने का एकमात्र उपाय भूमिगत नालियों की व्यवस्था करना होगा, इसलिए इन क्षेत्रों में भूमिगत नालियों की व्यवस्था को प्राथमिकता देनी चाहिए। यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि ऐसे क्षेत्रों में पानी की सप्लाई की व्यवस्था के साथ-साथ भूमिगत नालियों की व्यवस्था भी की जानी चाहिए। प्रथम पंचवर्षीय योजना में स्थापित १३ निरोध इकाइयों को जारी रखने के लिए और ६५ नई निरोध इकाइयां कायम करने के लिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ६ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

३६. **क्षय रोग**—क्षय रोग नियंत्रण का कार्यक्रम निम्नलिखित प्राथमिकताओं के आधार पर प्रथम पंचवर्षीय योजना में आरम्भ किया गया था। इस कार्यक्रम में सर्वाधिक महत्व क्षय निवारण का है।

(१) बी० सी० जी० के टीके,

(२) उपचारालय की दवा देने की और रोगियों को रखने की सेवाएं,

(३) प्रशिक्षण और प्रदर्शन केन्द्र,

(४) रोगियों के पृथक्करण के लिए शैयाओं और इलाज की व्यवस्था,

(५) उपचार के बाद रक्षा और पुनर्वास।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में क्षय निरोध कार्यक्रम को राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम के आधार पर विस्तृत करने की व्यवस्था की गई है।

३७. द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में सर्वसाधारण में बी० सी० जी० के टीके लगाने के आन्दोलन को कार्यक्रम के अनुसार पूरा करने के लिए राज्यों को अपनी निश्चित योजनाएं बनाने की सूचना दे दी गई है, जिसमें जनसंख्या के आकार का विचार, इस कार्य के लिए आवश्यक दलों की संख्या और इसमें होने वाला खर्च भी आ जाता है। राज्यों में बी० सी० जी० के टीके लगाने का कार्य जन स्वास्थ्य कार्यक्रम के अन्तर्गत किया जाता है, इसलिए सार्वजनिक

आन्दोलन के समाप्त होने पर भी बी० सी० जी० के कार्य में लगे हुए कुछ व्यक्तियों को राज्य सरकारों के जन स्वास्थ्य विभाग में स्थायी रूप से रख लेना चाहिए। प्रथम पंचवर्षीय योजना की समाप्ति पर ७ करोड़ व्यक्तियों का क्षय-परीक्षण हो जाएगा और लगभग २ करोड़ ४५ लाख व्यक्तियों को बी० सी० जी० के टीके लग जाएंगे। दूसरी पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य आन्दोलन की पहली पारी में २५ वर्ष से कम आयु के सभी संदेहास्पद लोगों की जांच पूरी कर लेना है।

३८. नई रोगाणु नाशक (एन्टीबायटिक्स) औषधि से क्षय के रोगियों का इलाज घर में ही होना संभव हो गया है, इससे उपचारालयों का महत्व भी बढ़ गया है। साधारणतः उपचारालय नैदानिक परामर्शदाता और निरोध इकाइयों के रूप में कार्य करने वाले समझे जाते हैं और वे कुछ विशेष इलाज की व्यवस्था के भी योग्य होते हैं। उपचारालय तब तक अपना उद्देश्य सफलतापूर्वक पूरा नहीं कर सकते, जब तक उनकी संख्या पर्याप्त न हो और उन में निश्चित न्यूनतम क्षमता न हो। अधिकतर कार्यरत उपचारालयों की क्षमता बहुत कम है; इनमें से कुछ ही निरोध कार्य या वास्तविक स्थानीय सेवाओं को पूरा करने के लिए साधन सम्पन्न अथवा पूरे कर्मचारियों से युक्त हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना में १६६ उपचारालय खोले गए थे, जबकि द्वितीय योजना में २०० उपचारालयों की स्थापना और विस्तार की व्यवस्था की गई है। उद्देश्य यह है कि हर जिले के मुख्यालय में कम से कम एक उपचारालय हो। इन उपचारालयों को सफलतापूर्वक चलाने के लिए यह आवश्यक है कि इनमें क्षेत्रों की संख्या और सेवा प्राप्त करने वाली जनता की संख्या के अनुपात से पूरे समय काम करने वाले डाक्टर रखे जाने चाहिएं, जिनके साथ स्वास्थ्य निरीक्षक तथा अन्य कर्मचारी भी हों। जहां तक सम्भव हो इन उपचारालयों में इन डाक्टरों की व्यवस्था में या सीधे उनसे सम्बन्धित अथवा समीपस्थ किसी संस्था में रोगियों के पृथक्करण और इलाज के बिस्तरों की भी व्यवस्था हो जहां ऐसे बीमारों को रखा जाए जिनका इलाज भीड़-भाड़ या अस्वास्थ्यकर अवस्थाओं के कारण घरों में नहीं किया जा सकता।

३९. ऐसे अनेक आदर्श क्षय केन्द्रों की स्थापना करना बहुत ही महत्वपूर्ण है, जो शिक्षा और प्रदर्शन के लिए उपयोगी होंगे, क्योंकि इस समय क्षय निरोध सम्बन्धी सेवाओं का नियंत्रण करने वाले व्यक्तियों का अत्यन्त अभाव है। इन केन्द्रों को मेडिकल कालेजों से सम्बन्धित करना और भी अधिक अच्छा होगा और निम्न चार विभागों से इन्हें संपन्न कर देना चाहिए: जनसाधारण के लिए एक रोगव्यापिकीय (एपीडेमियोलौजिकल) क्रिया को बताने व एक्सरे सर्वेक्षण और बी० सी० जी के टीके लगाने वाला विभाग, एक नैदानिक और इलाज उपचारालय विभाग, एक बैक्टीरियोलौजिकल विभाग और जन स्वास्थ्य परिचारिका के निदेशन में चलने वाला एक स्थानीय सेवा विभाग। इन सभी विभागों का कार्य समन्वयात्मक होना चाहिए और इन सबको क्षय निरोध कार्यों पर अधिक बल देना चाहिए। इस समय ऐसे तीन केन्द्र नई दिल्ली, पटना और त्रिवेन्द्रम में हैं, और निकट भविष्य में शीघ्र ही मद्रास तथा नागपुर में दो और खोले जाने वाले हैं। ऐसे ही अनेक केन्द्रों के खोले जाने की आवश्यकता है। इसलिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में ऐसे दस केन्द्रों के खोले जाने की व्यवस्था की गई है।

४०. संक्रामक रोगियों को अलग रखने के लिए सादगी पूर्ण और सस्ती बनी हुई संस्थाओं की स्थापना पर जोर देना होगा, विशेषतः ऐसे रोगियों के बारे में जिनको घर में अलग रखना या जिनका इलाज करना सम्भव नहीं है। ऐसी संस्थाएं बनाने में उन स्थानों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए जहां घनी आबादी में क्षय फैल रहा हो। जिन क्षय रोगियों को शल्य चिकित्सा की

आवश्यकता हो, उन्हें ऐसी संस्थाओं में भेज देना चाहिए जहां सभी तरह की सुविधाएं हों। द्वितीय योजनावधि में लगभग ४,००० रोगी शैयाओं की वृद्धि होगी।

४१. क्षय पीड़ित लोगों के उपचार के बाद सेवा के लिए बस्ती बसाना और उनके पुनर्वास केन्द्र खोलने के महत्व पर बल देने की आवश्यकता नहीं है। मदनापल्ली में ऐसी ही एक बस्ती है जो गत ३० वर्षों से कार्य कर रही है और जिसमें क्षय के ४० पूर्व रोगी कर्मचारियों के रूप में लगे हुए हैं। पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि से पूर्व ऐसी सुविधाएं शायद ही किसी दूसरे स्थान पर हों। कुछ केन्द्र प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय में स्थापित किए गए। द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में ऐसे लगभग दस केन्द्रों की स्थापना की व्यवस्था है जिनमें क्षय से मुक्ति पाए हुए लोगों को ऐसी उपयुक्त दस्तकारियां सिखाने की सुविधाएं दी जाएंगी जिन्हें वे अपने घरों में कुटीर उद्योगों के रूप में चला सकेंगे।

४२. द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में क्षय निरोध कार्यक्रम के लिए कुल १४ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

४३. **कुष्ठ**—१९५३ में भारत सरकार द्वारा जो कुष्ठ नियंत्रण समिति नियुक्त की गई थी, उसकी रिपोर्ट के अनुसार १५ लाख व्यक्ति से कम लोग कुष्ठ रोग से पीड़ित नहीं होंगे। इस रोग का प्रकोप प्रदेश-प्रदेश में विभिन्न है और २ से ४ प्रतिशत के बीच है, लेकिन किसी-किसी जिले में १० प्रतिशत तक है और कुछ गांवों में इसका प्रतिशत १५ से २० तक पहुंच गया है। इस रोग के उच्चतम प्रकोप के इलाके में सारा पूर्वी किनारा और दक्षिण प्रायद्वीप के साथ पश्चिम बंगाल, दक्षिण बिहार, उड़ीसा, मद्रास, तिरुवांकुर-कोचीन, हैदराबाद और मध्य प्रदेश भी आ जाता है। कुष्ठ रोग की रोकथाम में बुनियादी कदम बच्चों में संक्रमण को रोकना, इसका इलाज करना और इसे बढ़ने न देना है। इस समय कुष्ठ रोगियों के इलाज के लिए उपचारालयों, औषधालयों और कुष्ठालयों की संख्या अपर्याप्त है। इस क्षेत्र में कार्य करने वाली जितनी विभिन्न एजेंसियां हैं, उनमें भी समन्वय की कमी है। जहां तक संभव हो घरों और गांवों में इस समय इलाज की सहूलियत देने की समस्या है। कुष्ठ उन्मूलन के राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम के लिए आवाज उठाने की भी आवश्यकता है।

४४. प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस रोग के प्रतिरोध के लिए दो मुख्य कदम उठाए गए थे। पहला मद्रास के चिंगलपेट में कुष्ठ कर्मचारियों के प्रशिक्षण और कुष्ठ से सम्बन्धित समस्याओं के अनुसन्धान के लिए एक केन्द्रीय कुष्ठ प्रशिक्षण और अनुसन्धान संस्था खोलना था। दूसरा कदम कुष्ठ नियंत्रण कार्यक्रम को प्रारम्भ करना था। कुष्ठ रोगियों को विशेष कुष्ठघरों में अलग करने की क्रिया की, जो स्थानिक क्षेत्रों में भूतकाल में रोकथाम के प्रमुख उपाय के तौर पर की गई थी व्यर्थता अब प्रमाणित हो चुकी है। सल्फोन थेरेपी (सल्फा द्वारा रोग की आंशिक चिकित्सा) के अनुसंधान से कुष्ठ रोग के निरोध के लिए एक नया उपाय मिल गया है। इस योजना का उद्देश्य यह है कि इस व्याधि से पीड़ित समूचे क्षेत्र में सभी कुष्ठ रोगियों का इलाज किया जाए और बाद में भी उन पर दृष्टि रक्खी जाए। इसके अतिरिक्त इस रोग से पीड़ित लोगों का पता लगाया जाए और रोकथाम तथा शिक्षा संबंधी कार्य किए जाएं। उपचार सम्बन्धी सुधार के अलावा सल्फोन थेरेपी रोगियों में संक्रामकता का क्रमिक ह्रास लाती है। सामूहिक स्तर पर एक ही साथ सल्फोन थेरेपी का इलाज देश के सारे कुष्ठ पीड़ित क्षेत्रों में करना सम्भव नहीं है, इसलिए प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में दो तरह की निरोध

इकाइयों का सूत्रपात किया गया था, जिनके नाम हैं, अध्ययन और इलाज केन्द्र जिनमें अनुसन्धान तथा मूल्यांकन किया जाएगा और सहायक केन्द्र जिनमें सर्वेक्षण तथा इलाज होगा। पहली पंचवर्षीय योजना में चार इलाज और अध्ययन केन्द्र तथा ३६ सहायक केन्द्र अनुमोदित किए गए थे। इन सभी कार्यरत इलाज और अध्ययन केन्द्रों तथा सहायक केन्द्रों को जारी रखने के साथ-साथ लगभग ८८ नए सहायक केन्द्र खोलने की भी अब व्यवस्था की गई है। विकट कुष्ठ रोगियों के पृथक्करण के लिए शैयाओं की स्थापना करने, कुष्ठ की विरूपताओं को दूर करने और पुनर्वास केन्द्रों की स्थापना करने की भी व्यवस्था की गई है। द्वितीय योजना में कुष्ठ निरोध कार्यक्रम के लिए लगभग ४ करोड़ रुपया रखा गया है।

४५. गुप्त यौन रोग—भूतकाल में देश भर में गुप्त रोगों की समस्या पर, विशेषतः सिफलिस पर, जनता की मांग होने पर भी न तो शासकों ने और न चिकित्सकों ने ही ध्यान दिया, यद्यपि उस समय इसके त्वरित निदान और इलाज के लिए प्रभावशाली औजार मौजूद थे। अब सिफलिस के त्वरित इलाज के लिए उपाय हैं और अन्य प्रमुख गुप्त रोगों को भी सफलतापूर्वक दूर किया जा सकता है, यदि गुप्त रोगों की रोकथाम के कार्यक्रम में जनता को कुछ जन स्वास्थ्य की टेकनीक का उपयोग बताया जाए। गुप्त रोगों पर शैक्षणिक, रोग व्यापिकीय और चिकित्सात्मक, इन तीन मोर्चों से आक्रमण करना है। जनता में इस रोग के फैलने के सम्बन्ध में कोई निश्चित आंकड़े नहीं हैं। जो सूचना उपलब्ध है वह मद्रास और कलकत्ता आदि कुछ निश्चित स्थानों पर किए गए सर्वेक्षणों से प्राप्त हुई है। मातृ तथा शिशु स्वास्थ्य केन्द्रों में गर्भिणी माताओं की लासिकी स्क्रीनिंग से यह पता चलता है कि वयस्क जनसंख्या में सिफलिस की बीमारी का अनुपात ५ से ८ प्रतिशत तक है। देहातों की अपेक्षा इसका प्रकोप नगरों में अधिक है। तो भी इसके इलाज केन्द्रों की कार्य रीति निर्धारण करनी है, जो पर्याप्त रोगियों को आकर्षित करेगी। गुप्त रोगों के सफलतापूर्वक निरोध कार्यक्रम में ऐसे केन्द्रों ने कहां तक सहायता दी, इसका कोई संकेत नहीं है। इसके लिए एक उपयुक्त कार्यक्रम तैयार करना चाहिए, जिसमें रोग व्यापिकीय जांच, रोगियों तथा उनके आश्रितों की शिक्षा और बीमारों को खोजने का कार्य भी सम्मिलित हो। प्रत्येक गर्भिणी स्त्री की लासिकीय स्क्रीनिंग के पश्चात यदि कहीं पर सिफलिस के चिह्न पाए जाएं तो उसके निरोधात्मक इलाज द्वारा वंशानुगत सिफलिस की बीमारी को रोकने पर पूरा बल दिया जाना चाहिए।

४६. देहाती क्षेत्रों में बसावट दूर-दूर होने और अपर्याप्त स्वास्थ्य कर्मचारियों के कारण गुप्त रोगों के संतोषजनक निरोध आन्दोलन के संगठन में अधिक कठिनाई होती है। यह सिफारिश की गई है कि स्वास्थ्य इकाइयों को अपने कार्यालयों में गुप्त रोग निरोध कार्यक्रम शुरू कर देना चाहिए और स्वास्थ्य इकाइयों के कार्यक्षेत्र में जब अधिक धनराशि और प्रशिक्षित कार्यकर्ता सुलभ हो जाएं, तब निरोध कार्यक्रम को निश्चित अवधि में और अधिक बढ़ा दिया जाए। हिमालय की तराई में देहाती क्षेत्र का एक ऐसा घेरा है जिसमें गुप्त रोग विशेषतः सिफलिस, अधिकता से फैलता है। इसलिए इन क्षेत्रों में गुप्त रोगों के शीघ्र उन्मूलन के लिए भरपूर प्रयत्न किए जाने चाहिएं।

जल और स्वच्छता प्रबन्ध

४७. जल से होने वाली बीमारियों तथा इसी तरह की अन्य बीमारियों से समाज में कितनी ही मौतें होती हैं और अस्वस्थता रहती है। जल प्राप्ति के समुचित प्रबन्ध और मलोत्सर्ग

करने की स्वच्छतापूर्ण विधि द्वारा इस पर नियंत्रण किया जा सकता है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत राज्यों द्वारा नगरों तथा देहातों में पानी की सप्लाई और स्वच्छता प्रबन्ध के लिए लगभग २४ करोड़ रुपया रखा गया था। १९५४ के अन्त में केन्द्रीय सरकार ने पानी की सप्लाई और स्वच्छता प्रबन्ध का एक कार्यक्रम बनाया था, जिसके अनुसार १२ करोड़ रुपया कर्ज के रूप में नगरों में पानी की सप्लाई के लिए और ६ करोड़ रुपया देहातों में पानी की सप्लाई के लिए सहायता के रूप में देने की व्यवस्था की गई थी। द्वितीय योजना में नगरों में पानी की सप्लाई और स्वच्छता प्रबन्ध के लिए ५३ करोड़ रुपए की अस्थायी व्यवस्था की गई है, और देहातों में पानी की सप्लाई के लिए २८ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। एक विशेष व्यवस्था १० करोड़ रुपए की उन नगरों के लिए की गई है जहां नगर निगम विद्यमान हैं।

४८. राज्यों में सामग्री की कमी, परिवहन की अपर्याप्त सुविधा और जन स्वास्थ्य इंजीनियरी के ऐसे कर्मचारियों के अभाव में जो योजनाओं के कार्यक्रम बनाकर उन्हें पूरा कर सकते, प्रथम पंचवर्षीय योजना में उपरोक्त कामों की संतोषजनक प्रगति नहीं हो सकी। इसके देहाती कार्य विभिन्न एजेंसियों द्वारा क्रियान्वित हो चुके हैं किन्तु वे निर्माण योजना कार्य मात्र होकर रह गए हैं और स्वच्छता की सुविधाओं की आवश्यकता और उनके उपयोग के विषय में गांव वालों को किसी प्रकार की शिक्षा नहीं मिल पाई। तथापि गांवों की बहुत बड़ी संख्या ने अपने लिए जल की समस्या को स्थानीय विकास कार्यों और राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रमों द्वारा सुधार लिया है।

४९. पानी की सप्लाई के कार्यक्रमों की प्रगति अधिकतर पाइप, पम्प और अन्य साधनों की प्राप्ति पर ही निर्भर है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के आखिरी वर्ष में शहरों में पानी की सप्लाई के लिए जितने कच्चे लोहे तथा जस्ता-मिश्रित लोहे की आवश्यकता थी, उसकी संख्या लगभग १,००,००० टन थी जो द्वितीय योजना में बढ़कर लगभग १,२५,००० टन प्रतिवर्ष हो जाएगी। इसका वर्तमान उत्पादन ६०,००० टन के आसपास है, जिसमें से ५०,००० टन पानी की सप्लाई वाले नलों के लिए है।

५०. पहली योजना की अवधि में केन्द्र तथा राज्यों में जन स्वास्थ्य इंजीनियरिंग संगठनों की स्थापना की गई थी, परन्तु इनमें से अधिकांश में कर्मचारी पर्याप्त नहीं हैं। जन स्वास्थ्य इंजीनियरिंग संगठनों की सभी राज्यों में आवश्यकता है और इनमें जन स्वास्थ्य सम्बन्धी बातों में विशिष्ट प्रशिक्षित कर्मचारी होने चाहिएं। जन स्वास्थ्य इंजीनियर, ओवरसीयर, सैनेटरी इंस्पैक्टर आदि के लिए प्रशिक्षण सुविधाओं की पूरी तरह वृद्धि कर देनी है। इसीलिए इस हेतु दूसरी योजना में ५० लाख रुपया रखा गया है।

आहार पोषण

५१. स्वास्थ्य की रक्षा के लिए आहार पोषण अत्यन्त आवश्यक है। पहली योजना में अनाजों के उत्पादन में सुधार पर जोर दिया गया था। अब दूध, अंडा, मछली, मांस, फल और हरी साग-भाजी जैसे पोषक भोज्य पदार्थों का उत्पादन बढ़ाने पर अधिक बल दिया जाएगा। चूंकि प्रत्येक व्यक्ति को वांछित आहार पोषण देना सम्भव नहीं है, इसलिए आहार पोषण के सुधार में समाज के निर्बल अंगों, यथा गर्भिणी स्त्रियों और शिशुओं वाली माताओं, शिशुओं, लड़खड़ाते बच्चों, स्कूल न जाने योग्य छोटे बच्चों और स्कूल में जाने वाले बच्चों आदि को ही

प्राथमिकता दी जाएगी। यह सर्वविदित है कि छोटी आयु में आहार पोषण के अभाव में या अपर्याप्त आहार से जो शारीरिक वृद्धि रुक जाती है, वह बड़ी आयु में अधिक आहार पोषण देने के पश्चात भी पूर्णतः अच्छी नहीं बनाई जा सकती। आहार पोषण के और विस्तार के लिए दूध का पाउडर और खाद्य-पूरक पदार्थ, जैसे कि मछली का तेल तथा पोषक तत्व भी वितरण के लिए मिल सकते हैं, इसलिए इनकी ओर भी विशेष ध्यान देना चाहिए। स्कूल जाने वाले बच्चों को दोपहर का भोजन देने के लिए भी प्रयत्न किए जाने चाहिएं। योजना में आहार पोषण के अनुसन्धान कार्य के लिए योजनाओं की व्यवस्था भी की गई है, जिनमें राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास क्षेत्रों में आहार पोषण सम्बन्धी सर्वेक्षण, चिकित्सालयों में आहार के लिए रसोईघर, आहार पोषण सम्बन्धी प्रयोगशालाओं तथा संग्रहालयों की स्थापना सम्मिलित है। भारतीय चिकित्सा गवेषणा परिषद द्वारा कुछ महत्वपूर्ण आहार पोषण सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन शुरू कर दिया गया है। वे ये हैं :—

(१) प्रोटीन के अपर्याप्त पोषण का सर्वेक्षण और निरोधात्मक उपाय,

(२) बच्चों का शारीरिक विकास और उन्नति,

(३) अपर्याप्त पोषक आहार और खुराक से उत्पन्न होने वाली गल गण्ड (गोयटर), त्रिपुट रोग (लेथिरिज्म), फ्लूओरोसिस आदि बीमारियों का निरोध, और

(४) आहार पोषण का अनुसन्धान।

मातृ और शिशु स्वास्थ्य

५२. मातृ और शिशु स्वास्थ्य के लगभग २,१०० केन्द्रों की स्थापना के लिए राज्यों को लगभग तीन करोड़ रुपया दिया गया है। इन केन्द्रों को प्राथमिक स्वास्थ्य इकाई सेवाओं से सम्पन्न किया जाएगा। मातृ और शिशु स्वास्थ्य सेवाओं में लगाए जाने वाले भैषजिक और स्थानीय कर्मचारियों की उचित प्रशिक्षण आवश्यकता को अब मान लिया गया है और इसलिए योजना में इसकी आवश्यक व्यवस्था की गई है।

५३. इस समय मातृ और शिशु स्वास्थ्य सेवाओं में कमजोर कड़ी पियाडिएट्रिक्स है। यह आवश्यक है कि मैडिकल कालेजों के पियाडिएट्रिक्स विभागों में मातृ और शिशु स्वास्थ्य केन्द्रों के कर्मचारियों के लिए पियाडिएट्रिक्स प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए और उन्हें कर्मचारियों व साधनों से युक्त किया जाए। प्रत्येक पियाडिएट्रिक्स विभाग छः कार्यरत मातृ और शिशु स्वास्थ्य केन्द्रों को चुन लेगा और प्रत्येक में पियाडिएट्रिक्स प्रशिक्षित एक डाक्टर, जन स्वास्थ्य परिचारिका और अन्य सहायक कर्मचारियों को लगा देगा। इनका कार्य बच्चों में पियाडिएट्रिक्स की रोकथाम और इलाज करना तथा क्षेत्र के प्राथमिक स्कूलों के बच्चों की स्वास्थ्य सम्बन्धी देखभाल करने के साथ-साथ स्त्रियों के जच्चा बनने से पूर्व की और प्रसाविक सेवाओं को भी देखना होगा। प्रत्येक केन्द्र में पोषक प्रोटीन भोजन, आवश्यक दवाएं और रोग निरोधक टीके लगाने की सुविधा दी जाएगी। आरम्भ में कम से कम ५ पियाडिएट्रिक प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाने की व्यवस्था की गई है। ये केन्द्र मातृ और शिशु स्वास्थ्य कर्मचारियों के नियमित प्रशिक्षण का प्रबन्ध करेंगे और नियतकालिक प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रम भी देंगे।

परिवार नियोजन

५४. राष्ट्रीय कल्याण और नियोजन के लिए भारत की जनसंख्या को आकार और गुण दोनों दृष्टिकोणों से नियमित करने की समस्या अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में जो लक्ष्य निर्धारित किए गए थे वे ये हैं :—

(१) उन बातों की सही जानकारी प्राप्त करना जिनके कारण जनसंख्या की शीघ्र वृद्धि होती है,

(२) मानव की प्रजनन शक्ति के विषय में जानकारी प्राप्त करना और उसके नियमन के उपाय ढूंढना,

(३) जनता को शीघ्र शिक्षित करने के उपाय निकालना, और

(४) चिकित्सालयों तथा स्वास्थ्य केन्द्रों में परिवार नियोजन की सलाह और सेवाओं को चिकित्सा सेवाओं का आवश्यक अंग बनाना।

परिवार नियोजन कार्यक्रम का मूल उद्देश्य जनता में परिवार नियोजन के पक्ष में सक्रिय सहानुभूति उत्पन्न करना और वर्तमान ज्ञान के आधार पर परिवार नियोजन की सलाह तथा सेवाओं को बढ़ाना था। इसी के साथ जनांकिकी (डेमोग्राफिक), भैषजिक और जीव विज्ञान का अध्ययन भी शुरू कर दिया गया था। जीव विज्ञान और जनांकिकी सम्बन्धी समस्याओं के लिए राज्यों, स्थानीय अधिकारियों, स्वयंसेवी संगठनों और वैज्ञानिक संस्थाओं को लगभग ११५ परिवार नियोजन उपचारालयों तथा १९ अनुसन्धान योजनाओं के निमित्त आर्थिक अनुदान के रूप में सहायता दी गई। द्वितीय योजना में इन कार्यक्रमों के विकास की व्यवस्था की गई है।

५५. परिवार नियोजन का कार्य इतना आगे बढ़ चुका है कि अब उसके व्यवस्थित विकास की आवश्यकता हो गई है। इस सिलसिले में जनसंख्या सम्बन्धी समस्याओं का निरन्तर अध्ययन होना चाहिए और परिवार नियोजन तथा जनसंख्या सम्बन्धी समस्याओं के लिए एक समुचित केन्द्रीय बोर्ड होना चाहिए। यह बोर्ड अपने कार्य में काफी हद तक स्वायत्त होना चाहिए। केन्द्रीय बोर्ड के कार्यक्रम के मुख्य अंग ये होंगे :—

(१) परिवार नियोजन सम्बन्धी सलाह और सेवाओं का विस्तार करना,

(२) कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए काफी संख्या में केन्द्रों की स्थापना करना और उन्हें चालू रखना,

(३) पारिवारिक जीवन के विषय में शिक्षा कार्यक्रम को विज्ञान आधार पर विकसित करना, जिसमें यौन शिक्षा, विवाह संबंधी सलाह-मशविरा और बच्चों का लालन-पालन भी सम्मिलित हो,

(४) प्रजनन और जनसंख्या समस्याओं के जीव विज्ञान सम्बन्धी तथा भैषजिक पहलुओं के सम्बन्ध में अनुसन्धान करना,

(५) जनांकिकी अनुसन्धान करना जिनमें परिवार परिसीमन के प्रयोजन की जांच-पड़ताल के साथ-साथ सांसर्गिक तरीकों का अध्ययन सम्मिलित है,

(६) विभिन्न सरकारी और गैर-सरकारी एजेंसियों द्वारा किए गए कार्य की जांच व परीक्षण करना जिन्हें केन्द्रीय बोर्ड आर्थिक सहायता देता है,

(७) प्रगति का मूल्यांकन और प्रतिवेदन प्रस्तुत करना, और

(८) एक अच्छे साधन सम्पन्न केन्द्रीय संगठन की स्थापना करना ।

५६. ५०,००० जनसंख्या वाले सभी बड़े नगरों और कस्बों के लिए एक-एक उपचारालय स्थापित करने की व्यवस्था की गई है । छोटे कस्बों और देहाती क्षेत्रों के बारे में यह सोचा गया है कि उनमें धीरे-धीरे प्राथमिक स्वास्थ्य इकाइयों के सहयोग से उपचारालय खोले जाएंगे । आशा की जाती है कि ये उपचारालय परिवार नियोजन की समस्या के प्रति एक आम जागरूकता उत्पन्न करेंगे और सलाह तथा सेवा भी प्रदान करेंगे । बंगलौर के समीप एक केन्द्रीय प्रशिक्षण और उपचार संस्था तथा एक ग्राम प्रशिक्षण इकाई स्थापित करना इस समय विचाराधीन है । बम्बई में गर्भरोधक परीक्षण और मूल्यांकन का केन्द्र विकसित किया जा रहा है । यह आवश्यक है कि सभी मैडिकल और उपचारण विद्यार्थियों को परिवार नियोजन का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए । एक निश्चित अवधि में सभी चिकित्सालयों और बहुसंख्यक औषधालयों में परिवार नियोजन सेवा का विकास हो जाना चाहिए । मैडिकल, जीव वैज्ञानिक और जनांकिकी सम्बन्धी अनुसन्धान को सक्रिय रूप से उन्नत करने की भी व्यवस्था की गई है । परिवार नियोजन कार्यक्रम के लिए लगभग पांच करोड़ रुपयों की व्यवस्था की गई है । आशा की जाती है कि द्वितीय योजना की अवधि में लगभग ३०० उपनगर और २,००० देहाती उपचारालय स्थापित कर दिए जाएंगे ।

स्वास्थ्य शिक्षा

५७. चिकित्सा और जन स्वास्थ्य संबंधी जो सुविधाएं दी जाती हैं उनका लक्ष्य उसी सीमा तक पूरा होगा जिस सीमा तक जनता इन सुविधाओं का पूरा फायदा उठाएगी और अपनी आदतों और व्यवहार को बदलेगी । इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि स्वास्थ्य शिक्षा के लिए विशेष प्रयत्न किए जाएं । स्वास्थ्य शिक्षा का मूल उद्देश्य जनता को यह सिखलाना है कि वह अपने ही कार्यों और प्रयत्नों द्वारा स्वास्थ्य प्राप्त करे । इसलिए, अपना जीवन स्तर सुधारने के बारे में जनता की दिलचस्पी से इसकी शुरुआत होती है और इसका उद्देश्य यह रहता है कि व्यक्तिगत रूप से तथा स्थानीय समाज के सदस्य के नाते लोग अपना स्वास्थ्य सुधारने के प्रति अपना उत्तरदायित्व समझें । जनता की दिलचस्पियां, आवश्कताएं और महत्वाकांक्षाएं उन्हें प्रारम्भिक सूत्र तथा मुख्य प्रेरक बल प्रदान करते हैं, जिससे कि वह स्थानीय योजनाओं और कार्यों में अपनी शुभ कामनाएं तथा सहयोग प्रदान करती है । हां, जनता को विशेषज्ञों की देखरेख और सहायता की जरूरत होती है । केन्द्र में और राज्यों के स्वास्थ्य विभागों में जो स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो खोले जा रहे हैं, वे स्वास्थ्य विभाग के कर्मचारियों को नौकरियों में रहते हुए प्रशिक्षण देंगे तथा शिक्षा साधनों में और शिक्षा प्रणाली में सलाहकार सेवा के साथ-साथ स्वास्थ्य सेवाओं की सुन्दरतर व्याख्या प्रस्तुत करेंगे ।

अध्याय २६

आवास

राष्ट्रीय आवास कार्यक्रम के सम्बन्ध में सबसे पहले कदम प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में उठाए गए। आगामी योजनाओं में इस कार्यक्रम को और भी अधिक महत्व प्राप्त होगा। इस कार्यक्रम में एक सहायता प्राप्त औद्योगिक आवास योजना तथा कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की एक योजना सम्मिलित थी। इन कार्यक्रम के एक अंग के रूप में, बागान श्रमिकों तथा कोयला और अभ्रक की खानों में काम करने वाले मजदूरों के लिए भी मकान बनाने की योजनाएं कार्यान्वित की गई थीं। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में इन कार्यक्रमों को काफी बढ़ावा दिया जा रहा है। इस काल में ग्रामीण आवास, गन्दी बस्तियों को हटाने तथा भंगियों के लिए आवास और मध्यम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने का विचार है। इन कार्यक्रमों के द्वारा जो कार्य किए जाएंगे और दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि के लिए जो कार्यक्रम बनाए गए हैं, उनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है। आवास के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना में कुल ३८.५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई थी, जबकि दूसरी योजना में १२० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है, जिसका विभाजन इस प्रकार किया गया है :—

	(करोड़ रुपए)
सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास	४५
कम आय वाले लोगों के लिए आवास . ..	४०
ग्रामीण आवास	१०
गन्दी बस्तियों को हटाने और भंगियों के लिए आवास	२०
मध्यम आय वाले लोगों के लिए आवास	३
बागान श्रमिकों के लिए आवास	२
कुल योग ...	१२०

कोयला उद्योग के श्रमिकों की आवास योजनाओं के लिए कोयला खान श्रम कल्याण निधि से वित्तीय सहायता मिलती है। इस निधि द्वारा पांच साल की अवधि में लगभग ८ करोड़ रुपए की व्यवस्था किए जाने की आशा है। अभ्रक और कोयला खानों के श्रमिकों के लिए आवास योजनाओं की जिम्मेदारी श्रम मंत्रालय पर है, तथा अन्य योजनाओं का भार निर्माण, आवास तथा सम्भरण मंत्रालय के हाथ में है।

२. इन योजनाओं के अलावा, पुनर्वास, प्रतिरक्षा, रेलवे, लोहा और इस्पात, उत्पादन, संचार, निर्माण, आवास तथा सम्भरण मंत्रालयों द्वारा आवास के अनेक कार्यक्रम आरम्भ किए गए हैं। राज्य सरकारों और कुछ स्थानीय अधिकारियों की भी आवास की अपनी-अपनी योजनाएं

हैं। अनुमान है कि पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में पुनर्वास मंत्रालय ने शहरी क्षेत्रों में ३,२३,००० मकान और निर्माण, आवास तथा सम्भरण मंत्रालय को छोड़कर अन्य केन्द्रीय मंत्रालयों तथा राज्य सरकारों ने ३,००,००० मकान बनवाए। उपरोक्त अन्य आवास योजनाओं को मिलाकर, सरकारी अधिकरणों ने पहली योजना में लगभग ७,४२,००० मकान बनवाए। निजी तौर पर कितने मकान बनवाए गए, इसका अनुमान लगाना कठिन है। कर जांच आयोग के सिलसिले में की गई एक जांच से पता चला कि १९५३-५४ में शहरों में मकान बनाने पर लगभग १२५ करोड़ रुपया व्यय किया गया। यदि इसे पांच साल की अवधि के लिए एक औसत मान लिया जाए और एक मकान की औसत लागत लगभग १०,००० रुपए मान ली जाए तो पता चलेगा कि पहली योजना में निजी क्षेत्र में लगभग ६,००,००० मकान बनाए गए। इस प्रकार पहली योजना में शहरों में लगभग १३ लाख मकान बनाए गए। निजी तौर पर कितने मकान बनाए गए, इस बारे में भिन्न-भिन्न अनुमानों का लगाया जाना स्वाभाविक ही है।

३. दूसरी पंचवर्षीय योजना में कार्यान्वित किए जाने वाले आवास कार्यक्रमों के निम्न लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं :—

	मकानों की संख्या
सहायता प्राप्त औद्योगिक आवास	१,२८,०००
कम आय वाले लोगों के लिए आवास	६८,०००
भंगियों सहित गंदी बस्तियों में रहने वालों के लिए आवास ...	१,१०,०००
मध्यम आय वाले लोगों के लिए आवास	५,०००
बागान श्रमिकों के लिए आवास	११,०००
कुल योग ...	३,२२,०००

अन्य केन्द्रीय मंत्रालयों, राज्य सरकारों और स्थानीय अधिकरणों द्वारा हाथ में लिए गए तथा कोयला खान श्रमिकों सम्बन्धी कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप ७,५३,००० मकान बनाए जाने की आशा है। इसके अतिरिक्त अनुमान है कि दूसरी योजना की अवधि में निजी तौर पर ८,००,००० मकान बनाए जाएंगे। इस प्रकार दूसरी योजना में लगभग १९ लाख मकान बनाए जाएंगे, जबकि पहली योजना में लगभग १३ लाख मकान बनाए गए थे।

सहायताप्राप्त औद्योगिक आवास योजना

४. सहायता प्राप्त औद्योगिक आवास योजना पहले उन औद्योगिक श्रमिकों के लिए स्वीकार की गई थी जिन पर फैक्टरीज अधिनियम लागू होता है, किन्तु अब इसमें खानों में काम करने वाले श्रमिक भी सम्मिलित हैं। कोयला और अभ्रक उद्योगों के श्रमिक इसमें सम्मिलित नहीं हैं, क्योंकि उनके लिए पृथक योजनाएं हैं। औद्योगिक आवास योजना के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य सरकारों और सरकारी अधिकरणों, मालिकों तथा औद्योगिक श्रमिकों की सहकारी संस्थाओं को ऋण तथा अनुदान दिए जाते हैं। बम्बई और कलकत्ता में कई मंजिलों के मकानों में एक कमरे के मकानों के लिए अधिक से अधिक निर्धारित लागत की रकम ४,५०० रुपए है, और दूसरी जगहों में २,७०० रुपए है। बम्बई और कलकत्ता में दो कमरों के मकानों के लिए लागत की यह रकम ५,४३० रुपए (जो अब बढ़ाकर ५,९३० रुपए कर दी गई है) और अन्य स्थानों

पर एक मंजिल के मकानों के लिए, ३,३४० रुपए और दो मंजिले मकानों के लिए यह रकम ३,४६० रुपए है। राज्य सरकारों को लागत का ५० प्रतिशत ऋण के रूप में और ५० प्रतिशत आर्थिक सहायता के रूप में, सहकारी संस्थाओं को ५० प्रतिशत ऋण के रूप में और २५ प्रतिशत सहायता के रूप में; और मालिकों को ३७½ प्रतिशत ऋण के रूप में तथा २५ प्रतिशत सहायता के तौर पर दिया जाता है। मालिकों के लिए ऋण की अदायगी की अवधि १५ साल है और दूसरों के लिए २५ साल।

५. प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में ७६,६७६ मकान बनाने का कार्यक्रम स्वीकार किया गया था। इसमें से १६,१६५ मकान बम्बई में, २१,७०६ उत्तर प्रदेश में, ५,६२६ हैदराबाद में, ५,१८१ मध्य प्रदेश में, ३,४४४ मध्य भारत में तथा अन्य राज्यों में इनसे कुछ कम संख्या में मकान बनाने की योजना थी। अनुमान है कि पहली पंचवर्षीय योजना की समाप्ति से पूर्व लगभग ४०,००० मकान बनकर तैयार हुए। स्वीकृत मकानों की कुल संख्या में से ६८,२०० या लगभग ८५ प्रतिशत राज्य सरकारों द्वारा, १०,१६१ या लगभग १३ प्रतिशत निजी मालिकों द्वारा, और १,३१८ या १·६ प्रतिशत औद्योगिक श्रमिकों की सहकारी संस्थाओं द्वारा बनाए जा रहे हैं। जब यह योजना बनाई गई थी, उस समय मालिकों एवं सहकारी संस्थाओं की ओर से पर्याप्त सहयोग की आशा की गई थी। योजना के इस पहलू की जांच की जा रही है तथा मालिकों और औद्योगिक श्रमिकों की सहकारी संस्थाओं का और अधिक सहयोग प्राप्त करने के लिए आवश्यक उपायों का अध्ययन किया जा रहा है।

कम आय वाले लोगों के लिए मकान

६. कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजना १९५४ के अन्त में आरम्भ की गई थी। इस योजना के अनुसार, जिन लोगों की वार्षिक आय ६,००० रुपए से अधिक नहीं है, उन्हें सूद की उचित दर पर मकान बनाने के लिए दीर्घकालीन ऋण दिए जाते हैं। व्यक्तियों को तथा उन सहकारी संस्थाओं को, जिनके सदस्य इस शर्त को पूरा करते हों, ऋण दिए जाते हैं। जमीन समेत मकान बनाने की अनुमानित लागत की ८० प्रतिशत तक ही सहायता दी जाती है और यह सहायता अधिक से अधिक ८,००० रुपए तक ही दी जा सकती है। इस योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारों को ३½ प्रतिशत सूद पर ऋण दिए जाते हैं, जिनकी अदायगी की अवधि ३ साल है। राज्य सरकारों को इसलिए ऋण दिए जाते हैं ताकि स्थानीय अधिकरण मकानों के लिए जमीन प्राप्त कर सकें और उसका विकास कर सकें तथा उसे मकान बनाने वाले लोगों को दे सकें। स्थानीय संस्थाएं, धर्मार्थ संस्थाएं, अस्पताल आदि भी मकान बनाने के लिए इस योजना के अधीन सहायता प्राप्त कर सकते हैं ताकि वे किराए पर अथवा किस्त-खरीद की शर्तों पर थोड़ी तनख्वाह पाने वाले अपने कर्मचारियों को मकान दे सकें। पहली योजना के अन्त तक लगभग ४०,००० मकानों के लिए और विभिन्न भूमि विकास योजनाओं के लिए लगभग २१·५ करोड़ रुपए के ऋण स्वीकार किए गए थे। कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजना द्वारा व्यापक रूप से अनुभव की जाने वाली आवश्यकता को पूरा करने का प्रयत्न किया गया है और बहुत-से लोगों ने इस योजना से लाभ उठाने का प्रयत्न किया है। किन्तु जमीन की बहुत ऊंची कीमतों के कारण तथा मकानों के लिए उचित रूप से विकसित स्थानों के अभाव के कारण इस योजना के अधीन मकान बनाने के कार्य में वैसी प्रगति नहीं हो सकी है जैसी कि आशा की गई थी।

७. उचित रूप से विकसित तथा उपयुक्त मूल्य पर जमीन की व्यवस्था करना समस्त आवास कार्यक्रमों की सफलता के लिए अत्यावश्यक है, क्योंकि कम आय वाले लोगों के मकानों के अतिरिक्त व्यक्तियों, सहकारी संस्थाओं तथा निजी व्यापारों के लिए भी मकानों के स्थानों की व्यवस्था करनी होगी। निजी तौर पर व्यक्तियों के लिए, विशेषत: कम और मध्यम आय वाले व्यक्तियों के लिए मकान बनाने का कार्य और भी अधिक तेजी से हो सकता है यदि स्थानीय अधिकरणों द्वारा कम दरों पर मकानों के लिए विकसित स्थान उपलब्ध कराए जा सकें, किन्तु उन्हें दुबारा बेचने के लिए इन पर उपयुक्त शर्त लागू होनी चाहिए। हाल के वर्षों में, विशेषत: शहरों में, जहां बड़ी तेजी से आबादी बढ़ी है, जमीन की ऊंची क़ीमतों और मकानों के स्थानों की सामान्यत: कमी होने के कारण ही मकान बनाने के कार्य में बहुत धीमी प्रगति हुई है। इसलिए यह वांछनीय प्रतीत होता है कि राज्य सरकारों और स्थानीय अधिकरणों को रिहायश की जगहों का विकास करने के लिए सहायता दी जाए और ये स्थान कम आय वाले उन व्यक्तियों को बेचे जाएं जो अपने निजी इस्तेमाल के लिए मकान बनाना चाहते हैं, चाहे वे कम आय वाले लोगों के लिए लागू की जाने वाली विशिष्ट आवास योजना के अन्तर्गत ऋण के लिए प्रार्थी हों या न हों। यह भी सुझाव रखा गया है कि कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजना के धन का कुछ भाग आयोजित आधार पर भूमि विकास के लिए इस्तेमाल किया जाए। उन शहरों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा जहां काफी घनी आबादी है तथा जो शहर दूसरी पंचवर्षीय योजना में कार्यान्वित किए जाने वाले विकास कार्यक्रमों के कारण और भी अधिक तेजी से विकसित होने वाले हैं। राज्य सरकारें वैयक्तिक स्थानीय अधिकारियों के साथ इस बारे में जांच करें कि इस दिशा में कहां तक कार्रवाई की जा सकती है। बिक्री के अलावा पट्टे पर दी जाने वाली जगहों का भी विकास किया जाएगा।

देहातों के लिए आवास

८. जैसा कि इस अध्याय के अगले हिस्से में दिए गए विवरण से पता चलता है, देहाती क्षेत्रों में मकान सम्बन्धी परिस्थितियों में सुधार करना एक बहुत बड़ा कार्य है। देहाती क्षेत्रों के ५ करोड़ ४० लाख मकानों में से अधिकांश के पुनर्निर्माण या उनके काफी सुधार की जरूरत है। देर या सवेर, प्रत्येक गांव की अपनी एक योजना होनी चाहिए जिसके अनुसार चौड़ी गलियों व नालियों और मकानों के बीच उचित फासला और पंचायती स्थानों तथा बच्चों के लिए खेलने के मैदानों की व्यवस्था हो। देहाती क्षेत्रों में गृह-सुधार का कार्य ग्राम विकास के सामान्य कार्यक्रम का ही एक पहलू है और देहातों की समृद्धि बढ़ने के साथ-साथ आवास कार्य में भी आशा से अधिक प्रगति होगी, फिर भी कुछ दिशाओं में विशेष कार्रवाई करने की जरूरत है। शुरू में ऐसी कार्रवाई छोटे पैमाने पर की जा सकती है और बाद में उसे और अधिक बढ़ाया जा सकता है। देहातों में मकान बनाने के लिए जो साज-सामान प्रयुक्त होता है, उसका अधिकांश भाग वहीं पर मिल जाता है और उसका पूरा-पूरा इस्तेमाल किया जा सकता है। देहाती क्षेत्रों में स्वेच्छा से सहकारी आधार पर श्रम करने तथा स्थानीय रूप से सामूहिक कार्रवाई करने की काफी गुंजाइश है और यदि शुरू से ही ठीक रवैया अपनाया जाए, तो इस कार्य में काफी तेजी से प्रगति की जा सकती है। आबादी में वृद्धि होने के कारण घनी आबादी की समस्या और भी अधिक उग्र हो गई है और लगभग सभी जगह मकान बनाने के लिए और अधिक स्थानों की जरूरत है। अनुसूचित जातियों, आदिम जातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों, कारीगरों और सामान्यत: गांवों के भूमिहीन लोगों का जहां तक सम्बन्ध है, घनी आबादी की समस्या सबसे अधिक विकराल है, हालांकि

यह समस्या केवल इन्हीं लोगों तक सीमित नहीं है। गांवों के अधिकार-हीन लोगों की मकान सम्बन्धी परिस्थितियां बहुत खराब हैं और उनकी ओर फौरन ध्यान दिया जाना चाहिए। कारीगर लोग ऐसी परिस्थितियों में रहते और काम करते हैं कि उनमें कार्य करने के अधिक उन्नत तरीकों को अपनाना बहुत मुश्किल है। इसके अतिरिक्त ये परिस्थितियां कारीगरों के स्वास्थ्य के लिए भी बहुत हानिकारक हैं। देहातों में जिन लोगों की स्थिति कुछ अच्छी भी है, उनके मकानों के नक्शे पुराने ढंग के हैं और उनमें रोशनी, रोशनदान तथा नालियों आदि की समुचित व्यवस्था नहीं है। समस्त गांवों में अब निरन्तर इस बात की आवश्यकता को महसूस किया जा रहा है कि उनमें मल-मूत्र की निकासी के अधिक उन्नत तरीकों को अपनाया जाए और अब समय आ गया है कि इस दिशा में बड़े पैमाने पर प्रयत्न किया जाए। एक आखिरी बात यह भी है कि नए गांवों और वर्तमान गांवों के विस्तार के लिए गांवों के और अधिक उन्नत नक्शे लागू करने होंगे।

९. ये कुछ मुख्य कार्य हैं जिन्हें पूरा करके गांवों की मकान सम्बन्धी हालतों को सुधारा जा सकता है और इन कार्यों को पूरा करने के लिए दूसरी योजना की अवधि में बहुत कुछ किया जा सकता है, पर तभी जब कि विभिन्न ग्रामीण कार्यक्रम जिला और ग्राम स्तर पर मिलकर कार्यान्वित किए जाएं और उनमें जनता का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त हो। गांवों की मकान सम्बन्धी स्थिति को सुधारने का कार्य अपने आप में कोई पृथक उद्देश्य नहीं है, बल्कि वह तो गांवों के पुनर्निर्माण की विशालतर योजना का ही एक हिस्सा है, जिसमें ये बातें सम्मिलित हैं: कृषि की पैदावार में वृद्धि, अधिकाधिक क्षेत्रों में सहकारी आधार पर कार्य, गांवों में पानी की व्यवस्था, गंदे पानी की नालियां, सफाई, गांव की सड़कें, अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए कल्याण कार्यक्रम, तथा गांवों के कारीगरों के लिए अधिक काम दिलाने और उनके रहने की अधिक अच्छी हालतें पैदा करने के कार्यक्रम। दूसरी योजना में इन और अन्य कार्यों के लिए धन की व्यवस्था की गई है। ग्रामीण सामुदायिक कार्यक्रम के सफल होने और गांवों के लोगों द्वारा और अधिक जिम्मेदारी संभाल लेने पर गांवों में मकानों की स्थिति में सुधार होने की आशा है। इस समय जिस बात की आवश्यकता है वह यह है कि प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्र में और अन्यत्र गांवों के लोगों को मकान सम्बन्धी समस्या से पूरी तरह परिचित कराया जाए और जो कदम आवश्यक समझे जाएं उन्हें फौरन उठाया जाए, जैसे गांवों की आबादी का विस्तार, हरिजनों और विभिन्न पिछड़े वर्गों के लिए मकानों के स्थानों तथा अन्य प्रकार की सहायता की व्यवस्था, भविष्य में बनाए जाने वाले मकानों के लिए अधिक अच्छे मानदण्ड निर्धारित करना और वर्तमान मकानों में रोशनी, रोशनदान और गन्दे पानी की नालियों की और अधिक अच्छी व्यवस्था करना।

१०. पहली योजना की अवधि में गांवों में रहन-सहन की स्थिति में सुधार करने के लिए कुछ कदम उठाए गए हैं। सामुदायिक योजना क्षेत्रों में ५८,००० ग्रामीण टट्टियां, १,६०० मील गन्दे पानी की नालियां और २०,००० कुएं बनवाए गए हैं और ३४,००० कुओं की मरम्मत की गई है। इसी प्रकार राष्ट्रीय विस्तार क्षेत्रों में ८०,००० ग्रामीण टट्टियां, २,७०० मील गन्दे पानी की नालियां, और ३०,००० नए कुएं बनवाए गए तथा ५१,००० कुओं की मरम्मत की गई। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों में लगभग २९,००० मकान बनवाए गए और लगभग इतने ही मकानों की मरम्मत की गई। कई राज्यों के देहाती क्षेत्रों में ईंटों के भट्ठे लगाए जा रहे हैं। कहीं-कहीं ये भट्ठे सहकारी संस्थाओं के द्वारा भी लगाए गए हैं। मिसाल के तौर पर उत्तर प्रदेश में १९५०-५१ में १६ सहकारी भट्ठे लगाए गए, १९५४-५५ तक यह

संख्या बढ़कर ७५२ हो गई। इन भट्ठों के आसपास के गांवों में निरन्तर अधिक अच्छे प्रकार के मकान बनाए जा रहे हैं। कई राज्यों में हरिजनों को मकान के स्थान देकर और मकान बनाने की सहकारी संस्थाओं का संगठन करके उनकी मकान सम्बन्धी स्थिति को सुधारने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। केन्द्र में निर्माण, आवास और सम्भरण मंत्रालय ने एक ग्रामीण आवास संगठन स्थापित किया है जो इस क्षेत्र की विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करेगा और मकान बनाने के अधिक अच्छे नक्शे, ले-आउट और तरीके सुझाएगा और यह भी बताएगा कि स्थानीय साज-सामान का और अधिक अच्छा उपयोग किस प्रकार किया जाए।

११. देहाती क्षेत्रों में मकान बनाने का कार्य वस्तुतः सहायता प्राप्त स्वावलम्बन का कार्यक्रम ही है, जिसमें शिक्षा और पथ-प्रदर्शन का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। सरकार से जो सहायता मिलेगी, उसका मुख्यतः यह स्वरूप होगा : टेकनीकल परामर्श, आदर्श मकानों तथा आदर्श गांवों का प्रदर्शन, अधिक अच्छे प्रकार के नक्शों की व्यवस्था, स्थानीय साज-सामान के उपयोग के सम्बन्ध में प्रारम्भिक परीक्षण, ऐच्छिक श्रम के आधार पर सहकारी ग्राम कार्यक्रमों का संगठन और विशेषतः हरिजनों तथा अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आर्थिक सहायता की व्यवस्था। यह अच्छा होगा कि प्रत्येक राज्य के आवास विभाग में एक छोटा-सा टेकनीकल दल हो जो स्थानीय परि-स्थितियों के अनुरूप मकानों के नक्शे और नमूने तैयार करे और स्थानीय वस्तुओं के सम्भावित प्रयोग का अध्ययन करे। इसके अतिरिक्त, ग्राम विकास के किसी न किसी पहलू से सम्बद्ध विभिन्न सरकारी एजेंसियों को अपने कार्यों में और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के कार्यों में समन्वय स्थापित करना चाहिए। जैसा कि अध्याय १६ में सुझाव दिया गया है, हरिजनों और अन्य पिछड़े वर्गों के बारे में विस्तार कार्यकर्ताओं को ऐसे कदम उठाने चाहिएं जिनसे गांवों के लोग मुफ्त मकानों के स्थानों की व्यवस्था करें, ताकि भूमि-हीन कृषि मजदूरों द्वारा मकान बनाए जा सकें। मिसाल के तौर पर हरिजनों तथा अन्य पिछड़े वर्गों की मकान सम्बन्धी हालत सुधारने के लिए और ग्रामीण सामुदायिक कारखाने स्थापित करने के लिए जहां-जहां आर्थिक सहायता की व्यवस्था मौजूद है, वहां सहकारी समितियां बनाई जानी चाहिएं और पारस्परिक सहायता दलों का संगठन किया जाना चाहिए। देहातों में मकान बनाने के कार्यक्रम यदि इस प्रकार कार्यान्वित किए जाएं तो उनसे न केवल देहातों का जीवन-स्तर उन्नत होगा, बल्कि उनसे ग्रामीण रोजगार में भी वृद्धि होगी और उपलब्ध जन-शक्ति साधनों का पूरा-पूरा उपयोग हो सकेगा।

गन्दी बस्तियों को हटाना और भंगियों के लिए आवास

१२. प्रत्येक बड़े शहर में गंदी बस्तियों का होना गम्भीर चिन्ता का विषय है। सहायता प्राप्त औद्योगिक आवास योजना के परिणामस्वरूप पिछले दो या तीन साल में गन्दी बस्तियों में रहने वाले कुछ लोग अपने घरों से हटाकर दूसरे स्थानों में बसाए गए हैं किन्तु सामान्यतः गन्दी बस्तियों की समस्या अभी तक पहले जैसी ही बनी हुई है। यदि ऐसे उपाय न किए गये कि नई गन्दी बस्तियों का बसना असम्भव हो जाए तो गन्दी बस्तियों की समस्या और भी गम्भीर हो जाएगी। गन्दी बस्तियों के विस्तार को रोकने के लिए दो तरह के कार्य करने होंगे। पहला तो यह कि नगरपालिका सम्बन्धी उपनियमों को पूरी सख्ती के साथ लागू करना चाहिए। इन उपनियमों को लागू करने में पढ़े-लिखे लोगों की सहायता प्राप्त की जानी चाहिए और जो नई गन्दी बस्तियां बसनी शुरु हो रही हों, उनकी ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिए। दूसरे यह कि प्रत्येक शहर के लिए बृहद् योजनाएं बनाई जानी चाहिएं और ये योजनाएं पहले उन शहरों के

लिए बननी चाहिएं जो बहुत बड़े हैं या हाल के वर्षों में बहुत बढ़ गए हैं या अगले कुछ वर्षों में उनके तेजी से बढ़ जाने की सम्भावना है। वृहद् योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए स्थानीय अधिकरण के पास आवश्यक अधिकार होने चाहिएं ताकि वे क्षेत्रीय योजनाएं लागू कर सकें, भूमि का उपयोग कर सकें और जहां-तहां होने वाला विकास रोक सकें। जहां आवश्यक हो, वहां नए विभाग स्थापित किए जाने चाहिएं। दिल्ली में हाल ही में एक विशेष विकास विभाग स्थापित किया गया है।

१३. भविष्य में और नई गन्दी बस्तियां न बस सकें, जहां इस सम्बन्ध में कार्रवाई की जा रही है, वहां यह भी जरूरी है कि वर्तमान गन्दी बस्तियों की समस्या को भी सुलझाया जाए। बहुत हद तक गन्दी बस्तियों का बिल्कुल सफाया कर देने के अलावा और कोई चारा नहीं है, किन्तु कुछ मामलों में सुधार कार्य भी किए जा सकते हैं। अभी तक तीन प्रकार की कठिनाइयों के कारण गन्दी बस्तियों को हटाने के प्रस्ताव कार्यान्वित नहीं किए जा सके—गन्दी बस्तियों को अपने अधिकार में करने के लिए बहुत अधिक कीमत की अदायगी, इन बस्तियों में रहने वाले लोगों की दूर जगहों पर जाने की अनिच्छा क्योंकि इससे उन्हें उनके सामाजिक एवं आर्थिक जीवन के अस्त-व्यस्त हो जाने की आशंका थी, तथा इन लोगों के लिए मकान बनाने के लिए आर्थिक सहायता की आवश्यकता, ताकि ये मकान उन्हें इतने किराए पर दिए जा सकें जिसे वे अदा कर सकें। गन्दी बस्तियों को हटाने और भंगियों के लिए मकान बनाने की नई योजना तैयार करते हुए केन्द्रीय सरकार ने इन पहलुओं को ध्यान में रखा है और दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस कार्यक्रम के लिए कुल २० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

१४. गन्दी बस्तियों को अपने अधिकार में करने की कीमत को जो आजकल विशेषतः बड़े शहरों में बहुत अधिक है कम करने के लिए यह सुझाव दिया गया है कि राज्य सरकारों को संविधान के अनुच्छेद ३१ की व्यवस्थाओं का लाभ उठाना चाहिए। कानून में उचित परिवर्तन करके, भूमि प्राप्त करने की कार्रवाई में जो विलम्ब होता है उसे कम करना चाहिए। गन्दी बस्तियों को हटाने तथा भंगियों के लिए मकान बनाने की उस योजना के अनुसार जो अब लागू की जाएगी राज्य सरकारों से यह कहा गया है कि वे अपने बड़े शहरों में सबसे अधिक गन्दी बस्तियों के क्षेत्रों का सामाजिक एवं आर्थिक सर्वेक्षण कराएं और गन्दी बस्तियों को हटाने के लिए क्रमबद्ध कार्यक्रम तैयार करें। यह योजना दो मुख्य सिद्धान्तों पर आधारित है। पहला सिद्धान्त तो यह है कि गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोगों को कम से कम अस्त-व्यस्त किया जाए और जहां तक हो सके उन्हें गन्दी बस्तियों के आसपास ही दूसरे मकानों में बसाया जाए ताकि वे अपने रोजगार के इलाकों से दूर न जा पड़ें। दूसरा सिद्धान्त यह है कि गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोग जितना किराया अदा कर सकें उनसे उतना ही किराया लेने के लिए बड़े-बड़े मकान बनाने की अपेक्षा वातावरण सम्बन्धी सफाई रखने तथा आवश्यक नागरिक सुविधाओं की व्यवस्था करने पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए। योजना में इस कार्य के लिए जो आर्थिक व्यवस्था की गई है उसके अनुसार यह प्रस्ताव है कि केन्द्रीय सरकार को लागत का २५ प्रतिशत आर्थिक सहायता के रूप में और ५० प्रतिशत ऋण के रूप में देना चाहिए जो ३० साल की अवधि में अदा करना होगा। लागत का शेष २५ प्रतिशत राज्य सरकारें अपने ही साधनों से आर्थिक सहायता के रूप में देंगी। यह सुझाव दिया गया है कि जहां सम्भव हो, विशेषतः जहां गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोग बहुत कम किराया दे सकते हों, वहां राज्य सरकारों और स्थानीय संस्थाओं को गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोगों को १००० से लेकर १,२०० वर्गफुट तक के विकसित तथा निर्दिष्ट मकान बनाने के

स्थान देने चाहिएं और सीमित मात्रा में मकान बनाने का सामान भी देना चाहिए तथा स्व-सहायता एवं पारस्परिक सहायता के आधार पर अपने लिए जहां तक हो सके वहां तक निर्दिष्ट नमूने के मकान बनाने का कार्य गन्दी बस्तियों में रहने वालों पर ही छोड़ देना चाहिए। राज्य सरकारों के पथप्रदर्शन के लिए गन्दी बस्तियों को हटाने और उनमें सुधार करने की योजनाओं की मानक-लागत का हिसाब लगाया गया है। योजना के अनुसार अच्छे मकानों में बसाए जाने की सुविधाएं गन्दी बस्तियों में रहने वाले उन परिवारों को दी जाएंगी जिनकी आय बम्बई और कलकत्ता में २५० रुपए मासिक तथा दूसरी जगहों पर १७५ रुपए मासिक से अधिक नहीं है। इससे अधिक आय वाले परिवारों को कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने तथा अन्य योजनाओं के अधीन ऋण लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा और यह भी प्रस्ताव है कि भूमि प्राप्त करने में उनकी सहायता की जानी चाहिए और राज्यों द्वारा विकसित कुछ जमीन उनके लिए सुरक्षित रख दी जाए। चूंकि अधिकांश नगरों की गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोग ज्यादातर मेहतर हैं, इसलिए यह आशा की जाती है कि नए कार्यक्रम के अधीन बहुत-से मेहतर अपने वर्तमान घरों को छोड़कर नए घरों में बसाए जा सकेंगे।

मकान बनाने की अन्य योजनाएं

१५. बागान श्रम अधिनियम, १९५१ की व्यवस्थाओं के अनुसार प्रत्येक बागान मालिक के लिए यह अनिवार्य है कि वह बागानों में रहने वाले श्रमिकों और उनके परिवारों के लिए निर्दिष्ट प्रकार के मकान बनवाए। बड़े-बड़े बागान मालिक तो इस शर्त को पूरा कर सकते हैं, किन्तु छोटे बागान मालिकों को ऋण के रूप में सहायता देने की आवश्यकता है। दूसरी योजना में इस कार्य के लिए २ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इस योजना के अन्तर्गत लगभग ११,००० मकान बनाए जाने की आशा है।

१६. कई वर्षों से कोयले की खानों में काम करने वाले मजदूरों के लिए अच्छे प्रकार के मकानों की व्यवस्था करने के प्रयत्न किए गए हैं। कोयला उद्योग के कार्यक्रमों में बहुत अधिक विस्तार हो जाने के कारण दूसरी पंचवर्षीय योजना में खनिकों के लिए मकानों की व्यवस्था करना काफी महत्वपूर्ण है। पहले के प्रस्तावों को कार्यान्वित करने में जो अनुभव प्राप्त हुआ है, उसके आधार पर हाल ही में एक नई योजना बनाई गई है। कोयले की खानों से रवाना होने वाले प्रत्येक टन कोयले और कोक पर ६ आने का एक उपकर वसूल किया जाता है, जिससे इस योजना का खर्च चलता है। इस प्रकार लगभग १ करोड़ की वार्षिक आय होती है। इस योजना के अन्तर्गत कोयला श्रम कल्याण बोर्ड कोयला खानों के मालिकों से पट्टे पर ४० साल की अवधि के लिए मुफ्त या मामूली किराए पर जमीन प्राप्त करेगा। बोर्ड द्वारा मकान बनाए जाएंगे और कोयला खानों के मालिक बोर्ड को प्रति मकान प्रति मास २ रुपए किराया देंगे और मजदूरों से भी बोर्ड को दी गई रकम से अधिक किराया वसूल नहीं किया जाएगा। इस कार्य के लिए लगभग ८ करोड़ रुपए उपलब्ध किए जाने की आशा है और आशा की जाती है कि योजना की अवधि में लगभग ३०,००० मकान बनाए जाएंगे।

१७. अभ्रक खान श्रम कल्याण निधि अधिनियम, १९४६ के अनुसार भारत से निर्यात किए जाने वाले अभ्रक पर कीमत के हिसाब से ढाई प्रतिशत का उत्पादन शुल्क लगाया गया है। निधि की वार्षिक आय लगभग १५ लाख रुपया है। अभ्रक की खानों में काम करने वाले मजदूरों के लिए एक सहायता प्राप्त आवास योजना १९५३ में स्वीकार की गई थी।

१८. केन्द्रीय सरकार ने अपने कर्मचारियों को मकान बनाने के लिए ऋण देने की योजना, जो कुछ वर्ष पहले रोक दी गई थी, १९५६-५७ से फिर चालू कर दी है। वर्तमान योजना के अनुसार २४ महीनों की तनख्वाह या अधिक से अधिक २५ हजार रुपया नए मकान बनाने के लिए पेशगी दिया जा सकता है और मकानों में विस्तार करने के लिए दस हजार रुपए तक की रकम दी जा सकती है। ये रकमें २० साल की अवधि में साढ़े चार प्रतिशत वार्षिक सूद की दर से वापिस करनी होंगी।

१९. मध्यम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की एक योजना के निमित्त दूसरी योजना में तीन करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इस योजना के अन्तर्गत बीमा कम्पनियों के साथ सहयोग किया जाएगा और आरम्भ से प्रस्तावित शर्तों के अनुसार सरकार और बीमा कम्पनी दोनों मिलकर प्रत्येक ऋण को स्वीकार करेंगी। मकान की लागत के ८० प्रतिशत भाग तक ऋण दिया जा सकता है, जिसमें जमीन की लागत भी सम्मिलित है। जमीन की लागत का २५ प्रतिशत भाग सरकार देगी और शेष ७५ प्रतिशत बीमा कम्पनी देगी। जीवन बीमा का राष्ट्रीयकरण हो जाने के बाद योजना के विस्तृत विवरणों पर इस समय विचार किया जा रहा है।

आवास सम्बन्धी आंकड़े और सर्वेक्षण

२०. ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्रों में कुछ दशाब्दों से मकानों की समस्या निरन्तर विषम होती गई है। भारत में मकानों की स्थिति के सम्बन्ध में कुछ थोड़े-से ही वैज्ञानिक सर्वेक्षण किए गए हैं। मकानों के बारे में जो आंकड़े हैं, वे सदोष और अपूर्ण हैं और इस प्रकार के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं जिनसे या तो यह मालूम हो सके कि कितने नए मकान बने या मकानों की कितनी कमी है। किसी भी पैमाने पर मकान सम्बन्धी कार्यक्रमों को तैयार करने के लिए यह आवश्यक है कि नियमित समय पर ठीक-ठीक आंकड़े उपलब्ध होते रहें। केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन राज्यीय सांख्यिकी व्यूरो के सहयोग से सार्वजनिक और निजी दोनों ही क्षेत्रों में मकानों और मकान बनाने के सम्बन्ध में आंकड़े जमा करने के लिए प्रयत्न कर रहा है। अर्थ-व्यवस्था को नियमित करने में निर्माण सम्बन्धी और अधिक कारंवाई का बड़ा महत्वपूर्ण भाग रहेगा। इसलिए इस क्षेत्र में आंकड़ों सम्बन्धी सूचना का बड़ा महत्व है।

२१. राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण ने अपने सातवें दौर में (अक्तूबर १९५३ से मार्च १९५४) नमूने के तौर पर ९४३ गांवों और ५३ शहरों तथा बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली और मद्रास, इन चार बड़े शहरों में मकान सम्बन्धी परिस्थितियों की जांच की। ५३ शहरों में से १४ शहरों की आबादी १ लाख या इससे अधिक थी, ९ की आबादी ५० हजार से १ लाख तक, १४ की आबादी १५ से ५० हजार तक और १६ की आबादी १५ हजार से कम थी। इस सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप जो आंकड़े उपलब्ध हुए, उन्हें हाल ही में तालिकाबद्ध किया गया है और यद्यपि ये आंकड़े अस्थायी हैं, फिर भी उनसे देश की आवास स्थिति के कुछ पहलुओं पर प्रकाश पड़ता है। इस जांच से पता चला कि ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग ८५ प्रतिशत मकान मिट्टी की कुरसी पर बने हुए हैं, ८३ प्रतिशत की दीवारें मिट्टी, बांस या सरकण्डे की हैं और लगभग ७० प्रतिशत की छतें घास-फूस, सरकण्डा और मिट्टी आदि की हैं। लगभग ७ प्रतिशत मकान ईंटों की कुरसी पर बने हैं और उनकी दीवारें ईंट, सीमेंट या पत्थर की हैं और उनकी छतें पनालीदार चादरों या खपरैल आदि की है। ९५ प्रतिशत से अधिक मकानों में टट्टियां नहीं हैं। जहां तक पीने के पानी के साधनों का सम्बन्ध है, ७०

प्रतिशत मकान कुओं पर, १३ प्रतिशत तालावों और तलैयों पर, १२ प्रतिशत झीलों, चश्मों और नदियों आदि प्राकृतिक साधनों पर, ३ प्रतिशत नलकूपों पर और १·५ प्रतिशत से कम पानी के नलकों पर तथा १·५ प्रतिशत अन्य सावनों पर निर्भर हैं। जिन मकानों का सर्वेक्षण किया गया उनमें से लगभग ८१ प्रतिशत में ३ या ३ से कम कमरे थे, ३४ प्रतिशत में १ कमरा था और ३२ प्रतिशत में दो कमरे थे। लगभग ३८·५ वरों में प्रति व्यक्ति १०० वर्गफुट से कम जगह थी और ३२·५ प्रतिशत में १०० और २०० वर्गफुट के वीच जगह थी।

२२. जांच के दौरान में जिन शहरी क्षेत्रों का अध्ययन किया गया, उनमें लगभग चौथाई मिट्टी की कुरसी पर वने हैं और उनकी दीवारें और छतें भी मिट्टी की पाई गईं। इस अध्ययन से इस विचार की पुष्टि हुई कि पिछले वीस वर्षों में उतने नए मकान नहीं वने जितनी आवादी शहरी क्षेत्रों में वढ़ गई है। उपलव्ध आंकड़ों से पता चलता है कि शहरी आवादी में ३ से ४ प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई है किन्तु नए वनाए गए मकानों में २ से २·५ प्रतिशत की ही वृद्धि हुई है। शहरी क्षेत्रों में लगभग ४४ प्रतिशत मकानों में केवल एक कमरा है, २८ प्रतिशत में २ कमरे, १२ प्रतिशत में ३ कमरे, और १६ प्रतिशत में ४ या अविक कमरे हैं। लगभग ४६ प्रतिशत मकानों में प्रति व्यक्ति जगह १०० वर्गफुट से कम है। इन तथ्यों से शहरों की वर्तमान घनी आवादी का पता चलता है और इस समय जो हालत है, उसको देखते हुए शहरों में और भी अधिक घनी आवादी हो जाने की सम्भावना है।

२३. शहरी क्षेत्रों में मकानों की कितनी कमी है, उसका केवल मोटे तौर पर ही अनुमान लगाया जा सकता है। ६ करोड़ २० लाख शहरी आवादी के लिए १९५१ में लगभग १ करोड़ मकान थे। मोटे तौर पर उस साल लगभग २५ लाख मकानों की कमी थी। १९३१ और १९४१ के वीच शहरों की आवादी में १ करोड़ ६ लाख तथा १९४१ और १९५१ के वीच १ करोड़ ८१ लाख की वृद्धि हुई। इन दोनों दशकों में शहरी क्षेत्रों में वसे हुए घरों की संख्या में क्रमशः १८ और १७ लाख की वृद्धि हुई। किस स्तर के मकान वने, इस प्रश्न को छोड़ दें तो भी १९४१-५१ की अवधि में परिमाण की दृष्टि से मकानों की संख्या में वड़ी कमी रही। युद्धोत्तर विकास तथा देश-विभाजन के साथ-साथ शहरी आवादी में तेजी से वृद्धि हुई है। १९५१ और १९६१ के वीच कुल शहरी आवादी में लगभग ३३ प्रतिशत की वृद्धि हो जाने की आशा है। इसलिए यदि प्रभावशाली उपाय न किए गए तथा शहरी विकास के लिए यदि सावधानीपूर्वक कार्यक्रम न वनाए गए तो १९५१ की तुलना में १९६१ में मकानों की दुगुनी कमी हो सकती है। निजी क्षेत्र में और सरकारी अधिकरणों द्वारा विभिन्न आवास योजनाओं को कार्यान्वित करने के कुछ वर्षों के व्यावहारिक अनुभव के वाद ही मकान वनाने की व्यापक नीतियां और कार्यक्रम निश्चित किए जा सकते हैं। इस अध्याय में आर्थिक योजना तथा वड़े पैमाने और छोटे पैमाने के उद्योगों के विकास कार्यक्रमों की पृष्ठभूमि में आवास नीति और शहरी विकास के वारे में एक व्यापक दृष्टिकोण वनाने का प्रयत्न किया गया है।

आवास की समस्याएं

२४. दूसरी पंचवर्षीय योजना में विभिन्न सरकारी अविकरणों द्वारा और अविक मकान वनाने के कार्यक्रमों में जो विस्तार किया जाएगा तथा निजी क्षेत्र में गृह निर्माण कार्य में जिस वृद्धि की आशा है उसका पहले ही वर्णन किया जा चुका है। पिछले दो या तीन वर्षों में

आवास की सुविधाएं बढ़ाने में जो मुख्य-मुख्य समस्याएं सामने आई हैं और जिनकी ओर ध्यान देना है वे इस प्रकार हैं :–

(१) तेजी से विकसित होने वाले नगरों में मकान बनाने के लिए पर्याप्त विकसित स्थान उपलब्ध नहीं हैं;

(२) निजी क्षेत्र में महंगे मकान बनाने की ओर ही अधिक ध्यान दिया जाता है ताकि उनसे ज्यादा किराया वसूल किया जा सके। इस प्रकार निम्न मध्यम वर्ग तथा मध्यम वर्ग की आवश्यकताएं पर्याप्त रूप में पूरी नहीं की जा रही;

(३) सरकारी सहायता के अतिरिक्त मकान बनाने के लिए आर्थिक सहायता देने वाली संस्थाओं की कमी है;

(४) सहकारी आधार पर मकान बनाने के कार्य में अपेक्षाकृत कम प्रगति हुई है

(५) मकान बनाने के सामान और तरीकों में अनुसन्धान की काफी आवश्यकता है और स्थानीय सामग्री की उपलब्धि तथा कम मात्रा में मिलने वाले सामान के उपयुक्त प्रयोग को ध्यान में रखते हुए मकान बनाने का मानदण्ड निश्चित करने की भी आवश्यकता है; और

(६) कुछ अपवादों को छोड़कर राज्य सरकारें व्यापक रूप से मकान बनाने के कार्यक्रमों को सहायता देने और उन्हें स्वयं कार्यान्वित करने के लिए पर्याप्त रूप से संगठित नहीं हैं।

२५. कम या मध्यम आय वाले लोगों को मकान बनाने के लिए उपयुक्त स्थान या प्लाट देने के प्रश्न की पहले चर्चा की जा चुकी है। यह सुझाव दिया गया है कि कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजना के अन्तर्गत जिस निधि की व्यवस्था की गई है, उसका कुछ भाग एक योजनाबद्ध आधार पर भूमि का विकास करने के लिए प्रयुक्त किया जाए ताकि योजना के अधीन ऋणों की मांग करने वाले लोगों को तथा कम आय वाले लोगों को उचित मूल्यों पर मकान बनाने के प्लाट दिए जा सकें। आम तौर पर जमीन के बारे में किए जाने वाले सट्टे को भूमि उपयोग के नियंत्रण और जमीन की अदला-बदली के नियम के द्वारा रोकना चाहिए।

२६. निजी क्षेत्र में अधिकांश मकान किराये के लिए बनाए जाते हैं और सामान्यतः मकानों के किराए अधिकांश लोगों की किराया देने की शक्ति से बाहर होते हैं। निजी क्षेत्र में आवास के विकास में इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि मध्यम आय वाले लोगों को सुविधाएं दी जाएं ताकि वे अपने लिए मकान बना सकें और इस सम्बन्ध में सरकारी अधिकारियों को आवश्यक कार्रवाई करनी चाहिए। वर्तमान स्थिति में केन्द्रीय सरकार द्वारा कम आय वाले लोगों के लिए लागू की गई आवास योजना से कुल मांग का एक भाग ही पूरा हो सकता है। मकान बनाने के लिए आर्थिक सहायता देने के निमित्त कुछ संस्थाओं की आवश्यकता है। १९५५ में आवास मंत्री सम्मेलन में यह सुझाव दिया गया था कि राज्य सरकारें राज्य आवास वित्त निगम स्थापित करने की संभावना की जांच करें। पिछले वर्षों में बीमा कम्पनियों ने मकान बनाने के लिए सीमित मात्रा में कुछ रकम दी है। बीमा कम्पनियों के राष्ट्रीयकरण तथा वर्धमान शहरी क्षेत्रों और अधिक मकान बनाने की अत्यधिक आवश्यकता के कारण हमारा यह सुझाव है कि केन्द्रीय सरकार ऐसे संगठनों और उपायों का विशेष अध्ययन करे जिन्हें भारत की विशिष्ट परिस्थितियों में पर्याप्त मात्रा में वास्तविक अचल सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए विकसित किया

जा सके। रोजगार के बढ़ते हुए अवसरों तथा पूंजी निर्माण को प्रोत्साहन देने तथा निजी बचत में गृह निर्माण कार्य का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। इस दृष्टि से भी यह जरूरी है कि आर्थिक तथा अन्य प्रकार की सहायता देने के लिए उपयुक्त संस्थाओं का विकास करने के निमित्त शीघ्र ही कार्रवाई की जाए। इस सम्बन्ध में विभिन्न शहरी क्षेत्रों में तथा औद्योगिक कर्मचारियों की आवास सहकारी समितियों के अनुभवों की जांच की जाए ताकि यह निश्चय किया जा सके कि किन दिशाओं में सहकारी आवास योजनाओं से विशेष लाभ उठाया जा सकता है। इस तरह की जांच से सहकारी आवास के विकास के लिए आवश्यक संगठन सम्बन्धी और अन्य सुविधाओं का स्वरूप भी निश्चित किया जा सकेगा।

२७. पहली पंचवर्षीय योजना की एक सिफारिश के अनुसार आवास सम्बन्धी अनुसन्धान तथा तरीकों के विकास के लिए निर्माण, आवास तथा सम्भरण मंत्रालय में १९५४ में राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन स्थापित किया गया था। यह संगठन भवन निर्माण के लिए शीघ्र, सस्ते और अधिक अच्छे उपाय सुझाएगा तथा यह भी बताएगा कि कठिनाई से प्राप्त होने वाले सामान तथा जन-शक्ति के प्रयोग में किस प्रकार की बचत की जाए। यह संगठन भवन निर्माण सम्बन्धी क्रिया-कलाप तथा सामान के बारे में आवश्यक आंकड़े भी इकट्ठा करने का प्रयत्न कर रहा है तथा भवन निर्माण के नमूनों, सामान तथा निर्माण के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी भी देगा। राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन ने विभिन्न अनुसन्धान प्रयोगशालाओं एवं संस्थाओं के द्वारा अनुसन्धान का एक व्यापक कार्यक्रम तैयार किया है। विकास के सम्बन्ध में जिन प्रश्नों की जांच की जा रही है, उनमें ये सम्मिलित हैं: ईंटों की किस्म सुधारने के उपाय, बोर्डों का निर्माण, विभाजक दीवारें, खपरैलें, खोखली ईंटें आदि। निर्माण के काम में सुखाई हुई और तैयार लकड़ी और बांसों का प्रयोग, मकानों में दरवाज़े और खिड़कियां लगाने के सस्ते तरीके, निर्माण के लिए कम मिलने वाले सामान की चालू प्रयोग विधियां, सीमेंट का प्रयोग कम करने की संभावनाएं और जहां सम्भव हो सीमेंट के स्थान पर चूने का प्रयोग, इन सब बातों का भी अध्ययन किया जा रहा है। राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन कंकड़, चूने तथा अन्य प्रकार के चूने के उत्पादन के बारे में भी जांच कर रहा है। मिट्टी के पलस्तर पर सीलन का प्रभाव न हो, इस बारे में भी कार्य किया जा रहा है। कम मिलने वाले सामान के प्रयोग में बचत करने और मकानों की लागत में कमी करने की आवश्यकता के कारण मकानों के मानदण्ड विकसित करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं जो महंगे या शानदार हुए बिना भी संतोषजनक होंगे और जिनमें उचित प्रकार से तैयार करने के बाद स्थानीय सामान का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाएगा।

२८. आवास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए संगठन के प्रश्न पर १९५५ में हुए आवास मंत्री सम्मेलन में विचार किया गया था। सम्मेलन ने सुझाव दिया था कि आवास के विभिन्न पहलुओं विशेषतः मकानों की आवश्यकता का निश्चय करना, वृहद् योजनाओं को तैयार करना, भूमि प्राप्त करना और आवास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करना आदि बातों में समन्वय स्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य में एक विभाग या एजेंसी होनी चाहिए। चूंकि मकान तथा अन्य निर्माण कार्यक्रम बड़े पैमाने पर किए जाते हैं, इसलिए राजगीरों, ईंट बनाने वालों, बढ़इयों, पानी का नल आदि लगाने वालों और अन्य कर्मचारियों को वैज्ञानिक प्रशिक्षण देने की आवश्यकता अनुभव की गई है। इस दिशा में हाल ही में निर्माण, आवास तथा सम्भरण मंत्रालय और कुछ राज्यों ने कदम उठाए हैं, किन्तु प्रशिक्षण कार्यक्रमों में पर्याप्त विस्तार करने की आवश्यकता है।

शहरी विकास

२९. शहरी क्षेत्रों में मकानों की कमी होने के कारण आवास की सुविधाओं में विस्तार करने के लिए कई प्रकार के उपाय काम में लाने की आवश्यकता है। शहरी विकास के वर्तमान रुख को देखते हुए यदि केवल इन्हीं उपायों पर ध्यान केन्द्रित किया गया तो मकानों की और भी अधिक कमी होती जाएगी। इसलिए यह आवश्यक है कि शहरी आवास को अपने आप में एक अलग समस्या या घटनाओं से पीछे न रहने का एक प्रयत्न मात्र न समझा जाए, बल्कि उसे शहरी इलाकों की योजना की विस्तृत समस्या का और जिन क्षेत्रों में ये शहर बसे हैं, उनके साथ इनके आर्थिक एवं दूसरे सम्बन्धों का ही भाग समझा जाए।

३०. १९२१ और १९५१ के बीच शहरी आबादी लगभग २ करोड़ ७० लाख से बढ़कर लगभग ६ करोड़ २० लाख हो गई, जिससे शहरी आबादी का कुल आबादी से अनुपात लगभग ११ से बढ़कर १७ प्रतिशत से भी अधिक हो गया। चूंकि राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का और भी अधिक घनिष्ठ रूप से एकीकरण हो गया है, इसलिए शहरों का आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक महत्व बढ़ गया है। गत वर्षों में अधिकांश विकास बिना किसी योजना के हुआ है। बड़े-बड़े शहरों में नए उद्योग एवं सेवाएं स्थापित हुई हैं, परिणामतः मकान एवं अन्य सुविधाएं प्रदान करने की समस्याएं निरन्तर विकट होती गई हैं। भूमि की कीमतों में वृद्धि, बढ़ते हुए शहरों के आस-पास जमीनों की खरीदारी में सट्टेबाजी, ज्यादा किराए तथा गन्दी बस्तियों के इलाकों का विकास आदि बातें अधिकांश बड़े-बड़े शहरों में एक जैसी हैं। इस प्रकार एक साथ मिलकर जो अनेक समस्याएं पैदा हुई हैं, उनका सामना करने में थोड़ी-सी ही नगरपालिकाएं समर्थ हुई हैं। शहरी विकास के उन पहलुओं को और अधिक अच्छी तरह से समझने के लिए जिनका ग्रामीण-शहरी प्रव्रजन तथा रोजगार के अवसरों के विकास पर विशेष प्रभाव पड़ा है, योजना आयोग की अनुसन्धान कार्यक्रम समिति ने २१ प्रमुख शहरों तथा नगरों* का सर्वेक्षण आरम्भ किया है। हाल के वर्षों में ग्रामीण योजना के प्रश्न पर काफी ध्यान दिया गया है। इसी प्रकार का ध्यान अब शहरी विकास तथा पुनर्विकास की पेचीदा समस्याओं की ओर देना होगा। भारत इस समय द्रुत औद्योगिक विकास की देहली पर खड़ा है। यदि पहले से ही सावधानीपूर्वक विचार न किया गया और योजना न बनाई गई तो औद्योगिक प्रगति के साथ-साथ शहरी क्षेत्रों में ऐसी गम्भीर सामाजिक एवं दूसरी समस्याएं पैदा हो जाएंगी जिनका सामना करना निरन्तर कठिन होता जाएगा। इसलिए यह आवश्यक है कि अभी से केन्द्र में, राज्यों में और प्रत्येक प्रदेश में सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा शहरी विकास का भावी मार्ग सही रूप में निश्चित किया जाए। यद्यपि शीघ्र ही परिणाम नहीं निकलेंगे, फिर भी शुरू से ही उचित नीतियां निर्धारित की जानी चाहिएं और पढ़े-लिखे समझदार लोगों की राय से उन नीतियों का पालन करने के लिए सुदृढ़ प्रयत्न किए जाने चाहिएं।

३१. योजनाबद्ध आर्थिक विकास और शीघ्र होने वाले औद्योगीकरण के सन्दर्भ में यदि शहरी विकास, पुनर्विकास तथा आवास सम्बन्धी नीतियों पर विचार किया जाए तो तीन समस्याओं का विशेष रूप से अध्ययन करना होगा, अर्थात (१) शहरी क्षेत्रों में योजनानुसार विकास करने के तरीके, (२) आवास सम्बन्धी सुविधाओं का विस्तार, और (३) सुदृढ़ तथा प्रगतिशील आधार

*आगरा, इलाहाबाद, अलीगढ़, अमृतसर, बड़ौदा, भोपाल, बम्बई, कलकत्ता, कटक, दिल्ली, गोरखपुर, हैदराबाद, हुबली, जयपुर, जमशेदपुर, कानपुर, लखनऊ, मद्रास, पूना, सूरत और विशाखापत्तनम।

पर नागरिक प्रशासनों का विकास । इस अध्याय में दूसरी समस्या पर कुछ विस्तार से विचार किया गया है । तीसरी समस्या के बारे में यहां यह कह देना काफी है कि उचित आधार पर शहरी विकास होने के लिए कुशल नगरपालिका सम्बन्धी प्रशासनों का होना बड़ा जरूरी है और इन प्रशासनों के पास पर्याप्त अधिकार, साधन तथा प्रशासनिक और टेकनीकल कर्मचारी भी होने चाहिएं । शहरी विकास और पुनर्विकास के कारण नगरपालिकाओं पर निरन्तर अधिकाधिक जिम्मेदारियां पड़ती रहती हैं और इस समय उनमें से थोड़ी-सी ही इन जिम्मेदारियों को निबाह सकती हैं । कई पश्चिमी देशों में मुख्यतः स्थानीय अधिकरणों के द्वारा ही आवास एवं अन्य नागरिक कार्यक्रम कार्यान्वित किए जाते हैं । भारत में भी यह जरूरी है कि आर्थिक विकास की आवश्यकतानुसार आवास एवं अन्य नागरिक सुविधाएं देने के लिए राज्य के अभिकरणों के रूप में स्थानीय अधिकरणों का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाए ।

३२. योजनाबद्ध शहरी विकास के लिए और अगले १० या १५ सालों में जिस प्रकार से शहरी केन्द्रों का विकास होना है, उसके लिए यह आवश्यक है कि आर्थिक विकास का विशेषतः औद्योगीकरण के स्वरूप का ठीक-ठीक और स्पष्ट ज्ञान हो ताकि उसके अनुसार ही विभिन्न औद्योगिक तथा दूसरे प्रकार के कार्यों का वितरण, स्थापना तथा आकार निश्चित किया जा सके । उपयुक्त अध्यायों में इन प्रश्नों पर विचार किया गया है । जिलों और राज्यों जैसे प्रदेशों के आधार पर तथा कृषि, उद्योग, परिवहन आदि विकास के विभिन्न क्षेत्रों के लिए बनाई गई योजनाओं के अनुसार तथा उन्हें और अधिक कुशलता से कार्यान्वित करने के लिए यह भी आवश्यक है कि शहरी-ग्रामीण प्रदेशों के अध्ययन के आधार पर भौतिक तथा आर्थिक योजनाएं तैयार की जाएं और प्रत्येक प्रदेश को स्वीकृत स्थानीय योजना का एक क्षेत्र समझा जाए । विशेषतः बड़े और बढ़ने वाले नगरों, तथा उन नदी घाटी क्षेत्रों के लिए जो कि सिंचाई एवं विद्युत की नई योजनाओं द्वारा विकसित किए जा रहे हैं, प्रादेशिक दृष्टिकोण से योजना बनाना आवश्यक है । संतुलित शहरी-ग्रामीण प्रदेशों का विकास करना ही अन्तिम उद्देश्य होना चाहिए जिससे स्थायी और विभिन्न प्रकार का रोजगार मिल सकेगा तथा उचित सामाजिक और आर्थिक मूल्य पर विकास हो सकेगा ।

३३. इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रत्येक राज्य में निम्नलिखित ५ प्रमुख दिशाओं में कार्रवाई करनी होगी :—

(१) प्रत्येक राज्य समस्त प्रमुख नगरों के लिए व्यापक योजनाएं बनाने और सर्वेक्षण करने का क्रमिक कार्यक्रम तैयार करे । इनमें प्रत्येक नगर या क्षेत्र में भूमि प्रयोग और प्रादेशिक सिद्धान्तों के एकीकरण की व्यवस्था होनी चाहिए ताकि काम करने और रहने की परिस्थितियों में अधिक से अधिक कुशलता और बचत की जा सके । इस सम्बन्ध में दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, अहमदाबाद, हैदराबाद, कानपुर, लखनऊ, पूना आदि नगरों की ओर शीघ्र ही ध्यान देने की जरूरत है ।

(२) हाल ही में कई नए नगर बस गए हैं और औद्योगिक प्रगति के साथ-साथ दूसरी तथा बाद की योजनाओं के काल में कई अन्य नगरों के शीघ्र विकसित होने की संभावना है । सिन्दरी, दुर्गापुर, भिलाई, राउरकेला, चित्तरंजन और नेवेली इसी श्रेणी के नगरों में से हैं । ऐसे नगरों के लिए यथाशीघ्र प्रादेशिक योजनाएं बनाने का कार्य आरम्भ होना चाहिए ।

(३) नदी घाटी क्षेत्रों का विकास उनके भूतल-रूप, साधनों, विकास सम्भावनाओं एवं विकास की आवश्यकताओं के उचित सर्वेक्षण पर आधारित होना चाहिए। दामोदर घाटी क्षेत्र के प्रादेशिक सर्वेक्षण का परीक्षणात्मक कार्य जल्दी ही किया जाएगा। भाखड़ा-नंगल, हीराकुड, चम्बल, तुंगभद्रा, कोयना तथा अन्य महत्वपूर्ण योजना क्षेत्रों में भी इसी प्रकार के सर्वेक्षणों की आवश्यकता है।

(४) अभी तक मद्रास, बम्बई, हैदराबाद और सौराष्ट्र, केवल इन चार राज्यों में ही नगर और ग्राम योजना कानून बनाया गया है। उत्तर प्रदेश में इस प्रकार के कानून पर विचार किया जा रहा है। यह सुझाव दिया गया है कि सब राज्यों में नगर और ग्राम योजना कानून बनाया जाना चाहिए और उसे कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक व्यवस्था भी की जानी चाहिए। सुयोग्य कर्मचारियों के न मिल सकने के कारण शहरी योजना बनाने का कार्य इस समय प्राय: बीच में ही रुक जाता है। योजना में शहरी योजना बनाने वालों तथा नक्शानवीसों के प्रशिक्षण की वर्तमान सुविधाओं में विस्तार करने की व्यवस्था की गई है।

(५) दूसरी पंचवर्षीय योजना में ऐसे कई कार्यक्रम हैं जिनका शहरी विकास तथा पुनर्विकास पर काफी प्रभाव पड़ेगा। ऐसे कार्यक्रम ये हैं : विशाल औद्योगिक और अन्य कार्य जिनकी स्थापना का निश्चय सरकार करती है, ग्राम और छोटे उद्योगों तथा औद्योगिक संस्थानों और नगरों का विकास, सिंचाई तथा विद्युत की प्रमुख योजनाएं, छोटे-छोटे नगरों तथा गांवों में बिजली लगाने की योजनाएं, कृषि की पैदावार के लिए गोदामों तथा हाट केन्द्रों की स्थापना, शहरों में पानी की सप्लाई तथा सफाई की योजनाएं, औद्योगिक और कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजनाएं, तथा परिवहन की सुविधाओं में विस्तार करना आदि-आदि। इनको और अन्य कार्यक्रमों को संगठित रूप से कार्यान्वित करना चाहिए और शहरी तथा प्रादेशिक विकास पर पड़ने वाले उनके प्रभाव पर भी ध्यान रखना चाहिए। साथ ही प्रत्येक राज्य या क्षेत्र के विभिन्न भागों में योजना की वर्तमान तथा भावी आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए। इस प्रकार की समन्वित योजना के परिणामस्वरूप इन कार्यक्रमों में जिन साधनों का प्रयोग किया जाएगा, उनका सन्तोषजनक परिणाम निकलेगा तथा आर्थिक विकास और नागरिक सुविधाएं प्रदान करने का खर्च भी कम हो जाएगा।

अध्याय २७

श्रम नीति और कार्यक्रम

विषय प्रवेश

पहली पंचवर्षीय योजना को तैयार करते समय इस बात का ध्यान रखा गया था कि देश की अर्थ-व्यवस्था में औद्योगिक श्रम के महत्व को दिनोंदिन अधिक मान्यता मिलती जा रही है। स्वतन्त्रता मिलने के पहले मजदूरों के अधिकारों की काफी अरसे से अवहेलना होती आ रही थी, स्वतन्त्रता के पश्चात उनके उन अधिकारों को स्वीकार ही नहीं किया गया, बल्कि इस दिशा में उन्हें कुछ आश्वासन भी दिए गए। पहली पंचवर्षीय योजना में इन्हीं आश्वासनों को निश्चित रूप देने तथा अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर मजदूरों के साथ न्याय करने की चेष्टा की गई थी।

२. *योजना ने श्रम के क्षेत्र में सफलता पाई है, इस बात के तीन प्रमाण हो सकते हैं*—औद्योगिक सम्बन्धों में सुधार हुआ है जिसका श्रेय मालिकों और मजदूरों दोनों को है, भिन्न-भिन्न स्तरों पर मिल-जुलकर सलाह करने में भी सफलता मिली है, और पिछले पांच वर्षों में मजदूर की असली कमाई में वृद्धि हुई है। मालिकों और मजदूरों में मिलकर सलाह करने और सरकार द्वारा स्थापित औद्योगिक समितियों में अपने-अपने मामलों को सुलझाने की जो इच्छा दीख रही है, वह कुछ दिनों से श्रम सम्बन्धों का एक आशाजनक चिह्न हो गया है। वास्तव में इन पिछले पांच सालों में जो भी विधान तैयार हुआ है उसके अधिकांश पर त्रिदलीय समितियों के पक्षों की मोटे तौर पर सहमति रही है। बोनस और फायदे के बंटवारे के प्रश्न हालांकि अभी संतोषजनक ढंग से सुलझ नहीं सके हैं, फिर भी कतिपय केन्द्रों में इधर जो करार हुए हैं वे निश्चित रूप से इस दिशा में प्रगति के ही चिह्न हैं। कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, १९४८ और कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम, १९५२ के अन्तर्गत दिए गए सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी उपायों को कार्यरूप देने की दिशा में भी प्रगति हुई है। काम से अलग कर दिए जाने पर भी सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम, १९५३ का विधान किया गया है। साथ ही साथ उद्योग न्यायाधिकरण भी भविष्य निधि, उपदान (ग्रेचुइटी) आदि सवालों पर निर्णय देते समय इस सुरक्षा की आवश्यकता को पर्याप्त रूप से ध्यान में रखते हैं। यह भी धीरे-धीरे स्वीकार किया जाने लगा है कि जिन परिस्थितियों में काम किया जाना हो उनमें भी सुधार होना चाहिए। मजदूरों के स्वास्थ्य और सुरक्षा से सम्बन्ध रखने वाले उत्पादनों की समस्याओं का विधिवत अध्ययन करने के लिए एक केन्द्रीय श्रम संस्थान आयोजित किया गया है तथा कुछ उद्योगों की उत्पादकता का अध्ययन किया जाने लगा है। राज्य सरकारों ने कल्याण केन्द्र खोले हैं और पिछले पांच वर्षों से औद्योगिक कामगारों के लिए अच्छे मकानों की व्यवस्था करने की दिशा में काफी बड़े प्रयत्न किए गए हैं। हालांकि वर्तमान मजदूरी को उचित मजदूरी की सीमा तक उठाने और मजदूरों को आवास सुविधाएं प्रदान करने की दिशा में अभी बहुत कुछ करने को बाकी है, तथापि यह प्रगति

धीरे-धीरे ही होगी। बागान श्रम अधिनियम को कार्यरूप दिए जाने से भी बागान मजदूरों की स्थिति में कुछ सुधार अवश्य होगा।

३. पहली पंचवर्षीय योजना में श्रम नीति पर जो भी कहा गया है उसका अधिकांश भविष्य के लिए अच्छे आधार का काम देगा। लेकिन फिर भी समाज के समाजवादी स्वरूप को ध्यान में रखकर, जिसके अनुसार दूसरी पंचवर्षीय योजना का निर्माण किया गया है, श्रम नीति में कुछ आवश्यक सुधार करने ही पड़ेंगे। समाजवादी ढंग के समाज की स्थापना पूर्ण रूप से आर्थिक आधारों पर ही नहीं होती बल्कि समाज सेवा की भावना तथा समाज द्वारा इस तथ्य को मान्यता देने की आकांक्षा भी काफी महत्व रखती है। इस प्रसंग में यह आवश्यक है कि कामगार यह अनुभव करे कि वह एक प्रगतिशील राज्य के निर्माण में सहायता कर रहा है। इस प्रकार समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के पहले औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना आवश्यक हो जाती है।

४. सरकारी क्षेत्र के विस्तार का अर्थ है कि उस क्षेत्र के मजदूर और प्रबन्ध अधिकारी दोनों ही अधिकाधिक बढ़ती हुई जिम्मेदारियां उठाएं और अगर सरकारी क्षेत्र में काम की परिस्थितियां ऐसी हो जाएं कि उसे निजी क्षेत्र में रखना पड़े, तो ऐसे क्षेत्र के प्रशासकों को मजदूरों के हितों के विषय में विशेष रूप से सजग रहना होगा। चाहे सार्वजनिक क्षेत्र हो या निजी, उत्पादन में क्रमिक रूप से वृद्धि करने के लिए अनुशासनहीनता, कामबन्दी और घटिया किस्म के उत्पादन आदि तमाम बातों से बचना होगा और श्रम नीति को इसी दिशा में चालित करना होगा। ऐसी नीति के लिए आवश्यक है कि उसको सिर्फ मालिक और मजदूरों के हितों का ही नहीं बल्कि जनता का भी समर्थन मिले। इसलिए योजना आयोग ने श्रम प्रतिनिधियों का एक मंडल बनाया तथा इस मामले में उसकी सलाह मांगी। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में की गई सिफारिशें मण्डल के सदस्यों के निर्णयों का ही परिणाम हैं।

मजदूर संघ

५. मजदूरों के हितों की रक्षा के लिए और उत्पादन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक मजबूत मजदूर संघ (ट्रेड यूनियन) आन्दोलन का होना जरूरी है। आजकल जितने भी मजदूर संघ हैं, वे मुख्य रूप से अनेक मजदूर संघों के होने, राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता, साधनों की कमी तथा मजदूरों में एकता की कमी की वजह से कमजोर हैं। अक्सर ऐसा सुझाव दिया जाता है कि मजदूर आन्दोलन में जो यह अनुचित प्रतिद्वंद्विता पाई जाती है उसका कारण यह है कि संघों के कर्ता-धर्ता बाहरी लोग बन जाते हैं। इस कथन को जहां बिल्कुल आधारहीन नहीं कहा जा सकता, वहां यह भी मानना पड़ेगा कि इन्हीं बाहरी लोगों ने देश के मजदूर आन्दोलन को बढ़ाने में बड़ा काम किया है। उनके बिना यह आन्दोलन न तो इस स्थिति को पहुंच सकता और न इसमें शक्ति ही आ पाती। इन संघों में काम करने वाले ऐसे बाहरी लोगों के बीच भेद करना आवश्यक हो जाता है जो सारे समय मजदूर संघ में काम करते हैं अथवा जो और बहुत-से कामों में लगे रहकर थोड़े समय मजदूर संघ का भी काम करते हैं। मजदूर संघ संगठनों में पहली श्रेणी के पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं की अब भी आवश्यकता है। इसलिए अगर मजदूर संघ ऐसे व्यक्तियों को अपने कार्यांगों में चुन लेते हैं तो उनके इस अधिकार में हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। फिर भी संघों को यह अनुभव करना ही चाहिए कि किसी ऐसे साधन पर जो कि औद्योगिक मजदूरों की श्रेणी के बाहर हो, आवश्यकता से अधिक निर्भर रहने से मजदूरों की संगठन सामर्थ्य पर अवश्य प्रभाव पड़ता है।

यह बात अपने में बड़ी दिलचस्प है कि इधर कुछ दिनों से मजदूर संघों का प्रबन्ध करने वाले बाहरी लोगों की संख्या घटी है। इस प्रवृत्ति को और अधिक प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है।

६. मजदूर संघों में कर्ता-धर्ताओं के रूप में अगर बाहरी व्यक्तियों की संख्या घटा दी जाए तो बहुत सम्भव है कि मजदूर संघों को संगठन चलाने वाले व्यक्तियों की कमी का सामना करना पड़े। इस दिशा में अगर मजदूरों को आत्मनिर्भर बनना है तो उन्हें संघ से सम्बन्धित सिद्धान्तों और प्रणालियों के विषय में प्रशिक्षित करना आवश्यक हो जाता है। श्रम हितकारी कार्यक्रमों में इस विषय के लिए छात्रवृत्ति देने की एक योजना रखी गई है।

७. संघों को मजबूत बनाने के लिए एक अन्य उपाय यह है कि उनको कुछ शर्तों पर प्रतिनिधि संघों के रूप में मान्यता प्रदान की जाए। कुछ राज्यों में 'औद्योगिक सम्बन्ध संहिता' के अन्तर्गत ऐसे संघ को मान्यता देने की व्यवस्था रखी गई है जिसमें चन्दा देने वाले सदस्यों की संख्या, उन तमाम मजदूरों की संख्या का काफी बड़ा प्रतिशत हो जिनका प्रतिनिधित्व करने का वह संघ दावा करता हो। यह प्रतिशत मजदूर संघ संगठन के विकास के अनुसार विभिन्न राज्यों में अलग-अलग हो सकता है। चूंकि मान्यता प्रदान करने की इस नीति से कुछ राज्यों में मजदूर आन्दोलन सबल हुआ है, इसलिए यह सुझाव दिया जा सकता है कि जिन राज्यों में इस समय ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है वहां अब कर दी जाए। ऐसा करते समय संघ का किसी उद्योग के लिए क्या महत्व है, इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए। साथ ही यह बात भी महत्वपूर्ण है कि जहां सिर्फ संख्या के आधार पर किसी संघ को मान्यता मिल जाएगी, वहां उसके लिए आवश्यक है कि वह प्रभावपूर्ण ढंग से काम करने के लिए किसी भी झगड़े को निबटाने में कोई सीधी कार्रवाई करने के पहले जो भी मान्य ढंग और प्रक्रियाएं हैं उनके अनुसार काम करे।

८. इस अन्दोलन को सबल बनाने का एक अन्य पक्ष यह है कि मजदूर संघ आर्थिक पक्ष को अपने अतिरिक्त स्रोतों द्वारा ही पूर्ण करें। अक्सर होता यहहै कि ये संघ अपनी सदस्यता अधिक से अधिक बढ़ाने की इच्छा से अपना चन्दा बहुत ही कम रखते हैं और अक्सर उसे भी वे इकट्ठा नहीं कर पाते। संघों में सामान्यतः न तो यही होता है कि मजदूर लोग अपना चन्दा नियमित रूप से अदा करें और न यही कि चन्दे की अदायगी न होने के कारण सदस्यता समाप्त कर दी जाए। यह अनुभव किया जाता है कि जब कोई संघ मान्यता प्राप्त संघ के रूप में अपनी रजिस्ट्री कराना चाहे तो उसकी पहली शर्त यह होनी चाहिए कि वह अपने यहां सदस्यता का चन्दा कम से कम चार आने महीना अवश्य रखे। साथ ही बकाया चन्दे की अदायगी के नियमों का भी सख्ती से पालन किया जाना चाहिए।

मालिक संगठन

९. किसी क्षेत्र में औद्योगिक संतुलन बनाए रखने के लिए उस क्षेत्र की मालिक संस्थाओं को प्रमाणित करने की भी व्यवस्था होनी चाहिए। ऐसी संस्थाओं के साथ मिलकर किए गए समझौते संस्था के सभी सदस्यों तथा असदस्यों पर लागू होंगे।

औद्योगिक सम्बन्ध

१०. किसी उद्योग या व्यापारिक काम के विकास के लिए औद्योगिक शांति का होना आवश्यक है। स्पष्ट है कि यह शांति सबसे अच्छे रूप में सब दल मिलकर ही स्थापित कर

सकते हैं। श्रम विधान और उसको लागू करने की व्यवस्था से मालिकों और मजदूरों के मिलकर काम करने के लिए उपयुक्त अवसर प्राप्त होंगे, फिर भी इस बात का सबसे अच्छा हल आपसी समझौते द्वारा ही संभव हो सकता है। अभी हाल ही में इस दिशा में कुछ स्वस्थ बातें देखने में आई हैं और कई बड़े उलझे हुए मामले समझौतों द्वारा तय हुए हैं। बोनस के सवाल को लेकर अहमदाबाद मिल मालिक संघ और कपड़ा मिल श्रम संघ के बीच जून १९५५ में एक करार हुआ। दोनों संघों ने यह भी तय किया है कि भविष्य में अपने सारे झगड़े आपसी समझौतों और बातचीत के द्वारा तथा बिना हड़ताल किए या मुकदमा चलाए तय कर लेंगे। अगर दोनों के बीच कोई समझौता न हो पाए तो उस स्थिति में पंचनिर्णय की भी व्यवस्था की गई है। १९५६ के प्रारम्भ में बम्बई मिल मालिक संघ और राष्ट्रीय मिल मजदूर संघ, बम्बई के बीच बोनस सम्बन्धी एक समझौता हुआ। टाटा लोहा और इस्पात कम्पनी लिमिटेड, जमशेदपुर और उसके मजदूरों का प्रतिनिधित्व करने वाले संघ के बीच भी एक महत्वपूर्ण समझौता हुआ। यह समझौता कई कारणों से ध्यान देने योग्य है, जैसे इस प्रकार के समझौते में सबसे पहली बार संघों की सुरक्षा और अधिक उत्पादकता के उपायों में मजदूरों के सहयोग, आधुनिकीकरण और विस्तार तथा काम के मूल्यांकन की योजनाओं की स्वीकृति के लिए व्यवस्था की गई है। मालिकों ने भी इस बात को मान लिया है कि उद्योग के प्रबन्ध में कर्मचारियों का सहयोग अधिक से अधिक मात्रा में वांछनीय है। हालांकि जो समझौते हुए हैं, उनका सम्बन्ध देश के कुल औद्योगिक श्रमिकों के केवल एक भाग से ही है, फिर भी इस बात को कम महत्वपूर्ण नहीं समझना चाहिए कि उनके प्रभाव से ही अच्छे औद्योगिक सम्बन्धों का रास्ता खुला है।

११. किसी भी औद्योगिक दृष्टि से विकसित समस्या में कामबन्दी का बेजा तौर पर प्रचार किया जाता है तथा औद्योगिक अशांति को भी जनता के सामने बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया जाता है। इस प्रकार के प्रचार के परिणामों को विफल करने के लिए यह आवश्यक है कि उन बातों का अध्ययन किया जाए जिनके कारण उन औद्योगिक प्रतिष्ठानों में शान्तिपूर्ण काम करने की एक लम्बी परम्परा चली आती रही है जहां मालिकों-मजदूरों के मेल-जोल से काम हुआ है। इस सम्बन्ध में देश के कुछ प्रतिष्ठानों में अध्ययन किया जा रहा है। जहां इन अध्येताओं की जिम्मेदारी यह है कि वे श्रम सम्बन्धों के रचनात्मक पक्षों का प्रचार करें, वहां यह भी आवश्यक है कि जिन क्षेत्रों में अक्सर औद्योगिक झगड़े होते हों वे उनका भी अध्ययन प्रस्तुत करें ताकि सम्बद्ध दल विरोधी परिस्थितियों को देखकर अपने-अपने बारे में अनुमान लगा सकें।

१२. औद्योगिक शांति की स्थापना के लिए रोक-थाम के उपायों की भी आवश्यकता होती है। सबसे ज्यादा जोर इस बात पर दिया जाना चाहिए कि किसी भी स्थिति में, यहां तक कि सुलह सम्बन्धी आपसी बातचीत की आखिरी अवस्था में भी झगड़े से बचा जाए। बातचीत द्वारा झगड़े को निपटाने का तरीका जिन देशों में भारत से ज्यादा सफल रहा है, वहां समझौते कराने वाले व्यक्ति झगड़े न होने की स्थिति में भी मजदूर संघों के नेताओं और मालिकों के साथ सम्पर्क रखते हैं तथा ऐसे मसलों के बारे में बातचीत करते हैं जिन पर भविष्य में झगड़ा होने की आशंका होती है। इस बातचीत का असर ऐसे झगड़े बचाने में काफी पड़ता है और हमें अपने देश में इसको आरम्भ करना चाहिए।

१३. झगड़े होने की स्थिति में उन्हें निपटाने के लिए आपसी बातचीत अथवा पंचनिर्णय का सहारा लेना चाहिए। केन्द्र और राज्य सरकारों को चाहिए कि इस प्रकार की व्यवस्थाएं

सुगम बनाने के लिए वे आवश्यक तन्त्र की स्थापना करें। सरकार को ऐसे लोगों की सूची रखनी चाहिए जिन पर मजदूरों का विश्वास हो। आवश्यकता पड़ने पर दलों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे लोग निर्णय कराने के लिए इसी सूची में से पंचों को चुन लें, फिर भी कठिन परिस्थितियों में जहां इन तरीकों से काम न चले, सरकार को अवश्य ही दखल देना चाहिए। झगड़े निपटाने के लिए १९५० में जो व्यवस्था थी वह बहुत पेचीदा थी। इस दिशा में औद्योगिक विवाद अधिनियम में प्रस्तावित संशोधन द्वारा मजदूरों के कानूनी हितों की रक्षा का ध्यान रखते हुए (क) अधिनिर्णयन की प्रक्रिया को सरल बनाने, (ख) श्रम अपील न्यायाधिकरण हटाने, तथा (ग) औद्योगिक विवाद अधिनियम के अनुभाग ३३ को लागू कर विभिन्न दलों द्वारा अनुभव की गई कठिनाइयों को मजदूरों के उचित हितों का ध्यान रखकर दूर करने की कार्रवाई एक उचित कदम है।

१४. श्रमिकों और मालिकों के बीच झगड़े का एक कारण पंचाटों और समझौतों की बातों का काफी तौर पर पूरा न किया जाना अथवा लागू न किया जाना भी है। कुछ उदाहरण तो ऐसे हैं जहां सरकार के जोर देने पर भी पंचाटों को कार्यान्वित नहीं किया गया। पंचाटों में दी गई बातों को लागू करवाने के लिए कोई भी व्यवस्था नहीं है, सिर्फ कर्मचारी को बहाल करने तथा सुविधा देने की व्यवस्था है। इन स्थितियों में मालिक के खिलाफ औद्योगिक विवाद अधिनियम, १९४७ के अधीन मुकदमा चलाना ही एकमात्र उपाय रह जाता है, परन्तु उसमें भी अधिक से अधिक २०० रुपए पहली बार अपराध करने पर और ५०० रुपए बाद में अपराध करने पर जुर्माना किया जाता है। अनुभव से यह ज्ञात हुआ है कि मालिकों से उन व्यवस्थाओं को लागू कराने के लिए जिन पर खर्च बहुत आता हो, यह सजा काफी नहीं है। मजदूरों के लिए भी सजाएं इतनी सख्त होनी चाहिएं कि नियमों को जान-बूझकर तोड़ने की उनकी हिम्मत न हो।

१५. वैसे पंचाट के निर्णयों को लागू करने की जिम्मेदारी तो मालिक (निजी या सरकार) की ही होनी चाहिए, पर साथ ही परिपालन के लिए जिम्मेदार एक न्यायाधिकरण भी होना चाहिए और दलों की पहुंच इस न्यायाधिकरण तक सीधे होनी चाहिए। न्यायाधिकरण को पंचाट के निर्णयों का अर्थ लगाने तथा अधिकार क्षेत्र स्थिर करने का भी अधिकार होना चाहिए। अगर कोई ऐसा निर्णय पाया जाए जो वित्त की दृष्टि से लागू न किया जा सकता हो तो न्यायाधिकरण को अधिकार होना चाहिए कि वह सरकार या किसी निर्दिष्ट कार्यकारी अधिकारी से एक नियत समय के भीतर कोई निश्चित कार्रवाई करा ले।

१६. औद्योगिक झगड़े कम करने का एक और तरीका यह भी है कि एक संयुक्त परामर्शी तन्त्र की स्थापना की जाए। केन्द्र, राज्य अथवा अलग-अलग यूनिटों में हर स्तर पर इस प्रकार के तन्त्र होने आवश्यक हैं। अगर उच्च स्तर पर कार्य करने वाले द्विदलीय परामर्शी तन्त्र और यूनिट स्तर पर काम करने वाले तन्त्र में सहयोग से काम हो तो इससे मजदूरों और मालिकों के बीच सहयोग अधिक कारगर साबित हो सकता है। यूनिटों में कार्य समितियां इसी हैसियत से काम कर सकती हैं। इन समितियों को उच्च स्तर पर हुए करारों को कार्यरूप देने के अलावा, इन को पूरा करने के सम्बन्ध में उठने वाली व्यावहारिक समस्याओं के हल ढूंढ़ने चाहिएं, ताकि ये समस्याएं परामर्शी तन्त्र द्वारा सुलझाई जा सकें। इस क्षेत्र में अनुभव से पता चला है कि कार्य समितियों के काम करने में सबसे बड़ी बाधा उनकी और उस क्षेत्र में क्रियाशील

मजदूर संघों की जिम्मेदारियों का स्पष्ट न होना है। प्रतिनिधि संघों को चाहिए कि वे मजदूरी, भत्ते या नौकरी की शर्तों सम्बन्धी मामलों या ऐसे झगड़ों के विषय में जो आपस में बातचीत करके सुलझाने लायक हों, मालिकों से सीधे व्यवहार करें। कार्य समितियां जहां तक अनुमान है किसी उद्यम सम्बन्धी मानवीय अथवा टेकनीकल सवाल तथा व्यापारिक काम के सामान्य हितों की पूर्ति के लिए उचित उपायों सम्बन्धी सवालों को बड़ी अच्छी तरह निपटा सकती है। इससे हो सकता है कि दोनों की कार्य प्रणाली सुधरे। बड़ी यूनिटों में इस प्रकार की व्यवस्था कारखानों में करना जरूरी होगा। अगर दल सहमत हों तो कार्य समितियों को करारों, पंचाटों और दिए गए आदेशों के उचित रूप से लागू करने तथा उनका अर्थ करने का अधिकार दिया जा सकता है। फिर भी किसी संघ को अधिकार होना चाहिए कि जिन मामलों में वह उचित समझे वहां उनके विषय में कार्य समितियों के साथ बातचीत की किसी भी अवस्था में वह यह मांग कर सकता है कि मामला संघ और मालिक के बीच समझौते के लिए छोड़ दिया जाए।

१७. वर्तमान द्विदलीय संयुक्त परामर्शी तंत्र, अर्थात संयुक्त परामर्शी बोर्ड का इससे भी अधिक अच्छा उपयोग हो सकता है। इस बोर्ड को सीमित सफलता प्राप्त हो भी चुकी है। हालांकि इसकी विशिष्ट उपलब्धियां चमत्कारपूर्ण तो नहीं हुई, तथापि इसने आपसी बातचीत और समझौते के लिए अच्छी पृष्ठभूमि तैयार कर दी है। अब भविष्य में इसकी क्षमता की परख यही होगी कि वह जटिल मामलों को आपसी समझौते के आधार पर कहां तक निपटा पाता है। बोर्ड अपने क्रिया-कलाप को और गहन बनाना चाहता है, इसके लिए यह महत्वपूर्ण समस्याओं का अध्ययन करना, अधिक सभाएं करना तथा आपसदारी की भावना से समझौते कराने के उद्देश्य से सवालों पर बातचीत करना चाहता है। आशा है कि इनसे प्रत्येक स्तर पर सहयोग के लिए वातावरण तैयार होगा।

१८. योजना को सफल रूप से कार्यान्वित करने के लिए यह आवश्यक है कि मजदूरों और प्रबन्धकों में अधिक साहचर्य हो। इस उपाय द्वारा (क) उद्योग, कर्मचारियों और समाज सबके सामान्य लाभ के लिए उत्पादकता बढ़ाने, (ख) कर्मचारियों को उद्योग चालन और उत्पादन की प्रक्रिया में उनकी जिम्मेदारी का अधिक से अधिक ज्ञान कराने, (ग) मजदूरों को अपनी बात कहने देने की इच्छा को पूरी करने और इससे औद्योगिक शान्ति, अच्छे सम्बन्ध तथा अधिक सहयोग पैदा करने में सहायता मिलेगी। इस उद्देश्य की प्राप्ति प्रबन्धकों, टेकनीकल व्यक्तियों और कामगारों के प्रतिनिधियों की प्रबन्ध परिषदें बनाने से हो सकती है। इस विषय में प्रबन्धकों की यह जिम्मेदारी होगी कि वह प्रबन्ध परिषद को प्रभावकारी ढंग पर कार्य करने योग्य बनाने में सहायक आवश्यक सूचना के बारे में उचित और सही विवरण प्रदान करें। प्रबन्ध परिषद को यह अधिकार होना चाहिए कि वह प्रतिष्ठान सम्बन्धी मामलों पर विचार करे और उनको अच्छे ढंग पर चलाने के लिए उपाय बताए। जो मामले सामूहिक सौदेबाजी के अन्तर्गत आते हैं, उन पर परिषद को अवश्य ही विचार न करने दिया जाना चाहिए। शुरू में संगठित उद्योगों के बड़े-बड़े प्रतिष्ठानों में ऐसे प्रस्तावों पर प्रयोग किया जाना चाहिए। इस दिशा में उन्नति नियंत्रित रूप से होनी चाहिए और इस योजना में कोई भी विस्तार, प्राप्त होने वाले अनुभव के ही आधार पर किया जाना चाहिए।

१९. भविष्य में सार्वजनिक क्षेत्र का दिनोंदिन विकास होगा, इस तथ्य को देखते हुए इस क्षेत्र के चालू कामों की सफलता और मजदूरों की उमंगों की पूर्ति की दृष्टि से इस क्षेत्र में औद्योगिक सम्बन्धों के प्रशासन का बड़ा महत्व है। इसलिए सरकारी क्षेत्र का कोई कर्मचारी

यदि इस बहाने से अपनी जिम्मेदारियों से बचना चाहता है कि वह लाभ के उद्देश्य से काम नहीं कर रहा, तो उसकी इस प्रवृत्ति को बढ़ावा नहीं दिया जाना चाहिए। सरकारी कामों के प्रबन्धकों को सामान्यत: श्रम नियमों से न तो छूट मांगनी चाहिए और न ऐसी अन्य रियायतें ही मांगनी चाहिएं जो निजी क्षेत्र में न मिलती हों। इसका तात्पर्य ऐसा कोई सुझाव देना नहीं है कि सरकारी क्षेत्र के उद्योगों के लोग ही सबसे पहले श्रम सम्बन्धी नियमों से छूट मांगने के लिए आगे आते हैं या उनकी काम की हालतें सन्तोषजनक नहीं हैं। वास्तव में सभी नए राज्य उद्यमों में मजदूरों के हित पर गहन रूप से ध्यान दिया गया है। अन्त में सरकारी क्षेत्र के कर्मचारियों को कम से कम निजी क्षेत्र के कर्मचारियों के समकक्ष तो होना ही चाहिए और उन्हें अपने उत्पादन पर तथा सरकारी क्षेत्र के कर्मचारी होने पर न्यायोचित गर्व होना चाहिए।

अनुशासन

२०. समाजवादी ढंग के समाज की सबसे पहली मांग यह है कि कामगारों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति सुधारने की मांग को मान्यता दी जाए। बदले में कामगारों को भी अपनी जिम्मेदारियां महसूस करनी चाहिएं। वास्तव में समाज के आगे जो उद्देश्य है उसकी पूर्ति के लिए एक ओर योग्यतापूर्वक और परिश्रमपूर्वक काम करने की और दूसरी ओर अनुशासनहीनता से बचने की आवश्यकता है। यह सम्भव है कि कभी-कभी मजदूरों के बीच पैदा होने वाली अनुशासन-हीनता के पीछे उपयुक्त कारण हों। पीछे जो सुझाव दिए गए हैं उनके द्वारा श्रमिकों और प्रबन्धकों के बीच संघर्ष का क्षेत्र कम करने में सहायता मिलेगी। यह सही है कि प्रबन्धकों और मजदूरों के बीच कठोर अनुशासन किसी विधान के द्वारा लादना उपयुक्त नहीं कहा जा सकता और यह अनुशासन मालिकों और मजदूरों के संगठनों को अपने आप ही उपयुक्त नियन्त्रण लगाकर पैदा करना पड़ेगा। परन्तु फिर भी अगर समस्त मजदूरों में अनुशासनहीनता फैल जाए तो उस स्थिति के लिए वैधानिक या उसी प्रकार का कुछ उपाय सोचा ही जाना चाहिए। यह बात सही है कि पिछले सालों में औद्योगिक हड़तालों द्वारा उत्पादन में होने वाले नुक्सानों में कुछ कमी हुई है परन्तु यह भी सही है कि गैर-कानूनी हड़तालों या ताला-बन्दियों के लिए दण्ड देने की व्यवस्थाएं भी अपर्याप्त साबित हुई हैं। "धीरे काम करो", "कलम न उठाओ" और "केवल हाजिरी देते रहो" जैसी हड़तालों के उदाहरण देखने में आए हैं जो अर्थ-व्यवस्था के व्यापक हित में अनदेखे न रह जाने चाहिएं। मालिकों और कामगारों के दृष्टिकोण से ये परिस्थितियां गम्भीर हैं। मालिकों के उत्पादन की हानि होती है, परन्तु कामगार के लिए कार्य सामर्थ्य ही उसकी सम्पत्ति है, इसलिए उसे इस सामर्थ्य को घटाने वाली किसी भी प्रवृत्ति से अपने को बचाना चाहिए। पिछले दिनों में कुछ उद्योगों में हिंसा और अनुशासनहीनता की शिकायतें आई हैं। यहां यह आवश्यक है कि औद्योगिक अनुशासन के समस्त प्रश्न को उसके विभिन्न पहलुओं सहित देखा जाए और इस बीच दलों को एक-दूसरे के हित में यह चाहिए कि शासनहीनता पैदा करने वाली सभी प्रवृत्तियों को सख्ती से रोका जाए।

मजदूरी

२१. मजदूरी की एक ऐसी नीति बनाने की आवश्यकता है जिसका उद्देश्य वास्तव में मजदूरी बढ़ाना हो। जहां कामगारों के उचित मजदूरी के अधिकार को मान्यता दी जाती है, वहां उसकी कोई मात्रा नियत करना भी मुश्किल रहा है। इस दिशा में औद्योगिक न्यायाधिकरण

अधिक से अधिक प्रयत्नों के बाद भी कोई उपयुक्त उपाय ढूंढ़ पाने में असमर्थ रहे है। उचित मजदूरी के सिद्धान्त को भली प्रकार कार्यान्वित करने में एक बड़ी कठिनाई यह रही है कि सीमान्त यूनिटें मजदूरी का ढांचा नियत करने में ढिलाई से काम लेती रही हैं। जहां तक उचित मजदूरी की दिशा में प्रगति करने का सवाल है, किसी केन्द्र की औसत यूनिटों की आर्थिक स्थिति के आधार पर ही मजदूरी नियत की जानी चाहिए, परन्तु आयोजन के सन्दर्भ में सीमान्त यूनिटों को बन्द कर देने का, जिसका बेरोजगारी पर प्रभाव बहुत महत्व रखता है, अर्थ यह होता है कि सीमान्त यूनिटों के काम में भी सुधार किए जाने की आवश्यकता है। इन यूनिटों को और अधिक दृढ़ बनाने का एक उपाय यह है कि विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सम्भव हो तो उनकी इच्छा से और अगर आवश्यक हो तो जबर्दस्ती बड़ी यूनिटों में मिला दिया जाए। सीमान्त यूनिटें किस प्रकार काम करती हैं, इस बारे में कोई सामग्री भी प्राप्त नहीं है। कोई यूनिट विशेष सीमान्त श्रेणी के अन्तर्गत आती है या नहीं, यह निश्चय करने के लिए व्यापक रूप से सर्वेक्षण किया जाना चाहिए। यह निश्चित कर दिए जाने पर भी कि कोई यूनिट विशेष सीमान्त यूनिटों की श्रेणी में आती है उसको बड़ी यूनिटों के साथ मिलाने में बड़ी कठिनाइयां आएंगी, परन्तु उनका सामना तो करना ही पड़ेगा।

२२. उत्पादन में वृद्धि होने से ही मजदूरी में वृद्धि हो सकती है, लेकिन उत्पादन बढ़ाने का अर्थ आवश्यक रूप से यह नहीं है कि उसके लिए नई मशीनें आदि लगाई जाएं या मजदूर लोग और अधिक परिश्रम करें। संयंत्रों की अच्छी व्यवस्था से काम करने की परिस्थितियों में सुधार तथा कामगारों के प्रशिक्षण इत्यादि उपायों से उत्पादन बढ़ेगा, लेकिन साथ में यह जरूरी न होगा कि कामगारों को उसी हिसाब से अधिक मेहनत भी करनी पड़े। कभी-कभी तो ऐसा हो सकता है कि इन उपायों से उत्पादन भी बढ़े और परिश्रम भी कम लगे। दूसरा उपाय यह हो सकता है कि उत्पादन के अनुसार लोगों को अदायगी की जाए। जहां यह नियम लागू न हो वहां इसे लागू किया जा सकता है। परन्तु इसमें कामगारों की सुरक्षा के लिए काफी कदम उठाने पड़ेंगे, जैसे कि कम से कम मजदूरी कितनी हो, थकान के लिए व्यवस्था तथा बेजा तौर पर उत्पादन की गति न बढ़ाने देना आदि बातें तो होनी ही चाहिएं, कम से कम मजदूरी से ऊपर जो कुछ दिया जाए वह उत्पादन के अनुसार होना चाहिए। परिणामों के आधार पर अदायगी स्थिर करने की कोई प्रणाली लागू करने में कामगारों का भी परामर्श लेना चाहिए। साथ ही इस विषय में भी अध्ययन करना चाहिए कि उत्पादन के वर्तमान स्तर पर मजदूरी बढ़ाने की कोई संभावना है या नहीं, खासकर जब यह दावा किया जाता है कि इन दिनों औद्योगिक प्रतिष्ठानों में मजदूरों की संख्या बढ़ाए बिना उत्पादन में वृद्धि हुई है।

२३. मजदूरी नीति के दो पहलू और हैं। उन पर भी विचार कर लिया जाना चाहिए। पहला है समाज की भावी व्यवस्था में कामगारों की आशाओं के अनुरूप मजदूरी देने के सिद्धांतों का निर्माण, और दूसरा है अन्तरिम काल में मजदूरी के झगड़ों का निपटारा। पहले के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि एक मजदूरी आयोग बनाया जाए जो तत्सम्बन्धी सामग्री पर विचार करे तथा बताए गए सामाजिक लक्ष्यों का ध्यान रखते हुए मजदूरी, लाभ और मूल्य, इन तीनों के अलग-अलग महत्व निर्धारित करने के लिए उपयुक्त सिद्धान्त स्थिर करे। यहां यह बात स्वीकार करनी होगी कि अगर इस प्रकार का आयोग इसी समय बनाया जाता है तो उसको सामग्री के अभाव में काफी कठिनाई होगी और अपर्याप्त सामग्री के आधार पर वह जो भी निष्कर्ष

निकालेगा, उन पर कोई भी दीर्घकालिक नीति आधारित नहीं हो सकती। इसलिए मजदूरी का तख्मीना करने के लिए तुरन्त ही प्रयत्न किए जाने चाहिएं।

२४. इन दिनों देश में मजदूरी के दो भाग हैं, एक तो है मूल वेतन, और दूसरा है महंगाई भत्ता। महंगाई भत्ते मुख्यतया भिन्न-भिन्न औद्योगिक केन्द्रों के जीवनयापन सम्बन्धी देशनांकों के आधार पर हैं। इन देशनांकों के भी आधार एक समान नहीं हैं। कुछ तो अब से २०-२५ साल पहले इकट्ठे किए गए प्राथमिक आंकड़ों के सहारे निकाले गए थे और आज के कामगारों की व्यय प्रवृत्तियों के सच्चे द्योतक नहीं हैं। मजदूरी आयोग को जो एक जरूरी सवाल सुलझाना पड़ेगा वह है मजदूर संघों की यह मांग की महंगाई भत्ते का एक भाग मूल वेतन में मिला दिया जाए। इस प्रकार भत्ता मिलाने के सवाल पर सिर्फ सिफारिशें कर देना ही वैज्ञानिक न होगा जब तक कि भिन्न-भिन्न स्थानों के जीवनयापन के देशनांक किसी एक समान आधार पर नहीं निश्चित किए जाते। इसलिए मजदूरी का तख्मीना लगाने के साथ ही साथ भिन्न-भिन्न केन्द्रों में जीवन-यापन सम्बन्धी देशनांक को दुहराने के लिए भी जांच कर ली जानी चाहिए।

२५. औद्योगिक झगड़ों को देखा जाए तो स्पष्ट हो जाएगा कि मजदूरी और उससे सम्बन्धित मामले ही मालिक और मजदूरों के बीच झगड़े की मुख्य जड़ रहे हैं। इन झगड़ों को निपटाने के लिए इन दिनों जो तन्त्र, अर्थात औद्योगिक न्यायाधिकरण हैं, उनका काम पक्षों को पूरा सन्तोष देने वाला नहीं रहा है। इस प्रकार के झगड़े निपटाने में केवल वही तन्त्र अधिक ग्राह्य होगा जिसमें सम्बद्ध पक्ष स्वयं ही झगड़ा निपटाने में अधिक से अधिक योग दें। इसके लिए अगर एक त्रिदलीय बोर्ड बनाया जाए जिसमें मालिकों और मजदूरों के बराबर-बराबर प्रतिनिधि हों तथा एक तटस्थ अध्यक्ष हो, तो उसके निर्णय कदाचित अधिक ग्राह्य हो सकेंगे। विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग उद्योगों के लिए इस प्रकार के बोर्डों की स्थापना की जानी चाहिए।

२६. जहां तक बोनस और लाभ के बंटवारे का सवाल है, इस बारे में सब दलों के लिए कोई भी स्वीकार्य व्यवस्था करने के लिए पहले इस समस्या का और अधिक अध्ययन किए जाने की जरूरत है। इस बीच औद्योगिक झगड़ों को सुलझाने के लिए वही तन्त्र काम में लाना चाहिए जो इन दिनों काम में लाया जा रहा है।

सामाजिक सुरक्षा

२७. पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में जो कर्मचारी भविष्य निधि योजना वैधानिक आधार पर लागू की गई थी, अब उसका विस्तार ऐसे उन सभी उद्योगों और वाणिज्य प्रतिष्ठानों तक कर दिया जाना चाहिए जिनके कर्मचारियों की संख्या देश भर में १०,००० या उससे अधिक हो। उसमें अंशदानों की मात्रा ६$\frac{१}{४}$ प्रतिशत से बढ़ाकर ८$\frac{१}{३}$ प्रतिशत कर देने के प्रश्न पर और आगे विचार किया जाना चाहिए। आवश्यकता तो इस बारे में भी विचार करने की है कि भविष्य निधि के रूप में जो कुछ वर्तमान स्थिति में दिया जा रहा है उसको पेन्शन के रूप में बदल दिया जाए। कामगारों के परिवारों को कर्मचारी राज्य बीमा योजना के अन्तर्गत चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं प्रदान करने के बारे में एक प्रस्ताव पर विचार किया जा रहा है। यह भी विचार किया जा रहा है कि इस योजना को और अधिक बढ़ाया जाए और सम्भावना तो इस बात की भी ढूंढी जा रही है कि इन दिनों अलग-अलग ढंग से जो सुविधाएं दी जा रही हैं उनको एक संगठित सामाजिक सुरक्षा योजना में सम्बद्ध कर दिया जाए। इस दिशा में संगठित

योजना का अर्थ होगा कि प्रति व्यक्ति लागत में कमी आएगी और इस प्रकार जो बचत होगी उससे अन्य प्रकार की सुविधाएं दी जा सकेंगी। इस प्रकार की संगठित योजना के प्रशासन को अगर विकेन्द्रित कर दिया जाएगा तो इससे भी लोगों को फायदा ही होगा। अगर संभव हो तो औद्योगिक दुर्घटनाओं के फलस्वरूप असमर्थ हुए कामगारों को कोई दूसरा काम दे दिया जाए।

वैज्ञानिकन

२८. पहली पंचवर्षीय योजना में वैज्ञानिकन बढ़ाने की सुविधा देने के लिए कई सिद्धान्त दिए गए थे। ये सिद्धान्त मालिकों और मजदूरों के प्रतिनिधियों के बीच मिलकर तय किए गए थे। जहां भी वैज्ञानिकन का प्रश्न हो, इन सिद्धान्तों को अक्षरशः उसी भावना के साथ जिससे ये बनाए गए थे लागू किया जाना चाहिए। इस बात पर जोर देना इसलिए जरूरी है कि प्रयत्न बातचीत में पाया गया है कि मालिक और मजदूर इन सिद्धान्तों को भूल बैठते हैं। औद्योगिक न्यायाधिकरणों का भी ध्यान सहमत बातों के आधार पर ही अपने निर्णय देने की ओर दिलाया जाना चाहिए। अगर पक्षों के बीच सहमत सिद्धान्तों का उचित ध्यान न रखा जाए तो उनको वैधानिक रूप देने के प्रश्न पर भी विचार किया जा सकता है। बढ़ती हुई बेरोजगारी को देखते हुए कामगारों के दिमाग पर वैज्ञानिकन का उलटा ही असर पड़ता है। इतना होने पर उत्पादन की वर्तमान टेकनीकों को चिरस्थायी बना देना विकासशील अर्थ-व्यवस्था के अधिक व्यापक हितों के विरुद्ध है। इसलिए वैज्ञानिकन की चेष्टा तभी की जानी चाहिए जब बेरोजगारी बढ़ने का डर न हो, मजदूरों की राय भी उसके पक्ष में हो और अगर इसे लागू किया जाए तो पहले कामगारों की कार्य करने की स्थितियों में सुधार किया जा चुका हो तथा लाभ का एक महत्वपूर्ण अंश उनको मिलने की गारंटी दी जा चुकी हो।

२९. वैज्ञानिकन के बारे में एक व्यापक नीति दरअसल दलों के साथ मिलकर सहमत बातों पर ही आधारित होनी चाहिए। परन्तु इसके अलावा वैज्ञानिकन के झगड़ों के निपटाने में जो कठिनाइयां आई हैं, वे वास्तव में ब्योरों के बारे में असहमति होने से ही पैदा हुई हैं। कानपुर कपड़ा मिल विवाद में हाल ही में जो उत्पादन हानि हुई है वह इसी का परिणाम है। वैज्ञानिकन के सिद्धान्त को तो सभी मानते हैं, लेकिन यूनिटों के स्तर पर अन्य बातों के अतिरिक्त नीचे दिए ब्योरों के बारे में समझौता होने में ही कठिनाइयां उठती हैं, जैसे (क) काम का भार नियत करना, (ख) काम का भार बढ़ जाने से मजदूरी कितनी बढ़ाई जाए, (ग) मशीनें आदि किस सीमा तक पुरानी हो गई हैं और उनकी जगह नई मशीनें लगाना, (घ) नई मशीनें लगाने पर कठोर रूप का नियन्त्रण करना, और (ङ) छंटनी किए गए कामगारों को रखे रहना और उनके लिए दूसरा काम ढूंढना। इन कठिनाइयों को सम्बद्ध पक्ष ही स्वतन्त्र विशेषज्ञों द्वारा टेकनीकल परीक्षा कराने के बाद स्वयं सुलझा सकते हैं। इनके अलावा वैज्ञानिकन की समस्या से सम्बद्ध कुछ विशेष समस्याएं और रह जाएंगी जिनका असर एक से अधिक राज्यों पर पड़ सकता है। इन्हें सुलझाने के लिए केन्द्र सरकार द्वारा एक उच्चाधिकार सम्पन्न अधिकारी का नियुक्त किया जाना आवश्यक है।

३०. निर्माण, उद्योग और परिवहन सेवाओं में कार्य करने की स्थितियों के नियमन के लिए विधान बनाया जाना चाहिए। जहां तक कारखानों और वाणिज्य प्रतिष्ठानों का प्रश्न है, राज्य अपने-अपने विधान बनाएंगे। अन्य राज्यों में ऐसे कामगारों की कार्य करने की स्थितियों का नियमन भी किया जाना चाहिए।

३१. मैंगनीज़ उद्योग के लिए कोयला और अभ्रक कल्याण निधि की तरह एक कल्याण निधि खोली जानी चाहिए। अगर इस निधि के लिए उपकर लगाया जाना हो तो यह उपकर केन्द्रीय सरकार को लगाना चाहिए। लेकिन अगर यह उद्योग सिर्फ एक ही राज्य की सीमा में हो तो वह राज्य इस सम्बन्ध में आवश्यक कार्रवाई कर सकता है। इस निधि से कल्याण सम्बन्धी और अच्छी सुविधाएं देने तथा किफायतशारी दोनों दृष्टियों से जहां भी संभव हो सके इस निधि के प्रशासन को एकीकृत करना आवश्यक है। कल्याण सम्बन्धी सुविधाएं देना मालिक की जिम्मेदारी है और जहां तक हो सके यह कार्य ऐसी स्थानीय समितियों की सहायता से किया जाना चाहिए जिसमें कामगारों को प्रतिनिधित्व मिला हो। छोटे प्रतिष्ठानों की बात और है जहां सुविधाएं संयुक्त रूप में दी जा सकती हैं। ये कल्याण केन्द्र काफी संख्या में खोले जाने चाहिएं और साथ ही विभिन्न स्तरों पर कल्याण कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने की काफी व्यवस्था भी होनी चाहिए। राज्य सरकारों की योजनाओं में इस हेतु व्यवस्थाएं की गई हैं।

३२. मजदूरों में कुछ ऐसे समूह हैं जिनकी अपनी अजीब समस्याओं की वजह से उनके साथ खास तौर पर व्यवहार करना होगा। इस तरह के तीन समूह हैं: ठेके के मजदूर, कृषि मजदूर और स्त्री मजदूर। कुछ के बारे में तो काफी ध्यान आकर्षित हो चुका है। इन समूहों को उनके लिए जरूरी सहायता देने के लिए नीचे दिए कदम उठाए जाने जरूरी हैं:

ठेके के मजदूर

३३. ठेके के मजदूरों की प्रमुख समस्याएं हैं उनके काम की हालतों को सुधारना और उनके लिए बराबर नौकरी का प्रबन्ध करना। इसके लिए जरूरी है कि —

(क) इस बात का अध्ययन किया जाए कि भिन्न-भिन्न उद्योगों में यह समस्या किस हद तक है।

(ख) देखा जाए कि कहां ठेके की मजदूरी मिटाई जा सकती है। यह काम तुरन्त किया जा सकता है।

(ग) ऐसे मामले निश्चित किए जाएं जहां मजदूरी देने, काम करने की उचित हालतें पैदा करने इत्यादि की जिम्मेदारी ठेकेदार के अलावा प्रमुख मालिक पर छोड़ी जा सकती है।

(घ) जहां भी अध्ययन से सम्भव दीखे, धीरे-धीरे ठेके की पद्धति हटाई जाए। सावधानी यह बरती जाए कि हटाए गए श्रमिकों को कोई दूसरा काम मिल जाए।

(ङ) प्रमुख मालिकों के जो कामगार हैं, उनके जैसी ही काम की हालतें और संरक्षण ठेके के मजदूरों को भी प्राप्त हों।

(च) जहां भी सम्भव हो श्रम से आकस्मिकता का अंश हटाने की योजना बनाई जाए।

खेतिहर मजदूर

३४. खेतिहर मजदूरों से सम्बद्ध अध्याय में कृषि श्रम की समस्याओं पर विचार किया जा चुका है। जैसा कि उस अध्याय में स्पष्ट किया गया है, लोगों के रहन-सहन का दर्जा उठाने के लिए जो भी योजना बनाई जाएगी उसमें इस समूह पर विशेष रूप से तथा तुरन्त ही ध्यान देना पड़ेगा।

पहली पंचवर्षीय योजना में न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अन्तर्गत कम से कम मजदूरी निश्चित करने की चेष्टा की गई थी ताकि उनकी कम से कम जरूरतें तो पूरी हो ही सकें। हालांकि इस दिशा में अभी थोड़ी ही सफलता मिली है, फिर भी इस अधिनियम को लागू करने में कई कठिनाइयां प्रकाश में आई हैं। कृषि मजदूरों के लिए मजदूरी की सिर्फ एक समान दर निश्चित कर देना एक तो व्यावहारिक नहीं है, दूसरे उसका कोई प्रभाव भी न पड़ेगा। हर इलाके में कृषि सम्बन्धी परिस्थितियां अलग-अलग हैं और एक इलाके के लिए निश्चित की गई मजदूरी की दर दूसरे इलाके में लागू भी नहीं की जा सकती। इस प्रकार हर स्थिति में न्यूनतम मात्रा निश्चित करना ही एक बड़ी समस्या हो जाती है।

३५. अब तक मजदूरी नियत करने की जो भी कोशिश हुई है वह सिर्फ तदर्थ रूप में ही, क्योंकि एक निश्चित अवधि के बाद बार-बार इसके जो आंकड़े इकट्ठे किए जाने चाहिएं वे थे ही नहीं। यदि ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता मूल्यों के देशनांक इकट्ठे न किए गए तो भय है कि कृषि श्रम जांच समिति ने जो महत्वपूर्ण काम किया है वह कहीं निरर्थक न हो जाए। इसके लिए पहली पंचवर्षीय योजना में जो योजना रखी गई थी उस पर काफी काम नहीं हुआ है और जरूरी है कि मेहनत के साथ उसे पूरा किया जाए। वस्तुतः न्यूनतम मजदूरी नियत करने का काम बहुत बड़ा है और उतना ही बड़ा काम समय-समय पर अधिनियम के अनुसार इन मजदूरियों में संशोधन करने का भी है।

३६. न्यूनतम मजदूरी निश्चित हो जाने पर उसको प्रभावपूर्ण ढंग से लागू करने की भी समस्या है। कृषि श्रमिकों में संगठनों की कमी होने तथा वर्तमान आर्थिक स्थितियों की वजह से कृषि मजदूर इस निश्चित मजदूरी को लागू कराने में कोई प्रभावपूर्ण जोर नहीं डाल सकते। इसलिए निरीक्षण व्यवस्था पर ही भरोसा करना पड़ता है और इस प्रकार की व्यवस्था का खर्च इतना अधिक होता है कि उसका रखना मुश्किल हो जाएगा।

३७. इस प्रकार कृषि मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी निश्चित करना आसान काम नहीं रह जाता। जहां एक ओर यह आवश्यक है कि न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने के विभिन्न राज्यों के प्रयत्नों में किसी प्रकार की ढील नहीं आनी चाहिए बल्कि इस विषय में और गहन उपाय किए जाने चाहिएं, वहां यह भी मानना पड़ेगा कि इस सबसे एक सीमित सफलता ही मिल सकेगी। कृषि मजदूर जांच से ज्ञात हुआ है कि जनसंख्या के इस वर्ग में बेरोजगारी और गरीबी की बड़ी भारी समस्या है। इनके रहन-सहन के स्तर का नीचा होना कम मजदूरी पर उतना निर्भर नहीं करता जितना रोजगार की कमी पर। लोगों के पास छोटे-छोटे खेत हैं। खेती की पैदावार को देखते हुए भी मजदूरी में कोई खास वृद्धि करना सम्भव नहीं है, इसलिए मुख्य रूप से कोशिश यह की जानी चाहिए कि उनको रोजगार के अधिक अवसर प्रदान किए जाएं।

स्त्री मजदूर

३८. स्त्री मजदूरों की समस्याएं कुछ अजीब-सी है, इसलिए उन पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए। उनमें अपेक्षाकृत संगठन की बहुत कमी है। उन पर सामाजिक बंधन भी होते हैं और साथ ही शारीरिक क्षमता भी सीमित होती है। जो लोग औरतों को कम मजदूरी देने के पक्षपाती हैं, वे अपने पक्ष को उचित ठहराने के लिए यह भी कहते हैं कि भारी कामों के लिए औरतें उतनी उपयुक्त नहीं होतीं और उद्योग-धंधों में जिन कामों से थकान होती है वहां औरतों

को रखना अलाभकर होता है। इसलिए या तो उनको छोटे काम दिए जाते हैं या फिर वे वही काम करती हैं जिनको पीढ़ी दर पीढ़ी औरतें ही करती जाती हैं और जिनकी तनख्वाह भी कम होती है। इस प्रकार इस बात की अवहेलना कर दी जाती है कि अगर औरतों की कार्य सामर्थ्य भिन्न है तो इसके माने यह नहीं हो जाते कि उनको निम्न कोटि का श्रमिक माना जाए।

३९. औरतों के कुछ विशेष दायित्व और कर्तव्य होने के कारण औद्योगिक कामगारों के रूप में उनको कुछ असुविधा रहती है। इसलिए उनके बचाव के लिए विभिन्न कानूनों में व्यवस्थाएं कर दी जाती हैं, लेकिन उनका प्रभावकारी परिपालन आवश्यक है। विशेष रूप से औरतों को हानिकर कामों से अलग रखा जाना चाहिए, उन्हें जच्चा की सुविधाएं मिलनी चाहिएं तथा काम करने की जगह पर बच्चों के रखने के स्थान होने चाहिएं। दूध पिलाने वाली माताओं को बच्चों को दूध पिलाने के लिए सवैतनिक अवकाश मिलना चाहिए। बराबर काम के लिए बराबर वेतन के सिद्धान्त को और अच्छी तरह लागू किया जाना चाहिए तथा औरतें जो काम परम्परा से करती आ रही हैं उनकी वेतन दरें घटाने की प्रवृत्ति रोकनी चाहिए। उनके लिए प्रशिक्षण की सुविधाएं होनी चाहिएं ताकि वे ऊंची नौकरियों में पुरुषों का मुकाबला कर सकें। इसके अलावा उनके लिए अंशकालीन काम देने की व्यवस्थाएं बढ़ाने की ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

विकास कार्यक्रम

४०. दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बनाए गए 'श्रम और श्रम कल्याण' के विकास कार्यक्रमों के लिए २९ करोड़ रुपया रखा गया है—१८ करोड़ केन्द्र तथा ११ करोड़ राज्यों की योजनाओं के लिए है। मुख्य-मुख्य कार्यक्रम नीचे बताए जा रहे हैं :—

(१) कारीगरों का प्रशिक्षण—ऐसा प्रस्ताव है कि प्रशिक्षण देने की १०,३०० जगहों को बढ़ाकर १९,७०० कर दिया जाए। प्रशिक्षण की अवधि तथा उसकी कोटि सुधारने का भी प्रस्ताव है। इस योजना पर राज्य सरकारें, श्रम मन्त्रालय तथा शीघ्र ही स्थापित की जाने वाली एक व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद की सहायता से अमल करेंगी।

(२) कशल कारीगरों के प्रशिक्षण का कार्यक्रम—औद्योगिक कामगारों को काम सिखाने के प्रशिक्षण कार्यक्रमों की सुगठित व्यवस्था सरकारी प्रतिष्ठानों तथा कुछ निजी संयंत्रों को छोड़कर और कहीं नहीं है। दूसरी योजना की एक तजवीज के अनुसार योजना के पहले वर्ष में फैक्टरियों में काम सीखने के लिए ४५० व्यक्ति रखे जाएंगे। यह संख्या प्रति वर्ष बढ़ती जाएगी और योजना के अन्तिम वर्ष में ५,००० कर दी जाएगी। काम सीखने की अवधि भी काम और वांछित कुशलता के अनुसार दो से लेकर पांच वर्ष तक होगी।

(३) शिक्षकों का प्रशिक्षण—चूंकि देश में अच्छे शिक्षकों की कमी है, इसलिए मध्य प्रदेश के कोनी संस्थान जैसा एक नया प्रशिक्षण संस्थान खोलने का प्रस्ताव है। यह भी इरादा है कि वर्तमान केन्द्र को हटाकर कहीं ऐसी जगह ले जाया जाए जो उपयुक्त औद्योगिक स्थान हो। उसके साथ शिल्पियों के प्रशिक्षण का एक केन्द्र भी जोड़ दिया जाएगा। ये दोनों संस्थान शिक्षकों और पर्यवेक्षकीय

कर्मचारियों को प्रशिक्षण देंगे तथा साथ ही शिक्षकों, पर्यवेक्षकों और फोरमैनों के लिए प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रम की भी व्यवस्था करेंगे।

(४) **रोजगार सेवा संगठन का प्रसार**—दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में १२० नए रोजगार दिलाने के नए दफ्तर भी खोले जाएंगे। इससे उनकी संख्या १३६ से २५६ हो जाएगी। इसके अलावा भी संगठन अपने कार्य क्षेत्र का प्रसार करना चाहता है। इसके लिए कुछ प्रस्ताव इस प्रकार हैं :—

(क) जनशक्ति आयोजन में प्रयोग किए जाने के लिए कितने लोगों को रोजगार मिल सकता है, इस सूचना का इकट्ठा करना।

(ख) एक नवयुवक रोजगार सेवा की स्थापना करना जिसका काम रोजगार चाहने वाले नवयुवकों के विशेष समूहों को रोजगार और प्रशिक्षण की समस्याओं के बारे में विशेषज्ञों की सलाह देना होगा।

(ग) रोजगार दिलाने के दफ्तरों में रोजगार सम्बन्धी सलाह देना—मुख्य उद्देश्य होगा रोजगार ढूंढने वालों को उनकी अपनी सामर्थ्य तथा रोजगार की स्थिति के बारे में सूचना देना तथा उनका मार्गदर्शन करना।

(घ) व्यावसायिक अनुसन्धान और विश्लेषण—प्रस्ताव यह है कि भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए वांछित कुशलता सम्बन्धी परिभाषाओं का मानकीकरण करने तथा एक व्यावसायिक कोश तैयार करने के एक प्रणालीबद्ध कार्यक्रम का संगठन तथा विकास किया जाए। योजना की अवधि में पांच मुख्य उद्योगों का अध्ययन पूरा किया जाएगा।

(ङ) रोजगार दफ्तरों में व्यावसायिक परीक्षण—इस योजना के अनुसार उद्योग के सहयोग से रोजगार दिलाने के दफ्तरों में ही कार्यकुशलता या काम के बारे में परीक्षण करने का एक कार्यक्रम चालू किया जाएगा।

(५) **केन्द्रीय श्रम संस्थान का प्रसार**—केन्द्रीय श्रम संस्थान के दो अनुभाग और खोले जाएंगे—एक औद्योगिक मनोविज्ञान पर और दूसरा औद्योगिक-व्यावसायिक तंत्र पर। ये अनुभाग काम-धन्धों सम्बन्धी मार्गदर्शन, कामगारों के उत्साह और उनकी प्रवृत्तियों, और ताप, शोर, प्रकाश आदि के प्रति कामगारों में शारीरिक प्रतिक्रिया सम्बन्धी विषयों पर खोज तथा अध्ययन करेंगे। इस संस्थान का दूसरा काम होगा उत्पादकता के अध्ययन तथा पर्यवेक्षण सम्बन्धी प्रशिक्षण का काम जारी रखना। उत्तरी और दक्षिणी प्रदेशों में औद्योगिक सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा श्रम कल्याण सम्बन्धी प्रादेशिक संग्रहालय खोले जाएंगे। ये संग्रहालय केन्द्रीय श्रम संस्थान के बम्बई संग्रहालय को केन्द्र बिन्दु मानकर औद्योगिक प्रदेशों की विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आयोजित सुरक्षा, स्वास्थ्य और श्रम कल्याण के शिक्षा सम्बन्धी समन्वित कार्यक्रम के अंग के रूप में काम करेंगे।

(६) **फिल्म यूनिट की स्थापना**—कामगारों की शिक्षा की आवश्यकता सभी लोग मानते हैं। कामगारों में साक्षरता बहुत कम होने की वजह से शिक्षा और प्रचार के लिए दृश्य-श्रव्य साधनों का प्रयोग सर्वाधिक प्रभावकारी ढंग से किया

जाता है। वास्तव में पिछले कुछ वर्षों में फैक्टरी कल्याण विभागों तथा राज्य श्रम कल्याण केन्द्रों ने फिल्में दिखाने का काफी काम किया है। लेकिन चूंकि श्रम सम्बन्धी विषयों पर भारत में उपयुक्त फिल्मों का अभाव है, इसलिए अक्सर ऐसी विदेशी फिल्में दिखाई जाती रही हैं जिनकी भारतीय स्थितियों से किसी तरह की समानता नहीं होती। यहां उपयुक्त प्रशिक्षण तथा शिक्षाप्रद फिल्मों की आवश्यकता पर जोर दिया जाना अनुचित न होगा। इसलिए प्रस्ताव है कि एक छोटी-सी फिल्म यूनिट स्थापित की जाए जो सुरक्षा, स्वास्थ्य और श्रम कल्याण, पर्यवेक्षकीय प्रशिक्षण, उत्पादकता सम्बन्धी अध्ययन, व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा कर्मचारी राज्य बीमा योजना जैसी श्रम और तत्सम्बन्धी समस्याओं पर दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में कम से कम १०० फिल्में बना सके।

(७) **कर्मचारी राज्य बीमा योजना तथा भविष्य निधि योजना**—इन दोनों योजनाओं पर इस अध्याय के पैरा २७ में बताई गई रीति के अनुसार अमल किया जाएगा।

(८) **आवास**—योजना में औद्योगिक कामगारों तथा मध्य और निम्न आय वर्गों के व्यक्तियों को घर बनाने के लिए काफी धन की व्यवस्था की गई है। औद्योगिक आवास के लिए ५० करोड़ रुपए की रकम रखी गई है। बागान और खान कामगारों के घरों के लिए अलग व्यवस्था है। सरकारी सहायता प्राप्त आवास योजना के काम में पहली पंचवर्षीय योजना में जो अनुभव प्राप्त हुआ है, उसके आधार पर उसमें सुधार किए जाने के लिए अध्ययन किया जा रहा है। यह देखा गया है कि इस योजना के अन्तर्गत प्राप्त होने वाले कर्जों और सरकारी सहायता के प्रति मालिकों और कामगार सहकारी समितियों की ओर से उत्साह की काफी कमी रही है।

(९) **अन्य योजनाएं**—ऊपर बताई गई योजनाओं के अलावा कामगारों की शिक्षा, कल्याण कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण और छानबीन के नए कार्यों के सम्बन्ध में की गई सिफारिशों पर अमल किए जाने का विचार है। प्रस्ताव है कि अगले पांच सालों में इन बातों पर खोजबीन की जाएगी :—

(क) अखिल भारतीय कृषि श्रम सम्बन्धी जांच,

(ख) मजदूरी का पूरा-पूरा तख्मीना,

(ग) मुख्य औद्योगिक केन्द्रों में कामगार परिवारों के बजटों के बारे में जांच।

उद्योग की उन्नति किस प्रकार हो रही है, यह जानने के लिए भी एक ऐसी जांच कराने का विचार है जिसके आधार पर चुने हुए उद्योगों की उत्पादकता के देशनांकों का संग्रह किया जाएगा। राज्य सरकारों ने भी अपनी योजनाओं में कामगारों के लिए कल्याण सुविधाओं की व्यवस्था की है। कुछ राज्यों द्वारा तैयार की गई योजनाओं का एक अच्छा पहलू यह भी है कि इनमें कल्याण केन्द्रों का संगठन कामगारों और मालिकों के संगठनों के द्वारा किया जाएगा, और सरकार सिर्फ खर्च का एक भाग दे दिया करेगी।

अध्याय २८

पिछड़े वर्गों का कल्याण

यों तो देश में बहुत-से लोग पिछड़े हुए हैं, किन्तु "पिछड़े वर्ग" की परिभाषा के अन्तर्गत जनता के निम्न चार वर्ग आते हैं—

(१) अनुसूचित आदिम जातियां, जिनकी संख्या लगभग १ करोड़ ९० लाख है,

(२) अनुसूचित जातियां, जिनकी संख्या लगभग ५ करोड़ १० लाख है,

(३) अपराधजीवी कही जाने वाली जातियां, जिनकी संख्या ४० लाख से कुछ ऊपर है, और

(४) सामाजिक दृष्टि से और शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए ऐसे अन्य वर्ग जिन्हें केन्द्रीय सरकार पिछड़े वर्ग आयोग की सिफारिशों पर पिछड़े वर्ग स्वीकार करने का निर्णय करे।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में जनता के इन चारों वर्गों की विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कार्यक्रम तैयार किए गए थे। योजना में इस कार्य के लिए कुल मिलाकर ३९ करोड़ रुपया रखा गया था, जिसमें से २० करोड़ रुपया राज्यों के कार्यक्रमों के लिए और शेष केन्द्रीय सरकार के कार्यक्रमों के लिए था। अनुसूचित आदिम जातियों तथा अनुसूचित क्षेत्रों के लिए लगभग २५ करोड़ रुपया रखा गया था, जिसमें से ७ करोड़ रुपया अनुसूचित जातियों के लिए, साढ़े तीन करोड़ रुपया भूतपूर्व अपराधजीवी लोगों के लिए और साढ़े तीन करोड़ रुपया पिछड़े वर्गों के लिए था।

२. प्रत्येक वर्ग की अपनी विशेष समस्याएं हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना में सम्पन्न हुए कार्यक्रमों और द्वितीय योजना के लिए प्रस्तावित कार्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए इन पर नीचे विचार किया जा रहा है। द्वितीय योजना में पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए लगभग ९१ करोड़ रुपया रखा गया है, जिसमें से ४७ करोड़ रुपया अनुसूचित आदिम जातियों और अनुसूचित क्षेत्रों के लिए, साढ़े २७ करोड़ रुपया अनुसूचित जातियों के लिए, लगभग ४ करोड़ रुपया भूतपूर्व अपराधजीवी लोगों के लिए, ९·७ करोड़ रुपया अन्य अनुसूचित वर्गों और २·९ करोड़ रुपया प्रशासन के लिए होगा। ये रकमें पिछड़ी जातियों की सहायता के लिए विशेष रूप से तैयार किए गए कार्यक्रमों के लिए हैं। इस प्रकार ये उपाय राज्यों में समूची जनता के लाभ के विकास कार्यक्रमों के सहायक अंग के रूप में हैं। अर्थ-व्यवस्था का विकास जिस सीमा तक होता है उस सीमा तक पिछड़े वर्गों को भी लाभ होता है। विकास कार्यक्रमों के प्रशासन में योजनाएं इस प्रकार बनाने की सावधानी बरतनी चाहिए कि जनता के निर्बल अंगों को अधिकतम लाभ हो। इस पहलू की ओर सब से ज्यादा ध्यान रखा जाएगा किन्तु विकास के केवल थोड़े-से ही क्षेत्रों में यह दिखा सकना सम्भव होगा कि पिछड़े वर्गों के सीधे लाभ के लिए व्यय का कितना प्रतिशत रखा गया है। पिछड़े वर्गों के लिए जो विशेष व्यवस्थाएं की गई हैं, उनका उपयोग इस ढंग से होना चाहिए कि उन्हें

M26MofI&B—35

सामान्य विकास कार्यक्रमों से अधिकतम लाभ हो ताकि उनकी पिछली कमी शीघ्र पूरी हो सके। राज्यों में पिछड़े वर्गों से सम्बद्ध विभागों को प्रयत्न करना चाहिए कि राज्य के विकास सम्बन्धी अन्य विभाग ऐसे कार्यक्रम बनाएं जिनसे पिछड़े वर्गों का व्यापक हित हो और सामान्य तथा विशेष कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए साधनों का वे इस प्रकार उपयोग करें कि दोनों कार्यक्रम एक-दूसरे के पूरक बन जाएं। पिछड़ी जातियों के प्रत्येक वर्ग के लिए प्राथमिकताएं विचार-पूर्वक स्थिर होनी चाहिएं। साथ ही यह बात भी अच्छी तरह स्पष्ट कर देनी चाहिए कि जिस अनुपात में कार्यक्रमों का परिपालन किया जाएगा और जितनी ईमानदारी, कुशलता और मनोयोग से कर्मचारी काम करेंगे, उसी अनुपात में पिछड़े वर्गों को लाभ होगा।

आदिम जातियों के लिए कल्याण कार्यक्रम

३. आदिम जातियों के कल्याण के लिए जो भी कार्यक्रम बनाए जाएं, वे उनकी संस्कृति एवं रीति-रिवाजों के प्रति आदर-भाव, और उनकी सामाजिक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं की पूरी-पूरी जानकारी पर आधारित होने चाहिएं। कल्याण और विकास के निमित्त जो भी कार्यक्रम अपनाए जाएंगे, वे अनिवार्यतः उनके परम्परागत विश्वासों और आचार-व्यवहार में विघ्न उत्पन्न करेंगे। ऐसी अवस्था में यह अत्यावश्यक है कि इन कार्यक्रमों को कार्यान्वित करते समय उस क्षेत्र के निवासियों का समर्थन प्राप्त कर लिया जाए। इस सम्बन्ध में आदिम जातियों, विशेषकर उनके मुखियों की सद्भावना प्राप्त करने का अपना एक विशिष्ट महत्व है। यह आवश्यक है कि कल्याण कार्यक्रमों के सभी प्रकार के कार्यकर्ता यथासम्भव आदिम जातियों के पढ़े-लिखे नवयुवकों में से ही लिए जाएं। नई कार्यविधियों को अपनाते समय यह ध्यान रखा जाए कि उनमें आदिम जातियों का ही नेतृत्व प्रधान रहे तथा उन्हें तनिक भी यह अनुभव न होने पाए कि उन पर बाहर से जबर्दस्ती कुछ थोपा जा रहा है। हर नया कदम उठाने से पहले उसके लिए भली प्रकार तैयारी कर लेनी चाहिए। आदिम जातियों की समस्याओं को सुलझाने के लिए मानव शास्त्र-वेत्ता, प्रशासक, विशेषज्ञ एवं समाज कार्यकर्ता को सहानुभूति व उनकी सामाजिक मनोदशा संबं ी आवश्यकताओं को भली प्रकार समझकर सहयोग की भावना से कार्य करना चाहिए। जहां तक सम्भव हो, आदिम जातियों की सहायता उनकी अपनी ही संस्थाओं के माध्यम से की जानी चाहिए। विकास कार्यों की तफसीलों को परामर्शदात्री परिषदों, आदिम जातियों के प्रमुख नेताओं और उनकी समस्याओं का अध्ययन करने वाली संस्थाओं के परामर्श और सहयोग से बनाना चाहिए। आदिम जातियों को यह महसूस होना चाहिए कि योजनाएं उन पर थोपी नहीं जा रही हैं बल्कि उनके अपने जीवन-स्तर को उन्नत करने और सांस्कृतिक विकास करने की उनकी इच्छा ही इन कार्यक्रमों के रूप में प्रस्फुटित हो रही है। यदि ये कार्यक्रम स्थानीय जनता के सहयोग व समर्थन द्वारा सम्पन्न होंगे तो देश के सभी भागों में बसी हुई आदिम जातियों में अपने को समूचे राष्ट्र का अभिन्न अंग समझने की भावना जागृत होगी।

४. आदिम जातियों के प्रति इस प्रकार के दृष्टिकोण को प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं तथा उनकी समस्याओं और आवश्यकताओं की सूक्ष्म जानकारी द्वारा ही सुलझाया जा सकता है। इसी तथ्य को दृष्टि में रखते हुए प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में आठ राज्यों में आदिवासी शिक्षणालय खोले गए हैं। क्षेत्र कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए मध्य प्रदेश और बिहार में प्रशिक्षणालय खोले गए हैं। कुछ राज्यों में आदिम जातियों की आवश्यकताओं के विशेष सर्वेक्षण का कार्य संगठित किया जा रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में आदिम जाति क्षेत्रों में

कार्य करते हुए व्यक्तियों को स्वैच्छिक संस्थाओं का सहयोग प्राप्त कराने का प्रयत्न किया गया। केन्द्रीय सरकार ने दस अखिल भारतीय संस्थाओं को अनुदान तथा राज्य सरकारों ने लगभग २०० स्थानीय संस्थाओं को सहायता प्रदान की है।

५. आदिम क्षेत्रों का विकास कार्यक्रम स्थूल रूप से चार भागों में बांटा जा सकता है: (क) संचार, (ख) शिक्षा और संस्कृति, (ग) आदिम क्षेत्रों की अर्थ-व्यवस्था का विकास, तथा (घ) स्वास्थ्य, आवास और पानी का प्रबन्ध। प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में असम और दूसरे राज्यों के आदिम जाति क्षेत्रों में सड़कों के विकास में ६ करोड़ रुपया व्यय हुआ। अनेक राज्यों में, जिनमें असम, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, आन्ध्र और विन्ध्य प्रदेश भी शामिल हैं, लगभग २,२४० मील लम्बे पहाड़ी रास्ते बनाए गए।

६. आदिम जातियों की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। हैदराबाद तथा अन्य स्थानों में उन्हें अध्यापक बनाने के लिए प्रशिक्षण देने का महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। आदिवासियों को उनकी ही बोली में शिक्षण देने के कार्य को सुगम बनाने के अभिप्राय से हैदराबाद, असम, उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी (नेफ़ा) और बिहार राज्यों में विशेष प्रकार की पाठ्य-पुस्तकें तैयार की गई हैं। इस प्रकार अब तक आठ आदिम बोलियां इस कार्य के लिए चुनी गई हैं। आदिम जातियों के विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां, पुस्तकों के लिए अनुदान, छात्रावास का शुल्क और अन्य प्रकार की सहायता दी गई है। ४,५०,००० से अधिक विद्यार्थियों ने इस सहायता से लाभ उठाया था। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समाप्त होते-होते आदिम जाति क्षेत्रों में लगभग ४,००० पाठशालाएं खुलीं। इनमें १,००० से अधिक आश्रम और सेवाश्रम पाठशालाएं भी सम्मिलित हैं जो आदिम जाति क्षेत्रों, विशेषकर बम्बई, बिहार, उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश राज्यों में खोली गई हैं और लगभग ६५० संस्कार केन्द्र, बालवाड़ियां और सामुदायिक केन्द्र भी बम्बई, बिहार, मध्य भारत और राजस्थान राज्यों में खोले गए हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सब राज्यों के आदिम जाति क्षेत्रों में जो शिक्षा कार्यक्रम अपनाया जाएगा, उसमें आश्रम पाठशालाओं को विशेष महत्व दिया जाएगा।

७. आदिम जातियों की अर्थ-व्यवस्था के पुनर्गठन में पर्याप्त कठिनाइयां हैं। अतएव यह आवश्यक है कि इन कठिनाइयों का समाधान उन क्षेत्रों की आर्थिक, सामाजिक और टेकनीकल पहलुओं की पूरी जानकारी के आधार पर किया जाए। इनमें सबसे मुख्य समस्या स्थान-परिवर्ती खेती की जगह एक-स्थानी खेती की प्रथा को जन्म देना है। बम्बई, हैदराबाद, बिहार और मध्य भारत में आदिवासियों की काफी बड़ी संख्या एक ही स्थान पर रहकर खेती-बारी कर रही है। अब मुख्य प्रश्न उनके खेती करने के तरीकों में सुधार करने और उत्पादन बढ़ाने में उनकी सहायता करने का है। इसके विरुद्ध असम, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और आन्ध्र में आदिम जातियों की अधिक संख्या स्थान-परिवर्ती खेती करती है। इस प्रकार की कृषि बहुधा जीवन के निम्नतर रहन-सहन की परिचायक होती है। स्थान-परिवर्ती खेती के स्थान पर एक-स्थानी खेती करने में रीति-रिवाजों की बाधाओं के अतिरिक्त कृषि योग्य भूमि का सुगमतापूर्वक उपलब्ध न होना, या फिर उपलब्ध होने पर उसके विकास के लिए और वहां बसने में होने वाले व्यय का न जुटा सकना आदि कठिनाइयां भी हैं।

८. स्थान-परिवर्ती खेती में सुधार करने और कृषि बस्तियां बनाने के विचार से कई राज्यों में छोटे पैमाने पर कुछ प्रयोग किए गए हैं। १९५४ से अब तक असम में ८ प्रदर्शन केन्द्र

खोले गए हैं—३ गारो पहाड़ी जिलों में, ३ मिकिर पहाड़ियों में, २ मिजो जिले में और एक उत्तरी काचर पहाड़ी जिले में। इन केन्द्रों में आदिवासियों को उन्नत कृषि के प्रयोग दिखलाए जाते हैं। ये प्रयोग पहाड़ियों की चोटियों और ढलानों पर वैटल वृक्ष लगाने और काफी, काजू आदि की खेती के सम्बन्ध में होते हैं। आंध्र, पूर्वी और पश्चिमी गोदावरी जिलों में आदिम जातियों की बस्तियां बसाने की योजनाएं चालू की गई हैं। मध्य प्रदेश में बस्तर तथा दूसरे जिलों में मार्गदर्शक योजनाएं भी आरम्भ की गई हैं। उड़ीसा में अब तक जो ६६ कृषि बस्तियां बसी हैं, उनमें २,००० से ऊपर आदिवासी परिवारों को बसाया गया है।

९. यद्यपि स्थान-परिवर्ती खेती की समस्या का और अधिक अध्ययन होना चाहिए, फिर भी जो कुछ कार्य इस दिशा में हुआ है उससे कुछ निष्कर्ष निकलते हैं। यदि अनुकूल अवस्थाएं उत्पन्न की जा सकें तो आदिवासी स्थान-परिवर्ती खेती प्रथा को त्यागने में विशेष आनाकानी नहीं करेंगे। ये अवस्थाएं हैं (१) उपजाऊ और, जहां कहीं सम्भव हो, सिंचित भूमि की व्यवस्था, (२) बैल, खेती के औजार, बीज, धन आदि की सहायता, और (३) इस बात का विशेष प्रबन्ध कि सूद पर रुपया देने वाले महाजन और व्यापारी आदिवासियों का शोषण न कर सकें। इस दिशा में किए गए प्रयोग यह दर्शाते हैं कि ढलानों और पहाड़ियों के ऊपरी भागों में स्थायी रूप से जंगल लगा दिए जाने चाहिएं। यदि भूमि की उत्पादन शक्ति को सुरक्षित रखा जा सके तो निचली ढलानों में कटान बिना कोई नुक्सान पहुंचाए किया जा सकता है। नीची जमीनों और साधारण ढलानों की चौरस भूमि पर खेती की जा सकती है। स्थान-परिवर्ती और एक-स्थानी कृषि उन क्षेत्रों की भूमि की किस्म और आदिम जातियों को उपलब्ध साधनों पर निर्भर है। जिन क्षेत्रों में कटान किया जाए, वहां यह सावधानी अवश्य बरती जाए कि वनों को अंधाधुंध न काट दिया जाए। साथ ही उस भूमि में की जाने वाली खेती के बीच-बीच में समय का इतना अन्तर अवश्य होना चाहिए कि भूमि कुछ समय तक खाली रह सके। आदिम क्षेत्रों में कृषि के तरीकों में सुधार करने के लिए टेकनीकल और आर्थिक सहायता तथा अन्य सुविधाओं के अतिरिक्त शिक्षा का अत्यधिक महत्व है। कृषि के आधुनिक तरीकों से यकायक ही कोई महत्वपूर्ण परिणाम निकलने की आशा नहीं है, किन्तु यह आवश्यक है कि प्रत्येक आदिम क्षेत्र के लिए जो कार्यक्रम निश्चित किया जाए वह स्थानीय अवस्थाओं के अनुकूल हो तथा उसे आदिवासियों के सहयोग से कार्यान्वित किया जाए।

१०. आदिम जातियों की काफी बड़ी संख्या जंगली क्षेत्रों में रहती है, अतः वन्य साधनों का अपने निर्वाह के लिए वे किस प्रकार उपयोग करते हैं इसका ज्ञान होना आवश्यक है। यह सावधानी भी रखनी होगी कि वन्य उत्पादों के एकत्रीकरण, चराई तथा लकड़ी आदि की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के विषय में जो नियम हों, वे अनावश्यक रूप से कड़े और परेशान करने वाले न हों। जंगलों के ठेकेदारों का आदिम जाति क्षेत्रों में प्रवेश वहां की अर्थ-व्यवस्था के लिए हानिकर सिद्ध हुआ है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में वनों में काम करने वालों की ६५३ समितियां बनाई गई थीं। जहां-जहां उन्हें आवश्यक सहायता मिली और सही-सही निर्देशन हुआ, वहां वे साधारणतः सफल रही हैं। आदिम क्षेत्रों में जंगलों के ठेके, अधिकांश सहकारी समितियों को ही दिए जाने चाहिएं तथा जंगलों के साधनों से लाभ उठाने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करते रहना चाहिए। जहां सहकारी समितियां स्थापित हो गई हों वहां प्रशासक ईमानदारी से कार्य करें, इस बात का विशेष ध्यान रखा जाए।

११. आदिम जाति क्षेत्रों में ऋण की समस्या अति चिन्तनीय है। कभी-कभी साहूकार जो अधिकतर सूद पर रुपया देने वाले महाजन, व्यापारी या ठेकेदार लोग होते हैं, आदिम जातियों को बुरी तरह अपने शिकंजे में जकड़ लेते हैं और उनके उत्पादन का अधिकांश उन लोगों के पास चला जाता है। हमारा सुझाव है कि समस्या का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया जाए जिससे यह बुराई किस सीमा तक फैली हुई है, इस तथ्य का ठीक-ठीक अनुमान हो सके और उन्हें पिछले ऋण से मुक्त किया जा सके तथा भविष्य में उनके लिए ब्याज की सस्ती दर पर ऋण की व्यवस्था हो सके। यहां यह उल्लेख कर देना उचित प्रतीत होता है कि कई राज्यों में आदिवासियों के ऋण में कमी करके उन्हें सहायता पहुंचाई गई है और कानून द्वारा उनके भूमि सम्बन्धी अधिकारों की रक्षा की गई है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत आदिम जाति क्षेत्रों में ३१२ बहुद्देशीय सहकारी समितियों की स्थापना की गई थी और मध्य प्रदेश, बिहार एवं उड़ीसा में सरकार द्वारा ३५० अनाज गोदाम बनाए गए थे, जो अब अनाज बैंक के रूप में कार्य कर रहे हैं। आदिम जातियों का आर्थिक जीवन व रीति-रिवाज सहकारी और सामुदायिक संगठन के लिए विशेष रूप से अनुकूल हैं। आदिम जाति क्षेत्रों में संचालित सहकारी समितियां यथासम्भव बहुद्देशीय ढंग की होनी चाहिएं। उनका कार्य ऋण देना, दैनिक उपयोग की वस्तुओं का प्रबन्ध करना और साथ ही उनकी वस्तुओं के विक्रय का प्रबन्ध करना होना चाहिए। सहकारिता का सिद्धान्त आर्थिक जीवन के प्रायः सभी क्षेत्रों में बरता जा सकता है।

१२. प्रथम पंचवर्षीय योजना में आदिम जाति क्षेत्रों में १११ कुटीर उद्योग केन्द्र स्थापित किए गए। आदिवासी लोग परम्परागत कार्यों में स्वभावतः कुशल हैं, अतः उनकी दस्तकारियों को बढ़ावा देना आवश्यक है। उन्हें व्यावसायिक धंधों के प्रशिक्षण की सब सुविधाएं दी जानी चाहिएं। मधुमक्खी पालन, टोकरी बुनाई, रेशम कीट पालन, कताई-बुनाई, फल संरक्षण और ताड़ का गुड़ बनाने जैसे बहुत-से सहायक उद्योग-धंधे हैं जिनका विकास किया जाना चाहिए। स्थान-स्थान पर जाकर प्रयोगों के प्रदर्शन करने और प्रशिक्षण देने वाले दल बम्बई और अन्य स्थानों में उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

१३. आदिम जातियां यद्यपि प्रकृति के निकट सम्पर्क में रहती हैं, फिर भी वे स्वास्थ्य और शारीरिक दृष्टि से दुर्बल ही रहती हैं। वे मलेरिया, न्युमोनिया, तपेदिक, चेचक, गुप्त रोग, त्वचा तथा नेत्र रोग जैसी अनेक बीमारियों से पीड़ित रहते हैं। इनका मुख्य कारण पीने के स्वच्छ पानी का अभाव, भोजन में पोषक तत्वों की कमी तथा ऋतुओं के हानिकर प्रभाव से अपनी रक्षा कर सकने की उनकी असमर्थता है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समाप्त होते-होते आदिम जाति क्षेत्रों में ३,१४४ औषधालय व चलते-फिरते चिकित्सालय स्थापित हो चुके हैं। पीने के पानी के लिए कुएं खुदवाने में भी पर्याप्त सहायता दी गई है। आदिम जातियों के स्वास्थ्य की सामान्य स्थिति और बीमार होने पर स्वास्थ्य लाभ करने के उनके साधनों और विधियों की जानकारी के लिए कई राज्यों में सर्वेक्षण किए जा रहे हैं। इस कार्य में मुख्य कठिनाई यह सामने आ रही है कि आदिम जातियां प्रायः ऐसे सुदूर वनों में रहती हैं जहां तक पहुंचना कठिन है। जहां तक यातायात की सुगमता का प्रश्न है, अनुभव के आधार पर यह प्रतीत होता है कि इन क्षेत्रों के लिए चलते-फिरते चिकित्सालय अधिक उपयुक्त होंगे, क्योंकि बहुत ही कम क्षेत्र ऐसे हैं जहां एक स्थान पर आदिम जातियां अधिक संख्या में रहती हैं। अतः ऐसी स्थिति में कहीं तो स्थायी ढंग के औषधालय और कहीं चिकित्सा के अन्य साधन जुटाने होंगे।

१४. सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्य वाले अध्याय में यह कहा जा चुका है कि आदिम जाति क्षेत्रों में राष्ट्रीय विस्तार सेवा के कार्य किस प्रकार किए जाएं, जिससे इस अध्याय में उल्लिखित कल्याण कार्यों के साथ उनका पूरा समन्वय हो सके। आदिम जाति क्षेत्रों में राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों का सीमा-निर्धारण अन्य क्षेत्रों के समान ६६,००० की जन संख्या पर न होकर २५,००० जन संख्या के आधार पर होगा। अत्यधिक पिछड़े क्षेत्रों में ४० बहूद्देशीय प्रारम्भिक योजना कार्यों को हाथ में लेने का विचार किया गया है। इन योजनाओं में राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यों के साथ अन्य कार्यक्रमों को भी सम्मिलित किया जाएगा। इन कार्यक्रमों को राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्र में कार्यान्वित करने का एक लाभ यह होगा कि इनसे प्रशिक्षण-प्राप्त कार्यकर्ताओं की सेवाओं का सर्वोत्तम उपयोग हो सकेगा। इन प्रारम्भिक योजना कार्यों में आदिम जातियों के जीवन के सभी पहलुओं को एक साथ लिया जा सकेगा—जैसे स्थान-परिवर्ती खेती के बजाय एक-स्थानी खेती को प्रोत्साहन, कृषि सुधार, औषधि एवं जन स्वास्थ्य का प्रबन्ध, संचार व्यवस्था का सुधार, कलाओं और उद्योगों का विकास, सहकारी समितियों का संगठन और सामुदायिक कल्याण केन्द्रों की स्थापना। अभी तक आदिम जाति क्षेत्रों में काफी बड़े पैमाने पर इस प्रकार के सामुदायिक कल्याण केन्द्रों की स्थापना नहीं हुई है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस कार्य पर अन्य कार्यों की अपेक्षा अधिक बल देने की आवश्यकता है। इस प्रकार स्थापित केन्द्र बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध होंगे, क्योंकि स्थानीय लोग इन केन्द्रों द्वारा सुधार कार्यों में भाग लेना सीखेंगे तथा इनसे ऐसे कार्यकर्ता निकलेंगे जो शेष लोगों का नेतृत्व करने योग्य होंगे। साथ ही ये केन्द्र स्थानीय और अधिक विकसित क्षेत्रों के सर्वोत्तम कार्यकर्ताओं में परस्पर सम्पर्क का अवसर प्रदान करेंगे।

१५. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में आदिम जाति क्षेत्रों की कल्याण योजनाओं के लिए ४७ करोड़ रुपए की धनराशि रखी गई है, जबकि प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस कार्य के लिए केवल २५ करोड़ रुपया ही था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में भी प्रस्तावित कार्यक्रमों का क्षेत्र काफी विस्तृत है, अतः दोनों योजनाओं के कार्यक्रमों से आदिम जाति क्षेत्रों में सुधार कार्य को काफी प्रोत्साहन मिलना चाहिए। स्थूल रूप से, द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम पहली योजना के कार्यक्रमों का अनुसरण करते हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना को कार्यान्वित करते हुए अनेक उपयोगी अनुभव प्राप्त हुए हैं तथा इन क्षेत्रों में कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं को वहां की अवस्थाओं और समस्याओं का समुचित ज्ञान हो गया है। ४७ करोड़ की निर्धारित धनराशि में से २७ करोड़ रुपए से कुछ अधिक राज्य सरकारों की योजनाओं के लिए सुरक्षित हैं (इसमें केन्द्रीय सहायता भी शामिल है), शेष २० करोड़ रुपया केन्द्रीय सरकार की ओर से प्रस्तावित योजनाओं पर गृह मंत्रालय द्वारा व्यय किया जाएगा। आदिम जातियों की कल्याण योजनाओं के कुल व्यय का विवरण निम्न प्रकार है :—

	(करोड़ रुपया)
१. संचार	११
२. आदिम जाति क्षेत्रों की अर्थ-व्यवस्था का विकास	१२
३. शिक्षा और संस्कृति	८
४. जन स्वास्थ्य, चिकित्सा और पानी का प्रबन्ध	८
५. आवास और पुनर्वास कार्य	५
६. अन्य	३
	४७

१६. राज्यों के कार्यक्रम :— राज्यों की योजनाओं में परिवहन व्यवस्था के विकास को प्राथमिकता दी गई है। इसके लिए ६.५ करोड़ रुपया निर्धारित है। १०,२०० मील लम्बे पहाड़ी रास्ते और ४५० पुल बनाने का निश्चय किया गया है। राज्यों ने लगभग ३६,६०० एकड़ भूमि को विकसित करने, ६,५७० एकड़ जंगली भूमि साफ करने और कृषि योग्य बनाने, कृषि के औजार बांटने, अच्छी नस्ल के सांड देने, ४,००० व्यक्तियों को विभिन्न उद्योगों में प्रशिक्षण देने और ८२५ कुटीर उद्योग केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था की है। असम राज्य ने अपनी योजना में आदिम जातियों के विद्यार्थियों को व्यावसायिक धंधों की शिक्षा देने के लिए ६७० वजीफे देने की व्यवस्था की है। उड़ीसा की द्वितीय योजना में ४५ प्रशिक्षण-उत्पादन केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था है और आदिम जाति विद्यार्थियों के लिए औद्योगिक तथा टेक्नीकल प्रशिक्षण केन्द्र अन्य राज्यों में खोले जाएंगे। एक-स्थानी कृषि के विकास के लिए १२,००० से अधिक परिवारों की १८६ बस्तियां बसाई जाएंगी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत स्थापित ३५० अन्न गोदामों को पूर्णरूपेण सहकारी समितियों में परिवर्तित कर दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त ८०० बहुद्देशीय वन्य सहकारी समितियां स्थापित की जाएंगी। आंध्र की राज्य सरकार ने इन पर्वतीय लोगों को ऋण की सुविधाएं देने के निमित्त एक विशेष संस्था स्थापित की है। इसके माध्यम से वे लोग अपनी पैदावार उचित मूल्यों पर बेच सकेंगे तथा अपनी दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुएं बाजार भाव पर खरीद सकेंगे।

१७. आदिम जाति क्षेत्रों में शिक्षा की सुविधाओं को भी शीघ्रातिशीघ्र फैलाया जाएगा। शिक्षा मंत्रालय ने अनुसूचित आदिम जातियों और पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों के लिए मैट्रिक से ऊपर की शिक्षा के लिए ११.३८ करोड़ रुपया निर्धारित किया है। इस धनराशि में से ३३,००० छात्रवृत्तियां केवल अनुसूचित आदिम जातियों के विद्यार्थियों के लिए हैं। आदिम जाति विद्यार्थियों के लिए ३,१८७ पाठशालाएं और ३६८ छात्रावास खोले जाएंगे तथा ३,००,००० विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्तियां और अन्य सुविधाओं की व्यवस्था की जाएगी। योजना में २०० सामुदायिक और सांस्कृतिक केन्द्रों की स्थापना करने का विचार है। आदिम जाति बोलियों में पाठ्य-पुस्तकों का प्रकाशन, स्कूलों के वर्तमान पाठ्यक्रम में सुधार तथा आदिम जाति क्षेत्रों की गतिविधियों के अनुसन्धान पर विशेष बल दिया जाएगा। केन्द्रीय सरकार प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान में स्थापित आदिम जाति अनुसन्धान संस्थाओं की सहायता करेगी। बम्बई में एन्थ्रोपोलोजिकल सोसाइटी आफ बाम्बे, दी गुजरात रिसर्च सोसाइटी तथा बम्बई विश्वविद्यालय आदिम जातियों के सम्बन्ध में अनुसन्धान कार्य कर रहे हैं। असम में गोहाटी विश्वविद्यालय के लोकगीत और आदिम संस्कृति विभाग ने पूर्वी प्रदेशों में बसी हुई आदिम जातियों के सामाजिक जीवन सम्बन्धी तथ्य एकत्र करने की एक योजना बनाई है।

१८. स्वास्थ्य सेवा कार्यक्रम के अन्तर्गत आदिम जाति क्षेत्रों में ६०० स्थायी और चलते-फिरते दवाखानों की स्थापना होगी। पीने के पानी के १५,००० कुएं खोदे जाएंगे तथा आदिवासियों में से ही नर्सों और दाइयों के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था करनी होगी। आदिवासियों की आवास सम्बन्धी अवस्थाएं बहुत ही असन्तोषजनक हैं, अतः राज्य सरकारों ने ६० लाख रुपए के व्यय से १८,८०० मकान बनवाने की व्यवस्था की है तथा इस निर्माण कार्य के लिए ५६ आवास समितियां बनाने का निश्चय किया है।

१९. केन्द्र द्वारा प्रस्तावित योजनाएं :—उपर्युक्त योजनाओं के अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार भी बहुत-सी योजनाओं को सहायता देगी जिससे अनुसूचित जातियों और उनके क्षेत्रों की

विशेष समस्याएं पहले से अधिक तत्परता के साथ सुलझाई जा सकें। इन योजनाओं में बहूद्देशीय सहकारी समितियों के कार्यक्रम भी शामिल हैं। इनके अलावा नई बस्तियां बसाने की योजना, गृह निर्माण, नई सड़कों का निर्माण और वर्तमान संचार साधनों में सुधार, कोढ़, गुप्त रोग आदि को दूर करने के लिए चिकित्सा और आरोग्य संस्थाएं खोलना, कुएं खुदवाना, कुटीर उद्योग धंधों का विकास, व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण एवं कल्याण कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण कार्यक्रम भी अपनाए जाएंगे। साधारणतः ये सब कार्यक्रम राज्यों के सबसे पिछड़े क्षेत्रों से आरम्भ किए जाएंगे, जिससे कि इनके तात्कालिक परिणाम सामने आ सकें।

२०. एक सामुदायिक विकास खण्ड स्थापित करने का अनुमानित व्यय १२ लाख रुपया है, किन्तु इस अध्याय में पहले उल्लिखित कुछ अतिरिक्त कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए १५ लाख रुपया प्रति खण्ड के हिसाब से और अधिक व्यय करने का विचार किया गया है। सब मिलाकर द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ४० बहूद्देशीय प्रारम्भिक योजना कार्यों पर ६.५ करोड़ रुपया व्यय किया जाएगा। इसके अतिरिक्त १.३ करोड़ रुपए असम, मनीपुर, त्रिपुरा, उड़ीसा, बिहार, मध्य प्रदेश, और आंध्र आदि राज्यों में स्थान-परिवर्ती खेती की समस्या को हल करने पर व्यय किए जाएंगे।

२१. आदिवासी क्षेत्रों में परिवहन साधनों के सुधार पर ४ करोड़ रुपया व्यय होगा। इस धनराशि से मोटर गाड़ियां चल सकने योग्य ४५० मील लम्बी सड़कें तथा ७,२०० मील लम्बे पहाड़ी मार्ग बनाये या सुधारे जाएंगे।

२२. आवास पर व्यय करने के लिए लगभग १.७७ करोड़ रुपया रखा गया है। हमारा लक्ष्य २७,००० घरों का निर्माण करना है। इस कार्यक्रम से लाभ उठाने वाले व्यक्तियों को शारीरिक परिश्रम के रूप में योग देना होगा। निर्माण कार्य में काम आने वाले सामान की व्यवस्था सरकार की ओर से होगी। आदिम जाति क्षेत्रों में पीने के शुद्ध पानी के प्रबन्ध पर ०.५३ करोड़ रुपया व्यय किया जाएगा। इस धन से २६,००० कुएं तथा असम और मनीपुर में २ जलाशय बनाये जाएंगे। इसके अतिरिक्त कोढ़, क्षय, गुप्त रोगादि के निवारण के लिए विशेष प्रकार के ३३ चिकित्सा केन्द्र या चलते-फिरते दवाखाने स्थापित किए जाएंगे, तथा ४०० दाइयों के प्रशिक्षण के लिए ५ केन्द्र खोले जाएंगे। इस कार्य पर ०.५० करोड़ रुपया खर्च होगा।

२३. अनुसूचित आदिम जातियों के उत्थान के लिए ३.५२ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है। इस आर्थिक कार्यक्रम में ये योजनाएं कार्यान्वित करने का निश्चय किया गया है: बहूद्देशीय सहकारी समितियां और वन्य सहकारी समितियों की स्थापना तथा घरेलू उद्योग-धंधों के प्रशिक्षण व उत्पादन केन्द्रों की स्थापना एवं प्रशिक्षण-प्राप्त व्यक्तियों को छोटे-मोटे उद्योग-धंधों में लगाने के लिए आर्थिक सहायता देना। सर्टिफिकेट कोर्स के लिए, मिकेनिकल और सिविल इंजीनियरिंग में प्रशिक्षण देने के वास्ते टेकनीकल केन्द्र खोलने, आदिवासियों को कृषि शिक्षा देने तथा अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए ०.७५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इम्फाल में एक टेकनीकल संस्था स्थापित करने की बात को स्वीकार कर लिया गया है और असम, बिहार, उड़ीसा और मध्य प्रदेश में भी ऐसी ही संस्थाएं स्थापित करने का प्रस्ताव है जिससे आदिवासी नवयुवक दूर जगहों पर न जाकर अपने समीप के क्षेत्र में ही प्रशिक्षण की सुविधाएं प्राप्त कर सकें। ऐसी प्रत्येक संस्था पर १५ लाख रुपया व्यय होगा।

२४. अन्य आदिम जाति क्षेत्रों की अपेक्षा पूर्वी प्रदेशों, अर्थात असम, त्रिपुरा, मनीपुर तथा उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी की कुछ अपनी विशेषताएं तथा समस्याएं हैं। इन क्षेत्रों में आबादी छिटकी हुई है, सघन वनों से ये प्रांत ढके हैं, वर्षा अधिक होती है; यातायात के साधन सीमित एवं दुर्गम हैं। इसी कारण इन लोगों तक जीवनोपयोगी सुविधाएं बहुत ही कम पहुंच पाई हैं। इन क्षेत्रों की मुख्य समस्याएं संचार साधनों की कठिनाइयां और स्थान-परिवर्ती कृषि है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इन समस्याओं पर विशेष ध्यान दिया गया है। असम, मनीपुर और त्रिपुरा में आदिवासियों के कल्याण कार्यक्रमों पर १५ करोड़ रुपए से अधिक व्यय करने की व्यवस्था है। उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी के लिए कुल धन ६·५ करोड़ रुपया रखा गया है, जबकि प्रथम पंचवर्षीय योजना में केवल ४.२ करोड़ रुपए की व्यवस्था थी। इन क्षेत्रों में कल्याण कार्यक्रमों और योजनाओं को कार्यान्वित करने में अपर्याप्त संचार साधन विशेष रूप से बाधक है। खास तौर पर इसी कठिनाई के कारण प्रथम पंचवर्षीय योजना में प्रस्तावित पासीघाट और ट्वेनसांग में चिकित्सालय आदि बनाने जैसे कार्यों को पूरा नहीं किया जा सका। अब जन सहयोग द्वारा नए मार्ग और सड़कें बनाने के प्रयत्न किए जाएंगे। डिवीजनल हैडक्वार्टर्स को बारहों मास चालू रहने वाली सड़कों से मिलाने के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में आरम्भ किए गए कार्यक्रमों को पूरा किया जाएगा। ट्वेनसांग, लोहित और स्यांग के सीमावर्ती डिवीज़नों में सम्पर्क स्थापित करने के लिए मुख्य सड़कों का निर्माण किया जाएगा। ३,१५२ मील लम्बे रास्ते, जो ६ फुट से १० फुट तक चौड़े होंगे, खच्चरों के लिए बनाए जाएंगे। उन सुदूर प्रदेशों में, जो अब तक पहुंच से बाहर रहे हैं, संचार सम्पर्क स्थापित किया जाएगा। कुछ ऐसे भी स्थान हैं जहां वायुयान द्वारा ही पहुंचा जा सकता है, अतः ऐसे स्थानों में हवाई पटरियां तथा हवाई अड्डे बनाने का निश्चय किया गया है।

२५. प्रथम योजना काल में आदिवासियों और आदिम जाति क्षेत्रों के कल्याण और विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों की प्रगति आंकने में बहुत-सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। अब इस विषय में प्रगति का विवरण प्राप्त करने की प्रणाली में सुधार किया जा रहा है। गृह मंत्रालय अनुसूचित जातियों एवं अन्य पिछड़ी जातियों के निमित्त किए गए कार्यों को आंकने के लिए एक संस्था बनाने का विचार कर रहा है। सब मिलाकर 'प्रशासन' मद में २.६ करोड़ रुपया व्यय किया जाएगा। यह धनराशि कल्याण कार्यक्रमों को व्यवस्थित करके उनके निरीक्षण, परस्पर सम्पर्क स्थापित करने तथा उन्हें नियन्त्रित करने पर खर्च की जाएगी। पूर्वी प्रदेशों में इस कार्य में प्रशिक्षण-प्राप्त टेकनीकल कर्मचारियों का अभाव सबसे मुख्य बाधा रही है। अतएव, इस कठिनाई को हल करने के लिए भारत सरकार ने 'भारतीय सीमावर्ती प्रशासन सेवा' नामक एक नए संवर्ग की स्थापना की है जिससे उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी, मनीपुर और त्रिपुरा में प्रथम वर्ग और द्वितीय वर्ग की प्रशासनिक जगहों के लिए प्रशिक्षित अधिकारी प्राप्त हो सकेंगे। इस नई सेवा में इस समय ४३ स्थान प्रथम श्रेणी के हैं, जिनमें से २३ प्रथम ग्रेड के और २० द्वितीय ग्रेड के हैं। इन क्षेत्रों में अधीनस्थ कर्मचारियों की व्यवस्था का भी प्रबन्ध किया जा रहा है। इनके अतिरिक्त ऐसे समाज सेवकों की आवश्यकता है जो आदिम जाति क्षेत्रों में वहां के निवासियों के साथ घुल-मिलकर, उनके बीच में रहकर सेवा कार्य कर सकें। आदिम जाति क्षेत्रों के लिए प्रशासकों को अधिकाधिक संख्या में उपलब्ध करने एवं उनके प्रशिक्षण पर विशेष बल दिया गया है जिससे वे अपने ही क्षेत्रों में कार्य कर सकें। पिछड़े वर्गों के निमित्त बनाए गए

विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने में परामर्श देने के लिए गृह मंत्रालय एक केन्द्रीय परामर्शदात्री बोर्ड बनाने के विषय में विचार कर रहा है। इसी प्रकार का एक अन्य बोर्ड अनुसूचित जातियों के लिए बनाने का भी विचार किया जा रहा है।

हरिजन

२६. हरिजनों के कल्याण का दायित्व मुख्यतः राज्य सरकारों पर है। हरिजनों के हितों की रक्षा के लिए संविधान में अनेक संरक्षण हैं। अनुसूचित जातियों के लिए विकास कार्यक्रम इस ध्येय को सम्मुख रखकर बनाए गए हैं कि उनका सामाजिक स्तर ऊंचा हो और उन्हें शिक्षा तथा आर्थिक क्षेत्र में उन्नति के पूर्ण अवसर प्राप्त हों। प्रथम पंचवर्षीय योजना से पूर्व राज्यों में हरिजनों की स्थिति में सुधार के लिए कुछ कार्य किए गए थे। अस्पृश्यता निवारण संबंधी एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम भी आरम्भ किया गया था। प्रथम योजना में अनुसूचित जातियों के कल्याण के लिए ७ करोड़ रुपया रखा गया था।

२७. भारत के संविधान में अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया गया है। छुआछूत के व्यवहार को प्रत्येक रूप में निषिद्ध घोषित कर दिया गया है। जनता में छुआछूत के विरुद्ध भावना जागृत करने के लिए राज्य सरकारों और अखिल भारतीय गैर-सरकारी संगठनों ने केन्द्रीय सरकार की सहायता से वृहत् प्रचार कार्य आरम्भ किया है। तो भी अभी छुआछूत किसी न किसी रूप में विद्यमान है, यद्यपि कम मात्रा में है। जून १९५५ से अस्पृश्यता अपराध अधिनियम के अन्तर्गत छुआछूत को कानून द्वारा दण्डनीय अपराध करार दिया गया है।

२८. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में अनुसूचित जातियों के कल्याण कार्यों के लिए २१·२८ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रस्तावित योजनाओं के लिए ६·२५ करोड़ रुपया रखा गया है। इन योजनाओं में (१) आवास, (२) पीने के पानी की व्यवस्था, (३) आर्थिक उन्नति, और (४) अस्पृश्यता निवारण के लिए प्रचार कार्य एवं गैर-सरकारी संस्थाओं को सहायता देना सम्मिलित है। हर राज्य में हरिजनों के लिए जो विशेष कार्यक्रम अपनाए जाएंगे, वे उनके सामान्य विकास कार्यक्रमों के ही पूरक कार्यक्रम होंगे।

२९. प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में ४,५०० कुएं खोदे गए थे। द्वितीय योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारों की योजनाओं में १५,२०० कुएं खुदवाने की व्यवस्था है। इनके अतिरिक्त केन्द्र द्वारा प्रस्तावित एक योजना के अन्तर्गत ८,२०० कुएं और खुदवाने का निश्चय किया गया है। साथ ही ९३,३०० मकान या मकानों के लिए स्थानों का प्रबन्ध किया जाएगा। इस कार्य पर लगभग ३·४८ करोड़ रुपया व्यय होगा। इसके अतिरिक्त केन्द्र द्वारा प्रस्तावित एक योजना के अन्तर्गत १·७७ करोड़ रुपए की लागत से ३६,००० मकानों का निर्माण करने की व्यवस्था की गई है। इन योजनाओं को कार्यान्वित करने में किसी प्रकार की पृथक्करण नीति को प्रश्रय नहीं दिया जाएगा। यह भी ध्यान रखा जाएगा कि मकानों के विषय में सबसे पिछड़े लोगों को प्राथमिकता दी जाए क्योंकि मल-मूत्र साफ करने के कारण जनसंख्या के एक महत्वपूर्ण भाग को अछूत कहलाना पड़ता है, अतः यह निश्चय किया गया है कि नए बनने वाले मकानों में आधुनिक ढंग के शौचालय हों। मौजूदा मकानों में, जिनमें पुराने ढंग के शौचालय हैं, उनके स्थान पर आधुनिक ढंग के शौचालय बनाए जाएं, जिससे मल-मूत्र साफ करने वालों की

आवश्यकता न रहे। राज्य सरकारों की योजनाओं में भी ८० आवास सहकारी समितियों की स्थापना की व्यवस्था है।

३०. राज्य सरकारों की योजनाओं के अन्तर्गत लगभग ७,००० हरिजन विद्यार्थी विशेष दस्तकारी प्रशिक्षण केन्द्रों में प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे। केन्द्रीय सरकार की योजनाओं में अनुसूचित जातियों के लिए १६६ प्रशिक्षण-उत्पादन केन्द्र खोले जाएंगे, जो योजना की अवधि में ३३,८८४ व्यक्तियों को विभिन्न दस्तकारियों और धंधों में प्रशिक्षित करेंगे। प्रशिक्षित व्यक्तियों को व्यवसाय चलाने के लिए आर्थिक सहायता भी दी जाएगी। जिन व्यक्तियों को भूमि मिलेगी, उन्हें कृषि के लिए सहायता दी जाएगी। केन्द्र द्वारा आरम्भ की जाने वाली अनुसूचित जातियों के आर्थिक उत्थान की योजनाओं के लिए कुल मिलाकर २३१.५ लाख रुपए की व्यवस्था की गई है।

३१. बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ रोजगारों के न बढ़ने के कारण हरिजनों को इसका दुखद परिणाम भुगतना पड़ा है। अतएव उनके लिए केवल रोजगार जुटाने ही आवश्यक नहीं हैं, वरन उनमें बड़े पैमाने पर शिक्षा का प्रचार करने की भी आवश्यकता है जिससे वे केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा प्रदान की हुई प्रशासनिक सुविधाओं तथा संरक्षणों का लाभ उठा सकें। द्वितीय योजना में ३० लाख से ऊपर फीस माफियां और छात्रवृत्तियां दी जाएंगी तथा ६,००० पाठशालाओं और छात्रावासों की स्थापना होगी। शिक्षा मन्त्रालय की ओर से भी १,०७,००० छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की गई है।

३२. सरकार ने अस्पृश्यता निवारण के लिए जो कानून बनाया है, उसे सफल बनाने के लिए जनता में सतर्कता तथा जागरूकता की भावना उत्पन्न करना आवश्यक है। इस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए प्रशिक्षित प्रचारकों की आवश्यकता है। इस क्षेत्र में गैर-सरकारी संस्थाओं को कार्य करने का पर्याप्त अवसर है। गृह मन्त्रालय ने अनुसूचित जातियों के लिए सुधार कार्य करने वाली स्वयंसेवी संस्थाओं की सहायतार्थ ५० लाख रुपया तथा फिल्मों और पोस्टरों आदि द्वारा प्रचार कार्य के लिए २५ लाख रुपया निर्धारित किया है।

भूतपूर्व अपराधजीवी जातियां

३३. प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ३.५ करोड़ रुपए की धनराशि से भूतपूर्व अपराध-जीवी जातियों को बसाने और उनमें सामुदायिक जीवन व्यतीत करने की भावना जागृत करने के लिए कार्य आरम्भ किया गया था। यद्यपि इस दिशा में प्रगति अधिक नहीं हो पाई, किन्तु उनके जीवन-स्तर को ऊंचा उठाने के सतत प्रयास किए जा रहे हैं। उन्हें आर्थिक रूप से उन्नति करने तथा नई पीढ़ी को पुरानी समाज-विरोधी प्रथाओं से अलग रखने पर विशेष बल दिया जा रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ४२,०५६ विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां, छात्रावास तथा पुस्तकों की सहायता दी गई। बालवाड़ियों, आश्रम पाठशालाएं और संस्कार केन्द्र समेत कुल मिला-कर २६१ पाठशालाएं खोली गईं। कुछ विद्यार्थियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण और छात्रावास की सुविधाएं प्रदान की गईं। ३,६२६ परिवारों को कृषि कार्य में सहायता दी गई, ११३ सहकारी समितियां संगठित हुईं तथा ३३ घरेलू उद्योग-धंधों के केन्द्र स्थापित किए गए। बहुत-से परिवारों के पुनर्वास में उनकी आर्थिक सहायता की गई। इस समय भूतपूर्व अपराधजीवी जातियों के कल्याण के लिए १७ छोटी तथा ३० बड़ी बस्तियां हैं। बम्बई में नरोदा और उत्तर प्रदेश में भाटपुरवा में बस्तियां बसाने के अच्छे परिणाम निकले हैं। इन स्थानों में बसे हुए लोगों ने जातीय पंचायत की प्राचीन प्रथा को त्यागकर अपना नया संगठन बना लिया है।

३४. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में भूतपूर्व अपराधजीवी जातियों के कार्यक्रम के लिए २.६४ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इस कार्यक्रम में १५,२४६ परिवारों को—जिनमें अधिकांश अभी भी खानाबदोशों जैसा जीवन व्यतीत कर रहे हैं— बस्तियों में बसाने और उनके पुनर्वास की योजनाएं भी सम्मिलित हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ८,१५७ मकान बनेंगे तथा ३६४ कुएं खुदवाए जाएंगे। ६७ संस्कार केन्द्रों व बालवाड़ियों तथा ५२ आश्रम पाठशालाओं द्वारा बच्चों को अपराध करने की प्रवृत्तियों से बचाए रखने का विशेष प्रयत्न किया जाएगा। प्रौढ़ों को सामुदायिक केन्द्रों द्वारा अच्छे रहन-सहन का ढंग सिखाया जाएगा। कुल मिलाकर १,१६,४३२ छात्रवृत्तियों और अन्य शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं की व्यवस्था की गई है। साथ ही, गृह मन्त्रालय ने अपनी योजना में भूतपूर्व अपराधजीवी जातियों को बसाने के लिए १.११ करोड़ रुपए की व्यवस्था की है। अनुमान लगाया गया है कि यदि राज्य सरकार भूमि का प्रबन्ध कर दे तो मोटे तौर पर एक परिवार को बसाने में १,६०० रुपया व्यय होगा। इस हिसाब से द्वितीय योजना काल में भूतपूर्व अपराधजीवी जातियों के ७,१०० परिवारों को बसाने का विचार किया गया है।

अध्याय २६

समाज कल्याण सेवाएं

समाज सेवाओं का विकास स्वभावतः ही धीमा होता है। इसकी कुछ प्रमुख कठिनाइयां इस प्रकार हैं—प्राप्त आर्थिक साधनों तथा समाज सेवाओं के लिए उपलब्ध किए जा सकने वाले साधनों की कमी, प्रशिक्षित कर्मचारियों तथा समाज कल्याण संगठनों का अभाव और सामाजिक समस्याओं के विषय में पर्याप्त जानकारी की कमी। फलस्वरूप, जिन वर्गों को विशेष सहायता की आवश्यकता है या जो असह्य स्थिति में हैं, उनके लिए समाज कल्याण के उद्देश्य उपर्युक्त कारणों से सीमित हो जाते हैं। किन्तु समाज कल्याण के उद्देश्यों का क्षेत्र व्यापक है। समाज कल्याण सेवा का उद्देश्य केवल समाज के किसी अनुविधाग्रस्त वर्ग विशेष की सहायता करना ही नहीं, वरन समूचे समाज के हित में कार्य करना है। निस्सन्देह, जो समस्याएं हमारे सम्मुख उपस्थित हैं, उनका समाधान होना चाहिए, किन्तु नई समस्याओं को उत्पन्न होने से रोकने के उपाय करना भी अत्यावश्यक है।

२. समाज सेवा के क्षेत्र में सरकार ने अथवा सार्वजनिक अधिकरण ने जो कार्यकर्ता जुटाए हैं, वे तो केवल उन केन्द्र-बिन्दुओं के समान होंगे जिनके चारों ओर जन साधारण में से ही लोगों को स्वेच्छापूर्वक सेवा कार्य में जुटाना होगा। पहले स्वयंसेवी संस्थाएं व्यक्तिगत दान पर आश्रित रहती थीं, किन्तु अब इन संस्थाओं को राष्ट्र के व्यापक हित के लिए कार्य करने की प्रेरणा देकर, अपने कार्यक्षेत्र की परिधि को विस्तृत करने के लिए उत्साहित करना चाहिए। इसलिए केन्द्र और राज्य सरकारों तथा स्थानीय अधिकारियों को इस क्षेत्र में व्यक्तियों के निजी प्रयत्नों में निस्संकोच भाव से सहायक होना चाहिए। अन्ततः समाज सेवाओं के कार्य-संचालन का भार मुख्यतः स्थानीय अधिकारियों पर ही पड़ेगा, किन्तु आरम्भिक अवस्था में ऐसी विशेष संस्थाओं की आवश्यकता है जो समाज सेवा के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करें और जहां तक सम्भव हो सरकारी अधिकरणों और स्वयंसेवी संस्थाओं के कार्य में समन्वय स्थापित करें।

३. समाज कल्याण के इस व्यापक कार्यक्रम में उदाहरणार्थ ये कार्य सम्मिलित होंगे—सामाजिक कानूनों की रचना, स्त्रियों और बालकों, परिवार एवं युवकों के कल्याण कार्य, शारीरिक और मानसिक आरोग्यता, अपराधों की रोकथाम और अपराधियों के लिए सुधार कार्य। साथ ही शारीरिक और मानसिक रूप से विकृत व्यक्तियों के लिए कल्याण योजनाएं भी इस व्यापक कार्यक्रम का अंग होंगी। भारत की विशेष परिस्थितियों और पृष्ठभूमि को देखते हुए मद्य निषेध का कार्यक्रम भी इसमें सम्मिलित होगा। इस अध्याय में मद्य निषेध और समाज सेवा के क्षेत्र में प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में हुए काम और द्वितीय पंचवर्षीय योजना के प्रस्तावित कार्यक्रम पर संक्षेप में प्रकाश डाला जाएगा।

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की योजनाएं

४. केन्द्रीय सरकार ने प्रथम पंचवर्षीय योजना के ही एक अंग के रूप में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना की है। बोर्ड का मुख्य उद्देश्य स्त्रियों, बच्चों, और विकलांगों के सहायता

कार्यों में संलग्न स्वयंसेवी संस्थाओं को उनके कल्याण कार्यक्रमों के संगठन में सहायता देना है। फलतः बोर्ड ने राज्य सरकारों के सहयोग से समूचे देश में राज्य कल्याण बोर्ड की स्थापना की है। देश भर में इनका जाल बिछ जाने से द्वितीय पंचवर्षीय योजना के विस्तृत और व्यापक कार्यक्रमों को कार्यान्वित करना सम्भव होगा। पिछले तीन वर्षों में इन कार्यक्रमों की बुनियाद डाली ही जा चुकी है। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने २,१२८ संस्थाओं को सहायता दी है। इनमें ६६० महिला कल्याण संस्थाएं, ५६१ बाल कल्याण संस्थाएं, विकलांगों की सेवा और अपराधियों का सुधार करने के लिए १५१ संस्थाएं और कल्याण कार्यों में संलग्न ७२६ संस्थाएं हैं। बोर्ड द्वारा दिए जाने वाले अनुदानों का उद्देश्य वर्तमान स्वयंसेवी संस्थाओं को उनके कार्य को सुचारु रूप से संगठित करने में सहायता देना है। नव निर्मित स्वयंसेवी संस्थाओं को इस उद्देश्य से अनुदान दिया जाता है कि वे अपना कार्य सही ढंग से आरम्भ कर सकें। साधारणतः बोर्ड का उद्देश्य देश के सब भागों में स्वयंसेवी संस्थाओं की स्थापना करने में सहायता देना है। इसके अलावा केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने कल्याण विस्तार योजना का कार्य भी अपनाया है। देश भर के प्रत्येक जिले में एक कल्याण केन्द्र होगा। प्रत्येक केन्द्र लगभग २५ ग्रामों की सेवा कर सकेगा। बोर्ड ने द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में हर जिले में ३ अतिरिक्त कल्याण विस्तार केन्द्र स्थापित करने का कार्यक्रम बनाया है। १९५६ के आरम्भ में बोर्ड २९१ कल्याण विस्तार केन्द्र स्थापित कर चुका था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में बोर्ड का कार्यक्रम १,३२० केन्द्र स्थापित करने का है जिससे हर जिले में ४ केन्द्र स्थापित करने का उसका कार्यक्रम पूरा हो सके। इस कार्यक्रम के पूर्ण हो जाने पर महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष रूप से संगठित इन कल्याण सेवाओं से कुल मिलाकर ५०,००० गांव लाभान्वित होंगे। द्वितीय योजना के प्रथम तीन वर्षों में प्रस्तावित केन्द्रों में से एक-तिहाई केन्द्र स्थापित कर देने का निश्चय किया गया है। हर जिले में यह केन्द्र एक परिपालन समिति के अधीन रहेगा। इस समिति में बहुसंख्या स्थानीय महिला समाज सेविकाओं की ही रहेगी। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने कल्याण विस्तार केन्द्रों की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए ग्राम सेविकाओं और दाइयों के प्रशिक्षण का वृहत कार्यक्रम अपनाया है। बोर्ड ने दिल्ली, पूना, हैदराबाद और विजयवाड़ा में स्त्रियों को उनके घरों में ही काम देने जैसे कठिन कार्य का भी श्रीगणेश कर दिया है। दियासलाई बनाने की तीन फैक्टरियां स्थापित की गई हैं। वाणिज्य और उद्योग मन्त्रालय की सहायता से और फैक्टरियां खोलने पर विचार हो रहा है।

५. कल्याण बोर्ड द्वारा निर्मित दो परामर्शदात्री समितियों ने भी वेश्यावृत्ति की रोकथाम और उद्धार सेवाओं के प्रस्ताव रखे हैं। प्रस्तावित सेवाओं में काफी बड़ी संख्या में आश्रयगृहों की स्थापना करने पर विचार किया गया है। साधारणतः हर राज्य में पांच प्रकार के आश्रयगृह बनाए जाने की योजना है। एक आश्रयगृह ऐसी स्त्रियों के लिए होगा जिनका उद्धार किया गया है और जिन्हें पर्याप्त समय तक एक विशेष वातावरण में रखने की आवश्यकता है। दो आश्रयगृह ऐसे होंगे जिनमें उन व्यक्तियों को रखा जाएगा जो सुधार संस्थाओं की अवधि समाप्त कर चुके हैं किन्तु फिर भी उन्हें कुछ समय तक देख-रेख की आवश्यकता है। इन आश्रयगृहों में से एक स्त्रियों के लिए और दूसरा पुरुषों के लिए होगा। शेष दो अन्य सेवा संस्थाओं से आए हुए व्यक्तियों के लिए होंगे, जिन्हें पुनः बसाने के लिए अल्पकालीन सहायता दी जाएगी। हर जिले में एक ऐसे आश्रयगृह की भी व्यवस्था होगी जहां ऊपर उल्लिखित प्रकार के व्यक्तियों को राजकीय आश्रयगृहों में भेजे जाने से पूर्व उनकी डाक्टरी परीक्षा और स्क्रीनिंग की जाएगी।

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड के इन कार्यक्रमों के लिए १४ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। उद्धारोपरांत सेवाओं के लिए और स्वस्थ नैतिक तथा सामाजिक आचार के लिए राज्य सरकार की योजनाओं में ३ करोड़ रुपए की व्यवस्था है तथा तत्सम्बन्धी कार्यों पर गृह मन्त्रालय भी ३ करोड़ रुपए व्यय करेगा।

शारीरिक और मानसिक विकलांग व्यक्तियों के लिए कल्याण योजनाएं

६. विकलांगों की शिक्षा के लिए शिक्षा मन्त्रालय ने सितम्बर १९५५ में एक राष्ट्रीय परामर्शदात्री परिषद बनाई थी। इस परिषद का कार्य शारीरिक और मानसिक विकलांगों की शिक्षा, प्रशिक्षण तथा रोजगार विषयक समस्याओं पर केन्द्रीय सरकार को परामर्श देना है। साथ ही उनके लिए सामाजिक और सांस्कृतिक सुविधाओं की व्यवस्था करना, नई योजनाएं तैयार करना एवं इस क्षेत्र में कार्यरत स्वयंसेवी संस्थाओं के साथ सम्पर्क स्थापित करने का काम भी करना है। अब शारीरिक और मानसिक दृष्टि से विकलांग व्यक्तियों की समस्याओं का सर्वेक्षण करने का निश्चय किया गया है। इस समय लगभग ६० अंध-विद्यालय हैं, ४८ पाठशालाएं बहरे-गूंगों के लिए, ९ अपांगों और रुग्णों के लिए तथा ५ मानसिक विकृति वालों के लिए हैं। इन पाठशालाओं में बहु संख्या गैर-सरकारी संस्थाओं की है, जिन्हें सरकार सहायता देती है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में अतिरिक्त सुविधाएं देने की भी व्यवस्था है, उदाहरणार्थ, अंधे और बहरे बच्चों के लिए आदर्श पाठशालाएं खोलना और प्रौढ़ अंधों के प्रशिक्षणालय में एक महिला विभाग की स्थापना करना तथा छात्रवृत्तियों की व्यवस्था करना आदि। कई राज्य सरकारों की योजनाओं में भी विकलांगों की शिक्षा और कल्याण कार्यों के लिए व्यवस्था की गई है। स्वास्थ्य मन्त्रालय के कार्यक्रम में असाध्य रोगों से पीड़ित व्यक्तियों के पुनर्वास की व्यवस्था भी की गई है।

युवक कल्याण

७. प्रथम पंचवर्षीय योजना में अनेक युवक संस्थाओं और युवक कल्याण कार्यक्रमों को सक्रिय सहायता प्रदान की गई थी। योजना में युवक शिविरों और विद्यार्थियों के लिए श्रमदान के व्यापक कार्यक्रम को संगठित करने के लिए १ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई थी। इस कार्यक्रम का प्रयोजन रचनात्मक कार्यों में हाथ बंटाने के लिए युवकों को प्रोत्साहित करना था। इस धनराशि में से तीन-चौथाई भाग श्रम और सामाजिक सेवा शिविरों के लिए और एक-चौथाई भाग तैरने के लिए तालाब तथा खुले रंगमंच आदि की योजनाओं के लिए निर्धारित किया गया था। इस प्रकार की योजनाओं को विद्यार्थी स्वयं अपनी शिक्षा संस्थाओं के समीपवर्ती स्थानों में कार्यान्वित करेंगे।

१९५५ के अन्त तक ९०० शिविर संगठित किए जा चुके थे, जिनमें लगभग १,००,००० युवकों ने भाग लिया। इन शिविरों में युवकों ने नहरों व सड़कों, नालों और तालाबों की मरम्मत, गन्दी बस्तियों की सफाई एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यों में भाग लिया। भारत सेवक समाज की युवक शाखाओं ने भी लगभग ५०० युवक व विद्यार्थी शिविर संगठित किए, जिनमें लगभग ४०,००० नवयुवक सम्मिलित हुए। प्रथम योजना काल में भारत स्काउटों और गाइडों का आन्दोलन भी पहले की अपेक्षा लगभग ५० प्रतिशत आगे बढ़ा है। इस संगठन में इस समय ८,३८,४०५ स्काउट तथा ६८,११८ गाइड हैं। राष्ट्रीय केडेट कोर तथा सहायक केडेट कोर का भी योजना काल में पर्याप्त विकास हुआ है। राष्ट्रीय केडेट कोर की कुल संख्या इस समय १,१८,००० है, जिनमें से ४९,००० सीनियर डिवीजन, ६४,०००

जूनियर डिवीजन, ८,००० गर्ल्स डिवीजन तथा ३,००० अध्यापक और नेता शिक्षा संस्थाओं से आए हैं। सहायक केडेट कोर ने, जिसकी संख्या (लड़के और लड़कियां मिलाकर) ७,५०,००० है, द्वितीय योजना के समाप्त होने तक अपने को द्विगुणित करने का कार्यक्रम बनाया है। शिक्षा मन्त्रालय ने अपनी योजना में व्यायाम शिक्षा का एक राष्ट्रीय विद्यालय स्थापित करने की व्यवस्था की है। इसका उद्देश्य होगा विभिन्न खेलों का विकास करना और युवक नेतृत्व, प्रशिक्षण शिविर तथा युवक छात्रावास आदि युवक कल्याण के अनेक कार्यों में सहायता करना। श्रम शिविरों तथा समाज सेवा शिविरों एवं अन्य कार्यों का आयोजन करने तथा भारत स्काउट्स एंड गाइड्स के कार्यों में सहायता देने की भी व्यवस्था की गई है।

अन्य कल्याण कार्यक्रम

८. गृह मन्त्रालय ने द्वितीय योजना के लिए बाल अपराध, वेश्यावृत्ति, निठल्लेपन या भिक्षावृत्ति के सम्बन्ध में कुछ प्रस्ताव तैयार किए हैं। इन प्रस्तावों का मुख्य उद्देश्य ऐसी आवश्यक संस्थाओं की स्थापना करना है जो उपर्युक्त समस्याओं से सम्बन्धित समाज कल्याण कार्यों को आगे बढ़ाएं। गृह मन्त्रालय ने ऐसे राज्यों की, जिनमें सरकार द्वारा या स्वयंसेवी संगठनों द्वारा इस प्रकार की संस्थाएं नहीं बनाई गई हैं, सहायतार्थ अपनी योजना में २ करोड़ रुपए की व्यवस्था की है।

९. बड़े नगरों में बाल अपराध बढ़ते जा रहे हैं और इनमें आम अपराध चोरी है। बाल अपराध सम्बन्धी कानून १५ राज्यों में लागू हैं और अन्य राज्यों में उन्हें लागू करने की सिफारिश की गई है, किन्तु बहुधा ये कानून पर्याप्त रूप से कार्यान्वित नहीं किए जाते। बाल न्यायालय केवल कुछ ही राज्यों में हैं। अन्य राज्यों में साधारण न्यायालय ही बाल अपराधियों के मामलों की सुनवाई करते हैं। बाल अपराधियों की संस्थाएं भी अपेक्षाकृत कम हैं—६७ रिमांड गृह हैं, ४६ सर्टीफाइड स्कूल हैं, ७ सुधार गृह हैं, ५ बाल कारागृह हैं और ८ किशोरबन्दी (बोर्स्टल) संस्थाएं हैं। केन्द्रीय सरकार ने राज्य सरकारों को परामर्श दिया है कि हर मुख्य नगर में एक रिमांड गृह होना चाहिए, जहां हवालाती बालकों को छानबीन या मुकदमे के दिनों में रखा जा सके। साथ ही यह सुझाव भी दिया है कि प्रत्येक राज्य में एक सर्टीफाइड स्कूल और बच्चों के लिए एक निवास गृह हो जिसमें उन बालकों को जो परीक्षणात्मक रूप में मुक्त किए गए हैं रखा जा सके। यह तभी होना चाहिए, जब उनका किसी परिवार में रखे जाने का प्रबन्ध न हो सका हो। हर राज्य में १५ से २१ वर्ष तक की आयु के अपराधियों के लिए एक किशोरबन्दी स्कूल होना चाहिए। बाल चिकित्सालय और स्कूलों के सामाजिक कार्यकर्ता इन विकृत आचरण विषयक समस्याओं को प्रारम्भिक अवस्था में ही हल करने एवं बाल अपराधों के अवसरों को कम करने में सहायक हो सकते हैं।

१०. केन्द्रीय सरकार ने यह भी सुझाव रखा है कि जिन राज्यों में अभी तक यह प्रथा नहीं है कि अपराधियों को परीक्षणात्मक रूप में कुछ समय के लिए मुक्त करके यह देखा जाए कि पुनः वे उन्हीं अपराधों को तो नहीं दोहरा रहे हैं, उन राज्यों में भी अब यह प्रथा आरम्भ कर देनी चाहिए। साथ ही यह प्रस्ताव भी रखा गया है कि मुख्य-मुख्य कारागृहों में कल्याण प्रशासक नियुक्त किए जाएं जिनका कार्य कारावास की अवधि में कैदियों से मिलते-जुलते रहना एवं मुक्त

११. भिखारियों की समस्या पर काफी समय से विचार किया जा रहा है, किन्तु इनके अत्यधिक व्यापक होने के कारण कोई सन्तोषप्रद समाधान नहीं निकाला जा सका। योजना आयोग की खोजबीन समिति ने इस समस्या के अध्ययन के लिए एक योजना आरम्भ की है। अब यह नितान्त आवश्यक हो गया है कि भिखमंगों की समस्या को समूल नष्ट करने का कार्यक्रम बनाया जाए। बहुत शोचनीय अवस्था वाले भिखमंगों के लिए केन्द्रीय सरकार ने यह सुझाव दिया है कि हर राज्य में एक ऐसा केन्द्र होना चाहिए जिसमें १०० अशक्त, रुग्ण या अपांग भिखारियों को रखने का प्रबन्ध हो।

समाज कल्याण के लिए साधन

१२. द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सामाज कल्याण क्षेत्र में किए जाने वाले कार्यक्रमों का जो संक्षिप्त परिचय ऊपर दिया गया है, उससे पता चलता है कि गत ३ या ४ वर्षों में जो कार्य हुए हैं, उसके परिणामस्वरूप अब समाज कल्याण के कार्यक्रम आयोजित विकास के अभिन्न अंग के रूप में क्रियान्वित हो रहे हैं। योजना में समाज कल्याण कार्यों के निमित्त लगभग २९ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इसमें से १९ करोड़ रुपया केन्द्र की योजनाओं पर तथा लगभग १० करोड़ रुपया राज्य की योजनाओं पर व्यय होगा। शिक्षा मन्त्रालय की योजना में युवक कल्याण और समाज कल्याण के कार्यक्रमों के लिए लगभग ११ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है। इसके साथ ही योजना में स्थानीय विकास कार्यों के लिए १५ करोड़ रुपया और जन सहयोग सम्बन्धी सामाजिक कार्यों के लिए ५ करोड़ रुपया निश्चित किया गया है। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि योजना में पिछड़ी जातियों के कल्याण कार्यों और ग्राम सुधार के कार्यक्रमों के लिए ९१ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इस कार्यक्रम में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजनाएं तथा ग्राम्य उद्योग-धंधे भी शामिल हैं। जहां सामाजिक और आर्थिक स्थितियों में एक-दूसरे से अत्यन्त निकट का सम्बन्ध है, वहां यह निश्चय करना कठिन है कि कौन-से कार्य आर्थिक अवस्था में सुधार करेंगे और कौन-से सामाजिक अवस्था में। वास्तव में दोनों एक ही उद्देश्य के पूरक अंग हैं।

१३. प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस आशय का सुझाव पेश किया गया था कि धार्मिक संस्थाओं और न्यासों से प्राप्त धन राज्य सरकारों और गैर-सरकारी संस्थाओं के कार्यक्रमों के लिए आय के महत्वपूर्ण साधन हो सकते हैं। अतः इस विषय की जांच-पड़ताल की सिफारिश की गई थी जिससे प्राप्त जानकारी के आधार पर कोई ऐसा कानून बनाया जा सके कि इन संस्थानों और न्यासों की सम्पत्ति उचित कार्यों के लिए सुलभ हो सके। समाज कल्याण के कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए पहले इन साधनों से पर्याप्त आर्थिक सहायता मिलती रही है। बहुधा ऐसा देखा गया है कि ये न्यास बनने के कुछ समय पश्चात निष्क्रिय हो जाते हैं, फलतः उनकी आय मूल प्रयोजनों के लिए व्यय न होकर अर्थहीन उद्देश्यों में खर्च होने लगती है। समाज कल्याण कार्यों के पक्ष में लोकमत संगठित करते समय इसका ध्यान भी रखना चाहिए कि ये न्यास ऐसे कार्यों में विशेषतः स्वयंसेवी संस्थाओं के कार्यों में क्या योगदान दे सकते हैं। इन सम्भावनाओं की छानबीन की जा रही है।

१४. अन्त में यह कहना आवश्यक है कि समाज कल्याण के हर क्षेत्र में जरूरतमन्दों और असमर्थ लोगों की सहायता का मुख्य उत्तरदायित्व स्थानीय जनता को ही अपने ऊपर लेना होगा। राज्य सरकारें और उनके द्वारा निर्मित संगठन एक सीमा विशेष तक ही कार्य कर

सकते हैं, फिर भी प्रथम पंचवर्षीय योजना के अनुभव ने वतलाया है कि सरकारी प्रशासकों ने धन एवं कार्यकर्ताओं द्वारा जो सहायता दी है वह, सामुदायिक प्रयत्नों और सेवा संगठनों में सेवाभाव जागृत करने में काफी सफल सिद्ध हुई है। इसी तथ्य को आधार मानकर द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए वृहत कार्यक्रम निर्धारित किए गए हैं।

मद्यनिषेध

१५. गत कई वर्षों से अधिकांश जनमत इस बात पर जोर दे रहा है कि मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकर भेषज (ड्रग्स) औषधों के प्रयोग का निषेध सरकार की सामाजिक नीति का आवश्यक अंग वना दिया जाए। संविधान के ४७वें अनुच्छेद में मद्यनिषेध को निदेशात्मक सिद्धान्त के रूप में स्वीकार किया गया है। अब तक इस दिशा में जो प्रगति हुई है वह नगण्य है। अतः योजना आयोग ने एक विशेष समिति नियुक्त की है जिसका कार्य यह होगा कि वह राज्य सरकारों द्वारा मद्यनिषेध के निमित्त अपनाए गए साधनों का अध्ययन करे और प्राप्त अनुभव के आधार पर केन्द्रीय सरकार को राष्ट्रीय स्तर पर मद्यनिषेध का व्यापक कार्यक्रम वनाने के लिए सुझाव दे। साथ ही उन साधनों और अवस्थाओं तथा व्यवस्था का भी उल्लेख करे जिनके द्वारा कार्यक्रम कार्यान्वित किया जाएगा। हाल ही में इस समिति के प्रतिवेदन पर राज्य सरकारों और केन्द्रीय मंत्रालय के सहयोग से विचार किया गया था। राष्ट्रीय विकास परिषद ने सामान्यतः निम्न लिखित सुझावों को स्वीकार कर लिया है।

१६. किसी भी मूल सामाजिक नीति पर विचार करते समय केवल आर्थिक कारणों को, व्यावहारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हुए भी, निर्णायक नहीं समझना चाहिए। आवश्यक वात यह है कि जो भी कार्यक्रम वनाए जाएं वे एक निश्चित अवधि में पूरे हो सकें। मद्यनिषेध के लिए समूचे देश में एक समान दृष्टिकोण की आवश्यकता है, किन्तु विस्तृत कार्यक्रम स्वयं राज्यों को ही वनाने होंगे, क्योंकि कुछ राज्य ऐसे भी हो सकते हैं जो दूसरों की अपेक्षा अधिक गतिशील हों। ऐसी अवस्था में उनकी यह प्रगति शेष राज्यों के लिए मार्गदर्शक का काम देगी। वे इन राज्यों के अनुभवों के आधार पर अपने विस्तृत कार्यक्रम वना सकेंगे।

१७. मद्यनिषेध जैसी राष्ट्रीय नीति को सफल वनाने के लिए विभिन्न साधन अपनाने पड़ेंगे, यथा कानूनी प्रतिबन्ध लगाना, लोकमत को मद्यनिषेध के पक्ष में करना, समाज सेवी संस्थाओं एवं कार्यकर्ताओं का स्वेच्छा से इस नीति के पक्ष में क्रियाशील होना, और मादक द्रव्यों के स्थान पर अन्य विकल्प एवं आमोद-प्रमोद के साधनों की व्यवस्था करना। इस नीति को सफल वनाने के निमित्त जो साधन अपनाए जाएंगे उनके लक्ष्य की ओर अग्रसर होने की दिशा यद्यपि समान ही होगी, तथापि लक्ष्य प्राप्ति के साधनों में स्थानीय अवस्थाओं और परिस्थितियों के अनुकूल हेर-फेर की गुंजाइश रहेगी। हर राज्य, उपर्युक्त दिशाओं में अग्रसर होने के लिए अपनी विशेष योजनाएं वना सकता है। मद्यनिषेध समिति ने सुझाव रखा है कि अप्रल १९५८ में मद्यनिषेध समूचे देश में लागू हो जाना चाहिए। हमारा विचार है कि इस दिशा में सामाजिक और प्रशासनिक कार्यक्षेत्र में प्रस्तावित कार्रवाइयों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न राज्य क्रमशः मद्यनिषेध के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अपने-अपने लक्ष्य निर्धारित कर लें तो व्यावहारिक दृष्टि से अधिक सुगमता होगी। यद्यपि मद्यनिषेध के कार्यक्रम की मुख्य दिशाओं में कार्य की निरन्तर समीक्षा और मूल्यांकन की व्यवस्था के साथ सहमति

होनी चाहिए, तथापि यह आवश्यक नहीं होगा कि संघ के सभी राज्य एक जैसे साधन अपनाएं या एक ही तिथि निर्धारित करें। मद्यनिषेध के उद्देश्य की ओर प्रगति करने का हमें यही सर्वोत्तम उपाय प्रतीत होता है।

१८. मद्यनिषेध जांच समिति ने एक केन्द्रीय समिति स्थापित करने की सिफारिश की है। इस समिति का कार्य मद्यनिषेध के कार्यक्रमों की समीक्षा करना और विभिन्न राज्यों की गतिविधियों में सम्पर्क स्थापित करना एवं उनकी व्यावहारिक कठिनाइयों से अवगत रहना होगा। यह भी सुझाव दिया गया है कि केन्द्रीय समिति वर्ष में एक बार राष्ट्रीय विकास परिषद को अपना प्रतिवेदन दिया करे। हम इन सिफारिशों से सहमत हैं। हमारे विचार में भी समिति का यह प्रस्ताव लाभकर होगा कि राज्यों में मद्यनिषेध मण्डल और मद्यनिषेध समितियां स्थापित की जाएं तथा इस कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए मद्यनिषेध प्रशासक नियुक्त किये जाएं।

१९. समिति ने जो प्रस्ताव रखे हैं, उनमें से कितने ही प्रस्तावों की मंत्रालयों और राज्यों द्वारा विस्तृत जांच कराने की आवश्यकता होगी। हमारा सुझाव है कि कार्य आरम्भ करने के लिए राज्य सरकारें निम्न दिशाओं में क्रियाशील हों :-

(१) मद्य सेवन से सम्बन्धित विज्ञापनों और मद्य सेवन के लिए प्रेरणा देने वाले प्रलोभनों को बन्द किया जाए।

(२) सार्वजनिक स्थानों (होटलों, निवास गृहों, जलपान गृहों और क्लबों) और सार्वजनिक स्वागत अवसरों पर मद्यपान निषिद्ध हो।

उपर्युक्त नियमों को लागू करते समय यह ध्यान अवश्य रखा जाए कि उनसे वैदेशिक प्रतिनिधियों के अधिकारों पर किसी तरह का आघात न पहुंचे तथा विदेशी दर्शकों एवं पर्यटकों को असुविधा या परेशानी न हो।

(३) टेकनीकल समितियां स्थापित की जाएं जो अवस्थाओं में विभाजित एक ऐसा कार्यक्रम बनाएं जिसका उद्देश्य यह हो कि—

(क) यथाशीघ्र शहरों और गांवों में शराब की दुकानों में कमी की जाए;

(ख) सप्ताह में अधिकाधिक दिन शराब की दुकानें बन्द रहा करें;

(ग) दुकानों को कम परिमाण में शराब दी जाए;

(घ) डिस्टिलरियों द्वारा तैयार की जाने वाली शराब की मादक शक्ति में धीरे-धीरे कमी की जाए;

(ङ) कुछ औद्योगिक क्षेत्रों तथा सामुदायिक विकास क्षेत्रों के निकट स्थित दुकानें बन्द की जाएं; और

(च) शहर या गांव के मुख्य रास्तों से दुकानों को उठाकर दूर जगहों पर ले जाया जाए।

(४) सस्ते और स्वास्थ्यवर्धक हल्के पेय पदार्थ तैयार करने के लिए बढ़ावा और सक्रिय सहायता दी जाए।

(५) स्वयंसेवी संस्थाओं को मनोरंजन केन्द्र संगठित करने में सहायता दी जाए।

(६) राष्ट्रीय विस्तार खण्डों और सामुदायिक योजना क्षेत्रों तथा समाज विस्तार कार्यक्रमों में मद्यनिषेध को भी रचनात्मक कार्य मानकर सम्मिलित किया जाए।

२०. उपर्युक्त सुझावों का अनुसरण करते हुए राज्य सरकारों से अनुरोध किया गया है कि वे अवस्थाओं में विभाजित कार्यक्रम तैयार करें और यह भी ध्यान रखें कि मद्यनिषेध का कार्यक्रम इस प्रकार स्थिर किया जाए कि वह उचित समय के भीतर पूरा हो जाए। जिन राज्यों में मद्यनिषेध लागू कर दिया गया है, उन राज्यों को चाहिए कि वे निषेध सम्बन्धी नियमों का तत्परता से पालन करें तथा जनता के सहयोग को काफी महत्वपूर्ण समझें। जिन राज्यों में आंशिक मद्यनिषेध लागू किया गया है, उनसे अनुरोध किया गया है कि वे अपने क्षेत्रों में अब तक के कार्य को संगठित और स्थायी बनाएं। लोकसभा में मद्यनिषेध के गैर-सरकारी प्रस्ताव पर विचार-विमर्श हुआ और ३१ मार्च, १९५६ को उसने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया :

"इस सदन की राय है कि मद्यनिषेध द्वितीय पंचवर्षीय योजना का अभिन्न अंग माना जाए, और वह यह सिफारिश करता है कि योजना आयोग मद्यनिषेध को देशव्यापी स्तर पर यथाशीघ्र और प्रभावकारी ढंग से लागू करने के लिए आवश्यक कार्यक्रम तैयार करे।"

यह प्रस्ताव भारत सरकार की ओर से स्वीकार कर लिया गया।

अध्याय ३०

विस्थापितों का पुनर्वास

विभाजन के पश्चात पश्चिम और पूर्व पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों का पुनर्वास तथा उन्हें सहायता देना एक प्रमुख राष्ट्रीय कार्य था। प्रथम पंचवर्षीय योजना में ८५ लाख ३० हजार विस्थापितों के पुनर्वास कार्य को प्राथमिकता दी गई थी। इस कार्य के लिए १३६ करोड़ रुपया रखा गया था, जिसका विवरण इस प्रकार है:

	(करोड़ रु०)
शहरी ऋण	१२.६०
ग्राम्य ऋण	१८.६०
पुनर्वास वित्त प्रशासन ऋण	१२.१०
औद्योगिक ऋण	३.००
आवास	६६.६०
शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण	२१.७०
	१३५.७०

पश्चिम पाकिस्तान के विस्थापित

२. प्रथम पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक पश्चिम पाकिस्तान से आए २३ लाख विस्थापित व्यक्तियों को भूमि देकर बसाया जा चुका है तथा सरकार द्वारा उन्हें ऋण व अनुदान देकर उनके पुनर्वास में सहायता की गई है। शहरी क्षेत्रों में १२ लाख व्यक्तियों को निष्क्रान्तों के मकानों में स्थान दिया गया है तथा अन्य दस लाख व्यक्तियों को २,००,००० नए बनाए गए मकानों में बसाया गया है। शहरी क्षेत्रों में विस्थापितों को छोटे व्यवसायों, उद्योगों व दूसरे धंधों में लगाने के लिए राज्य सरकारों ने ५,००० रुपए प्रति परिवार के हिसाब से ऋण दिया है। बड़े व्यवसायों के लिए पुनर्वास वित्त प्रशासन की ओर से ऋण दिए गए है। कुछ व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र भी स्थापित किए गए हैं, जिनमें लगभग ७५,००० व्यक्तियों को विभिन्न व्यवसायों में प्रशिक्षण दिया जा चुका है तथा ६,००० के लगभग अब प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे है। विस्थापित विद्यार्थियों की शिक्षा विषयक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए गैर-सरकारी शिक्षा संस्थाओं को सहायता दी गई है। विस्थापित विद्यार्थियों को वजीफे, अनुदान, छात्रवृत्तियां और निःशुल्क शिक्षा दी गई है। उनके लिए रोजगार और निवास के प्रबन्ध के लिए १४ छोटे नगर बनाए गए है। इनमें ऐसी व्यवस्था की गई है कि पानी, बिजली, नालियां आदि नगरों जैसी सुविधाएं प्राप्त हो सकें। इन छोटे नगरों में रोजगार में वृद्धि करने के अभिप्राय से उद्योगों को प्रोत्साहन देने के लिए कुछ योजनाएं स्वीकृत की गई हैं। इन उद्योगों की स्थापना में कुछ सहायता सरकार की ओर से भी दी जाएगी। अभी तक जो उद्योग-धंधे स्थापित हुए हैं उनसे अनुमान है कि पूर्व और पश्चिम पाकिस्तान से विस्थापित ११,००० व्यक्तियों को रोजगार मिल सकेगा। पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के लिए मुआवजे की जो योजना बनाई गई थी, उसे अब

कार्यान्वित किया जा रहा है। जब तक यह योजना पूर्ण रूप से कार्यान्वित नहीं हो जाएगी, तब तक विस्थापितों के पुनर्वास की समस्या बनी ही रहेगी।

पूर्व पाकिस्तान के विस्थापित

३. पश्चिम बंगाल और दूसरे निकटवर्ती राज्यों में पाकिस्तान से आए विस्थापितों का तांता-सा बंध गया है। ३८ लाख ३० हजार व्यक्तियों में से लगभग ३,८८,००० परिवारों को कृषि या अन्य सहायक धंधों में लगा दिया गया है। यद्यपि विस्थापितों की अधिकांश संख्या पश्चिम बंगाल में ही बसी है, फिर भी काफी बड़ी संख्या को त्रिपुरा, बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश और असम में बसाया गया है। लगभग ३,५०,००० घर मुख्यतः विस्थापितों ने सरकारी ऋण की सहायता से बनाए हैं। लगभग २२,००० विस्थापितों को व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण दिया गया है तथा ८,००० अभी प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। लगभग ८८,००० परिवारों को व्यापार ऋण दिए गए हैं। विस्थापितों के लगातार आते रहने के कारण पूर्वी राज्यों में उनके पुनर्वास की समस्या विशेष कठिन हो गई है। अनुमान लगाया गया है कि अभी भी लगभग १,७०,००० परिवारों को बसाना बाकी है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम

४. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पुनर्वास वित्त प्रशासन द्वारा दिए जाने वाले ४.५ करोड़ रुपए के ऋणों के अतिरिक्त, पुनर्वास के लिए ८५.५ करोड़ रुपए की धनराशि निर्धारित की गई है। मुख्य कार्यक्रम इस प्रकार हैं:—

(करोड़ रुपया)

योजना	पश्चिम पाकिस्तान के विस्थापित	पूर्व पाकिस्तान के विस्थापित	योग
१. शहरी ऋण	१.४७	४.२५	५.७२
२. (क) ग्राम ऋण	०.१६	१४.४४	१४.६०
(ख) कृषि भूमि का विकास	—	४.८०	४.८०
३. आवास	५.७८	१८.६८	२४.४६
४. (क) औद्योगिक ऋण	४.६८	५.६०	११.२२
(ख) कुटीर उद्योग	०.६४		
५. शिक्षा	३.७५	१०.९६	१४.७१
६. व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण	१.९२	५.२५	७.१७
७. चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं	—	२.८२	२.८२
योग	१८.४०	६६.८०	८५.५०

५. पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के पुनर्वास कार्य का अधिकतर भाग प्रथम पंचवर्षीय योजना के समाप्त होने से पूर्व ही पूरा किया जा चुका था। फिर भी पहले से स्वीकृत आवास योजना को पूरा करने और विस्थापितों की बस्तियों में फैली हुई बेकारी को उद्योग-धंधों द्वारा दूर करने की व्यवस्था द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ही आरंभ की गई है। पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण योजनाओं को भी चालू रखना आवश्यक था।

६. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ६६.८ करोड़ रुपया पूर्व पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों की पुनर्वास योजनाओं के लिए रखा गया है। निश्चय किया गया है कि इन विस्थापितों के पुनर्वास के लिए वित्तीय व्यवस्था करने के बारे में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के तीसरे वर्ष में उस समय की अवस्थाओं को देखते हुए समीक्षा की जाए। उस समय यदि आवश्यक हुआ तो उसके लिए अतिरिक्त धन की व्यवस्था की जाएगी।

७. शहरी ऋण—पूर्व पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों को अल्प ऋणों द्वारा सहायता देने के लिए ४.२५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। प्रत्येक परिवार को २,२५० रुपए के औसत से धन प्राप्त होगा। इस योजना से सहायता प्राप्त करने वाले लगभग १६,००० परिवार होंगे।

पश्चिम क्षेत्र में अल्प शहरी ऋण योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारें १६५५-५६ के अन्त तक १४.५८ करोड़ रुपया दे देंगी। अनुभव किया जा रहा है कि पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों को ऋण के रूप में सहायता देने की आवश्यकता रहेगी, यद्यपि ऐसे व्यक्तियों की संख्या कम ही होगी। अतः द्वितीय पंचवर्षीय योजना में विस्थापितों के लिए १.४७ करोड़ रुपए के अल्प ऋण देने की व्यवस्था की गई है। यह ऋणराशि प्रति वर्ष कम होती जाएगी।

८. देहाती ऋण—द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पूर्वी पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों को कृषि तथा दूसरे सहायक धंधों में लगाने के लिए १४.४४ करोड़ रुपए के ऋण देने की व्यवस्था है। एक कृषि परिवार को औसतन २,४५० रुपए तथा कृषि-इतर परिवारों को १,५२५ से २,२७५ रुपए तक के ऋण दिए जाएंगे। इस योजना के अन्तर्गत लगभग ७०,००० परिवारों को सहायता मिलेगी।

पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए उक्त श्रेणी के विस्थापितों को बसाने का कार्य प्रायः समाप्त हो चुका है, अतः द्वितीय योजना के प्रथम दो वर्षों में केवल १६.४ लाख रुपए की अल्प व्यवस्था की गई है। औसत ऋण १,१५० रुपया प्रति परिवार होगा और इससे लगभग १,४०० परिवारों को लाभ पहुंचेगा।

९. कृषि भूमि का विकास—पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए विस्थापित किसानों के लिए निष्क्रांतों की भूमि मिल जाने से पंजाब और पेप्सू में कृषि पुनर्वास का कार्य अपेक्षाकृत अधिक सुचारु रूप से चला, यद्यपि इस प्रकार उपलब्ध भूमि पाकिस्तान में छूटी भूमि की अपेक्षा बहुत कम थी।

पूर्व पाकिस्तान से आए विस्थापित कृषक परिवारों के पुनर्वास कार्य में कुछ अधिक समय लगा। इस विलम्ब का कारण पश्चिम बंगाल में कृषि योग्य भूमि का अभाव और प्रारम्भ में विस्थापितों की पश्चिम बंगाल के अलावा दूसरे राज्यों में बसने की अनिच्छा रही है। कृषि

पश्चिम बंगाल में अब और अधिक परिवारों को नहीं बसाया जा सकता है, अतः उनके लिए दूसरे राज्यों में भूमि प्राप्त करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। मई १९५५ में राष्ट्रीय विकास परिषद ने सब राज्यों से अनुरोध किया था कि वे अपने-अपने राज्य में कृषि योग्य भूमि का प्रबन्ध कर के विस्थापितों के पुनर्वास में सहायता दें।

१०. पुनर्वास कार्य के लिए आंध्र, बिहार, उड़ीसा, हैदराबाद, मध्य प्रदेश, मैसूर, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और विन्ध्य प्रदेश ने कुल मिलाकर २,८९,३०० एकड़ भूमि दी है। टेकनीकल दलों ने अभी तक हैदराबाद, मैसूर, राजस्थान तथा विन्ध्य प्रदेश का दौरा किया है और २३,९५० एकड़ क्षेत्र चुने हैं। पुनर्वास मंत्रालय ने बिहार राज्य द्वारा दी हुई १४,००० एकड़ भूमि का चुनाव किया है। केन्द्रीय ट्रैक्टर संगठन के आरम्भिक प्रतिवेदनों के अनुसार त्रिपुरा में ८०,००० एकड़ भूमि और कछार में ६,००० एकड़ भूमि को सुधार कर कृषि योग्य बना सकने की सम्भावना है। कलकत्ते में १९५६ के आरम्भ में पूर्वी प्रदेशों के पुनर्वास मंत्रियों तथा उन राज्यों के जिन्होंने पुनर्वास के लिए भूमि देना स्वीकार किया है पुनर्वास मंत्रियों का एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन का अभिप्राय इस प्रश्न पर विचार-विमर्श करना था कि इस भूमि का सर्वोत्तम उपयोग क्या हो सकता है तथा इस कार्य के लिए और कौन से उपाय अपनाने चाहिएं। अनुभव किया गया है कि कृषक विस्थापितों की आय छोटे उद्योग-धंधों और कुटीर उद्योगों का विकास करके बढ़ाई जाए और जहां तक सम्भव हो पुनर्वास योजनाओं को हर राज्य की विकास योजनाओं से सम्बन्धित किया जाए। विभिन्न राज्यों से लगभग १,००,००० एकड़ भूमि उपलब्ध करने और उसका सुधार करने के निमित्त द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ४.८० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

११. आवास—पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों के लिए द्वितीय योजना में ५.७८ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। आवास की उन योजनाओं के लिए धन की व्यवस्था की गई है जो १९५५-५६ से आरम्भ हुई थीं और अभी तक चालू हैं। शरणार्थी बस्तियों और उपनगरों का समीपवर्ती नगर के स्तर पर विकास करने के लिए भी धन की व्यवस्था की गई है, क्योंकि इन बस्तियों के पिछड़े होने के कारण स्थानीय संस्थाएं इन्हें अपने स्थायी प्रशासन और प्रबन्ध के अंतर्गत लेने में हिचकती हैं।

पूर्वी भाग में आवास योजनाओं के लिए १८.६८ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है। इस धनराशि में से ९.२५ करोड़ रुपया आवास कार्य में व्यय होगा। यह विचार किया गया है कि १३,००० विस्थापित परिवारों को आवास के लिए औसतन ऋण २,५०० रुपया प्रति परिवार के हिसाब से दिया जाए और १२,००० मकान स्वयं सरकार बनाए जिनकी औसत लागत ५,००० रुपया प्रति मकान हो। शेष ९.४३ करोड़ रुपया वर्तमान बस्तियों के विकास कार्य पर, नगरपालिका और स्थानीय संस्थाओं को सहायता देने तथा इन संस्थाओं के क्षेत्रों में बसे हुए विस्थापितों को सुविधाएं देने आदि के कार्यों पर व्यय होगा। पश्चिम बंगाल में नियुक्त की गई विशेषज्ञों की एक समिति की सिफारिशों के अनुसार विकास योजनाएं तैयार की जा रही हैं।

१२. मध्यम, छोटे और कुटीर उद्योग—१९५४-५५ और १९५५-५६ में १.७५ करोड़ रुपया विस्थापितों की बस्तियों और छोटे नगरों में उद्योग खोलने के लिए निर्धारित किया गया था। यह निश्चय हुआ था कि मध्यम उद्योगों को प्रोत्साहन देने के लिए निजी उद्योगपतियों को कुछ सुविधाएं दी जाएं, यथा (१) कारखानों के लिए भूमि और इमारतें ७ से १० वर्ष तक

की अवधि के लिए किराए पर दी जाएं और यह व्यवस्था रहे कि यदि वे चाहें तो ठेके की अवधि में उन्हें खरीद सकेंगे, (२) फैक्टरियों में लगाई गई मशीनों के मूल्य का ५० प्रतिशत ऋण के रूप में दिया जाए, और (३) पानी तथा बिजली, आस-पास के उद्योग क्षेत्रों को मिलने वाली दरों पर दी जाए। दिसम्बर १९५५ के अन्त तक पूर्वी और पश्चिमी भागों के लिए ३६ योजनाएं स्वीकृत हो चुकी थीं। इन योजनाओं पर सरकार की ओर से २.६५ करोड़ रुपए व्यय करने की व्यवस्था थी। आशा है कि ये योजनाएं ११,००० विस्थापितों को रोजगार दे सकेंगी।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में ११.२२ करोड़ रुपया मध्यम, छोटे और कुटीर उद्योगों की उन्नति के लिए निर्धारित किया गया है। उपर्युक्त उद्योग-धंधे पूर्वी और पश्चिमी भागों में विस्थापितों की बस्तियों, छोटे नगरों या उन स्थानों में जहां विस्थापित लोग अधिक संख्या में बसे हुए हैं स्थित होंगे। अनुमान है कि इनमें अन्य ५०,००० विस्थापितों को रोजगार मिलेगा। इन उद्योग-धंधों की योजनाओं को औद्योगिक विकास के अन्य कार्यक्रमों के साथ भली प्रकार समन्वित करने का प्रबन्ध हो गया है।

१३. शिक्षा—इस कार्यक्रम के अन्तर्गत विस्थापित विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां, वजीफे, अनुदान तथा फीस माफी के द्वारा विद्याध्ययन में सहायता दी जाती है। विस्थापित विद्यार्थियों के विशेष लाभ के लिए सरकार कई स्कूल चला रही है। गैर-सरकारी स्कूलों को भी विस्थापित विद्यार्थियों की शिक्षा के लिए सहायता दी जा रही है। पूर्वी पाकिस्तान से विस्थापित विद्यार्थियों के शिक्षा कार्यक्रम पर द्वितीय पंचवर्षीय योजना में १०.९६ करोड़ रुपया व्यय करने की व्यवस्था है।

पश्चिमी भाग में फीस माफी, पुस्तकों के लिए अनुदान तथा वजीफे देने की सहायता के अतिरिक्त स्कूल की इमारतों के निर्माण तथा विस्थापित विद्यार्थियों की शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकता को पूरा करने वाली गैर-सरकारी शिक्षा संस्थाओं को सामान आदि खरीदने के लिए सहायता देने की व्यवस्था की गई है। यह सहायता विभाजन के समय अस्त-व्यस्त हुए स्कूलों व अन्य स्कूलों को भी प्राप्त होगी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्त तक इन संस्थाओं को लगभग ७० लाख रुपए की सहायता प्रदान की गई थी। निश्चय हुआ है कि पंजाब विश्वविद्यालय समेत इन संस्थाओं को द्वितीय योजना में भी यह आर्थिक सहायता देना जारी रखा जाए। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पश्चिम पाकिस्तान से विस्थापित विद्यार्थियों की शिक्षा के लिए ३.७४ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

व्यायाम और अनुशासन प्रशिक्षण की एक योजना विशेषतः विस्थापित बच्चों के लाभ के निमित्त व्यापक स्तर पर कार्यान्वित करने के अभिप्राय से प्रारम्भिक योजना के रूप में जुलाई १९५४ को चालू की गई थी। निश्चय किया गया है कि इस योजना को द्वितीय योजना काल में पश्चिमी और पूर्वी प्रदेशों की अधिकाधिक संस्थाओं में लागू किया जाए।

१४. व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण—शहरी भागों से आए हुए विस्थापितों की बहुसंख्या व्यापारियों और दुकानदारों आदि की थी। किन्तु अपने देश में उन्हें उन्हीं कामों में लगाना जिन्हें वे पहले से करते आए थे कठिन था अतः विस्थापितों को, विशेषकर नवयुवकों को विभिन्न व्यवसायों और दस्तकारियों का प्रशिक्षण देकर उन्हें अपनी आजीविका कमाने के योग्य बनाने के लिए एक व्यापक कार्यक्रम अपनाया गया था।

वर्तमान प्रशिक्षण केन्द्रों, कार्य केन्द्रों, उत्पादन केन्द्रों तथा पुनर्वास और रोजगार निदेशालय के अधीनस्थ केन्द्रों व पूर्वी क्षेत्र के अन्य केन्द्रों की कार्य व्यवस्था की जांच करने और इन केन्द्रों का पुनर्गठन करने के लिए सिफारिश करने और साथ ही विस्थापितों को रोजगार देने के निमित्त नई योजनाएं बनाने के उद्देश्य से एक टेकनीकल प्रशिक्षण समिति नियुक्त की गई थी। समिति ने अपना प्रतिवेदन दे दिया है और अब वह विचाराधीन है।

द्वितीय योजना के अन्तर्गत लगभग ८०,००० विस्थापितों को प्रशिक्षण देने का निश्चय किया गया है—लगभग ३०,००० को पश्चिमी क्षेत्र में और ५०,००० को पूर्वी क्षेत्र में। द्वितीय योजना में पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के प्रशिक्षण पर १.६२ करोड़ रुपए और पूर्वी पाकिस्तान से आए विस्थापितों के प्रशिक्षण पर ५.२५ करोड़ रुपए व्यय करने की व्यवस्था की गई है।

१५. **चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं**—अब तक चिकित्सा सम्बन्धी व्यय की अधिकांश सुविधाएं क्षय पीड़ित विस्थापितों तक ही सीमित थीं। विस्थापितों में क्षय रोग की अधिकता को देखते हुए पूर्वी क्षेत्र के राज्यों में आरोग्यालयों और चिकित्सालयों में उनके लिए सुरक्षित पलंगों की संख्या बढ़ाकर ५०० कर दी गई है। यह भी निश्चय हुआ है कि विस्थापितों के चिकित्सालय में दाखिल होने से वहां से छुट्टी मिलने के ३ मास बाद तक उन्हें निर्वाह भत्ता और निःशुल्क औषधियां दी जाएंगी। निर्वाह भत्ता ५० रुपए से बढ़ाकर ६५ रुपए महीना कर दिया गया है। राज्य सरकारों से क्षय रोग से पीड़ित विस्थापितों के लिए पृथक वार्डों की संख्या बढ़ाने, घरेलू इलाज और एक्स-रे आदि की अतिरिक्त सुविधाएं देने एवं चिकित्सालयों से मुक्त हुए विस्थापित तपेदिक रोगियों की बस्तियां बसाने के सम्बन्ध में सुझाव मांगे गए हैं।

पूर्वी क्षेत्र के विभिन्न छोटे नगरों या बस्तियों में जो विस्थापित बस गए हैं या बसेंगे, उन्हें पर्याप्त रूप से चिकित्सा की सुविधाएं देने का निश्चय किया गया है। चूंकि वर्तमान सुविधाएं अपर्याप्त हैं, अतः शहरी क्षेत्रों में नए चिकित्सालय खोले जाएंगे। देहाती इलाकों में भी औषधालय व प्रसूति केन्द्रों की स्थापना मुख्यतः विस्थापितों के लाभ के लिए की जाएगी। क्षय चिकित्सालयों और आरोग्यालयों में क्षय पीड़ित विस्थापितों के लिए और अधिक स्थान बढ़ाना निश्चित हुआ है। अब उनके लिए पलंग संख्या बढ़ाकर १,००० कर दी गई है। चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं के लिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना में २.८२ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

१६. द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में कार्यान्वित होने वाले पुनर्वास कार्यक्रमों की मोटी रूपरेखा ऊपर दी गई है। इन पुनर्वास कार्यक्रमों को आर्थिक व सामाजिक विकास के सामान्य कार्यक्रमों के साथ अधिकाधिक सम्बन्धित किया जा रहा है। पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के पुनर्वास की समस्याएं पृथक समस्याएं न रहकर, जिन राज्यों में वे अधिक संख्या में बसे हुए हैं उन राज्यों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास की समूची समस्या का ही एक अंग बन गई हैं। पूर्व पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों की स्थिति अभी ऐसी है कि उनके लिए बनाए गए कार्यक्रमों की समीक्षा समय-समय पर होती रहनी चाहिए, जिससे परिस्थितियों के अनुसार उनमें परिवर्तन व परिवर्द्धन किया जा सके।

उपसंहार

भूमिका में हमने योजना के विभिन्न चरणों का उल्लेख किया है जिसे अब हम सरकार के सम्मुख प्रस्तुत कर रहे हैं। यह योजना केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों तथा राष्ट्रीय जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के नेताओं के, जिनसे हम समय-समय पर निस्संकोच भाव से परामर्श लेते रहे हैं, पारस्परिक सहयोग का परिणाम है। कई दिशाओं में योजना के परिपालन के लिए नए सिरे से और पहले की अपेक्षा कहीं अधिक प्रयत्नों की आवश्यकता है। हमारा विश्वास है कि भारतीय जनता द्वितीय पंचवर्षीय योजना को सफल बनाने की चुनौती स्वीकार करेगी।

विस्तृत कार्यक्षेत्र की ऐसी व्यापक योजना में किसी कार्य विशेष पर अधिक और किसी पर कम बल देने के प्रश्न पर मतभेद होना स्वाभाविक ही है और यह उचित भी है। श्री के० सी० नियोगी ने इस बात पर विशेष बल दिया है कि योजना के आकार को देखते हुए, इसे पांच वर्ष की अवधि में पूरा करना कठिन होगा तथा अत्यधिक बड़े पैमाने पर घाटे का वित्त प्रबन्ध करते जाना अर्थ-व्यवस्था के लिए खतरनाक सिद्ध होगा और इससे शायद जनसंख्या के कुछ वर्गों को कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ेगा। उन्होंने परिवहन और उत्पादन के संतुलित विकास की आवश्यकता की ओर विशेष ध्यान दिलाया है। हम इस बात पर सहमत हैं कि ये प्रश्न महत्वपूर्ण हैं और योजना के परिपालन के समय उन्हें बराबर ध्यान में रखना चाहिए। योजना में यथास्थान इन बातों पर भली-भांति विचार किया गया है।

जवाहरलाल नेहरू,
अध्यक्ष।

वी० टी० कृष्णमाचारी,
उपाध्यक्ष।

गुलजारीलाल नन्दा,
सदस्य।

चिन्तामन डी० देशमुख,
सदस्य।

के० सी० नियोगी,
सदस्य।

जे० सी० घोष,
सदस्य।

वाई० एन० सुकथंकर,
सचिव।

तरलोक सिंह,
संयुक्त सचिव।

मई १४, १९५६

परिशिष्ट

द्वितीय पंचवर्षीय योजना
व्यय और आवंटन

व्याख्यात्मक टिप्पणी

राज्यों की योजना में विकास के विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत दिखाए गए अलग-अलग आवंटन अधिकांश राज्य सरकारों से प्राप्त सूचनाओं पर आधारित हैं, परन्तु कुछ ऐसे आवंटन भी हैं जो अस्थायी हैं और जो, आशा है कि सम्बन्धित राज्यों से परामर्श करने के बाद निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत समायोजित कर दिए जाएंगे।

(लाख रुपयों में)

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

शीर्षक (१)	कुल (२)	केन्द्र (३)	राज्य (४)	आन्ध्र (५)	असम (६)	बिहार (७)	बम्बई (८)
१. कृषि और सामुदायिक विकास							
(अ) कृषि कार्यक्रम—							
कृषि उत्पादन	८,१६०.०९	९७०.००	७,१९०.०९	३९२.२०	२०४.११	८२१.०३	३८६.३१
छोटी सिंचाई	६,५९८.२४	२८०.००	६,३१८.२४	२४२.८०	१९३.८०	४१३.३५	५८२.४१
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	२,२०३.०५	५००.००	१,७०३.०५	३०.००	४२.७५	१८५.२५	३२२.१८
कृषि	१६,९६१.३८	१,७५०.००	१५,२११.३८	६६५.००	४४०.६६	१,४१९.६३	१,२९०.९०
पशुपालन	३,८२३.३७	४००.००	३,४२३.३७	२४९.२९	११३.४०	५२६.४१	१०८.६९
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	१,७७९.१९	१८०.००	१,५९९.१९	८२.२०	१७.७०	५५.००	३८८.१२
पशुपालन	५,६०२.५६	५८०.००	५,०२२.५६	३३१.४९	१३१.१०	५८१.४१	४९६.८१
वन	२,७१२.५५	२४०.००	२,४७२.५५	६९.४७	९२.९१	४३६.५६	२१८.८१
भूमि संरक्षण	१,९५८.३८	४००.००	१,५५८.३८	७२.९६	८.०७	५७.००	३३१.०३
वन और भूमि संरक्षण	४,६७०.९३	६४०.००	४,०३०.९३	१४२.४३	१००.९८	४९३.५६	५४९.८४
मछली पालन	१,१७७.५८	३८०.००	७९७.५८	७६.०९	३८.९५	५७.००	७३.०३
गोदाम और हाट-व्यवस्था	१,९५६.७१	३९०.००	१,५६६.७१	१९३.३४	३१.५४	९.५०	२९७.३७
सहकारिता	२,७५६.९४	—	२,७५६.९४	९१.९०	१०६.४०	३७७.१५	३९२.२५
जन सहयोग	४,७१३.६५	३९०.००	४,३२३.६५	२८५.२४	१३७.९४	३८६.६५	६९०.६२
[illegible]	९३५.९८	६०.००	८७५.९८	१९.००	२०.१३	—	१०८.५१
	३४,०६२.०८	३,८००.००	३०,२६२.०८	१,५१९.२२	८९६.७६	२,९३८.२५	३,२०९.७९

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य*	२०,०००.००	१,२००.००	१८,८००.००**	१,०४५.००	५५१.००	१,८०५.००	२,५६५.००
(स) अन्य कार्यक्रम	१,२०५.०२	—	१,२०५.०२	—	६७.४५	—	३८२.९०
ग्राम पंचायतें	१,५००.००	१,५००.००	—	—	—	—	—
	२,७०५.०२	१,५००.००	१,२०५.०२	—	६७.४५	—	३८२.९०
स्थानीय विकास कार्यक्रम	५६,७६७.१०	६,५००.००	५०,२६७.१०**	२,५६४.२२	१,४८८.२१	४,७४३.२५	६,१५७.९९
२. सिंचाई और बिजली							
सिंचाई	३८,०९७.३४	—	३८,०९७.३४	३,२३०.९०	९३.९५	३,३५३.५०	६,७९०.००
बिजली	४२,६८७.०८	—	४२,६८७.०८†	२,०९९.५०	३५०.००	२,७००.८५	४,१००.००
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	९,५००.००	९,५००.००	—	—	—	—	—
खोज और अनुसन्धान	९००.००	९००.००	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	१००.००	१००.००	—	—	—	—	—
	९१,२८४.४२	१०,५००.००	८०,७८४.४२†	५,३३०.४०	४४३.९५	६,०५४.३५	१०,८९०.००

*राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों के आवंटन आरजी हैं और उन पर पुनः विचार किया जाएगा।

**इसमें राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक योजना कार्यों के लिए ७०.३६ लाख रुपए की अतिरिक्त राशि सम्मिलित है।

†इसमें दामोदर घाटी निगम के लिए केन्द्रीय सरकार का १२.२ करोड़ रुपया सम्मिलित है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	मध्य प्रदेश (९)	मद्रास (१०)	उड़ीसा (११)	पंजाब (१२)	उत्तर प्रदेश (१३)	पश्चिम बंगाल (१४)
१. कृषि और सामुदायिक विकास						
(अ) कृषि कार्यक्रम—						
कृषि उत्पादन	५१५.२१	२९९.२०	२१४.०३	३०६.८४	१,१७८.३०	४४८.७२
छोटी सिंचाई	४३८.९६	४०३.८०	८९.९४	२९९.००	१,१३४.८८	२८५.००
भूमि विकास (भूमि संरक्षण से भिन्न)	३१४.२६	४७.५०	२१.४०	४७.५०	१००.३७	३०.४०
कृषि	१,२६८.४३	७५०.५०	३२५.३७	६५३.३४	२,४१३.५५	७६४.१२
पशुपालन	२०२.६१	२३६.००	१७०.४०	१३६.१३	४३७.८६	१७०.८३
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	७१.६०	१४२.६०	११.०५	५३.८७	११२.६९	४६६.४५
पशुपालन	२७४.२१	३७८.६०	१८१.४५	१९०.००	५५०.५५	६३७.२८
वन	१६४.५७	१४६.२०	४०.७४	११३.४७	२२९.४०	११५.८९
भूमि संरक्षण	६२.९३	११८.७०	४८.७६	—	१८३.४६	७३.६२
वन और भूमि संरक्षण	२२७.४९	२६४.९०	८९.५०	११३.४७	४१२.८६	१८९.५१
मछली पालन	५.२१	१२४.४०	५२.२५	५.००	७०.००	७४.१०
गोदाम और हाट-व्यवस्था	४५.८०	१९०.००	३६.१६	—	२६१.४०	९७.०५
सहकारिता	२१५.४५	१०२.९०	११८.७५	१६१.५०	२८१.५४	१३३.१४
सहकारिता	२६१.२५	२९२.९०	१५४.९१	१६१.५०	५४२.९४	२३०.१९
विविध	४५.३३	१४.२०	—	१.९३	११६.००	१६.१५
	२,०८१.९२	१,८२५.५०	८१०.४८	१,१२५.१९	४,१०२.९२	१,९११.३५

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक कार्यक्रम	१,३६८.००	१,७१०.००	५९८.५०	६३१.००	२,६६०.००	१,४२५.००
(स) अन्य कार्यक्रम—						
ग्राम पंचायतें	१९५.९२	—	८५.५०	१००.००	—	—
स्थानीय विकास कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—
	१९५.९२	—	८५.५०	१००.००	—	—
	३,६४५.८४	३,५३५.५०	१,४९४.४८	२,११६.१९	६,७६३.९३	३,३३६.३५
२. सिंचाई और बिजली						
सिंचाई	१,१८७.५०	१,३६५.२०	२,६५४.३०	२,९९४.०५	२,५८०.००	१,७७१.००
बिजली	२,३९३.१६	५,७५९.८०	२,५५२.६५	२,७४३.६०	५,४६२.५०	१,२६९.००
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—	—
खोज और अनुसन्धान	—	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—	—
	३,५८०.६६	७,१२५.००	५,२०६.९५	५,७३७.६५	८,०४२.५०	३,०४०.००

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	'क' भाग के राज्य (१५)	हैदराबाद (१६)	मध्य भारत (१७)	मैसूर (१८)	पेप्सू (१९)
१. कृषि और सामुदायिक विकास					
(अ) कृषि कार्यक्रम—					
कृषि उत्पादन	४,७६५.६५	४०६.६०	१५८.६१	४२१.३४	१५०.१०
छोटी सिंचाई	४,०८३.६४	२४६.८५	२८२.८२	१५६.७५	१६६.५०
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	१,१४१.६१	३८.००	८५.५०	—	६६.५०
कृषि	६,६६१.५०	६६४.४५	५२७.२३	५७८.०६	४१६.१०
पशुपालन	२,३५१.६२	१४६.३०	११२.७२	८७.४८	५१.३०
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	१,४०१.२८	२८.५०	२२.२८	३६.६०	२६.४५
पशुपालन	३,७५२.६०	१७४.८०	१३५.००	१२७.३८	८०.७५
वन	१,६३४.६७	५८.६०	५६.४०	४६.०३	३८.००
भूमि संरक्षण	६५६.५५	१०३.५५	७५.६०	८०.७५	३५.८०
वन और भूमि संरक्षण	२,५६१.५२	१६२.४५	१३५.००	१२६.७८	७३.८०
मछली पालन	५७६.००	३८.६५	६.००	१४.२५	६.००
गोदाम और हाट-व्यवस्था	१,१६२.१६	६५.००	४५.२७	४०.३८	३६.३२
सहकारिता	१,६८१.६८	१००.७०	८६.७३	१२६.६३	४६.१८
सहकारिता	३,१४४.१४	१६५.७०	१३५.००	१६७.०१	८५.५०
विविध	३३६.३३	४१४.२०	३८.८७	—	१५.२०
	२०,३६५.३६	१,६८०.५५	६८०.१०	१,०१३.२१	६०७.३५

[illegible]) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य	१४,६५८.५०	९०२.५०	३०६.००	३८०.००	१६६.१०
[illegible]) अन्य कार्यक्रम—					
ग्राम पंचायतें	८३१.७७	—	१५०.००	—	—
स्थानीय विकास कार्य	—	—	—	—	—
	८३१.७७	—	१५०.००	—	—
	३५,८८५.६६	२,५८३.०५	१,४३६.१०	१,३६३.५१	८४६.४५
२. सिंचाई और बिजली					
सिंचाई	२५,९९०.१०	३,०३१.४५	१,७९९.६६	१,६५३.७५	५९३.००
बिजली	२६,४६१.०६	१,२५८.७५	१,१५५.३४	२,१३७.५०	८८९.००
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—
खोज और अनुसन्धान	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—
	५५,४५१.१६	४,२९०.२०	२,९५२.००	३,७९१.२५	१,४८२.००

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	राजस्थान (२०)	सौराष्ट्र (२१)	तिरुवांकुर-कोचीन (२२)	जम्मू और कश्मीर (२३)	'ख' भाग के राज्य (२४)
१. कृषि और सामुदायिक विकास					
(अ) कृषि कार्यक्रम—	३६६.६०	२१६.३०	११९.९०	८८.६७	१,६३१.४९
कृषि उत्पादन	२३०.००	१९०.००	२०८.८०	२१२.८७	१,७३०.५९
छोटी सिंचाई	३०.००	—	—	—	२२०.००
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	६२६.६०	४०६.३७	३२८.७०	३०१.५४	३,५८२.०८
कृषि	१६२.००	८५.९७	८२.२९	६४.९६	७६३.०२
पशुपालन	—	२२.६४	१९.३६	९.६१	१७२.०४
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	१६२.००	१०८.९१	१०१.६५	७४.५७	६६५.०६
पशुपालन	१२०.००	६८.४४	८९.३५	५८.९०	५३९.०२
वन	५४.००	१३०.२२	३०.८८	३६.१०	५४६.९१
भूमि संरक्षण	१७४.००	१९८.६७	१२०.२३	९५.००	१,०८५.९३
वन और भूमि संरक्षण	६.००	४३.५१	५०.२६	९.५०	१८०.४७
मछली पालन	५.५०	४२.८१	५०.६३	१६.२२	३३५.१३
गोदाम और हाट-व्यवस्था	१५०.००	३१.५०	४६.२७	२५.६१	६०६.९२
सहकारिता	१५५.५०	७४.३१	९६.९०	३२.१३	९४२.०५
सहकारिता	५.००	—	३९.८५	—	५२३.१२
विविध	१,१३५.१०	८३१.७७	७३७.४९	५१२.७४	७,५६८.७१

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य	६४६.००	३२३.००	३३२.५०	१९६.६५	३,२५५.७५
(स) अन्य कार्यक्रम—	—	२१८.२५	—	—	३६८.२५
ग्राम पंचायतें	—	—	—	—	—
स्थानीय विकास कार्य	—	२१८.२५	—	—	३६८.२५
	१,७८१.१०	१,३७३.०२	१,०७०.०९	७०९.३९	११,१९२.७१
२. सिंचाई और बिजली					
सिंचाई	२,४५०.००	९१८.६०	६१७.४०	२८२.६७	११,३४३.५३
बिजली	१,९००.००	४७५.००	२,१८५.००	३२९.१५	१०,३२९.७४
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—
खोज और अनुसन्धान	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—
	४,३५०.००	१,३९३.६०	२,८०२.४०	६११.८२	२१,६७३.२७

(लाख रुपयों में)

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और प्रावंटन

शीर्षक (१)	अजमेर (२५)	भोपाल (२६)	कुर्ग (२७)	दिल्ली (२८)	हिमाचल प्रदेश (२९)	कच्छ (३०)	मणिपुर (३१)
१. कृषि और सामुदायिक विकास							
(क) कृषि कार्यक्रम—							
कृषि उत्पादन	४६.२८	५४.२०	२६.७१	१०.७३	७०.७१	१४.१७	१०.६५
छोटी सिंचाई	३८.००	१०२.१२	१४.७५	३६.४६	४७.५०	१४०.६०	—
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	२.५०	१०७.०२	—	७.८५	—	११.६६	०.२८
[illegible]	८६.७८	२६३.३४	४३.६६	५०.०४	११८.२१	१६६.७६	१०.६३
पशुपालन	२२.००	४६.७२	८.०५	३२.३०	३३.२५	१४.०५	४.२८
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	—	६.६५	४.७५	—	—	—	—
मछली पालन	२२.००	५३.२४	१२.८०	३२.३०	३३.२५	१४.०५	४.२८
[illegible]	५.००	३७.१८	६.८४	११.४०	३४.६७	७.४०	२.२२
वन	३.००	१०.६५	४.७५	—	१६.६५	—	०.४०
भूमि संरक्षण	८.००	४७.८३	११.५६	११.६०	५४.३७	७.४०	२.३२
वन और भूमि संरक्षण	—	३.७१	०.६५	७.४३	७.००	५.२०	१.४२
ग्रामीण [illegible]	—	२.८५	३.३३	१५.२०	१३.३०	७.५०	१.३८
गोदाम और बाजार व्यवस्था	१४.००	२७.६५	६.५३	१६.६५	२४.७०	१०.८६	४.३२
सहकारिता	१४.००	३०.५०	१२.८८	२५.१५	४७.५०	१३.२६	४.७७
सामुदायिक [illegible]	—	—	०.४८	२.३८	१०.६५	—	०.६०
जोड़	१११.७८	१६८.६२	८२.६४	१३८.३३	२६६.३३	२०१.९५	२१.६२

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य	२८.५०	८५.५०	१६.६३	५१.३०	११८.७५	५५.१५	८२.७६
(स) अन्य कार्यक्रम—	—	—	—	—	—	५.००	—
ग्राम पंचायतें	—	—	—	—	—	—	—
स्थानीय विकास कार्य	—	—	—	—	—	५.००	—
	१६२.२८	४८४.१२	९९.२७	१९०.००	३८४.७८	२६६.९०	१०९.३८
२. सिंचाई और बिजली							
सिंचाई	६५.२८	२८०.२५	२३.७५	१६.६३	—	९२.३०	९.५०
बिजली	६६.५१	१९८.०७	३८.६५	४०३.७५	२१३.७५	१७४.१०	९५.००
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—	—	—
खोज और अनुसन्धान	—	—	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—	—	—
	१९४.७९	४७८.३२	६२.७०	४२०.३८	२१३.७५	२६६.४०	१०४.५०

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

(१)	त्रिपुरा (३२)	विन्ध्य प्रदेश (३३)	'ग' भाग के राज्य (३४)	अंडमान और निकोबार (३५)	उत्तर-पूर्व सीमान्त एजेंसी (३६)	पांडिचेरी (३७)	अन्य राज्य (३५–३७) (३८)
योग	३१.००	११२.४८	३८२.६३	२०.००	७६.३०	१३.४२	१०६.७२
१. कृषि और सामुदायिक विकास							
(अ) कृषि कार्यक्रम—							
कृषि उत्पादन	४.६०	८३.२०	४६६.७३	१६.५०	२.१०	१८.३८	३६.६८
छोटी सिंचाई	—	६७.४०	१६२.०४	१३०.००	१८.४०	१.००	१४६.४०
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	३५.६०	२६३.०८	१,०४१.७०	१६६.५०	६६.८०	३२.८०	२६६.१०
कृषि	८.६०	८०.६६	२५१.६१	३.८०	१६.७०	६.६२	२७.१२
पशुपालन	१.६०	२.६२	१५.७२	५.००	—	५.१५	१०.५५
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	११.८०	८३.६१	२६७.३३	८.८०	१६.७०	११.७७	३३.७७
[illegible]	११.२०	५६.८५	१०६.७६	८०.००	४१.८०	—	१२१.८०
वन	०.६०	१६.२५	४३.६०	०.६०	—	०.६२	१.०२
भूमि संरक्षण	१२.१०	५८.१०	२३०.६६	८०.३०	४१.८०	०.४२	१२२.८२
वन और भूमि संरक्षण	६.६०	८.५५	३३.८६	१.७५	२.५०	१.००	०.३५
[illegible]	५.७०	२२.५७	६६.८३	०.३६	—	०.२०	०.७५
गोदाम और बाजार-व्यवस्था	६.२०	१३.२८	१६३.८७	०.३५	—	०.३१	६.०३
सहकारिता	११.६०	५६.८५	२३०.८०	०.७५	—	५.६१	६.६१
[illegible]	—	६.३५	७०.८३	—	२.६०	०.१०	०.६०
विविध	१६.००	१६६.८४	१,८२४.६८	२४८.४५	१६१.००	५४.६०	४०१.००

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य	५५.८०	१९०.००	६८४.३९	१.५०	११७.००	१२.५०	१३१.०
(स) अन्य कार्यक्रम—	—	—	५.००	—	—	—	—
ग्राम पंचायतें	—	—	—	—	—	—	—
स्थानीय विकास कार्य	—	—	५.००	—	—	—	—
	१३१.८०	६८५.८४	२,५१४.३७	२५९.९०	२७७.००	६७.१०	६०४.००
२. सिंचाई और बिजली							
सिंचाई	—	२२३.५०	७४१.२१	—	—	२२.५०	२२.५०
बिजली	४२.८०	३२८.८५	१,५९४.७८	२.५०	१६.००	६०.००	८१.५०
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—	—	—
खोज और अनुसंधान	—	—	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—	—	—
	४२.८०	५५२.३५	२,३३५.९९	२.५०	१६.००	८२.५०	१०४.००

(लाख रुपयों में)

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

शीर्षक (१)	कुल (२)	केन्द्र (३)	राज्य (४)	आन्ध्र (५)	असम (६)	बिहार (७)	बम्बई (८)
३. उद्योग और खान							
बड़े और मध्यम उद्योग	६१,०२६.२४	५६,६२०.००	३,१०६.२४	२६६.५०	१३३.००	१६०.००	८३.०७
खनिज विकास	७,२४६.४३	७,०८०.००	१६६.४३	—	—	—	१.०४
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	२०,०००.००	८,०३१.८१	११,९६८.१९	६८१.३०	३८०.००	१,१६०.००	८१६.०३
कुल	८८,६७५.६७	७१,७३१.८१	१५,२४३.८६	९५०.८०	५१३.००	१,३२०.००	९००.१४
४. परिवहन और संचार	९०,०००.००	९०,०००.००	—	—	—	—	—
[illegible]	२४,६२७.२४	८,२००.००	१६,४१२.३६	५४६.७२	६६५.००	१,७५०.२७	१,६८०.००
[illegible]	१,६५४.३८	३००.००	१,३४४.३८	—	१०४.५०	२२१.१५	३७५.००
[illegible]	६,५३३.४२	४,३५०.००	१८३.४२	—	—	—	८३.००
[illegible]	६,०७५.००	४,६००.००	११५.००	—	—	—	—
[illegible]	३००.००	३००.००	—	—	—	—	—
[illegible]	६,३००.००	४,३००.००	—	—	—	—	—
[illegible]	७२८.७५	६००.००	१२८.७५	—	—	—	—
[illegible]	१,३००.००	१,३००.००	—	—	—	—	—
[illegible]	६००.००	६००.००	—	—	—	—	—
[illegible]	२००.००	६००.००	—	—	—	—	—
जोड़	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

५. समाज सेवाएं							
शिक्षा	३०,६९५.६०	९,५००.००	२१,१९५.६०	७६०.००	७१२.५९	२,३७५.००	१,१७४.४९
स्वास्थ्य	२७,३८२.२२	९,०००.००	१८,३८२.२२	७८३.२०	४९५.८६	१,६६१.७८	२,३६३.४३
आवास	१२,०००.००	४,६७५.७२	७,३२४.२८	१९०.२४	१२३.५०	४७५.००	१,४४४.२५
पिछड़े वर्गों का कल्याण	९,०४७.७८	३,२००.००	५,८४७.७८	३३३.३८	९५०.००	५७०.००	३१९.२०
समाज कल्याण	२,९०२.७९	१,९००.००	१,००२.७९	६७.४०	५०.७२	६५.५०	१००.००
श्रम और श्रम कल्याण	२,९१६.९९	१,८००.००	१,११६.९९	४७.५४	३८.००	७६.००	१६३.५१
पुनर्वास	९,०००.००	९,०००.००	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	५००.००	५००.००	—	—	—	—	—
	९४,४४५.०८	३९,५७५.७२	५४,८६९.३६	२,१८१.७६	२,३७०.६७	५,२२३.२८	५,५६४.८८
६. विविध							
आंकड़े	३३७.१९	—	३३७.१९	१९.००	१९.६१	५४.१५	६.००
प्रचार	१,२८६.८७	७००.००	५८६.८७	२८.५३	२३.७५	४४.८४	३७.५०
क्षेत्र विकास योजना	८४५.४३	—	८४५.४३	—	—	—	—
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	१,४२९.६८	—	१,४२९.६८	४७.५४	७०.३०	—	३६१.७५
भवन निर्माण	१,८९१.७७	—	१,८९१.७७	२२८.००	९५.००	.१३८.७०	५५३.००
सांस्कृतिक कार्यक्रम	१२५.१७	—	१२५.१७	—	—	—	१२.४०
जन सहयोग	४००.००	४००.००	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	६००.००	६००.००	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और संभरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	२,४००.००	२,४००.००	—	—	—	—	—
अन्य	७१८.७३	२५४.९२	४६३.८१	—	—	१२.००	३.४४
	१०,०३४.८४	४,३५४.९२	५,६७९.९२	३२३.०७	२०८.६६	२४९.६९	९७४.०९
जोड़	४,८०,०००.००	२,५५,९१२.४५	२,२४,०८७.५५**	११,८९६.९६	५,७९३.६९	१९,४२१.९९	२६,६२४.८०

* रेलों के लिए ९०० करोड़ रुपए की राशि, रेल मूल्यह्रास निधि के अंशदान के अतिरिक्त है जो अनुमानतः २२५ करोड़ रुपए है।

† छोटे बन्दरगाहों, अन्तर्देशीय नौकानयन और अन्य परिवहन की कुछ योजनाएं अस्थायी तौर पर केन्द्रीय योजनाओं के रूप में दिखाई गई हैं।

**इसमें दामोदर घाटी निगम के लिए १२.२ करोड़ रुपए केन्द्रीय सरकार का भाग है और राष्ट्रीय विस्तार सेवा तथा सामुदायिक कार्यक्रमों के लिए ७०.३६ लाख रुपए की अतिरिक्त व्यवस्था है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	मध्य प्रदेश (९)	मद्रास (१०)	उड़ीसा (११)	पंजाब (१२)	उत्तर प्रदेश (१३)	पश्चिम बंगाल (१४)
३. उद्योग और खान						
बड़े और मध्यम उद्योग	१८.००	६५.००	४७.५०	१४०.००	४९५.६५	१९०.००
खनिज विकास	८.६०	—	६५.००	—	३.००	—
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	६३६.७०	१,४५५.००	६२८.९०	५७२.५०	१,१४४.४२	७५७.९९
	६६३.३०	१,५२०.००	७४१.४०	७१२.५०	१,६४३.०७	९४७.९९
४. परिवहन और संचार						
रेल	—	—	—	—	—	—
सड़कें	३५१.००	८०७.५०	५६२.४०	७१३.००	१,५१४.००	१०१०.००
[illegible]	—	—	६५.००	६५.००	८५.५०	१६३.३३
[illegible]	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	८३.९५	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—
[illegible]	३५१.००	८०७.५०	६२७.४०	७७८.००	१,६८३.४५	[illegible]

५. समाज सेवाएं						
शिक्षा	१,६०७.९९	१,४२५.००	६१८.२४	१,१८७.५०	२,६५४.१९	२,१२९.९६
स्वास्थ्य	७६७.७६	१,६०२.१०	३८०.००	६६५.००	२,४२२.५०	१,९९६.३१
आवास	५०४.७४	३४१.७०	६५.००	३८०.००	१०,४५.००	७६०.००
पिछड़े वर्गों का कल्याण	५०३.५०	४९९.५०	३८०.००	२२८.००	४७५.००	१६६.६३
समाज कल्याण	८७.६२	८६.२५	३४.४४	४९.६७	१२४.६५	३७.३७
श्रम और श्रम कल्याण	१४५.८४	११.४०	१९.००	९२.६२	१४२.५०	१३०.९५
पुनर्वास	—	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	—	—	—	—	—	—
	३,६१७.४५	४,०६५.९५	१,५२६.६८	२,६०२.७९	६,८६३.८४	५,२२१.२२
६. विविध						
आंकड़े	४२.२९	—	१९.००	१०.००	५७.००	४.७५
प्रचार	२६.८३	४२.८०	२८.५०	१८.००	८२.५१	३७.९४
क्षेत्र विकास योजना	—	—	—	६५.००	—	६००.००
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	—	१९०.००	१७.१०	—	—	१५४.८५
भवन निर्माण	—	—	२७५.५०	४४६.५०	—	१०७.४५
सांस्कृतिक कार्यक्रम	२८.३८	—	—	—	३३.२५	१३.००
जन सहयोग	—	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	—	—	—	—	--	—
निर्माण, आवास और संभरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—
अन्य	१४.२५	१९.३०	—	२४.०४	१००.००	—
	१११.७५	२५२.१०	३४०.१०	५६३.५४	२७२.७६	९१७.९९
जोड़	१२,३७०.००	१७,३०६.०५	९,९९७.०१	१२,६३४.६७	२५,३०९.६५	१५,३९९.८८

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	'क' भाग के राज्य (१५)	हैदराबाद (१६)	मध्य भारत (१७)	मैसूर (१८)	पेप्सू (१९)
३. उद्योग और खान					
बड़े और मध्यम उद्योग	१,६१२.०२	१६.००	६७.३१	२३७.५०	१६.००
खनिज विकास	१०७.६४	—	३.६०	१६.४८	१.५०
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	८,१८२.८४	५७०.००	३७८.००	४२७.५२	१८८.५०
	९,९०२.५०	५८६.००	४४८.६१	६८४.५०	२०६.००
४. परिवहन और संचार					
रेल	—	—	—	—	—
सड़कें	१०,८२३.८८	४२०.५०	३१६.८०	४३५.१०	२६१.२५
सड़क परिवहन	१,०३६.४८	—	२२.५०	३६.६०	२६.७०
[illegible]	८३.००	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	२३.४५	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

५. समाज सेवाएं					
शिक्षा	१४,६४४.९६	८५५.००	४६५.००	७१५.३५	२९७.३३
स्वास्थ्य	१३,१३७.९४	६१८.४५	५५५.८०	४२७.५०	२९८.५०
आवास	५,३५९.४३	४५६.००	१११.६०	२८५.००	८५.५०
पिछड़े वर्गों का कल्याण	४,५२५.२१	९५.००	१४४.००	१९०.००	५१.३०
समाज कल्याण	७०३.६२	३७.१६	२७.८७	३५.६५	१७.२२
श्रम और श्रम कल्याण	८६७.३६	३३.२५	२४.३०	१२.५५	२८.५०
पुनर्वास	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	—	—	—	—	—
	३९,२३८.५२	२,०९४.८६	१,३५८.५७	१,६६६.०५	७७८.३५
६. विविध					
आंकड़े	२३१.८०	१०.४५	९.००	७.३५	५.७०
प्रचार	३७१.२०	२६.६०	२४.३०	१६.८५	१३.३०
क्षेत्र विकास योजनाएं	६९५.००	—	—	—	५.७०
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	८४१.५४	—	१५९.००	—	—
भवन निर्माण	१,८४४.१५	—	—	—	—
सांस्कृतिक कार्यक्रम	८७.०३	—	—	२६.७४	६.६५
जन सहयोग	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और संभरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	—	—	—	—	—
अन्य	१७३.०३	—	—	—	—
	४,२४३.७५	३७.०५	१९२.३०	५०.९४	३१.३५
जोड़	१,५६,७२१.७०	१०,०२१.६६	६,७२७.१८	८,०६१.२५	३,६३३.१०

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक	राजस्थान	सौराष्ट्र	तिरुवांकुर-कोचीन	जम्मू और कश्मीर	'ग' भाग के राज्य
(१)	(२०)	(२१)	(२२)	(२३)	(२४)
३. उद्योग और खान					
बड़े और मध्यम उद्योग	३५.१५	—	४२.२८	५८.१५	४७४.३६
खनिज विकास	१६.२५	—	१२.८२	—	५६.६५
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	५००.००	२३२.५५	५७०.००	२८७.०६	३,१५३.६६
	५५१.४०	२३२.५५	६२५.१०	३४१.२१	३,६८४.७०
४. परिवहन और संचार					
रेल	—	—	—	—	—
सड़कें	८८८.००	५५०.००	२५६.५०	५३४.८५	३,६८१.००
सड़क परिवहन	—	४२.००	६०.८०	३५.१५	२२६.०५
[illegible]	—	७१.४२	—	—	३१.४२
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	२५.०१	२७.११
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—
	८८८.००	६६४.४२	३१७.३०	५९५.०१	४,११३.[illegible]

५. समाज सेवाएं					
शिक्षा	९००.००	५००.७५	८५५.६६	२८५.००	४,६०४.०९
स्वास्थ्य	६४०.००	३००.६५	७२०.०३	२८५.००	३,८४६.२३
आवास	२३५.००	१०४.५०	१६५.८०	६५.००	१,५६८.४०
पिछड़े वर्गों का कल्याण	२००.००	८५.३६	१४६.७९	३८.६५	६५१.४०
समाज कल्याण	३९.७४	२९.३०	२५.१४	२१.४७	२३३.५५
श्रम और श्रम कल्याण	४४.७०	३८.१७	२३.७५	६.६५	२११.८७
पुनर्वास	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	—	—	—	—	—
	२,०५९.४४	१,०५९.०३	१,९६७.१७	७३२.०७	११,७१५.५४
६. विविध					
आंकड़े	१०.००	१५.२०	११.८८	६.५०	७९.०८
प्रचार	३६.००	१२.२१	९.०२	१५.२०	१५३.४८
क्षेत्र विकास योजना	५०.००	—	—	६४.७३	१५०.४३
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	—	—	१०२.६०	२१३.१२	४७४.७२
भवन निर्माण	—	२३.५०	—	—	२३.५०
सांस्कृतिक कार्यक्रम	—	—	४.७५	—	३८.१४
जन सहयोग	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और सम्भरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	—	—	—	—	—
अन्य	०.३०	—	२८५.००	—	२८५.३०
	९६.३०	५०.९१	४१३.२५	३३२.५५	१,२०४.६५
	६,७४०.२४	४,७७३.५३	७,१९५.३१	३,३९२.०७	५३,५४४.३४

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और प्रावंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक	अजमेर	भोपाल	कुर्ग	दिल्ली	हिमाचल प्रदेश	कच्छ	मणिपुर
(१)	(२५)	(२६)	(२७)	(२८)	(२९)	(३०)	(३१)
३. उद्योग और खान							
बड़े और मध्यम उद्योग	—	—	८.०८	—	—	०.५०	—
खनिज विकास	—	—	—	—	—	—	—
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	५०.००	३८.०९	१७.५७	१८१.४५	४०.५०	१३.८५	२३.७५
	५०.००	३८.०९	२५.६५	१८१.४५	४०.५०	१४.३५	२३.७५
४. परिवहन और संचार							
रेल	—	—	—	—	—	—	—
सड़कें	४२.५०	८५.५०	५३.००	३८.००	४२०.५०	३८.२६	१६०.००
[illegible]	—	—	—	—	२१.३५	३.५०	१६.००
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

५. समाज सेवाएं							
शिक्षा	१६६.२५	१६७.६७	५२.२५	३५०.००	११४.००	३७.३३	५७.००
स्वास्थ्य	९९.४२	९०.७०	३०.८८	२६०.३०	१६९.१०	७४.८७	३३.२५
आवास	२८.५०	४७.५०	१०.४५	१९०.००	७.६०	८.५०	७.६०
पिछड़े वर्गों का कल्याण	२८.५०	२१.१६	२३.७५	१४.९३	४१.२८	१७.३३	६९.२५
समाज कल्याण	२.७९	६.७१	३.३८	०.२२	४.७५	५.७१	२.००
श्रम और श्रम कल्याण	७.००	१.३६	—	९.५०	४.३२	—	—
पुनर्वास	—	—	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
	३३२.४६	३३५.१०	१२०.७१	८५४.९५	३४१.०५	१४३.७४	१६९.१०
६. विविध							
आंकड़े	—	४.७५	—	४.७५	४.७५	०.५१	१.९०
प्रचार	४.९९	६.२६	—	२.५९	११.४०	०.५०	२.८५
क्षेत्र विकास योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	—	—	१०.४५	—	१०.४५	५.००	४.७५
भवन निर्माण	—	—	३.८०	—	—	२.०२	—
सांस्कृतिक कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—	—
जन सहयोग	—	—	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और सम्भरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—	—
अन्य	—	—	—	५.२३	—	०.२२	—
	४.९९	११.०१	१४.२५	१२.५७	२६.६०	८.२५	९.५०
योग	७८७.०२	१,४३२.१४	३७५.७८	१,६९७.३५	१,४७२.५३	७८५.४०	६२५.२३

(लाख रुपयों में)

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

शीर्षक	त्रिपुरा	विन्ध्य प्रदेश	'ग' भाग के राज्य	अंडमान और निकोबार	उत्तर-पूर्व सीमान्त एजेंसी	पाण्डिचेरी	कुल योग (३५-३७)
(१)	(३२)	(३३)	(३४)	(३५)	(३६)	(३७)	(३८)
१. उद्योग और खान							
बड़े और मध्यम उद्योग	—	१४.२५	२२.८३	—	—	—	—
खनिज विकास	—	२.१४	२.१४	—	—	—	—
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	४७.५०	१४२.५०	५६२.२१	५.००	४४.४८	२०.००	६६.४८
	४७.५०	१५८.८९	५८७.१८	५.००	४४.४८	२०.००	६६.४८
४. परिवहन और संचार							
रेल	—	—	—	—	—	—	—
सड़कें	१०४.००	३१३.५०	१,५३२.४६	१००.००	२३५.००	४०.००	३९५.००
[illegible]	—	—	५७.८५	१.००	—	—	१.००
[illegible]	—	—	—	—	—	३१.००	३६.००
[illegible]	—	—	—	१२५.००	—	—	११६.००
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	५०.००	—	[illegible]
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
[illegible]	—	—	—	—	—	—	[illegible]
[illegible]	—	—	—	—	—	—	—
	[illegible]	३१३.५०	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

समाज सेवाएं							
शिक्षा	१२३.५०	३३२.५०	१,४३०.५०	२७.४०	१३०.००	५८.६५	२१६.०५
स्वास्थ्य	७५.००	२३७.५०	१,०७१.०२	२५.३०	२००.२३	१०१.५०	३२७.०३
आवास	३.८०	४७.५०	३५१.४५	—	—	४५.००	४५.००
पिछड़े वर्गों का कल्याण	७७.९०	७०.२२	३६४.३२	१.००	—	५.८५	६.८५
समाज कल्याण	१.७०	१९.३६	४६.६२	—	१५.००	४.००	१९.००
श्रम और श्रम कल्याण	२.३०	११.६८	३६.१६	—	—	१.३०	१.३०
पुनर्वास	—	—	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
	२८४.२०	७१८.७६	३,३००.०७	५३.७०	३४५.२३	२१६.३०	६१५.२३
६. विविध							
आंकड़े	०.९०	४.७५	२२.३१	—	२.००	२.००	४.००
प्रचार	२.६०	१८.४३	४९.६२	०.६०	७.७९	४.१८	१२.५७
क्षेत्र विकास योजना	—	—	—	—	—	—	—
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	३२.८०	३७.०५	१००.५०	२.००	—	१०.९२	१२.९२
भवन निर्माण	—	—	५.८२	१३.८०	—	४.५०	१८.३०
सांस्कृतिक कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—	—
जन सहयोग	—	—	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और संभरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—	—
अन्य	—	०.०३	५.४८	—	—	—	—
	३६.३०	६०.२६	१८३.७३	१६.४०	९.७९	२१.६०	४७.७९
जोड़	८४६.६०	२,४८९.६०	१०,५११.६५	५९२.५०	९५०.५०	४७६.५०	२,०१९.५०